

| | |
|------------------------|-----|
| page_000_Bismillah | 1 |
| page_000_cover | 2 |
| page_000_scannernotes1 | 3 |
| page_001_title | 4 |
| page_002 | 5 |
| page_003 | 6 |
| page_004 | 7 |
| page_005 | 8 |
| page_006 | 9 |
| page_007 | 10 |
| page_008 | 11 |
| page_009 | 12 |
| page_010 | 13 |
| page_011 | 14 |
| page_012 | 15 |
| page_013 | 16 |
| page_014 | 17 |
| page_015 | 18 |
| page_016 | 19 |
| page_017 | 20 |
| page_018 | 21 |
| page_019 | 22 |
| page_020 | 23 |
| page_021 | 24 |
| page_022 | 25 |
| page_023 | 26 |
| page_024 | 27 |
| page_025 | 28 |
| page_025a | 29 |
| page_025b | 30 |
| page_026 | 31 |
| page_027 | 32 |
| page_028 | 33 |
| page_029 | 34 |
| page_030 | 35 |
| page_031 | 36 |
| page_032 | 37 |
| page_033 | 38 |
| page_034 | 39 |
| page_035 | 40 |
| page_035a | 41 |
| page_036 | 42 |
| page_037 | 43 |
| page_037a | 44 |
| page_038 | 45 |
| page_039 | 46 |
| page_039a | 47 |
| page_039b | 48 |
| page_039d | 49 |
| page_040 | 50 |
| page_041 | 51 |
| page_042 | 52 |
| page_043 | 53 |
| page_044 | 54 |
| page_045 | 55 |
| page_046 | 56 |
| page_047 | 57 |
| page_048 | 58 |
| page_049 | 59 |
| page_050 | 60 |
| page_051 | 61 |
| page_052 | 62 |
| page_053 | 63 |
| page_054 | 64 |
| page_055 | 65 |
| page_056 | 66 |
| page_057 | 67 |
| page_058 | 68 |
| page_059 | 69 |
| page_060 | 70 |
| page_061 | 71 |
| page_062 | 72 |
| page_063 | 73 |
| page_064 | 74 |
| page_065 | 75 |
| page_066 | 76 |
| page_067 | 77 |
| page_068 | 78 |
| page_069 | 79 |
| page_070 | 80 |
| page_071 | 81 |
| page_072 | 82 |
| page_073 | 83 |
| page_074 | 84 |
| page_075 | 85 |
| page_076 | 86 |
| page_077 | 87 |
| page_078 | 88 |
| page_079 | 89 |
| page_080 | 90 |
| page_081 | 91 |
| page_081a | 92 |
| page_081b | 93 |
| page_082 | 94 |
| page_083 | 95 |
| page_084 | 96 |
| page_085 | 97 |
| page_086 | 98 |
| page_087 | 99 |
| page_088 | 100 |
| page_089 | 101 |
| page_090 | 102 |
| page_091 | 103 |
| page_092 | 104 |
| page_093 | 105 |
| page_094 | 106 |
| page_095 | 107 |
| page_096 | 108 |
| page_097 | 109 |
| page_098 | 110 |
| page_099 | 111 |
| page_100 | 112 |

| | |
|-----------|-----|
| page_101 | 113 |
| page_102 | 114 |
| page_103 | 115 |
| page_104 | 116 |
| page_105 | 117 |
| page_105a | 118 |
| page_105b | 119 |
| page_106 | 120 |
| page_107 | 121 |
| page_108 | 122 |
| page_109 | 123 |
| page_110 | 124 |
| page_111 | 125 |
| page_112 | 126 |
| page_113 | 127 |
| page_114 | 128 |
| page_115 | 129 |
| page_116 | 130 |
| page_117 | 131 |
| page_118 | 132 |
| page_119 | 133 |
| page_120 | 134 |
| page_121 | 135 |
| page_122 | 136 |
| page_123 | 137 |
| page_124 | 138 |
| page_125 | 139 |
| page_126 | 140 |
| page_127 | 141 |
| page_128 | 142 |
| page_129 | 143 |
| page_130 | 144 |
| page_131 | 145 |
| page_132 | 146 |
| page_133 | 147 |
| page_134 | 148 |
| page_135 | 149 |
| page_136 | 150 |
| page_137 | 151 |
| page_138 | 152 |
| page_139 | 153 |
| page_139b | 154 |
| page_140 | 155 |
| page_141 | 156 |
| page_141a | 157 |
| page_142 | 158 |
| page_143 | 159 |
| page_144 | 160 |
| page_145 | 161 |
| page_146 | 162 |
| page_147 | 163 |
| page_148 | 164 |
| page_149 | 165 |
| page_149b | 166 |
| page_150 | 167 |
| page_151 | 168 |
| page_151a | 169 |
| page_152 | 170 |
| page_153 | 171 |
| page_154 | 172 |
| page_155 | 173 |
| page_156 | 174 |
| page_157 | 175 |
| page_158 | 176 |
| page_159 | 177 |
| page_160 | 178 |
| page_161 | 179 |
| page_162 | 180 |
| page_163 | 181 |
| page_164 | 182 |
| page_165 | 183 |
| page_166 | 184 |
| page_167 | 185 |
| page_168 | 186 |
| page_169 | 187 |
| page_170 | 188 |
| page_171 | 189 |
| page_172 | 190 |
| page_173 | 191 |
| page_174 | 192 |
| page_175 | 193 |
| page_176 | 194 |
| page_177 | 195 |
| page_178 | 196 |
| page_179 | 197 |
| page_180 | 198 |
| page_181 | 199 |
| page_182 | 200 |
| page_183 | 201 |
| page_184 | 202 |
| page_185 | 203 |
| page_186 | 204 |
| page_187 | 205 |
| page_188 | 206 |
| page_189 | 207 |
| page_190 | 208 |
| page_191 | 209 |
| page_192 | 210 |
| page_193 | 211 |
| page_194 | 212 |
| page_195 | 213 |
| page_196 | 214 |
| page_197 | 215 |
| page_198 | 216 |
| page_199 | 217 |
| page_200 | 218 |
| page_201 | 219 |
| page_202 | 220 |
| page_203 | 221 |
| page_204 | 222 |
| page_205 | 223 |
| page_206 | 224 |

| | |
|----------|-----|
| page_207 | 225 |
| page_208 | 226 |
| page_209 | 227 |
| page_210 | 228 |
| page_211 | 229 |
| page_212 | 230 |
| page_213 | 231 |
| page_214 | 232 |
| page_215 | 233 |
| page_216 | 234 |
| page_217 | 235 |
| page_218 | 236 |
| page_219 | 237 |
| page_220 | 238 |
| page_221 | 239 |
| page_222 | 240 |
| page_223 | 241 |
| page_224 | 242 |
| page_225 | 243 |
| page_226 | 244 |
| page_227 | 245 |
| page_228 | 246 |
| page_229 | 247 |
| page_230 | 248 |
| page_231 | 249 |
| page_232 | 250 |
| page_233 | 251 |
| page_234 | 252 |
| page_235 | 253 |
| page_236 | 254 |
| page_237 | 255 |
| page_238 | 256 |
| page_239 | 257 |
| page_240 | 258 |
| page_241 | 259 |
| page_242 | 260 |
| page_243 | 261 |
| page_244 | 262 |
| page_245 | 263 |
| page_246 | 264 |
| page_247 | 265 |
| page_248 | 266 |
| page_249 | 267 |
| page_250 | 268 |
| page_251 | 269 |
| page_252 | 270 |
| page_253 | 271 |
| page_254 | 272 |
| page_255 | 273 |
| page_256 | 274 |
| page_257 | 275 |
| page_258 | 276 |
| page_259 | 277 |
| page_260 | 278 |
| page_261 | 279 |
| page_262 | 280 |
| page_263 | 281 |
| page_264 | 282 |
| page_265 | 283 |
| page_266 | 284 |
| page_267 | 285 |
| page_268 | 286 |
| page_269 | 287 |
| page_270 | 288 |
| page_271 | 289 |
| page_272 | 290 |
| page_273 | 291 |
| page_274 | 292 |
| page_275 | 293 |
| page_276 | 294 |
| page_277 | 295 |
| page_278 | 296 |
| page_279 | 297 |
| page_280 | 298 |
| page_281 | 299 |
| page_282 | 300 |
| page_283 | 301 |
| page_284 | 302 |
| page_285 | 303 |
| page_286 | 304 |
| page_287 | 305 |
| page_288 | 306 |
| page_289 | 307 |
| page_290 | 308 |
| page_291 | 309 |
| page_292 | 310 |
| page_293 | 311 |
| page_294 | 312 |
| page_295 | 313 |
| page_296 | 314 |
| page_297 | 315 |
| page_298 | 316 |
| page_299 | 317 |
| page_300 | 318 |
| page_301 | 319 |
| page_302 | 320 |
| page_303 | 321 |
| page_304 | 322 |
| page_305 | 323 |
| page_306 | 324 |
| page_307 | 325 |
| page_308 | 326 |
| page_309 | 327 |
| page_310 | 328 |
| page_311 | 329 |
| page_312 | 330 |
| page_313 | 331 |
| page_314 | 332 |
| page_315 | 333 |
| page_316 | 334 |
| page_317 | 335 |
| page_318 | 336 |

| | |
|----------|-----|
| page_319 | 337 |
| page_320 | 338 |
| page_321 | 339 |
| page_322 | 340 |
| page_323 | 341 |
| page_324 | 342 |
| page_325 | 343 |
| page_326 | 344 |
| page_327 | 345 |
| page_328 | 346 |
| page_329 | 347 |
| page_330 | 348 |
| page_331 | 349 |
| page_332 | 350 |
| page_333 | 351 |
| page_334 | 352 |
| page_335 | 353 |
| page_336 | 354 |
| page_337 | 355 |
| page_338 | 356 |
| page_339 | 357 |
| page_340 | 358 |
| page_341 | 359 |
| page_342 | 360 |
| page_343 | 361 |
| page_344 | 362 |
| page_345 | 363 |
| page_346 | 364 |
| page_347 | 365 |
| page_348 | 366 |
| page_349 | 367 |
| page_350 | 368 |
| page_351 | 369 |
| page_352 | 370 |
| page_353 | 371 |
| page_354 | 372 |
| page_355 | 373 |
| page_356 | 374 |
| page_357 | 375 |
| page_358 | 376 |
| page_359 | 377 |
| page_360 | 378 |
| page_361 | 379 |
| page_362 | 380 |
| page_363 | 381 |
| page_364 | 382 |
| page_365 | 383 |
| page_366 | 384 |
| page_367 | 385 |
| page_368 | 386 |
| page_369 | 387 |
| page_370 | 388 |
| page_371 | 389 |
| page_372 | 390 |
| page_373 | 391 |
| page_374 | 392 |
| page_375 | 393 |
| page_376 | 394 |
| page_377 | 395 |
| page_378 | 396 |
| page_379 | 397 |
| page_380 | 398 |
| page_381 | 399 |
| page_382 | 400 |
| page_383 | 401 |
| page_384 | 402 |
| page_385 | 403 |
| page_386 | 404 |
| page_387 | 405 |
| page_388 | 406 |
| page_389 | 407 |
| page_390 | 408 |
| page_391 | 409 |
| page_392 | 410 |
| page_393 | 411 |
| page_394 | 412 |
| page_395 | 413 |
| page_396 | 414 |
| page_397 | 415 |
| page_398 | 416 |
| page_399 | 417 |
| page_39c | 418 |
| page_400 | 419 |
| page_401 | 420 |
| page_402 | 421 |
| page_403 | 422 |
| page_404 | 423 |
| page_405 | 424 |
| page_406 | 425 |
| page_407 | 426 |
| page_408 | 427 |
| page_409 | 428 |
| page_410 | 429 |
| page_411 | 430 |
| page_412 | 431 |
| page_413 | 432 |
| page_414 | 433 |
| page_415 | 434 |
| page_416 | 435 |
| page_417 | 436 |
| page_418 | 437 |
| page_419 | 438 |
| page_420 | 439 |
| page_421 | 440 |
| page_422 | 441 |
| page_423 | 442 |
| page_424 | 443 |
| page_425 | 444 |
| page_426 | 445 |
| page_427 | 446 |
| page_428 | 447 |
| page_429 | 448 |

| | |
|-----------|-----|
| page_430 | 449 |
| page_431 | 450 |
| page_432 | 451 |
| page_433 | 452 |
| page_434 | 453 |
| page_435 | 454 |
| page_436 | 455 |
| page_437 | 456 |
| page_438 | 457 |
| page_439 | 458 |
| page_440 | 459 |
| page_441 | 460 |
| page_442 | 461 |
| page_443 | 462 |
| page_444 | 463 |
| page_445 | 464 |
| page_446 | 465 |
| page_447 | 466 |
| page_448 | 467 |
| page_449 | 468 |
| page_450 | 469 |
| page_451 | 470 |
| page_452 | 471 |
| page_453 | 472 |
| page_454 | 473 |
| page_455 | 474 |
| page_456 | 475 |
| page_457 | 476 |
| page_458 | 477 |
| page_459 | 478 |
| page_460 | 479 |
| page_461 | 480 |
| page_462 | 481 |
| page_463 | 482 |
| page_464 | 483 |
| page_465 | 484 |
| page_466 | 485 |
| page_467 | 486 |
| page_468 | 487 |
| page_469 | 488 |
| page_470 | 489 |
| page_471 | 490 |
| page_472 | 491 |
| page_473 | 492 |
| page_474 | 493 |
| page_475 | 494 |
| page_476 | 495 |
| page_477 | 496 |
| page_478 | 497 |
| page_479 | 498 |
| page_480 | 499 |
| page_481 | 500 |
| page_482 | 501 |
| page_483 | 502 |
| page_484 | 503 |
| page_485 | 504 |
| page_486 | 505 |
| page_487 | 506 |
| page_488 | 507 |
| page_489 | 508 |
| page_490 | 509 |
| page_back | 510 |

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

یہ خاموشی کہاں تک؟

ایک سپاہی کی داستان عشق و جنوں

لیفٹیننٹ جنرل (ریٹائرڈ) شاہد عزیز

Scanner Notes

بِسْمِ اللَّهِ وَالصَّلَاةِ وَالسَّلَامِ عَلَى رَسُولِ اللَّهِ

أَعُوذُ بِاللَّهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارَى أَوْلِيَاءَ ۚ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ ۚ وَمَنْ يَتَوَلَّهُمْ
مِّنْكُمْ فَإِنَّهُ مِنْهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ

قَرَى الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ يُسَارِعُونَ فِيهِمْ يَقُولُونَ نَخْشَى أَنْ تُصِيبَنَا دَائِرَةٌ ۚ فَعَسَى اللَّهُ أَنْ
يَأْتِيَ بِالْفَتْحِ أَوْ أَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهِ فَيُصْبِحُوا عَلَى مَا أَسْرَوْا فِي أَنْفُسِهِمْ نَادِمِينَ

وَيَقُولُ الَّذِينَ آمَنُوا أَهَؤُلَاءِ الَّذِينَ أَقْسَمُوا بِاللَّهِ جَهْدَ أَيْمَانِهِمْ ۖ إِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ۚ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ
فَأَصْبَحُوا خَاسِرِينَ

السلام علیکم ورحمة الله وبرکاته!

احباب گرامی قدر، محترم لیفٹنٹ جنرل شاہد عزیز کسی تعارف کے محتاج نہیں، نہ ہی ان کی کتاب "یہ خاموشی کہاں تک" کسی تعارف کی محتاج ہے، بد قسمتی سے اس کتاب کو کچھ عناصر نے مارکیٹ سے غائب کروا دیا تھا۔۔۔ جب 2، 3 سال کی انتھک کوشش کے بعد یہ کتاب کچھ لمحات کے لئے میسر آئی، تو سوچا کہ اس راز کو فاش کیا جائے اور قوم کے سامنے حقائق رکھے جائیں۔۔۔

اس عمل کے دوران یقینی طور پر اس کتاب کے جملہ حقوق جو کہ بحق لیفٹنٹ جنرل شاہد عزیز صاحب کے محفوظ ہیں ان کی خلاف ورزی بھی کرنی پڑی، جس پر ہم ان سے معذرت خواہ بھی ہیں، چونکہ جنرل صاحب کا مقصد سچائی کو بیان کرنا ہی تھا، اور وہ یقینی طور پر پیشہ ور مصنف نہیں ہیں، لہذا ہم امید کرتے ہیں کہ اس کتاب کو آن لائن شائع کرنے پر جنرل صاحب کا مقصد ہی پایہ تکمیل تک پہنچے گا، اور انہیں کوئی مالی نقصان کا اندیشہ نہیں ہوگا۔

ایک بار پھر عرض کر دیں کہ یہ کتاب لفٹنٹ جنرل ریٹائرڈ شاہد عزیز کے اجازت کے بغیر آن لائن چھاپی جا رہی ہے۔

کتاب کی اسکیٹنگ میں پائی جانے والی غلطیوں پر ہم قارئین سے بھی معذرت خواہ ہیں، چونکہ ہمیں پرو فیشنل سیکرٹریک رسائی حاصل نہ تھی، اس لئے اپنی سی کوشش کر کے اس کتاب کو کیمرہ کے ذریعے سکین کیا گیا ہے۔۔۔

درخواست کی جاتی ہے کہ کتاب میں کسی قسم کا واٹر مارک لگانے سے گریز کیا جائے تاکہ یہ قارئین کے پڑھنے کو آسان رہے۔

یکم جنوری 2016

This page has been left blank intentionally

یہ خاموشی کہاں تک؟

جلد حقوق بحق مصنف محفوظ ہیں

طبع اول: دسمبر ۲۰۱۲ء

تعداد: ۱۰۰۰

اشاعت دوم: جنوری ۲۰۱۳ء

تعداد: ۲۰۰۰

اشاعت سوم: فروری ۲۰۱۳ء

تعداد: ۲۰۰۰

Seven Springs Publishers, Islamabad

Mobile: 03445298545

قیمت: ۸۰۰ روپے

رابطہ برائے مصنف: shahziz@gmail.com

بلاگ: gen-shahidaziz.blogspot.com

Saeed Book Bank

واحد تقسیم کنندگان:

F-7 Markaz, Islamabad - Pakistan.

Tel: +92-51-2651656-57-58 (3 Lines)

Fax: +92-51-2651660

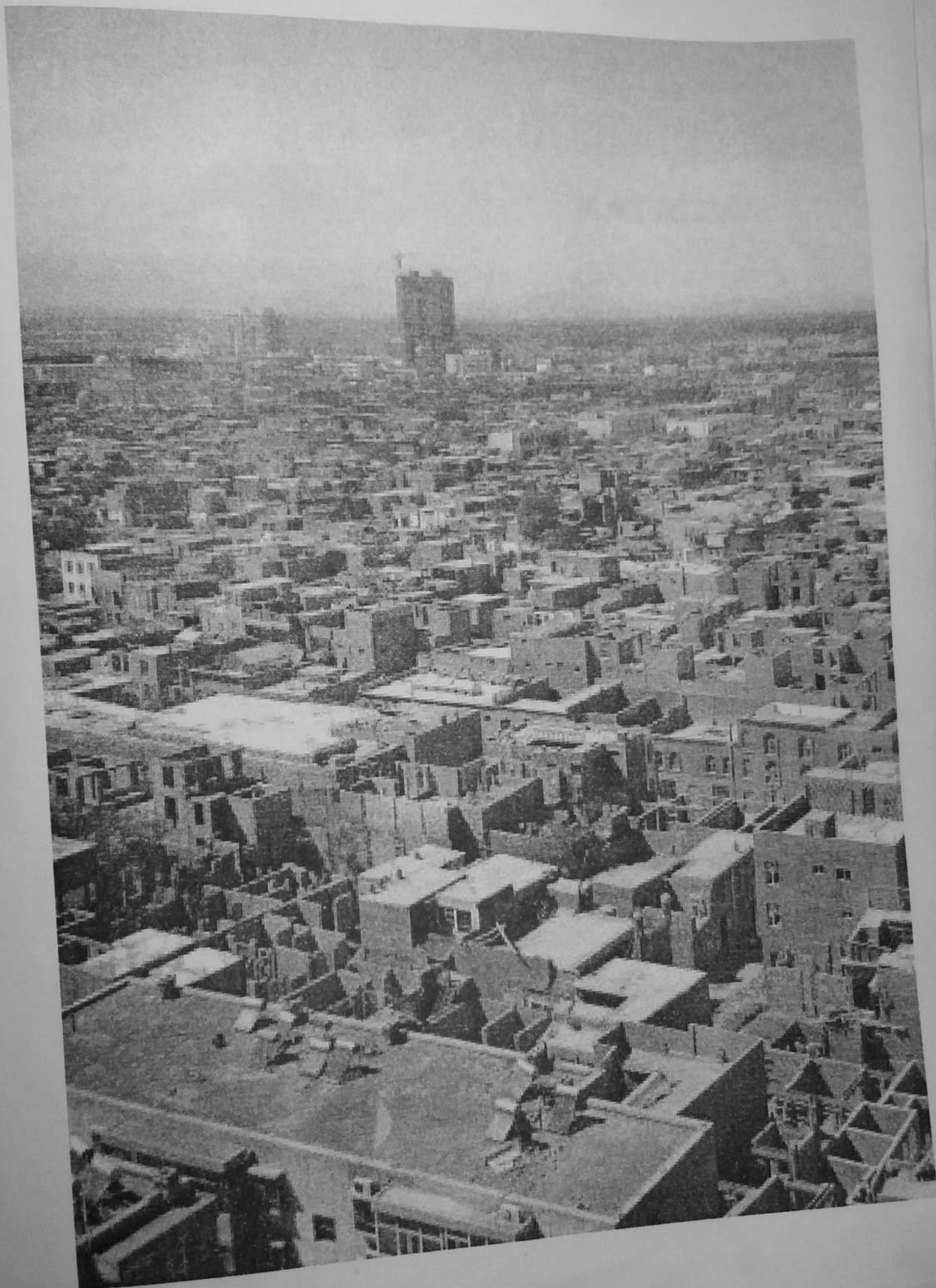
E-mail: info@saeedbookbank.com

sales@saeedbookbank.com

Website: www.saeedbookbank.com



اُن نو جوانوں کے نام، جن کے دلوں کی سچائی کا نور
جھوٹ کے ان اندھیروں میں اب بھی ٹمٹمار رہا ہے



انتسابِ فیض

آج کے نام

اور

آج کے غم کے نام

آج کا غم کہ ہے زندگی کے بھرے گلستاں سے خفا

زرد پتوں کا بن

زرد پتوں کا بن جو مراد لیس ہے

درد کی انجمن جو مراد لیس ہے

کلرکوں کی افسردہ جانوں کے نام

کرم خوردہ دلوں اور زبانوں کے نام

پوسٹ مینیوں کے نام

تائنگے والوں کے نام

ریل بانوں کے نام

کارخانوں کے بھولے جیالوں کے نام

اُن دکھی ماؤں کے نام

رات میں جن کے بچے بلکتے ہیں اور

نیند کی مار کھائے ہوئے بازوؤں میں سنبھلتے نہیں

دُکھ بتاتے نہیں

میتوں زاریوں سے بہلتے نہیں

اُن حسیناؤں کے نام
جن کی آنکھوں کے گل
چلمنوں اور درپچوں کی بیلوں پہ بریکار کھل کے
مُر جھاگئے ہیں

اُن بیہتاؤں کے نام
جن کے بدن
بے محبت ریا کاریوں پہ سچ سچ کے اکتا گئے ہیں
بیواؤں کے نام

گٹریوں اور گلیوں، محلوں کے نام
جن کی ناپاک خاشاک سے چاند راتوں کو
آ آ کے کرتا ہے اکثر وضو
جن کے سایوں میں کرتی ہے آہ و بکا
آنچلوں کی حنا
چوڑیوں کی کھنک
کاکلوں کی مہک

آرزو مند سینوں کی اپنے سینے میں جلنے کی یو

پڑھنے والوں کے نام
وہ جو اصحابِ طبل و الم
کے دروں پر کتاب اور قلم
کا تقاضا لئے، ہاتھ پھیلائے پہنچے
وہ معصوم جو بھولپن میں
وہاں اپنے ننھے چراغوں میں لو کی لگن
لے کے پہنچے جہاں

بٹ رہے تھے، گھٹا ٹوپ، بے انت راتوں کے سائے

مختصر داستانِ سفر

پیش لفظ

13

17

چُھ نہ جائے دیکھنا باریک ہے نوکِ قلم

۱

پہلا سفر - ابتدائے عشق

20

24

27

29

34

38

42

دیکھو اک صورت نے دل میں کیسی جوت جگائی

۲

صد اکس کی اندھیروں سے بلاتی ہے

۳

سنگ کٹ جاتے ہیں بارش کی جہاں دھار گرے

۴

گھڑی بھر کے لئے گونجا ہوا نغمہ

۵

جھکی چٹان، پھسلتی گرفت، جھولتا جسم

۶

شجر ہجرت نہیں کرتے

۷

نہ کوئی جادہ نہ کوئی منزل

۸

دوسرا سفر - آغازِ جنوں

46

49

55

58

60

64

67

74

خون کے دھبے دھلیں گے کتنی برساتوں کے بعد

۹

بھاگتے سایوں کی چیخیں، ٹوٹتے تاروں کا شور

۱۰

زمین میں پاؤں دھنسے ہیں، ہوا میں ہاتھ بلند

۱۱

میں ہوں اور اک محشر بے خواب آدھی رات کو

۱۲

یہ وقت زنجیر روز و شب کی کہیں سے ٹوٹی ہوئی کڑی ہے

۱۳

آسمانوں سے جوئے درد رواں

۱۴

مرے وطن کی جبین پر دمک رہا ہے جو زخم

۱۵

فصیلِ جسم پہ تازہ لہو کے چھینٹے ہیں

۱۶

تیسرا سفر - اُڑان

| | | |
|-----|---|----|
| 78 | ابھی سے جشنِ بہاراں! ابھی سے شغلِ جنوں! | ۱۷ |
| 83 | میں اپنے دشت سے گزرا تو بھید پائے بہت | ۱۸ |
| 86 | چلتے ہوئے پروں سے اُڑا ہوں، مجھے بھی دیکھ | ۱۹ |
| 91 | ہر گام پہ جگنو سا چمکتا ہے جودل میں | ۲۰ |
| 96 | چمن میں اہل چمن فکرِ رنگ و بو تو کرو | ۲۱ |
| 101 | یہ سنا تا اگر حد سے بڑھے کہرام ہو جائے | ۲۲ |
| 105 | آ کے گرا تھا کوئی پرندہ لہو میں تر | ۲۳ |

چوتھا سفر - شکستہ قدم

| | | |
|-----|---|----|
| 111 | چلی ہے رسم کے کوئی نہ سراٹھا کے چلے | ۲۴ |
| 116 | اُجاڑتے پہ ٹھوکروں سے بھری زمیں پر | ۲۵ |
| 120 | اُڑتے بادل کے تعاقب میں پھرو گے کب تک | ۲۶ |
| 124 | یہ زخم ہیں یا مہرباں کے | ۲۷ |
| 127 | پھر ہوا سے سلگ اُٹھے پتے | ۲۸ |
| 130 | میں کہیں ہمسفرِ ابر رواں کیوں نہ ہوا | ۲۹ |
| 133 | مضمحل لئے رُبابِ ہستی کی | ۳۰ |
| 137 | اب یہ بتا کہ روح کے شعلے کا کیا ہے رنگ | ۳۱ |
| 142 | میں اُس گلی میں اکیلا تھا اور سائے بہت | ۳۲ |
| 147 | آگ جب دل میں سلگتی تھی، دھواں کیوں نہ ہوا | ۳۳ |
| 151 | اپنے بے خوابِ کواڑوں کو مقفل کر لو | ۳۴ |

پانچواں سفر - ترنگ وجدان

| | | |
|-----|---|----|
| 156 | کوئی نہ جان سکا، ساز و رخت ایسا تھا | ۳۵ |
| 160 | آگ کے درمیان سے نکلا، میں بھی کس امتحان سے نکلا | ۳۶ |
| 163 | جو کرن قتل ہوئی، شعلہ خورشید بنی | ۳۷ |
| 165 | بدل رہا ہے جنوں زاویے اڑانوں کے | ۳۸ |
| 169 | شاخو! بھری بہار میں رقص برہنگی! | ۳۹ |
| 173 | یہ بستیوں کی فضا کیوں دھواں اُگلنے لگی | ۴۰ |
| 179 | میں ناپتا چلا قدموں سے اپنے سائے کو | ۴۱ |

چھٹا سفر - تشنہ لبی

| | | |
|-----|---|----|
| 186 | پر پرواز پہ یہ راز کھلا | ۴۲ |
| 189 | کون سا عرش ہے جس کا کوئی زینہ ہی نہیں؟ | ۴۳ |
| 192 | پس غبار بھی کیا کیا دکھائی دیتا ہے | ۴۴ |
| 196 | تیرگی ہے کہ اُمدتی ہی چلی آتی ہے | ۴۵ |
| 201 | لوگو مجھے اس شہر کے آداب سکھا دو | ۴۶ |
| 204 | ترانے گائیں تو کتوں کی آوازیں نکلتی ہیں | ۴۷ |

ساتواں سفر - نابینہ مصوّر

| | | |
|-----|--|----|
| 210 | سب تاج اُچھالے جائیں گے، ہم دیکھیں گے | ۴۸ |
| 215 | تنہا نہیں لوٹی کبھی آواز جس کی | ۴۹ |
| 221 | میں شاخ سے اڑا تھا ستاروں کی آس میں | ۵۰ |
| 223 | ایک شعلہ، پھراک دھوئیں کی لکیر | ۵۱ |
| 228 | رات تھی، میں تھا اور اک مری سوچ کا جال | ۵۲ |

236

240

248

256

259

267

270

276

284

289

آٹھواں سفر - زرد و پہر

| | |
|----|---|
| ۵۳ | بام و درخامشی کے بوجھ سے پُور |
| ۵۴ | یہ ماتم وقت کی گھڑی ہے |
| ۵۵ | نئی جہت کا لگے اب اس درخت میں پیوند |
| ۵۶ | سایہ کیوں جل کے ہوا خاک، تجھے کیا معلوم |
| ۵۷ | یہ وہ سحر تو نہیں، چلے تھے جس کی آرزو لے کر |
| ۵۸ | سوچو تو سلوٹوں سے بھری ہے تمام روح |
| ۵۹ | دیکھو تو اک شکن بھی نہیں ہے لباس میں |
| ۶۰ | تیرگی چھوڑ گئے دل میں اُجالے کے خطوط |
| ۶۱ | کیوں رو رہے ہو راہ کے اندھے چراغ کو |
| ۶۲ | میں نابینا مقصود ہوں |

نواں سفر - خاکِ رہ

294

297

301

304

307

310

317

321

324

327

| | |
|----|--|
| ۶۳ | اُونچی ہوں فصیلیں تو ہوا تک نہیں آتی |
| ۶۴ | تو نے کس بنجر مٹی میں من کا امرت ڈول دیا |
| ۶۵ | تیرے بول ہیں سارے گونگے شہروں کی گویائی |
| ۶۶ | تاحد خیال لالہ و گل، تاحد نظر بول یارو |
| ۶۷ | وہی جنوں ہے وہی کوچہء ملامت ہے |
| ۶۸ | کیسے کیسے یاروں کا بہروپ کھلا |
| ۶۹ | اب اپنے جسم کے سائے میں تھک کے بیٹھ رہو |
| ۷۰ | فضا کی ٹھہری ہوئی سانس پھر سے چلنے لگی |
| ۷۱ | یہ خاموشی کہاں تک؟ |
| ۷۲ | یہی تاریکی تو ہے غارِ رخسارِ سحر |

دسواں سفر - گوشہء تنہائی

| | | |
|-----|---|----|
| 336 | زمیں پہ پاؤں دھراتو زمین چلنے لگی | ۷۳ |
| 341 | عریانوں کو اوڑھ لیا شال کی طرح | ۷۴ |
| 344 | چھلکے سجے ہوں جیسے پھلوں کی دکان پر | ۷۵ |
| 346 | گجر بجا حکم خامشی کا، تو چپ میں گم ہو گئیں صدائیں | ۷۶ |
| 356 | سمٹ کے رہ گئے آخر پہاڑ سے قد بھی | ۷۷ |
| 363 | یہ آدمی ہیں کہ سائے ہیں آدمیت کے | ۷۸ |
| 366 | چھوٹی نہیں اپنوں سے کوئی طرزِ ملامت | ۷۹ |
| 372 | پھرتیرگی کے خواب سے چونکا ہے راستہ | ۸۰ |

گیارہواں سفر - اندھیرا سویرا

| | | |
|-----|---|----|
| 376 | حد سے جب اُونچے ہو جائیں قصر گرا کرتے ہیں | ۸۱ |
| 379 | تری بربادیوں کے مشورے ہیں آسمانوں میں | ۸۲ |
| 385 | یقین پیدا کر اے غافل کہ مغلوب جہاں تو ہے | ۸۳ |
| 391 | کس گھڑی سر پہ یہ لٹکی ہوئی تلوار گرے | ۸۴ |
| 395 | ملبوس خوشنما ہیں مگر جسم کھوکھلے | ۸۵ |
| 399 | یہ کیا کہ گوشہء صحرا میں تھک کے بیٹھ گئے | ۸۶ |

بارہواں سفر - نئی جہت

| | | |
|-----|---|----|
| 404 | دور سے صبح کی دھڑکن کی صدا آتی ہے | ۸۷ |
| 407 | کیا بچھ گیا ہوا سے لہو کا شراب بھی | ۸۸ |
| 411 | بس ایک چراغ کی خواہش، بس اک شرار کی آس | ۸۹ |
| 418 | اُٹھ کہ اب بزمِ جہاں کا اور ہی انداز ہے | ۹۰ |

آخری سفر - منزل مقصود

| | | |
|-----|--|----|
| 426 | | |
| 429 | دہر میں اسم محمدؐ سے اُجالا کر دے | ۹۱ |
| 433 | نئی کرن کو اندھیرے نکل نہیں سکتے | ۹۲ |
| 437 | فرد قائم ربط ملت سے ہے، تنہا کچھ نہیں | ۹۳ |
| 443 | خاص ہے ترکیب میں قوم رسولؐ ہاشمی | ۹۴ |
| 446 | تری تاریک راتوں میں چراغاں کر کے چھوڑوں گا | ۹۵ |
| 449 | مسلمان کو مسلمان کر دیا طوفانِ مغرب نے | ۹۶ |
| 453 | وہاں بھی تیری صدا کا غبار پھیلا تھا | ۹۷ |
| 456 | اب کہہ ڈوبا تو پھر نہ اُبھروں گا کبھی | ۹۸ |
| | کافروں اور منافقوں کا کہانہ ماننا | ۹۹ |

پیش لفظ

یہ کتاب، راہ عشق میں میرے جنون کی داستان ہے۔ ان ہی راہوں پر زندگی بھٹکتی رہی، مجھے مختلف سانچوں میں ڈھالتی رہی۔ گیلی مٹی کا بُت تھا، ڈھلتا رہا۔ نہ کوئی پیکر دلکش لگا، نہ کوئی منزل۔ نہ ہی کہیں ٹھہر سکا۔ وقت کے ساتھ ساتھ بدلتا رہا۔ یہ جانے بغیر کہ کیا ڈھونڈتا ہوں، دل کا چراغ لئے اندھیرے ٹوٹتا رہا۔ میری کتاب کو پڑھ کر شاید آپ سوچیں کہ نہ جانے یہ رومانی داستان ہے، تاریخ رقم کی ہے، یا پاکستان کی فلاح کے لئے کوئی دیوانوں کی راہ دکھائی ہے۔ نہیں، بلکہ میں نے اپنے ٹوٹے ہوئے حوصلے کو نئی زندگی دینے کی کوشش کی ہے، کہ اب بھی، اور جینے کو کچھ ہے۔ دل کی آواز کو کاغذوں میں سمیٹنے کی کوشش کی ہے۔

وقت کے دھارے کے آخری موڑ پر احساس کہ اپنی نوجوان نسل کے لئے پیچھے کیا چھوڑ کر جا رہا ہوں، میرے دل پر بوجھ ہے۔ ان نوجوانوں کا حوصلہ میں نے فوج میں رہتے ہوئے بھی دیکھا ہے اور پاکستان میں آئے زلزلوں اور سیلابوں میں بھی۔ یہی لازوال حوصلہ اس ملک کی تقدیر بدل سکتا ہے۔ انہی دلوں میں سچائی پلتی ہے، سچ بولنے اور سننے کی جرات۔ انہی محبت بھرے دلوں کے لئے میں نے اپنا دل کھولا۔ وہ جو دوسروں کا درد محسوس کر سکتے ہیں، ہاتھ بڑھا سکتے ہیں۔ جو منہ نہیں پھیرتے۔ اور میری کتاب کے صفحے تیزی سے نہیں پلٹیں گے کہ انگلیاں اٹھانے کے لئے مواد ڈھونڈیں۔ یہ کتاب اُن کے لئے لکھی جو اپنے دلوں میں جھانکنے کی ہمت رکھتے ہیں۔ جنہیں ہمارے معاشرے میں سچائے ہوئے جھوٹ کے اس بازار میں ہر بکا و مال سے گھن آتی ہے۔ یہ کتاب میں نے آپ کے لئے لکھی ہے۔

پہلے میں بھی آپ جیسا تھا، جیسے پہاڑی جھرنوں سے بہتا گھلپھلتی برف کا شفاف پانی۔ پھر رفتہ رفتہ ندیوں اور نالوں میں جا ملا۔ بڑا بننے کی جستجو میں دریاؤں میں بہہ نکلا۔ بڑا ہو گیا۔ اب میلے سمندر کے ساتھ ساحل پر سر پٹختا ہوں۔ ساری عمر محبتوں کا متلاشی رہا۔ یہ محبت آسمانوں میں رہتی ہے، جانتا نہ تھا۔ شاید راہ میں کہیں اپنا بچپن بیچ آیا ہوں، یا شاید کسی محبت کی کھوج میں اس کا سودا کیا ہو۔ اس بیوپار میں کیا کھویا، کیا پایا، آپ خود ہی فیصلہ کر لیں۔ میں ابھی کسی نتیجے پر نہیں پہنچ پایا۔

یہ میری طرح کھلی کتاب ہے۔ جو میرے دل میں تھا، سب لکھ دیا۔ سنی سنائی باتوں سے گریز کیا۔ جو یقین سے نہیں کہہ سکتا تھا، نہیں کہا۔ تجزیے اور اندازے میرے اپنے ہیں۔ شاید کچھ کہیں پڑھے بھی ہوں، بھول جاتا ہوں۔ جو بات دل کو لگی، اپنائی، میری ہوئی، فیض کی تمام شاعری بھی۔

اشعار کا استعمال اس لئے کیا ہے کہ میرے پاس اتنے حسین الفاظ نہیں کہ اپنے خوف اور اپنی امتگوں کو الفاظ میں ڈھال سکوں، آپ کے دل میں اُتار سکوں۔ اُن دلوں کو زندہ کر سکوں جنہیں یاس اور ناامیدی کے اندھیروں میں ڈبو یا جا رہا ہے۔ پاکستان کے حسین خواب میں اپنے یقین کا اظہار کر سکوں۔ جو پاکستان کو کھوکھلا کرنا چاہتے ہیں اُن سے لڑ سکوں۔ گدھوں کی یلغار کو روک سکوں۔ اب اس گرتے جسم میں جو دم باقی ہے، لگا سکوں۔

شروع میں جو داستان لکھی، وہ اس غرض سے کہ آخر میں جو کہہ رہا ہوں آپ اُسے نظر انداز نہ کر دیں۔ مجھے جو دکھائی دیتا ہے آپ کو بھی دکھاتا ہوں، یہ جانتے ہوئے کہ میری بینائی کمزور ہے۔ جو خدشات اور خطرات اس ملک کو لاحق ہیں، یقیناً آپ پر بھی واضح ہوں گے، مگر یوں کہہ دینے سے شاید آپ بھی اپنے ملک کے بارے میں سوچنے پر مجبور ہوں، آپ بھی حالات کو اپنی جہاں دیدہ نظروں سے دیکھیں، اور موسم کی بجائے کسی ایسے موضوع پر گفتگو کریں جو پاکستان کو سنوارنے کا ہو۔ پھر جب سب مل کر سوچیں گے تو یقیناً ہم کوئی راہ پالیں گے۔ اس قوم کی وہ صلاحیتیں جن پر آج ہماری نظر نہیں پڑتی، اجاگر ہو کر سامنے آئیں گی۔ جو نفرتیں یہاں بوئی جا رہی ہیں اُنہیں پہچان سکیں گے، اور اُن ہاتھوں کو بھی جو یہ بچہ بوتے ہیں۔ پھر محبتوں کی کشادہ راہ ہم پر عیاں ہوگی، اخوت اور بھائی چارے کا فروغ ہوگا۔ یہی ہمارے دین کی سیدھی راہ ہے۔

آج صرف اسی راہ پر چلنے میں ہماری سالمیت ہے۔ مگر اس راہ پر اس قدر خاردار جھاڑیاں اُگ چکی ہیں کہ دن کی روشنی میں بھی صاف نظر نہیں آتی۔ اس پر چلنے کے خیال سے بھی کچھ لوگوں کو خوف آتا ہے۔ اسی لئے آپ کو آواز دی ہے، کہ جھکی ہوئی گردنیں اس خوف کا مقابلہ نہیں کر سکتیں۔ اسی خوف کے آگے چمکتا سویرا ہے۔

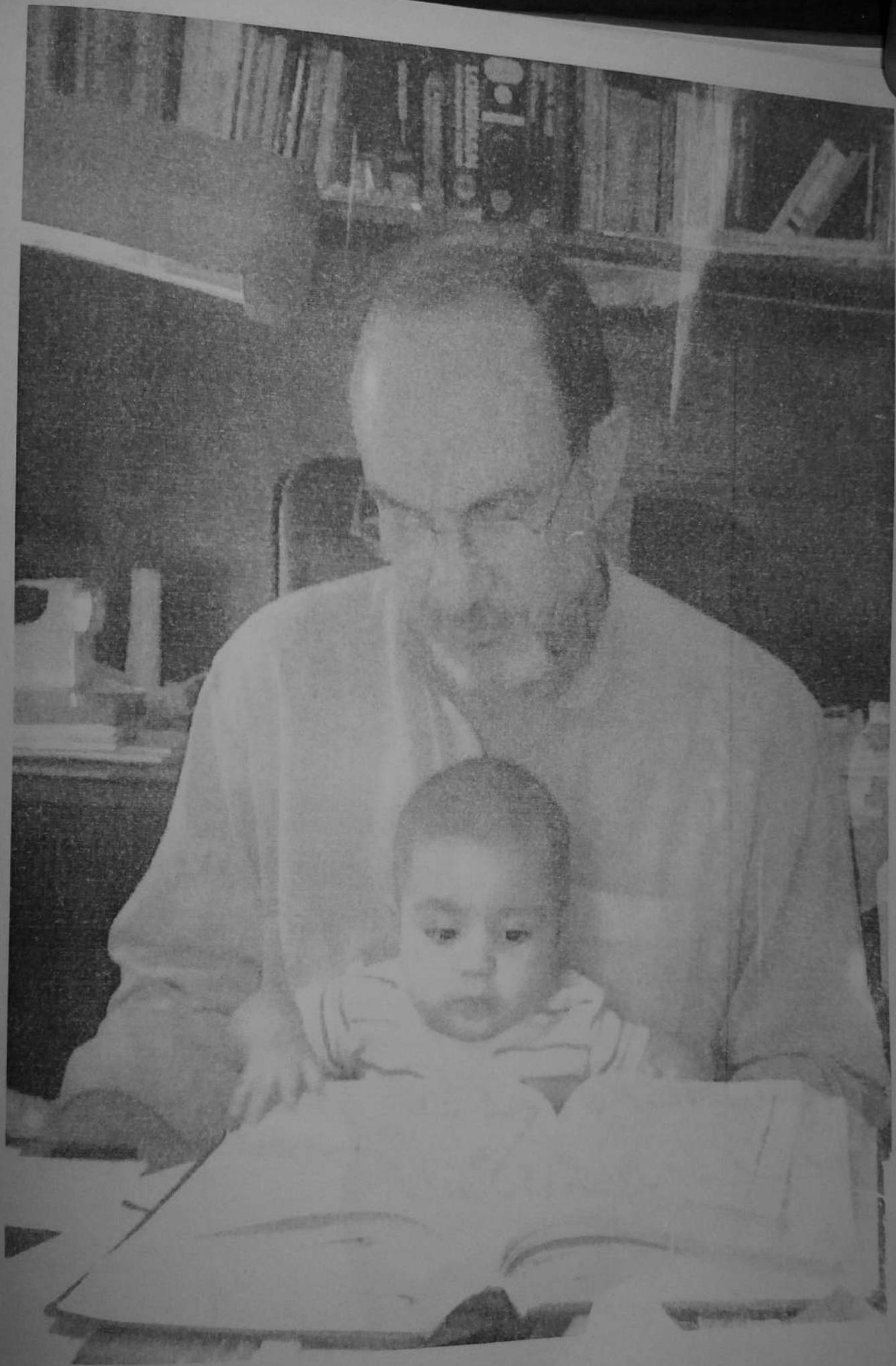
میں اُن تمام احباب کا شکریہ ادا کرنا چاہوں گا جنہوں نے مجھے یہ کتاب لکھنے کا حوصلہ دیا، پھر اپنے تاثرات سے مستفید کیا۔ میں ان کے نام یہاں لکھنے سے اس لئے گریز کر رہا ہوں کہ اپنی کوتاہیوں کا غبار اُن پر نہ ڈالوں۔ اپنی بیٹی سارہ کا نام ضرور لینا چاہوں گا جس کا ساتھ شروع سے آخر تک رہا۔ اُس کی محبت بھری تنقید نے اس کتاب میں رنگ بھرا۔ اللہ آپ سب کا محافظ ہو۔

شاہد عزیز

۱۲ اکتوبر ۲۰۱۲



کرو کج جہیں پہ سرِ کفن، مرے قاتلوں کو گماں نہ ہو
کہ غرورِ عشق کا بانگِ پین، پسِ مرگ ہم نے بھلا دیا
(فیض)



چھ نہ جائے دیکھنا بار یک ہے نوکِ قلم *

کوشش کے باوجود میں سچائی کے اُس مقام کو نہ پہنچ پایا کہ یہ لکھتے ہوئے دل پہ بوجھ محسوس نہ کرتا۔ جیسے ساری زندگی کا سچ، آخر میں آکر جھوٹ کے کچھڑ میں ڈبو دیا ہو۔ منہ پر بھی کچھڑ مل لیا ہو۔ پھر سالوں اُس میں دھنسے ہوئے پاؤں کھینچ کھینچ کر چلتا رہا۔ اب اس لکھنے سے خود نمائی کے سوا حاصل ہی کیا؟ جو کچھ کیا، اب اُس کو تنہائی میں بیٹھ کر بھگتو، پوری قوم بھگت رہی ہے۔ یہی رہ گیا تھا بس دل میں۔

دل تو دماغ کا محور ہے، خوابوں کا بھی۔ میں زندگی بھر خواب ہی دیکھتا رہا۔ شاید زندگی کی چھپی ہوئی کڑواہٹوں میں مٹھاس بھرنے کو۔ وہ خواب اونچی جگہوں اور کارناموں کے نہ تھے، صرف چاہت کے حسین لمحوں کے۔ پھر رفتہ رفتہ یہی چاہت پھیل کر اوروں کے دکھ درد کو چھونے لگی۔ پھر آسمانوں میں راہ تلاش کرنے لگی۔

فوجی نوکری کے آخری ایام تک تو کچھ ایسا نہ کیا تھا جس پر ان مٹ نہ امت ہوتی، پھر جو کچھ اس دردِ دل کی خاطر کر گزرا اور جس انجام پر اس ملک کو پہنچایا، آج اُس کے بوجھ تلے پس رہا ہوں۔ ویسے تو زندگی میں جو بھی کیا، اکیلے ہی کیا۔ کوئی ساتھ دینے پر آمادہ ہی نہ ہوتا تھا۔ لیکن جو بھی کیا وقت نے اسے واپس پھیر دیا۔ کچھ بھی بدل نہیں۔ پھر بھی مجھ سے جو بن پایا، میں کرتا رہا۔ اکیلے ہی۔ پھر فوجی زندگی کے آخری موڑ پر، قانون توڑ کر، کسی اور کا ساتھ دیا اور سب کچھ بدل گیا۔ پاکستان کا مطلب بھی، ہماری پہچان بھی، قوم کی تقدیر بھی، قبلہ بھی۔ لیکن جو بدلنا چاہا تھا، جوں کا توں ہی رہا۔ بلکہ اور بگڑ گیا۔ ایک چمکتے ہوئے خواب کو حقیقت میں بدلتے بدلتے، اس میں اندھیرے گھول دیئے۔ صرف ایک دن ہاتھ میں لگام تھی --- ۱۲ اکتوبر ۱۹۹۹ء، پھر اُس کے بعد پاؤں بھی رکابوں میں نہ رہے۔ اب لکھنا کیا؟ اب عمر کے اس حصے میں برہنہ ہونے پر کوئی کیا دیکھے؟

پھر کبھی سوچتا ہوں کہ شاید چند نو جوان ہی میری زندگی کی ٹھوکروں سے کچھ سیکھ سکیں۔ ان ہی سوچوں میں پانچ سال گزر گئے۔ اب وقت ہی کتنا رہ گیا ہے؟ اب تو گھٹا سر پر آچکی ہے۔ ان پانچ سالوں میں باغبانی کے سوا کچھ نہ کیا۔ اور اب تو عرصے سے اس میں بھی دل نہیں بہلتا۔ غم تو وقت گزرنے کے ساتھ گھٹ ہی جاتا ہے، مگر کوتاہیوں کا بوجھ وقت کے ساتھ ساتھ بڑھتا رہتا ہے۔ ان پر اور گرہیں لگتی جاتی ہیں، کوتاہیوں کے انجام اپنی جگہ جم جاتے ہیں، پھر نئے اندھیروں کو جنم دیتے ہیں، اور ان کی جڑیں کینسر کی طرح پھیلتی جاتی ہیں۔

میں نے زندگی کے اہم ترین، اور شاید آخری موڑ پر قوم کی تقدیر سے کھیلنے والے مداری کے مدار میں الجھ کر، کچھ اپنے خوابوں میں کھو کر، اس ملک کو اس آگ میں پہنچایا، جواب اتنی تیزی سے پھیل رہی ہے جیسے کچھ ہی عرصے میں سب کچھ جلا ڈالے گی۔ وقت بہت کم ہے، اور دل کا وبال کا غنہ پر بکھیرنے کے سوا اور کوئی راہ بھی نظر نہیں آتی۔

شاید کاغذ بھرنے سے دل کا بوجھ کم نہ ہو۔ نہ ہو اس سے کچھ بھی۔ نہ ہی میرے دل کی وحشت بہلے، نہ ہی اس ملک میں بہتی خون کی ندیاں تھمیں، نہ ہی کسی آنکھ سے آنسو بند ہوں، نہ ہی میرا رب مجھ سے راضی ہو۔ شاید کچھ بھی نہ ہو، بس زندگی کی چند گھڑیاں اور گزر جائیں۔ یا پھر شاید، اس میں سے کوئی راہ نکل آئے۔ کوئی دل جاگ اٹھے۔ ان اندھیروں میں امید کی کوئی کرن ہی جگمگا جائے۔ شاید میں اپنی زندگی میں یہ دیکھ سکوں۔ یہ اُن گناہوں کا کفار اتو نہ ہوگا جو میں نے کئے، مگر شاید اس درد کا ہی کچھ مداوا ہو، جو میں اپنے پہلو میں چھپائے پھرتا ہوں۔

اللہ نے اس قوم کو بے پناہ صلاحیتوں اور بیش قیمت وسائل سے نوازا ہے۔ اگر ہم اللہ کا نام لے کر، خود پر بھروسہ کریں اور آپس کی رنجشیں بھلا کر، سب مل کر، اپنی تقدیر بدلنا چاہیں، تو آج بدل سکتے ہیں، کوئی ہمیں روک نہیں سکتا۔ مجھے یقین ہے کہ اللہ کی یہی رضا ہے، اور ایسا ہی ہوگا۔ آج نہیں تو کل۔

جب تک ہم ہاتھ پہ ہاتھ دھرے بیٹھے رہیں گے، یوں ہی چٹکی میں پستے رہیں گے۔ ہر فیصلہ ہمارا ہے۔ آؤ، ہاتھ میں ہاتھ ڈال کر کھڑے ہوں، اور ان اندھیروں سے آگے، نئی صبح کی پھوٹی کرن کو دیکھیں۔ آؤ، ملکر قدم بڑھائیں۔ آؤ۔

"اللہ حامی اور مددگار ہے اُن لوگوں کا جو ایمان لاتے ہیں، نکالتا ہے اُن کو تاریکیوں سے روشنی کی طرف"

(القرآن 2:257)

پہلا سفر
ابتدائے عشق

دیکھو! اک صورت نے دل میں کیسی جوت جگائی*

سب سو رہے ہیں۔ شہر سے اتنی دور رات بہت خاموش ہے۔ صرف جھینگروں اور مینڈکوں کی آوازیں ہیں، اور ذہن میں ایک عجیب سا سناٹا۔ میں نے بھی کس بے رونق جگہ گھر بنا لیا۔ وہ روشنیوں کے شہر میں رہتی تھی، پھر بھی میرے ساتھ آگئی، اس ویرانے میں۔ وہ تو اُجاڑ پہاڑوں میں بھی میرے ساتھ رہنے پر مان گئی تھی۔ شاید مجھے بہلانے کو۔ لیکن سہم گئی تھی، کہ کہیں یہ دیوانہ اس خواب کو سچ نہ کر دے۔ مگر اُن دنوں ہمارے پاس گھر بنانے کے پیسے کہاں تھے۔ صرف کاغذ پر نقشے بناتے تھے، خواب دیکھتے تھے۔ پھر میں نے اپنے خواب سکیٹر لئے۔ اُس کی سہمی ہوئی ہاں مجھ پر بھاری تھی۔ اور ہم آبادی کے نزدیک آگئے، شہر سے دور، ایک گاؤں کے کنارے۔

آج پہلا روزہ تھا۔ میرے پوتے اور نواسی کی روزہ کشائی بھی۔ وقت کتنی تیزی سے گزر گیا۔ کیا بس یہی تھا؟ اسی کو زندگی کہتے ہیں؟ اس ہی کے تعاقب میں ساری جستجو لگا دی! یہ تو بہت چھوٹی سی تھی! چند لمحوں میں ذہن کے خاموش پردے پر اس کی تصویریں گزر جاتی ہیں۔ بے ترتیب زندگی کے لمحے بھی بے ترتیبی سے ایک دوسرے میں گھل جاتے ہیں، ضم ہو جاتے ہیں۔ جیسے زندگی کو ایک نئی ترتیب دینا چاہتے ہوں۔ نہ جانے کیوں آج ان تصویروں میں کوئی رنگ نہیں۔ پھکی پھکی سی میرے دماغ کے پردے پر پڑتی ہیں، پھر تحلیل ہو جاتی ہیں۔ ساری لگن، ساری خواہش کا حاصل کیا ہوا؟ کیا میرے سارے خواب صرف زندگی میں رنگ بھرنے کا ایک بہانہ تھے؟ یا پھر میرے منجمد وجود کو ماند سراب گھسیٹنے کی کوئی آسمانی چال؟

طوفان کس قدر شدید ہے۔ اور میں اس کے خلاف چلنے پر مُصر۔
لگتا ہے مجھے پیچھے ہی دھکیل دے گا۔ ایک ایک قدم کسی جنگ سے کم نہیں۔
کیڑے کی طرح زمین پر رینگ رہا ہوں۔

ہوا کی شدت سے بارش کے چھوٹے چھوٹے قطرے ہزاروں سوئیوں کی طرح
میرے چہرے میں چُبھ رہے ہیں۔

بارش کبھی اچانک بہت تیز ہو جاتی ہے، پھر مدہم اور پھرتیز۔

ہوا عجیب سروں میں لگاتار چیخ رہی ہے۔ کوئی فریاد نہیں ہے، صرف نوحہ۔
بادل کتنے نیچے آ گئے۔ دل چاہتا ہے اس نرم کمبل کو کھینچ کر اوڑھ لوں۔
اس میں چھپ کر تمہاری آغوش میں سو جاؤں،
اور ویسا ہی سکون میرے وجود میں پھیل جائے
جیسا ماں کی گود میں سوئے ہوئے ننھے سے بچے کو ملتا ہے۔

شام کتنی اندھیری ہو گئی۔

بجلی کی، جلتی بُجھتی، چمک میں ایسے لگتا ہے جیسے درخت شدتِ آرزو سے،
رُک رُک کر، جھٹکوں سے ناچ رہے ہوں۔
عجیب سا دیوانگی کا رقص۔
جیسے ملنگی کسی مزار پر۔

اُف! یہ بادل کتنی زور سے گرجا۔ روح تِک لرز گئی۔ چمک سے آنکھیں بجھ گئیں۔
یہ کیسا نور ہے؟ اس سے تو اور بھی اندھیرا چھا گیا!
وہ سہم کر مجھ سے لیٹ گئی۔
کیا بجلی مجھ پر گری ہے؟

"تم ڈرو مت، میں ہوں نا"۔ وہ میرے بازوؤں پر گال رکھے مسکرا رہی تھی۔
یہ بادل ہیں یا اُس کے لمبے بال ہوا میں اُڑ رہے ہیں، جن میں پھنس کر
پانی کی ننھی ننھی بوندیں لاکھوں ہیروں کی طرح چمک رہی ہیں۔

ہم ہاتھوں میں ہاتھ ڈالے طوفان کی تیز ہوائوں میں، بادلوں کے ساتھ اُڑ رہے ہیں۔
زمین ہمارے قدموں کے نیچے، بہت دور نظر آ رہی ہے۔
اور اُفق پر ہر طرف صرف وہ!

پہلا سفر ابتدائے عشق

میں اُن دنوں ڈھاکہ میں میٹرک کی کلاس میں پڑھتا تھا۔ وہ کراچی میں رہتی تھی۔ میں روز شام ٹیوٹر (tutor) سے پڑھنے جاتا، بارش ہو یا طوفان۔ پگڈنڈیوں پہ آہستہ آہستہ چلتے ہوئے ایسے ہی خواب سارے راستے میرے ساتھ ہوتے۔ میں صرف اُس ہی کے خواب دیکھتا، اُس ہی کی مسکراہٹوں میں زندہ رہتا۔ ہر چہرہ اُس ہی کا چہرہ تھا، ہر آواز اُسکی آواز۔ میرا آسمان بھی وہ تھی اور میری زمین بھی، میرا اوڑھنا بھی اور کچھونا بھی۔ میری دنیا میں اور کوئی نہیں تھا۔ صرف وہ۔ اور وہ ان تمام باتوں سے بے خبر، یہاں سے بہت دور، اپنی ہی دنیا میں رہتی تھی۔ ہنسی، کھلکھلائی، چمکتی، چمکتی، دنیا۔ جس میں مجھ جیسی، گیلے ٹاٹ کی مانند، بوسیدہ روح کی کوئی جگہ نہیں تھی۔ مگر میرے تخیل کی دنیا میں وہ۔۔۔ ہنسی، کھلکھلائی، چمکتی، چمکتی، دنیا۔ کیسے سانس لیتا؟ میرے روز و شب پر بچپن ہی سے ایک چپ کا سایہ چھا گیا۔ ہر وقت میرے ساتھ ہوتی۔ پھر میں اس دنیا سے باہر کیسے آتا، کیسے سانس لیتا؟ میرے روز و شب پر بچپن ہی سے ایک چپ کا سایہ چھا گیا۔ خاموشی کا تریاق چپ چاپ مجھے چاٹتا رہا، اور میں اس خاموشی میں بند ہو گیا۔۔۔ آگ کے لمبے لمبے ستونوں۔۔۔

کیسی پُر اسرار طاقت تھی جس نے زندگی میں کڑواہٹیں بھر دیں، پھر انہی کڑواہٹوں میں سکون بخشا۔ دل نے انہی میں مٹھاس پائی۔ ایک جادو تھا جس کے دام میں پھنس کر ہنسنے کے بجائے رونے میں دل تسکین پاتا۔ کڑواہٹ شیریں لگتی۔ اس کشش نے مجھے زمین سے لگا دیا، زندگی کی سب منطقیں اُلٹ دیں اور ایسی پیاس جگائی جو کبھی کبھ نہ پائی۔

والد صاحب، جنہیں ہم پاپا کہتے تھے، فوج میں تھے، ہر سال دو سال میں شہر بدل جاتا اور سکول بھی۔ ٹیچر بھی نئے، دوست بھی نئے۔ کسی چیز میں ٹھہراؤ نہ تھا، نہ کسی سے لگاؤ۔ پاؤں کہیں جمنے ہی نہ پاتے۔ ہر کلاس میں بمشکل پاس ہوتا۔ نویں جماعت کا امتحان سرسید سکول، راولپنڈی سے دیا۔ سکول کا امتحان تھا۔ مغربی پاکستان میں بورڈ کا امتحان دسویں کے بعد اکٹھا ہوتا تھا۔ سائنس لیبارٹری کے انٹینڈنٹ کو ایک چھوٹا سا ریڈیو بنا کر دیا، جس کا بٹن دبائیں تو لوکل سٹیشن آتا تھا، اور بس۔ اس رشوت کے عوض اُس سے دوستی بڑھائی اور پھر جب سائنس اور ریاضی کا پرچہ اُس نے سائیکلو سٹائل کیا، تو ایک کاپی ہمیں بھی مل گئی۔ ریڈیو بنانے کا کارنامہ میرے ایک کلاس فیلو کا تھا۔ وہ بھی میری طرح نالائق رہا ہوگا۔ اس پر بھی طرہ یہ کہ سائنس کے دس میں سے چھ سوال کرنے تھے، تین ہی یاد کئے، اور ریاضی کے بھی دس میں سے تین ہی سوال جیومیٹری باکس پر کمپس کی نوک سے کھرچ کر لکھ لئے، اور امتحان کے کاغذ پر جوں کے توں اتار دیے۔ بس صرف پاس ہونے کے نمبر چاہیے تھے۔ اس سے زیادہ تو کبھی چاہا ہی نہیں تھا۔

اب میٹرک کا امتحان ڈھاکہ سے دینا تھا کیونکہ والد صاحب کی تبدیلی یہاں ہو گئی تھی۔ یہاں کا تو سلیپس ہی اور تھا اور خاصا مشکل۔ سب کتابیں مختلف تھیں۔ میرے تمام ہم جماعت نویں کا بورڈ کا امتحان دے چکے تھے۔ مجھے نویں اور دسویں دونوں کا اکٹھا بورڈ کا امتحان دینا پڑا۔ نویں کی کتابیں کلاس میں تو پڑھائی نہیں جاتی تھیں، نہ میں اُن سے واقف تھا، پھر دسویں کی کتابیں مجھے کیسے سمجھ آتیں۔ پہلی بار سکول کے بعد یونٹن لینی شروع کی۔ بہت ہی کڑا وقت تھا۔ زندگی اتنی سخت ہو جائے گی، کبھی سوچا بھی نہیں تھا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

کیا پتا تھا کہ جس خوابوں سے بھرے راستے پر میں چل پڑا تھا اُس پر صرف پتھر ہی نہیں تراشنے تھے، یہ تو ایک عمر بھر کا روگ تھا، جو میں نے انجانے میں سینے سے لگا لیا۔ اب کھیل کود کے بے فکر دن گزر چکے تھے۔ مجھے کچھ بننا تھا۔ دکھانا تھا کہ میں بھی اس لائق ہوں کہ مجھ سے کوئی محبت کرے۔ شاید یہی جستجو مجھے ساری زندگی گھسیٹتی رہی۔ کم عمری کے اس عشق نے ذہن کے تانے بانے ہی بدل ڈالے، زندگی کا رخ ہی موڑ دیا۔ صرف تعلیم ہی نہیں، میری ہر چیز سنور گئی۔ بس دل بجھ گیا۔ اور میں اُسے بہلاتا ہی رہا۔

صد اکس کی اندھیروں سے بلاتی ہے *

بچپن، بغیر کسی اُف کے، کتنی جلدی گزر گیا۔ لگا جیسے صرف چھوکر چلا گیا ہو۔ بچپن کیا، ساری زندگی ایسے ہی گزر گئی۔ کچھ بھی ہاتھ نہ آیا۔ کچھ بھی ٹھہرا نہیں۔ وقت کے ساتھ سب بے معنی ہو گیا، امنگیں بھی، غم بھی، امیدیں بھی اور خوف بھی۔ صرف محبتیں رہ گئیں۔۔۔۔۔ جینے کے سہارے، صبر کا دلا سہ۔

میری پیدائش ۳۰ دسمبر ۱۹۴۸ء کی ہے۔ لاہور کے لیڈی ریڈنگ ہسپتال میں پیدا ہوا۔ می بتاتی تھیں کہ میں نے کبھی بھوک سے رو کر دودھ نہیں مانگا۔ بس چُپ چاپ کھٹولے میں، توجہ کے انتظار میں، پڑا رہتا۔ شاید خاموشیاں ساتھ ہی لایا تھا۔ کبھی تو بڑا بھائی دودھ کی بوتل میرے منہ سے چھین کر پی جاتا، مگر میں اس پر بھی کبھی نہ رویا۔ بڑے ہو کر بھی کبھی کچھ مانگا نہیں۔ میں بھولا بچہ تھا۔ ہر چیز کا یقین کر لیتا۔ سچ خود بخود منہ سے نکل آتا۔ سب میری باتوں پر ہنستے اور میں شرماتا۔ اگر کبھی جھوٹ بولا بھی تو بس بوکھلاہٹ میں، شرمندگی چھپانے کو۔ کبھی دھوکہ دینے کے لئے نہیں۔ اُس پر بھی پاپا بہت خفا ہوتے، اور مجھے اُن کی خفگی بالکل اچھی نہ لگتی تھی۔ میں اُن سے بہت متاثر تھا۔

جب چھوٹا تھا، اندھیروں سے ڈرتا تھا۔ ہم ایک سال کے فرق سے تین بھائی تھے۔ میں بیچ کا۔ ایک رات ہم تینوں گھر کے باہر کھیل رہے تھے۔ اُن دنوں ملیر کینٹ بہت سنسان ہوتا تھا۔ دور دور گھر، بیچ میں کیکر کی جھاڑیاں۔ سناٹا۔ رات کو گھر سے باہر دیکھو تو لگتا کسی جنگل میں ہیں۔ سنسان رات میں دروازے کے باہر لگے بلب پر پتنگے اُڑ رہے تھے۔ میں اس پہلی سی روشنی کے گرد گھومتے پتنگوں کا رقص دیکھنے میں محو تھا کہ میرے بڑے بھائی نے ایک پتنگا پکڑ کر خوف ناک آواز کے ساتھ میرے منہ کے قریب کر دیا۔ میں اتنی زور سے چیخا کہ پاپا گھبرا کر باہر آ گئے۔ جب ماجرا پوچھا تو زمین سے ایک پتنگا اٹھا کر روشنی کے نیچے کیا، "دیکھو کتنا چھوٹا سا ہے۔ اس سے ڈرتے ہو؟" بتی کے نیچے کھڑے ہر طرف خوف ناک اندھیرا ہی دکھائی دیتا تھا۔ میں نے کہا، "نہیں، اندھیرے سے"۔ پھر انھوں نے شاید کچھ اس قسم کی باتیں کہی ہوں گی، "بیٹا اندھیرے سے کوئی چیز نہیں بدلتی، صرف آپ کو نظر نہیں آتا۔ اندھیرے کا ڈر ہم خود پیدا کرتے ہیں، اس کی کوئی حقیقت نہیں۔ آپ یہیں اکیلے کھڑے رہ کر دیکھیں، میں قریب ہی ہوں۔ اگر کوئی خطرناک چیز ہو تو مجھے آواز دیں۔ اگر صرف خیال ہی ہے، تو وہ آپ کا ہی پیدا کیا ہوا ہے، اُس سے کیا ڈرنا؟" یہ کہہ کر انھوں نے دونوں بھائیوں کو توالیہ اندر کر لیا، اور دروازہ بند کر کے مجھے باہر اکیلا چھوڑ دیا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

میں بلب کی مدہم سی روشنی کے نیچے ہزاروں پتنگوں میں گھرا ہوا کھڑا تھا۔ وہ میرے ارد گرد اڑ رہے تھے، میرے منہ سے ٹکرا رہے تھے، میرے اوپر بیٹھ رہے تھے۔ ہر طرف اندھیرا چھایا ہوا تھا۔ آنکھیں پھاڑ پھاڑ کر، دھڑکتے دل کے ساتھ، میں اس اندھیرے میں گھورتا رہا۔ آنکھ جھپکنے کا بھی حوصلہ نہ تھا۔ نہ جانے کن چیزوں سے خوفزدہ تھا۔ گیدڑوں کی آوازیں رات کے سناٹے کو کاٹ رہی تھیں، دور تھے، پر یوں لگتا جیسے ابھی قریب آجائیں گے، کیکر کی جھاڑیوں سے نکل کر مجھے کھالیں گے۔ مگر میں کسی کو آواز کیسے دیتا، بزدلی کا الزام کیونکر سہتا۔ سہا ہوا یوں ہی کھڑا رہا۔ کچھ دیر میں جان لیا کہ نہ ہی پتنگوں میں کوئی خطرہ تھا اور نہ ہی وہ آوازیں قریب آتی تھیں۔ نہ ہی رات کا اندھیرا کاٹا تھا۔ مگر دل میں پھر بھی خوف کی لہریں اٹھ رہیں تھیں۔ اس انجانے خوف کا کیا کرتا؟ یہ باہر نہیں تھا، میرے اندر تھا۔ کوئی راہ نہ پا کر اسے اپنا بنا لیا۔ میری خوف زدہ تنہائی کے خاموش سفر کا بیج شاید اُس رات قدرت نے میرے دل میں بودیا تھا۔ دروازے کی چوکھٹ پر، دھڑکتے دل کو لئے بیٹھ گیا۔ ایک تنکے سے زمین پر پڑے پتنگوں کو الٹا رہا۔ وہ شاید مر رہے تھے۔ زمین پر گرے اُن کے پر، بلب کی روشنی میں چمکتے تھے۔ پروں کے پاس آنسو ٹپکتے تھے۔

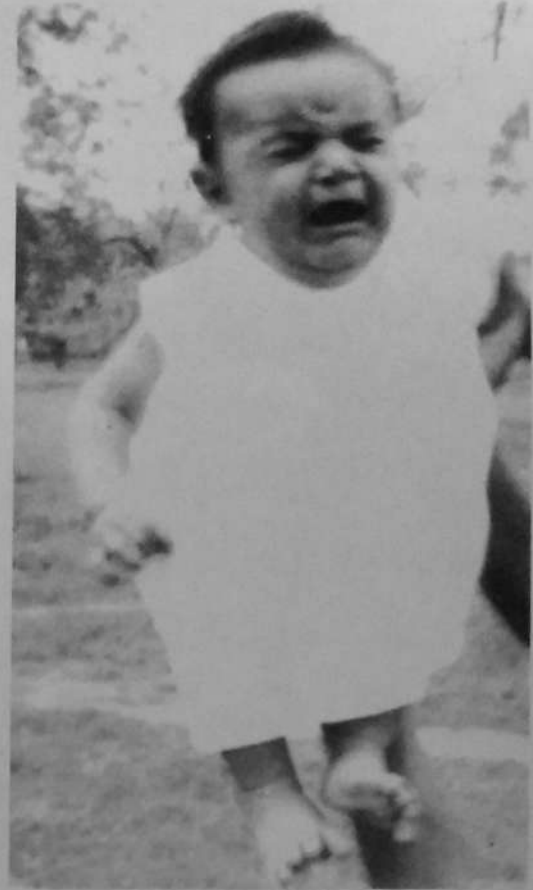
پتی دو پہر میں سارا دن کھیلا کرتا، دن بھر باہر پھرتا۔ کبھی نالے پر مچھلیاں پکڑنے، کبھی کسی کے گھر سے امرود چرانے، کبھی اونچی چھتوں سے لٹک کر کرتب دکھانے، کبھی لمبی لکڑی کے سرے پر سی کے پھندے بنا کر بلوں سے نکلنے سا نڈے پھانسنے، پھر اور بچوں کو ان سے ڈرانا۔ کبھی یوں ہی مارے مارے پھرتے رہنا، پتنگیں اڑانا، بننے کھیلنا، کتیا کو بچے دیتے دیکھنا۔

ایک مرتبہ کوئٹہ میں خانہ بدوشوں کے خیموں کے پاس سے گزرا، پھر اُن کے بارے میں پوچھا، اور تب سے دل میں اُن ہی کی سی زندگی بسر کرنے کا شوق اُبھر آیا۔ جب بھی وہ کہیں نظر آتے میں حسرت سے اُن کو دیکھتا اور اُن کی زندگی پہ رشک کرتا۔ اُن ہی کے خیمے اور بیابانوں کی زندگی میرے ذہن میں گھومتی رہتی۔ اُس وقت میں پانچویں جماعت میں تھا۔ کلاس میں بھی کھڑکی سے باہر زیادہ توجہ رہتی۔ گھر والے سب اس ہی پر خوش ہو جاتے کہ بچہ پاس ہو گیا، اگلی جماعت میں چلا گیا۔ اُن دنوں اتنا مقابلے کا ماحول بھی نہ تھا اور نہ ہی ماں باپ اتنی پڑھائی کی فکر کرتے۔ بچپن یوں ہی ہنسی خوشی گزر گیا۔ نہ کوئی غم تھا، نہ فکر۔

بڑا ہو کر بھی بچوں کی سی باتیں کرتا تھا۔ جب فوج میں افسر ہو گیا تو ایک بارمی پیار سے مجھے دیکھ کر کہنے لگیں، "میرے سب بچے بڑے ہو گئے، بس یہ بڑا نہیں ہوا"۔ شاید وہ بچپن آج بھی میرے دل سے نکلا نہیں۔ اب بھی اُس ہی طرح یقین کر لیتا ہوں۔ دل کھول کر رکھ دیتا ہوں۔ لوگوں کی ہنسی سہتا ہوں، ہنستا ہوں۔



آپا کی گود میں



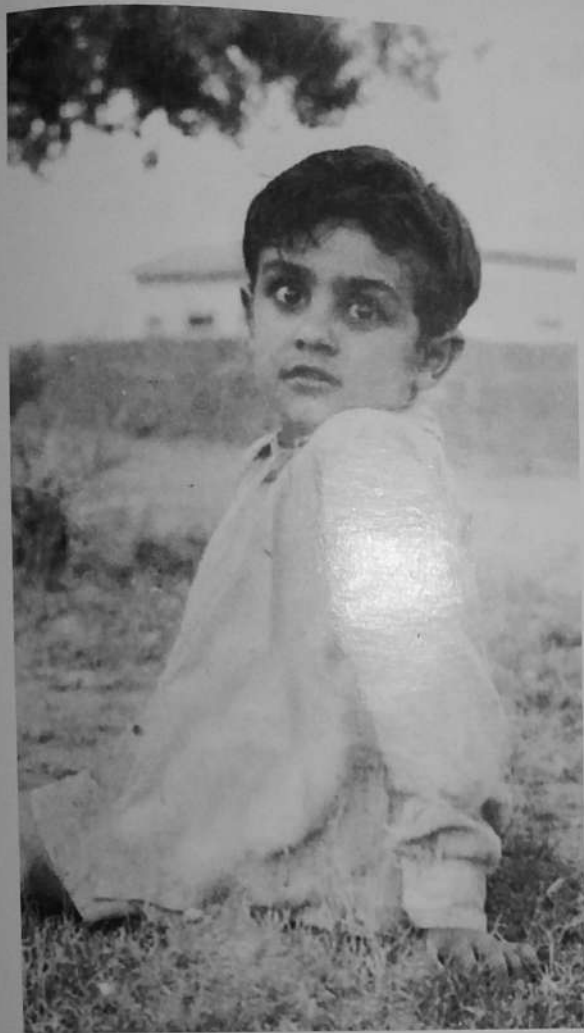
روتے ہوئے



ہنستے ہوئے



ممی کی گود میں



بڈی، ملیر کینٹ



پاپا، مئی، طارق، شاہد، راشد، صفیہ



پہلا سفر ابتدائے عشق

سکول کی گرمیوں کی چھٹیاں گزارنے، بہت چھوٹی عمر سے ہی، ہر سال ٹرین پر بیٹھ کر خالہ کے گھر جایا کرتا تھا۔ وہ میرا بہت لاڈ کرتی تھیں۔ جب میری والدہ انیس برس کی تھیں تو اُن کے چار بچے تھے، سب سے بڑا تین سال کا۔ میں دوسرے نمبر پر تھا، پھر ایک بھائی ایک سال کا اور ایک نوزائید بہن۔ میری خالہ بڑی بہن تھیں، اُنھوں نے کچھ عرصے مجھے پالا، تا کہ چھوٹی بہن پر اتنا بوجھ نہ پڑے۔ میں تب سے اُس گھر کا حصہ بن گیا، اور یہ لگاؤ آخر تک رہا۔ پھر آخری عمر میں خالہ، جنھیں میں بھی اپنی ماں کی طرح آپا کہتا تھا، میرے پاس ہی رہیں۔ اور وہیں دنیا سے رخصت ہوئیں۔

خالہ کی ایک ننھی سی بیٹی تھی۔ کم عمری میں ہی بہنوں کو ایک مرتبہ بات کرتے سن لیا کہ ان دونوں کی شادی کر دیں گے۔ شاید وہ یوں ہی مذاق تھا، مگر میرے شرمیلے دل میں وہ گھس بیٹھا اور میری کائنات ہی بدل ڈالی۔ پہلے تو اُسے آم کے پیڑ پر، اور کبھی پانی کی اونچی ٹینکی پر چڑھا کر چھوڑ دیتا، اور وہ روتی رہتی کہ نیچے اتار دو۔ کبھی کیلوں کے پیڑوں تلے ہم پانی کی چھوٹی چھوٹی نالیاں بناتے، اُن پر ننھی ننھی کشتیاں چلاتے، پانی کے کنارے چھوٹا سا گھر بناتے، اور گھنٹوں یوں ہی کھیلتے رہتے۔ میرے دل میں احساس تھا کہ ہم دونوں ہمیشہ ساتھ ہی رہیں گے۔ پھر آہستہ آہستہ وہ مجھے اچھی لگنے لگی۔ اُسکی آنکھیں چمکتی تھیں، ہنسی کھلکھلاتی تھی۔ سب سے منفرد لگتی۔ انجم تھی ہی ایسی، میری آنکھوں میں ستاروں کی طرح چمکتی ہوئی۔ کچھ میرے بس میں نہ تھا۔ یہ احساس مجھے جب پہلی بار ہوا تو میں ساتویں جماعت میں پڑھتا تھا۔ مگر میں نے شرم کے مارے کبھی اُسکو کچھ کہا نہیں۔ سالوں اس ہی طرح بتا دیئے۔ بس خواب دیکھتا رہا۔

سنگ کٹ جاتے ہیں بارش کی جہاں دھار گرے *

ٹرین بہت دیر سے ویرانے میں کھڑی تھی۔ آہستہ آہستہ ریگنے لگی۔ ساری رات یوں ہی ہوتا رہا۔ کبھی چلتی کبھی رکتی۔ ساری بتیاں بھی بند تھیں، اور سب سہمے ہوئے خاموش بیٹھے تھے۔ لگتا تھا صرف مسافر ہی نہیں، ٹرین بھی بلیک آؤٹ کے گھپ اندھیرے میں ٹٹول ٹٹول کر راہ تلاش کر رہی ہے۔

۱۹۶۵ کی جنگ میرے کراچی رہتے میں ہی شروع ہو چکی تھی۔ میں میٹرک کر کے ڈھاکہ سے خالہ کے گھر کراچی آ گیا تھا، کچھ دن یہاں رہ کر کالج میں داخلے کی لئے راولپنڈی جا رہا تھا۔ پاپا کا خیال تھا کہ تبدیلی راولپنڈی ہو جائے گی۔ ہوائی جہاز سے اترنے پر جب کراچی کی سیلی نمکین ہوا میں سانس لی تو لگا جیسے گھر آ گیا۔ یہ مہک سال ہا سال سے میرے اندر بسی ہوئی ہے۔ آج بھی، اسی طرح، کراچی کی خوشبو مجھے خوابوں میں لے جاتی ہے۔ گرمیوں کی چھٹیوں میں جب کراچی آتا، یہی سیلی ہوا مجھے گلے لگاتی اور میں دوڑ کر ٹرین کے دروازے پہ آ جاتا۔ پھر اس ہوا میں لمبی لمبی سانسیں لیتا، اور سینے میں ایک عجیب سا خلا لئے، گزرتی عمارتوں اور گاڑیوں کو بے تابی سے دیکھتا رہتا۔ کبھی اگر ٹرین اسٹیشن کے باہر رُک جاتی، تو مجھے بہت بے چینی ہوتی۔ دل کرتا یہیں اتر جاؤں۔ یہ شہر مجھے اپنا لگتا تھا۔ میرا دل اس کی گود میں دھڑکتا تھا۔

اس مرتبہ کراچی میں دن بہت تیزی سے بیت گئے۔ میں خاموشی سے اُسے دیکھتا رہتا تو وہ ہنس کر کہتی "بڈی بھائی بور نہ کریں، چلیں نا کچھ کرتے ہیں، کیرم کھیلتے ہیں"۔ مجھے سارا خاندان بڈی ہی کہتا تھا۔ وہ مجھ سے ساڑھے چار سال چھوٹی، سب لوگوں کو جمع کر لیتی اور محفل جم جاتی۔ اُن کے گھر کافی رونق رہتی تھی، اڑوس پڑوس کے بچے بھی آئے رہتے، جن میں وہ کھلکھلا ہٹوں کا محور ہوتی۔ ہر طرف مسکراہٹیں بکھیرتی۔ سب ہنستے، ایک میرے سوا۔ وہاں چند خاموش دن پھیکی مسکراہٹوں کے ساتھ گزار کر، کچھ نہ کہہ کر، چپ چاپ راولپنڈی کے لئے روانہ ہو گیا۔

جنگ کی وجہ سے کراچی شہر اندھیروں میں ڈوبا ہوا تھا۔ میں اُسے چھوڑ آیا تھا، مگر اُس نے مجھے نہیں چھوڑا تھا۔ ٹرین کے پہیوں کی گھٹ گھٹ پر میری سوچیں تیرتی رہیں۔ تھرڈ کلاس کے اندھیرے ڈبے میں ایک بوڑھا، جسے نہ جانے کس نے اوپر کی برتھ پر چڑھا دیا تھا، بڑی دیر سے کھانس رہا تھا۔ کوئی اُسے پوچھنے والا نہ تھا۔ شاید کسی اسٹیشن پر کوئی آکر اُتار لے۔ یا شاید سیٹ پر ہی کھانس کھانس کر دم توڑ دے۔

دل کرتا تھا اُس کا گلا گھونٹ دوں۔ ایک لمحے کو ذہن خوابوں میں ڈوبتا، پھر اس بڑھے کی کھانسی واپس حقیقت کی دنیا میں گھسیٹ لاتی۔ اوپر کی دوسری برتھ پہ میں لیٹا تھا۔ ایک اور ٹی بی کے مریض نما سوکھا ہوا شخص شام کو کسی سٹیشن سے چڑھا تھا، جو نہ جانے کیوں سیدھا میرے پاس ہی آیا، اور سیٹ نہ ہونے پر مجھ سے بڑی بے بسی سے تھوڑی سی جگہ پاؤں کے پاس مانگی اور سکڑ کر بیٹھ گیا۔ تھوڑی تھوڑی دیر بعد بڑی مشکور سی کیچڑ بھری آنکھوں کے ساتھ، پیلے دانتوں والی مسکراہٹ میری طرف پھینکتا۔ رات کے دوران آہستہ آہستہ کھسک کے خاصی جگہ لے چکا تھا اور میرے سکیڑے ہوئے پاؤں کے ساتھ لگا خوب مزے کی نیند سوراہا تھا۔

بہت دیر بعد صبح پھوٹی، رات ختم ہونے کو ہی نہ آتی تھی۔ ٹرین آہستہ آہستہ سرکتی ہوئی چھانگا مانگا کے سٹیشن میں داخل ہوئی۔ سٹیشن پر ہر طرف افرا تفری تھی۔ ابھی کچھ ہی دیر پہلے ہندوستان کے جہاز گولیاں برسا کر گئے تھے۔ دولاشین اب تک پلٹ فارم پر پڑی تھیں۔ جہاں میرا ڈبہ رُکا، ایک آدمی اُس کے سامنے نکلے کی منڈیر پر ایسے لیٹا تھا جیسے نل کے نیچے ہاتھ رکھ کر پانی پینا چاہتا ہو، اور اچانک انسان سے لاش بن گیا ہو۔ ارد گرد درخت کے ٹوٹے پتے اور ٹہنیاں پڑی تھیں۔ پتا نہیں اُس نے پانی پیا تھا، یا پیسا ہی مر گیا۔ نہ جانے یہ خیال مجھے کیوں آیا تھا۔

ٹرین کافی دیر سٹیشن پر کھڑی رہی۔ کئی فوجی گاڑیاں بھی وہاں کھڑی تھیں۔ کچھ قریب کے کچے راستے سے گزر رہی تھیں۔ میں تازی ہوا کھانے ٹرین سے اتر کر ٹہلنے لگا۔ فوجی گاڑیوں کی طرف گیا، مٹی سے اٹے ہوئے فوجی اور ویسی ہی اُن کی گاڑیاں۔ لگتا تھا کسی محاذ سے آ رہے ہیں، ساری رات کے جاگے ہوئے، مگر گاڑیوں میں سامان چڑھاتے ہوئے ایک دوسرے سے ہنس نہس کر باتیں کر رہے تھے۔ وہ مجھے اچھے لگے۔

میں کچھ دیر یوں ہی اکیلا پھرتا رہا۔ پہلی بار ہاتھ پر گھڑی باندھی تھی، بار بار بلا مقصد ٹائم دیکھتا۔ میری تنہائی کا سفر شروع تھا، جو اُن دیکھی ریل کی پٹریوں پر کبھی سرکتا، کبھی ٹھہر جاتا اور کبھی اچانک تیز رفتاری سے یوں گزرتا جیسے کہیں رُکنا ہی نہ ہو۔ نہ جانے پٹریاں کون بدلتا تھا۔ صرف ایک ہلکی سی آواز آتی اور پٹری بدل جاتی۔ میں آئندہ زندگی سے بے خبر، بے فکر، صرف پیچھے دیکھتا جا رہا تھا، جہاں شاید کچھ رہ گیا تھا۔ کہاں جا رہا تھا، کچھ خبر نہیں تھی۔ میں شاید ہمیشہ کے لئے کھو چکا تھا۔ مگر جب کوئی منزل ہی نہ ہو، تو کھونا کیسا؟

شاید میری محبت بھی ریل کی ان پٹریوں کی طرح تھی، جو ہمیشہ ساتھ رہ کر بھی، کبھی نہیں ملتیں۔ زندگی کی گاڑی شاید یوں ہی نہ ملنے والی پٹریوں پر چلتی ہے۔ مگر میں بہت آگے چلا گیا۔

گھڑی بھر کے لئے گونجا ہوا نغمہ *

راولپنڈی پہنچ کر رشتے کے ایک چچا کے ہاں ٹھہر گیا۔ وہ ایئر فورس میں کارپورل تھے۔ راشد منہاس کا لونی چکالہ میں رہتے تھے، اُن دنوں اس کا کچھ اور نام تھا۔ گورڈن کالج میں داخلے کے فارم پُر کر کے جمع کرائے۔ ان ہی دنوں پاپا ڈھاکہ سے کسی دفتر کے کام سے راولپنڈی آئے، اور مجھے گورنمنٹ کالج سٹلاٹ ٹاؤن میں داخل کرادیا۔ کہنے لگے چھوٹا سا کالج ہے، یہاں پڑھائی پر توجہ بہتر ہوگی۔ اُنکو شاید خدشہ یہ تھا کہ گورڈن کالج میں لڑکیاں بھی پڑھتی ہیں اور میں پڑھائی پر توجہ نہ دے سکوں گا۔ انھیں کیا پتا تھا کہ میرے بجھے دل کا دھیان اس طرف سے ہٹ چکا ہے۔

اُس زندگی کی کیا حیثیت جس میں کوئی خواہش ہی باقی نہ رہی ہو۔ بچپن میں ڈاکٹر بننے کا شوق تھا۔ مگر اب کچھ بننا یا نہ بننا کوئی معنی نہیں رکھتا تھا۔ افسردہ اور ہارے ہوئے دل کے ساتھ کراچی سے آیا تھا۔ جب پری میڈیکل میں داخلے کے فارم بھر دیے تو کچھ لڑکے، جن سے وہیں ملاقات ہوئی تھی، کہنے لگے فزکس اور میتھس پڑھتے ہیں، ہم سب نے بھی یہی لیا ہے، اکٹھے پڑھیں گے۔ میں نے فارم پھاڑ کر دوسرے بھر دیئے۔ سوچا ہو کیرز (who cares)۔ ذہن میں سناٹا سا تھا۔ جب اُسے میں نہیں دکھائی دیتا، تو مجھے کچھ دکھائی نہیں دیتا تھا۔

اُن دنوں وہ کالج صرف انٹرمیڈیٹ تک تھا۔ شروع میں تو مجھے بہت کوشش کے باوجود ہوسٹل میں جگہ نہ ملی۔ وارڈن صاحب کو میرا حلیہ پسند نہ آیا۔ پھر، چونکہ میں محنت سے پڑھتا تھا، کچھ ہی دنوں میں میرے اُستاد مجھے چاہنے لگے اور ہوسٹل وارڈن کے نہ چاہتے ہوئے بھی، نہ صرف مجھے ہوسٹل میں جگہ مل گئی بلکہ اکیلا کمرابھی، تاکہ میری پڑھائی کا خرچ نہ ہو۔

وارڈن صاحب مجھ سے آخر تک ناراض ہی رہے۔ چھوٹا سا ہوسٹل تھا، اور بہت سادہ سا ماحول۔ میں چُپ سادھے کلاس میں جاتا اور زیادہ وقت پڑھتا ہی رہتا۔ ہوسٹل کے کچھ لڑکے بھی مجھ سے پڑھنے آنے لگے۔ میتھ کے لیکچرار نے جب نہ آنا ہوتا، پہلے ہی مجھے کہلوادیتے کہ تم کلاس لے لینا اور پچھلے سبق دہرا لینا۔ اُس دن کلاس میں لڑکے شوق سے آتے اور میں اپنی اُستادی کے جوہر دکھاتا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

میں کالج میں سب کی نظروں میں اچھا تھا۔ ویسے ہی جیسے خاندان میں سب مجھے پسند کرتے تھے۔ سب کا ادب کرتا، شوق سے سب کی مدد کرتا، کسی کو تنگ نہ کرتا۔ بس ایک ہوٹل کے وارڈن صاحب سے نہ بنتی۔ وہ لڑکوں کو رعب میں رکھنا چاہتے تاکہ نظم و ضبط ٹھیک رہے، اور میں، جو لکیر پار نہ کرتا، بالکل رعب برداشت نہ کر سکتا۔ شاید یہی مسئلہ میرے والد صاحب کو بھی پیش آیا ہوگا، مگر وہ سخت خوش ہونے کے باوجود، مجھ پر شقیق تھے اور مجھ سے نرمی سے پیش آتے۔ مجھے یاد ہے، ایک دفعہ انھوں نے مجھے کسی ایسی بات پر چاٹا مار دیا جسے میں اپنی غلطی نہ سمجھتا تھا۔ میں نے کئی دن اُن سے بات نہ کی۔ پھر وہ مجھے اپنے ساتھ بیکری لے گئے اور کھلا پلا کے منایا۔ پھر ہماری دوستی ہوئی۔ وارڈن صاحب کا خواہ مخواہ کا دباؤ میری برداشت سے باہر تھا۔ انھیں اس کالج کے سادے سے ماحول میں میری ٹیڈی پتلون اور ایلوس پریسلے (Elvis Presley) کا ہیر سٹائل پسند نہ آتا تھا۔ کئی بار یہ بات اُنکے منہ سے طنز یہ انداز میں نکل چکی تھی۔ میں انھیں دیکھتا تو میرے اعصاب پر تناؤ سا طاری ہو جاتا۔ نہ جانے یہ میری انانیت پرستی تھی یا اپنی کم اعتمادی کو متوازن کرنے کی لاشعوری کوشش۔

بات یوں بگڑی کہ ماہ رمضان میں انھوں نے لڑکوں سے کہا کہ تراویح میرے پیچھے پڑھا کرو۔ وہ دین دار آدمی تھے اور ہم سر پھرے۔ ہم نے قریب کی مسجد کو ترجیح دی۔ وہ بچارے ہمارا تراویح پر انتظار کرتے۔ ظاہر ہے الزام مجھ پر ہی ہوگا کہ یہ انگلش میڈیم لفنگا سب کو خراب کر رہا ہے۔ مگر انھوں نے کچھ کہا نہیں۔ ایک دن ہم چند دوست رات کو تراویح پڑھ کر واپس آرہے تھے کہ ہمیں ایک گدھا مل گیا۔ ہم اُسے گھسیٹ کر ہوٹل میں لے آئے۔ وارڈن صاحب کے دفتر کا دروازہ کھولا اور گدھا اُس میں داخل کر دیا۔ اُن کا گھر ہوٹل ہی میں تھا اور دفتر کا پچھلا دروازہ اُن کے گھر میں کھلتا تھا۔ ہم نے اُن کے دفتر کی گھنٹی بجائی اور چھپ کے کھڑکی سے دیکھنے لگے۔ کچھ دیر میں پچھلا دروازہ کھلا، دفتر کے کمرے میں اندھیرا تھا، انھوں نے اندر آ کر بتی جلائی تو سامنے گدھا کھڑا تھا۔ اُن کی چیخ نکل گئی۔ ہم سب وہاں سے بھاگے۔ پھر سب لڑکوں کو بلایا گیا اور خوب جھاڑ پھونک ہوئی۔ وہ بہت غصے میں تھے۔

پھر ایک دن اُن کے سبزی کے باغیچے سے مولیاں چرائیں۔ کیاریوں میں پانی لگا ہوا تھا۔ ہم سب کچڑ میں لتھڑ گئے۔ مولیاں لے کر غسل خانے میں آئے اور وہیں اُن کو بھی دھویا اور خود کو بھی۔ ہر طرف کچڑ پھیل گیا، جس کو دھونے کی زحمت ہم نے نہ کی۔ صبح پھر ہوٹل کے تمام لڑکوں کو لکچر ملا۔ پھر ایک شام پتا چلا کہ کچھ لڑکوں نے وارڈن کے نام کی تختی اٹھا کر چھت پر پھینک دی ہے۔ میں نے کہا اگر پھینکنی ہی تھی تو گٹر میں پھینکتے۔ پھر رات کو میں چھت پر چڑھا اور تختی اتار کر گٹر میں پھینک دی۔ کچھ دنوں تک تو تختی کی پوچھ گچھ ہوتی رہی، پھر گٹر بند ہو گیا۔ جو اُس کو کھولا تو تختی نکلی۔ وارڈن صاحب بہت تلملائے۔ مجھے بھی دل میں اپنے کیے پر ندامت ہوئی، مگر خاموش رہا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

ایک دن سردیوں کی دوپہر، کافی لڑکے ہوسٹل کے لان میں بیٹھے تھے۔ میں بھی وہیں بیٹھا پڑھ رہا تھا۔ کسی لڑکے نے اونچی آواز لگائی "ٹیکسی"۔ پھر کیا دیکھتا ہوں کہ تمام لڑکے لان سے بھاگ گئے۔ اور ایک لیکچرار تھوڑی ہی دیر میں سائیکل پر سوار آوارہ ہوئے، اور مجھ سے پوچھنے لگے کہ یہ آواز کس نے کسی تھی؟ میں اس بات سے بالکل لاعلم تھا، صرف نعرہ سنا تھا، لیکن انہوں نے میری بات نہ مانی۔ کرتے بھی کیا، ایک میں ہی گواہ حاضر تھا، باقی سب تو بھاگ گئے تھے۔ میں اس بات سے بھی لاعلم تھا کہ لڑکوں نے اُن کی چھیڑ "ٹیکسی" بنائی ہوئی ہے۔ وارڈن صاحب کے پاس لے گئے۔ پھر کیا تھا، انہوں نے کہا آج یہ پکڑا گیا۔ صبح پرنسپل کو شکایت ہوگئی۔

تمام ہوسٹل کے لڑکے کالج کے لان میں بٹھا دیئے گئے۔ امتحانی کاغذ ہمیں دیئے گئے اور تمام قصے گنوائے گئے، کچھ اور بھی تھے جو میں نہ جانتا تھا۔ کہا گیا کہ جو کچھ بھی ان کے بارے میں جانتے ہو صاف صاف لکھ دو۔ جو مجھے معلوم تھا سب کاغذ پر بکھیر دیا، مگر کسی اور کا نام نہ لیا۔ بس یوں کہہ دیا کہ میرے ساتھ چند لڑکے اور تھے۔ باقی سب تو جلدی سے اُٹھ کر چلے گئے، ایک میں ہی امتحان کے پرچے کی طرح تمام تفصیلات لکھتا رہا۔ بعد میں پتا چلا کہ ہر ایک نے یہی لکھا کہ ہمیں تو کچھ پتا ہی نہیں۔ بس پھر میری ہی گردن حاضر تھی۔

اگلی صبح میں پرنسپل کے دفتر میں کھڑا تھا۔ پہلے تو انہوں نے خوب ڈانٹ پلائی، میں سر جھکائے کھڑا رہا۔ بار بار پوچھنے پر بھی کسی دوسرے لڑکے کا نام نہ لیا۔ میں نے کہا جو میرا قصور ہے اُس کی سزا کے لئے تیار ہوں، جو دوسروں نے کیا وہ اُن سے ہی پوچھیں۔ ڈرا دھمکا کے باہر بھیج دیا کہ ایک بار پھر سوچ لو، تمہیں موقع دیتے ہیں۔ پھر میرے انگلش کے ٹیچر، جو مجھے بہت پسند کرتے تھے، مجھے اپنے ساتھ لے گئے اور کافی سمجھایا کہ اپنا یوں نقصان نہ کروں۔ کہنے لگے کہ کچھ نہیں بگڑا، وہ سب سنبھال لیں گے، مجھے کچھ نہیں کہا جائے گا، بس میں باقی لڑکوں کے نام بتا دوں۔ میں نہ مانا۔ پھر کچھ دن یہی سلسلہ جاری رہا۔

پرنسپل کے پاس دوبارہ پیشی ہوئی۔ انہوں نے اپنے پاس بٹھایا، چائے پلائی، پیسٹری کھلائی، میری سچائی کی بہت تعریف کی اور کہا کہ انہیں بہت فخر ہے کہ میرے جیسا بچہ اُن کا سٹوڈنٹ ہے۔ کہنے لگے بس اب تم پورا سچ بول دو۔ میں سر جھکائے چپ ہی رہا۔ آخر وہ تنگ آ گئے اور سوچنے کا مزید وقت دے کر باہر بھیج دیا۔ جاتے وقت کہنے لگے کہ اگر نہیں بتایا تو اُن کے پاس اور کوئی چارہ نہیں سوائے اس کے کہ مجھے کالج سے نکال دیں اور اچھے چال چلن اور رویے کا تصدیق نامہ (character cetificate) بھی نہ دیں۔ غصے میں آ گئے، کہنے لگے، "کہیں اور داخلہ بھی نہیں ملے گا، ساری عمر جاہل ہی رہو گے"۔ میں چپ سا دھسے باہر آ گیا۔ دوسرے دن مجھے کالج سے نکال دیا گیا۔ پاپا کا تبادلہ کراچی ہو چکا تھا۔ میں اپنی پریشانی چھپائے ٹرین میں بیٹھ کر گھر چلا گیا۔ کراچی کی سیلی ہوا میں۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

کچھ دن تو یوں ہی گھر میں ٹال مٹول کرتا رہا، پھر کالج سے پاپا کو خط آگیا اور وہ مجھے لے کر راولپنڈی آ گئے۔ پرنسپل سے ملاقات کی، انھوں نے میری بہت تعریف کی مگر کہا کہ کالج کے نظم و ضبط کا معاملہ تھا اس لئے اُن کے پاس کوئی اور راستہ نہ تھا۔ پاپا کی یقین دہانی پر انھوں نے کالج میں میرا داخلہ بحال کر دیا، لیکن ہوسٹل میں رہنے کی اجازت نہ دی۔ میں پھر چکلا لہ میں رہنے لگا۔ ایک سائیکل دلوادی گئی اور وہاں سے روز پیڈل مارٹا سٹلائٹ ٹاؤن جاتا اور آتا۔

چکلا لہ کی ایئر فورس کالونی میں چچا کا دو چھوٹے چھوٹے کمروں کا گھر تھا۔ ایک میں چچا، چچی اور اُن کا چھوٹا سا بیٹا سوتے تھے۔ دوسرے کمرے میں، جہاں مہمانوں کے بیٹھنے کی جگہ تھی، میری پلنگ بھی لگا دی گئی۔ ساتھ ایک چھوٹی سی میز، جس پر انجم کی ایک تصویر فریم میں لگی تھی اور میرا سامان پلنگ کے نیچے رکھ دیا گیا۔ گھر کے کمروں کے پیچھے دالان تھا جس میں کھانے کی میز تھی اور ساتھ ہی ایک چھوٹا سا باورچی خانہ۔ آنگن میں غسل خانہ اور بیت لُلاء۔ کالج کے تقریباً ڈیڑھ سال یہیں گزارے۔

ان ہی دنوں اس کالونی کی مسجد کا سنگ بنیاد رکھا گیا اور میں اُس میں کچھ دن شوقیہ مزدوری بھی کرتا رہا۔ ویسے اُن دنوں نماز کا اتنا پابند نہ تھا۔ کبھی جوش آتا تو لگا تار پڑھنا شروع کر دیتا، پھر چھوٹ جاتی تو بہت عرصے غائب رہتا۔ بہت پہلے، جب ساتویں جماعت میں تھا تو گھر کے قریب ایک ویران سی مسجد تھی۔ مسجد کیا، بس ایک درخت کے نیچے نماز کی خاصی بڑی سی جگہ چار دیواری سے گھری ہوئی تھی، جس کے بیچ پکافرش تھا۔ میں نے اپنے چھوٹے بھائی راشد کے ساتھ مل کر گھر اس کے لئے چندہ جمع کیا، اس کو دھویا، چار دیواری پہ چونا کیا، چٹائیاں خریدیں، وضو کی جگہ بنائی، پھر اس میں اذان دی اور آہستہ آہستہ یہ مسجد آباد ہو گئی۔ میں اس کا مَنوڈن بن گیا۔ یہ مسجد ہمارے وہاں رہے تک آباد رہی۔ ہم دونوں نے قرآن بھی ان ہی دنوں ختم کیا۔ بس مولوی صاحب سے عربی میں پڑھ لیا اور یہ کافی سمجھا گیا۔ پاپا اُن دنوں یونائیٹڈ نیشنز (United Nations) کی طرف سے ایک سال کے لئے کانگو (Congo) گئے ہوئے تھے۔ اور ہم کراچی میں C.O.D. ڈرگ روڈ کی چھاؤنی میں رہتے تھے۔

کالج میں اتنے بڑے واقعے کے بعد اب میں ہیرو بن چکا تھا۔ سب مجھے عزت اور پیار سے مخاطب کرتے، کینیٹین میں چائے بھی دوست مفت کی پادیتے۔ سٹوڈنٹ یونین کے الیکشن اُس سال منسوخ کر دیئے گئے تھے۔ شاید حکومت کی کچھ ایسی پالیسی تھی۔ کالج میں پھر بھی کسی سوسائٹی کے بہانے الیکشن کرائے گئے۔ خوب ہنگامہ ہوا۔ میں وہ جیت کر کالج میں سٹوڈنٹس کا منتخب نمائندہ بن گیا، مگر پڑھائی پر مسلسل دھیان دیکھا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

جب آخری سال بورڈ کے امتحان آئے تو فزکس کا پرچہ بہت مشکل تھا، چھوٹے چھوٹے بہت سے سوال تھے، جو ہال میں زیادہ لڑکوں کو نہ آتے تھے۔ مجھے پرچہ کرنے میں ذرا دشواری نہیں تھی کیونکہ یہ میرا پسندیدہ مضمون تھا۔ آہستہ آہستہ لڑکوں نے مجھے کہنا شروع کیا کہ اگر یہ پرچہ منسوخ ہو کر دوبارہ نہ ہوا تو ہم سب فیل ہو جائیں گے۔ کچھ دن پہلے لاہور میں بھی طالب علموں کے احتجاج پر ایک پرچہ منسوخ ہوا تھا۔ سب نے کہا کہ یہ پرچہ تو سلیپس سے باہر ہے، تم کچھ کرو۔ آخر کار میری لیڈری کا بخارتیز ہوا اور میں نے ہال میں ڈیسک پر کھڑے ہو کر نعرہ لگایا کہ یہ پرچہ چھوڑ دو اور باہر آ جاؤ۔ کوئی امتحان نہیں دے گا۔ پھر میں امتحان کی میزوں سے کاغذ اٹھا اٹھا کر ہوا میں اڑانے لگا، اور جلد ہی سارا ہال سٹوڈنٹس سے خالی ہو گیا۔ سب ہال کے باہر جمع ہو کر نعرے لگانے لگے۔

میں اپنے دوستوں، شفقت طارق، محمد ظفر اور محمد دین (ماما) کو لے کر امتحان کے چھوٹے کمروں سے لڑکوں کو نکالنے چلا گیا۔ جب وہاں بھی یہی کام کر کے سب کو لے کر واپس پہنچا، تو دیکھا کہ سارا مجمع غائب۔ سب لڑکے ہال میں واپس جا چکے تھے۔ جو میرے ساتھ چھوٹے کمروں سے آئے تھے وہ بھی یہ دیکھ کر واپس ہو لئے۔ جو کھڑکی سے ہال میں جھانکا تو کیا دیکھتا ہوں کہ اندر سب نے کتابیں کھولی ہوئی ہیں اور خوب نقل چل رہی ہے۔

ہوایوں کہ جب پرنسپل صاحب کو خبر ہوئی کہ طالب علموں نے واک آؤٹ کر دیا ہے تو انہوں نے آکر کہا کہ بچو اگر پرچہ مشکل ہے تو کتاب سے دیکھ لو، اپنا سال کیوں ضائع کرتے ہو؟ اس پر سب خوشی خوشی واپس چلے گئے۔ جب ہم چاروں نے ہال میں جانا چاہا تو پرنسپل کو دروازے پر کھڑا پایا۔ شفقت، ظفر اور ماما کو تو انہوں نے اندر آنے دیا اور مجھے کہا کہ آپ کو امتحان میں بیٹھنے کی اجازت نہیں۔ پھر میں، جسے اس پرچے کا ہر سوال آتا تھا، کینٹین میں بیٹھ کر سیگریٹ کا دھواں اڑاتا رہا۔ بس تھوڑی ہی دیر میں ہیرو سے زیرو۔

جھکی چٹان، پھسلتی گرفت، جھولتا جسم *

والد صاحب کا نام محمد اسحاق خان تھا۔ پاکستان بننے کے وقت انگریزوں کی فوج میں لیفٹیننٹ تھے، اور ایم آئی خان سے مائیک (Mike) کہلاتے تھے۔ ہندوستان میں الہ آباد کے محلے دریاباد میں پلے بڑھے۔ آباؤ اجداد کا بل سے ہجرت کر کے آئے تھے، یوسف زئی تھے۔ دادا، اشفاق احمد خان، کا انتقال والد کی کم عمری ہی میں ہو گیا تھا۔ نانا، محسن علی صاحب، الہ آباد میں ڈپٹی کلکٹر تھے۔ ان کا تعلق اڑیسہ کے سید گھرانے سے تھا اور نہایت دین دار انسان تھے۔ نانی کشمیری نوابزادوں کے گھرانے کی حسین خاتون تھیں اور دونوں میں تا عمر بنی نہیں۔ مہمان خانے کی چھت پر نانا کا کمر تھا جہاں، بڑے سے آنگن کے پار، گھر سے اٹھنے والے قہقہوں کی آوازیں نہ آتیں۔ میری والدہ، قمر جہاں بیگم، اُن کا کھانا وغیرہ لے کر جاتی تھیں، اُن کا خیال رکھتی تھیں۔ آپا، انجم کی والدہ، باورچی خانہ سنبھالتی تھیں۔ نانی پارٹیشن کے بعد سے ہمارے گھر ہی رہیں۔ میں ہی اُن کے کمرے میں سوتا اور اُن کا سب کام کرتا تھا۔ میرا بہت لاڈ کرتی تھیں اور اس پر اُنھیں ذرا تکلف نہیں تھا۔ باقی بچوں کو صاف کہتی تھیں کہ یہ میرا بیٹا ہے اور تم سب قمر کے۔

جب والد صاحب کا رشتہ آیا تھا، تو نانا نے کہا کہ اسحاق بہت اچھا لڑکا ہے لیکن پٹھان ہے، جبکہ ہم سید ہیں، پٹھانوں میں رشتہ نہیں کرتے۔ پھر نانا کا انتقال ہو گیا۔ گھر میں ایک بیٹا اور تین جوان بیٹیاں تھیں، تقسیم ہند کے ہنگامے چل رہے تھے، گھر والوں نے مناسب سمجھا کہ ایک بیٹی تو فوجی سے بیاہ دی جائے، تو یوں اُن کی شادی ہوئی۔ پھر سارا گھرانہ ممبئی سے پانی کے جہاز پر کراچی پہنچا۔

شروع سے والد صاحب کے گھر کئی رشتے دار رہتے تھے، جو پارٹیشن کی وجہ سے بے گھر ہو کر آئے تھے۔ کچھ نو جوان کئی سال پڑھتے رہے اور کچھ معاش کے متلاشی رہے۔ یقیناً اُن پر کافی بوجھ رہا ہوگا۔ پھر اپنے پانچ بچے ہوئے۔ پاپا بہت ہنس مکھ اور ہر دل عزیز انسان تھے۔ صاف دل، صاف گوا اور شاہ خرچ۔ جوانی میں بچوں سے لہجہ سخت رکھتے تھے، وقت گزرنے کے ساتھ موم کی طرح نرم ہو گئے۔ اللہ نے ماشاء اللہ تراسی برس عمر دی، اور گیارہ پڑ پوتے نواسے (great grand children) دیکھے۔ میں نے اُن کو کبھی پریشان نہیں دیکھا۔ ایک اللہ پر یقین تھا اور کہتے تھے کہ بیٹا صرف اللہ ہی سے مانگنا، اور یہ مت سوچنا کہ پیسے ہوں گے تو دوں گا۔ یاد رکھنا، دو گے تو ہوں گے۔

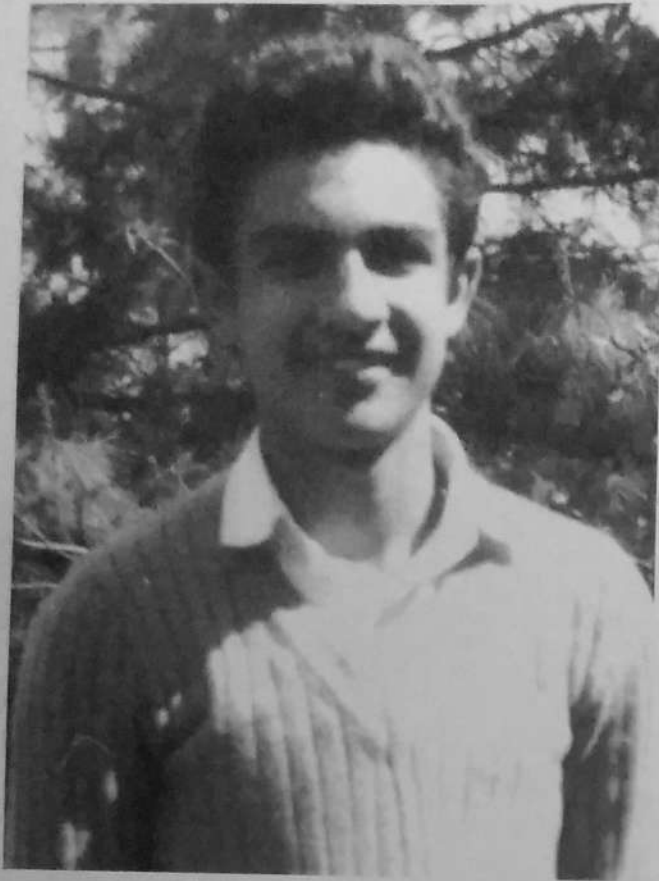
پہلا سفر ابتدائے عشق

جب پاکستان آئے تو رشتہ داروں نے بہت کہا کہ اسحاق بھائی جو جائیداد وہاں چھوڑ کر آئے ہیں، اپنا کلیم (claim) داخل کر دیں۔ کہتے تھے کہ میرا کلیم پاکستان تھا، مجھے مل گیا۔ فوج میں بریگیڈیئر تھے کہ سینئر افسران کی کرپشن سے بدلہ ہو کر ۱۹۷۴ میں استعفیٰ دے دیا۔ اُس وقت میں فوج میں کیپٹن تھا۔ میری موجودگی میں انھیں آرمی چیف کا ٹیلیفون آیا، انھوں نے کہا کہ اسحاق تمہاری پروموشن قریب ہے۔ کچھ دن ٹھہر جاؤ، استعفیٰ واپس لے لو۔ مگر والد صاحب نے جواب دیا کہ سر بہت نوکری کر لی، اب مجھے جانے دیجئے۔ نہ کوئی گھر تھا نہ بینک میں پیسے، نہ گاڑی۔ کچھ دن پرائیویٹ نوکری کی، پر کہتے تھے بیٹا کمپنی کے ہر کام کے لئے جگہ جگہ رشوت دینی پڑتی ہے۔ چھوڑ دی۔ بے روزگار رہی رہے۔ ایک مرتبہ کسی رشتہ دار نے طنز کیا کہ اسحاق تم تو بہت اتراتے تھے کہ میرا کلیم پاکستان تھا، مجھے مل گیا، تو اب کیا حال ہے؟ ہماری بات مان لیتے تو اس حال میں نہ ہوتے۔ ہنس کر کہنے لگے الحمد للہ، میں آج بھی آپ سے زیادہ مطمئن ہوں۔

میری والدہ محترمہ، سب کی ممی، بہت دھیمے مزاج کی تھیں۔ پاپا کے اور اُن کے مزاج میں زمین آسمان کا فرق تھا۔ اُن کی کچھ شاعرانہ سی طبعیت تھی، جیسے خوابوں کی دنیا میں رہتی ہوں۔ کھل کر کم ہی ہنستیں اور اپنے رونے اپنے اندر ہی چھپا کر رکھتیں۔ گھر اور بچوں ہی میں دل لگا لیا تھا۔ میں نے کبھی اُن کی اونچی آواز نہیں سنی۔ ہمارے لئے ایک ڈھال تھیں اور پاپا کے غصے سے ہمیں ہر وقت بچائے رکھتیں، جبکہ اُن کو کوئی آڑ نہیں تھی۔ اُن کو بچانے والا کوئی نہ تھا۔ انھیں دکھ تھا کہ نانا نے اپنی بیٹیوں کو سکول نہ جانے دیا اور گھر ہی میں تعلیم دلوائی۔ میرا نام ممی نے اپنے بھائی کے نام پر رکھا تھا، جو کم عمری سے ہی حق کی تلاش میں سرگرداں رہتے تھے اور پارٹیشن سے پہلے نو جوانی ہی میں وفات پا گئے تھے۔

میرا چھوٹا بھائی راشد، جسے گھر میں گڈ و کہتے تھے، اُن کا چہیتا تھا۔ ہر وقت اُن کی خدمت کرتا، اُن کا لاڈ کرتا اور اُن کو ہنساتا رہتا۔ اُسکی باتیں ہی اتنی بھولی تھیں۔ اکیس برس کی عمر میں ۱۹۷۱ کی لڑائی میں کشمیر میں شہید ہو گیا، تو ممی کی دنیا ہی اُڑ گئی۔ تاحیات اس غم سے نہ نکل سکیں۔ ذہنی مریض ہو گئیں، اور ہمیشہ دواؤں پر رہیں۔ میری بڑی بیٹی سارہ کو اپنی سہیلی بنا لیا تھا۔ دونوں کی خوب راز و نیاز کی باتیں ہوتیں۔ ان دونوں کا بہت ساتھ تھا۔ وہ پیار اور محبت سے بھری، تنہا سی روح تھیں، بہت جلد ہی ہمیں چھوڑ گئیں۔ ایک شام اچانک دماغ کی نس پھٹ گئی اور دوسرے دن وہ اپنے لاڈ لے بیٹے کے پاس چلی گئیں۔ بیٹے کے پہلو میں ہی جگہ پائی۔ ایک ہی گود تھی جس میں میرا دل سکون پاتا تھا، چھن گئی۔ اب کوئی گود نہیں جس میں سر ٹیک سکوں، کوئی آستانہ نہیں جہاں پلٹ پلٹ کر آ سکوں۔ جیسے سمندر سے ساحل چھن گیا ہو۔

راشد مجھ سے ایک سال چھوٹا تھا۔ بہت شریر، نڈر اور بے باک، مگر بہت بھولا۔ سچ اُس کے منہ سے ایسے پھوٹتا کہ سب حیران رہ جاتے۔ ہم ہر وقت ایک دوسرے کے ساتھ ہوتے اور ہر چیز بانٹتے۔ ہر خوف، ہر امید، ہر آرزو اور ہر سزا۔ ہماری دوستی بھائی کے رشتے سے



شہد ۱۹۶۳



انجم ۱۹۶۳



۱۹۶۶



کالج کی یادگار

۱۹۶۷

پہلا سفر ابتدائے عشق

بہت آگے تھی اور آخر تک ایسی ہی رہی۔ مجھے نہیں یاد کہ ہم کبھی ایک دوسرے سے لڑے ہوں یا خفا ہوئے ہوں۔ وہ ہر وقت مجھے ہنساتا رہتا۔ اس کی آنکھوں سے ہنسی کے بلبے نکلتے تھے۔ وہ میری لالچی تھا اور میں اُس ہی کی ٹیک پر کھڑا تھا۔ مجھے تب پتا چلا جب میری لالچی ٹوٹ گئی۔ میں شاید آج بھی اُس ہی کے تعقب میں پھرتا ہوں۔

بڑے بھائی طارق، جو مجھ سے ایک سال بڑے ہیں، ہم سے الگ رہتے۔ اُن کی دوستی ذرا بڑی عمر کے لڑکوں سے ہوتی تھی۔ وہ بچپن سے ہی بہت دلیر اور آزاد خیال تھے، اور زندگی کی رونقوں سے گھائل۔ اب اس عمر میں مچھلیوں کے شکار سے دل لگا لیا ہے۔ کئی کئی دن پانی کے کنارے بیٹھے رہتے ہیں۔ لگتا ہے یہیں کہیں انہیں اللہ بھی مل جائے گا۔ اُن کی بیگم نسرین ہر دم ملک کی، نائی کی کاوشوں میں لگی رہتی ہیں۔ اللہ کرے اُن کی انتھک کوششیں رنگ لائیں۔

راشد سے چھوٹی ایک بہن ہیں، صفیہ، جو نہایت نیک طبع اور گھریلو خاتون ہیں۔ بچپن میں ہم اُسے بہت تنگ کرتے تھے۔ آج وہ سب کی آنکھوں کا تارا ہے اور ہمارے گھرانے میں دین کی علمبردار۔ اُن کے شوہر گروپ کیپٹن سلیمان نبی ایئر فورس کے سابقہ پائلٹ ہیں اور انھیں شام کی جانب سے اسرائیل کے خلاف ۱۹۷۳ کی جنگ میں حصہ لینے کا اعزاز حاصل ہے۔ اللہ کے توکل پر زندہ رہنے والا ایسا شخص میں نے نہیں دیکھا۔ اللہ نے اُن پر بہت آزمائشیں ڈالیں لیکن بڑی سے بڑی مصیبت میں بھی اُن کو ہنستا ہوا ہی پایا۔ اوروں کے لئے ہی کرتے دیکھا۔

سب سے چھوٹا ساجد ہے، جو مجھ سے قریب چھ سال چھوٹا ہے۔ وہ ہمیشہ اپنی ہی دنیا میں مگن رہتا تھا۔ آج بھی وہ بہت حساس اور محبت کرنے والا انسان ہے۔ رزقِ حلال کے لئے لڑتا ہے اور صرف اللہ کو پکارتا ہے۔ اُن کی بیگم، روبینہ، اپنی اور بچوں کی تعلیم پر توجہ مرکوز رکھتی ہیں۔

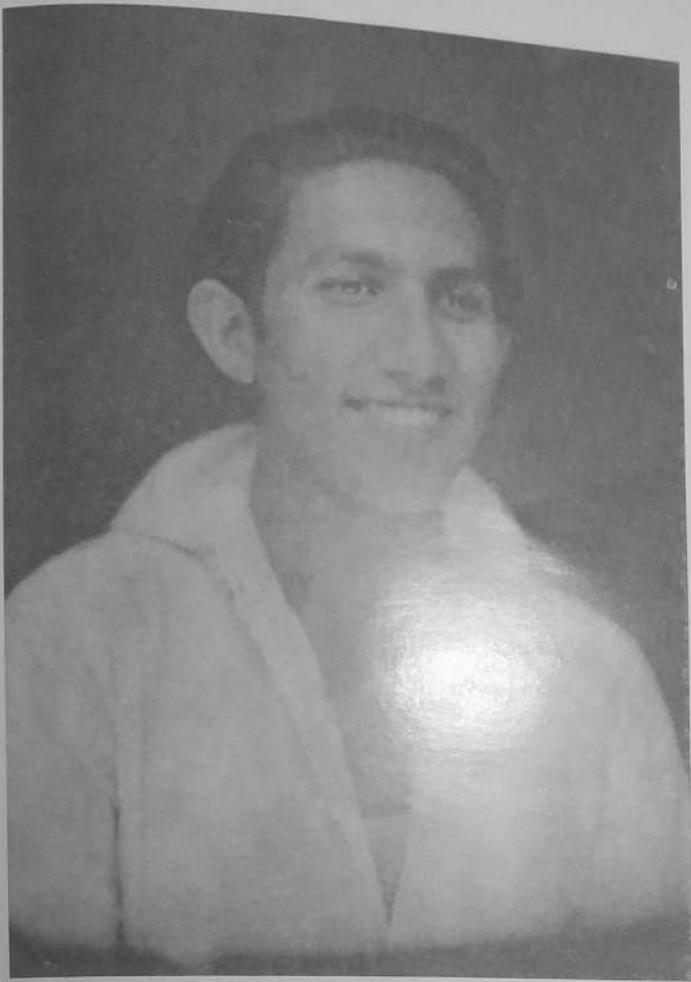
میں ۱۹۶۷ کے وسط میں انٹر کر کے کراچی واپس آ گیا تھا، مگر دل پر اتنا بوجھ تھا کہ کچھ کرنے کو جی نہ کرتا۔ معاملہ یک طرفہ ہی لگتا تھا۔ انجم کی دنیا ہی اور تھی۔ ناپ تول کی۔ اُسے تنہائی کا ٹی تھی، میں بھیڑ میں کھو جاتا۔ وہ بازار میں خوش ہوتی، میں ویرانے میں سکون پاتا۔ وہ ذات سے باہر دیکھتی، میں اپنے اندر ہی ڈوب رہتا۔ اُسے اپنے حسن پہ ناز تھا، میں اپنی کوتاہیوں پر نادم۔ ہم الگ الگ دنیا کے باسی تھے، مگر میرا وہی ایک محور تھا۔ یہ سب کچھ جان کر بھی، انجم سے ہٹ کر مجھے کچھ نظر نہ آتا۔ میرا ستارا اُس ہی کے گرد خاموش گردش کرتا رہتا۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

کچھ عرصے بعد کراچی یونیورسٹی میں فزکس ڈیپارٹمنٹ میں داخلہ لے لیا۔ بس یوں ہی غافل سا (listless) روز صبح یونیورسٹی چلا جاتا۔ سارا دن کھویا کھویا سا رہتا، کوئی بلائے تو چونک پڑتا۔ نہ کچھ بننے کی آرزو تھی، نہ کچھ کرنے کی جستجو۔ احمد فراز کو شوق سے پڑھنے لگا۔ پاپا اٹھارہ ڈویژن ہیڈ کوارٹر میں تھے، جو ان دنوں کراچی میں تھا۔ ہم بندر روڈ پر کیپری سینما کے قریب رہتے تھے۔ وہیں سڑک کے بیچ سبز پٹی پر، رات گھنٹوں بیٹھا رہتا۔ دونوں طرف سے تیز رفتار ٹریفک گزرتی رہتی، اور میں نہ جانے کن سوچوں میں غرق، اپنے اندر ہی غوطے کھاتا رہتا۔

انہی روز و شب میں قریب دو سال بیت گئے۔ یونیورسٹی آتا، جاتا، مگر کتابیں بند پڑی رہتیں۔ سوچا کوئی اور راستہ نکال لوں، کہیں دور چلا جاؤں۔ پہلے نیوی کے لئے درخواست دی، پھر فوج کے لئے بھی دے دی، حالانکہ میرا دل اس طرف مائل نہ تھا۔ ISSB (Inter Services Selection Board) بھی پاس کر لیا، مگر فوج کی بندشوں میں پھنسنے کا دل نہ کرتا۔ اتنے عرصے میں پاپا کا تبادلہ راولپنڈی ہو گیا۔ کہنے لگے ہوسٹل میں تو تمہیں نہیں چھوڑوں گا، پچھلا تجربہ اچھا نہ تھا، خالہ کے گھر رہ جاؤ، امتحان دے کر آ جانا۔ میں نے صاف انکار کر دیا۔ میرے ایک رشتے دار تھے، اُن کی انجنیرنگ کمپنی تھی۔ کہنے لگے میرے ساتھ آ جاؤ، تمہیں فرم کی جانب سے باہر پڑھنے بھجوا دوں گا۔ چار سال کا کورس ہے، پھر پانچ سال فرم کے ساتھ کام کرنا ہو گا۔ کام تیل کی پائپ لائنوں پر صحراؤں میں ہوتا ہے، آج کل افریقہ میں کام چل رہا ہے۔ سخت کام ہے، کر سکو تو آ جاؤ۔ میں نے فوراً حامی بھر لی۔ اور مجھے کیا چاہیے تھا۔ سوچا جتنا دور چلا جاؤں اچھا ہے۔ اسی دوران GHQ سے پاکستان ملٹری اکیڈمی (PMA) کے لئے چناؤ کا خط آ گیا۔ رپورٹ کرنے کی تاریخ بھی مل گئی۔

پاپا راولپنڈی جاتے ہوئے یہ فرمان جاری کر گئے تھے کہ اگر PMA جانے کی تاریخ سے پہلے پاکستان سے باہر چلے جاتے ہو تو ٹھیک ہے، ورنہ PMA کی دی ہوئی تاریخ پر وہاں پہنچ جانا۔ تمام کوششوں کے باوجود مجھے فرار کا راستہ نہ مل سکا، اور بادلِ نخواستہ PMA پہنچ گیا۔ بھاگا بھی تو بندگلی میں جا پہنچا۔ تقدیر کے ہاتھوں کسے چھوٹ ہے۔ شاید اللہ نے کسی گہری کھائی میں گرنے سے بچا لیا ہو۔ میں اس ہی مٹی کا تھا، یہیں بس گیا۔



پاپا اور مامی کی یادگار تصاویر

شجر ہجرت نہیں کرتے *

PMA نے مجھے مروڑ کر رکھ دیا۔ میری آزاد روح اس پنجرے میں قید ہو گئی۔ شاید قید تنہائی ہوتی تو جی لیتا، مگر یہ تو عجیب قیمہ نکالنے کی مشین تھی، جس میں مختلف جانوروں کا گوشت ڈال دیا جائے، اور پھر ہینڈل گھما گھما کر ایک ہی جیسا قیمہ پیس کر اُسکی کٹھ پتلیاں بنائی جائیں، جنہیں قطاروں میں کھڑا کر کے ایک ہی روح سب میں پھونک دی جائے۔ اور آواز دینے پہ سب ایک جیسے سکرونا نڈ ڈ (synchronised) کرتب دیکھائیں۔ میں نے سوچا کہ یہ انسانیت کے ساتھ عجب مذاق ہے، پھر فوج میں کئی سال بیت جانے کے بعد ان چیزوں کی حقیقت مجھ پہ کھلی۔

شروع کے دن تو جسمانی تکلیف اور ذہنی اذیت سے بھرپور تھے۔ جو بھی آتا اونچی آواز میں ڈانٹتا، ذلیل کرتا۔ یہ رعب جمانے کا عجب انداز تھا، جس کی ایک مخصوص لغت تھی، اور ایک انوکھی گرامر۔ سب کے پاس یہی زہر تھا۔ کوئی الٹا کھڑا کر دیتا، کوئی گندے نالے میں گھسا دیتا، کوئی خواہ مخواہ دوڑاتا رہتا۔ رات گئے تک یہی تماشا چلتا۔ کچھ سوچنے کا موقع ہی نہ ملتا۔ نیند بھی پوری نہ ہونے پاتی۔ پھر سورج نکلنے سے پہلے ہم سڑک پر ایڑیاں مار رہے ہوتے، کہ تمیں ایڑیوں کی ایک آواز ہو۔ ایک حوالدار صاحب جن کے منہ سے جھاگ نکل رہی ہوتی، آنکھیں باہر کو ابلی ہوئیں، منہ ٹیڑھا، دانت بھیج کر، ہمارے منہ میں گھس کے، چیخ رہے ہوتے، "صاب! سیدھے ہو جاؤ"۔ روزانہ، نہار منہ کڑوی دوا کی وہی خوراک۔ قدم سے قدم ملا ہو، ہاتھ سے ہاتھ۔ کندھے پیچھے، سینہ آگے، کمر سیدھی، گردن اکڑی ہوئی، آنکھیں بھی ہلنے نہ پائیں۔ جب خودداری (self respect) مٹی میں مل چکی ہو تو یہ انداز (posture) عجب سالگتا۔ "صاب! پیچھے مڑ کر مت دیکھیں۔ کیا گیدڑ کی طرح گردن گھما رہے ہیں۔ شیر کی طرح مڑیں، پھر دیکھیں"۔ پہلے چند ماہ تو مشکل سے ہی کٹے۔ پھر آہستہ آہستہ طبیعت سنبھلنے لگی۔ احساس ہوا کہ اگر اُلٹے لٹکے بھی ہوں تو دماغ کام کرتا رہتا ہے۔ اگر ذہن تکلیف پر مرکوز نہ کر لیا جائے، تو اور چیزوں پر بھی غور ہو سکتا ہے۔ صرف ایک ہی غم سے ذہن ماؤف نہیں ہوتا۔ اس کو بہلایا بھی جاسکتا ہے۔

پھر میں نے اپنے آپ کو بہلایا۔ تقدیر کا لکھا کیوں کر موڑتا۔ اس ہی ماحول میں خود کو ڈبولیا۔ تکلیف دہ چیزوں کو ذہن کے پیچھے پھینکتا گیا۔ اور جنگ لڑنے کی صلاحیت حاصل کرنے میں لگ گیا۔ میں اپنے پلاٹون کمانڈر میجر شبیر شریف، شہید، نشان حیدر، ستارہ جرات، سے بہت متاثر رہا۔ اُن کی پراعتماد شخصیت میں ایک عزم تھا، ہمت تھی، بے خوفی اور بے باکی تھی، جیسے خود کو پہنچانتے ہوں، جیسے کچھ بھی کر سکتے

* شاہ نواز زیدی

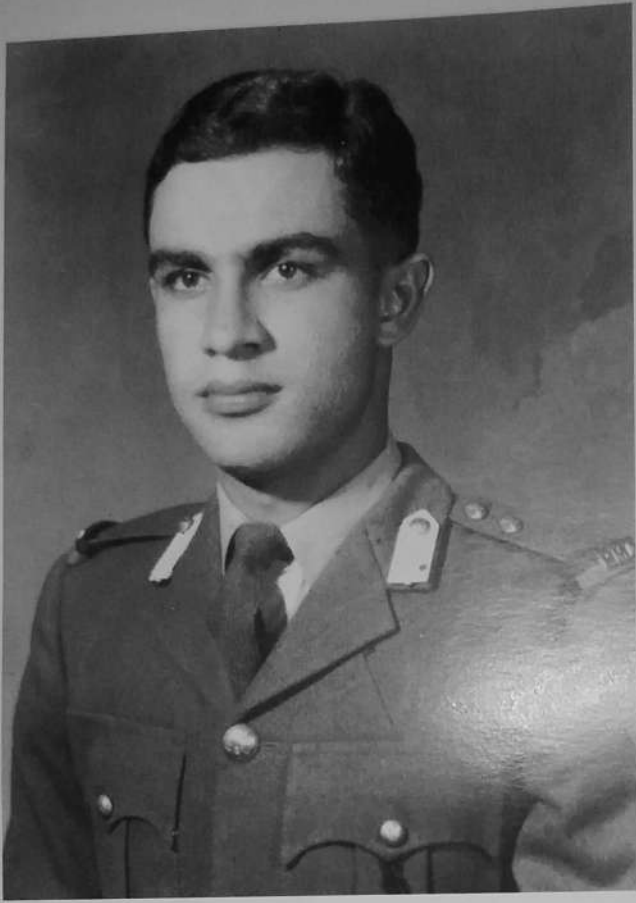
پہلا سفر ابتدائے عشق

ہوں۔ وہ ایک آزاد روح تھی۔ کسی چیز کی پرواہ نہیں تھی، جیسے اپنی تقدیر کے لکھے کو کافی سمجھا ہو، اس سے کوئی شکوہ نہ ہو۔ جیسے مانتے ہوں کہ تقدیر اٹل ہے، جو منزل اُن کی راہ میں ہے، کوئی چھین نہیں سکتا، اور جو نہیں ہے، کوئی دے نہیں سکتا۔ شاید دنیا کی کوئی ایسی طلب نہیں تھی، کہ انہیں کسی کے آگے جھکا دیتی۔ کہتے تھے اپنے پاؤں پر کھڑے ہونا سیکھو، اور ہمیشہ سچ بولو، ورنہ اپنی ہی نظروں میں اپنی عزت کھود دو گے۔ اور جب اس مقام سے گر گئے تو تمہارا کچھ باقی نہ رہا۔ پھر دنیا کی ٹھوکروں پر جیو گے۔

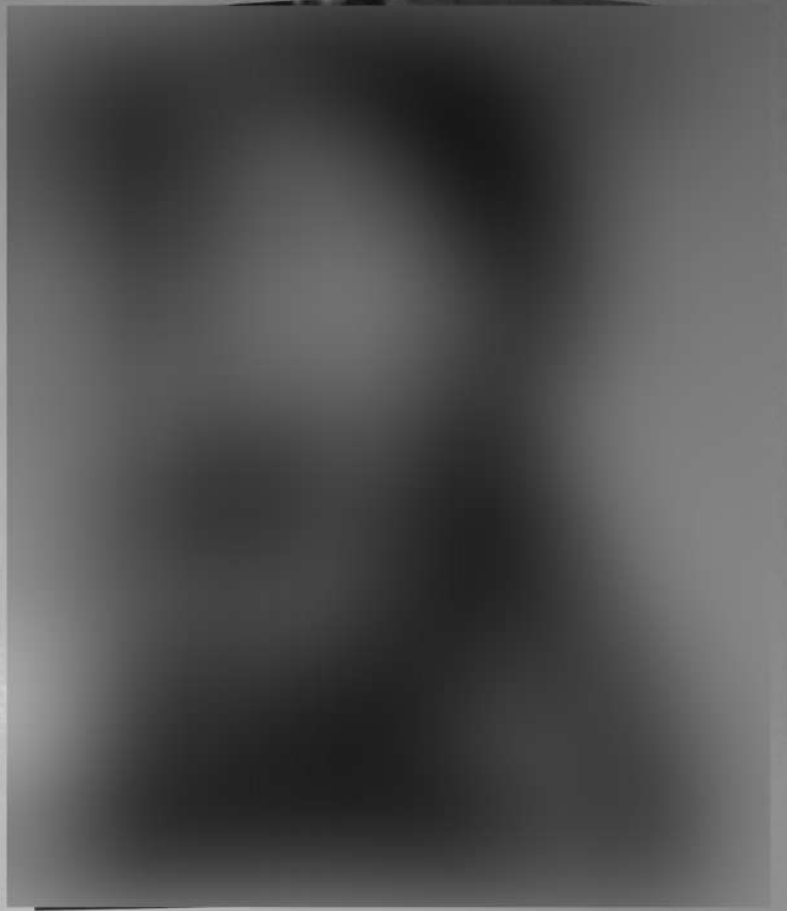
میری تمام توقعات کے برخلاف، مجھے جنگی مضامین اچھے لگنے لگے۔ خاص کر جنگی مشقیں، جن میں کمرے سے باہر کاروائیاں ہوتیں۔ مجھے کھلی فضا میں، اندھیروں میں مارے مارے پھرنے کا مزہ آنے لگا۔ شام کو کسی وادی کے کنارے ٹیلے پر بیٹھ جاؤ، سب دور ہو جاتے۔ کچھ بولنے کی ضرورت نہ رہتی۔ نہ کچھ سننے کی مجبوری۔ سبز پہاڑوں میں گھری ہوئی وادی کی ڈھلوان پر ٹکڑوں میں بٹے ہوئے چھوٹے چھوٹے کھیت، اُونچی نیچی زمین، زمین کے کٹاؤ، نالے، شجر، راستے، گھر، گھروں سے اُٹھتا ہوا دھواں۔ آسمان پر پھیلتی ہوئی لالی۔ تنہائی۔ میں اس میں ڈوب جاتا۔ کہیں دور چلا جاتا۔

زمین کے گڑھوں سے آہستہ آہستہ اندھیرا پھوٹ رہا ہے۔ خاموشی سے ریگ رہا ہے، زمین سے چپکا ہوا۔ کسی جنگجو کی طرح۔ دھرتی کی کوکھ سے اُٹتے ہوئے کالے سائے رفتہ رفتہ ہر بلندی کو اپنی لپیٹ میں لے رہے ہیں۔ ہر چیز پر کالک چڑھ رہی ہے۔ اب تو چوٹیاں بھی ڈوب رہی ہیں۔ کوئی انسان کیوں نظر نہیں آتا؟ شاید سب چھپ گئے ہیں، اپنے اپنے خوف اوڑھ کر۔ صرف گھروں سے نکلتے ہوئے دھویں میں زندگی کے آثار ہیں۔ نہیں! دیکھو، کہیں کہیں قدیلیں بھی ٹٹمنے لگیں۔ نہ جانے کتنی دیر ہو گئی مجھے یہاں بیٹھے ہوئے۔ اب تو وادی میں بتیاں بھی جھجکیں۔ ہر طرف اندھیرا ہے۔ نہ چوٹیاں، نہ وادی، نہ آسمان۔ زمین اور آسمان کا فرق مٹ چکا ہے۔ سب ایک ہیں۔ سب کالے۔ صرف ستاروں سے ہی آسمان کی پہچان ہے۔

انجم اس وقت ہنس رہی ہوگی۔ شاید مجھ پر۔ مگر میں نے تو کبھی اُس سے ایسی باتیں نہیں کیں۔ میں نے تو اُس سے کبھی باتیں ہی نہیں کیں۔ مجھے وہ باتیں ہی نہیں آتیں جو سب کرتے ہیں، بھیڑ میں بیٹھ کر۔ پھر قہقہے لگاتے ہیں۔ میں اٹھ گیا۔ اندھیرے میں راہ تلاش کرتا ہوا اپنے ساتھیوں سے آ ملا۔ سب نالے کی ریت پر بچھونے بچھائے سو رہے تھے۔ صرف سنتری جاگ رہا تھا۔ سلپنگ بیگ نکال کر پتھروں میں ریت کا خالی ٹکڑا ڈھونڈتا رہا، پھر کچھ دور جا کر لیٹ گیا۔ دونوں طرف برساتی نالے کے اُونچے کنارے کھڑے تھے۔۔۔۔ سیاہ۔ اس اندھیرے کی دیواروں کے بیچ آسمان پر ستاروں سے بھر راستہ جارہا تھا۔ کہاں جارہا تھا، مجھے کیا، راستہ حسین تھا۔



پی ایم اے کے دن



راشد کے ساتھ



جنٹلمین کیڈٹ





بنالین سینیر انڈرافسر کے طور پر پابنگ آوٹ پریڈ کی کمان



اعزازی تلوار لیتے ہوئے

پہلا سفر ابتدائے عشق

گرمیوں کی چھٹیوں میں خالہ کے سب بچے ہمارے گھر راولپنڈی آئے۔ جب پایا اور می ایبٹ آباد مجھ سے ملنے آئے تو انجم کو بھی ساتھ لائے۔ وہ فرنیچر فورس میں تھے۔ اُس کے سامنے ایک بہت پرانا سیڈار (cedar) کا درخت ہے۔ کہتے ہیں ۱۸۵۰ میں میجر ایبٹ نے لگایا تھا۔ اتوار کی دوپہر، کئی گھنٹے ہم دونوں نے اُس کے سائے میں گزارے۔ ہم باتیں ہی کرتے رہے، جیسے ہزار ہا سال بعد ملے ہوں۔ جیسے پھر کبھی ملنا نہ ہو۔ جیسے اور دنیا میں کوئی نہ ہو۔ میں اُسے PMA کے قصے سناتا رہا، وہ ہنستی رہی۔ رات ہو گئی اور پتا بھی نہ چلا۔ ہم ایک دوسرے کا ہاتھ تھامے، دھڑکتے دلوں کے ساتھ یوں ہی بیٹھے رہے۔

اُس دن میری دنیا ہی بدل گئی۔ شاید اُس ہی وقت میں کچھ بن گیا۔ ہمیشہ کے لئے بند ہو گیا۔ میں جب بھی ایبٹ آباد جاتا ہوں اُس درخت سے ملنے ضرور جاتا ہوں۔ حسرت سے اُسے دیکھتا ہوں، پر وہ لمحے دوبارہ تو زندہ نہیں ہو سکتے۔ دوبارہ تو دل اُس طرح نہیں دھڑک سکتے۔ اب تو اُس بوڑھے درخت کی شاخوں کے نیچے سہارے بھی لگائے جا چکے ہیں۔ نہ جانے اتنے سالوں میں کتنے راز اُس کے کندھوں کا بوجھ بن گئے؟ نہ جانے درخت صرف ہماری باتیں سنتے ہیں یا دلوں کی دھڑکنیں بھی؟ وہی جانتے ہوں گے کیا بوجھ ہے، اور کیا روح کی غذا۔

جب PMA کے بالکنگ رنگ میں پہنچا تو خوب پٹا، مگر آخر دم تک لڑتا ہی رہا۔ ہر منٹ کے آگے منہ رکھ دیتا۔ جیت تو گیا، مگر لوگوں نے کہا کہ اگر بار جاتے تو بیسٹ لوزر (best loser) کا انعام پاتے۔ میرے اوپر کے سامنے والے تین دانت بچپن سے ہی ٹیڑھے تھے۔ بالکنگ رنگ سے نکلنے پر پتا چلا کہ سامنے کا ایک دانت وہیں گرا آیا ہوں۔ جو دانتوں کے بیچ کھڑکی تھی وہ اتنی نہ تھی کہ اُس میں نیا دانت لگایا جاتا۔ ایک دانت اور ہل رہا تھا۔ ڈینٹسٹ نے کھڑکی کے دونوں اطراف کے دانت بھی نکال دیے اور کہنے لگا، "جب مسوڑے اپنی جگہ پر بیٹھ جائیں گے تو تین نئے دانت لگا دوں گا۔ مہینے بعد آنا۔" اب بات کرتا تو منہ سے ہوا نکلتی۔ سب کو ایک مذاق مل گیا۔ ہر جگہ مجھے بولنے کے لئے بلا لیا جاتا۔ اور میں سرخ چہرہ لئے سب کے چہروں پر مسکراہٹیں بکھیرتا۔

میرے PMA آنے کے ایک سال بعد میرا چھوٹا بھائی گڈو بھی میرے پیچھے پیچھے آ گیا۔ وہ خالد کمپنی میں تھا، میں طارق میں۔ بہت شریر اور ہر دل عزیز تھا، زیادہ وقت سزا پر ہی رہتا۔ آخری ٹرم میں ایک شام پٹھو پہنا میرے پاس آیا، میں نے پوچھا سزا پر جا رہے ہو؟ کہنے لگا ہاں، مگر ابھی کچھ وقت ہے۔ میں نے کہا میرے پاس بیٹھو، میں چٹ بھیج دیتا ہوں تمہاری سزا معاف ہو جائے گی۔ میں بٹالین سینئر انڈر افسر تھا، جو ان دنوں کیڈٹس کا سب سے اونچا عہدہ تھا۔ تب PMA میں ایک ہی بٹالین تھی۔ کہنے لگا، "میری تو کوئی حیثیت نہیں، مگر لوگ تمہارے بارے میں کیا باتیں کریں گے کہ اپنے بھائی کی سزا معاف کر دی۔" یہ کہہ کر ہنستا ہوا سزا کاٹنے چلا گیا۔ اُس کی ہنسی آج بھی میری آنکھوں میں چمکتی ہے۔

پہلا سفر ابتدائے عشق

PMA میں میں نے بہت دل لگا کر کام کیا۔ اب محنت کرنے کا کوئی مقصد بھی نظر آنے لگا تھا۔ جیسے مجھے کھویا ہوا ڈائنامو (dynamo) مل گیا ہو۔ اپریل ۱۹۷۱ میں کمیشن لیا۔ اعزازی تلوار (Sword of Honour) اور پریزیڈنٹ کے گولڈ میڈل سے نوازا گیا۔ کمیشن لینے پر بھی یہ احساس پوری طرح نہ جاگا تھا کہ اب ہمیشہ کے لئے خاکی رنگ میں گھل چکا ہوں۔ اس مٹی سے میرا ایک ایسا رشتہ قائم ہو چکا ہے، جو مٹی میں ملنے تک زندہ رہے گا۔ اس ہی کی حفاظت میرا نیا خواب ہوگی۔ میں نے ہجرت کے دروازے اپنے اوپر ہمیشہ کے لئے بند کر لئے تھے۔

نہ کوئی جادہ نہ کوئی منزل *

کمیشن لے کر میں پاکستان فوج کی مایہ ناز دس بلوچ رجمنٹ کے گھرانے میں شامل ہو گیا۔ یہ سالین ۱۸۴۴ میں کراچی میں فرسٹ بلوچ لائٹ انفنٹری کے نام سے کھڑی ہوئی تھی اور واحد پلٹن تھی جسے صحراؤں میں کارکردگی کی بنیاد پر اپنی ٹوپی میں چکوروں کے پر لگانے کا اعزاز حاصل تھا۔ جب میں نے کمیشن لیا تو ملک میں فوجی حکومت قائم تھی، اور ملک کے سربراہ جنرل عبدالحمد خان دونوں نے اس ہی یونٹ میں کمیشن لیا تھا۔ اُن دنوں میرے لئے یہ فخر کی بات تھی۔ یونٹ راولپنڈی کے ۱۱۱ بریگیڈ میں پریذیڈنٹس گارڈ کے فرائض انجام دے رہی تھی، اور ہمارا زیادہ وقت گارڈ چیک کرنے اور مختلف سلامیوں کی ڈیوٹیوں پر ہی لگ جاتا۔ فوجی تربیت کے لئے نہ زیادہ وقت ہوتا اور نہ ہی سپاہ۔

یونٹ میں پہنچنے کے کچھ ہی عرصے بعد تین ماہ کے کور کمانڈ ولیڈر کورس پر بھیج دیا گیا۔ ہیڈمرالہ میں تربیتی کیمپ لگا اور سپیشل سروسز گروپ (SSG) کی ایک ٹیم افسروں کی تربیت کے لئے چراٹ سے آئی۔ سیکھا تو بہت، مگر گڑا بھی خوب لگا۔ اپنی جسمانی صلاحیتوں کو ختم ہونے کے قریب پاتے تو پتا چلتا کہ ابھی منزل دور ہے۔ خود کو گھسیٹتے تو عیاں ہوتا کہ اور جان باقی ہے، اس جسم کو اور نچوڑ سکتے ہیں۔ آخری ٹیسٹ ایک رات میں چالیس پاؤنڈ وزن اور ہتھیار کے ساتھ چھتیس میل کا سفر طے کرنا تھا۔ رات دوڑتے دوڑتے ہی گزری۔ جب پیچھے پڑے پھٹنے لگتے تو سگریٹ سے توبہ کرتا، پھر جب رکتا اور سانس برابر ہو جاتی تو ایک آخری پی لیتا۔ پھر یہی سلسلہ جاری رہتا۔

جنگل میں اور کھلی زمینوں میں تپتی دھوپ میں چوہے کے بلوں کی طرح گڑھے کھود کر اُن میں گھنٹوں چھپے رہتے۔ دشمن کی نقل و حرکت کو دیکھتے، خفیہ پیغامات بھجواتے۔ پھندے بنا کر خوراک تلاش کرتے، کچھ نہ ملتا تو مینڈک کھاتے۔ بارود سے کھیلتے۔ راتوں کو جنگل سے ڈھونڈی ہوئی چیزوں سے خود ساختہ کشتیوں پر ہتھیار اور امویشن لے کر نہروں اور دریاؤں کے پار چھاپے مارتے، گھات لگاتے۔ ہل اڑاتے۔ جب گڑبڑ کرتا، پکڑا جاتا۔ کبھی گاؤں کے کسی گھر سے کھانا کھاتے، کبھی پیدل چل کر تھک کر بس میں بیٹھتے، کبھی آدھی رات کو گاؤں کے ٹانگے والے کو جگا کر ٹانگے میں سفر کرتے، کبھی کچھ اور، پھر سزا کے کٹھن بوجھ اٹھا کر میلوں دوڑنا پڑتا۔ ایک کھیل تھا، بچ گئے تو مزے کرو، پکڑے گئے تو خیر نہیں۔

پہلا سفر ابتدائے عشق
کورس کے اختتام پر ایک لمبی ایکسرسائز ہوئی۔ رات بھر چلتے رہتے، دشمن کے کسی ٹھکانے پر چھاپا مارتے یا کسی راستے پر گھات لگاتے، پھر صبح ہونے سے پہلے کہیں دور پہنچ کر چھپ جاتے۔ سارا دن چھپے رہتے، پھر رات کو دوبارہ آگے چل پڑتے۔ یوں کرتے کرتے کھاریاں کے پاس پٹی کے جنگل سے گزر کر چواکڑیاں ریلوے سٹیشن پر آخری چھاپہ مارا، اور پھر دوسرے راستے سے یہی کاروائیاں کرتے ہوئے واپس ہیڈمرالہ پہنچے۔ جب کھاریاں کے پاس پٹی میں آخری اڈے پر تھے تو ایکسرسائز میں دو دن کا وقفہ دیا گیا۔ خالہ کے سب بچے ہمارے گھر گرمیوں کی چھٹیوں پر آئے ہوئے تھے۔ پاپا اُن دنوں جہلم کے قریب کالاڈپو میں تھے۔ انجم اتنی قریب تھی، ایسا لگا ہاتھ بڑھا کے چھو سکتا ہوں۔ میں نے سوچا اتنے افسران پٹی کے جنگل میں چھپے ہوئے ہیں، کیا پتا چلے گا کہ کون کہاں ہے۔ ہتھیار کھول کر بیگ میں ڈالا، بس میں بیٹھ کر گھر چلا گیا۔ جب واپس آیا تو اڈے پر کسی کو نہ پایا۔ سب کو کھاریاں کے پاس دو دن آرام کرنے کے لئے ایک خالی سکول میں بھیج دیا گیا تھا۔ پکڑا گیا۔ خوب سزا کاٹی۔

ساری تربیت دس بلوچ کے میجر اکرم علی خان (جو بریگیڈئیر بن کر ریٹائر ہوئے) نے دی، جو اُن دنوں SSG میں تھے۔ ایک ہیرا انسان جس نے صرف نایاب تربیت ہی نہیں دی، جینا بھی سکھایا۔ کاش ایسے افسروں کو فوج یوں ضائع نہ کرتی۔ بعد میں ان سے میرا تعلق بہت گہرا ہو گیا اور آج بھی مجھے چھوٹا بھائی ہی تصور کرتے ہیں۔ میں ہی نایبنا، ناقدر کسی رشتے پر پورا ہی نہیں اُترتا۔

تیرے ہونٹوں کے پھولوں کی چاہت میں ہم
دار کی خشک ٹہنی پہ وارے گئے
تیرے ہاتھوں کی شمعوں کی حسرت میں ہم
نیم تاریک راہوں میں مارے گئے

سولیوں پر ہمارے لبوں سے پرے
تیرے ہونٹوں کی لالی لپکتی رہی
تیری زلفوں کی مستی برستی رہی
تیرے ہاتھوں کی چاندی دکتی رہی

جب گھلی تیری راہوں میں شامِ ستم
ہم چلے آئے، لائے جہاں تک قدم
لب پہ حرفِ غزل، دل میں قندیلِ غم
اپنا غم تھا گواہی ترے حسن کی
دیکھ قائم رہے اس گواہی پہ ہم
ہم جو تاریک راہوں میں مارے گئے
(فیض)

دوسرا سفر آغازِ جنوں

خون کے دھبے دھلیں گے کتنی برساتوں کے بعد *

اُن دنوں مشرقی پاکستان میں آگ بھڑک رہی تھی، اور ہولناک خبریں آتی رہتیں۔ ہم ابھی PMA ہی میں تھے کہ ہنگامے شروع ہو چکے تھے۔ خود ہی ہم اپنا خون بہا رہے تھے۔ یہ کہہ دینا کہ کچھ باغیوں نے دشمن کے ساتھ مل کر سازش کی، جس کا یہ نتیجہ نکلا، جھوٹ کی چادر پر موبوم سے سچ کے پیوند سے زیادہ نہیں۔ اُن کو کبھی اپنے جیسا سمجھا ہی نہیں۔ اگر ہم برابری کا سلوک کرتے تو یہاں تک نوبت ہی نہ آتی۔ ہم نے اپنے بھائیوں کو دھکیل کر اُس مقام تک پہنچا دیا کہ انہوں نے دشمن کو اپنا غم گسار سمجھا۔ جو نفرتیں بوئی تھیں، کھل گئیں۔ پھر اتنا خون بہا کہ دونوں بھائی آج تک منہ چھپاتے ہیں۔

کیا فوجی حکمران، کیا سیاستدان، طاقتوروں نے اپنے ذاتی مفاد کی خاطر ہزاروں کا خون بہایا، ملک کے دو ٹکڑے کر دیئے۔ کسی کو کسی نے نہ پوچھا۔ سب پردے میں رہے۔ سب محفوظ، فوجی حکومتیں بھی آئیں اور سیاسی بھی۔ سب خاموش۔ سب سازش میں شامل۔ عوام پھر بھی اپنے بچوں کو پالتی رہی، اہل ہوس کی ترجیحات پر خون بہانے کو۔ ہم نے آدھا ملک کھو کر بھی کچھ نہیں سیکھا۔ آج بھی اُس ہی دہلیز پر کھڑے ہیں۔ آج بھی آنکھیں بند کئے، کانوں میں انگلیاں ٹھونسے، آدھے سچ پر اپنا ہی خون بہا رہے ہیں۔

ہندوستان کے عزائم ۱۹۷۰ء میں مئی کے مہینے سے ہی دیکھنے والوں کو نظر آنے شروع ہو گئے تھے۔ جولائی کے مہینے تک اُن کے تمام منصوبے تیار تھے۔ مگر ملک کی خفیہ ایجنسیاں بجائے دشمن پر نظر رکھنے کے حکمران کو مزید مستحکم کرنے کی ترکیبیں کر رہی تھیں۔ دہلی میں بیٹھے غیر ملکی سفیروں نے بھی بھانپ لیا تھا، مگر ہمارے حکمران اپنی کوتاہیوں سے فارغ ہوتے تو سچ پر دھیان دیتے۔ اُن کا سچ آج بھی وہی ہے جو اُن کے ذاتی عزائم پورے کرتا ہو۔ باقی سب کچھ وہ قیاس آرائی کہہ کر پھینک دیتے ہیں۔ آگاہ کرنے والے کو بھی شرمندہ چھوڑتے ہیں۔ کہتے ہیں، "کیا تم سازشی نظریے (conspiracy theories) جھاڑتے رہتے ہو۔"

فوج کی حکمت عملی اُن دنوں یہ تھی کہ مشرقی پاکستان کا دفاع مغربی پاکستان میں ہے۔ یعنی اگر وہاں حملہ ہوگا تو اُس کا جواب یہاں سے دیا جائے گا، اور ہندوستان کی افواج کو مجبور کیا جائے گا کہ وہ مشرقی پاکستان سے پیچھے ہٹ جائیں۔ اس مفروضے پر وہاں صرف ایک ڈویژن فوج ہوتی تھی اور برائے نام ہوائی جہاز۔ فوجی منصوبہ بھی باقی چیزوں کی طرح سوتیلے بھائیوں جیسا ہی تھا۔

دوسرا سفر آغا جتوں

جب ہنگامے شروع ہوئے تو مزید فوج وہاں بھجوائی گئی، اور جو مغربی پاکستان سے حملے کے منصوبے تھے اُن کے لئے سپاہ کافی نہ رہی۔ جب یہاں سے حملے کے احکامات دیئے گئے، اُس وقت مشرقی پاکستان کی صورت حال بھی ہاتھ سے نکل چکی تھی۔ یہاں کچھ بھی کرنے سے کوئی فرق نہیں پڑ سکتا تھا۔ ویسے بھی نہ ہی اس سٹریٹیجی (strategy) میں کوئی جان تھی، نہ ہی اس کا وقت رہ گیا تھا اور نہ ہی سپاہ۔ جب حکمران ہوش میں آئے، چھت گر رہی تھی، بوکھلاہٹ میں مغربی پاکستان سے بھی بے مقصد حملہ شروع کروادیا۔

فوج کی تاریخ اگر کسی نے سچ لکھی ہوتی تو صحیح پتا چلتا، لیکن جو سنا اور پڑھا عقل حیران ہے۔ GHQ کی کارکردگی فوجی حکمران کی غفلت سے کافی حد تک متاثر ہو چکی تھی۔ وہ سیاست ہی میں مشغول رہتا۔ تاریخ لکھنے والے لکھتے ہیں، "نااہل لوگ صرف دکھلائی ہوئی وفاداریوں اور مبالغہ آمیز مظاہرہ مردانگی (machismo) پر ترقی پا رہے تھے، اور چہیتوں کا ٹولہ، (جو ہر فرعون کی حکمران کے گرد جمع ہو جاتا ہے) راج کرتا تھا۔ صدر صاحب جس کو جی کرتا احکام دیتے، یا شاید جو سامنے ہوتا۔ جو شاہیں اُن کے ساتھ گزارتے، مرضی کے احکام حاصل کر لیتے۔ اہم مسائل پر غور و فکر کے بجائے، فیصلے یوں ہی متکبرانہ اور لاپرواہ (cavalier) انداز میں سنا دیئے جاتے" ---- بس کہہ دیا۔ کتابوں سے تو یہی ملا ہے۔

۱۶ دسمبر کی دوپہر مشرقی پاکستان میں لیفٹیننٹ جنرل نیازی نے سپاہ کو حکم دیا کہ ہتھیار ڈال دیں۔ اُسی شام جنرل یحییٰ نے قوم سے خطاب کیا اور کہا کہ ایک محاذ پر نقصان اٹھانے کا یہ مطلب نہیں کہ جنگ ختم ہو گئی، ہماری جنگ جاری رہے گی۔ قوم کو خوب جوش دلایا، کہ آدھا ملک کھونے کا غم نہ ہو۔ کوئی حاکم کو ہارا ہوا نہ سمجھے۔ جانتے تھے کہ ہندوستان کی فوجیں اب بنگال سے بھی ادھر آنا شروع ہو جائیں گی۔ اور جو کچھ یہاں جنوبی صحرا میں ہماری فوج کے ساتھ ہو چکا تھا، اُس سے بھی واقف تھے، لیکن نہ جانے کیوں، جب دباؤ کے نیچے آتے ہیں تو ڈکٹیٹروں کے دماغ کسی اور ہی دنیا میں ہجرت کر جاتے ہیں۔

پھر اگلے دن، ۱۷ دسمبر کو ساڑھے تین بجے ریڈیو پر مغربی پاکستان میں بھی جنگ بندی کا اعلان کر دیا گیا، جنگ جاری رکھنے کے اعلان کے چند گھنٹوں بعد۔ رات کو جنرل یحییٰ خان نے تقریر کی اور فرمایا کہ اب لڑنے کا کوئی فائدہ نہیں۔ گھر بیٹھ کر سر پیٹو، ماتم کرو۔ جو تمہارے بچے میں نے آگ میں جھونک دیئے وہ میرے غرور کی نظر ہوئے۔ فوجی تھے، اسی لئے ان کو پالا تھا کہ بادشاہوں کے کام آئیں۔ یہ جنگ کی خوراک ہوتے ہیں۔ بھلا بتاؤ، مردود بنگالی، دو ٹکے کا آدمی، مجھے آنکھیں دکھاتا تھا۔ حکومت کی رٹ (writ) کو لکارتا تھا۔ کہتا تھا میں حکومت کروں گا! اُس کی یہ مجال؟! میں نے ہزاروں کو ذبح کر دیا۔ میں بادشاہ ہوں، میں نے کہا تھا۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

طاقت کی ہوس نے پاکستان کو دو ٹکڑے کر دیا۔ شیخ مجیب الرحمن کی طرح ذوالفقار علی بھٹو نے بھی سازش کا ایک جال بنا، اور "ادھر تم، ادھر ہم" کا نعرہ لگایا۔ مجیب نے دشمن کا سہارا لے کر نفرتوں کو سینچا، بھٹو نے ایک نااہل فوجی حکمران کی لالچ کو بھانپ کر، اُسے اپنی انگلیوں پر نچایا۔ دونوں نے طاقتور ساتھی چنے اور لاکھوں انسانوں کو اپنی خود غرضی کے دیوتا کی بھینٹ چڑھا دیا۔ ملک کو دو لخت کر کے موروثی جائیداد کی طرح بانٹ لیا۔ ظالم پر اللہ کی گرفت سخت ہوتی ہے، دنیا ہی میں بدلے چکا دیتا ہے۔ یحییٰ ذلیل ہو کر قید میں ہی مر گیا، بھٹو پھانسی پر لٹکا، مجیب قتل ہوا، اور اندر اپنے محافظ کے ہاتھوں ماری گئی۔

آج نئے رنگوں میں یہی کھیل پھر کھیلا جا رہا ہے۔ پھر اپنی رٹ (writ) کی آڑ لے کر خون بہایا جا رہا ہے۔ اور قوم کا غم صرف پیٹ ہے، بھائی کی موت نہیں۔ نہ ہی اللہ کا خوف۔ صرف بھرے پیٹوں کی بھوک۔ اور حکمران، ہمیشہ کی طرح، اپنی طاقت برقرار رکھنے کو سب کچھ جلانے پر آمادہ!

بھاگتے سایوں کی چنچیں، ٹوٹتے تاروں کا شور *

راولپنڈی سے تمام سپاہ میدان جنگ کو جا چکی تھیں، صرف ایک ہماری پلٹن رہ گئی تھی، سلامی دینے کو۔ ہم اُن دنوں ۲۳ ڈویژن کا حصہ تھے جو کشمیر میں چھمب (افتخار آباد) کے محاذ پر تھا۔ پھر یکم دسمبر کو ہمیں گارڈ ڈیوٹیوں سے ہٹایا گیا اور محاذ کے میدان کی طرف روانگی کے احکامات ملے۔ دوسرے دن ایک فوجی ٹرین میں سوار ہو کر گجرات کے لئے روانہ ہو گئے۔ تین تاریخ کو، قبلہ بدل کر، حملے میں جانا تھا۔ ۱۹۶۵ کی لڑائی میں بھی ایک ٹرین میں سفر کیا تھا۔ اُن دنوں نور جہاں کے ترانے ہر جگہ سنائی دیتے اور لوگوں کا ابلتا ہوا جوش فضاؤں میں بلند نعروں کے ساتھ گونجتا۔ اب ہر طرف سناٹا تھا۔ راولپنڈی ریلوے سٹیشن پر بھی کوئی ہمیں الوداع کہنے نہ آیا۔ جو لوگ وہاں موجود تھے اُنہوں نے بھی دیکھا اور نظریں پھیر لیں۔ راستے کے ہر سٹیشن پر بھی ویسا ہی سناٹا۔ بے اعتنائی۔

جب حاکم سیاسی مفاد میں اپنے ہی بچوں کا خون بہانا شروع کر دے، تو عوام کس کا ساتھ دیں؟ آج پھر یہی ہو رہا ہے۔ حکومت کا چیخ چیخ کر گلاسوکھ گیا کہ یہ ہماری جنگ ہے۔ تمام ٹی وی چینلز بھی اس ہی ترانے میں شامل ہیں، بہت سے کرائے کے عالم دین بھی، فوج بھی امریکہ کے نام پر جان دینے والوں کے سینوں پر تمنغے سجاتی رہی، خون بہاتی رہی، مگر قوم میں کوئی اس بات کو ماننے پر آمادہ نہیں کہ یہ جنگ ہماری جنگ ہے۔ سچ پر کتنا ہی جھوٹ کا لبادہ اڑھاؤ، سچ سچ ہے، آخر کھل ہی جاتا ہے۔

دو دسمبر کی رات ہم گجرات پہنچے۔ سٹیشن پر ہمارے چند ساتھی، جو پہلے جا چکے تھے، ہمیں لینے آئے۔ یہاں پتا چلا کہ اگلی رات مغربی پاکستان سے ہماری فوجیں دشمن پر حملہ آور ہوں گی۔ ہم بہت جوش میں تھے اور لڑائی کے لئے بے قرار۔ پاکستان ہمارا ہے، ہم اس پر ایک آنچ بھی نہ آنے دیں گے، چاہے ہمیں اپنی جان ہی دینی پڑے۔ یہ ہم جوانوں کا جذبہ تھا۔ کیا کبھی کسی حکمران نے بھی سوچا کہ یہ جنگ کیوں اپنی عوام پر ٹھونس رہا ہوں؟ یہ سوچا کہ میرے حکم پر کتنے ہی جوان جان ہتھیلیوں پر لئے، اللہ اکبر کا نعرہ لگا کر بغیر کسی مقصد کی آگ میں کود جائیں گے؟ نہیں۔ وہ تو گدھ کی طرح ان ہی کی لاشوں پر پلتے ہیں، آج بھی۔

ہماری گاڑیاں تاریک راہوں پر بتیاں بجھائے آہستہ آہستہ بہت دیر چلتی رہیں۔ پھر کسی نامعلوم مقام پر ہم گاڑیوں سے اتر کر پیدل چلنا شروع ہو گئے۔ کئی گھنٹے چلتے رہے، اور صبح ہونے سے پہلے ایک نالے میں چھپا دیئے گئے۔ حکم ملا کہ روشنی ہونے پر کوئی نالے سے

دوسرا سفر آغاز ہوں

باہر نہ نکلے، کیونکہ دشمن قریب ہے۔ دیکھ رہا ہے۔ ہم سارا دن اُسی نالے میں چھپے رہے۔ میں الفاکمپنی میں پلاٹون کمانڈر تھا، اور علاقے سے بالکل ناواقف۔ نقشے پر احکامات ملے۔ بتایا گیا کہ آج رات حملہ ہوگا۔ بریگیڈ کے پہلے مرحلے میں دو ہٹالین حملہ کریں گی، اور دوسرے مرحلے میں ہماری ہٹالین اُن میں سے گزرتی ہوئی، صبح سے پہلے حملہ کرے گی۔ اور کچھ زیادہ سمجھ میں نہ آیا۔

اندھیرا ہونے کے بعد ہم اپنے گھڈ سے باہر نکلے اور بہت دیر پگڈنڈیوں پر چلتے رہے۔ آج ہمارے حملے کی رات ہے۔ آگ میں کودنے کی رات۔ میرے ذہن میں عجیب سا خلا تھا، خوابوں سے خالی، جیسے دماغ سوچکا ہو۔ کافی چلنے کے بعد ایک پتھر یلے نالے پر پہنچ کر ہم رُک گئے۔ بہت ٹھنڈی تھی۔ میں سرد پتھروں پہ لیٹا آسمان کو تک رہا تھا۔ خنک ہوا میں ستارے آج بہت چمک رہے تھے، جیسے محبت سے مجھے دیکھ رہے ہوں، لگتا تھا قریب ہیں، میں ہاتھ بڑھا کر اُن کو چھو سکتا ہوں۔ بہت دیر میں اُن کو دیکھتا رہا۔ ٹوٹے ستاروں کو گنتا رہا۔ نہ جانے آج اتنے ستارے کیوں ٹوٹ رہے تھے۔ پتھروں پر پڑا میں سردی سے ٹھہر رہا تھا۔ انجم کی ایک تصویر اُس کے خط کے ساتھ ملی تھی۔ وہ قمیض کی بائیں جیب میں رکھی تھی، دل کے پاس۔ لگا جیسے یہ ایک آڑ ہے۔ دل میں یہ خدشہ نہیں اُٹھا کہ شاید میں اُس سے دوبارہ نہ مل سکوں۔ یقین تھا کہ ملوں گا۔ نہ جانے کیوں ساری جنگ کے دوران کبھی یہ خیال نہ آیا کہ مجھے بھی کچھ ہو سکتا ہے۔ موت کی تصویر آنکھوں کے آگے نہ گھومی۔ شاید ذہن نے اس خیال کو آنے سے روک دیا تھا، ورنہ خوف غالب آ جاتا۔

پھر اچانک خاموش رات پھٹ پڑی۔ ہمارے بیچوں بیچ، ہمارے چاروں طرف، لگاتار دھماکے ایک دوسرے پر چڑھنے لگے۔ ڈھا ڈھا ڈھم ڈھم ڈھم۔ ہوا سیٹیاں بجانے لگی۔ بارود کی بو پھیل گئی۔ جنگ شروع ہو گئی۔ کپکی اور بڑھ گئی۔ پتھر اور سرد ہو گئے۔ سب ہی زمین پر اوندھے پڑے تھے۔ میں نے بھی پتھروں میں منہ گھسیڑ لیا۔ سمجھا موت سے چھپ گیا۔ کافی دیر گولے پھٹتے رہے۔ دل دہلتا رہا۔ زمین لرزتی رہی۔ پھر سب چُپ ہو گیا۔ کوئی زور سے بولا، "اُٹھو اُٹھو، جلدی چلو"۔ پتا چلا کہ ہم اپنی ہی توپوں کی ایک پوزیشن کے بیچ بیٹھ گئے تھے۔ یہ ہمارے گولے تھے، جو پہلے مرحلے کی حملہ آور سپاہ کی امداد میں فائر ہو رہے تھے۔ حکم آیا کہ یہاں سے نکلو۔ کہیں اور جا کے رکیں گے۔ ہم نے آدھی رات تک انتظار کرنا تھا۔ ابھی اُٹھے ہی تھے کہ پھر گولے پھٹنے لگے۔ اب دشمن فائر کر رہا تھا۔ اُس کا جوابی فائر۔ ہم پھر زمین پر گر گئے۔ پہلے تو پیس چل رہی تھیں۔ اُن کی گونج تھی۔ گولے تو اب پھٹ رہے تھے۔ سروں پر۔ پہلو میں۔ ٹھٹھرتے جسموں کے بیچ۔ ان کا دھماکہ نہیں تھا، چیخ تھی۔ میں نالے کی زمین میں منہ دیئے، گول گول چکنے سفید پتھروں کو سونگھ رہا تھا۔ ان میں بھی خوشبو ہوتی ہے، کبھی سونگھی ہے؟ موت قریب ہو، تو سارے احساسات جاگ اُٹھتے ہیں۔

رات یوں ہی گزر گئی۔ حملے میں ہماری باری نہ آئی۔ صبح پتا چلا کہ رات دونوں پلٹنوں نے اکٹھا حملہ کیا، جو پوری طرح کامیاب نہ ہو سکا۔ اب ہمیں بائیں طرف والی یونٹ سے گزر کر، دشمن کی پوزیشنوں پر ایک بازو سے حملہ کرنا تھا۔ پہلے مرحلے میں دو کمپنیوں کا حملہ تھا،

جنہوں نے اُس زمین پر قبضہ کرنا تھا جو دہنی والی یونٹ کے سامنے تھی، اور پہلے حملے میں اُس نے اس پر قبضہ کرنا تھا، یہی ان کا مقصود (objective) تھا۔ پھر، دوسرے مرحلے میں باقی دو کمپنیوں نے ایک پہاڑی ٹیلے پر، جس نے ہمارا راستہ روکا ہوا تھا، قبضہ کرنا تھا۔ یہ مشہور ٹیلا پوائنٹ ۹۹۴ کوئل موئل سے چھمب کے راستے میں آتا ہے، اور یہی دشمن کی اصلی دفاعی پوزیشن تھی۔ میری کمپنی پہلے مرحلے میں بائیں جانب تھی۔ ہمارے دہنی طرف براوو کمپنی تھی اور بائیں طرف پوائنٹ ۹۹۴ کی پہاڑی، جس کا سلسلہ دور تک جاتا تھا۔

جب اندھیرا اچھا گیا تو ہم پھر زمین سے نمودار ہوئے اور چلنا شروع کر دیا۔ ایک لمبی قطار میں دیر تک چلتے رہے۔ میرے کمپنی کمانڈر کمانڈو کے میجر تھے۔ کھیت کی ایک بنی پر اُن کا پاؤں پھسلا اور ٹخنے میں موج آ گئی۔ کہنے لگے، "میں اب اور چل نہیں سکتا، پیچھے امونیشن کی گاڑی میں بیٹھ کر آؤں گا۔ تم کمپنی کو لے کر چلو"۔ پھر وہ مجھے دکھائی نہیں دیئے۔ میں کمپنی کو لئے، اُن دیکھے راستوں پر، کافی دیر قطار میں لگے آدمی کے پیچھے چلتا رہا۔

ایک جگہ کچے راستے کے کنارے دشمن کی جیب کھڑی تھی۔ اوپر درخت پر اُن کے توپ خانے کے دیدبان کی چٹان خالی پڑی تھی۔ کسی نے بتایا کہ قریب ہی اُن کا ایک زخمی بھی پڑا ہے۔ میں نے ابھی تک دشمن کو نہیں دیکھا تھا۔ پاس پہنچا تو اُس نے بتایا کہ وہ زخمی ہے اور بہت تکلیف میں۔ چھو کر دیکھا تو قمیض خون سے بھیگی ہوئی تھی، ہاتھ کمر کے پیچھے ٹیلیفون کی تار سے بندھے تھے۔ کہنے لگا، "میرے ہاتھ کھول دیں اور مجھے پانی پلا دیں"، اپنی بوتل سے پانی پلایا۔ پھر جیب سے ایک کمبل لا کر اُس پر ڈال دیا۔ میں نے کہا تمہارے ہاتھ تو نہیں کھولوں گا، مگر تھوڑی دیر میں تمہیں پیچھے ہسپتال پہنچا دیں گے۔ اور میں آگے چلا گیا۔ سوچا پیچھے زخموں کو اٹھانے والے (stretcher beares) آتے ہیں، اٹھالیں گے۔ دوسرے دن مجھے اُس کی لاش وہیں پڑی ملی، دونوں آنکھوں میں کسی نے گولیاں مار دی تھیں۔ آنکھوں کی کالک، خون کے ساتھ مل کر اُس کے سفید چہرے پر جم چکی تھی۔ بہت سی مکھیاں چپکی ہوئی تھیں۔ مجھے اس نفرت پر غصہ بھی آیا اور گھٹن بھی۔

جب ہم حملے کی تیاری میں آخری مقام پر پہنچے، تو ہیڈ کوارٹر کمپنی کے کمانڈر نے میری کمپنی کی کمانڈ سنبھال لی۔ یہ سینئر کپتان تھے، بریگیڈ میں جی تھری (GSO-III) رہ چکے تھے۔ فوج کے چمکتے ہوئے افسر تھے، سخت خواہر شد مزاج۔ ٹیڑھے منہ ہی بات کرتے۔ مجھے اندھیرے میں آکر ملے، اتنی خوش مزاجی پہلے نہیں دیکھی تھی۔ ہم ترتیب گاہ کی کھلی زمین پر قطاروں میں، نواڑ کی پٹی پر ہاتھ رکھے بیٹھے تھے۔ یہ جگہ دشمن کی پوزیشن سے ایک کلومیٹر سے کم فاصلے پر ہوتی ہے اور یہاں حملے کی آخری ترتیب اختیار کی جاتی ہے۔ یہاں سے درست سمت اور ترتیب رکھ کر دشمن پر یلغار کرتے ہیں۔ پانچ منٹ سے زیادہ نہیں ٹھہرتے۔ دشمن سے قریب ہونے کی وجہ سے بہت سے خدشات لاحق ہوتے ہیں۔ لیکن ہم کئی گھنٹے یہیں بیٹھے رہے۔ توپ خانے کے فائر کا ارتباط نہ ہونے کے باعث، آخری لمحے پر حملہ کچھ دیر کے لئے ملتوی کر دیا گیا

دوسرا سفر آغاز جنوں

تھا۔ چلنے سے پہلے کمپنی کمانڈر نے بتایا کہ دشمن کی پوزیشن پر قبضہ کرنے کے بعد، اُس کے پیچھے ایک نالا ہے جس پر دفاعی پوزیشن اختیار کرنی ہے۔ نالے کے پار نہیں جانا، اس میں بارودی سرنگیں بچھی ہیں۔

صبح کی روشنی سے کچھ پہلے نواڑ کی پٹی کھینچی گئی، اشارہ تھا کہ اُٹھو، اب چل پڑو۔ ہم اپنے مقصود کی طرف بڑھنے لگے۔ کچھ چلنے کے بعد نالا آ گیا، اور کوئی دشمن نہ ملا۔ میں نے دائیں بائیں دیکھا تو سپاہیوں کی قطار نالے کے کنارے کھڑی تھی۔ ان کو یہی احکام دیئے گئے تھے کہ نالے پر پہنچ کر رُک جانا۔ لیکن بغیر دشمن سے ملے حملہ کیسے ختم کرتے۔ میں کچھ ٹھٹکا، پھر خوف کے باوجود نالے میں کود پڑا۔ لگا کسی بارودی سرنگ پر ہی گروں گا، مگر کیا کرتا کمانڈری کا بھرم بھی تو رکھنا تھا۔ کوئی دھماکا نہ ہوا۔ نالا شاید چھ یا آٹھ فیٹ گہرا تھا، اور کوئی بیس فیٹ چوڑا۔ تربیت کے مطابق، میں دوڑ کر اس میں سے گزرا اور پرلے کنارے پر چڑھ گیا۔ کوئی سرنگ نہ پھٹی۔ پار کنارے پر میں نے مُڑ کر اپنی سپاہ کو، جو مجھے دیکھ رہے تھے، آواز لگائی۔ پھر سب ہی نالے میں کود پڑے۔ بس اس کے بعد ہمارے حوصلے بلند ہو گئے، شاید کچھ زیادہ ہی۔

میں حملے کے بارے میں بس وہی جانتا تھا جو میں نے کتاب سے امتحان پاس کرنے کے لئے یاد کیا تھا۔ جمع گاہ کی سات خصوصیات، ترتیب گاہ میں کاروائی اور اُس کی چھ خصوصیات، حملہ شروع کر کے ترتیب سیدھی رکھنے کی اہمیت، وغیرہ، وغیرہ۔ اس کے علاوہ PMA میں مشقوں کے دوران چند بار ترتیب گاہ سے مقصود تک چلا تھا، نعرہ لگایا تھا۔ PMA کے بعد جنگ تک چند ماہ ہی تو ملے تھے، جس میں پریذیڈنٹ ہاؤس کی گارڈ ہی چیک کرتے رہے۔ ہاں، البتہ PMA میں انگریزوں کی بنائی ہوئی ایک تربیتی فلم دیکھی تھی، جو شاید دوسری جنگ عظیم کے لئے تیار کی تھی۔ رُک رُک کر جھٹکوں سے چلتی تھی۔ اس میں بتایا گیا کہ حملہ آور کو چاہیئے کہ رات کے حملے میں، ہر مشکوک چیز، جو دشمن کا مورچہ ہو سکتی ہو، اُس پر ایک یا دو گولیاں ضرور چلائیں، تاکہ اگر وہاں دشمن ہو تو جواب دے اور آپ اُس کا صفایا کر سکیں۔ فلم میں تو گولیاں ختم نہیں ہوتیں، میری گولیاں کچھ ہی دیر میں ختم ہو گئیں۔ رات کا وقت تھا، ہر جھاڑی، ہر پتھر کا سایہ دشمن کا مورچہ نظر آتا تھا۔ ہم نعرے لگاتے گئے اور گولیاں چلاتے گئے۔ چیختے سائے، گولیاں چلاتے دشمن کی طرف دوڑ رہے تھے۔ کوئی دشمن تو نہ ملا مگر بیس بیس گولیوں کی تین میگزینیں تھوڑی دیر میں پھونک ڈالیں۔ جب اس حالت کو پہنچا تو جوش ٹھنڈا ہوا۔

حملے کی یہ خصوصیت ہے کہ ایک دفعہ حملہ شروع ہو جائے، تو حوصلہ بلند ہی رہتا ہے، جب تک یلغار ختم نہ ہو جائے۔ ایک وحشی سا جوش دماغ کو اپنے قابو میں کر لیتا ہے۔ دل پورے جسم میں دھڑکتا ہے اور دماغ شدت کی تیزی سے کام کرنے لگتا ہے۔ انسان اپنی کارکردگی کے عروج کو پہنچ جاتا ہے۔ پھر اس کے بعد سخت تھکان ہوتی ہے اور نیند کا غلبہ طاری ہو جاتا ہے۔

حملے میں تو اب تک دشمن سے ملاقات ہوئی نہیں تھی۔ پھوٹی ہوئی صبح کی لالی میں کیا دیکھتا ہوں کہ میرے ساتھ صرف چار لوگ اور ہیں، اور ہم کٹے ہوئے کھیتوں کے صاف میدان میں ہتھیار سیدھے کئے چلے جا رہے ہیں۔ بائیں جانب پوائنٹ ۹۹۴ سے نکلتا ہوا اٹھی زمین کا سلسلہ ہمارے ساتھ ساتھ چل رہا ہے۔ باقی سب کہاں گئے، کچھ پتا نہیں۔

اس سے پہلے کہ میں حالات کا جائزہ لیتا اور کچھ فیصلہ کرتا، ہمارے سامنے ایک خاردار تاروں کی باڑ آگئی، جس پر لال رنگ کے ٹکون لٹک رہے تھے۔ اس کے پیچھے ایک گاڑیوں کے چلنے کا راستہ تھا اور راستے کے پار پھر ایسی ہی ایک لال ٹکونوں والی باڑ۔ ہم جلدی سے باڑ ٹاپ کر راستے پر آ گئے۔ یہ باڑ اور ٹکون نشان دہی تھے کہ ہم اب تک بارودی سرنگوں میں چل رہے تھے، اور باڑ کے پیچھے یہ راستہ سرنگوں کے بیچ میں چھوڑا گیا تھا۔ اب یہاں بیٹھ گئے۔ کچھ پریشانی تھی کہ کدھر کو جائیں، مگر حوصلے بہت بلند تھے۔ اگر رات کے اندھیرے میں سے زندہ بچ نکلیں، تو دن کی روشنی خود ہی حوصلہ بڑھا دیتی ہے۔

باقی ساری کمپنی کہاں تھی، کچھ خبر نہیں۔ میرے ساتھ ایک مشین گنر تھا جس کی گن پر ایک گولیوں کا پٹہ جھول رہا تھا، اس کا دوسرا ساتھی بقایا امونیشن کے ساتھ موجود نہ تھا۔ ایک ٹینک شکن راکٹ لانچر والا تھا، لانس نائیک قادر، مجھے اُس کا نام نہیں بھولا، بہت دلیر سپاہی تھا۔ اس کے لانچر میں ایک ہی گولا تھا، اور اُس کا بھی دوسرا ساتھی، جس کے پاس بقایا گولے تھے، غائب تھا۔ ایک میراوائز لیس آپریٹر تھا، جس کا رابطہ شروع سے ہی کسی کے ساتھ نہ تھا۔ اور ایک میرا قاصد (runner)، جو ہر کمانڈر کے ساتھ ہوتا ہے۔ جلدی جلدی مشین گن کے پٹے سے گولیاں نکال کر اپنی رائفل کی میگزین میں بھریں، اتنے میں ٹینکوں کی آواز آنے لگی۔

دونوں طرف بارودی سرنگیں تھیں اور راستے پر دھنی جانب سے دشمن کے ٹینک آرہے تھے۔ بائیں جانب راستہ دشمن کی پہاڑی سلسلے والی پوزیشن کو جاتا تھا۔ کچھ سمجھ میں نہ آیا کدھر کو جائیں۔ چارونا چار سب دوڑ کر واپس بارودی سرنگوں میں گھس گئے۔ ایک ٹکڑا سوکھے باجرے کے کھیت کا، چھوٹے سے کمرے جتنا، ابھی کٹا نہیں تھا۔ اُس میں چھپ گئے۔ شاید راستے سے بیس پچیس گز ہی دور ہوگا۔ کوئی خاص چھپاؤ تو تھا نہیں، اگر کوئی ادھر دیکھتا تو ہم نظر آ جاتے۔ تھوڑی ہی دیر میں دشمن کے تین ٹینکوں کی قطار راستے پر ہمارے سامنے سے گزری۔ تینوں کا کپولا (capola) کھلا ہوا تھا، ٹینک کمانڈر باہر دیکھ رہے تھے۔ اتنے میں کیا دیکھتا ہوں کہ قادر نے اپنا راکٹ لانچر اُن پر تانا ہوا ہے، اور فائر کرنے کی تیاری میں ہے۔ میں نے آہستہ سے کہا، "کیا کر رہے ہو؟" کہنے لگا، "اُکوئی راکٹ ہے، سر، مارن دیو، جان نہ دیاں۔" میں نے اُسے گھورا، "خبردار، کیا سب کو مرواؤ گے۔" اُس کی آنکھوں میں بہت چمک تھی۔ زیادہ دن جی نہ سکا اور گولیوں سے چھلنی جسم اگلے حملے میں دشمن کے مورچوں کے قریب سے ملا۔

دوسرا سفر آغا جنوں

ٹینک چلے گئے۔ ہم وہیں دم سادھے بیٹھے رہے۔ پھر بارودی سرنگوں کے بیچ واپس چل پڑے۔ اور کوئی راستہ نہ تھا۔ سوچا کہ جا کر دیکھیں کہ بقایا کمپنی نے کہاں دفاعی پوزیشن اختیار کی ہے۔ یقیناً ہم اُن سے جدا ہو کر آگے نکل گئے تھے۔ کافی پیچھے آ کر ہمیں اپنی کمپنی ملی جو دفاعی پوزیشن میں جا چکی تھی، اور کمپنی کے صوبیدار سلطان صاحب نے اسے سنبھالا ہوا تھا۔ کمپنی کمانڈر حاضر نہ تھے۔ ڈھونڈنے پر کمپنی سے کچھ پیچھے نالے میں سوئے ہوئے پائے گئے۔ گھبرائے ہوئے تھے، کہنے لگے اُوپر سنا پُر (sniper) کا فائر آتا ہے۔ کچھ دیر میں، حوصلہ دلانے پر سنبھل گئے۔ میں کمپنی کی پوزیشنوں کو ٹھیک کرتا رہا۔ دن یوں ہی گزر گیا۔

براوو کمپنی، جو ہمارے دہنی طرف تھی، اُس میں میرے ایک نہایت پیارے ساتھی لیفٹیننٹ کیزاد سپار یوالا (بعد میں میجر جنرل بنے) سر پر گولی لگنے سے شدید زخمی ہو چکے تھے۔ کئی گھنٹوں کے آپریشن کے بعد جان بچی۔ جب یہ ایمرولینس کے انتظار میں پڑے تھے، سر سے خون بہہ رہا تھا، تو کسی نے پوچھا، پانی پیو گئے۔ کہنے لگے، "نہیں، ایک سگریٹ پلا دو"۔ پھر کانپتے ہاتھوں سے لمبے لمبے کش کھینچتے رہے۔ انھوں نے تمام ملازمت کے دوران میرا چھوٹے بھائیوں کی طرح خیال رکھا۔ پارسی تھے، لیکن ہمارے ساتھ روزے رکھتے۔ کہتے تھے تم لوگ بھوکے ہو، میں کیسے کھاؤں۔ بہت سی باتیں اصول کی ان سے سیکھیں۔ اپنی سپاہ کی پرواہ بھی، اپنی حدود کی حفاظت بھی۔ کبھی کچھ اچھا کرنے کو کہتے نہیں تھے، کر کے دیکھاتے تھے۔ آج بھی مجھے ان کی دوستی پر ناز ہے۔ شاید وہ جانتے نہیں۔

رات کو ہماری پوزیشن سے بقایا دو کمپنیوں کا حملہ پہاڑی ٹیلے پوائنٹ ۹۹۴ پر کیا گیا۔ ہم اُن کی ترتیب گاہ کی حفاظت لگائے بیٹھے رہے، لیکن درست ارتباط نہ ہونے کی وجہ سے ہمارا اُن سے ملاپ نہ ہو سکا۔ یا ہم نے ہی غلط جگہ حفاظتی دستے لگائے، یا وہ کسی اور جگہ ترتیب گاہ بنا گئے۔ پوائنٹ ۹۹۴ سے توپ خانے اور مشین گنوں کی آوازیں آرہی تھیں۔ پھر نعرہ تکبیر ہوا میں گونج اٹھا، اللہ اکبر، اللہ اکبر۔ سب مل کے اللہ کو یوں پکار رہے تھے جیسے کھلے سمندر میں ڈوبتی کشتی میں سوار ہوں۔ ہم سب کی زبانوں سے بھی یہی آواز اٹھی، مگر دھیمی سی۔ کافی دیر چھوٹے ہتھیاروں کا فائر سنائی دیتا رہا، جو آہستہ آہستہ بند ہو گیا۔ پھر ہر طرف خاموشی چھا گئی۔ تھوڑی تھوڑی دیر بعد کسی مشین گن کی آواز سنائے کو توڑ دیتی، پھر ایک پُپ۔ پھر کہیں سے ایک مشین گن چیختی۔ پھر خاموشی۔ کافی دیر یہی سلسلہ جاری رہا۔ پھر اچانک توپ خانے کا فائر شدت سے شروع ہو گیا، اور پھر ایسے لگا کہ تمام ہتھیار ہی کھل گئے ہوں۔ کافی دیر شدید فائر کی آوازیں آتی رہیں، پھر سب پُپ ہو گیا، ہر طرف سناٹا چھا گیا۔ ہم اندھیروں میں گھورتے رہے۔ وائرلیس پر نہ ہی ہمارا اپنے ہیڈ کوارٹر سے کوئی رابطہ تھا اور نہ ہی حملہ آور سپاہ سے، اور کچھ خبر نہ تھی کہ کیا ہوا۔ یہ ہوا کی لہروں پر بنا ہوا تعلق ٹوٹ جانے پر شدید احساس تنہائی تھا۔

زمیں میں پاؤں دھنسنے ہیں، ہوا میں ہاتھ بلند *

جب کافی رات گزر گئی تو کمپنی کمانڈر صاحب کمپنی کو ایک جگہ جمع کر کے، مجھے اُن کے پاس چھوڑ کر، یہ کہہ کر چلے گئے، کہ میں بٹالین ہیڈ کوارٹر سے پتا کر کے آتا ہوں کہ کیا صورت حال ہے، اور اب ہمیں کیا کرنا ہے۔ بہت دیر بعد واپس آئے اور بتایا کہ ہمارا حملہ کامیاب تو ہو گیا تھا، اور دشمن سے شدید لڑائی کے بعد پوائنٹ ۹۹۴ پر قبضہ بھی کر لیا گیا، لیکن تھوڑی دیر بعد دشمن کا ایک بڑا جوابی حملہ آیا اور ہمارے کافی ساتھی شہید ہو گئے۔ اب دشمن کا جوابی حملہ ہماری سمت بڑھ رہا ہے، اور ہم نے کچھ پیچھے جا کر ایک نئی دفاعی پوزیشن اختیار کرنی ہے۔ بہت جلدی میں تھے۔ کمپنی کو لے کر ہم منہ لٹکائے پیچھے کی جانب چل پڑے۔ کچھ دیر چلنے کے بعد کمپنی کمانڈر نے کہا کہ یہاں کمپنی کو لگا دو۔ اور خود جا کر دشمن کے ایک پرانے مورچے میں سو گئے۔ ہم بقایا رات کمپنی کی نئی پوزیشن تیار کرتے رہے۔

صبح صادق کے وقت میں کیا دیکھتا ہوں کہ ایک جیپ دشمن کی جانب سے چلی آرہی ہے۔ قریب آئے تو دیکھا کہ ہماری پلٹن کے میجر اعجاز امجد (میجر جنرل بنے) گاڑی چلا رہے ہیں اور اُن کے ساتھ کمانڈنگ افسر کرنل احسان الحق بیٹھے ہیں۔ میجر اعجاز نے مجھ سے پوچھا کہ یہاں کیا کر رہے ہو؟ میں نے بتایا تو کہا، "کمپنی کمانڈر کہاں ہے؟ بلا کہ لاؤ"۔ جب کپتان صاحب آئے تو اُن کے پاس کمپنی کو پیچھے لانے کا کوئی جواز نہ تھا۔ اُنھوں نے کسی بھی بات کا کوئی جواب نہ دیا، پُپ سادھ کر کھڑے گالیاں سنتے رہے۔ کرنل صاحب اور میجر اعجاز بہت غصے میں تھے۔ فوری طور پر اُن کو کمپنی کی کمانڈ سے ہٹا دیا، اور مجھے کمپنی کی کمانڈ سونپ دی۔

ایک ندامت سے بھرا سیکنڈ لیفٹیننٹ کمپنی کو لے کر واپس اگلے مورچوں کی طرف چل پڑا۔ اپنے کمپنی کمانڈر کی صلاحیت تو صبح ہی مجھ پر عیاں ہو چکی تھی۔ میں نے پھر اُن کا اعتبار کیوں کیا؟ "پیچھے جانا ہے"۔ کتنی جلدی اُس بات کا یقین کر لیا جس میں میرا تحفظ تھا! خود کو ملامت کرتا، زمین کو تکتا، کمپنی کو لئے چلتا رہا۔

میری کمپنی کو پوائنٹ ۹۹۴ کے مد مقابل بڑے راستے کے دائیں جانب جگہ دی گئی۔ سارا دن دشمن سے، جو ہم سے خاصی اُونچی جگہ پر تھا، فائر کا تبادلہ ہوتا رہا۔ رات پھر ایک پلٹن نے پوائنٹ ۹۹۴ پر حملہ کیا، لیکن کامیابی حاصل نہ ہو سکی۔ یہ چھمب کی اصلی دفاعی لائن تھی اور دشمن پوری شدت سے اس کا دفاع کر رہا تھا۔ خبر ملی کہ دشمن کی کچھ ایسی تیاریاں دیکھنے میں آئی ہیں جن سے لگتا ہے کہ رات کسی وقت اُس کا حملہ ہوگا۔ ہم مورچوں میں ڈٹ گئے۔ مورچے کیا تھے، بس کچھ فاصلوں پر کمر کرتک گڑھے کھودے ہوئے تھے۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

موت کے انتظار میں سب اپنی اپنی قبروں میں کھڑے ہو گئے۔ جب حملے میں گئے تھے تو یہ کیفیت نہ تھی۔ حملے میں جوش تھا، ولولہ تھا۔ وقت ہم نے چنا تھا، اور دشمن بھی۔ پھر ہم سب ساتھ تھے اور قربت نے ہمارے حوصلے بلند کر دیئے تھے، ذہنوں میں جارحانہ لپک تھی۔ ہم حرکت میں تھے، ہر قدم ہمارا فیصلہ تھا۔ جوجی میں آتا کرتے۔ ہم آزاد تھے۔ غالب تھے۔ اب اپنے اپنے مورچوں کی تنہائی میں مقید۔ سب سے کٹے ہوئے۔ شجر تنہا کی طرح، "زمین میں پاؤں دھسنے ہیں ہوا میں ہاتھ بلند"۔ سر پہ لٹکتی تلوار کے گرنے کے منتظر۔ سہمے ہوئے۔

کیا پتا تھا کہ چالیس سال اور گزرنے کے بعد پوری قوم اس ہی مقام پر پہنچ جائے گی۔ اپنے اپنے خوف لے، اپنے اپنے مورچوں میں بند۔ تنہا۔ ماؤف دماغ، منجمد جسم۔ موت کے منتظر۔ صرف اپنی سوچیں گے۔ پھر کراچی میں بہتا خون راولپنڈی کو نہیں چھوئے گا۔ جب جھوٹے دلا سے دیتا، جابر حکمران بھی دشمن کا ہی ساتھی ہوگا اور ہم اُس کو پہچان کر بھی چُپ رہیں گے۔ جب ہمیں غلامی راس آ جائے گی۔ اور صرف بھوک ہی ہمارا خدا ہوگی اور ہم خود کو بے بس سمجھیں گے۔ جب مسلمانوں کے قتل عام پر خراج ملے گا، مرنے پر شہادت کے فتوے دیئے جائیں گے۔ اور ہم چپ رہیں گے۔ پھر ہم اپنے بتوں کو پکاریں گے، اُن کے آگے دعا کے لئے ہاتھ اٹھائیں گے، اور اپنے بچے اُن کے آستانوں پر بھینٹ چڑھا دیں گے۔

اب رات ہو چکی ہے۔ سب ساتھی نظروں سے اوجھل ہیں۔ سب اپنے اپنے مورچے میں میری طرح اکیلے۔ کس پر کیا بیت رہی ہے، کسی کو خبر نہیں۔ اندھیروں اور خاموشی نے فاصلے اور بڑھا دیئے ہیں۔ پتا نہیں آفت کب آئے گی، دشمن کا حملہ کب شروع ہوگا؟ میری بائیں طرف مشین گن کا مورچہ تھا۔ اُسے ایک کنکڑ مارا، اُس نے کنکڑ سے جواب دیا، "جاگ رہا ہوں"۔ آواز نہیں دینی۔ شاید دشمن قریب ہی آچکا ہو۔ آج اس سنسان رات میں کان کتنے تیز ہیں۔ سنو! شاید یہ قدموں کی آواز ہے! کیا دشمن خاموش حملہ کر رہا ہے؟ ایسا نہ ہو کہ وہ آہٹ بھی نہ کرے، اور ہمیں پتا تب چلے جب اُس کے ہاتھ ہمارے گلوں تک آپہنچیں۔ کب سے پھٹی ہوئی آنکھوں سے اندھیروں میں گھور رہا ہوں۔ یہ جھاڑی نہیں ہے، ابھی بلی تھی، دشمن ہے! میری طرف ریگ رہا ہے! میری انگلی ٹرگر پر مڑ گئی۔ گردن سخت ہو گئی۔ ٹھہرو! فائر مت کرو۔ تمہارا فائر سب کے لئے فائر کھولنے کا اشارہ ہوگا۔ اگر وقت سے پہلے فائر کھول دیا تو ہماری پوزیشن کا اُس کو پتا چل جائے گا۔ حوصلہ کرو۔

کتنی خاموشی ہے، کوئی آواز کیوں نہیں آتی؟ حملہ کیوں نہیں کرتے؟ کب تک میں تمہارا انتظار کروں؟ کیا تم سو رہے ہو؟ کیا صبح کے دندھلکے میں آؤ گے؟ کچھ تو بولو! کتنی سردی ہے۔ پاؤں سوچکے ہیں، سویاں چبھ رہی ہیں۔ نیند کے جھونکے سے ہر بڑا کر اٹھا۔ انگلی ٹرگر پر کس لی۔ نہیں، کچھ نہیں ہے۔ صرف انتظار۔ ابھی تو صبح ہونے میں بہت دیر ہے۔ اس سے تو بہتر تھا کہ ہم مورچوں سے نکل کر خود ہی تم پر حملہ کر دیتے۔ موت تو آتی ہی ہے۔ انتظار تو ختم ہو۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

ساری رات یوں ہی گزر گئی۔ دشمن نہ آیا۔ جب صبح چمک گئی اور ہمارے ذہنوں کا اعصابی تناؤ ختم ہو گیا، تو ایسا نیند کا غلبہ ہوا کہ سب سو گئے۔ کافی دیر بعد مجھے جھنجھوڑ کر کسی نے جگایا، اور کہا کہ کرنل صاحب نے بلایا ہے۔ پہنچا تو پتا چلا کہ رات دشمن ہمیں حملے کا جھانسا دے کر، اپنی پوزیشن چھوڑ کر پیچھے نکل گیا۔ شاید اب چھمب میں اُس کی دفاعی پوزیشن ہو۔ ہم نے فوراً چھمب کی طرف پیش قدمی کرنی ہے۔ میری کمپنی پیش قدمی میں سب سے اگلی کمپنی ہوگی۔ میں بہت دلو لے کے ساتھ اپنی کمپنی میں واپس لوٹا، اور پچھلی شرمندگی مٹانے کو، چابکدستی سے جارحانہ انداز میں پیش قدمی شروع کر دی، پھر روک دیا گیا۔ پیچھے ساری تنظیم مکمل نہیں ہوئی تھی۔ کہا سب کو آنے دو، چلنے کا اشارہ دیں گے۔

میں ہوں اور اک محشر بے خواب آدھی رات کو*

یہ کون رو رہا ہے؟ کس کی روتی ہوئی چیخیں اندھیری رات کو یوں چیر رہی ہیں؟ چپ کیوں نہیں ہوتا؟ ہر تھوڑی دیر بعد ایک تکلیف دہ لمبی سی گیدڑ جیسی رونے کی انسانی آواز اُٹھتی، جس میں کہیں کہیں الفاظ بھی سنائی دیتے مگر سمجھ میں نہ آتے۔ آہستہ آہستہ یہ سب کے اعصابوں پر طاری ہونے لگی۔ سب ہی اس لگاتار چیخ و پکار سے پریشان تھے۔ سپاہ کے حوصلے ٹوٹ رہے تھے۔ خدا کے واسطے چپ ہو جاؤ۔ بس کرو۔

ہم شام کو چھمب میں داخل ہوئے تھے۔ فاصلہ کچھ زیادہ نہ تھا، اور نہ ہی راستے میں کوئی دشمن ملا۔ جب ہم پہنچے تو چھوٹی سی بستی خالی پڑی تھی۔ اس کے پیچھے تو دریا تھا، جس کا پل دشمن نے جاتے ہوئے دوسرے کنارے سے اڑا دیا تھا۔ بہت سی فوجی گاڑیاں درختوں کے نیچے یوں ہی کھڑی چھوڑ گیا۔ دکانیں کھلی ہوئی تھیں، سامان ویسے ہی پڑا تھا۔ کچھ گھروں میں ابھی چولہے بھی ٹھنڈے نہیں ہوئے تھے، جیسے فوجی کمانڈر نے آخری وقت تک اپنوں کو کچھ نہ بتایا ہو، اور پھر اچانک رات کے اندھیرے میں وہاں سے نکل گیا ہو۔

ہم نے اُس رات تو دریا کے کنارے اپنے مورچے تیار کرنے شروع کر دیئے۔ وقفے وقفے سے تو پچنانے کی شدید شیلنگ تھوڑی سی دیر کو ہوتی، پھر بند ہو جاتی۔ گولے سروں کے اوپر ہوا میں پھٹ رہے تھے۔ اب تک گولوں کی آواز پہچاننے کی مہارت ہو چکی تھی۔ ہوا میں سے گولے گزرنے کی آواز سے پتا چل جاتا کہ میرے اوپر گریں گے یا پیچھے نکل جائیں گے۔ ایک دفعہ آواز سن کر میں تیزی سے ایک آدھے کھودے مورچے میں کودا، تو ایک سپاہی پرگرا۔ دل میں برا محسوس کیا کہ اُس کی کمر پر میرے بوتلوں سے چوٹ لگی، مگر اُس کے اوپر ہی لیٹ گیا۔ پھر فوراً ہی کسی اور نے بھی مورچے میں چھلانگ لگائی اور اپنے بوٹ میری کمر میں کھبو دیئے۔ وہ بھی میرے اوپر لیٹ گیا۔ پہلی بار کسی کا بوٹ لگا تھا اور کتنا اچھا لگا کہ مجھ پر ایک انسان کی آڑ آگئی۔ اب گولے چاہے ہوا میں پھٹتے رہیں، اُس کے زخم میرے تو نہ ہوں گے۔ آخری سیڑھی پر خود غرضی ہی غالب تھی۔

پھر روتی ہوئی چیخوں کی آواز سنائی دی۔ کسی کو پتا نہیں تھا کہ آواز کہاں سے آتی ہے۔ میں اس کے تعاقب میں چل پڑا۔ تھوڑا ہی پیچھے گیا تھا کہ دیکھا ایک نائب صوبیدار صاحب زخمی حالت میں پڑے ہیں اور عجیب انداز میں چیخ رہے ہیں۔ کچھ لوگ انہیں اٹھا کر پیچھے لے گئے تھے اور پانی کی ایک خالی ہودی میں ایسبولینس کے انتظار میں، ابتدائی طبی امداد دے کر، لٹا دیا تھا۔ ہودی کی دیواروں میں اُس کی چیخیں اور

بھی گونج رہی تھیں۔ یہاں کئی اور زخمی خاموش پڑے تھے۔ سب پریشان تھے۔ جب دیکھا تو وہ اتنا شدید زخمی بھی نہ تھا۔ میں نے پہلے تو اُسے دلا سہ دیا کہ صبر کرو ایمبولینس آتی ہے، مگر وہ میری سنتا ہی کہاں تھا۔ کیا آواز تھی جس نے دماغ میں سوراخ کر دیا۔ پھر میں نے اُس کے سر پر بندوق رکھ کر کہا کہ یا تو چُپ ہو جاؤ یا میں تمہیں ہمیشہ کے لئے چُپ کر دوں گا۔ اور شاید میں ایسا کر ہی دیتا۔ بس اُس کے بعد اُس کی ایک آواز نہ نکلی۔ وہ صرف میدانِ جنگ سے جلدی نکلنا چاہتا تھا، دنیا سے نہیں۔

صبح دشمن کی ایک افسرزمیس کی گاڑی وہیں کھڑی ملی۔ تلاشی لی تو کھانے پینے کا سامان نکلا، اور شراب کی بہت سی بوتلیں۔ سامان تو سب سپاہیوں میں بانٹ دیا۔ سوچا رَم کی بوتلیں ہیں، جراثیم کش ہوں گی۔ بس کپڑے اتارے اور نیکر پہن کر خوب اپنے اوپر انڈیلیں اور اس میں جی بھر کر نہایا۔ پھر سردیوں کی دھوپ میں لیٹ کر مزے سے سو گیا۔ سیکنڈ لفٹینی کی نیند بھی کتنی میٹھی ہوتی تھی۔

دن بھر تھوڑے تھوڑے وقفے سے دشمن کے توپ خانے اور جہازوں کی گولہ باری ہوتی رہی۔ پہلے کمپنی کمانڈر واپس آئے تو ملے بغیر بیالین کمانڈر کے احکامات سننے چلے گئے۔ تو دریا کے پار حملے کے احکامات ملے۔ واپسی پر جیپ روک کر سروٹوں کی لمبی لمبی گھاس میں رفع حاجت کے لئے گئے اور ران میں گولی لگ گئی۔ ہسپتال روانہ ہوئے۔ مجھ تک کوئی احکامات نہ پہنچے۔ صرف اتنا پتا چلا کہ رات یہاں سے حملے کے لئے نکلتا ہے۔

اندھیرا ہونے پر اپنے مورچے دوسری سپاہ کے حوالے کر کے ساری پلٹن قطاروں میں چلنا شروع ہو گئی۔ ساری رات چلتے رہے۔ میں چلتے چلتے سو جاتا، پھر چونک کر اُٹھتا، پھر تھوڑی دیر میں اونگھ جاتا۔ صبح سے کچھ پہلے ایک مقام پر پہنچ کر ہم رُک گئے۔ میں زمین پر لیٹا اور لیٹتے ہی سو گیا۔ جب پو پھوٹی تو دشمن کے دیدبان نے ہمیں دیکھ لیا اور توپ خانے کی شیلنگ شروع ہو گئی۔ ہم دن کی روشنی میں کھلے میدان میں پکڑے گئے تھے اور کافی جانی نقصان اٹھانا پڑا۔ اُن کا توپ خانہ بہت مضبوط تھا، اور آج بھی ہے۔ میں اتنا تھک چکا تھا کہ اس تمام گولہ باری میں چپ پڑا سو یا رہا۔ پھر کسی نے مجھے جھجھوڑ کر اُٹھایا، کہنے لگا۔ "تم تو ایسے سوئے، ہم سمجھے اس گولہ باری میں مر چکے ہو۔"

ایک پلٹن کا حملہ دریا کے پار جا چکا تھا۔ ہمیں دوسرے مرحلے میں جانا تھا۔ پہلے مرحلے کی ناکامی کی وجہ سے یہ حملہ ملتوی کر دیا گیا۔ اس ہی افراتفری میں وقت پر فیصلہ نہ کرنے کی وجہ سے سورج نکلنے پر ہمیں دشمن نے کھلے میدان میں پایا اور نشانہ بنایا۔ قریب ہی ایک گاؤں تھا۔ ساری پلٹن اُس میں چُھپ گئی۔ یہاں ہم نے ایک دن اور رات آرام کیا۔ دوسمبر کو جب پنڈی سے چلے تھے تو کہیں نو دسمبر کو جا کر پہلی بار آرام کرنے کا موقع ملا تھا۔ یہاں پر تو ی کے پار ایک بڑے حملے کی تیاریاں کی گئیں، جس میں ٹینکوں کی دوڑ جھنوں کو بھی حصہ لینا تھا۔ دس اور گیارہ دسمبر کی پورے چاند کی چمکتی رات کو سروٹوں سے چُھپے ہوئے تو ی (Tawi) دریا کے پار حملہ شروع ہوا۔

یہ وقت زنجیر روز و شب کی کہیں سے ٹوٹی ہوئی کڑی ہے *

ہمارے ڈویژن کمانڈر، میجر جنرل افتخار خان جنجوعہ کا ہیلی کاپٹر میدانِ جنگ میں کریش کر چکا تھا اور وہ شدید زخمی حالت میں ہسپتال داخل تھے۔ ان کا تعلق بھی دس بلوچ سے تھا، اور اُن کے چھوٹے بھائی میجر اعجاز امجد اُس وقت ہماری ہی پلٹن میں تھے۔ جنرل جنجوعہ کی انتھک کاوشوں سے ہماری فوج نے دریائے توی تک کا علاقہ قبضے میں لیا تھا۔ دریا کے پار حملہ بھی اُن ہی کا منصوبہ تھا۔ جتنا جرات مندانہ یہ منصوبہ تھا، اب اُتنا دلیر کمانڈر موجود نہ تھا جو اسے پایہ تکمیل تک پہنچاتا۔

کچھ سینئر کمانڈر اُن سے تنگ تھے، کیوں کہ یہ ہر جگہ موجود پائے جاتے، اور کئی ایسے تھے جن کو انھوں نے لڑائی سے منہ چھپاتے پکڑا۔ اگر زندہ رہتے تو اُن سینئر افسران کا کورٹ مارشل ضرور کر دیتے۔ جنرل صاحب ہر حملے کی جگہ پہنچے ہوتے، لوگوں کے حوصلے بڑھاتے اور ہر مشکل گھڑی میں خود آگے آ کر نگہداشت کرتے، مثال قائم کرتے۔ اللہ نے انھیں شہادت کا درجہ نصیب کیا۔ بسترِ مرگ پر لیٹے، آخر وقت تک یہی کہتے رہے کہ توی دریا کے پار حملے میں کمزوری مت دکھانا، ڈٹ کر حملہ کرنا۔

منصوبہ یہ تھا کہ ایک انفنٹری (پیادہ فوج) بریگیڈ، دو یونٹوں کے ساتھ، دریا کے پار حملہ کر کے ایک مخصوص علاقے پر قبضہ کرے گا، جسے برج ہیڈ (bridge head) کہتے ہیں۔ رات دو بجے تک یہ حملہ ختم ہونا تھا۔ پھر آرمد بریگیڈ (armoured brigade) نے دو ٹینک رجمنٹوں سمیت اس میں داخل ہو کر، صبح کی پہلی روشنی پر، برج ہیڈ سے نکل کر آگے کے علاقوں پر حملہ شروع کرنا تھا۔ انفنٹری نے تب تک اس کا دفاع کرنا تھا۔ اس کے لئے دونوں انفنٹری یونٹوں کو ایک ایک بھاری ہتھیاروں کی کمپنی بھی دی گئی اور توپ خانے کی فائر کی امداد بھی۔ ایک انجینئر کمپنی بھی امداد میں تھی۔

یہ تو تھا منصوبہ۔ ہوا یوں کہ حملے کے لئے دو مختلف بریگیڈوں سے ایک ایک انفنٹری کی یونٹوں کا تعین کیا گیا، جن میں کوئی ہم آہنگی نہیں تھی۔ نہ ہی انھوں نے اکٹھے تربیت کی تھی اور نہ ہی ایک دوسرے سے واقف تھے۔ مختلف چھاؤنیوں سے آئے تھے۔ پھر انہیں آرمد بریگیڈ کے زیرِ کمان کر دیا گیا۔ کہا تم سنبھالو۔ آرمد بریگیڈ کئی میل پیچھے ایک رکھ میں چھپا ہوا تھا۔ وہ وہیں رہا۔ اُس کا ہیڈ کوارٹر بھی اس ساری لڑائی کے دوران آگے نہ آیا۔ آرمد بریگیڈ نے، اپنی جان چھڑانے کو، ایک ایک پلٹن کو ایک ایک ٹینک یونٹ کے زیرِ کمانڈ کر دیا۔ حکم ہوا، "اب حملہ کرو۔"

دوسرا سفر آغاز ہوا

لڑائی کا یہ انوکھا انداز تھا، جو کتابوں میں کہیں نہیں ملتا۔ لازم تھا کہ دونوں پلٹنیں (infantry battalions) ایک انفنٹری بریگیڈ کے زیرِ کمانڈ ہوتیں، جو اس برج ہیڈ کو بنانے کا ذمہ دار ہوتا۔ ان کے ساتھ برج ہیڈ میں داخل ہوتا، اور اس پورے آپریشن کی کمانڈ ڈویژن ہیڈ کوارٹر خود کرتا۔ ڈویژن ہیڈ کوارٹر اپنی زیرِ نگرانی ٹینکوں اور گاڑیوں کو پارلگانے کی تنظیم تشکیل دیتا۔ یہی جنگ کا طریقہ ہے، اور سب جانتے ہیں، کوئی نئی بات نہیں۔ ڈویژن ہیڈ کوارٹر نے دونوں انفنٹری یونٹوں کو آرٹلری بریگیڈ کے زیرِ کمانڈ کر دیا، اور تمام کارروائی کی ذمہ داری اُسے سونپ دی۔ اگر دو بریگیڈ ہیڈ کوارٹر ہوتے تو ڈویژن ہیڈ کوارٹر کو کمانڈ سنبھالنی پڑتی۔ آرٹلری بریگیڈ نے دونوں یونٹیں ایک ایک ٹینک رجمنٹ میں بانٹ دیں، تاکہ اُس کی ذمہ داری ختم ہو۔ سب اثاثے نچلی سطح تک تقسیم کر دیئے۔ اپنی جان چھڑائی۔ سب نے اپنی اپنی ذمہ داری ماتحت کو دے دی، اور چین پایا۔ سب خاموش تماشائی۔ جنگ کے بعد بھی اس موضوع پر سناٹا ہی رہا۔

اگر کامیابی ہوئی، تو اعزاز لینے کے لئے بالاکمانڈ رکھنا ہو جائے گا۔ کہے گا، "دیکھا میرے ڈویژن کو!"، "دیکھا میرے بریگیڈ کو!" اور اگر ناکامی ہوئی، تو الزام لینے کے لئے ماتحت کی گردن حاضر ہے۔ حملے کا ایک تماشہ بنا دیا۔ کوئی پوچھنے والا جو نہیں تھا۔ نہ ہی مشن (mission) پورا کرنے کی کوئی پرواہ تھی، اور نہ ہی یہ فکر کہ کتنے سپاہی اس کوتاہی کی بھینٹ چڑھیں گے۔ کہا، "خیر ہے، تمغے لگا دیں گے۔ ان کے لئے ترانے گائیں گے، چوک پر نام لکھ دیں گے۔ چھ ممبر کو قبروں پر سلامی دیں گے۔" صرف اپنی بقا لازم سمجھی۔

ایسے حملے خاصے پیچیدہ ہوتے ہیں اور بہت سے اہم پہلوؤں کو منظم و مربوط کرنا پڑتا ہے، خاصی نگہداشت کی ضرورت ہوتی ہے۔ پہلے مرحلے میں نہ تو دونوں پیادہ فوج کی یونٹوں میں کوئی ربط تھا، نہ ہی حملے کی کارروائی کو کنٹرول کرنے والا کوئی ہیڈ کوارٹر دریا کے کنارے زمین پر موجود تھا۔ دن کو کسی وقت تمام حملہ آور سیخوں کے نمائندے حملے کی جگہ کا جائزہ لینے اور دشمن کی پوزیشنوں کا تعین کرنے گئے۔ رات کو پھر یہی لوگ اُن جگہوں کو قریب سے دیکھنے گئے۔ اس بات کا فیصلہ کیا گیا کہ دریا کہاں سے پار کیا جائے گا، ترتیب گاہ کہاں ہوگی، بڑے ہتھیار، جن میں جیپوں پر لگے ٹینک شکن ہتھیار اور بھاری مشین گنیں تھیں، کہاں لگائے جائیں گے اور ان کو دریا کے پار کس راستے سے اور کیسے لایا جائے گا، مارٹریں کہاں نصب کی جائیں گی، فائر کی امداد کیسے اور کہاں سے دی جائے گی، وغیرہ وغیرہ۔

اندھیرا ہونے پر ہماری پلٹن چھپی ہوئی جمع گاہ سے نکل کر حملے کی ترتیب گاہ کی طرف روانہ ہو گئی۔ راستے میں چک پنڈت سے گزرے، پورا گاؤں جل رہا تھا۔ ایک لمبی قطار آگ کے سامنے سے دیر تک گزرتی رہی، اور ہمیں دشمن کے توپ خانے نے آلیا۔ دشمن نے ہمارے پورے راستے کو، جو نقشوں پر دیا ہوا تھا، اپنی توپوں کی زد میں لے لیا اور خوب گولے برسائے۔ حملے سے پہلے ہی خاصہ نقصان اٹھایا۔

حملے میں ہماری پلٹن بائیں طرف تھی۔ پلٹن کی ترتیب کچھ یوں تھی۔ آگے اور بائیں براؤ کمپنی تھی جو میجر اعجاز امجد کمانڈ کر رہے تھے۔ وہ ہمارے لئے ایک مثالی لیڈر کی طرح تھے اور اُن کو دیکھ کر ہمارے حوصلے بلند ہو جاتے۔ اُن کی دہنی طرف ڈیلیٹا کمپنی تھی، جو ہمارے سیکنڈ ان کمانڈ میجر بنیاد حسین سید کمانڈ کر رہے تھے (کرنل بنے)، کیوں کہ کمپنی کمانڈر کیپٹن احمد محمود، جن کو پیار سے سپیڈی کہتے تھے، زخمی ہو کر پیچھے جا چکے تھے۔ میجر بنیاد کمانڈو کے نہایت دلیر اور بے باک افسر تھے اور ہمارے لئے بڑے بھائی کی طرح تھے۔ اس کمپنی کا کیوں کہ پوائنٹ ۹۹۴ پر خاصہ نقصان ہو چکا تھا اس لئے اس میں پلٹن کے تمام موچی، کارپینٹر وغیرہ بھی شامل کر لئے گئے تھے، اور سب ہی بڑے حوصلے سے لڑائی کے لئے تیار تھے۔

پیچھے اور بائیں طرف میجر اعظم راجپوت چارلی کمپنی کی کمانڈ کر رہے تھے۔ یہ نو جوان کمپنی کمانڈر بڑے ہر دل عزیز تھے۔ نئی نئی شادی ہوئی تھی اور بہت خوش رہتے تھے۔ ہر وقت ہنستے، مذاق کرتے، لوگوں کا دل بہلاتے، حوصلے بلند کرتے۔ ہم لفٹینوں کے ساتھ بہت محبت کرتے تھے۔ اُن کی کسی چیز کی تعریف کرنے سے ہم کتراتے، کیوں کہ وہ پھر ہمیں مل جاتی۔ ایک دن اُنہوں نے سب لفٹینوں کو اپنے گھر کھانے پر بلایا۔ میں نیا نیا آیا تھا۔ اُن کے پاس ایک بہت اچھا سا ٹیپ ریکارڈر تھا، میں شوق سے سُنتا رہا۔ جب جانے لگا تو اُنہوں نے، میرے لاکھ انکار کے باوجود، بیٹ مین کے ساتھ وہ ٹیپ ریکارڈر اور بہت سی کیسٹ میرے ہمراہ کر دیں۔ دوسرے دن شام کو میں اُن کے گھر جب واپس لوٹا تو کہنے لگے تمہارا ڈسپلن ٹھیک نہیں ہے۔ بغیر اجازت یہ کیوں واپس لائے ہو۔ میں نے کہا سر، میں نے بہت سُن لیا، اب ڈر ہے کہیں سُن کر خراب نہ کر دوں، آپ واپس رکھ لیں۔ کہنے لگے، "سینئر کی چیز واپس نہیں کرتے جب تک وہ خود نہ کہے، اور تب تک بجاتے ہیں، جب تک بجتی ہے۔ فوج کی اچھی باتیں سیکھو"۔ ایسے سینئر فوج سے کھو چکے ہیں۔

ان کی دہنی طرف اور میجر بنیاد کی کمپنی کے پیچھے میری الفا کمپنی تھی۔ کیپٹن غلام خواجہ (برگیڈیئر ریٹائر ہوئے) ایڈجوٹنٹ تھے، جو کمانڈنگ افسر کا شاف افسر ہوتا ہے اور پلٹن کی کارائیوں کا ارتباط کرتا ہے۔ خاموش طبع اور سادی طبیعت کے انسان تھے محنت اور خلوص سے زندگی گزاری۔ لیفٹیننٹ منیر، کمانڈنگ افسر کرنل احسان کے ساتھ انٹیلی جنس افسر تھے۔ مجھ سے کچھ پہلے پلٹن میں آئے تھے، اور نہایت شائستہ طبیعت کے مالک تھے۔ ان کے والد بھی ہماری یونٹ سے تھے، اور لاہور کے کور کمانڈر رہے۔ توئی دریا کے پار حملے میں بس یہی افسر تھے۔ اب تک تیرہ افسروں میں سے یہی سات بچے تھے باقی زخمی ہو کر پیچھے جا چکے تھے۔ جب دریا سے پلٹ کر آئے تو چار ہی رہ گئے۔

ان کے علاوہ ایک کپتان صاحب اور تھے جو بندوبستی کاروائیوں میں پیچھے ہی رہتے تھے۔ اُن کی کاروائیاں اتنی تیز تھیں کہ ہمیں عموماً کھانا نہ ملتا۔ ایسے میں چند محبت کرنے والے شہریوں کی جانب سے جو کھانے کی سوکھی چیزیں آتیں وہ ہمیں کہیں نہ کہیں سے مل جاتیں۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

جو فوجی گاڑیاں محاذ پر جا رہی ہوتیں اُن میں یہ سامان بوریوں میں بند کر کے لاد دیتے۔ پھر یہ گاڑیاں مختلف راستوں پر بوریاں پھینک دیتیں، جو سڑکوں کے کنارے کھلی رکھی نظر آتیں۔ جو گزرتا ان میں سے کچھ لے لیتا۔ سب سے پسندیدہ گڑ چنا تھا، اور یہ ہوتا بھی خاصی مقدار میں تھا۔ ہر جگہ مل جاتا، اسے جیبوں میں بھر لیتے اور چلتے چلتے کھاتے رہتے۔ ان میں کبھی محبت بھرے خط بھی ملتے جن سے گڑ کی مٹھاس اور بڑھ جاتی۔ میں نے ایک لڑکی کا خط بہت دنوں تک اپنے پاس یادگار کے طور پر رکھا، پھر نہ جانے کہاں گیا۔ لکھا تھا، "میرے پیارے فوجی بھائی،۔۔۔۔۔"۔۔۔۔۔ تو م کے لئے جان دینے کا ولولہ عوام کے ان ہی پُر خلوص جذبات اور محبتوں سے پیدا ہوتا ہے۔

پلٹن کے تمام بھاری ہتھیار بھی بھاری ہتھیاروں والی کمپنی کے کمانڈر کے سپرد کر دیئے گئے اور امونیشن کی گاڑیاں بھی۔ سو چاہب یہ اپنی گاڑیاں دریا کے پار لائیں گے تو ہماری گاڑیاں بھی ساتھ آ جائیں گی۔ انھوں نے بھاری ہتھیار دریا کے ساتھ ہمارے کنارے پر لگا کر حملہ کو فاری امداد دینی تھی۔ پھر کامیابی کے اشارے پر آگے آ کر برج ہیڈ کے دفاع میں شامل ہونا تھا۔ یہ سب اس لائٹ اینٹی ٹینک کمپنی (LAT) کے کمپنی کمانڈر صاحب کے ذمے تھا۔ گاڑیوں کو دریا پار کرانے کی جگہ بھی ان ہی کمپنی کمانڈر کے فیصلے پر چنی گئی تھی۔

انھوں نے، حملے کی امداد میں، ہتھیار ایسے لگائے کہ حملہ آور سپاہ پر ہی فائر کرتے رہے۔ جب حملے کے دوران بھاری ریکوئیلیس رائفل (106 mm recoilless rifle) کے گولے ہمارے درمیان گرتے تو میں سوچتا کہ یہ گولے کہاں سے آرہے ہیں، کہ جب زمین پر لگ کر پھٹتے ہیں تو شعلہ صرف آگے کی ہی جانب جاتا ہے۔ مجھے وہیں احساس ہو گیا تھا کہ یہ ہمارا فاری مُستقر ہے۔ رات کو گولہ ہوا سے گزرتا بھی نظر آتا ہے۔ نہ جانے اس فاری امداد کی کوئی حدیں بھی مقرر کی تھیں یا نہیں۔ پھر فائر ختم کر کے کمپنی کمانڈر صاحب اپنی کمپنی سمیت وہیں بیٹھے رہے، آگے نہ آئے، کہ کہیں ڈک نہ پہنچے۔ نہ فاری امداد دینے کے وقت اپنے ساتھیوں کی پرواہ کی اور نہ ہی اس کے بعد۔ مگر انہیں کسی نے پوچھا نہیں۔ جھوٹ اور پردہ پوشی کی فضا میں کون کسے پوچھتا۔ حملہ ختم کرنے کے فوراً بعد ہی حملہ آور کو امونیشن پہنچانا لازم ہے، تاکہ دشمن کی جوابی کاروائی سے پہلے اُن کو مل جائے۔ اُن کا زیادہ امونیشن تو حملے میں صرف ہو چکا ہوتا ہے۔ نہ اُن کے ہتھیار ہی پہنچے، نہ ہمارے اور نہ ہی ہمیں امونیشن ملا۔ جو چھوٹے ہتھیار اور امونیشن ہاتھوں میں تھا، بس وہی تھا اور لب پر اللہ کا نام۔

آسمانوں سے جوئے درد رواں *

اُف! دریا کا پانی کس قدر ٹھنڈا ہے، تمھاری محبت کی طرح۔ بدن میں جھڑ جھڑ سی آگئی۔ کیچڑ میں دھنسے بوٹ پانی کے اندر بھی کس قدر بھاری ہیں۔ میں کمر تک پانی میں ڈوب چکا ہوں۔ حملہ آور جوانوں کی لمبی قطار پانی میں اتر کر آہستہ آہستہ بڑھ رہی ہے۔ کس خاموشی سے دریا بہہ رہا ہے۔ اس کا ٹیالہ پانی ہمیں اپنی آغوش میں لینے کو بے قرار ہے۔ تلسمی ملائم لہریں دھیمی مدھرا آواز میں ہمیں لوری سنا رہی ہیں، ہمیشہ کی نیند سلانے کو۔ "آؤ میری آغوش میں سو رہو، سارے غم بھلا کر۔ میں ہی تمھارے دل کو سکون دے سکتی ہوں۔ آؤ، میری گود میں سکھ کی نیند سو جاؤ۔"

چمکتے ہوئے پورے چاند کی روشنی میں وہ یوں جھلملا رہی تھی جیسے وہی روشنیوں کا شہر ہو۔ فریبی! چاند کا نور چرا کر اپنی کالک چھپا رہی ہو۔ چاہتی ہو ہم تمھارے فریب میں کھو جائیں؟ اس ہی میں ڈوب جائیں! ایسا ہرگز نہیں ہوگا۔ ہم تمہیں پار کر لیں گے۔ ہم اس رات کو سر کر لیں گے۔ ہمارا حوصلہ تمھاری کالی گہرائی سے زیادہ بلند ہے۔ اور چاند ---- خاموشی سے سب کچھ دیکھ رہا تھا، سن رہا تھا، منتظر دشمن کے دھڑکتے دل کی آواز بھی اور ہماری تیز چلتی ہوئی سانسیں بھی۔ کتنی ہی بار اُس کی آنکھیں خون کے یہ تماشے دیکھ چکی ہوں گی، روچکی ہوں گی۔ کیا راز تھا آج اُس کی خشک آنکھوں میں، جو سرد چہرہ یوں منجمد تھا؟ تم طرف داری نہیں کرتے؟ میرے نہیں ہو؟ آج بھی؟ کچھ تو بولو! اور ستارو، آج تم اتنی دور کیوں ہو؟ ساتھ نہیں چلو گے؟ کیا ہم اکیلے ہی خون کی ہولی کھیلیں گے؟

دشمن کے مورچوں پر ہمارے توپ خانے کے لگاتار گولوں کا جلتا، بجھتا، گرجتا نور آسمان پر پھیلا ہوا تھا، جیسے قیامت کی گھڑی ہو۔ اب اُس کی بھی تو پیٹ گرج رہی تھیں، مشین گنیں کھل چکی تھیں۔ رات گونج اٹھی تھی۔ چاند آسمان کے کنارے لٹکا ہوا تھا۔ اُداس۔ تنہا۔ ہم پانی اور کیچڑ میں پاؤں گھسیٹ گھسیٹ کر چل رہے تھے۔ دیکھو! یہ آگے کیسا جنگل ہے؟ دریا کے کنارے سمٹ گئے ہیں کیا؟ ابھی تو دشمن دور ہے۔ اتنی جلدی کنارہ کیسے آگیا؟ ہوا میں دھیمے دھیمے لہراتا ہوا سرکنڈوں کی گھاس کا جنگل، دن کی روشنی میں دور سے کتنا حسین، کتنا معصوم لگتا تھا، اب ایک پہاڑ کی طرح سامنے کھڑا تھا۔ یہ بھی شاید ایک جال ہے۔

یہ تمام جال زندگی بنتی ہے یا اُس کی دشمن موت؟ موت، جو وقت سے بہت پہلے، قبر سے نکل کر، پرسکون مسکراتی زندگی میں گھس آتی ہے۔ پھر ہمیں کوٹختی ہے، نوچتی ہے، رلاتی ہے، بوڑھا کر دیتی ہے۔ یہ زندگی کے بعد نہیں آتی، تمام عمر اس ہی کا سایہ ہماری زندگی پر رہتا۔

ہے۔ آخر کار ہمیں گھسیٹ کر اپنے ساتھ قبر میں لے جاتی ہے، سمجھتی ہے، اُس کی جیت ہوئی۔ مگر کچھ زندگیاں ایسے شعائر پیچھے چھوڑ جاتی ہیں جن پر نئی کونپلیں پلتی ہیں، مسکراتی ہیں، اور زندگی میں گھلی ہوئی موت کی کڑواہٹوں سے لڑتی ہیں۔ زندگی کو ہارنے نہیں دیتیں۔ یہی کشمکش زندگی کا کھیل ہے۔ ایک دن موت ذبح کر دی جائے گی۔

پھر میرا دماغ بجھ گیا۔ میں گھاس کے جنگل میں پھنس چکا تھا۔

سرکنڈے کتنے گھنے ہیں! اور کس قدر اونچے! اس کے اندھیروں نے ہمیں ڈھانپ لیا۔ چاند چھپ گیا۔ اس نے اپنا نور سمیٹ لیا۔ اس جنگل میں سے تو گزرنا محال ہے۔ ٹھہرو، میں ہتھیار کو کاندھے پر لٹکا لوں، گھاس میں الجھا جاتا ہے۔ دونوں ہاتھوں سے سرکنڈوں کو چیرتا ہوا آہستہ آہستہ آگے بڑھنے لگا۔ یہ تو ٹانگوں کے بیچ پھنس جاتے ہیں، چلنے نہیں دیتے۔ میرا ہتھیار مجھ سے چھیننا چاہتے ہیں! پاؤں بھی کچڑ میں دھنس رہے ہیں۔ میرے ہاتھ اور منہ جھل چکے تھے، جل رہے تھے۔ میں اکیلا نہیں ہوں، سب یہیں کہیں ہیں۔ سب اس ہی میں پھنس چکے ہیں۔ ہر طرف سے سرکنڈوں کے ٹوٹنے کی آوازیں آرہی تھیں۔ اسی کا شور تھا۔ کیا ہم سرکنڈوں سے ہی لڑتے رہیں گے؟ اصل دشمن کہاں ہے؟

بہت دیر کی کوشش کے بعد آخر ہم نے یہ جنگلی گھاس کا جزیرہ پار کر لیا۔ پھر دریا کا کھلا پاٹ آ گیا۔ پھر سے چاند چمکنے لگا۔ کالا پانی بھی۔ میں نے دونوں طرف دیکھا۔ ایک قطار سپاہیوں کی پانی کے کنارے کھڑی تھی۔ پیاسی۔ میں سوکھا حلق لئے پانی میں اتر گیا، سب اتر گئے۔ ٹریسر (tracer) گولیوں کی چمکتی ہوئی لمبی قطاریں ہوا میں گزر رہی تھیں۔ سر سے بہت اونچی۔ شاید دشمن خوف سے اپنے مورچوں میں دبک گیا ہے، تب ہی فائر ہوا میں کر رہا ہے۔ میرا حوصلہ بڑھ گیا۔ پانی اتنا گہرا تو نہیں، جتنا لگتا تھا۔ چل کر ہی دریا پار کر لیا۔

ہم خشکی پر چڑھ چکے تھے، اور پھیلی ہوئی سپاہیوں کی قطار آہستہ آہستہ دشمن کی طرف بڑھ رہی تھی۔ نہ جانے مجھ سے آگے جو کمپنی تھی، کہاں تھی۔ ہمارے بیچ جگہ جگہ توپوں کے گولے پھٹ رہے تھے، دشمن کی مشین گنیں گولیاں برسا رہی تھیں، سپاہی گر رہے تھے۔ جہاں دھماکہ ہوتا، روشنی پھوٹی، لوگ گرتے، وہاں پھیلی ہوئی قطار میں ایک خلا ہو جاتا۔ پھر وہ خلا بڑھتا جاتا۔ باقی سپاہی چلتے چلتے وہاں سے ہٹے لگتے، جیسے موت کے منہ میں کودتے ہوئے بھی موت سے دور ہونا چاہتے ہوں۔ میرے دیکھتے دیکھتے حملہ آور سپاہیوں میں بٹ گئی۔ ایک قطار میں سپاہیوں کے گچھے آگے بڑھ رہے تھے۔ شاید قربت سے حوصلہ پانے کو، یا شاید بھیڑ میں مرنا تنہائی کی موت سے آسان ہو۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

جگہ جگہ دشمن پیراشوٹ سے لٹکی ہوئی قندیلیں پھینک رہا تھا، جو دیر تک ہوا میں ڈولتی رہتیں۔ ایک عجیب سی پہلی روشنی ہر طرف پھیلی ہوئی تھی۔ آسمان جگمگا اٹھا تھا۔ نعرہ تکبیر بلند ہوا۔ ڈوبتے دلوں نے اللہ کو پکارا۔ فضا اللہ اکبر سے گونج اُٹھی۔ ہم دوڑ رہے تھے۔ سانسوں کا ہجوم، دوڑتے ہوئے سینکڑوں بوٹوں کی آوازیں، مشین گنوں کی لگا تار گن گناہٹ، رائفلوں کی گولیوں کا شور، توپوں کی گرج، روشنی کے چھپاکے، کہیں کہیں اُڑتے ہوئے خوف زدہ تھکی سانسوں کے اللہ اکبر کے ٹوٹتے ہوئے نعرے، آسمانوں میں تیرتے ہوئے چراغوں کی پھیکی روشنی میں لمبے لمبے ہلتے ہوئے سائے۔ درد کی پکار۔ منجمد دماغ۔ دھڑکتے دل۔ ڈھلکتے ہوئے خاموش جسم۔ دیوانگی کا وحشی رقص!

مرے وطن کی جبین پر دمک رہا ہے جو زخم *

ہم حملہ کرتے ہوئے دشمن کی پوزیشنوں کے اوپر سے گزرتے ہوئے آگے نکل گئے۔ جب ہم مورچوں پر چڑھے تو وہ خاموش تھے۔ ہم نے سمجھا خالی پڑے ہیں۔ ہتھیار سیدھے کئے، ان پر سے دوڑتے ہوئے گزر گئے۔ پھر تھک کر، بازو کی طرف پھیلی ہوئی سیدھی قطاروں میں، چلنا شروع کر دیا۔ میرے آگے سپاہیوں کی قطار نظر آرہی تھی۔ شاید اگلی کمپنی تھی اور میں اُن کے قریب آ گیا تھا۔ دوڑ کر اُن تک پہنچا تو دیکھا کہ یہ میجر اعجاز امجد کی کمپنی تھی، جو بائیں اور آگے تھی۔ میں دائیں اور پیچھے تھا۔ نہ جانے کہاں ہمارے راستے کٹے۔ پھر ہم نے دونوں کمپنیوں کو اکٹھا کر لیا، اور آرموں کے ایک باغیچے میں پہنچ کر رُک گئے۔ ہم کافی آگے آچکے تھے۔ پٹا نوالہ کی آبادی سے گزرے۔ سنسان پڑی تھی۔ باقی دونوں کمپنیوں کا کچھ پتہ نہ چلا کہ کہاں ہیں۔ وائرلیس پر اُن سے رابطہ کیا۔ پھر روشنیوں کے فلیرز (flares) کی مدد سے اکٹھے ہو گئے۔ دریا ہم سے کافی پیچھے رہ گیا تھا۔ کمانڈنگ افسر اور اُن کے انٹیلی جنس افسر زخمی ہو کر پیچھے نکالے جا چکے تھے۔ میجر بنیاد نے پلٹن کی کمانڈ سنبھال لی تھی، اور کمپنی کی کمانڈ بھی کرتے رہے۔

ایڈجوٹنٹ نے وقت پر وائرلیس کے ذریعے کامیابی کا خفیہ اشارہ دے دیا تھا اور بریگیڈ نے اُس کا جواب بھی دے دیا تھا۔ اب ہم ٹینکوں کی آمد کے منتظر تھے۔ پہلے مشورہ ہوا کہ تھوڑا پیچھے ہو کر دفاع لی جائے تاکہ دریا کے کنارے پر ہماری دفاع کے بازو آسکیں اور ہماری دفاع مضبوط ہو۔ جیسا کہ جنگی اصول کے مطابق ہونا چاہیے تھا۔ پھر یہ طے پایا کہ اتنا علاقہ قبضے میں لے لیا ہے، اسے کیوں کر چھوڑیں، پیچھے کیوں ہٹیں۔ کچھ دیر میں ٹینک آجائیں گے اور آگے حملہ شروع کر دیں گے۔ رات کے دو بج چکے تھے، اور اُن کے آنے کا وقت ہو رہا تھا۔ ہم نے پھر ایک پھیلے ہوئے دائرے کی شکل میں سپاہ کو دفاعی پوزیشن میں لگا دیا۔

توپ خانے کے دیدبان کا بھی اپنی توپوں سے کوئی رابطہ نہ تھا اور اس وجہ سے ہمیں توپ خانے کی امداد بھی حاصل نہیں تھی۔ ایڈجوٹنٹ، کیپٹن خواجہ، لگاتار وائرلیس پر ٹینک والوں سے پوچھتے رہے کہ آپ لوگ کب آرہے ہیں، مگر ہمیں جواب میں سیٹیوں کی آوازیں اور کھڑکھڑاہٹیں ہی سنائی دیتیں۔ ابھی صبح کی روشنی نہیں پھوٹی تھی۔ کیا دیکھتا ہوں کہ ایک ٹینک میرے مورچوں کے دائیں جانب کھڑا ہے۔ ہمارے ٹینک پہنچ گئے! بدن میں خوشی کی ایک لہر دوڑ گئی۔ مگر یہ تو پیچھے کو فار کر رہا ہے! کیا سمت بھول گیا ہے؟ پھر اُس نے فار کیا۔ پھر فار کیا۔ نہیں، یہ تو دشمن ہے۔ وہ دریا کی طرف فار کر رہا تھا اور اس بات سے بالکل لاعلم تھا کہ ہماری پوزیشن کے ساتھ ہی کھڑا ہے۔ میدان جنگ میں ٹینکوں کی گن کا رخ ہمیشہ دشمن کی جانب ہوتا ہے، چاہے وہ واپس ہی آرہے ہوں۔

میری کمپنی دفاع کے سامنے اور دائیں بازو پر چاند کی سی گولائی میں لگی ہوئی تھی۔ ایک پلاٹون سامنے کو رخ کئے ہوئے تھی، ایک پلاٹون سامنے اور دائیں جانب اور ایک کا منہ دائیں اور پیچھے دریا کی جانب تھا۔ پلاٹون میں قریب پینتیس (۳۵) لوگ اور چھ مشین گنیں ہوتی ہیں۔ ابھی صبح نہیں ہوئی تھی اور ہم اب بھی اپنے ٹینکوں کے انتظار میں تھے۔ دشمن کا یہ ٹینک میرے دائیں جانب والے مورچوں کے سامنے کھڑا تھا۔ صبح کی ہلکی روشنی آسمان کے کنارے پر نمودار ہو رہی تھی۔ میں نے راکٹ لانچر والے کو، جو مجھ سے کچھ ہی دور تھا، پتھر مارا۔ وہ بھی ٹینک کو دیکھ رہا تھا۔ میں نے اشارہ کیا کہ فائر کرو۔ اُس نے گولہ مارا تو ٹینک کے سامنے زمین پر لگا۔ ٹینک پیچھے کو چلنے لگا اور تیزی سے درختوں کے ایک جھنڈ میں غائب ہو گیا۔

میں راکٹ لانچر والے کو لے کر جھنڈ کی طرف بھاگا، راستے میں میجر اعجاز امجد اور میجر بنیاد کھڑے کچھ بات کر رہے تھے، وہ بھی ساتھ ہو لئے۔ جھنڈ دفاع کے بالکل سامنے کی طرف اور قریب تھا۔ جب وہاں پہنچے تو دیکھا کہ یہ ایک سوکھا تالاب تھا جس کے کناروں پر درخت لگے تھے۔ تالاب کے بیچ میں ٹینک کھڑا تھا۔ میجر اعجاز امجد نے، جواب تک راکٹ لانچر ہاتھ میں لے چکے تھے، پہنچتے ہی گولہ داغ دیا۔ ٹینک کے کپولے سے شعلہ نکلا اور ساتھ ہی ٹینک کا ڈرائیور کو دگر جلتے ہوئے ٹینک کے پیچھے چھپ گیا۔ آواز دینے پر ہاتھ اٹھائے سامنے آ گیا۔ اسے لے کر میں اپنی کمپنی میں آ گیا۔ ست پال شرم بہت باتونی تھا۔ تلاشی لی تو جیب میں قریب پانچ سو روپے تھے۔ نئی نئی تنخواہ ملی تھی، کہنے لگا۔ بہن کی شادی کے لئے جمع کر رہا تھا، اس بار نکلائی ہے۔ اُسے باندھ کر ایک مورچے میں بٹھا دیا۔

جوتے کھولے، موزے گیلے تھے، ایک جھاڑی پر شکھانے کو ڈال دیئے۔ کپڑے سارے ہی گیلے تھے، سردی سے کانپ رہا تھا۔ جیب سے گیلے چنے اور گڑ نکال کر چبانے لگا۔ پھر اٹھ کر بغیر موزوں کے جوتے پہنے اور کمپنی کے مورچوں کا چکر لگانے نکل گیا۔ سامنے والی پلاٹون سے ہوتا ہوا، ست پال شرم کے پیسے سپاہیوں میں یادگار کے طور پر بانٹا ہوا، جب دہنی طرف کے مورچوں میں پہنچا تو انھوں نے کہا دور بین سے دیکھیں۔ صبح کی ہلکی روشنی اور دریا کی دھند میں کافی سپاہ حرکت کرتی نظر آئی۔ میں نے کہا گھبراؤ مت یہ ہماری دوسری پلٹن ہے، جو حملے میں ہمارے ساتھ آئی ہے۔ یہ کہہ کر میں اُس پلاٹون کی طرف چل پڑا جس کے ایک بازو کا رخ دریا کی جانب تھا۔

ایک مورچے کے پاس بیٹھا تھا، کیا دیکھتا ہوں کہ دشمن کے دو آدمی دریا کی جانب سے ہماری طرف بھاگتے ہوئے آرہے ہیں۔ ہلکی ہلکی دھوپ نکل آئی تھی، دُھند اب بھی چمک رہی تھی۔ جب انھوں نے ہمیں دیکھا تو فوراً زمین پر ایک کھیت کی بنی کے پیچھے لیٹ گئے، اور ہاتھ سے اشارے کرنے لگے، جیسے کہہ رہے ہوں کہ ہمیں مارنا مت۔ ساتھ ہی مشین گن کا مورچہ تھا۔ اس سے پہلے کہ میں اُسے منع کرتا اُس نے اُن پر فائر کھول دیا۔ میں دوڑ کر اُن کے پاس گیا۔ دونوں خوبصورت نوجوان تھے۔ خون میں لت پت پڑے تھے۔ ایک کا بھیجا بہہ کر باہر نکل رہا تھا۔

دوسرا سفر آغاز ہوا

فارز کی آواز سن کر میجر بنیاد اور اعجاز امجد بھی آگئے۔ کچھ ہی دیر میں ایک اور پانچ چھ کا ٹولہ نمودار ہوا، جو شاید ان کے پیچھے ہی آ رہا تھا۔ انھوں نے اس فارز کی وجہ سے دور سے ہی ہمیں دیکھ لیا اور ایک طرف کو مڑ گئے۔ ہم ان کے پیچھے بھاگے۔ کچھ سپاہی بھی ہمارے ساتھ ہو لئے۔ کسی نے ان پر دوڑتے ہوئے فارز کیا اور یہ وہیں زمین پر بیٹھ گئے۔ دیکھا تو ان میں کچھ زخمی ہو چکے تھے۔ بہت سہمے ہوئے تھے۔ ہم زخمیوں کو پٹی باندھ رہے تھے کہ ایک دشمن کا ہوائی جہاز گولیاں برساتے ہوئے نیچے کو آیا۔ سب زمین پر اوندھے لیٹ گئے۔ ہم تو شاید اُس کو نظر نہ آتے ہوں گے مگر اب انھیں ہماری پوزیشن کا پتا چل چکا تھا۔ میں نے لیٹے ہوئے دیکھا کہ جہاز کی گولیوں کی ایک قطار تیزی سے زمین پر لگتی ہوئی میری طرف بڑھ رہی ہے۔ میں سکتے میں وہیں جم گیا۔ پھر جب وہ تھپ تھپ کرتی گولیوں کی لائن بالکل قریب آگئی تو نہ جانے کیوں پائلٹ نے ٹرگر سے انگلی اٹھالی، اور جہاز اوپر کی طرف اٹھ گیا۔ مٹی کا بادل پھیل گیا۔

جب اٹھے تو دیکھا ایک قیدی اس موقع سے فائدہ اٹھاتے ہوئے تیزی سے بھاگ نکلا تھا۔ میں نے اُس پر فارز کھول دیا، کچھ اوروں نے بھی۔ دوڑتا ہوا جسم کچھ دیر تو جھٹکے کھاتا رہا، پھر زمین بوس ہو گیا۔ اس سے پہلے کہ میں اپنی رائفل نیچے کرتا، مجھے اپنے ہونٹوں پر پھیلی ہوئی ہنسی اور نکلے ہوئے دانتوں کا احساس ہو گیا۔ ان کی تصویر میری آنکھوں کے آگے گھوم گئی اور میں کچھ دیر وہیں جم گیا۔ مارنا تو لازم تھا، اتنی خوشی کس بات کی؟ آج بھی میں اس ہنسی کے بارے میں سوچتا ہوں۔ کیا یہ ایک جلتی انظہارِ طاقت کی تسکین تھی؟ کیا یوں خون بہانے میں کوئی چھپا لطف ہے، جو جانوروں کو نصیب نہیں؟

زخمیوں کو پٹی کر کے وہیں چھوڑ دیا۔ باقیوں کو قیدی بنا کر لے آئے۔ ان سے پتا لگا کہ رات جب ہم نے اُن کے سر چڑھ کر نعرہ گنبر بلند کیا تو یہ وہیں مورچوں میں دبک گئے۔ پھر اُن کو کچھ پتہ نہ چلا کہ کیا ہوا۔ صبح انھوں نے دیکھا تو زیادہ لوگ رات کو ہی پیچھے بھاگ چکے تھے۔ جو اُکا دکارہ گئے تھے وہاں سے نکلنے کی کوشش میں تھے۔

پھر اچانک ہمارے بائیں بازو پر شدید فارنگ شروع ہو گئی اور تھوڑی دیر میں دشمن کے حملہ آور ٹینک نمودار ہوئے، آہستہ آہستہ ہماری طرف بڑھتے ہوئے۔ چونکہ بھاری ٹینک شکن ہتھیار پہنچے نہیں تھے، دشمن کے تین ٹینک ہمارے مورچوں پر چڑھ آئے۔ ایک تو تباہ کر دیا، باقی پیچھے نکل گئے۔ پیادہ فوج دن کی روشنی میں اُن کے ساتھ آگے نہ آئی اور دور سے ہی فارز کرتی رہی۔ دن کے دس بج چکے تھے۔ نہ ہی ہماری بھاری ہتھیاروں کی کمپنی پیچھے سے آئی اور نہ ٹینک۔ نہ ہی وائرلیس پر کوئی خبر۔ رات دو بجے، جب ہم نے کامیابی کا اشارہ دیا تھا، اُس کے بعد سے ہمارا کسی سے کوئی رابطہ نہ ہو سکا۔ وائرلیس سیٹ سے صرف شوشوں کی آوازیں آتی تھیں۔ ایک گشت صبح سویرے پیچھے بھیجی تھی کہ ہماری ہتھیاروں کی کمپنی کا پتا لگائے اور اُن کی راہبری کر کے یہاں تک لائے۔ مگر وہ گشت لوٹ کر نہ آئی۔

دوسرا سفر آغاز ہوں

پھر دہنی طرف سے میری کمپنی پر لگا تار فائر شروع ہو گیا۔ کافی دیر فائر کا تبادلہ جاری رہا۔ پھر بند ہو گیا۔ جن کو میں صبح کی پھوٹی روشنی میں اپنی دوسری پلٹن سمجھا تھا، وہ اصل میں دشمن تھا، جورات کے دفاعی مورچے چھوڑ دینے کے بعد نئی پوزیشنیں سنبھال رہا تھا۔ ہم دہنی طرف سے اُس کے گھیرے میں تھے، اور بائیں جانب سے ایک حملہ پسا کر چکے تھے۔ یہ حملہ آور سپاہ وہیں موجود تھی۔ دور کھڑے ہوئے ٹینک اور جھاڑیوں میں دشمن کی حرکت نظر آرہی تھی۔ اب یہ ہمارے بائیں اور پیچھے کی طرف دریا کے قریب جمع ہو رہے تھے۔ سورج اپنی آب و تاب سے چمک رہا تھا۔

ہم چار کمپنی کمانڈروں نے مشورہ کیا، اور اس نتیجے پر پہنچے کہ ہماری پوزیشن اور دریا کے بیچ جو خلاء ہے وہ نہایت خطرناک ہے۔ اب تک چونکہ ٹینک نہیں آئے ہیں، ہمیں اپنی دفاع اس حد تک پیچھے کر لینی چاہیے کہ ہمارے بازو دریا پر آجائیں۔ اگر ہمارے اور دریا کے بیچ دشمن آگیا تو ہم پھنس جائیں گے۔ یہ فیصلہ کر کے ہم اپنی کمپنیوں میں اس پر فوری عمل درآمد کرانے چلے گئے۔ ہمیں اپنی یہ غلطی اندھیرے ہی میں درست کر لینی چاہیے تھی۔ اب ہم کسی وقت بھی اُن کے گھیرے میں آسکتے تھے۔ شاید اس خوف سے ہم بہت جلدی میں تھے۔ جسے میں آسان سی بات سمجھا تھا وہ ایک نہایت خطرناک مرحلہ تھا۔ دشمن سے گھرے ہوئے، دن کی روشنی میں اس مشکل کارروائی کی نہ ہی کوئی ترتیب تھی، نہ کوئی ارتباط اور نہ ہی کنٹرول کا کوئی طریقہ متعین کیا گیا۔ میں نے اپنے پلاٹون کمانڈروں کو منصوبہ بتایا اور کہا کہ جلدی اس پر عمل کریں اور سپاہ کو پیچھے نکالیں، اس سے پہلے کہ ایک اور حملہ ہم پر آجائے، یا ہم پیچھے سے کٹ جائیں۔

تمام کی تمام سپاہ ایک ہی وقت میں اپنے مورچوں سے نکل آئی۔ دن دھاڑے۔ پوری پلٹن ہی۔ ہمارے مورچے کھیتوں کی چٹیل زمین پر تھے اور دشمن کے گھیرے میں۔ کہیں کوئی آڑ نہ تھی۔ جیسے ہی ہم نے چلنا شروع کیا، اچانک سامنے اور دائیں جانب سے مشین گنیں کھل گئیں۔ بائیں طرف سے رُکا ہوا حملہ بھی دوبارہ چل پڑا۔ ٹینک ہمارے پیچھے اور دریا کے درمیان بڑھنے لگے۔ ہر طرف سے گولیاں آرہی تھیں۔ تو پختانہ بھی کھل گیا۔ پھر کیا تھا۔ بھگدڑ مچ گئی۔ میں نے بہت آوازیں دیں کہ مورچوں میں واپس گھس جاؤ، مگر کسی نے ایک نہ سنی۔ سب پیچھے کو بھاگ رہے تھے، دریا کی طرف، سروٹوں کی آڑ لینے۔ میں بھی وہیں پہنچ گیا، لیکن یہاں بھی لاکھ بلا نے پر کوئی نہ رُکا۔ ایک مرتبہ بھگدڑ مچ جائے پھر قابو نہیں آتی۔ میرے ساتھ ہاتھ بندھے دو جنگی قیدی تھے۔ میں نے اُن کے ہاتھ کھولے اور جو ہتھیار زمین پر پھینکے پڑے تھے وہ اٹھا اٹھا کر اُن پر لا دتا رہا۔

وہیں مجھے میجر اعظم بھی مل گئے۔ سب کمپنیوں کی یہی روداد تھی۔ نہایت افسوس میں تھے کہ ہمارے ساتھ یہ کیا ہوا۔ ہم سروٹوں کی آڑ میں تو تھے، مگر گولیاں ہوا میں سنسنار ہی تھیں۔ وہ اپنی بھوری چمڑے کی جیکٹ پہنے ہوئے تھے۔ ہم ایک پگڈنڈی پر ہو لئے۔ کچھ آگے ہی

دوسرا سفر آغاز ہوا

میجر اعجاز امجد چل رہے تھے۔ مجھ سے بات کرتے کرتے میجر اعظم اچانک اپنے گھٹنوں پر گر گئے، کچھ دیروہیں ٹھہرے رہے، چہرے کی جلد تیزی سے کانپ رہی تھی، پھر ایک طرف کو لڑھک گئے۔ اُن کے کالر سے خون کی موٹی دھار بہہ نکلی۔ جیکٹ میں دل کے سامنے ایک سوراخ تھا۔ میں نے اُن کو زور زور سے پکارا، پھر دوڑ کر میجر امجد کے پاس گیا اور اُن کو بتایا کہ میجر اعظم کو گولی لگ گئی ہے۔ وہ فوراً واپس آئے۔ اتنے میں ہم نے دیکھا کہ دریا کے ساتھ ساتھ ٹینک ہماری طرف فائر کرتے ہوئے بڑھ رہے تھے۔ یہ شاید ان ہی کی گولی تھی جو میجر اعظم کے دل کے پار ہو گئی۔ میجر اعجاز امجد، میجر اعظم اور کچھ اور شہداء کو لے کر کافی دیر بعد واپس لوٹے۔ ہماری پلٹن کے کمانڈنگ افسر میجر بنیاد حسین سید آخری شخص تھے جو توی دریا کے پار سے واپس آئے۔ جب تک سب محفوظ مقام پر نہ پہنچ گئے، وہ دریا کے پار دشمن کے علاقے ہی میں رہے۔ میجر بنیاد اور میجر اعجاز امجد اس جنگ میں میرے ہیرو تھے۔

میں ابھی دریا کے قریب نہیں پہنچا تھا کہ لانس نائیک اقبال کو زخمی حالت میں پایا۔ یہ بعد میں آنریری کیپٹن ہو کر ریٹائر ہوئے۔ میرے ساتھ سامان سے لدے دو قیدی بھی تھے۔ چھ فٹ سے لمبے اس زخمی جوان کو میں نے کندھے پر اٹھایا اور دریا پار کرنے لگا۔ قیدی ہمارے آگے آگے چلتے رہے۔ میرا ہتھیار بھی اُن کے کندھے پر تھا۔ بار بار اُن کو آواز دے کر چوکنا کرتا رہا کہ سیدھے چلو، اگر مڑ کر دیکھا تو گولی مار دوں گا۔ پھر ہم بارے ہوئے، کچلے ذہنوں کو لئے اپنے کنارے پر واپس آ گئے۔ دوسرے دن میں نے انھیں قیدی کمپ میں پہنچا دیا۔ اگر یہ قیدی نہ ہوتے تو شاید جھوٹ اور بہتان کے میدان جنگ میں ہماری اس بات کا کوئی یقین نہ کرتا کہ ہم پلا نوالہ تک پہنچ چکے تھے۔

اس کے بعد کوئی اور آپریشن نہ ہوا۔ ہمارے ڈویژن کمانڈر، دس بلوچ رجمنٹ کے میجر جنرل افتخار خان، دس دسمبر کو ہمارا حملہ شروع ہونے سے پہلے شہید ہو چکے تھے۔ جو اس حملے کے روح رواں تھے وہ اب جہان فانی سے رخصت ہو چکے تھے۔ پھر کسی کو کوئی پوچھنے والا نہ تھا۔

جو پلٹن ہمارے ساتھ حملے میں گئی تھی، وہ دریا کے دوسرے کنارے پر ہی ٹھہر گئی، اور پھر چونکہ ٹینک نہیں آئے، ہم سے پہلے ہی واپس آ چکی تھی۔ جو بریگیڈ ہیڈ کوارٹر تھا، دریا سے سیلوں پیچھے ہی رہا۔ دونوں ٹینک رجمنٹیں بہت دیر سے چلیں۔ پہلی رجمنٹ جب دریا پر پہنچی تو مچ بھوٹ چکی تھی۔ جب اُن کا ایک ٹینک دریا کے پار چڑھنے لگا تو اُس پر فائر آیا اور وہ اس وجہ سے پیچھے نکل آئے کہ پار کا کنارہ محفوظ نہیں کیا گیا۔ نہ جانے انھوں نے دریا کہاں سے پار کرنے کی کوشش کی۔ دوسری رجمنٹ کو اتنی دیر ہو گئی کہ وہ دریا پر آئی ہی نہیں۔ پیچھے ہی رُک گئے۔ جو بھاری ہتھیاروں کی کمپنی تھی اُس کے کمانڈر نے کہا کہ پانی زیادہ تھا میری جیپیں اُسے پار نہ کر سکیں۔ حالانکہ ان سب نے مل کر دریا پار کرنے کی جگہ کا چناؤ کیا تھا۔ انجنیر کمپنی کا افسر بھی اس میں شامل تھا۔ آپس میں ارتباط کی تفصیلات بھی یقیناً طے کی ہوں گی۔ پھر بھی سب تتر

دوسرا سفر آغاز جنوں

جب ڈیویشن ہیڈ کو اثر ہی حملے کا ذمہ نہ لے اور حملے کا بریگیڈ کمانڈر جگہ پر موجود ہی نہ ہو، تو اتنا پیچیدہ حملہ کیسے کامیاب ہو؟ مگر کسی کو کچھ کہنا نہ گیا، کسی سے سوال نہ ہوا۔ سب نے بہتری اسی میں دیکھی کہ معاملہ ڈھانپ دیا جائے۔ بتایا گیا کہ چونکہ GHQ کے احکام تھے کہ آگے آپریشن نہ کئے جائیں، اس لئے حملہ روک دیا گیا۔ دوسری پلٹن تو واپس بلا لی تھی، ہمارے ساتھ وائرلیس کا ملاپ نہیں تھا اس لئے ہمیں یہ بتانا سکے۔ اور ہم بھاری ہتھیاروں اور توپ خانے کی امداد کے بغیر اور گنتی کے امونیشن کے ساتھ دشمن کے گھیراؤ میں بیٹھے اُن ٹینکوں کا انتظار کرتے رہے جو چلے ہی نہیں۔

اللہ ہی جانتا ہے سچ کیا تھا۔ جنگ کے دن جھوٹ سے بھرے تھے۔ میدان جنگ میں کئی جگہ یہ بھی ہوا کہ سپاہ اپنی جگہ پر ہی رہیں اور کمانڈر وائرلیس پر اپنی کامیابیاں بتاتے رہے۔ ایک دوسرے پر الزام لگانا اور اپنی ذمہ داری سے منہ موڑنا عام تھا۔ وائرلیس تو کمزور تھے ہی، مگر ان کو بند کر کے خرابی کا بہانا، یا احکام نہ سمجھ آنے کی کئی مثالیں تھیں۔ مجموعی طور پر سپاہ بہت بہادری سے لڑیں، پوری جنگ میں اتنا بڑا علاقہ کسی اور جگہ قبضہ میں نہیں لیا گیا، جتنا چھمب سیکٹر میں لیا گیا۔ جرات کے کئی کارنامے اپنے خون سے مٹی میں لکھے۔ افسروں نے جگہ جگہ بہترین کارکردگی کا مظاہرہ کیا، سب سے آگے رہ کر سپاہ کی قیادت کی۔ اُن کے لئے مثال قائم کی۔ جو کم عمر تھے اُن میں زیادہ دلیری اور بے باکی دیکھی۔ جو بزدلی کی مثالیں تھیں، زیادہ اُن میں سے تھیں جو بچی عمر کو پہنچ گئے تھے، بال بچوں والے تھے۔ تربیت کی کمی ہر طرف دیکھنے میں آئی۔ پھر سب نے اپنی اپنی کارکردگی سنہری الفاظ میں لکھی، اور تاریخ جنگ کی کتاب بند کر دی۔



کمیشن لینے کے بعد



انجم



راشد شہید



چھب کامندر



میدان جنگ کو جاتے ہوئے راولپنڈی شیشن پر

فصل جسم پہ تازہ لہو کے چھینٹے ہیں *

سترہ دسمبر کی شام جنرل یحییٰ نے ریڈیو پر قوم سے خطاب کیا اور ہمیں بتایا کہ مشرقی پاکستان میں اس پاک فوج نے ناپاک دشمن کے آگے اپنے ہتھیار ڈال دیئے ہیں۔ جان بچالی ہے۔ مسلمانوں کی فوج، جو اللہ اکبر کہتی تھی، کفر کے آگے جھک گئی۔ سر کا کام ہے جھکنا۔ جو اللہ کے آگے نہ جھکا، وہ کفر کے آگے ہی جھکے گا۔ جو سر اللہ کے آگے جھکتے ہیں، وہ کٹ جاتے ہیں، کہیں اور نہیں جھکتے۔ جو غرور سے اٹھے رہتے ہیں، جن کی گردنوں میں اللہ نے طوق ڈال رکھی ہے، وہ بادشاہ کے آگے سرنگوں ہوتے ہیں، یا کوئی سی بھی ایسی دنیاوی طاقت جو ان کو ڈرا سکے یا فائدہ پہنچا سکے۔ جنہوں نے بادشاہ کے حکم پر اپنے مسلمان بھائیوں کا قتل کیا، اور سمجھا کہ بادشاہ کا حکم اللہ کے حکم پر حاوی ہے، جو چپ رہے، جنہوں نے اللہ کی راہ چھوڑ کر اپنے آقا کا ساتھ دینا اپنے مفاد میں سمجھا، جنہوں نے اپنے گروہ کو اپنا کارساز مانا وہ ذلیل کئے گئے۔ ہم نے ملک کا آدھا جسم آقا کی بقاء کے لئے بچ دیا تھا۔ پھر اپنی شرمندگی چھپانے اور نئے آقاؤں کا بھرم رکھنے کی خاطر سب پر پردہ ڈال دیا۔ ہمارا ملک ٹوٹ چکا تھا۔ ہماری عزت نفس بھی، غیرت بھی اور ہماری شرم بھی مٹی میں مل چکی تھیں۔ ہم سب پھوٹ پھوٹ کر روئے۔

دوسرے دن مجھے خبر ملی کہ میرا چھوٹا بھائی راشد، صبح سویرے شہادت کے رتبے سے نوازا گیا ہے۔ میرے کمیشن لینے کے چند ماہ بعد ہی وہ کمیشن لے کر کشمیر میں پوسٹ ہوا تھا۔ لڑائی کے خدشات کے بنا اسے وقت سے پہلے ہی کمیشن دے دیا گیا تھا۔ میں راولپنڈی آ گیا۔ جس رات وہ آیا، اُس کے ساتھ ایک حوالدار صاحب بھی تھے، جو شہادت کے وقت بھی اُس کے ساتھ تھے۔ انہوں نے بتایا کہ ہمارے علاقے میں کوئی جنگی کاروائیاں نہیں ہوئیں۔ پہاڑوں پر مورچوں سے ایک دوسرے کی پوزیشنوں پر فائرنگ ہوتی تھی، یا توپ خانے کی گولا باری۔ پھر رات کو ریڈیو پر ہتھیار ڈالنے کی خبر سن کر راشد صاحب بہت روئے، کہ ہم مورچوں میں ہی بیٹھے رہے اور آدھا ملک ہم سے چھین گیا۔

حوالدار صاحب نے بتایا کہ ہمارے اور دشمن کے بیچ وادی میں ایک چھوٹا سا گاؤں تھا، جو خالی پڑا تھا۔ جنگ بندی کے اعلان کے بعد دشمن اس میں گھس آیا۔ صبح کے وقت گاؤں میں حرکت دیکھی گئی، تو راشد کو احکام ملے کہ ایک گشت لے کر وہاں جاؤ اور دشمن کو وہاں سے نکالو، حالانکہ یہ اس کی کمپنی کا علاقہ نہیں تھا۔ جب یہ وہاں پہنچے تو دشمن کے کچھ آدمی گاؤں کے باہر مورچے کھود رہے تھے۔ راشد نے پوزیشن لے کر ان کو لکارا اور کہا کہ یہ علاقہ آپ نے فائر بندی کے بعد لیا ہے، اسے چھوڑ دیں۔ انہوں نے کچھ ڈھا کہ کے بارے میں طنز آمیز باتیں بھی کہیں۔ کچھ تنازعے کے بعد راشد نے فائر کھول دیا، اور ان کو ہلاک کر دیا۔

دوسرا سفر آغاز جنوں

ان کے ساتھ ایک صوبیدار صاحب بھی تھے جو تجربہ کار تھے، اُنھوں نے راشد کو منع کیا کہ گاؤں کے اندر مت جائیں، لیکن وہ نہ مانا۔ گاؤں کی گلی میں گھس گیا۔ صوبیدار صاحب ابھی گلی کے باہر ہی تھے، کہ ایک مکان کے آنگن سے دشمن نے آواز دی کہ اپنے ہتھیار پھینک دو۔ دشمن نے کچی دیواروں میں سوراخ کر کے ہتھیار لگائے ہوئے تھے۔ راشد نے کہا، "جنھوں نے ہتھیار پھینکے وہ اور لوگ تھے"، اور گرینیڈ نکالا ہی تھا کہ دشمن نے مشین گن کا فائر کھول دیا۔ وہ مشین گن سے اتنا قریب تھا کہ اُس کے چہرے پر پانچ گولیاں لگیں۔ ایک ماتھے پر، ایک آنکھ پر، ایک گال پر، ایک حلق پر اور ایک حلق کے نیچے۔ گلی کے دہانے پر کھڑے صوبیدار صاحب بھی زخمی ہوئے۔ گشت کے لوگ صوبیدار صاحب کو اٹھا کر واپس آ گئے۔ پھر ہمارے توپ خانے نے گاؤں پر گولے برسائے تو وہاں سے دشمن کی کافی سپاہ نکل کر بھاگی۔ اندھیرا ہونے کے بعد گاؤں کی گلی سے راشد کو نکالا گیا۔ اُس کا ایک ہاتھ اپنے ہتھیار پر جم چکا تھا اور دوسری مٹھی میں گرینیڈ ابھی تک پکڑا ہوا تھا۔ حوالدار صاحب نے بتایا کہ میں نے مشکل سے اُن کے ہاتھ سے ہتھیار اور گرینیڈ چھڑایا۔ اللہ کو جو پسند ہوتے ہیں، جلد ہی اُن کو لے لیتا ہے۔ دنیا میں ٹھوکریں کھانے کو نہیں چھوڑتا۔ جس کے آگے جنت کا دروازہ کھلا ہو، وہ دنیا میں کیوں رہے؟

میرا ایک ہی دوست تھا، ایک ہی راز دان، مجھ سے چھن گیا۔ جو بچپن سے میرے پیچھے پیچھے چلتا تھا، ایک ہی چھلانگ میں بہت دور آگے نکل گیا۔ میں اُس کی خاک کو بھی نہیں پہنچ سکتا۔ اُس کے جانے کے بعد تنہائی کی شدت کا جو احساس مجھے ہوا، جو خلا میری زندگی میں پیدا ہو گیا، وہ آج تک بھرنہ سکا۔ اُس کے بعد سے شاید میں ساری زندگی اُس ہی کے تعاقب میں رہا۔ اُس تک پہنچنے کو۔ اُسے چھو لینے کو۔ مگر اُس نے تو آسمانوں میں اپنی راہ تلاش کر لی تھی۔ منزل پالی تھی۔

ادھر نہ دیکھو کہ جو بہادر
قلم کے یا تیغ کے دھنی تھے
جو عزم و ہمت کے مدعی تھے
اب ان کے ہاتھوں میں صدقِ ایمان کی
آزمودہ پرانی تلوار مڑ گئی ہے
جو کج کلمہ صاحبِ حشم تھے
جو اہل دستار محترم تھے
ہوس کے پُر تیج راستوں میں
گُلمہ کسی نے گرہے رکھ دی
کسی نے دستار بیچ دی ہے

ادھر بھی دیکھو
جو اپنے رُخشاں لہو کے دینار
مفت بازار میں لٹا کر
نظر سے اوجھل ہوئے
اور اپنی لحد میں اس وقت تک غنی ہیں،

ادھر بھی دیکھو جو حرفِ حق کی صلیب پر اپنا تن سجا کر
جہاں سے رخصت ہوئے
اور اہل جہاں میں اس وقت تک نبی ہیں

(فیض)

تیسرا سفر

اُڑان

ابھی سے جشنِ بہاراں! ابھی سے شغلِ جنوں!*

فوج تقریباً دو سال تک سرحدوں پر ہی موجود رہی۔ بھٹو صاحب نے، اپنی انا بچانے کے لئے، ملک کو دو لخت کرنے کا سارا ذمہ فوج پر ڈال دیا۔ حکمران فوجی ہو تو کا لک ساری فوج ہی کے منہ پر لگتی ہے۔ پھر فوج کو جو توں تلے بھی کرنا تھا۔ شیخ مجیب الرحمن کو آزاد کر کے بنگلہ دیش بھجوا دیا، اور قیدی بھی واپس نہ مانگے۔ اگر کچھ کرنا ہی تھا تو حکمرانوں کو پھانسی دیتے۔ خود کو بھی۔ یہ زحمت جنرل ضیاء پہ کیوں چھوڑ دی؟ ہم سارے ہی ملزم تھے۔ آدھا ملک کھو چکے تھے، نوے ہزار قیدی تھے، اس شرمندگی میں شہروں میں منہ دکھانے سے یہ ویرانہ ہی اچھا تھا۔ کوڑا لگیوں سے باہر ہی پھینکا جاتا ہے۔

کچھ نہ کچھ فوجی تربیت چلتی رہتی۔ زیادہ وقت بارڈروں کی دیکھ بھال ہی میں گزر جاتا۔ نئے کمانڈنگ آفسر، جو پلٹن کے ہی پرانے آفسر تھے، جنگ بندی سے کچھ پہلے آچکے تھے۔ سخت مزاج انسان تھے، ہر ایک سے کچاؤ ہی رہتا۔ کوشش ہوتی کہ ہم کسی طرح اکٹھے نہ ہوں کہ کہیں کوئی شیطانی کر کے خود کو مشکل میں نہ پھنسا لیں۔ ہر روز کوئی نیا مسئلہ کھڑا ہوتا۔ جنگ میں جو کچھ سامان اور ہتھیار وغیرہ کھو گئے تھے، اُن کا حساب کتاب چل رہا تھا۔ کچھ ہتھیار زخمیوں کے ساتھ پیچھے چلے گئے تھے، کچھ نئی آنے والی سپاہ اپنے ساتھ لائی، کچھ شہیدوں کے ساتھ میدانِ جنگ میں گر گئے، ملے نہیں، اور کچھ تو یو دریا کے پار چھوڑ آئے۔ کسی کا کوئی حساب نہیں تھا۔ اس کے علاوہ اور بھی خاصا سامان جنگ کی نظر ہو گیا تھا۔ پھر ایک ترکیب کی۔ ایک گاڑی دشمن کے ہوائی جہاز کا نشانہ بنی تھی۔ بس جس جس چیز کا کوئی حساب نہ بنا، گاڑی میں ڈال دی۔ آسان تھا۔ کہہ دیا کہ گاڑی کے ساتھ جل گئی۔ لسٹ اتنی لمبی ہو گئی کہ کسی نے کہا کہ یہ تو ایک کانوائے (convoy) کا سامان ہے، ایک گاڑی میں کیسے آیا؟ مگر سب ہی کاغذی کارروائی پر آمادہ تھے۔ لکھ دیا گیا اور حساب ختم کیا۔

آہستہ آہستہ جنگ میں زخمی ہوئے آفسر واپس آنے لگے۔ کچھ اور بھی آ گئے، جن میں میجر اختر ضامن بھی تھے، جو میجر اعظم راجپوت شہید (ستارہ جرات)، کے قریبی دوست تھے۔ شفقت کرنے والے اور کھلے دل کے انسان تھے، بریگیڈیئر بن کر ریٹائر ہوئے۔ اُن سے کافی لگاؤ ہو گیا۔ آفسروں میں بھائیوں جیسا رشتہ تھا۔ اُن کے آنے سے اور مضبوط ہو گیا۔ سب ایک دوسرے کو بچانے کے لئے آگے آ جاتے۔ فوج کو یہی محبتیں زندہ رکھتی ہیں۔ آرمی ایوی ایشن (Army Aviation) میں جانے کی کوشش کی، کہ جہاز اڑاؤں گا۔ کمانڈنگ آفسر نے راستہ روک لیا۔ تاش میں تین پتی کھیلنا سیکھ لی۔ جب کھیلتا، لگا تار ہارتا۔ سالانہ رپورٹ میں بھی لکھ دیا گیا کہ آفسر کو جو اکیلے سے پرہیز

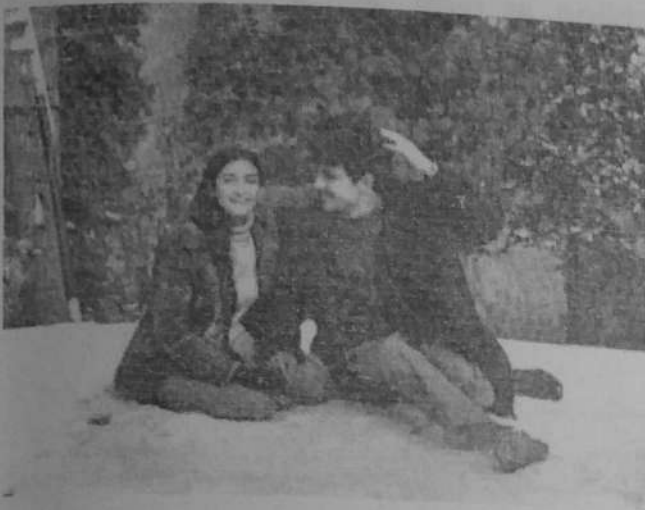
کرنا چاہیے۔ الفاظ کچھ یوں تھے: "officer should resist the temptation of gambling at high stakes"۔ آدھا ملک کھو چکے تھے، اعلیٰ قیادت پر اعتماد بھی۔ جان کی بازی لگا چکے تھے۔ لفٹیننٹوں کے لئے اب کیا ہائی سٹیکس رہ گئے تھے؟ اور اُن کی جیبوں میں ہوتا ہی کتنا تھا؟ پھر ہم واپس راولپنڈی آ گئے۔

دس نومبر ۱۹۷۳ کو کراچی میں کمیٹین شہد اور انجم کی شادی ہو گئی۔ اُن دنوں میرے پاؤں ہی زمین پر نہ ٹکتے۔ ساری کائنات مجھے مسکراتی ہوئی نظر آتی۔ ہم مہینہ بھر پہاڑوں میں پھرتے رہے۔ ہنستے رہے۔ وقت کا پتا ہی نہ چلا۔ مجھے میری دنیا مل گئی تھی۔ اب اور کوئی تمنا باقی نہ تھی۔ لگتا تھا اب زندگی میں بہاروں کا موسم ہی رہے گا۔ مگر وقت ٹھہرتا تو نہیں۔

پھر ایک اور کمانڈنگ افسر آ گئے، جو ہماری یونٹ سے نہ تھے اور اُن کو یہ فکر تھی کہ یہ پرانی یونٹ ہے، شاید آسانی سے اُن کے قابو نہ آئے اور کہیں انہیں کسی مشکل میں نہ پھنسا دے۔ آتے ہی سب کو جھنجھوڑنا شروع کر دیا۔ اتنا دباؤ ڈالا کہ ہر ایک کسی نہ کسی پریشانی میں دوڑتا ہوا ہی نظر آتا۔ کہنے لگے یونٹ کی ہر چیز مجھے بتائی جائے، کوئی چیز بھی چھپی نہ رہے۔ کمانڈنگ افسر سے ویسے بھی کچھ چھپا نہیں ہوتا، اُن کی پریشانی غیر ضروری تھی۔ میں یونٹ کا ایڈجوٹنٹ تھا، اور شروع دن سے ہی اُن کو پسند نہ آیا۔ شاید اس دباؤ کے نیچے میرا رویہ جھکا ہوا نہ تھا۔

ابھی اُن کو آئے چند روز ہی ہوئے تھے کہ صوبیدار میجر صاحب نے مجھ سے کہا کہ پلٹن میں کچھ ہندوستان کے ہتھیار ۱۹۷۱ کی جنگ کی یادگار کے طور پر رکھے ہیں، کمانڈنگ افسر صاحب کو دکھا دیں۔ دوسرے دن جب وہ دفتر آئے تو یہ ہتھیار اُن کو دکھائے گئے۔ اُن میں ایک ٹینک شکن میزائل بھی تھا۔ بہت ناراض ہوئے کہ پہلے کیوں نہ بتایا، اور یہ بات چھپائی کیوں گئی۔ میں نے کہا، "سر، ایسی بات ہرگز نہیں ہے، آخر آپ سے کیوں کر چھپاتے۔ دو سال سے یہ ہتھیار بند پڑے تھے، ذہن ہی میں نہیں آیا۔" پھر چائے کے وقفے میں تمام افسروں کو بلوا لیا اور سب کو لیکچر دینے کے بعد، کہنے لگے کہ بہت افسوس ہے کہ اس یونٹ کے کچھ افسر جھوٹ بولتے ہیں۔ میں کافی دیر سے برداشت کئے بیٹھا تھا، رہا نہ گیا، اور کہا کہ اگر آپ کا اشارہ میری طرف ہے تو اتنی بڑی بات مجھے آج سے پہلے کسی نے نہیں کہی، حتیٰ کہ میرے والد نے بھی نہیں۔ یہ سن کر وہ فوراً اٹھ کر چلے گئے۔ پھر مجھے پیغام بھجوایا کہ ایڈجوٹنٹ کی کرسی خالی کر دیں۔ شاید اتنے دنوں کی تمہید کا مقصد صرف یہی تھا۔

اُس کے بعد سے مجھے کبھی اس کام پر، کبھی اُس کام پر، پلٹن سے باہر ہی رکھا۔ کہتے تھے پلٹن کا غنڈہ ہے، سب کو خراب کرے گا۔ میری جیسی صلح جو اور پیچھے ہٹنے والی طبیعت کے انسان کے لئے ایسے الفاظ عجیب سے تھے۔ پہلے تو صبح سے شام تک مجھے فائرنگ رینج پر ہی بٹھائے رکھتے۔ پھر یونٹ سے باہر کام ملا تو مجھے بھیج دیا کہ باہر ہی رہے۔ مری کے علاقے میں مقیم جنگی قیدیوں کے گھر والوں کو تنخواہ اور



ہنی مون



۱۰ نومبر ۱۹۷۳



انفٹری سکول، کوئٹہ

تیسرا سفر اڑان

راشن پہنچانے کی ذمہ داری ملتی تھی۔ میں سارا دن پہاڑوں میں ہی پھرتا رہتا، کہیں جیپ پر، کہیں گھوڑے پر اور کہیں پیدل۔ گاؤں گاؤں، گھر گھر جاتا، بہت سے لوگوں سے ملتا، بجھے ہوئے دلوں کو جھوٹی تسلیاں دیتا۔ ہر کوئی یہی پوچھتا، "میرا بیٹا کب واپس آئے گا؟" عورتیں گھروں کی کھڑکیوں سے چھپ چھپ کر دیکھتیں کہ شاید میں کوئی اچھی خبر لایا ہوں، شاید میرا محبوب گھر آ جائے۔ لیکن میرے پاس تو راشن کے تھیلوں اور چند سٹکوں کے سوا کچھ نہ تھا۔ کچھ گھر ایسے بھی تھے جن کے کماؤ بیٹے جنگ میں لاپتہ ہو گئے تھے، جن کی لاش نہیں ملی (missing believed killed)، انہیں تنخواہ بھی نہیں ملتی تھی۔ راشن تو میں دے ہی دیتا لیکن انہیں سمجھانہ پاتا کہ آپ کا نوجوان زندہ ہے یا شہید ہو گیا، گھر آئے گا یا نہیں۔ صرف پیسے بند نہیں تھے، اُن پر رونا بھی بند تھا اور ہنسنا بھی۔

یہاں سے نکلا، تو جانبازوں کی تربیت پر لگا دیا گیا۔ اُن دنوں رضا کار شہریوں کو تھوڑی بہت فوجی تربیت دی جاتی، کہ ضرورت پڑنے پر شہری دفاع کے لئے استعمال کر سکیں۔ پہلے روات میں رہا، پھر راولپنڈی میں وکلاء کی ایک جانباز کمپنی تیار کی۔ سب پڑھے لکھے لوگ تھے، جنہیں فوجی تربیت دینے میں خود بھی بہت کچھ سیکھا۔ گھر ملا نہیں تھا۔ پہلے تو انجم پاپامی کے ساتھ رہی۔ پھر پاپا ریٹائر ہو کر واکینٹ میں رہنے لگے۔ میجر ضامن کی بھی نئی نئی شادی ہوئی تھی، انہوں نے اپنے گھر میں جگہ دی اور کمانڈنگ آفسر کی ناراضگی سہی۔

کچھ عرصے بعد میری تبدیلی کوئٹہ ہو گئی اور یوں، اس سے پہلے کہ میری سالانہ رپورٹ لکھی جاتی، اللہ نے میری جان بچائی۔ میرے کمانڈنگ آفسر نے بہت کوشش کی کہ مجھے روک لیں، مگر میں بچ نکلا۔ کوئٹہ آ کر میں انفنٹری سکول میں پڑھانے لگا۔ تین سال وہاں رہا اور پڑھانے کا بہت مزا آیا۔ فوج میں ایک پڑھانے کا کام اور ایک کمانڈ، دو ہی چیزیں ایسی ہیں جن میں صحیح جاب سیٹیفیکیشن (job satisfaction) حاصل ہوتی ہے۔ شاف میں، گوکہ آپ کسی اونچے درجے کے کمانڈر کے ساتھ کام کرتے ہیں، سیکھنے کو تو ملتا ہے، مگر کام کرنے کا لطف نہیں آتا۔ آزادی بھی سلب ہو جاتی ہے۔ کچھ لوگ اسے پسند کرتے ہیں، کیونکہ بڑے دفتر میں بیٹھ کر رُعب جمایا جاسکتا ہے، لوگوں پر احسان جتایا جاسکتا ہے، اپنے کام کروائے جاسکتے ہیں۔ لیکن میں ایسے کام پر گھٹن محسوس کرتا۔

کوئٹہ آ کر ہم نے اپنا پہلا گھر بسایا۔ انفنٹری سکول نے پہلے تو مجھے گھر دینے سے انکار کر دیا، کیونکہ میری عمر فوج کے قانون کے مطابق ابھی شادی کی نہیں ہوئی تھی۔ پھر ایک ایسا گھر خالی ہوا جو اس قدر بوسیدہ تھا کہ اُسے لینے پر کوئی آمادہ نہیں ہوا۔ مجھے دے دیا۔ اُن دنوں مجھے ایک کٹیا بھی محل لگتی تھی، بس گھر ہونا چاہیے۔ ہم نے بسا لیا۔ چھوٹا سا گھر تھا، جس میں ہم تین سال رہے۔ ہمیں اللہ نے دو بیٹے عطا کیے، عدنان اور ذیشان۔ میں نے جب اپنے بڑے بیٹے کو پہلی بار گود میں لیا تو ایک شفقت کی لہر میرے اندر سے پھوٹ پڑی، تب احساس ہوا کہ باپ کا دل کیا ہوتا ہے، تب اپنے والد کی قدر ہوئی۔ ماں کی محبت کو میں پہنچ نہیں سکتا۔





تیسرا سفر اُڑان

میرے پاس سائیکل تک نہ تھی۔ پیدل دفتر جاتا۔ بمشکل ہمارا خرچہ پورا ہوتا، کبھی بچوں کے دودھ کے پیسے بھی نہ بچتے۔ مانگنے پڑتے۔ ہماری یونٹ کے کیپٹن کیزاد (میجر جنرل بن کر ریٹائر ہوئے)، جو ان دنوں انفنٹری سکول ہی میں تھے، ایسے موقعوں پر میری مدد کو آتے۔ کہتے تھے چادر دیکھ کر پاؤں پھیلایا کرو۔ میں ہنس کر کہتا رومال ہے، چادر کہاں۔ محبت کرنے والے دوست تھے، انھوں نے ہمیشہ میرا خیال رکھا۔

گھر میں، بیٹھنے کے لیے کرسیاں بھی پوری نہیں تھیں۔ بکسوں پر چادر ڈال کر بیٹھنے کی جگہیں بنالیں۔ کھانے کے کمرے کے لیے چھ مختلف قسم کی کرسیاں مختلف جگہوں سے ڈھونڈ کر لایا تھا۔ جب کوئی آتا تو ان ہی کو اٹھا کر ڈرائنگ روم میں رکھ لیتے۔ جوڑوں سے ہلتی تھیں۔ مئی سے پرانے پردے مانگ لایا۔ انجم نے کھول کر پھر سے کھڑکیوں کی ناپ پر سیئے اور لٹکا لیے۔ تمام دشواریوں کہ باوجود ان دنوں ہم بہت خوش رہتے۔ کبھی کبھی کوک بھی پی لیتے۔ انفنٹری سکول کے سینما میں ہر ہفتے فلم دیکھنے جاتے۔ میں سو جاتا، وہ دیکھتی۔

انجم نے کبھی کسی تنگ دستی کی شکایت نہیں کی۔ کبھی کچھ مانگا نہیں۔ کچھ نہ کچھ جوڑ کر وہ گھر کو سجاتی رہتی۔ بچوں کے کپڑے بھی خود ہی سیتی، اور اپنے بھی۔ جو بھی اُلٹا سیدھا وہ پکاتی ہم دونوں اُس پر ہنستے اور مزے لے کر کھاتے۔ ان دنوں ہمارے چہکتے سے گھر میں بہت لوگوں کا آنا جانا رہتا۔ میرے ساتھی زیادہ تر غیر شادی شدہ تھے، ہمیں سے تنگ آ کر گھر کا کھانا کھانے آ جاتے۔ کچھ خود بھی کچن میں پکاتے۔ کچھ نئے نئے شادی شدہ جوڑے بھی آتے رہتے۔ خوب رونق رہتی۔ یہ زندگی کے بہت حسین دن تھے، مگر ایک نامعلوم سادھواں اندر ہی اندر آہستہ آہستہ اُٹھ رہا تھا۔ میں اسے پہچانتا تو تھا، جانتا نہیں تھا۔

میں اپنے دشت سے گزرا تو بھید پائے بہت *

تین سال بعد کوئٹہ کا پیارا سا گھر چھوڑ کر ہم کراچی آ گئے، واپس اپنی پلٹن میں۔ میں پر مموٹ ہو کر میجر بن گیا۔ ان دنوں جنرل ضیاء کا ماشل لاء نیا نیا لگا تھا اور بھٹو صاحب قید تھے۔ یونٹ ملیر کینٹ سے نکل کر کراچی کے مختلف علاقوں میں مارشل لاء ڈیوٹیوں پر پھیلی ہوئی تھی۔ چونکہ ہمارا جنگی علاقہ تھر پار کر کارِ ریگستان تھا، اس لئے مجھے آتے ہی ایک ماہ کے لئے وہاں بھیج دیا گیا، کہ اُس علاقے سے واقفیت ہو جائے اور ریگستان کی مخصوص فوجی تربیت بھی حاصل کر لوں۔

تھر پار کر کے صحرا میں پاؤں رکھتے ہی میں اُس کے سحر میں گرفتار ہو گیا۔ شاید ہمارے دل کی دھڑکنیں ہم آہنگ تھیں۔ شاید شہروں کے جھوٹ سے تنگ آ کر اس ویرانے کے سچ میں دل کو سکون ملتا۔ سردیوں کے دن تھے دھوپ میں شدت ہوتی اور رات کو ٹھنڈ۔ میں کبھی دن کو، کبھی رات کو تھر سے واقفیت کے بہانے جیپ لیے پھرتا ہی رہتا۔ چھوٹی چھوٹی سی گناہم بستیاں ریت کے سمندر میں کھوئی ہوئی تھیں۔ جس تکلیف کی زندگی یہاں کے باسیوں کی دیکھی، وہ پہلے نظر سے نہیں گزری تھی۔ جلے ہوئے کالے ادھموائے جسم، جنھیں ڈھانپنے کے لیے کپڑا بھی پورا نہ تھا۔ سوکھے ہوئے مویشی، سوکھی گھاس کے گھر اور اُس سے بھی سوکھی ہوئی روٹی۔ جب پانی خشک ہو جاتا تو جانور ہانک کر صحرا میں کہیں اور نکل جاتے۔ کہتے تھے ہمیں مٹی سے پانی کی خوشبو آتی ہے۔ گل اٹا شہیہ نیم جان مویشی تھے اور گل بوجھ روتے ہوئے بچے۔ ان ہی کے بچ گھل جاتے۔ ان ویرانوں کے رہنے والوں کو دیکھ کر میں اپنی سوچوں کے ویرانوں میں کھو جاتا۔ نہ جانے کن محبتوں نے انھیں یوں مجبور کیا تھا۔ کیا ان محبتوں کو تنہائی کے خوف نے جنم دیا؟ کیا محبت کمزوریوں میں پلتی ہے؟ کیا یہ آزاد روح کی بیڑی ہے؟ کیا اس کی جڑیں اُگتی ہیں، جو ہمیں زمین بوس کر دیتی ہیں، اُڑنے نہیں دیتیں؟ کیا آزادی محبتوں سے خارج ہے؟

ہر شام کسی ٹیلے پر بیٹھ کر سورج کے ڈوبنے کو دیکھتا۔ یہ وقت مجھے ہمیشہ سے ہی بہت پسند تھا، اور تھر کی شام تو تھی ہی اتنی اُداس۔ خود میں غرق۔ ڈوبتے سورج کی آسمان پر پھیلی ہوئی لالی ریت اپنے اندر سمو لیتی، اور جل اٹھتی۔ پھر ریگستان زندہ ہو جاتا، جیسے مجھ سے کچھ کہہ رہا ہو۔ اُس کا سناٹا میری خاموش تنہائی کو اپنے اندر سمیٹ لیتا۔ ہم ایک ہو جاتے۔ میں اُس میں ڈوب جاتا۔ پھر خاموشی کی دھڑکنیں مجھے سنائی دیتیں، جیسے اپنے ہی راز مجھ پر عیاں ہو رہے ہوں۔ میں گھنٹوں ریت کے کسی اُونچے ٹیلے پر بیٹھا صحرا کے بدلتے رنگ دیکھا کرتا۔ اُس سے باتیں کرتا۔ وہ دُکھ اُسے بتاتا جو میں کسی اور سے نہ کہہ سکتا۔ پھر ٹھنڈی ریت پر لیٹ کر ستاروں کو، جو صرف ویرانوں میں ہی چمکتے ہیں، نکلتا رہتا۔

کراچی میں مارشل لاء ڈیوٹیاں بے مقصد سی ہی تھیں۔ ہمارا کوئی کام نہ تھا۔ صرف وقت ضائع کرتے، یا مارشل لاء ہیڈ کوارٹر کے احکامات پر چند افسران لوگوں کے کام کرواتے پھرتے۔ بس اپنی سپاہ لئے بیٹھے تھے کہ اگر کہیں دباؤ ڈالنا ہو تو فوجی دستے قریب ہی موجود ہوں۔ ہماری موجودگی ہی دباؤ تھا۔

انفنٹری سکول کوئٹہ تین ماہ کے کمپنی کمانڈر کورس پر بھیج دیا گیا۔ کچھ ہی دن پہلے میں وہاں رہ کر آیا تھا، سب ہی جاننے والے تھے۔ کئی دوستوں نے کہا کراچی میں بھابی اور بچوں کو کیوں چھوڑ آئے ہو؟ انھیں بھی بلوالو۔ کچھ نے اپنے گھر رہنے کی دعوت بھی دی۔ میں نے کہا ابھی پڑھائی کا بہت زور ہے، جب آخری ہفتہ ہوگا اور امتحان وغیرہ ختم ہو چکے ہوں گے، پھر بلوالوں گا۔

فیمیلی کے ساتھ رہنے کی اجازت لینی پڑتی تھی، درخواست دے دی۔ اس میں اُس گھر کا پتہ بھی لکھنا تھا جہاں رہنا چاہتے ہوں۔ جس افسر کے پاس درخواست جمع کروانی تھی، اُس سے کہا کہ گھر تو ابھی تک نہیں مل سکا، ابھی تو دوڑھائی مہینے فیمیلی کے آنے میں رہتے ہیں، اتنے میں رہنے کی کوئی جگہ بھی ڈھونڈ لوں گا۔ اُس نے کہا پتہ لکھے بغیر درخواست نہیں دے سکتے۔ اور بھی کئی افسروں نے درخواست دی تھی۔ ایک افسر کو کہیں سے ایک پرانا سا مکان مل گیا سب نے ہی اُس کا پتہ لکھوا دیا۔

کورس چلتا رہا، کوئی جگہ ایک ہفتہ کے رہنے کو بھی نہ ملی۔ اختتام کے قریب انجم اور بچے کوئٹہ آ گئے اور میرے ایک دوست کیپٹن اظہر طارق صاحب، جنھیں سب دوست پیار سے آجی کہتے تھے، کے گھر ہم مہمان بن کر رہ گئے۔ یہ اُن دنوں حوالداروں اور صوبیداروں کے کورس کو پڑھاتے تھے اور میرے کورس سے ان کا کوئی تعلق نہ تھا۔ میرے چھوٹے بھائی راشد شہید کے کورس میٹ تھے اور جب یہ PMA میں کیڈٹ آئے تھے تو میں ان کی پلاٹون کا کارپورل تھا، انھیں کچھ سکھانے اور زیادہ رگڑا دینے پر معمور۔ ان کے بڑے بھائی نجم الثاقب صاحب سرسید سکول میں میرے کلاس فیلو ہوتے تھے، جو مجھے سکول کے دنوں میں بالکل اچھے نہیں لگتے تھے، بعد میں ہماری خوب دوستی ہو گئی۔ اچھے یوں نہیں لگتے تھے کہ ہماری کلاس کے بہترین طالب علم تھے، اور ہم نکتے۔ ہر بار ہمیں ان کی مثال دے کر شرمندہ کیا جاتا تھا، ہمیں کیونکر پسند آتے۔

قانونی طور پر تو کسی انفنٹری سکول کے افسر کے گھر طالب علم کو رہنے کی اجازت نہیں تھی، لیکن یوں ہوتا ہی رہتا تھا۔ ایک افسر کا بیٹا بھی کورس کرنے آیا تھا، ابا اُس ہی کورس کے چیف انسٹرکٹر تھے، اُن ہی کے گھر رہا۔ جب میرا کورس ختم ہوا اور اساتذہ نے نتیجے بنائے تو میری پہلی پوزیشن بنی۔ کچھ اللہ کا کرنا ایسا تھا کہ مجھے نہایت ہی اچھے اساتذہ ملے، ایک سے بڑھ کر ایک۔ اُن سب نے ہی میرا بہت خیال کیا۔ میری زندگی سنوارنے میں اُن کا بڑا ہاتھ ہے اور میں تا عمر ان کا مشکور رہوں گا۔

تیسرا سفر اُڈان

جو افسر دوسرے نمبر پر تھا، اُس کی یونٹ کے ایک استاد نے اپنے ایک دوست استاد کے ساتھ مل کر میرے خلاف رپورٹ لکھ کر بھیج دی، تاکہ اُسے پہلی پوزیشن دلوائی جاسکے۔ لکھا کہ نہ صرف میں ایک انفنٹری سکول کے افسر کے گھر رہ رہا ہوں، بلکہ جو فیملی کے ساتھ رہنے کی درخواست دی تھی اُس میں جھوٹا پتہ بھی لکھوایا ہے۔ اس لئے میرا نظم و ضبط (discipline) اور کردار (character) دونوں ہی ٹھیک نہیں۔ سزا کا مستحق ہوں۔ کل دو سو نمبر کا کورس تھا، سزا میں زیادہ سے زیادہ آٹھ نمبر کاٹے جاسکتے تھے۔ میرے آٹھ نمبر کٹ گئے، جس سے میرے کل نمبر چار فیصد کم ہو گئے۔ یہ سب کچھ آخری دن کیا گیا۔ رزلٹ بن چکے تھے، پھر شام کو دوبارہ نمبروں کا حساب کیا گیا۔ میں چار فیصد نمبر کم ہونے کے باوجود پہلی پوزیشن پا گیا۔ دوسرے دن صبح کورس کی اختتامی تقریب میں کمانڈانٹ سے پہلی پوزیشن پانے پر انعام لیا۔ غلطی تو میری ہی تھی، لیکن ایسی بھی نہیں کہ ذبح کیا جاتا۔ مگر اللہ نے شاید کوئی اور ہی آستانہ رکھا ہو۔

جلتے ہوئے پروں سے اُڑا ہوں، مجھے بھی دیکھ *

کوئٹہ سے واپس آیا تو چیف مارشل لاء ایڈمنسٹریٹر سندھ (CMLA Sind) کے ہیڈ کوارٹر میں بھیج دیا گیا۔ اُن دنوں مارشل لاء کے دفتر پوری طرح قائم نہیں ہوئے تھے۔ کچھ افسران کو عارضی طور پر اکٹھا کر کے اسے کھڑا کیا گیا تھا۔ ایک مرتبہ گورنر صاحب کے ساتھ ہیلی کاپٹر پر چند دنوں کے لئے اندرون سندھ کے دورے پر بھی گیا۔ غربت کی بے نور زندگی کو قریب سے دیکھا اور محسوس کیا۔ عرضیوں کے انبار جمع کئے۔ سرکاری ملازمین کے کام نہ کرنے کی مجبوریوں کے قصے سنے۔ حکومت کے کارندوں کے آگے گورنر صاحب کی بے بسی دیکھی اور واپس آگئے۔ روشنیوں کے شہر کراچی میں اندھیرے دیکھے، طاقتوروں کی بے حسی بھی اور درد کا سمندر بھی، جو اس قدر پھیلا ہوا تھا کہ میرے بس میں اس کی ایک لہر کو روکنا بھی نہ تھا۔

میں صبح سے شام تک کبھی فائلوں میں، کبھی سڑکوں پر گھومتا ہی رہتا۔ ہر وقت دل پر ایک بوجھ سا محسوس ہوتا کہ اصل چیزوں پر تو کسی کی نظر ہی نہیں۔ سارا وقت کچھ غیر ضروری سے کام ہوتے رہتے، جن میں آدھے تو محض دکھاوے کے ہوتے اور بقایا حضور کو خوش کرنے کے لئے۔ میرے چھوٹے سے ذہن میں جو ایک حکمران کی ترجیحات کی فہرست تھی، اُس میں سے کچھ بھی ہوتا دکھائی نہ دیتا۔ کسی کو کچھ کہتا تو جواب ملتا کہ خاموشی سے اپنا کام کرو، جس چیز کی ذمہ داری نہیں اُس پر وقت ضائع نہ کرو۔ میں سر پھینکے چپ چاپ اپنا کام کرتا رہا۔ پھر زبان میں کچھ اعصابی نقص پیدا ہو گیا، جس کی وجہ سے وہ سوج گئی اور میں بمشکل بولنے کے قابل رہ گیا۔ شاید چُپ رہنے کی سزا۔ ڈاکٹر نے سکون کی دوا دی اور کہا زیادہ سوچا نہ کریں۔ ویسے بھی میرا وہاں رہنا کچھ لوگوں کو پسند نہ تھا، واپس پلٹن بھیج دیا گیا۔

پلٹن میں نئے کمانڈنگ افسر، کرنل سعید، جو فوج میں سعید کٹاک کے نام سے جانے جاتے تھے، کسی اور پلٹن سے آچکے تھے۔ ان کا تعلق SSG سے تھا اور مشرقی پاکستان میں بارڈر کے پاران کی بے مثال خدمات تھیں۔ میں ان سے ملا تو چونک پڑا، پھر یہ بار بار سب کو چونکاتے ہی رہے۔ نہایت بے باک اور نڈر طبیعت کے مالک تھے، جیسے کسی کی پرواہ ہی نہ ہو۔ اپنی زندگی میں کوئی شرمندگی نہیں پالی۔ نہایت سادہ، شریر بچوں سی ہنستی ہوئی طبیعت، کوئی پھوں پھاں نہیں، صاف دل، صاف گو۔ جو منہ میں آتا کہتے، جو دل میں آتا کرتے۔ ہم سے ایسے ملے جیسے بڑے بھائی ہوں، لگا جیسے ہمیں پناہ گاہ مل گئی۔

میں نے کہہ دیا کہ مجھے کسی شخص کے سامنے نہ بھیجا، میں اپنے انوکھے بیوقوفوں کو اس میں کھل کے ساتھ بھیجا ہوا
 تھا۔ ان سے عرصہ پہلے ان کی انوکھی باتوں کا ہلکا سا تجربہ کیا تھا اور ان کے پاس ان کی اپنی باتوں کی جتنی باتوں سے کہہ سکتے تھے
 انہوں نے ان کے سامنے یہ سب کچھ بیان کیا تھا۔ ان کی باتوں کو ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس
 ان کی باتوں کو ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس
 ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس
 ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس ان کے پاس

[illegible]

یادگار میں بار سے میں ادا کاتے ہادی ہو چکے تھے اور اندھار میں بھی آپکا حق اس کے لئے بہت نکلے ہے کہا کیا اس کا کوئی
درخش کلی بکری میں نہیں رہ کر سے میں کر رہے۔ پھر اب وہ نہ کر سے میں آؤ تو پھر کس دلوں سے آئی نہ کہا کیا حق کران کے جانے جو نے
فریجے کے طاق آئے ہی رانی لفظی کا قرار کر لیا اور سزا پائی۔ تمرا سے کڑے کا نے نہیں گئے۔ صرف دلوں کا مارنے کے لئے دکھ اور حقانہ
ہانے لکھا عرض اٹل میں۔ ادا کا۔ یہ میرے عرضی کو رتے کا پڑا اور آفری کس حق۔ پھر مجھے توبہ کی کرا دیا گیا۔

چند دن بعد مکے مدینہ کا سفر کیا اور کئی مکانوں پر کھانا کھا کر پھر پست پر کھانا کھا کر کئی دن تک رہا۔

تیسرا سفر اُڑان

رپورٹ لکھ کر بھیجی کہ اس کام کے لئے کم از کم دو افسر درکار ہیں اور کچھ زیادہ شاف بھی ہونا چاہیے، کیونکہ ساری رات جہاز آتے ہیں اور ایک افسر اور اس شاف کے ساتھ یہ کام نہیں ہو سکتا۔ مزید یہ کہ کسٹم والے کھلے عام لوگوں سے پیسے لیتے ہیں، مجھے قانونی اختیار چاہیے کہ میں ان کو رنگے ہاتھوں پکڑ سکوں۔ پہلے تو کئی دن کوئی جواب نہ ملا، پھر کئی بار فون کرنے پر کہا گیا کہ آپ صرف ہمیں رپورٹ بنا کر بھیج دیا کریں، اُن کے کام میں مداخلت نہ کریں۔ یہ احکام زبانی ہی دیے، لکھ کر دینے پر آمادہ نہیں تھے۔ یعنی بیٹھ کر تماشہ دیکھیں اور تماشے کی تصویر کاغذ پر اتار دیں۔ میں نے وہاں جانا ہی چھوڑ دیا، کیوں کہ میری موجودگی میں اگر یہ سب ہوتا رہتا تو ہر دیکھنے والا یہی تصور کرتا کہ فوج بھی اس کھیل میں شامل ہے، حصہ لیتی ہے۔

ایک دن خبر ملی کہ میرے رشتے کے چچا، جن کے گھر میں کالج کے دنوں میں رہتا تھا، کہیں باہر سے واپس آرہے ہیں۔ ریٹائر ہونے کے بعد مشرق وسطیٰ میں کہیں نوکری کرتے تھے۔ بہت عرصے بعد لوٹ رہے تھے۔ سب کو پتا تھا کہ میری ڈیوٹی ایئر پورٹ پر لگی ہے۔ کہا گیا کہ وہ خاصہ سامان لا رہے ہیں، انھیں کسٹم سے پار کر ادینا۔ پھر جب میں موقع پر نہ پہنچا تو بہت باتیں سننی پڑیں، مگر میں کس منہ سے انھیں لینے جاتا۔ کیا چوری میں شامل ہو جاتا؟ کیا اپنے لئے وہی کرتا جس کے خلاف دنیا سے لڑتا تھا؟

کچھ ہی دن بعد مارشل لاء ہیڈ کوارٹر سے حکم آیا کہ فلاں جنرل صاحب کی بہن امریکہ سے آرہی ہیں اُن کو "ریسیو" (receive) کر لیں۔ میں نے کام کی تفصیلات پوچھیں تو پتا چلا کہ ان کا سامان کسٹم سے پار کرانا ہی مقصود تھا، تاکہ انھیں کسی قسم کی "وقت" نہ ہو۔ میں اُن کا جہاز آنے پر انھیں لینے نہ گیا، اور سنا کہ اُن کو کافی زحمت اٹھانی پڑی، کسٹم والوں نے بہت تنگ کیا۔ مجھ سے کسی نے کچھ نہ پوچھا، بس دوسرے دن مجھے اس کام سے ہٹا دیا گیا۔

کچھ عرصے بعد کراچی پورٹ کے نزدیک ایک بہت بڑے گودام میں، جو کئی میلوں پر پھیلا ہوا تھا، آگ لگ گئی۔ بعد میں راز کھلا کہ لگی نہیں، لگائی گئی تھی، اور پہلے بھی کئی مرتبہ یہ ہو چکا تھا۔ یہ کراچی پورٹ ٹرسٹ (KPT) کا گودام تھا اور اس میں کپاس کی گھاٹھیں اور چاول رکھا تھا جو ملک سے باہر جانا تھا۔ ہماری پلٹن سے ایک کمپنی فائر بریگیڈ والوں کی امداد کے لئے بھجوائی گئی۔ پھر اگلے دن میں اپنی کمپنی لیکر پہلی کمپنی کی بدلی کرنے پہنچ گیا۔ آگ تو زیادہ تر بجھائی جا چکی تھی، لیکن ابھی بھی کہیں کہیں سلگ رہی تھی۔ بڑے بڑے لوہے کے کئی گودام موم کی طرح پگھل چکے تھے۔ جلے ہوئے علاقے کے کناروں پر اوپر سے تھوڑی تھوڑی جلی ہوئی جو کپاس کی گھاٹھیں تھیں، علیحدہ کر کے گودام کے دوسرے مقام پر پہنچائی جا رہی تھیں، تاکہ اگر آگ دوبارہ بھڑک اُٹھے تو بچا ہوا مال ضائع نہ ہو۔ کچھ گودام کے مزدور مل گئے اور کئی ٹرک گودام والوں نے کرائے پر لئے۔ کپاس اور چاول کے متعلقہ محکموں کے افسران بھی جگہ پر موجود تھے۔ گاڑیوں پر ہم کپاس کی گھاٹھیں لاد

دیتے۔ پھر جس علاقے میں آگ لگی تھی وہاں سے وہ کونینز روڈ کے گیٹ سے نکلتیں، اور چکر لگا کر بندر روڈ کے گیٹ سے واپس گودام میں داخل ہوتیں، اور وہاں انھیں رکھ دیا جاتا۔

کچھ دیر بعد مجھے پتا چلا کہ ٹرکوں کی تعداد کم رہ گئی ہے۔ جو ٹرک ایک مرتبہ گیٹ سے نکلتے، کم ہی واپس آتے، وہ بھی بہت دیر بعد۔ جب گودام والوں سے پوچھا کہ کیا ماجرہ ہے، تو انھوں نے کہا کہ کام زیادہ ہے، شاید تنگ آ گئے ہوں، اس لئے واپس نہیں آرہے۔ ایک دوست کا کراچی کے صنعتی علاقے (SITE) سے فون آیا کہ جلی ہوئی کپاس کی گانٹھوں سے بھری گاڑیاں تو اس علاقے میں جاتی ہوئی دیکھی ہیں۔ پھر میں نے دونوں گیٹوں پر سنتری کھڑے کر دیئے اور ہر گاڑی میں ایک ایک سپاہی بٹھا دیا۔ جو گاڑی گیٹ سے باہر جاتی اپنا نمبر اور وقت نوٹ کراتی اور دوسرے گیٹ سے اندر آنے پر بھی یہی ہوتا۔ مواصلاتی نظام بھی قائم کر دیا اور معاملہ قابو میں آ گیا۔

ایک صاحب کچھ دیر سے میرے ساتھ پھر رہے تھے۔ پہلے تو میں سمجھا کہ گودام کے افسر ہیں، کیونکہ ہماری امداد میں سب کو ہدایات جاری کر رہے تھے۔ بہت خوش مزاج طبیعت کے تھے اور کافی دیر سے ہمارا ہاتھ بٹا رہے تھے۔ ساری رات ہی ہم کام کرتے رہے۔ باتوں باتوں میں مجھ سے کچھ ذاتی معلومات حاصل کیں، آہستہ آہستہ فوجی افسروں کے مالی حالات اور تنخواہ پر تنقید کی۔ پھر کہا "میں بھر صاحب آپ نے گاڑی کوئی نہیں رکھی۔ میرے دوست کا شوروم ہے، وہ باہر سے گاڑیاں منگواتا ہے، آپ صبح چلیں جو پسند آئے لے لیں۔" کچھ دیر تو میں سمجھا نہیں، اور کہا کہ بھائی جب پیسے ہوں گے لے لوں گا۔ جب انھوں نے کہا کہ پیسے کی کیا بات ہے، اس کی بعد میں دیکھی جائے گی، جب کبھی ہوں گے دے دیجئے گا، تب مجھے بات سمجھ میں آئی۔ پھر وہ وہاں سے ایسے بھاگے کہ دوبارہ نظر نہ آئے۔ راز کھلا کہ اُس سرکاری انشورنس کمپنی کے نمائندے تھے جس نے اس گودام کی انشورنس کی ہوئی تھی۔ سب ہی ملک کو جلانے میں شامل تھے۔

کچھ دیر بعد مزدور غائب ہونے لگے، پتا چلا کہ انھوں نے ہڑتال کر دی ہے، کہ فوجی ہم سے بندوق کی نوک پر کام کر رہے ہیں۔ میں بہت حیران ہوا۔ میرے تو سارے سپاہی بھی مزدوروں کے ساتھ کام کر رہے تھے اور میں بھی وہیں تھا۔ سب کچھ تو ٹھیک چل رہا تھا، کوئی مسئلہ نہیں تھا۔ ظاہر ہے کام سخت تھا، اور ہم بہت دیر سے کر رہے تھے۔ ضروری تھا کہ بچا کھچھا مال نکال لیا جائے، اس سے پہلے کہ سلگتی ہوئی آگ پھر بھڑک اٹھے۔

پہلے تو کاشن ایکسچینج بورڈ کے ایک سینئر افسر رات گئے مجھے ملنے آئے۔ سوٹ میں ملبوس، اکڑا ہوا جسم، بجھا ہوا چہرہ لئے۔ اپنا تعارف کرایا۔ پھر کہا کہ آپ ملک کا بہت بڑا نقصان کر دیں گے اگر آپ نے ہمارے کام میں اس قسم کی رکاوٹیں ڈالیں۔ میں نے کہا ہم تو آپ کی

مدد کو آئے ہیں۔ مزدوروں کو آپ سنبھال لیں باقی میرے سپاہی جو مدد کر سکتے ہیں حاضر ہیں۔ آپ بتائیے کیسے کام کیا جائے؟ انھوں نے فرمایا کہ تمام فوجی جو سنتری ڈیوٹی کر رہے ہیں ہٹائے جائیں۔ اُن کو پریشانی صرف گیٹ پر لگے ہوئے حساب کتاب کی اور ہر ٹرک میں بیٹھے ہوئے فوجی کی تھی، جن کا مزدوروں سے کوئی تعلق نہ تھا۔ یقیناً چوری میں ملوث تھے۔ میں نے اس بات سے انکار کر دیا۔ گودام والوں ہی کے مزدور تھے اور انھوں نے ہی ہڑتال کروائی تھی۔ کہا جا رہا تھا کہ آگ بھی کاٹن اور رائس ایکسپورٹ کارپوریشن والوں ہی نے انشورنس والوں سے مل کر لگوائی تھی، کیونکہ زیادہ سامان پہلے ہی چوری ہو چکا تھا۔ حکومت کی انشورنس کمپنی بھی، باقی حکومت کی طرح، بنا مالک ہی ہوتی ہے۔ شاید صبح ہونے میں کچھ دیر تھی، ابھی اندھیرا ہی تھا۔

پو پھوٹے ہی مارشل لاء ہیڈ کوارٹر کی طرف سے ایک بریگیڈیئر صاحب چھڑی ہلاتے ہوئے تشریف لے آئے۔ کہنے لگے کیا ہو رہا ہے؟ میں نے بتایا، تو کہتے ہیں کہ آپ کے خلاف کاٹن کے محکمے کے افسران کو بہت شکایت ہے۔ میں نے مسئلے کی تفصیلات بیان کیں تو کہنے لگے، "آپ کا اس سے کیا تعلق؟ کوئی چوری کرتا ہے یا بیچتا ہے تو آپ اس کے ذمہ دار تو نہیں۔ آپ نے سارا کنٹرول کیسے سنبھال لیا؟ حکومت کا محکمہ ہے اُسے اپنا کام کرنے دیں۔" میں نے کہا، "جب تک فوج یہاں موجود ہے، اگر کوئی چوری ہوگی تو وہ فوج کے نام پڑے گی۔ اگر آپ سمجھتے ہیں کہ ہماری موجودگی سے رکاوٹ ہے، تو ہمیں یہاں سے ہٹالیں۔ یہ مجھے منظور نہیں کہ میرا سپاہی وردی پہن کر کھڑا ہو، چوری ہو رہی ہو اور وہ منہ دوسری طرف کر لے۔" بریگیڈیئر صاحب میری بات سن کر بہت ناراض ہوئے۔ کہنے لگے کہ پھر آپ اپنی کمپنی یہاں سے واپس لے جائیں۔ یہ کہہ کر، ناک سے عجیب سی پھنکاریں نکالتے ہوئے، چلے گئے۔ کچھ دیر بعد کرنل سعید آ گئے، میرے کام کی تعریف کی اور کہا کہ آپ لوگوں نے ساری رات بہت کام کیا ہے، اب اپنی کمپنی کو واپس لے جائیں۔ آپ کی جگہ دوسری کمپنی آرہی ہے۔ نہ جانے بریگیڈیئر صاحب نے انھیں کیا بتایا ہوگا۔ انھیں کیا پتا کہ اصل ماجرا کیا ہے۔ میں نے بھی انھیں اپنی بے سود کی لڑائی میں گھسیٹنا مناسب نہ سمجھا۔ تھکے ماندے سپاہیوں کو جمع کیا اور گاڑیوں میں بٹھا کر واپس لے گیا۔ عجیب کھیل چل رہے تھے، جس میں فوج کے کچھ اعلیٰ افسران بھی کھلاڑی تھے۔ میرے چھوٹے سے ذہن میں خلاء سا بھر گیا۔

اُن دنوں مجھے کہیں سے تیرہ نور کا گایا ہوا فیض احمد فیض کا کلام مل گیا۔ بہت سنا، رات کی تنہائی میں۔ بہت رویا۔ لگا جیسے دل سے نکلتا ہو۔ پھر میں نے اُس کو اپنا بنا لیا۔ کافی عرصے بعد ضیاء الدین کا پڑھا ہوا فیض صاحب کا کلام بھی بہت شوق سے بار بار سنتا۔ یہ بھی میرا ہوا۔ شکیب جلالی کو بھی پہلی بار انہی دنوں پڑھا اور ان کے اشعار میں اپنے دل کا عکس پایا۔ پھر بار بار پڑھا۔ لے لیا۔ نئے رونے دل میں پلنے لگے، شاید نئے خواب بھی۔

ہر گام پہ جگنو سا چمکتا ہے جودل میں *

پھر اللہ نے ہماری دعائیں سن لیں۔ میرے دونوں بیٹے بھی اپنے ننھے ننھے ہاتھ اٹھائے اللہ سے دعا کرتے۔ اللہ نے ہمیں ایک گڑیاسی بیٹی عطا کی۔ سارا گھر ہی بہت خوش تھا۔ میرے والدین بھی ملیر کینٹ میں میرے گھر رہتے تھے اور چھوٹا بھائی ساجد بھی۔ انجم بھی بہت خوش تھی، ہم نے کہا اب سارہ کے آنے سے ہمارا گھر انہ پورا ہو گیا۔ مگر کیا پتا تھا کہ اللہ کا ایک تحفہ ابھی رہتا ہے۔

ہماری پلٹن کو سیالکوٹ جانے کے احکامات مل گئے۔ ہم مارشل لاء ڈیوٹیاں چھوڑ کر کراچی سے ملیر کینٹ آ گئے، تاکہ جانے کی تیاری کر سکیں۔ اس ہی عرصے میں سٹاف کالج کوئٹہ کے داخلے کے امتحان ہوئے۔ یہ مقابلے کا امتحان ہوتا ہے اور جتنی سیٹیں ہوتی ہیں، سب سے زیادہ نمبر لینے والے اُتنے افسران کورس پر جاتے ہیں۔ یہ کورس بہت اہم ہے اور فوج میں ترقی پانے کے لئے لازم قرار دیا گیا ہے۔ مجھے اس امتحان میں طلبہ کی نگرانی پر لگا دیا گیا، حالانکہ میں نے خود ابھی یہ امتحان نہیں دیا تھا۔ اور بھی کئی میجر اس کام پر معمور تھے اور ایک کرنل صاحب امتحان کے پریذیڈنٹ لگے تھے۔ پہلے پرچے سے ایک دن قبل مجھے بتایا گیا کہ ہماری یونٹ کے ایک سینئر میجر صاحب بھی امتحان دے رہے ہیں اور اُن کا یہ آخری موقع ہے۔ مجھ سے کہا گیا کہ تمہیں اس لئے اس کام پر لگوایا ہے کہ اُن کا خیال رکھو۔ میں نے کہا امتحان انہوں نے دینا ہے، میں کیا خیال رکھوں گا؟ اگر تیاری کی ہے تو پاس ہو جائیں گے، ورنہ نہیں۔ تو کہا گیا کہ اُن کے مستقبل کا سوال ہے، کچھ تھوڑی بہت مدد کر دینا۔

صبح جب امتحان شروع ہوا تو ہال میں عجب تماشا تھا۔ کرنل صاحب اپنی میز کے پیچھے خاموش بیٹھے رہے اور امتحان کی نگرانی کرنے والے میجر صاحبان گھل کر لوگوں کی مدد کرتے رہے۔ میں ہی اکیلا لوگوں کو با آواز بلند روکتا ٹوکتا رہا۔ میری یونٹ کے وہ میجر صاحب جو امتحان دے رہے تھے مجھ سے امداد کے طالب رہے، مجھے اشاروں میں مخاطب بھی کرتے رہے اور میں انہیں نظر انداز کرتا رہا۔ جب پہلا پرچہ ختم ہو گیا اور ہم سب، پرچے جمع کر کے کرنل صاحب کی میز کے گرد جمع ہو گئے، تو میں نے سب کی موجودگی میں اُن سے کہا کہ آج ہال میں بہت نقل چلی ہے، جس میں وہ تمام لوگ شامل ہیں جو اسے روکنے پر معمور کئے گئے ہیں۔ اگر کل بھی یہی ماحول رہا تو مجھے اس بات کی سرکاری طور پر لکھ کر شکایت کرنی پڑے گی۔ کرنل صاحب نے سب کو تنبیہ کی کہ ایسا کرنے سے اجتناب کریں۔

تیسرا سفر اڑان

باقی پرچے کافی بہتر ماحول میں ہو گئے، پھر بھی مجھے کچھ نہ کچھ لوگوں کو ٹوکتے رہنا پڑا۔ آخری پرچے کے بعد کرنل صاحب نے سب کے سامنے میرا بہت شکریہ ادا کیا کہ آپ کی وجہ سے امتحان صحیح ماحول میں ہو گیا۔ نہ جانے کتنے لوگوں نے دل میں میرے خلاف بغض رکھا، کہہ نہیں سکتا۔ مگر میری پونٹ کے میجر صاحب مجھ سے نالاں رہے اور یہی شکوہ کرتے رہے کہ میں اتنا خود غرض ہوں کہ اُن کا کیریر تباہ کر دیا۔ پھر کچھ اوروں نے بھی ان کے ساتھ میرے بارے میں یہی رائے قائم کی۔

یقیناً ہمیں ایک دوسرے کی مدد کرنی چاہیے، مگر اس طرح نہیں کہ کسی اور کا نقصان ہوتا ہو، اُس کا حق مارا جاتا ہو، یا تنظیم کا ہی نقصان ہو۔ یہ مقابلے کا امتحان تھا، اور کورس پر جانا اُس کا حق تھا جس نے محنت کی ہو، جس میں صلاحیت ہو۔ کیا کتبہ پروری کی خاطر دوسروں کا حق مارا جائے اور نا اہل لوگوں کو ترقی دے کر فوج اور ملک کا بھی نقصان کیا جائے؟ فوج میں ایسی ہی سوچیں اسے تباہ کر رہی ہیں۔

کچھ دنوں بعد خبر ملی کہ جنرل ضیا الحق کے آنے کا پروگرام ہے، اور ہماری یونٹ میں تربیت دیکھنے آئیں گے۔ یہ ۱۹۷۹ء کے شروع کی بات ہے۔ میں نے کمانڈنگ آفسر سے کہا کہ ہم نے تو سال بھر سے کوئی تربیت نہیں کی اور ہم تو سامان باندھ رہے ہیں۔ کسی اور یونٹ میں تربیت دکھا دیں، ہم تو جھوٹ ہی دکھا سکتے ہیں۔ مگر حکم تھا کہ یہی ہو گا۔ تیاریاں شروع ہو گئیں۔ اتنے میں میرا تبادلہ پاکستان ملٹری اکیڈمی (PMA) ہو گیا۔ میں نے کرنل سعید سے کہا کہ مجھ سے تو صدر پاکستان سے اتنا بڑا جھوٹ نہیں بولا جاسکے گا، اگر آپ مجھے مجبوراً اُن کے سامنے لاتے ہیں تو میں سچ بات ہی بیان کروں گا، سب کے لئے دشواری ہوگی۔ اور یہ بات میرے لئے تکلیف کا باعث ہوگی کہ میں اوروں کے لئے دشواریاں پیدا کروں۔ بہتر ہے کہ آپ مجھے یا تو PMA روانہ کر دیں یا کچھ دنوں کے لئے رخصت پر بھیج دیں۔ وہ ہنس کر کہنے لگے اگر تم اتنا حوصلہ رکھتے ہو تو وہ کہو جو تمہارا دل کہتا ہے، میں تمہارے ساتھ کھڑا ہوں گا۔ میں نے کہا کہ بریگیڈ کمانڈر کو بتا دیں، وہ یہ نہ کہیں کہ تم لوگوں نے میری پیٹھ میں چھرا گھونپ دیا۔

دوسرے دن مجھے بریگیڈ کمانڈر نے بلا لیا۔ میں دیئے ہوئے وقت پر دفتر پہنچا تو پتا چلا کہ وہ کہیں باہر گئے ہوئے ہیں۔ بریگیڈ میجر سے کہہ گئے تھے کہ مجھے سمجھائے۔ میں نے اُن سے کہا کہ آپ ہی بریگیڈ کمانڈر کو سمجھائیں کہ ہم نے مارشل لاء ڈیوٹیوں کی وجہ سے سارا سال تربیت نہیں کی۔ اگر ہم آرمی چیف اور صدر کو غلط تصویر دکھائیں گے تو یہ بہت بڑا دھوکہ ہوگا، اور میں اس دھوکے میں شامل نہیں ہو سکتا۔ میں نے مذاق میں یہ بھی کہا کہ یا تو کور کمانڈر صاحب مجھے لکھ کر دے دیں کہ آج کے بعد مجھے اپنی نوکری بنانے کے لئے دھوکہ دہی کی اجازت ہوگی، تو پھر میں اس دھوکے میں بھی شامل ہو جاتا ہوں۔ یہ تو ٹھیک نہیں کہ سینئر افسران کی نوکری بنانے کے لئے تو دھوکے کی اجازت ہو، لیکن اپنی خاطر دھوکا دوں تو لکایا جاؤں۔ بہر کیف میں اُن سے یہ کہہ کر واپس آ گیا کہ اگر مجھے کچھ کہنا پڑا تو سچ ہی کہوں گا، بعد میں مجھے الزام نہ دینا۔

تیسرا سفر اڑان

مختلف قسم کی تربیت کی کلاسیں ترتیب دی گئیں۔ پچھلی تاریخوں سے شروع کئے ہوئے جھوٹے تربیتی پروگرام بنے، اور جو دکھانا تھا اس کی ریہرسلیں شروع ہو گئیں۔ ایک انفنٹری پلٹن کی اتنی پائے کی تربیتی تنظیم میں نے نہ اس سے پہلے کبھی دیکھی تھی اور نہ اس کے بعد کبھی۔ میں نے کمانڈنگ آفسر سے معذرت کی کہ مجھے ریہرسلوں میں نہ شامل کریں، میں آخری دن حاضر ہو جاؤں گا۔ میرا حوصلہ نہیں تھا کہ اپنے سپاہیوں سے جھوٹ کی مشقیں کرواتا۔ انھوں نے اجازت دے دی۔ بریگیڈ کمانڈر صاحب خود آکر تربیت کی مشقیں دیکھتے اور میرا تربیتی کمپ سب سے آخر میں لگوا دیا، اس امید پر کہ پریذیڈنٹ تھوڑا بہت دیکھ کر چلے جائیں گے اور مجھ سے سامنا نہ ہوگا۔

پھر وہ دن آگیا۔ صدر صاحب کے آنے سے پہلے ایک مجمع جمع ہو گیا۔ فوج اور رسول انتظامیہ کے لوگوں کے علاوہ بہت سے اخباروں کے رپورٹر اور ٹی وی کیمرے وغیرہ۔ ہم تمام آفسر کوارٹر گارڈ (Quartermaster) کے باہر قطار میں کھڑے تھے۔ صدر آئے، سب سے ہاتھ ملایا، پھر کوارٹر گارڈ کے معائنے کے لئے چلے گئے۔ اتنے میں ہم سب تیز تیز اپنے اپنے تربیتی علاقوں میں پہنچ گئے۔ میں پہلی بار اپنے علاقے میں آیا تھا، کچھ پتا نہیں تھا کہ کیا ہو رہا ہے اور کیا دکھانا ہے۔ تین جگہ بمبکی بنی ہوئی چھت کے نیچے کلاسیں تیار بیٹھی تھیں۔ سب کو سبق زبانی یاد تھے۔ اصل تربیت تو تھی نہیں، بس ایک ڈرامہ تھا۔ مجھے صوبیدار صاحب نے بتایا کہ آپ نے فلاں مقام پر صدر کو خوش آمدید کہنا ہے اور پھر تینوں کلاسوں میں لے جانا ہے۔ جب صدر اس تربیتی کلاس میں پہنچے جس کے بعد میرے پاس آنا تھا، تو میں بتائے ہوئے مقام پر پہنچ کر کھڑا ہو گیا۔

اکیلا راستے پر کھڑا تھا، سچ کی قیمت چکانے۔ آج میری قربانی ہوگی۔ انتظار کر رہا تھا اُن کا جن کو میں محسن کہتا تھا، میرے ولی۔ میرے بزرگ۔۔۔ وہ جن کے حکم پر میں جان ہتھیلی پر لئے آگ میں کودنے کو تیار تھا۔ یہی تو میرے ساتھی ہیں، مجھے ڈر کیسا؟ یہی تو میری چھت ہے۔ مگر آج سب ہی دشمن کے روپ میں تھے۔ آج ان کے ہاتھوں میں چھریاں دکھائی دیتی تھیں۔ سچ اپنے ساتھ کسی تنہائی لایا ہے، اپنے ہی دشمن ہو گئے۔ مجھے بہت عرصہ پہلے ہی اس سنسان راہ کی تنہائی کا احساس ہو چکا تھا۔ نہ صرف یہ کہ کوئی میرے ساتھ چلنے پر آمادہ نہیں تھا، بلکہ میرے ایسا کرنے سے میرے ساتھیوں پر آٹھ آتی۔ وہ برا محسوس کرتے۔ کچھ کہہ بھی نہ سکتے۔ پھر مجھ سے صرف سطحی سی باتیں کرتے، جو مجھے آتی نہیں۔ میری خاموشیوں کو یوں خوراک ملتی رہتی۔ مگر میں نے کبھی کسی پر اپنے ساتھ چلنے کا بوجھ نہیں ڈالا۔ اپنے دوست نہیں کھوئے۔ پھر بھی تا عمر سب ہی دوستوں کی مسکراہٹیں ویسی ہی بے نور پائیں جیسا اُس دن کی تنہائی میں میرا دل بے نور تھا۔

پچھلی کلاس کے گرد لوگوں کا ایک جھوم جمع تھا۔ مجھے پریشانی ہوئی کہ فوج کے اندر کی کمزوری اتنے بڑے مجھے کے سامنے کیسے بتاؤں۔ کچھ دیر میں مجمع سچ سے کھلا اور صدر صاحب نمودار ہوئے۔ اُن کے ساتھ کور کمانڈر، ڈویژن کمانڈر، بریگیڈ کمانڈر اور کمانڈنگ آفسر،

سب میری طرف بڑھنے لگے۔ باقی مجمع ابھی پیچھے تھا۔ میں نے سوچا بات کرنے کا یہی موقع اچھا ہے۔ میرے ذہن میں بہت تناؤ تھا، یقیناً چہرے پر بھی نظر آ رہا ہوگا۔ جو کرنے جا رہا تھا، اُس کے خدشات سے بے خبر نہیں تھا۔ بہت سی تصویریں ذہن کے پردے پر سے گزر گئیں۔ کورکمانڈر، ڈویژن کمانڈر اور بریگیڈ کمانڈر کی موجودگی میں جنرل ضیاء کو بتانا تھا کہ آپ کو سب مل کر دھوکا دے رہے ہیں۔ میں اکیلا ان سب کے مد مقابل کیسے ڈٹ سکوں گا؟ جب یہ قریب آئے تو میں نے سیلوٹ کیا اور انگریزی میں جنرل ضیاء کو مخاطب کیا، "سر، ہم نے آپ کو دکھانے کے لئے آج ایک تربیت کا شو (show) ترتیب دیا ہے۔" کچھ میرے الفاظ سن کر اور شاید میرا انداز بھی عجب سا رہا ہوگا، اُن کو میری بات پسند نہ آئی۔ نہ خوش آمدید کہا، نہ مسکرایا، نہ جسم میں پھرتی۔ بھلا ایسے ملتے ہیں تین تاجوں والے شاہ کو، جو چیف مارشل لاء ایڈمنسٹریٹر بھی ہو، صدر پاکستان بھی اور پاک فوج کا سربراہ بھی۔ پھر دین محمدؐ کی پگ بھی سجائی ہو۔ اُنھوں نے غصے بھری نظر مجھ پر ڈالی، اور مجھے نظر انداز کرتے ہوئے، آپس میں بات کرتے آگے نکل گئے۔ میں ساتھ ہولیا۔ سوچا کہ صاف کہہ بھی نہ سکا اور اُنھوں نے سنا بھی نہیں۔

جب پہلی کلاس میں پہنچے تو ارد گرد مجمع جمع ہو گیا۔ ٹی وی کیمرے چل رہے تھے۔ اچھے اچھے سپاہی تو اُن کلاسوں میں ڈال دیے گئے تھے جو شروع میں دکھانی تھیں۔ میری کلاسوں میں بچا کچھا مال تھا، جویوں ہی بٹھا دیا گیا تھا۔ اُمید یہی تھی کہ یہاں تک نہیں پہنچیں گے۔ مگر اللہ گھسیٹ ہی لایا۔ اُنھوں نے ایک بہت کم عمر سپاہی سے پوچھا، "بیٹا کتنی نوکری ہوئی ہے؟" اُس نے کہا، "سر، ایک سال۔" اُن کے اشارے پر کسی نے اُسے تحفے کا پیکٹ دیا۔ جاننا نہ تھی۔ پھر سب سے عمر رسیدہ سپاہی سے مخاطب ہوئے، جس کی عمر اُس کے چہرے پر لکھی تھی، اور وہی سوال دہرایا۔ اُس نے پانچ سال نوکری بتائی۔ اُسے بھی تحفہ دیا۔

پھر میری طرف مڑے اور اردو میں کہا، "یا تو اس سپاہی میں کچھ نقص ہے، یا آپ کی تربیت میں، کہ یہ پانچ سال سے وہی سبق پڑھ رہا ہے جو ایک سال نوکری والا سپاہی پڑھ رہا ہے۔" یہ اُنکا مجھ پر جوابی حملہ تھا۔ اللہ جو چاہتا ہے وہی کرتا ہے۔ میں نے کہا، "سر، جیسا کہ میں نے آپ کو پہلے بھی بتانے کی کوشش کی تھی، یہ ہماری معمول کی تربیت نہیں ہے، صرف آج کے لئے ایک شو ترتیب دیا گیا ہے۔" سر پیچھے پھینک کر بنے اور کہا، "کیوں بھائی، آج ایسی کون سی خاص بات تھی؟" یہ کہہ کر مڑے، مجمع نے راستہ دیا، اور آگے نکل گئے۔ میں ساتھ ہونے لگا تو جنرل صاحب نے، جو ہمارے ڈویژن کمانڈر تھے، میرے گلے میں ہاتھ ڈال کر مجھے پیچھے ہی روک لیا۔ شاید سوچا ہو کہ اگر اور ساتھ رہا تو نہ جانے کیا کیا کہے۔

جب مجمع آگے نکل گیا تو کہنے لگے، "میں سمجھتا ہوں تمہارا فوج میں بہت اچھا ریکارڈ ہے اور تمہاری پوسٹنگ بھی PMA ہو چکی ہے۔ آخر تم ان سب چیزوں کو ٹھوکر کیوں مارتے ہو؟" میں نے کچھ جواب نہ دیا۔ شاید میرا دماغ بھی اُس وقت صحیح کام نہیں کر رہا تھا۔ ہم

آہستہ آہستہ مجھے کے پیچھے پیچھے چل رہے تھے۔ جب صدر میری تینوں کلاسوں سے فارغ ہو گئے اور اُن کی گاڑیاں آگئیں، تو ڈویژن کمانڈر نے میرے کندھے سے ہاتھ اٹھایا اور تیز تیز چل کر صدر کی کار تک گئے اور انھیں الوداع کہا۔ پھر سب کے سب چلے گئے۔ سب خالی ہو گیا۔ میں بھی۔

تھوڑی دیر بعد پریذیڈنٹ کا ملیر کینٹ کے ایک گراؤنڈ میں تمام فوجیوں سے خطاب تھا۔ خطاب کے دوران اُنھوں نے فرمایا، "جب کوئی سینئر افسر کسی یونٹ میں آتا ہے تو تھوڑی بہت چونا گیری ضرور ہوتی ہے، لیکن اس کا یہ مطلب نہیں لینا چاہیے کہ فوج میں تربیت ہی نہیں ہو رہی۔" اُس دن مجھے علم ہوا کہ صرف ماتحت ہی دھوکہ نہیں دیتے، کمانڈر بھی یہی چاہتا ہے کہ دھوکہ دیا جائے، تاکہ یہ تاثر قائم رہے کہ اُس کی کمانڈ میں سب اچھا ہے۔ یہ اس عمر میں میرے لئے ایک بہت ہی انوکھا تجربہ تھا۔ صدر سے لے کر نیچے تک کمانڈ کی تمام کڑیوں میں ایک میں ہی بے وقوف تھا۔

پھر میں گھر آ گیا، اپنی ننھی سی بیٹی کے پاس، اور شاید دل میں سوچا ہو کہ سارہ میری بات سمجھتی ہوگی۔ شاید بڑوں کی دنیا ایسی ہی ہوتی ہے۔ شاید میں بچہ ہی رہ گیا، اب تک تخیل کی دنیا سے نکل کر حقیقی دنیا میں نہ پہنچ پایا۔ پایا اور انجم پریشان تھے اور اُن کی پریشانی بھی بجا تھی۔ ہمارا تو کوئی مستقل پتہ بھی نہ تھا، نہ کوئی گھر نہ بار، نہ کوئی اور ہی ٹھکانا۔ میں نے سوچا کل جب آئے گی دیکھی جائے گی۔ اللہ ہے نا۔

وہ اللہ جسے میں جانتا تو تھا، پہچانتا نہ تھا۔ جب کسی آڑے وقت تنہائی شدت اختیار کر جاتی، اُس ہی کا سہارا ہوتا۔ جب خوف سے دل لرز جاتا، اُس ہی کو پکارتا۔ پھر جب دل سکون پا جاتا، وہ مجھے نظر نہ آتا۔ پھر میں اپنے گناہوں میں لگن ہو جاتا۔ دنیا کو چاٹتا۔

چمن میں اہل چمن فکر رنگ و بوتو کرو*

ایبٹ آباد کی حسین وادی میں، پاکستان ملٹری اکیڈمی (PMA) کی چمکتی دنیا، کراچی کی دل سوز شام سے بہت دور تھی۔ میں وہاں سے بچ آیا تھا۔ کرنل سعید نے میرا بہت ساتھ دیا۔ اُس رات ہی میرا الوداعی کھانا کیا، اور مجھے بہت سراہا۔ کہنے لگے، "آج اس افسر نے وہ کام کیا جو میں ساری عمر کرنا چاہتا تھا مگر نہ کر سکا۔" ٹرین میں میری سیٹ اُنھوں نے پہلے ہی بک کر والی تھی۔ رات مجھے ٹرین پر بٹھا کر PMA روانہ کر دیا۔ صبح جب میری تلاش شروع ہوئی، کہ کہاں ہے؟ لے کر آؤ اُس افسر کو، تو اُنھوں نے کہا کہ اُس کی تو پوسٹنگ آئی ہوئی تھی، میں نے اُسے بھیج دیا۔ اب میرا قصور میرے پیچھے لکھ کر تو بھیج نہیں سکتے تھے۔ سچ کیسے لکھتے؟ اس طرح اللہ نے میرے لئے بچت کا سبب پیدا کیا۔ وہی مسبب الاسباب ہے۔

برخلاف میرے پہلے تاثرات کے، جب میں وہاں بحیثیت کیڈٹ داخل تھا، میں نے PMA کو ایک نہایت ہی کامل ادارہ پایا۔ یہاں ہماری فوج کے افسروں کی بنیاد رکھی جاتی ہے۔ تمام درجوں کے اساتذہ ساری فوج سے چھانٹ کر لئے جاتے ہیں، اور نہایت لگن سے کیڈٹس کی پرورش کرتے ہیں۔ یہاں پر اُستاد ہونا فوج میں فخر کی بات سمجھی جاتی ہے۔ فوجی تربیت کے ساتھ ساتھ یہاں زندگی کے ہر پہلو کی اصلاح کی جاتی ہے۔ کھانا کھانے کی تہذیب سے لے کر کپڑے پہننے کا سلیقہ، ادب و احترام، بات کرنے کی تمیز، اُٹھنا، بیٹھنا، غرض کوئی پہلو ایسا نہیں جو اساتذہ کی نظروں سے اوجھل ہو۔ جسمانی اور ذہنی صلاحیتوں کو اُبھار کر، ایک پر عزم، خود اعتماد، خوددار، باکردار اور باوقار شخصیت کی تشکیل اس ادارے کا منصب ہے۔

یہاں فوج کے لیڈروں کی ابتدائی نشوونما کی جاتی ہے۔ ایسے لیڈر جو قوی کردار کے مالک ہوں، جو انصاف کر سکیں اور سچ بول سکیں، چاہے اپنی ہی گردن کٹتی ہو۔ جن میں فریب نہ ہو۔ جو نظم و ضبط کے پابند ہوں، زندگی کی رکاوٹوں کا سخت جانی اور دلیری سے سامنا کرنا جانتے ہوں اور اُنھیں عبور کرنے کی صلاحیت اور عزم رکھتے ہوں۔ ہمدرد۔ خدمت اور قربانی کے جذبے سے سرشار ہوں۔ عزت شناس ہوں، اپنی بھی اور دوسروں کی بھی۔ ندگی کی کڑواہٹوں کے باوجود ہنستے ہوئے آگے بڑھنے کا جذبہ رکھتے ہوں۔ کام میں پہل کرنے کا مادہ ہو۔ جو فخر سے، سینا تان کے، سر اُٹھا کے، قدم ملا کر چلتے ہوں۔ ایسے وفا شعار لیڈر جن کے اشارے پر اُن کے ماتحت اپنی جان دینے سے بھی گریز نہ کریں۔

یہ صرف ایک مثالی پیکر ہے۔ تصوراتی۔ PMA اس ہی سمت میں کوشش کرتا ہے۔ فوج کی یہی ترجیح ہوتی ہے کہ ایسے ہی لیڈر مینر ہوں۔ وہ لیڈر جو اچھے ماتحت بھی ہوں۔ جن پر کڑے وقت میں بھروسہ کیا جاسکے۔ جو حکم ملنے پر "کیوں؟" نہ کہیں، بلکہ صرف "کب؟"

یہی فوج کی تہذیب ہے۔ اس کے علاوہ کسی اور راستے پر چل کر جنگ میں کامیابی ممکن نہیں۔ میدانِ جنگ میں سبک رو مواقع ہاتھ سے گزر جائیں، اگر سوال و جواب کا سلسلہ شروع ہو جائے۔ لیکن اچھے لیڈر وہ ہوتے ہیں، جو موقع ملنے پر، اپنے ماتحت کمانڈروں سے مشاورت کرتے ہیں، رائے معلوم کرتے ہیں، اُن کو بھروسے میں لیتے ہیں، کہ ہم کیا کر رہے ہیں اور کیوں کر رہے ہیں۔ اُن کا رجحان اپنے بالاکمانڈر کی طرف نہیں رہتا، بلکہ اپنی سپاہ کی طرف ہوتا ہے، اپنے کام کی طرف۔ اچھے لیڈر کی پہچان اُس کے ماتحتوں کی آنکھوں میں جھلکتی ہے۔ وہ دلوں پر حکومت کرتا ہے۔ ایسوں کے لئے جان بھی حاضر ہے۔

کچھ نااہل کمانڈر ایسے بھی ہوتے ہیں جو سوال و جواب کو اپنی ہتک سمجھتے ہیں۔ یہ وہ ہیں جن کی کمانڈری صرف رعب اور دبدبے کی بیساکھی پر کھڑی ہوتی ہے۔ ان کی ذات اس لائق نہیں ہوتی کہ کوئی اُن کی عزت کرے اور تابع ہو۔ ہر ایک کو ایک ہی لاٹھی سے ہانکتے ہیں۔ ایک خشک سی، بجھی ہوئی، ناراض سی طبیعت لئے پھرتے ہیں۔ کسی کو قریب نہیں آنے دیتے۔ اصل میں ماتحتوں سے خوف کھاتے ہیں۔ ہنسنے سے بھی ڈرتے ہیں۔ سمجھتے ہیں شاید یہی اکڑی ہوئی گردن اور منجمد چہرہ بڑائی کا چہرہ ہے، اور اسی کا خول چڑھا کر عزت پائیں گے، اپنی نااہلی سے بھی چھپالیں گے۔ وہ اپنے عہدے کے زور پر حکومت کرتے ہیں، صلاحیت کی بنیاد پر نہیں۔ یہ وہ ہیں جو اُس درجے پر فائز ہوتے ہیں جس کے وہ اہل نہیں۔

مجھے PMA میں کیڈٹس کو تربیت دینے میں بہت مزا آیا۔ کیڈٹس ہمیں ایسا سمجھتے جیسے ہم آسمان سے اترے ہوں۔ ایسے میں اپنا بھرم رکھنا آسان نہیں ہوتا۔ ہمیں اپنی ہر چیز کا خیال رکھنا پڑتا۔ ہمارا ہر انداز، ہماری ہر بات اُن کی نظر میں ہوتی، اور ہمیں یہ فکر کھائے رہتی کہ کہیں ہم اُن کے لئے غلط مثال نہ قائم کریں۔ ان نوجوان دلوں کی نشوونما، ان کی کردار سازی، ان کی فوجی تربیت ہم سب ایک نہایت مقدس فریضے کے طور پر انجام دیتے، اور اپنی کاوشوں کا نتیجہ روز بروز اپنی آنکھوں کے سامنے دیکھتے۔

میں تین سال انفنٹری سکول میں بہت اچھے ماحول میں پڑھا چکا تھا، مگر یہاں کی ریت مختلف تھی۔ یہاں صرف کیڈٹس پر ہی ایک دوسرے سے سبقت لے جانے کا دباؤ نہیں تھا، بلکہ تمام ماحول ہی ایسا تھا، اور اس فضا کو ادارے کے لئے صحت مند سمجھا جاتا۔ میں سمجھتا ہوں

اس پر کچھ غور و خاص ہونا چاہیے۔ فوج میں آج بھی یہی سوچ ہے، اور PMA میں اس کی بنیاد رکھی جاتی ہے۔ یہ اس بنا پر کیا جاتا ہے کہ سب آگے بڑھنے کی جستجو میں لگے رہیں اور لوگوں پر محنت کرنے کا دباؤ رہے۔ یہ کوئی نہیں دیکھتا کہ فوج میں ایک دوسرے پر سبقت حاصل کرنے کے بجائے ایک ہی مقصد کے لئے مل جل کر کام کرنے کی زیادہ اہمیت ہے۔ دونوں کے لئے بالکل مختلف رویہ اور ذہنیت درکار ہیں۔ سبقت لے جانے کی کاوش انسان کی سیرت کو مسخ کر دیتی ہے، اور اُس کی اخلاقی قوت ماند پڑ جاتی ہے۔ یہ سوچ، ذرا اور گہری ہو جائے تو جھوٹ اور فریب کو جنم دیتی ہے، اور بھائی چارے کے بجائے دشمنیاں پیدا کرتی ہے۔ لوگوں کو ذہنی تناؤ کا شکار بناتی ہے۔

اس طرح انفرادی پیشہ ورانہ صلاحیتیں تو اُجاگر کی جاسکتی ہیں، مگر اُس کمانڈر کے کردار میں کچھ ایسے نقص جنم لیتے ہیں کہ وہ اچھا لیڈر نہیں بن پاتا۔ ہم اپنے سکولوں سے ہی چھوٹے چھوٹے بچوں کو اس ماحول میں تربیت دیتے ہیں۔ جو بیچارے سینکڑا آتا ہے وہ بھی افسردہ ہی گھر لوٹتا ہے۔ صحت مند مقابلے کی کوئی حقیقت نہیں۔ مقابلہ مقابلہ ہی ہوتا ہے۔ اپنے ساتھی پر سبقت حاصل کرنے کی لگن صحت مند معاشرہ کیسے پیدا کر سکتی ہے؟ ہماری تربیت اس انداز کی ہونی چاہیے کہ ہم خود اپنے آپ سے مقابلہ کریں۔ خود کو بہتر سے بہتر بنائیں۔ مقابلے کھیلوں تک ہی محدود رہنے چاہئیں۔ میں نے PMA میں مقابلے کے اس ماحول کے بہت کڑے رنگ دیکھے، پھر ساری عمر فوج میں جگہ جگہ اس کے دل سوز اثرات دیکھتا رہا۔ اپنے بچوں کو بھی یہی کہتا رہا کہ جو بچہ فرسٹ آئے گا، اُلٹا لٹکا یا جائے گا۔ بچے خوش تھے، انجم مجھ پر ہنستی۔

میں نے اپنے کیڈٹس کی نشوونما بہت شوق سے کی۔ کبھی پڑھائی میں کمزور لڑکوں پر سختی نہیں کی، انہیں سمجھاتا رہا، حوصلہ دلاتا رہا۔ اُن کو شرمندہ نہیں کیا۔ کردار کے معاملے میں سخت تھا، اور شاید ضرورت سے زیادہ اڑیل۔ کسی ناکسی موٹر پر سوئی اٹک جاتی۔ ایک کیڈٹ میرے پاس تھا، جھوٹ اور دھوکے میں تیز۔ میں نے اُسے PMA سے نکالنے کی سفارش کی۔ وہ ہمارے کمانڈنگ آفسر کا بھانجا تھا۔ مجھ پر بہت دباؤ پڑا۔ اپنے ساتھیوں کا بھی۔ کہتے کہ ہمارے بٹالین کمانڈر ہمارے لئے کتنا کرتے ہیں، تم اُن کے لئے اتنا بھی نہیں کر سکتے؟! سب ہی مجھ سے ناراض تھے۔ یا یوں کہہ سکتا ہوں کہ جو ناراض نہیں تھے کچھ بولے نہیں، میرا ساتھ نہ دیا، تنہائی میں دلا سہ بھی نہیں۔ چُپ رہے۔ جب ٹرم کے آخر میں بٹالین کمانڈر کی کانفرنس کا وقت آیا تو مجھ سے کہا گیا کہ میں اُس کی حرکات کی تفصیلات ظاہر نہ کروں، مگر میں نے ایک ایک بات کانفرنس میں صاف کھول کر رکھ دی۔ میں نے کہا یہ اس کیڈٹ کا کردار ہے، جو کہ کئی اور افسر بھی جانچ چکے ہیں۔ فیصلہ کانفرنس پر چھوڑ دیا کہ کیا ایسے دھوکے باز انسان کو فوج میں افسر ہونا چاہیے یا نہیں۔ بھری کانفرنس میں یہی فیصلہ کرنا پڑا کہ اس کو PMA سے نکال دیا جائے۔ بٹالین کمانڈر کے پاس اور کوئی راستہ نہیں تھا۔

پھر کانفرنس کے بعد مجھے کورس کے ٹرم کمانڈر نے بلایا اور کہا کہ بٹالین کمانڈر صاحب بہت ناراض ہیں کہ اُن کے کہنے کے باوجود آپ چُپ نہ رہے۔ اب اُنھوں نے اُس کا نام نکالے جانے والوں کی لسٹ سے کاٹ کر ریلیکیٹ (relegate) ہونے والوں کی لسٹ

میں ڈال دیا ہے، یعنی کیڈٹ کو چھ مہینے پیچھے کر دیا جائے گا۔ میں نے کہا کانفرنس میں کئے گئے فیصلے کو کیسے بدل دیا؟ کہنے لگے کہ آپ نے جو کچھ کہنا تھا کہہ دیا، اپنا فرض پورا کر لیا۔ اب کل کمانڈانٹ کی کانفرنس ہے، اُس میں چُپ رہیں۔ میں نے کہا کانفرنس میں بیٹھتے ہی اس لئے ہیں کہ اپنا نکتہ نظر دے سکیں، اور یہ تو پلاٹون کمانڈر کی ذمہ داری ہے۔ فیصلہ میرے ہاتھ میں نہیں ہے، مگر جو اختیار ہے اور جو ذمہ داری ہے وفا کرنی لازم ہے۔

اگلے دن کمانڈانٹ کی کانفرنس میں، پہلے PMA سے نکالے جانے والوں کی لسٹ پر بات ہوئی، اُس کے بعد ریلیگیٹ ہونے والوں کی باری آئی۔ طریقہ یوں تھا کہ ٹرم کمانڈر کیڈٹ کا نام لیتے، پھر اُس کا پلاٹون کمانڈر جو بات بتاتا کہ کیوں اسے نکالا جائے یا ریلیگیٹ کیا جائے۔ جب میرے کیڈٹ کا نام لیا گیا تو میں نے اُس کے بارے میں تمام باتیں بیان کر دیں۔ اس پر کمانڈانٹ نے مجھ سے پوچھا کہ اگر اس کا یہ کردار ہے تو اسے افسر تو نہیں بننا چاہیے، پھر آپ نے اسے نکالنے کی سفارش کیوں نہیں کی، ریلیگیٹ کرنے کو کیوں کہہ رہے ہیں؟ اس سے پہلے کہ میں کچھ کہتا، بٹالین کمانڈر صاحب نے کہا کہ وہ اس کیڈٹ کو ذاتی طور پر جانتے ہیں، پھر کچھ جنرل ضیاء کی رجمنٹ سے اس کے والد کا تعلق ظاہر کیا، کچھ اور بھی کمانڈانٹ کے قریب ہو کر کہا جو میں صحیح سن نہ پایا۔ پھر کہنے لگے کہ میں سمجھتا ہوں کہ اسے ریلیگیٹ کرنا کافی ہوگا۔ کمانڈانٹ خاموش رہے۔ ٹرم کمانڈر نے اگلے کیڈٹ کا نام لیا۔ لڑکار ریلیگیٹ ہو گیا۔

یہاں پھر ایک بار اللہ نے مجھے بچایا، کہ سالانہ رپورٹ لکھنے سے پہلے ہی بٹالین کمانڈر صاحب کا PMA سے تبادلہ ہو گیا۔ میرے خلاف ناراضگیاں مختلف رنگوں میں جاری رہیں۔ اُس کیڈٹ کو چھ مہینے پیچھے تو کر دیا، مگر وہ اُس ہی قسم کے کام کرتا رہا اور آخر کار کردار کی کمزوریوں پر PMA سے نکالا گیا۔

جب ہم کیڈٹس تھے، کردار کی خامیوں پر بہت کڑی نظر ہوتی تھی۔ اب آٹھ دس سالوں میں کافی نرمی ہو چکی تھی۔ جن باتوں پر کسی کیڈٹ کو گھر بھیج دیا جاتا تھا، اب اُسے صرف سزا کا مستحق قرار دیا جاتا۔ شاید معاشرے کا رنگ بھی اسی طرح بدل رہا تھا۔ PMA اور شاف کالج فوج کے اہم ترین تربیتی ادارے ہیں۔ یہاں افسروں کی جڑوں کی تشکیل ہوتی ہے، اور کسی صورت یہاں کردار کے معاملے میں نرمی نہیں دکھانی چاہیے۔ کسی سفارش، کسی اثر و رسوخ کا دخل نہیں ہونا چاہیے۔

جب PMA آئے تو کئی ماہ تک مجھے گھر نہ ملا۔ ٹوبکمپ میں، جو PMA سے خاصا دور تھا، ایک پرانی فوجی بیرک میں ایک کمرہ مل گیا، جو کافی کشادہ تھا۔ اس ہی میں دو لکڑی کی الماریاں ایک کونے میں دیوار سے کچھ ہٹا کر رکھ لیں۔ اور ان کے پیچھے چھوٹا سا باورچی خانہ

بن گیا۔ کھانا تو میس سے آتا تھا، لیکن دو چھوٹے بیٹے تھے اور ایک نوزائیدہ بیٹی، اس لئے چولہے کی ضرورت رہتی۔ کچھ سامان تو الماریوں میں آگیا، باقی بکسوں میں پلنگوں کے نیچے۔ یہیں ایک پڑھائی کی میز بھی لگ گئی، کیونکہ مجھے پڑھانے کے لئے خاصی پڑھائی خود کرنی پڑتی۔ پھر دونوں لڑکے بھی سکول جانا شروع ہو گئے۔ یہیں ہم نے اپنی پہلی کار بھی خریدی۔ بوسیدہ سی کار تھی اور پٹرول کے پیسے کم ہوتے تھے۔ روز پیدل PMA جاتا، عموماً دن میں دو مرتبہ۔ کبھی راولپنڈی جانا ہو، یا یوں ہی گھومنے نکلنا ہو تو کار نکالی جاتی۔

انجم کو نہ کوئی غم تھا نہ شکایت۔ اُس کی طبیعت ہی ہنستی ہوئی تھی۔ بچوں ہی میں مگن رہتی۔ ہم دونوں بہت خوش تھے۔ گھر میں ہنسی مذاق چلتا رہتا۔ بچوں کی موجودگی سے ایک کمرے کا گھر رونقوں سے بھر گیا تھا۔ میں اُن کو اپنی طرف سے کہانیاں بنا کر سناتا۔ بس، بناتا جاتا اور سناتا جاتا۔ میں خود ان میں ڈوب جاتا، مختلف کرداروں کا روپ دھار لیتا، آوازیں بناتا، شکلیں بدلتا۔ مجھے پتا نہ ہوتا کہ یہ کہانی کہاں جا رہی ہے اور کس انجام کو پہنچے گی۔ کبھی ایسا لگتا کہ شاید بچوں سے زیادہ مجھے مزا آ رہا ہو۔ پر اب یہ صلاحیت مجھ سے کھو چکی ہے۔

یہ سننا اگر حد سے بڑھے گہرا م ہو جائے *

ڈھلتے سورج کے رنگ دریا کے پانی میں گھل رہے ہیں۔ خون میں بجھی شام کی طرح میرا دن بھی تمام ہوا، بوڑھے جنگل میں پھرتے، سوکھی جڑوں اور ٹھنیوں کی تصویریں اُتارتے، پانی میں عکس دیکھتے، اُن میں معنی تلاش کرتے، ذہن سے گزرتے مختلف خیالات کو ٹٹولتے، اپنے آپ میں غوطے کھاتے۔ کسی گرے ہوئے درخت کے تنے پر بیٹھا خود سے باتیں کرتا رہا۔ کان سے ہیڈ فون لگائے کبھی موزارٹ (Mozart) اور نیل ڈائمنڈ (Neil Diamond) کو سنتا، کبھی چیکو سکی (Tchaikowski) اور بلی جوبل (Billy Joel) کو اور کبھی وائلکن کی تاروں سے اٹھتا ہوا ویوالڈی (Vivaldi) کا گھٹا ہوا سوزا چانک چیخوں میں بدل جاتا۔ ان ہی دُھنوں پر سوچیں تیرتی رہیں۔ جنگل میں بیٹھا ہرمن ہسی (Herman Hesse) کی Steppenwolf پڑھتا رہا۔ خزاں سے گرے سوکھے پتوں پر لیٹا تنگی شاخوں سے بھرے آسمان کو تکتا رہا۔ اپنی برہنگی کو ندامت کے ناخنوں سے نوچتا رہا۔ خاموشیوں میں چھپی آوازیں سنتا رہا۔ بادلوں سے خواب بُتار رہا۔

نہ جانے کیا ڈھونڈ رہا ہوں یہاں۔ نہ جانے کیا پیاس ہے۔ کل پھر بھیڑ میں جاؤں گا۔ اسی طرح چُپ رہ کر واپس آ جاؤں گا۔ اب تو پرندے بھی خاموش ہو چکے۔ اندھیرا ہو رہا ہے۔ اُٹھوا اپنے اُداس سے کمرے میں چلتے ہیں۔ فرج سے کچھ نکال کر کھالیں گے۔ دن کو بھی تو تم نے روکھے سینڈوچ ہی کھائے تھے، پانی کے ساتھ۔ اُٹھو، چلتے ہیں، کمرے میں چل کر سو جائیں گے، چلو۔ کیا اب تم بھی مجھ سے نہیں بولتے؟

امریکہ آئے کئی ماہ گزر چکے تھے۔ فورٹ بینگ (Fort Benning) میں سات ماہ کے لئے کمپنی کمانڈر کورس کرنے آیا تھا، جن میں کمرس کی چھٹیاں بھی شامل تھیں۔ زیادہ وقت پڑھائی میں گزرتا۔ چھٹی کے دن عموماً اس دریا کے کنارے، جو میرے کمرے کے نزدیک ہی تھا، جنگل میں پھرتا رہتا۔ انجم اور بچوں کو پاپامی کے پاس چھوڑ آیا تھا، جو اُن دنوں کراچی میں گلشن معمار کے ایک فلیٹ میں رہتے تھے۔ پہلی بار ملک سے باہر آیا تھا، مگر جلد ہی وہاں کی بے نور رونقوں سے دل بھر گیا۔

جب جارہا تھا تو انٹیلی جنس والوں نے پوچھا کہ آپ نے کیوں اپنا مستقل پتہ اور فرقہ اپنے کاغذوں میں ظاہر نہیں کیا ہے؟ میں نے کہا، ہے ہی نہیں تو ظاہر کیا کروں؟ اپنی پلٹن کا پتہ لکھا ہے۔ والد صاحب بھی فوج میں تھے، اُن کا بھی کوئی پتہ نہیں تھا، میرا بھی کوئی پتہ نہیں۔ نہ

جانے کل کہاں ہوں۔ اور فرقہ وہی ہے جو ہمارے پیغمبر کا تھا۔ اس سے آگے ابھی تک پہنچا نہیں، اور نہ ہی پہنچنا چاہتا ہوں۔ پھر اُنھوں نے بات آگے نہ بڑھائی۔

کرسمس کی بیس دنوں کی چھٹیاں ہوئیں تو اکیلا ہی بس میں مختلف مقامات پر پھرتا رہا۔ کینیڈا کے بارڈر تک گیا، پھر مغربی ریاستوں سے ہوتا ہوا جنوبی علاقوں میں گھومتا پھرتا واپس جا رہا تھا۔ جہاں دل کرتا کچھ دن ٹھہر جاتا۔ میں نے عموماً لوگوں کو بااخلاق، مددگار، خوش مزاج اور پُر خلوص پایا۔ کاش اُن کی حکومت اپنے عوام کے رجحان اور کردار کی عکاسی کرتی۔ عام لوگ دنیا کے حالات سے بالعموم بے خبر اور اپنی ہی زندگی میں مگن رہتے تھے۔ اُن کی زیادہ توجہ اپنے کام پر اور زندگی کا لطف اٹھانے پر ہی مرکوز رہتی۔

کورس کے دوران ہر مضمون کا امتحان ہوتا تھا، جس میں بہت سے افسر فیل ہو جاتے۔ پھر اُن کو دوبارہ امتحان دینا پڑتا۔ پڑھائی پر وہ خاص توجہ نہیں دیتے تھے۔ ایک بڑے کمرے میں امتحان ہوتا، جہاں لمبی لمبی میزوں پر سب ساتھ ساتھ بیٹھے ہوتے۔ اساتذہ میں سے کوئی کمرے میں نہیں ہوتا۔ کچھ لکھنے کو نہ ہوتا، صرف صحیح جوابوں پر نشان لگانا ہوتا۔ اتنے افسر فیل ہوتے، مگر میں نے کبھی کسی کو دوسرے کے پرچے کی طرف جھانکتے نہیں دیکھا۔ ایک دوست سے پوچھا تو کہنے لگا اگر میں کسی کے پرچے کی طرف دیکھوں گا تو پکڑا تو نہیں جاؤں گا، لیکن اُسے تو پتا ہوگا کہ میں نے اُس کی نقل کی ہے، میں بے ایمان آدمی ہوں۔ پھر ایک بے ایمان آدمی سے کون تعلق رکھنا چاہے گا؟ میں معاشرے میں کٹ کر رہ جاؤں گا۔ میرے دل میں ایک اُمنگ سی اُٹھی کہ کاش ہمارے معاشرے میں بھی بدکردار شخص کی یوں پکڑ ہوتی۔ مگر یہاں تو ایسے کاموں پر فخر کیا جاتا ہے، معاشرہ اس پر انعام دیتا ہے، شریف آدمی ہی منہ چھپاتا پھرتا ہے۔

ایک ایکسرسائز میں مجھے بہت اچھی رپورٹ دی گئی۔ پھر جس افسر نے میری رپورٹ لکھی تھی وہ مجھے ملا، بہت تعریفیں کیں اور کہا کاش تم جیسے افسر ہماری فوج میں بھی ہوتے۔ میں یہ سُن کر پھول گیا۔ اُس نے مجھے چائے پر بلایا اور اپنے ایک دوست سے ملوایا۔ پھر یہ خود تو پیچھے ہٹ گیا اور اس کا دوست مجھے کئی بار ملا اور گھماتا پھرتا بھی رہا۔ ایک دن کہنے لگا میرے بہت اثر و رسوخ ہیں، اگر تم چاہو تو میں تمہیں امریکہ کی فوج میں اس ہی رینک اور سروس کے ساتھ کروا سکتا ہوں۔ میں نے بات کو ٹال دیا۔ اگلی ملاقات میں وہ اور شدت سے میرے پیچھے پڑ گیا، آخر کار مجھے کہنا پڑا کہ میری وفاداریاں برائے فروخت نہیں۔ پھر اُس کے بعد وہ مجھے نہیں ملا۔ یہ کارنامہ اُن کے خفیہ ادارے کا تھا۔ سارا کھیل مجھے پھانسنے کا تھا۔ یہ واردات ایک بار اور دہرائی گئی، جس کا قصہ آگے آئے گا۔

میری کلاس میں ایک سوئٹزر لینڈ کا افسر تھا، میجر بیٹ فش (Beat Fischer)، شہر میں بیوی بچوں کے ساتھ رہتا تھا اور دور سے آتا تھا۔ صبح جسمانی تربیت کی کلاس کے بعد نہادھو کر تیار ہونے کے لئے واپس گھر نہ جاسکتا۔ میرا کمر استعمال کرنے لگا۔ ہم میں کافی دوستی ہو

گئی۔ وہ لوگ جہاں گھومنے پھرنے جاتے، کبھی مجھے بھی ساتھ لے جاتے۔ ایک دن اُن کی بیگم نے ایک کتاب مجھے تحفے میں دی، کہنے لگیں تمہاری کہانی ہے۔ بچوں کی کہانی تھی 'دی لٹل پرنس' (The Little Prince, Atoine de Saint Exupery)، نہ جانے کتنی بار میں نے پڑھی، اور لطف اندوز ہوا۔ کتنی ہی بار بچوں کو سنائی۔

جب کورس ختم ہوا تو میجر فشر نے آخری ملاقات میں مجھے ایک خنجر تحفے میں دیا اور کہا، "یہ خنجر ہماری وردی کا حصہ ہے، ہماری آزادی کی پہچان۔ میں فوج میں سپاہی بھرتی ہوا تھا، اور اُس دن سے یہ خنجر روز وردی کے ساتھ پہنتا ہوں، کہ میں آزاد ہوں۔ مگر آج یہ تمہیں دے رہا ہوں، کہ تم سا آزاد شخص میں نے نہیں دیکھا۔ اس آزادی کے نشان پر تمہارا حق ہے۔" اُس کی آنکھوں میں آنسو تھے۔ میں سمجھا نہیں وہ کیا کہہ رہا تھا۔ کیسی آزادی؟ میں تو مجبور سا ہی تھا۔ بولنا بھی نہیں سیکھا تھا۔ خاموش ہی رہتا۔ اپنے ہی حصار میں بند، زمین سے جڑا ہوا۔ سوچا، کچھ ہوگا جو مجھے نہیں دکھائی دیتا۔ آج بھی وہ تحفہ سنبھال کر رکھا ہوا ہے۔ شاید آزادی کے انتظار میں۔

میرے امریکہ رہنے کے دوران اللہ نے ایک اور بہت پیاری سی بیٹی عطا کی ---- اللہ کا تحفہ۔ جب میں اس سے ملا تو وہ چھ ماہ کی ہو چکی تھی۔ اُس کا نام میں نے امریکہ سے لکھ کر بھیجا تھا۔ لینہ آج ماشاء اللہ آنکھوں کی ڈاکٹر ہے۔

کورس کے اختتام پر مجھے باہر کے ممالک سے آئے ہوئے افسروں میں، جو خاصی تعداد میں تھے، پہلی پوزیشن حاصل کرنے کا اعزاز ملا۔ دو ماہ کی چھٹی لی تھی، میں لندن آ گیا۔ یہاں انجم بھی مجھ سے آ ملی۔ پھر ہم خوب گھومے پھرے۔ میجر فشر اُن دنوں بیوی بچوں کے ہمراہ امریکہ میں چھٹیاں گزار رہے تھے اور گھر خالی تھا۔ ہم نے سوئٹزرلینڈ میں کئی دن اُن کے گھر گزارے۔ دوبارہ چار بچوں کے بعد ہنی مون منایا۔ جرمنی سے ٹرین پر سوئٹزرلینڈ گئے۔ ہمارے کمپارٹمنٹ میں شاید پانچ یا چھ لوگ تھے۔ کچھ دیر میں سب ہی اتر گئے، کمپارٹمنٹ خالی ہو گیا۔ کبھی کسی سٹیشن پر کوئی مسافر آ کر جھانکتا، پھر چلا جاتا۔ کوئی اندر نہ آتا۔ میں ایک سٹیشن پر اُترتا تو ساتھ والے کمپارٹمنٹ میں چند اُن مسافروں کو بیٹھا پایا جو پہلے ہمارے کمپارٹمنٹ میں تھے۔ میں چونک پڑا۔ اُنھوں نے ہمیں ہنی مون ٹورسٹ (honeymoon tourist) سمجھتے ہوئے ہماری خلوت میں دخل اندازی نہ کرنا چاہی۔ ڈبہ بدل لیا۔ جواور بھی آیا، جھانک کر چلا گیا۔ دوسروں کے لئے ان کے دل میں کتنی جگہ تھی۔ نہ جانے ہمارے یہاں کیا ہوتا؟

جرمنی کا بارڈر پار کر کے بازل (Basel) میں ٹرین سے اتر گئے اور کچھ دن یہیں رہے۔ یہاں ۱۹۸۱ کا جشن بہاراں کا تہوار (Spring Carnival) تھا، جو ہر سال آٹھ دن تک چلتا ہے۔ ہم بھی میلے کے رنگ میں رنگ گئے۔ سڑکوں پر رنگوں کی بہار تھی۔ انوکھے

تیسرا سفر اڑان

لباسوں میں گاتے بجاتے سینکڑوں دستے، بینڈ باجے، خوبصورت فلوٹس (floats)، ہواؤں میں اڑتے رنگین غباروں کے ساتھ بکھرے ہوئے قہقہے، رقص کرتی ٹولیاں، لوگوں کا ہجوم۔ ہر طرف پھولوں کی بہار۔ انجم کے لمبے کھلے بال پھولوں کی پتیوں سے ڈھانک دیئے گئے۔ اُس کی آنکھیں چمک اٹھیں، چہرہ کھل گیا۔ اُس کا حسن سارے میلے سے زیادہ پُرکشش تھا۔ سب پر چھا گیا۔ آج وہ بہت خوش تھی۔ اور میں، اپنے سناٹوں میں بند، اُسے دیکھتا رہا۔

آ کے گرا تھا کوئی پرندہ لہو میں تر *

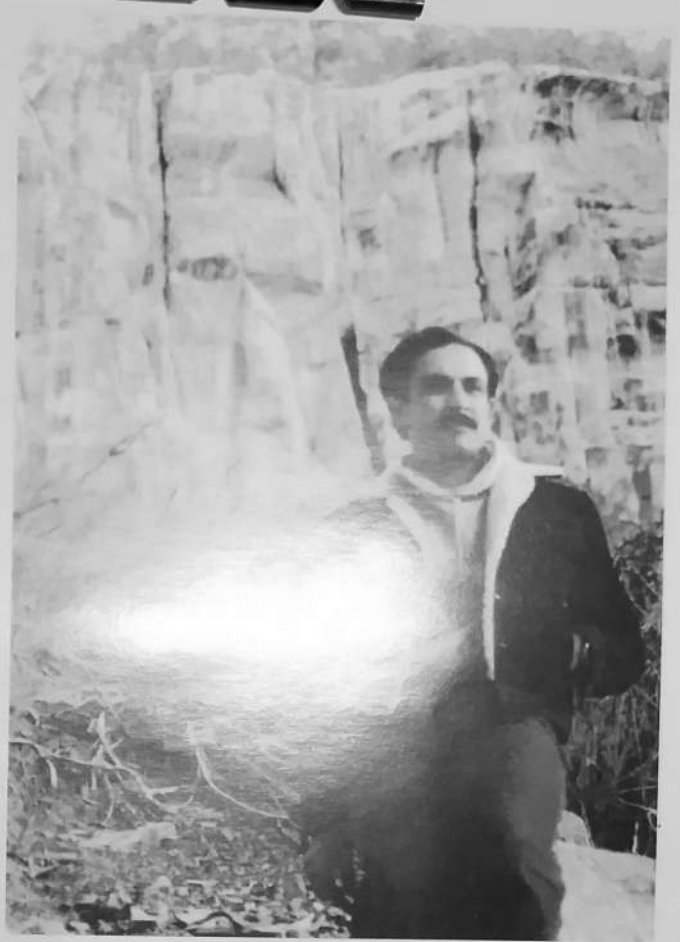
پھر ہم بچوں کے پاس واپس اپنی دنیا میں آ گئے۔ پہنچا تو پتا چلا کہ سٹاف کالج کوئٹہ میں داخلے کے امتحان کے لئے میرے پاس آخری موقع ہے۔ ایک ماہ بعد امتحان تھا۔ اس مقابلے کے امتحان کے لئے ایک ماہ کی تیاری کافی نہیں تھی۔ نئے احکامات کے مطابق آٹھ سال سے بارہ سال کی سروس کے دوران ہی آپ امتحان دے سکتے تھے۔ اس سے پہلے کوئی سروس کی قید نہیں ہوتی تھی۔ صرف اتنا تھا کہ آپ تین مرتبہ امتحان میں بیٹھ سکتے ہیں۔ میں امتحان کے لئے تیار نہ تھا، عرضی دی کہ میں ملک سے باہر تھا اور نئے قوانین سے ناواقف، اور یہ کہ میں ایک مرتبہ بھی امتحان میں نہیں بیٹھا ہوں، اس لئے مجھے اگلے سال امتحان میں بیٹھنے کا موقع دیا جائے۔ جب تک میری عرضی لوٹائی گئی امتحان گزر چکے تھے۔ میری درخواست اس بنا پر مسترد کر دی گئی کہ احکامات سے ناواقف ہونے کی فوج ذمہ دار نہیں، اور مجھے واپسی پر آتے ہی امتحان دینا چاہیے تھا۔ سٹاف کورس کے بغیر فوج میں ترقی کی گنجائش نہ تھی۔

اُن ہی دنوں PMA کی طرز پر ایک افسر زٹرنگ سکول (OTS) منگلا میں کھولنے کے احکامات جاری ہوئے۔ PMA سے کچھ افسر چُن کر وہاں بھیجے گئے، جنہوں نے یہ اکیڈمی شروع کرنی تھی۔ میرا نام بھی اُن میں تھا۔ OTS کا پہلا کورس چلانے کی ذمہ داری بھی مجھے ہی سونپی گئی۔ جنرل ضیاء نے پاکستان بننے سے پہلے OTS سے ہی کمیشن لیا تھا۔ اُن ہی کے حکم پر یہ ادارہ قائم ہوا تھا، اور وہ اس میں خاصی دلچسپی لے رہے تھے۔ اس وجہ سے GHQ کا بھی کافی دباؤ رہتا، اور آئے دن وہاں سے سینئر افسران کچھ نہ کچھ دیکھنے آتے رہتے۔

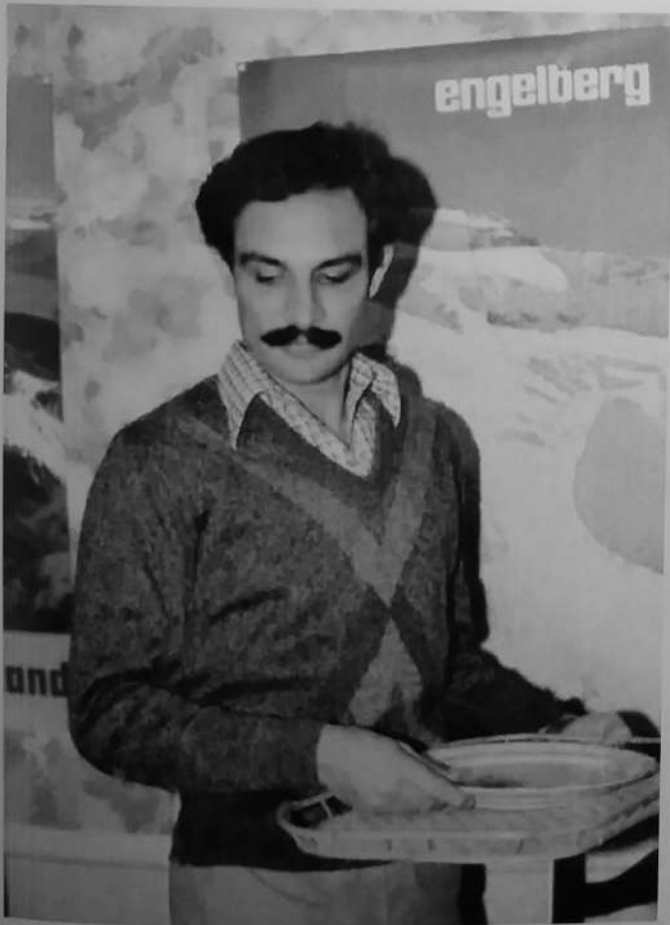
پوری اکیڈمی میں ایک ہی کورس چل رہا تھا اور وہ میرے تحت تھا، میں اُس کا ٹرم کمانڈر تھا۔ اس ہی کورس سے اکیڈمی کے رُخ کا تعین ہونا تھا، اُس کی رسومات قائم ہونی تھیں۔ میرے اوپر بہت بھاری ذمہ داری تھی، اور میں خاصے بوجھ تلے تھا۔ ہر سوال مجھ پر ہی ہوتا۔ کوئی سینئر کیڈٹس کا کورس بھی نہ تھا جو نئے کیڈٹس کی نشوونما میں معاونت کرتا۔ وہ کردار بھی ہم ہی کو ادا کرنا پڑا۔ کلاس روم کے اسباق تو PMA سے لے آئے تھے، مگر جتنی کلاس کے باہر کی تربیتی کاروائیاں تھیں، جو خاصی زیادہ تھیں، اُن پر نئے سرے سے کام کرنا پڑا، کیونکہ ان کو زمین کی مناسبت سے ہی بنانا تھا۔ جو افسروں کی ٹیم OTS آئی، سب ہی نہایت قابل تھے اور سب نے ہی بہت لگن اور محنت سے دن رات کام کر کے اس اکیڈمی کو کامیاب بنایا۔ اس کا پہلا کورس، 10th OTS آج بھی فوج میں بہترین کارکردگی دکھا رہا ہے۔



واشنگٹن



گرینڈ کینین



فشر کے گھر کھانا



میجر فشر کے ساتھ

OTS کے کمانڈانٹ اور GHQ میں تربیت کے انسپکٹر جنرل کی کوششوں سے، مجھے شاف کالج کے امتحان میں بیٹھنے کا ایک موقع دیا گیا۔ انسپکٹر جنرل صاحب (جنرل ڈار، اللہ انہیں جنت نصیب کرے) نے خاص میرے لئے جنرل ضیاء سے اجازت دلوائی۔ وہ OTS آتے رہتے اور مجھ سے واقف ہو گئے تھے۔ جب مجھے خبر ملی تو امتحان میں صرف ایک ہفتہ رہتا تھا۔ میں، اپنی تمام تر مصروفیات کے باوجود اس کی تیاری پہلے سے ہی کر رہا تھا۔ امتحان کے بعد کسی نے کہا کہ تمہارا پہلا اور آخری موقع تھا، اور سنا ہے کہ پرچوں کی بہت سخت مارنگ ہوئی ہے۔ میں اپنے پرچوں پر اتنا پُر اعتماد تھا کہ میں نے کہا کہ اگر ایک بھی پاس ہوگا تو انشا اللہ میں پاس ہوں گا۔ جب امتحان کا نتیجہ آیا اور میں اس میں کامیاب ہو گیا تو میں نے فوج سے استعفیٰ دے دیا۔ کر سکتا ہوں، مگر کروں گا نہیں۔ یہ ۱۹۸۲ کی بات ہے۔

ایک تو میں اس چیز سے بہت دلبرداشتہ تھا کہ ایک افسر جس نے ساری سروس کے دوران اتنی لگن اور ایمانداری سے کام کیا، آپ صرف کاغذی کارروائی کی بنا پر اسے امتحان میں بیٹھنے کا ایک موقع بھی دینے کو تیار نہیں، اور اُس کی بارہ سال کی محنت پر کس لا پرواہی سے آپ پانی پھیرنے کو تیار تھے۔ فوج کا جو پیسہ اُس کی تربیت پر لگا وہ بھی کوڑے میں ڈالو۔ میرا راستہ صرف اس لئے بند ہوا کہ جب جنرل ضیاء اس پالیسی پر دستخط کر رہے تھے تو انھوں نے کہا، "امید ہے اس پالیسی سے کوئی مستثنیٰ نہیں ہوگا۔" جس پر جواب دیا گیا، "سر، ہرگز نہیں۔" اب اُن سے میری خاطر کون دوبارہ پوچھتا۔ اگر انسپکٹر جنرل صاحب ذاتی طور پر میری مدد نہ کرتے تو میرا فوج میں ترقی کا راستہ بند ہو چکا تھا۔ میں نے سوچا جہاں انسان کی قدر ہی نہ ہو، وہاں کیا روزی تلاش کرنی۔

پھر امریکہ سے آنے کے بعد سے شاید میری سوچیں زیادہ منفی چیزوں پر مرکوز رہنے لگی تھیں۔ فوج کی ہر چیز کا برا پہلو میرے سامنے اُچھل کر آکھڑا ہوتا۔ جو چیز مجھے زیادہ کھائے جا رہی تھی وہ یہ تھی کہ ہر کوئی بجائے اپنے کام پر غور کرنے کے اور اپنی مرکز نگاہ نیچے رکھنے کے، اوپر کی جانب ہی دیکھتا رہتا۔ بس یہی فکر ہوتی کہ میرا کمانڈر کیا چاہتا ہے اور اُسے کیسے خوش کروں۔ سب ترجیحات اس ہی طرف مرکوز رہتیں۔ سلامی کام سے زیادہ اہمیت رکھتی۔ میں اپنے آپ کو اس ماحول میں ڈھالنے پر دشواری محسوس کرتا، اور گا ہے بگا ہے اپنے بڑوں کی ناراضگی مول لیتا۔ شاید میں ذہنی الجھن میں پھنس جاتا، کنفیوز (confuse) ہو جاتا کہ آخر مجھ سے کیا توقع ہے؟ میں توجہ کام پر مرکوز رکھوں یا سلام پر؟ دل اُچاٹ ہو گیا تھا۔

پھر ایسے لگتا کہ فوج کو تو میری قدر نہیں، شاید انجم کو بھی نہیں۔ میں تو ایک ناکام طالب علم سے لے کر یہاں تک آپہنچا، پھر بھی میں تمہاری آنکھ میں نہ اتر سکا۔ یہ سمجھ نہ پایا تھا کہ میری اور اُس کی سوچیں کتنی متضاد تھیں۔ ہم دونوں ہی اپنے اپنے رنگ میں مکمل تھے اور اپنی ہی دنیا میں مقید۔ خود سے لپٹے ہوئے۔ اور یہ بھی نہ جانتا تھا کہ بے شک اللہ ہی بہترین قدر دان ہے، اور وہ ہی ہمیں کافی ہے۔ مگر دل کا کیا کرتا؟ ہم دونوں ریل کی پٹری کی طرح ساتھ ساتھ دور دور چل رہے تھے۔

تیسرا سفر اُڑان

یوں نہ سمجھیں کہ میری زندگی اُداس سی تھی۔ نہیں، ایسا نہیں تھا۔ میرا بچپن بھی ہنستے کھیلتے ہی گزرا اور باقی زندگی بھی۔ ہم تین بھائی پوری چھاؤنی میں پہچانے جاتے تھے۔ جب کہیں کچھ ہوتا، پہلا سوال ہم پر ہی ہوتا۔ اب بھی زیادہ وقت بچوں کے ساتھ کھیلنے میں صرف ہوتا۔ میرا اور بچوں کا تعلق ہمیشہ ہی دوستوں سا رہا۔ میں نے کبھی حکم دے کر انہیں مجبور نہیں کیا۔ صرف سمجھاتا، مشورہ دیتا اور فیصلہ اُن پر چھوڑ دیتا۔ چار بچے تھے اور کوئی ایسا ٹھکانا نہیں تھا جہاں میں ان کو لے کر جاتا۔ پھر بھی میں نے اتنی بڑی چھلانگ لگا دی۔ کسی نے ٹھیک کہا ہے کہ جوانی دیوانی ہوتی ہے۔ انجم کا ہی حوصلہ تھا کہ پھر بھی ہنس لیتی۔

میرے نئے کمانڈنگ افسر آ گئے۔ نہایت اچھے انسان تھے۔ اُنہوں نے مجھے بہت سمجھایا۔ میرا استعفیٰ اپنے پاس ہی روک رکھا۔ پھر ایک دن ہمارے گھر آ گئے۔ بیگم کی پریشانی بھی دیکھی، اور مجھ سے آئندہ زندگی کے بارے میں بات کرتے رہے۔ میرے پاس کوئی ٹھوس منصوبہ یا جواب نہ تھا۔ کہنے لگے، "شاف کورس کر لو پھر بھی اگر جانا چاہو گے تو میں تمہاری مدد کروں گا۔ یہ کورس تمہیں فوج کے باہر بھی کام آئے گا۔" اُن کی کافی کوششوں کے بعد آخر کار میں نے اپنا استعفیٰ واپس لے لیا۔ اگر وہ میرے لئے اتنے فکر مند نہ ہوتے اور مجھے غلط راہ پر جانے سے نہ روکتے تو شاید آج کسی فیکٹری میں سکیورٹی افسر لگا ہوتا۔ اور مجھے آتا ہی کیا تھا۔

یہ رات اُس درد کا شجر ہے
 جو مجھ سے، تجھ سے، عظیم تر ہے
 عظیم تر ہے کہ اس کی شاخوں میں
 لاکھ مشعل بکف ستاروں
 کے کارواں، گھر کے کھو گئے ہیں
 ہزار مہتاب، اس کے سائے میں
 اپنا سب نور، رو گئے ہیں

یہ رات اُس درد کا شجر ہے
 جو مجھ سے، تجھ سے، عظیم تر ہے
 بہت سیہ ہے یہ رات لیکن
 اسی سیاہی میں رونما ہے
 وہ نہر خوں جو مری صدا ہے
 اسی کے سائے میں نور گر ہے
 وہ موج زر جو تری نظر ہے
 (فیض)

چوتھا سفر

شکستہ قدم



چلی ہے رسم کے کوئی نہ سراٹھا کے چلے *

شاف کالج، کوئٹہ پہنچے تو شدید سردی تھی۔ میں جلد واپس اپنی ڈگر پر آ گیا۔ رات گئے تک پڑھتا رہتا۔ ایک سال کا کورس تھا اور میں نے اس میں بہت محنت کی۔ چار حصوں میں کورس بٹا ہوا تھا اور مجھے اللہ نے چاروں ٹرم میں بہت اچھے اساتذہ عطا کئے۔ وہ عزت کے لائق بھی تھے اور میری بھی عزت کرتے۔ کلاس میں صرف دس طالب علم ہوتے، پھر کبھی کبھار بڑے پیانے کی کلاس ہوتی جس میں تمام طالب علم شامل ہو جاتے۔ قریب دو سو افسر کورس کرنے آئے تھے۔ ان کے علاوہ دوسرے ممالک سے بھی کئی افسر تھے۔ کچھ نیوی اور ایئر فورس کے بھی۔

زیادہ تر سبق مباحثوں کے انداز میں ہوتے۔ یا پھر کسی افسر کو لڑائی کے مختلف پہلوؤں پر اپنے خیالات پیش کرنے ہوتے۔ پھر اس پر تبادلہ خیال ہوتا۔ نقشوں پر جنگی منصوبے بنانا اور ان کے تجزیے پر کافی توجہ تھی۔ زیادہ وقت ان ہی پر صرف ہوتا۔ دوطرفہ جنگی کھیلیں کافی تعداد میں تھیں۔ یہ لڑائیاں نقشوں پر ہوتیں اور افسران کی کارکردگی جانچنے میں اہم کردار ادا کرتیں۔ مختلف موضوعات پر مضامین بھی لکھوائے جاتے۔ پھر ملک کے مختلف شعبوں سے عالم آ کر اپنی رائے کا اظہار کرتے۔ افواج کے بھی سینئر افسران آ کر مختلف موضوعات پر اظہار خیال کرتے۔ ایسے موقعوں پر سوال کرنے کی اہمیت سمجھی جاتی۔ کچھ لوگ سوال پہلے سے بنا کر لاتے۔ تمام افسر کارکردگی جانچنے کی خوردبینوں کے نیچے ہی رہتے، جس کی وجہ سے خاصہ ذہنی دباؤ ہوتا۔ اس ہی کورس کے نتیجے پر افسروں کی آئندہ سروس کا انحصار ہوتا ہے۔ اس وجہ سے کالج کی ہر کاروائی میں شدید مقابلے کا ماحول رہتا۔

میں زیادہ تر کلاس میں خاموش رہتا۔ پہلی ٹرم کے اُستاد، جنہیں ڈائریکٹنگ شاف (Directing Staff -- DS) کہتے ہیں، کرنل آصف رشید تھے جو بریگیڈ میجر بن کر ریٹائر ہوئے۔ نہایت پُر خلوص اور محبت کرنے والے انسان تھے۔ اُن ہی کی وجہ سے میرا حوصلہ ہوا کہ محنت سے کورس کروں، ورنہ شاید میں بے دلی سے ہی یہ سال گزار دیتا۔ میری دوسری ٹرم کے DS کرنل صبیح الدین بخاری تھے، جو میجر جنرل بن کر ریٹائر ہوئے۔ اپنے حصے کے اختتام پر انٹرویو کے دوران پوچھا، "کیا آپ اہل تشیع ہیں؟" میں نے نفی میں جواب دیا، تو کہنے لگے، "کلاس میں تو سارا دن اپنے اوپر کلہاڑیاں چلاتے رہتے ہیں۔" میں سمجھا نہیں۔ کہنے لگے، "جب آپ سے کوئی سوال کریں تو آپ کو اُس کا پورا علم ہوتا ہے، مگر جب تک پوچھیں نہیں، بولتے نہیں۔" میں نے کہا، "بولوں گا تو وہی جو مجھے آتا ہے۔ میں وہ سیکھنا چاہتا ہوں جو مجھے نہیں آتا، اس لئے سننے پر توجہ دیتا ہوں۔ میں نے دیکھا ہے کہ جب منہ کھولتا ہوں تو کان بند ہو جاتے ہیں۔" اُن کو ہنسی آ گئی۔ میں نے

چوتھا سفر شکستہ قدم

کہا، "پھر مناظرہ شروع ہو جاتا ہے۔ پھر میں دوسرے کی بات پر غور نہیں کرتا۔ جب وہ کچھ کہتا ہے تو میں بجائے اُس کی بات سمجھنے کے، اُس کے خلاف دلیل ڈھونڈنے لگتا ہوں۔ اس طرح میں اُسے پچھاڑ تو سکتا ہوں، کچھ سیکھ نہیں سکتا۔" کہنے لگے، "تم نہ سہی تو وہ ہی کچھ تم سے سیکھ لے گا۔" میں نے کہا، "سر، سکھانا تو آپ کا کام ہے، میرا نہیں۔ آپ ہی اس کی تنخواہ لیتے ہیں۔ میں تو صرف سیکھنے آیا ہوں۔ اگر آپ سمجھتے ہیں کہ میرے بولنے سے کلاس کچھ سیکھ لے گی تو مجھ سے پوچھ لیا کریں۔" ہنس پڑے۔ کہنے لگے، "پھر تمھاری کارکردگی کیسے جانچی جائے گی؟" میں نے کہا، "یہ بھی آپ ہی کی ذمہ داری ہے، میرا اس سے کیا تعلق؟" اُنھیں یہ فکر تھی کہ میں اپنا نقصان کر لوں گا۔ مگر میں نے سب اپنے رازق پر چھوڑ دیا تھا۔ اللہ ایسے محبت کرنے والے استاد سب کو عطا کرے۔ ایک دن اُن کی بیگم سے سامنا ہوا، تعارف کے طور پر کہنے لگے، "یہ میجر شاہد ہیں۔ ہمیں ان کا اُستاد ہونے کا شرف حاصل ہے۔" یہ میرے لئے بہت عزت کی بات تھی، کسی بھی ماڈی کامیابی سے زیادہ۔ کئی دن یہ جملہ میرے ذہن میں گھومتا رہا اور میں دل ہی دل میں مسکراتا رہا۔

پورے کورس میں کوئی پرانے منصوبے حاصل کر کے استعمال نہیں کئے۔ ایک دفعہ بھی نہیں۔ ہر جگہ اپنا ہی منصوبہ بنایا، جو غلطیاں کیں اُن سے بہت کچھ سیکھا۔ میرے دروازے اس گھڑ دوڑ کے ماحول میں بھی ہر وقت، ہر کسی کے لئے کھلے رہتے۔ میرے ساتھ پڑھنے کئی افسر آ جاتے اور میرے بنائے ہوئے منصوبے بھی لے جاتے۔ کئی ویسے ہی میرا منصوبہ دیکھنے شام کو چکر لگاتے۔ پھر کئی بار وہی میرے منصوبے پر کلاس میں تنقید بھی کرتے۔ اگلی بار میں پھر اُنھیں اپنا منصوبہ دکھا دیتا۔ میرے دوست مجھے روکتے، مگر اس طرح مجھے سیکھنے میں اور زیادہ مدد ملتی۔ پورے کورس میں میری کسی طالب علم سے کسی بات پر کبھی ناراضگی نہیں ہوئی۔

اس کورس میں انجم نے میرا بہت ساتھ دیا۔ ہمارے یہاں بیٹ مین گھر کا کام نہیں کرتا تھا۔ سارا بوجھ انجم نے اکیلے ہی سنبھالا ہوا تھا۔ کام کی زیادتی کی وجہ سے میرے سونے اُٹھنے اور کھانے کے اوقات بدلتے رہتے۔ جب رات کو دیر سے گھر آتا، تو چاہے دو بجے ہوں یا چار، وہ اُٹھ کر میرے لئے گرم روٹی پکاتی۔ بھوکی بیٹھی ہوتی، میرے ساتھ کھانا کھاتی۔ بچوں کو بہلاتی رہتی کہ مجھے پڑھائی کا وقت مل سکے۔ میرے لہروں جیسے موڈ بھی برداشت کرتی اور کالج کی اُلجھنوں پر تسلیاں بھی دیتی، حوصلہ بڑھاتی۔

ہفتے میں دو دن چھٹی ہوتی تھی۔ مجھے جب موقع ملتا میں پہاڑوں کی طرف نکل جاتا۔ یوں ہی پھر تارہتا۔ ایک خاموش دوست اور مل گئے تھے، میجر وسیم، جو اس شوق میں میرے ساتھ شامل تھے۔ کبھی کبھی اُن کے ساتھ چلا جاتا، رات پہاڑوں ہی میں گزرتی۔ کورس کی اتنی مصروفیات کہ باوجود میں کچھ وقت نکال ہی لیتا۔ یہ تنہائی مجھے اچھی بھی لگتی اور میں اس سے خوف بھی کھاتا۔ شاید ذہن کے اُلجھاؤ بڑھ جاتے۔ زندگی کی تگ و دو میں جو چیزیں نظروں سے اوجھل رہتیں، تنہائی میں کھل جاتیں۔ پھر سوچوں کے ایسے جال بن لیتا کہ اُن میں خود ہی اُلجھ جاتا۔

چوتھا سفر شکستہ قدم

شاف کالج میں ایک ہائیکنگ (Hiking) کلب بھی تھا، جو کبھی کبھار گرد و نواح کی پہاڑی چوٹیاں سر کرنے جاتے۔ اس میں طالب علم بھی ہوتے اور اساتذہ بھی۔ ایک طالب علم میجر صاحب اس کے سیکرٹری تھے۔ جب انھیں میرے شوق کا علم ہوا تو مجھ سے کہنے لگے کہ ہم لوگ اگلے ہفتے چلتن پہاڑی پر جا رہے ہیں، تم بھی ہمارے ساتھ چلو۔ میں نے کہا کہ اس ہجوم میں پہاڑی پر کیا جاؤں اور ویسے بھی مجھے چوٹیاں سر کرنے کا کوئی شوق نہیں۔ کہنے لگے کہ ہمارے ساتھ گاڑیوں پر وہاں تک تو چلو، پھر جہاں جی کرے گھومنا اور دیے ہوئے وقت پر واپس آ جانا، تاکہ ہمارے ساتھ گاڑیوں پر لوٹ سکو۔ میرے پاس کیوں کہ گاڑی نہیں تھی، اور وہ جگہ خاصی دور تھی اور میں نے وہ علاقہ بھی نہیں دیکھا تھا، اس لئے حامی بھر لی۔

جب وہاں پہنچے تو سب تو پہاڑی چڑھنا شروع ہو گئے، میں نے نقشے پر ارد گرد کے چشموں پر نشان کیا ہوا تھا، میں انہیں تلاش کرنے نکل کھڑا ہوا۔ ایک کتاب بھی ساتھ رکھ لی۔ سارا دن اکیلا پھرتا رہا۔ چشمے تو سب سوکھے ہوئے تھے مگر دن بہت اچھا گزر گیا۔ دیے ہوئے وقت سے پہلے ہی نیچے اتر کر گاڑیوں کے پاس پہنچ گیا۔ وہاں کچھ کرسیاں لگی تھیں اور کلب کے انچارج کرنل صاحب، جو ایک ڈبنگ DS تھے، ایک اور افسر کے ساتھ بیٹھے چائے پی رہے تھے۔ میں پاس سے سلام کر کے گزر گیا۔ تھکا ہوا تھا، کچھ فاصلے پر چٹان سے ٹیک لگا کر ٹانگیں پھیلا کر زمین پر نیم دراز ہو گیا۔ بوتل سے پانی پیا، سگریٹ سلگائی اور دور تک پھیلے ہوئے منظر کو دیکھتا رہا۔ تھوڑی تھوڑی دیر بعد کرنل صاحب مجھے گھورتے۔ میں نے بھانپ لیا کہ اُن کو میرا یہ انداز بالکل اچھا نہیں لگا، مگر میں پہاڑ سے اُتر تھا، سلامی کے موڈ میں نہ تھا۔ شاید وہ سمجھتے تھے کہ صحیح طریقہ یہ تھا کہ میں اُن کے پاس آ کر بیٹھتا، اُن کی باتیں سنتا۔ سراہتا۔ میں کوئی سرکاری مداح تو نہیں! خیر کچھ دیر میں ہائیکنگ کلب کے اور لوگ بھی آ گئے اور ہم واپس روانہ ہو گئے۔

دوسرے دن میرے خلاف یہ رپورٹ دی گئی کہ میں ہائیکنگ کلب کے ساتھ گیا، اور وہاں پہاڑ کی اونچائی دیکھ کر حوصلہ ہار بیٹھا، کہیں کنارے کھسک گیا، کہ اساتذہ کی نظروں میں نہ آ جاؤں۔ اس بات کا نہ ہی مجھ سے کسی نے ذکر کیا اور نہ ہی مجھ سے کچھ پوچھا گیا۔ بس اپنی طرف سے ایک کہانی بنالی اور مجھ پر چسپاں کر دی۔ شاف کالج کے تشخیصی ماحول میں مجھ پر یہ نہایت زیاں کار بہتان تھا۔ وہ تو اللہ نے بچایا کہ اس واقعے کے کچھ دن بعد جب یہ بات میرے کان میں پڑی تو میں نے کہا کہ کم از کم مجھ سے پوچھ تو لیتے کہ کیا ماجرا ہے۔ پھر میں نے ہائیکنگ کلب کے سیکرٹری کو بتایا تو وہ بہت حیران ہوا اور اُس نے جا کر اساتذہ کو ساری بات بتائی۔ تب جا کر میری جان کی خلاصی ہوئی۔ پھر بھی کچھ لوگوں کو میرا طور طریقہ پسند نہ آیا۔

جنرل ضیاء کے اسلامی دور میں منافقت کے متاثرے ہر جگہ نظر آتے تھے۔ میں کراچی کے دنوں سے یہ سب دیکھ رہا تھا۔ ہر کوئی اپنے آپ کو دین دار ظاہر کرنا چاہتا۔ تکلیف دہ تفصیلیں ہیں۔ اکتا چکا تھا۔ اس پر میرا ردِ عمل کچھ ایسا ٹھہرا تھا کہ میں نے جمعہ کی نماز پر بھی جانا چھوڑ

چوتھا سفر شکستہ قدم

دیا تھا۔ شاید اپنی انا کی خاطر میں نے یہ سوچا کہ منافق امام کے پیچھے کیا نماز ہوگی۔ پھر چھ ستمبر آگیا، ایک اور منافقت کا دن، اور حکم آیا کہ تمام طالب علم فجر کی نماز سے پہلے مسجد پہنچ جائیں، کیونکہ GHQ کے احکام ہیں کہ فجر کی نماز کے بعد فوج کے لئے قرآن خوانی اور اجتماعی دعا ہوگی۔ میں بھی صبح مسجد کے باہر حاضر ہو گیا۔ فوجی طریقے کے مطابق سب کھڑے ہو گئے اور سب کی حاضری لگی۔ پھر سب تو مسجد میں جانے لگے اور میں واپس گھر کی طرف مُڑ گیا۔ مجھ سے پوچھا گیا کہ آپ کدھر کوروانہ ہیں۔ میں نے کہا کہ فوج کے حکم کے مطابق مسجد کے دروازے پر حاضر ہوں، اب مسجد کے اندر اگر فوج کے حکم پر جاؤں گا تو منافق ٹھہروں گا۔ اللہ کے کرم سے یہ بات زیادہ نہ بڑھی۔ شاید انھوں نے اس کو اچھا لانا مناسب نہ سمجھا۔ کم از کم میرے علم میں اس سلسلے کی کوئی بات نہیں آئی۔

کچھ دنوں بعد کسی باہر کے ملک کے اعلیٰ افسران نے کالج دیکھنے آنا تھا۔ اُس دن جب میں صبح کالج پہنچا تو کچھ دیر ہو گئی تھی۔ بڑے دروازے کے سامنے سناٹا تھا۔ ایک کرنل صاحب چند اور لوگوں کے ساتھ پورچ (porch) میں کھڑے تھے۔ پورچ سے لے کر کالج کے دروازے تک، جو خاصہ فاصلے پر تھا، لال قالین بچھی تھی۔ مجھ سے کہنے لگے کہ آپ یہاں سے نہیں جاسکتے، آج سارے طالب علم پچھلے دروازے سے ہی اندر گئے ہیں۔ آپ بھی وہیں سے جائیں۔ میں نے کہا، "سر، یہ کالج میرے لئے ہی بنا ہے۔ اگر اس کا دروازہ مجھ پر بند ہے تو پھر بہتر ہے کہ اس کالج کو ہی بند کر دیں۔" یہ کہہ کر میں لال قالین پر چلتا ہوا دروازے میں داخل ہو گیا۔ یقیناً شکایت ہوئی ہوگی، پراس بار بھی مجھ سے کسی نے کچھ نہ پوچھا۔

بڑی کلاس میں، جہاں سارا کورس اکٹھا ہوتا، صرف ایک مرتبہ سوال کیا تھا۔ GHQ سے شاید چیف آف جنرل سٹاف (CGS) آئے تھے۔ افغانستان پر سوویٹ یونین کے قبضے کے بارے میں بھی خیالات کا اظہار کیا۔ مجاہدین کو ہماری امداد کی پالیسی کی حجت پیش کر رہے تھے۔ کہنے لگے کہ سوویٹ یونین کا ارادہ ہے کہ افغانستان پر قبضہ جمالینے کے بعد پاکستان پر حملہ کرے۔ جب اُن کی باتیں ختم ہو گئیں تو میں نے پوچھا کہ ہم سوویٹ یونین کے ممکنہ حملے کے سلسلے میں کیا تیاریاں کر رہے ہیں؟ اُن کو اچھا نہیں لگا، کہنے لگے وہ ابھی اس لائق نہیں ہوئے کہ حملہ کریں، زیادہ پریشانی کی ضرورت نہیں، انہیں تیاری میں کم از کم پانچ سال لگیں گے۔ میں پھر کھڑا ہو گیا، اور کہا کہ اگر سوویٹ یونین جیسے ملک کو ہم پر حملے کی تیاری کے لئے پانچ سال درکار ہیں، تو کیا ہمیں دفاعی تیاری میں اس سے کم وقت لگے گا؟ کیا ہمیں تیاری شروع نہیں کرنی چاہیے؟ وہ ناراض ہو گئے، اور سخت لہجے میں لمبا سا جواب دیا، جس کا اُلْب لباب یہ تھا کہ جس چیز کا پتانہ ہوا اُس پر رائے نہ دیا کریں۔ اعلیٰ قیادت پر بھروسہ رکھیں۔ میں نے صحیح فکر سے سوال کیا تھا، کوئی تنقید نہیں تھی، مگر انھوں نے مجھ پر نہ جانے کیوں ذاتی تنقید کر دی۔

کورس کے اختتام کے قریب طالب علموں نے ایک ورائٹی شو کیا، جس میں کچھ طنز و مزاح کے خاکے وغیرہ پیش کئے گئے۔ یہ ہر کورس کا معمول ہے۔ ایک تمثیلچے میں ایک کلاس روم دکھایا گیا، جس میں دس مختلف طالب علموں اور ایک DS کی کارکردگی پیش کی گئی۔ نو

چوتھا سفر شکستہ قدم

طالب علم تو کرسیوں پر بیٹھے تھے، سب کے نام لگے تھے۔ ایک کرسی کے پیچھے میرا نام لکھا تھا اور اُس پر ایک برف کی سل رکھی ہوئی تھی۔ پورے ڈرامے میں میرا بس یہی کردار دکھایا گیا۔

جب کورس ختم ہونے کو آیا تو سب ہی فکر مند تھے کہ اب کس جگہ تقرری ہوگی۔ اس سے اُن کی کارکردگی ظاہر ہوتی۔ جب تقرریوں کا اعلان ہوا تو سارے طالب علم ایک بڑے کمرے میں بیٹھے تھے اور باری باری سب کی اگلی تبدیلی بتائی جا رہی تھی۔ جب تک میری باری آئی تو میں سوچکا تھا۔ اس بڑے ہال کا عجب جادو تھا۔ جب یہاں کوئی لیکچر ہوتا، جو عموماً بڑے لوگوں کا ہوتا، مجھ پر نیند کا غلبہ طاری ہو جاتا۔ پھر ساتھ والے نے کہنی مار کر مجھے جگایا۔ میں نے اُس سے پوچھا کہ میرا تبادلہ کہاں ہوا ہے، تو اُس نے بتایا کہ تم بریگیڈ میجر جا رہے ہو۔ شاف کالج کے بعد یہ سب سے اچھی جگہ سمجھی جاتی تھی۔ میں نے اللہ کا شکر ادا کیا اور پھر سو گیا۔ جب واپسی پر سڑک کے کنارے چلتا ہوا گھر کے قریب پہنچا تو پڑوسن پاس سے گزریں، قریب کار روک کر پوچھا، "بھائی، آپ کہاں جا رہے ہیں"، میں نے کہا، "بہن، گھر جا رہا ہوں۔" اس پر وہ ہنس پڑیں، کہنے لگیں نہیں میں تبدیلی کے بارے میں پوچھ رہی ہوں۔ اُنھوں نے یہ قصہ لوگوں کو ہنسانے کے لئے بار بار سنایا۔ میرا ذہن ہمیشہ سے ہی کچھ آہستہ چلتا ہے۔ صحیح جواب تھوڑی دیر بعد آتا ہے، اور تب تک بات گزر چکی ہوتی ہے۔ شاید میری خاموشی کا ایک یہ بھی راز ہے۔

شاف کالج میں کچھ لوگوں کا مجھ پر خاص دباؤ رہتا کہ میں فوجی ماحول اور طور طریقے کی مطابقت میں رہوں۔ قدم سے قدم ملا کر چلوں۔ اُن کا کہنا تھا کہ جب سب ادھر جا رہے ہوتے ہیں، تم ادھر چل پڑتے ہو۔ کہتے تھے اپنے انداز کو بدلو، سب میں مل جاؤ، ورنہ نقصان اٹھاؤ گے۔ جب بچے چھوٹے تھے میں اُنھیں ایک 'ورنہ' کی کہانی سناتا تھا۔ ہر بات پہ اُن کی ماں کہتی تھی، "کھانا کھالو، ورنہ ----"، "سو جاؤ ورنہ ----"۔ میں نے پھر 'ورنہ' کو اپنی کہانیوں کا ایک خوفناک کردار بنا لیا۔ وہ صرف چہرے سے خوفناک تھا اور باتیں بھی خوفناک کرتا تھا، سب کو ڈراتا، مگر جو نہ ڈرے اُس سے ڈرتا تھا۔ بچے کبھی 'ورنہ' سے خوف کھاتے، کبھی اُس کی باتوں پر ہنستے۔ میں کہتا سو جاؤ، ورنہ آ رہا ہے، تو وہ آنکھیں بند کر لیتے۔ مگر میں آنکھیں نیچے کئے، ورنہ سے بے فکر، یوں ہی چلتا رہا۔

اُجاڑے ستے پہ ٹھوکروں سے بھری زمیں پر!*

میں اکیلا سمندر کی موجوں کے ساتھ چل چل کر تھک چکا تھا۔ سامنے ایک پہاڑ کھڑا تھا۔ اس کا ایک سرِ اسمندر کے اندر دور تک گیا ہوا تھا، جس کے کھڑے کنارے پر ٹوٹی چٹانوں کے پتھر پانی میں لڑھکنے کو تیار پڑے تھے۔ کنارے سے گزرنے کا راستہ نہیں تھا۔ میں نے سوچا اس کو تو چڑھ کر ہی پار کرنا ہوگا۔ اوپر پہنچا تو دیکھا ایک قدیم قبرستان ہے، جس میں قبروں کے بیچ ایک چھ گز کا مزار تھا، سرہانے کالے طاقوں میں مٹی کے دیے بجھے پڑے تھے۔ میں کچھ دیر ستانے کے لئے زمین پر بیٹھ گیا۔

سردیوں کی شام ہونے کو تھی۔ پانی پر سورج کی کرنیں چمک رہی تھیں، اور کہیں دور آسمان اور سمندر دُھند میں چھپ کر ایک ہو گئے تھے۔ ان کا ملاپ نظروں سے اوجھل تھا۔ لہریں خاموش، لگتا تھا سمندر ٹھہر گیا ہے۔ جیسے خود کو کھینچ کر آسمان سے جا ملا ہو۔ پھر اُس کے جسم سے سارے تناؤ نکل گئے ہوں، تمام گرمییں کھل گئیں ہوں۔ سکون آ گیا ہو۔ میں پتھر سے ٹیک لگائے کافی دیر اس سکوت کو دیکھتا رہا۔ تنہائی میں تو یہ سکون نہ تھا۔ صرف فرار، وہ بھی آدھا۔

پہاڑی ٹیلہ لمبائی میں، پانی کے بیچ سے زمین کی طرف، دور تک گیا ہوا تھا۔ اس کے پیچھے ایک برساتی نالہ سمندر سے آکر ملتا تھا۔ نالے کا دوسرا اُونچا کنارہ سمندر سے کچھ دور ہی ٹھہر گیا تھا۔ ان کے بیچ نالے کی گھاٹی مٹی کی اُونچی دیوار بنائے کھڑی تھی، جس میں پرندوں کے غار نظر آرہے تھے۔ ان غاروں کے نیچے، زمین پر کیکر کی جھاڑیاں پھیلی ہوئی تھیں۔ دونوں کناروں اور اس اُونچی گھاٹی کے بیچ ایک چاند سا ساحل تھا۔ جب نیچے اُترتا تو اور آگے جانے کی ہمت نہ ہوئی۔ سوچا یہیں رات گزارتا ہوں۔ عموماً میں رات گزارنے کی جگہ پر نہ رکتا، کہ کوئی دیکھ نہ لے۔ ویرانوں میں جانوروں سے زیادہ انسانوں سے خوف آتا ہے۔ جگہ چُن کر کچھ آگے نکل جاتا، وہاں رکتا۔ سوکھی لکڑیاں ڈھونڈ کر چولہا جلاتا، کافی بناتا۔ پھر چند بسکٹ، کھجوریں اور پنیر، جو میری روزمرہ کی خوراک تھی، کھا کر اندھیرا ہونے پر واپس لوٹتا، اور چنی ہوئی جگہ پر رات کے لئے ڈیرہ ڈال دیتا۔ اس طرح میں خود کو پُھپھا ہوا اور محفوظ سمجھتا۔ آج بہت تھک گیا تھا۔ نیچے اُتر کر وہیں چاند سے ساحل پر ٹھہر گیا۔

شاف کالج کے بعد ایک ماہ کی چھٹی ملی تو والد صاحب کے پاس کراچی آ گیا تھا۔ کچھ دن گھر بیٹھے بیٹھے تنگ آ گیا۔ کراچی کی رونقوں میں میرا دل نہ لگتا۔ پہلے سوچا کہ سڑک کے کنارے فقیر کا روپ دھار کر بھیک مانگتا ہوں۔ دیکھوں کیا کیفیت ہوتی ہے جب روٹی کے

چوتھا سفر شکستہ قدم

لئے ہاتھ پھیلا نا پڑتا ہے۔ جب منہ فٹ پاتھ پر چلتے جوتوں کے بیچ پڑا ہوتا ہے، اور وہ اُس پر خاک اڑاتے ہیں۔ چھوٹے بھائی ساجد سے بات کی، جو والد صاحب کے ساتھ ہی فلیٹ میں رہتا تھا، تو خبر اُن کے کان میں بھی پڑ گئی۔ بہت ناراض ہوئے۔ کہنے لگے، "یہ تو ایک مافیا ہے، تم چند لمحوں میں ہی پہچانے جاؤ گے اور بہت نقصان اٹھاؤ گے۔ آخر اس سے حاصل ہی کیا ہے؟" مجھے سختی سے منع کر دیا۔ پھر یوں کیا کہ رک سیک (rucksack) اٹھایا اور سمندر کے ساتھ ساتھ سومیانی کی طرف نکل گیا۔ یہ جنوری ۱۹۸۴ کی بات ہے۔

راستے میں کراچی سے کچھ باہر چند کار گیر لکڑی کی بڑی سی کشتی بنا رہے تھے، جو کھلے سمندر میں مچھلیاں پکڑنے کے کام آتی ہے۔ کافی دیر اُن کے پاس بیٹھا اُن کا کام دیکھتا رہا۔ اُن سے کشتیوں اور سمندر کی باتیں کرتا رہا۔ پھر دو پہر کو کوسٹ گارڈ والوں نے پکڑ لیا۔ مشکل سے جان چھڑائی۔ حُب دریا کے کنارے پہنچا تو وہاں ایک چھوٹی سی مچھیروں کی بستی تھی۔ اس جگہ سمندر کا پانی حُب دریا میں بہت دور تک گیا ہوا تھا۔ پتا چلا کہ دریا پار کرنے کے لئے کافی اوپر پل تک جانا ہوگا۔ تھکا ہوا تھا، وہیں مچھیروں کے پاس بیٹھ گیا۔ وہ مچھلی کے جالوں کی مرمت کر رہے تھے۔ کالا کیچڑ بچھا تھا، جس میں چمکتے ریت کے ذروں سے ایک ٹھہری ہوئی مچھلیوں کی بو اُٹھ رہی تھی۔ غربت کی اس بستی میں اُن کے غلیظ بچے، جن کے جسم بمشکل کپڑوں کی چند یوں سے ڈھنکے تھے، کھیل رہے تھے۔ ہنس رہے تھے۔

میں، جھوٹ کی بستی کا مہاجر، کافی دیر اُن کے پاس بیٹھا بھوک اور طوفان کے قصے کریدتا رہا۔ اُن کے قصوں میں کوئی رونا نہیں تھا، صرف ننگی حقیقت کی تصویر، جس کی کڑواہٹ اُن کی زندگیوں میں یوں گھلی تھی جیسے اس کالی زمین سے اُٹھتا لعفن فضا میں بسا تھا۔ تھوڑی تھوڑی دیر بعد بچوں کی کھلکھلاتی ہنسی ایسے انڈی جیسے صابن کا بلبلاتمام ترنگینیوں کا عکس لئے، ہوا میں ایک لمحے کو تیرے، پھر سچ کی طرح، غائب ہو جائے۔ اُس لمحے کے لئے کالا کیچڑ اوجھل ہو جاتا۔ غلاظت بھی۔ بدبو بھی۔ ایک مچھیرا کشتی کنارے لگا رہا تھا، کچھ گارہا تھا۔

پھر کسی نے کہا، ہم دریا پار لگا دیتے ہیں۔ کشتی کنارے سے دور کھڑی تھی۔ میں جوتے اتارنے لگا تو ایک صحت مند مچھیرے نے ہنس کر مجھے کندھے پر اٹھالیا اور لاکھ التجاؤں کے باوجود، پانی سے گزرا کر کشتی میں جا بٹھایا۔ پرلے کنارے پر بھی مجھے اٹھا کر سوکھی ریت پر چھوڑا۔ پیسے لینے سے بھی انکار کر دیا۔ جاتی ہوئی کشتی میں پیار سے ہاتھ ہلاتے رہے۔ میں اپنی حقیر سی دولت جوتے میں چھپائے، ریت پر بیٹھ گیا اور محبت سے بھری کشتی کو جاتے دیکھتا رہا۔ آنکھوں سے آنسو بھی پونچھے کا دل نہ چاہا۔ کس میلے آسمان پر وہ رہتے تھے اور میں کس سونے کی مٹی کو چاٹتا تھا، پھر بھی نہ جانے کیوں یہی سمجھتا رہا کہ میں شاید اوپر سے نیچے اُن کو دیکھتا ہوں۔

آگے چلا تو راستے میں ایک کُت مل گیا۔ پیچھے ہی پڑ گیا۔ شاید اُسے میری پتلون اور ٹوپی پسند نہ آئی ہو۔ کوئی پتھر بھی نہیں تھا کہ اُسے بھگاتا۔ اُس نے اور ساتھیوں کو بھی بلا لیا، اور میرے گرد خوفناک بھونکتے کُتوں نے ایک دائرہ بنا لیا۔ کبھی ایک دانت نکالے قریب آتا کبھی

چوتھا سفر شکستہ قدم

دوسرا۔ ہاتھ میں ایک چلنے کے سہارے کا لمبا ڈنڈا تھا، جس کے آگے چھوٹی سی کلہاڑی لگی تھی، اسے ہوا میں گھماتار ہا، گھومتار ہا۔ ٹوپی گر چکی تھی، جوتھو لنک رہا تھا، پھولی ہوئی سانسوں میں آنکھیں اُبل آئی تھیں۔ چکرار ہا تھا، چکر لگا رہا تھا۔ عجب سانچ مجھے تقدیر نچا رہی تھی، تُوں کے ہاتھوں۔

جب بے بس ہو چکا تو اللہ نے گاؤں کے کچھ بچے بھیج دیئے۔ اُن کی ایک ہی آواز پر گُنتے پیچھے ہٹ گئے۔ کیا جادو تھا اُس ننھی سی آواز میں کہ میری گرج اُس کے سامنے سرنگوں تھی۔ پھر یہ سب بچے حیرت زدہ ہنستی ہوئی آنکھیں لئے میرے گرد جمع ہو گئے۔ میں ان کو لے کر ساحل سے کچھ دور گاؤں کی دکان پر آ گیا اور جتنی ٹافیاں دکان میں تھیں سب خرید کر اُن میں بانٹ دیں۔ وہ کافی دور تک میرے ساتھ آئے اور بہت پیار سے مجھے الوداع کیا۔ گُنتے بھی ساتھ ساتھ دُم ہلانے کو آئے۔ نہ جانے اس میں میرے لئے کیا لکھا تھا۔ میں پانی پر کھنچی لکیریں کیسے پڑھتا؟

اب رات ہونے کو تھی۔ کھانے کے بعد ریت پر سلپنگ بیگ ڈالا، رک سیک سر کے نیچے رکھا، اپنا حوصلہ بڑھانے والا ڈنڈا سلپنگ بیگ کے ساتھ رکھا اور سونے کے لئے لیٹ گیا۔ پینتائے مزار والی پہاڑی تھی، جس کے پیچھے کہیں دور آسمان پر کراچی کی روشنیوں کی دمک پڑ رہی تھی۔ میرے بائیں طرف، کیکر کی جھاڑیوں سے اُوپر، کھڑی گھاٹی کی دیوار میں پرندوں کے غار کالی کالی بہت سی آنکھوں کی طرح اندھیرے میں مجھے گھور رہے تھے۔ سمندر کی ہلکی ہلکی لہریں مدہم آواز میں لوری سنارہی تھیں، ساحل کو سہلا رہی تھیں۔ میں اکیلا اس ویرانے میں کھلے آسمان کے نیچے پڑا تھا۔ اکیلا اللہ مجھے دیکھ رہا تھا۔

کچھ دیر بعد جو پہاڑی پر نظر ڈالی تو دیکھتا ہوں کہ ایک دیا جل رہا ہے۔ میں نے سوچا جو بھی آیا ہوگا اُس نے مجھے دیکھ لیا ہوگا۔ اس جگہ سوتے ہوئے مجھے کچھ خطرہ محسوس ہونے لگا، مگر تھکان کی وجہ سے میں نے ہلنا گوارا نہ کیا۔ آنکھیں بند کیے لیٹا رہا۔ پھر کچھ وقت گزرنے کے بعد پہاڑی پر دوبارہ نظر پڑی تو دیکھا کہ وہ دیا اب سمندر کی جانب پہاڑ کے کنارے پر کافی نیچے تک آچکا تھا۔ میں گھبرا گیا۔ یہ کنارہ تو اس قدر ٹوٹا ہوا اور اتنا کھڑا تھا کہ اس سے اترنا ممکن نہیں تھا۔ میں نے دن کی روشنی میں اسے دیکھا تھا۔ رات کے اس اندھیرے میں کون دیا لئے یہاں سے پانی میں اتر سکتا تھا اور آخر کیوں؟ کوئی انسان تو ہو نہیں سکتا۔ رات کی تنہائی میں جب بھی میں ویرانوں میں رہا، بچپن کے خوف میرے ساتھ ہی رہے۔

دھڑکتے دل کے ساتھ آہستہ سے سلپنگ بیگ سے نکلا، کلہاڑی اٹھائی، اور جو سمندر کے قریب ہوا، تو دیکھا کہ دیا پہاڑی کے کنارے سے الگ ہو کر ہوا میں معلق ہو گیا۔ میرے دل کی ایک دھڑکن چھوٹ گئی۔ پھر کیا دیکھتا ہوں کہ اس ہی طرح کے چھوٹے چھوٹے

چوتھا سفر شکستہ قدم

دیے جگہ جگہ آسمان پر جل رہے ہیں۔ یہ ستارے تھے، جو آہستہ آہستہ ڈوب رہے تھے اور کراچی کی گرد آلود ہوا میں نارنگی رنگ کے نظر آ رہے تھے۔ ایک بڑے ستارے کو میں دیا سمجھا تھا۔ مجھے اپنی بیوقوفی اور خوف پر ہنسی آ گئی۔ ذہن بھی کیسے کیسے ڈراوے دیتا ہے۔

واپس آ کر لیٹ گیا۔ مگر چونکہ خوف کی ایک لہر مجھ پر سے گزر چکی تھی، کبھی پاؤں کی جانب پہاڑی کو دیکھتا اور کبھی بائیں طرف کالے کالے غاروں کو۔ سوچا کہ اٹھ کر کہیں آگے چلا جاتا ہوں، یہاں قبروں کے پاس کیا سونا۔ پھر خیال آیا کہ یہاں صرف اللہ ہی کے آسرے پر پڑے ہو، اگر یہاں سے جاؤ گے تو کیا اللہ کو یہیں چھوڑ جاؤ گے؟ کیا اُس کے آسرے کے بغیر کہیں اور رات گزار لو گے؟ قبرستان میں بھی تو اللہ ہی بچانے والا ہے۔ تو پھر کیا ڈر؟ اٹھنے کا حوصلہ نہ ہوا۔ اللہ کو چھوڑ کر میں اس ویران اندھیرے میں کیسے جیتا؟ پھر بھی خوف دل سے نہ گیا۔ بس جتنی عربی آتی تھی، جو تھوڑی سی ہی تھی، پڑھ ڈالی اور کروٹ لے کر سونے لیٹ گیا۔ خوف سے چھٹکارا پانے کو جلد ہی نیند آ گئی۔

رات کسی وقت میرے سر ہانے ایک عورت نے ہولناک چیخ ماری، بہت اُونچی، بہت لمبی، روتی ہوئی، جیسے کوئی چُویل ہو۔ نیند میں لگا جیسے ساری کائنات سہم گئی ہو۔ میں بیگ میں بند تھا، بوکھلاہٹ میں جھٹکے سے جو کھولنے کی کوشش کی تو زپ دیں پھنس گئی۔ اُس چیخ کے بعد خاموشی ---- صرف میرا دل اتنی زور زور سے اُچھل رہا تھا کہ اُس کا شور کانوں میں دھڑکتا تھا۔ گھٹنوں اور ہاتھوں کے بل سہمے ہوئے مقید جانور کی طرح اپنی ٹارچ ٹٹولنے لگا، جو سوتے وقت کندھے کے پاس رکھی تھی، اب کہیں سلپنگ بیگ میں گم تھی۔ میرے لرزتے جسم پر ہزاروں چیونٹیاں کاٹ رہی تھیں، شاید خوف سے چھوٹے پسینے کا زور مساموں کو پھاڑ رہا تھا۔ جب گلے کے نیچے پھنسی ہوئی زپ میں سے ٹارچ نکال کر جلائی تو سر ہانے دلال چمکتی ہوئی آنکھیں مجھے دیکھ رہی تھیں۔ میرا دل رُک گیا۔

نہ جانے کیوں پھر بھی سانس چلتی رہی۔ پھر وہ آنکھیں پیچھے کو ہٹ گئیں، اور دور سے گیدڑوں کے چیخنے کی آوازیں سنائی دیں۔ میں سکتے میں تھا۔ دماغ ماؤف ہو چکا تھا۔ کچھ دیر لگی سمجھنے میں کہ یہ بھی گیدڑ ہی تھا، جو میرے بیگ سے کھانے کی خوشبو سونگھ کر اپنے ساتھیوں کو چیخ کر بلارہا تھا۔ میرا دل اب بھی اُسی طرح دھڑک رہا تھا۔ اپنے آپ کو گھسیٹ کر بیگ سے نکالا۔ اس خوف میں کہ یہ بھوکے گیدڑوں کا غول ہی مجھے مار ڈالنے کو کافی ہے، میں ایک ہاتھ میں کلہاڑی اور ایک میں جلتی ہوئی ٹارچ لئے سردی کے باوجود پسینے میں شرابور، جھکے گھٹنوں پر کھڑا، ہانپتا ہوا چاروں طرف گھومتا رہا۔ پھٹی آنکھوں سے گھورتا رہا۔ پھر گیدڑوں کی آوازیں دور ہوتی ہوئی سنائی دیں، تو جان میں جان آئی۔ اُجاڑے رستے پر بیٹھا، اندھیری تنہائی میں اپنے بنجر ایمان پر روتا رہا۔

اڑتے بادل کے تعاقب میں پھر وگے کب تک*

گاؤں کی پتلی سی سڑک پر بازار کے اندر کافی دیر سے ٹریفک رُکی ہوئی تھی۔ میں دور سے آرہا تھا، فوجی جیب میں سفر کرتے کرتے تھک چکا تھا۔ اب گھر کے قریب یہاں پھنس کر بیٹھا تھا۔ ایک سپاہی کو بھیجا کہ دیکھ کر آؤ کیا ماجرا ہے۔ آ کے بتایا کہ آگے چوک کے پیچوں بیچ ایک ٹریکٹر کھڑا ہے، اور ڈرائیور کسی دکان میں بیٹھا باتیں کر رہا ہے، کہتا ہے کام ختم کر لوں، ٹریکٹر ہٹالوں گا، جلدی کیا ہے۔ چوک پر ہر طرف سے ٹریفک بند تھی۔ اتنے میں کچھ اور لوگ آگئے اور شکایت کرنے لگے کہ یہ کسی بڑے آدمی کی زمین کا رکھوالا ہے، کوئی نام بھی صاحب کا بتایا، اور سارے علاقے کو تنگ کر رکھا ہے، یہ تو روز کا تماشا ہے۔ جوجی میں آتا ہے کرتا ہے، اسے کوئی پوچھنے والا نہیں۔ پولیس بھی ہاتھ نہیں لگاتی۔ میں نے سپاہی کو پھر بھیجا کہ اُس سے کہو کہ ٹریکٹر فوراً چوک سے ہٹائے اور پھر میرے پاس لے کر آؤ۔ لمبی لمبی موچھیں، طرہ دار بال، اُس پر کام دار ٹوپی، بڑی سی چمکتی چادر ڈالے، ڈولتی ہوئی چال، آہستہ آہستہ چلتے ہوئے تشریف لائے۔ میں دیکھ کر ہی چڑ گیا، گاڑی میں بٹھالیا۔ بمشکل سوار ہوئے اور اپنے صاحب کا شجرہ بتانے لگے۔ میں نے پوچھا سڑک کیوں بند کی۔ تو تیکھے انداز میں کہا کہ کام کے لئے اُتر اُتھا، ابھی سڑک کھول دی ہے۔ گوجرانوالہ پہنچ کر میں نے اُسے حوالدار میجر کے حوالے کیا اور کہا کہ اس کی موچھیں اور سر منڈا کر چھوڑ دو۔ پھر دل ٹھنڈا نہ ہوا، تو کہا بھنویں بھی منڈا دو۔

نیا نیا ۳۱۳ بریگیڈ میں بریگیڈ میجر آیا تھا۔ رات کو بریگیڈ کمانڈر بریگیڈئیر شاہ باہر صاحب کا فون آ گیا۔ ماجرا پوچھا۔ کسی بڑے سیاست دان کا نام لیا کہ اُن کا آدمی تھا۔ پھر تعجب سے پوچھا، "تم نے بھنویں بھی منڈا دیں؟" کہنے لگے کہ جنرل صاحب کو زمین کے مالک کا فون آیا تھا، بہت ناراض تھے۔ جنرل صاحب بھی بہت ناراض تھے۔ بہر حال، بریگیڈئیر صاحب نے میری جان بخشی کروائی۔ نا جانے کیا کہا ہوگا، مگر مجھ سے پھر نہ پوچھا گیا۔ بریگیڈئیر صاحب باہر صاحب نہایت ہی اچھے انسان تھے۔ میں دو سال اُن کے ماتحت کام کرتا رہا، اور انسانیت کے ناطے بہت کچھ اُن سے سیکھا۔ آج بھی اُن دنوں کو یاد کرتا ہوں۔ اُن کے اعلیٰ کردار میں کوئی چیز جعلی نہ تھی۔ جیسے باہر سے دکھائی دیتے تھے ویسے ہی من کے بھی اُجلے تھے۔ بہت پُر خلوص، خجل مزاج اور دھیمی طبیعت کے مالک، اپنی پیشہ وارانہ صلاحیتوں میں کسی سے کم نہ تھے۔ سادگی ایسی کہ اگر کوئی اور گاڑی نہ ہوتی تو سوز و کی دین میں ہی چلے جاتے۔ ایک سرساز میں اگر کچھ نہ ہو تو زمین پر کھل بچھا کر بے فکری کی نیند سو جاتے۔ بہت دکھ ہوا جب انھیں اور ترقی نہ دی گئی۔ کسی نے فوج کا نقصان کیا۔

چوتھا سفر شکستہ قدم

ایک رات میس میں نئے ڈویژن کمانڈر جنرل صاحب کا کھانا تھا۔ میں نے انہیں دیکھا نہیں تھا۔ افسروں سے بھرے ہوئے میس کے بڑے سے کمرے میں ہر طرف سے باتوں کی جھنجھٹا ہٹ اٹھ رہی تھی۔ سب شلواری قمیض اور ویسٹ کوٹ پہنے ہوئے تھے۔ میں ایک دائرے میں کھڑا کچھ افسروں سے باتیں کر رہا تھا۔ ساتھ دوسرے دائرے میں اسی طرح اور افسر کھڑے تھے۔ اُن میں سے ایک کی نظر مجھ سے ملی اور کچھ ٹھہری، تو انہوں نے مجھے اوپر سے نیچے تک گھورا۔ جب واپس میری آنکھوں تک پہنچے، تو پھر میں نے انہیں اوپر سے نیچے تک گھورا، پھر کچھ دیر آنکھوں میں دیکھ کر بھنوس اٹھائیں اور چھوڑ دیا۔ وہ اُس دائرے سے نکل کر سیدھے ہمارے دائرے میں آگئے اور بیچ میں آ کر عرب سے میری طرف ہاتھ بڑھا کر تعارف کے طور پر اپنا نام لیا، رینک نہ بتایا۔ میں نے بھی سختی سے ہاتھ ملا کر اُس ہی طرز پر کہا "شاہد"، پھر انہیں نظر انداز کر کے اپنی باتوں میں مشغول ہو گیا۔ وہ فوراً ہی آگے نکل لئے۔ ایک افسر نے کہا، "جانتے ہو یہ کون تھے؟ نئے ڈویژن کمانڈر"۔ میں تو انہیں پہچانتا نہیں تھا، نام میرے ذہن میں کہاں رہتے ہیں۔ جیسا انہوں نے کیا، ویسا ہی میرا جواب رہا۔ خود کار مشین گن اپنا برسٹ (burst) مار چکی تھی۔ سوچا اب خیر نہیں۔

دوسرے دن انہیں ہمارے بریگیڈ میں پہلی وزٹ (visit) پر آنا تھا۔ صبح، اُن کے انتظار میں، سب قطار میں کھڑے تھے، پہلا میں۔ جب گاڑی سے اترے، بریگیڈ کمانڈر صاحب اُن کو ساتھ لے کر آئے، میں نے سیلوٹ کیا۔ مجھے دیکھ کر مسکرائے۔ ہاتھ ملایا، پھر چھوڑا نہیں۔ میری آنکھوں میں آنکھیں ڈال کر خوش اخلاقی سے باتیں کرتے رہے۔ میری سوئی پھر انک گئی۔ میں نے بھی یوں ہی کیا۔ کافی دیر ہم دونوں میں سے کسی نے پلک نہیں جھپکائی، نہ ہی ملایا ہوا ہاتھ نرم کیا۔ میرا دل جھکنے پر نہ مانا۔ تناؤ چھا گیا۔ پھر میں نے آنکھیں ہٹالیں، کہ آخر ڈویژن کمانڈر ہیں، بس کرو۔ مگر جو کہنا تھا کہہ چکا تھا۔ میں طبیعتاً ایسا نہیں تھا۔ نظریں نیچی ہی رکھتا، پلکیں جھپکتا ہی رہتا، لیکن جب کسی دباؤ کی گھٹن محسوس کرتا تو اس ہی قسم کا ردِ عمل اُٹھاتا۔

ایک مرتبہ چولستان میں دو ماہ کی فوجی مشقوں سے واپسی پر، جبکہ میں گھر پہنچنے کی جلدی میں تھا، کافی دیر ایک ٹرک کے پیچھے گاڑی بھنسی رہی، وہ کسی طرح راستہ ہی نہ دیتا تھا۔ بہت کوشش کے بعد ٹرک کو روکا، تو ڈرائیور نے بدتمیز سا جواب دیا، جس پر میں نے چائنا کھینچ مارا۔ کچھ اور سپاہی بھی ساتھ تھے، وردی اور جوانی کا غرور بھی۔ شاید ڈرائیور تو بھول گیا ہوگا، مگر مجھے وہ چائنا آج تک نہیں بھولا۔ ٹرک والوں سے معذرت کے طور پر، تب سے کسی ٹرک کے پیچھے ہارن نہیں بجاتا۔ یقیناً غرور گھٹیا کام کرواتا ہے۔

سال کے آخر میں جنرل ضیاء صاحب کا ریفرنڈم آ گیا۔ ہمیں کھاریاں کے علاقے میں تعینات کر دیا گیا۔ ریفرنڈم تو سول انتظامیہ نے کروایا، فوج شاید یوں ہی اُن پر دباؤ کے لئے رکھی تھی، یا اگر کوئی ہنگامہ ہو جائے تو ان کی مدد کرنے کو۔ ہنگامہ کیا ہونا تھا۔ فوجی حکمران تھا، حکم کے مطابق سب کچھ ہو رہا تھا، کوئی مددِ مقابل تو تھا نہیں۔ ریفرنڈم کے دن لاہور کے کور کمانڈر صاحب نے تشریف لانا تھا، یہ پنجاب کے گورنر

بھی تھے، مگر ہمارے کورکمانڈر نہ تھے۔ ایک مردوں کا پولنگ سٹیشن دیہی علاقے میں دیکھنا تھا اور ایک خواتین کا شہر میں۔ اُن کے آنے سے پہلے جب میں نے دونوں پولنگ سٹیشن سے فون پر پتا کیا تو خبر ملی کہ تیاری تو پوری ہے لیکن ووٹ ڈالنے کوئی نہیں آیا ہے۔ سول انتظامیہ کا کہنا تھا کہ سب ٹھیک ہے، بے فکر رہیں۔

پھر بریگیڈیئر بابر اور میں کورکمانڈر صاحب کو لینے ہیلی پیڈ پر چلے گئے۔ کچھ دیر میں ہمارے ڈویژن کے جنرل صاحب بھی آ گئے۔ جب کورکمانڈر ہیلی کا پٹر سے اتر کر جیپ کی طرف جا رہے تھے تو میں بھی ان کے پیچھے پیچھے چل پڑا۔ پہلے تو ہمارے جنرل صاحب نے کورکمانڈر صاحب کی بہت تعریفیں کیں، اُن کے کارناموں کا ذکر کیا، پھر کہا، "سر، آپ نے تو ہمیں خرید لیا ہے۔" یہ سن کر مجھے ایک دھچکا سا لگا۔ لگا جیسے میں اندھیروں میں آ گیا ہوں، جہاں کچھ نہ دکھتا ہو، کوئی راہ سُجھائی نہ دیتی ہو۔ میں نے سوچا فوج میں ایسے لوگ کیسے ترقی پا گئے؟ تم جنرل ہو، کیا اتنی ہی وقعت ہے تمہاری؟ ایسا کیا تھا جس کے لئے تم یوں پک گئے، جس کے لئے خود کو مار لیا؟ کیا تمہاری زندگی میں اور کچھ نہیں، صرف بھوک ہے؟ کیا کوئی محبت نہیں جو تمہیں زندہ رہنے کا حوصلہ دے سکے؟ کیا اب لاش بن کر جیو گے؟ میں ان کے پیچھے پیچھے چل رہا تھا، وہیں رک گیا۔ وہ آگے نکل گئے۔ مجھے گلے ہوئے مردہ جسم کی بو آتی تھی۔ ان سے دور ہو گیا۔

واپس بریگیڈ ہیڈ کوارٹر میں آ گیا۔ نہیں پتا یہ کہاں پھرتے رہے اور کب واپس گئے۔ جب بریگیڈیئر شاہ بابر صاحب واپس آئے تو پتا چلا کہ سب ٹھیک تھا۔ دیہی پولنگ سٹیشن، جو جی ٹی روڈ سے کچھ ہی دور تھا، پر لوگوں کا ہجوم تھا، جنھوں نے کورکمانڈر اور جنرل ضیاء کے حق میں نعرے بھی لگائے۔ پولیس والوں نے سڑک سے تمام بسیں اندر موڑ لیں، پھر ایک طرف کو چھپا دی تھیں۔ سول کپڑوں میں پولیس کی بھی خاصی نفری موجود تھی، جو نعرے لگانے کے کام آئی۔ شہر میں خواتین کے پولنگ سٹیشن پر بھی یوں ہی رش تھا۔ کچھ خواتین نے کورکمانڈر صاحب کو گھیرے میں لے لیا اور خوب اُن کی اور فوج کی تعریفیں کیں۔ کچھ نے اُن سے آٹو گراف بھی لئے۔ شاید سرکاری سکولوں کی اُستادیاں تھیں۔ کورکمانڈر صاحب بہت خوش واپس گئے۔ ہمارے جنرل صاحب بھی مسکراتے ہوئے لوٹے۔ کون کہتا ہے ہماری سول انتظامیہ کی کارکردگی اچھی نہیں؟

دوسرے دن دفتر میں کاغذات کا ایک پلندا میرے سامنے آ گیا۔ دیکھا تو تمام بریگیڈ کے افسروں اور جوانوں کے ناموں کی فہرستیں تھیں، کہ ان لوگوں نے جنرل ضیاء کے حق میں ووٹ دیا ہے۔ پہلے صفحہ پر اوپر ہی میرا نام بھی تھا۔ میں نے پوچھا کہ میرا ووٹ کیوں ڈالا، تو کہا گیا کہ ڈالا تو کسی نے بھی نہیں، سب یونٹوں سے اس ہی طرح تمام لوگوں کے نام آئے ہیں اور ہمارے ہیڈ کوارٹر سے بھی سب کے نام لکھ دیئے گئے ہیں۔ یہی احکام اوپر سے ملے تھے۔ میں نے سوچا فہرست دوبارہ کیوں ٹائپ کرواؤں، قلم سے اپنے نام پر لکیر کھینچ دی۔ ریفرنڈم کا سوال ہی اتنا دوغلا تھا کہ کیا آپ پاکستان میں اسلام کا نظام چاہتے ہیں؟ اگر ہاں کہیں، تو جنرل ضیاء صاحب کی حکومت قائم رہے

چوتھا سفر شکستہ قدم

گی۔ اب کون مسلمان اس سے انکار کرے؟ اگلے دن مجھے ڈویژن ہیڈ کوارٹر سے ایک کرنل صاحب نے فون کیا کہ پہلے صفحے پر تمہارا نام ہے، یہ کٹا ہوا کیوں ہے؟ میں نے کہا کہ اس لئے کہ میرا ووٹ اس میں شامل نہیں۔ کچھ خفگی کے بعد انھوں نے فون بند کر دیا۔

اُن دنوں گوجرانوالہ کا ڈویژن ملتان کے آرڈر ڈویژن کے ساتھ منسلک تھا، اور چولستان کے صحرا میں تربیت کرتا تھا۔ دو مہینے کی تھکا دینے والی تربیتی مشقیں ہوتیں۔ اس سال کی مشقیں ختم ہونے پر کور ہیڈ کوارٹر کے احکامات پر ہر بریگیڈ کی ٹیسٹ ایکسرسائز ہونی تھی۔ ڈویژن ہیڈ کوارٹر کو احکام ملے تو انھوں نے اپنا کام نیچے بانٹ دیا۔ تین بریگیڈ تھے، ایک کو کہا دوسرے کی ایکسرسائز کرواؤ، دوسرے کو کہا تیسرے کی اور تیسرے کو کہا پہلے بریگیڈ کی۔ جب ہم نے ٹیسٹ ایکسرسائز تیار کر لی، تو اُس بریگیڈ نے ہم سے پوچھنا چاہا کہ کیا ہوگا اور کس علاقے میں۔ میں نے نہ بتایا، کہ ٹیسٹ ایکسرسائز ہے، بتانے سے مقصد ہی فوت ہو جائے گا۔ پھر اُن کے بریگیڈ کمانڈر کا بریگیڈیئر بارکوفون آیا، تو انھوں نے کہا کہ میرا بریگیڈ میجر ٹھیک ہی تو کہتا ہے۔ اگلے دن ڈویژن سے کرنل سٹاف صاحب کا فون آ گیا۔ میں نے وہی بات دہرائی تو کہنے لگے کہ تمہارے بریگیڈ کی بھی تو ٹیسٹ ایکسرسائز ہونی ہے، کیوں سب کا نقصان کرتے ہو، اپنا بھی؟ میں نے کہا کہ اچھا نہیں کہ ہمیں اپنی کمزوریاں پتا چل جائیں تاکہ ہم اُن کا مداوا کر سکیں؟ انھوں نے بریگیڈ کمانڈر کو بھی فون کیا، مگر بات نہ بنی۔ کچھ دن بعد ڈویژن ہیڈ کوارٹر سے سرکاری خط آ گیا کہ تمام بریگیڈوں نے جو ٹیسٹ ایکسرسائز لکھی ہیں ڈویژن کو بھجوا دیں۔ مقصد ظاہر تھا۔ حکم کے مطابق تمام کاغذات بھجوا دیئے۔

جب دوسرے دن میں اپنی لکھی ہوئی ایکسرسائز کے علاقے میں گیا تو وہاں ٹیسٹ ہونے والے بریگیڈ کے افسر جیپوں پر پھر رہے تھے، علاقے کا جائزہ لے رہے تھے۔ پھر ایکسرسائز سے ایک شام پہلے وہاں رات کے حملے کی تیاری میں دشمن کے علاقے میں ہر کاروائی کے لئے نشانات بھی لگا دیئے گئے، کہ کہیں اندھیرے میں کھونہ جائیں، ایک دوسرے پر نہ چڑھ دوڑیں۔ یہ دھوکا خود کو ہی دے رہے تھے۔ اپنا ہی نقصان کر رہے تھے۔ اگر فوج اور ملک کو اپنا مانتے، تو اپنا نقصان کون کرتا ہے؟ جنگ ہوگی تو کہیں چھپ لیں گے۔ شاید ایسے لوگوں کو اپنی ذات سے آگے کچھ نظر نہیں آتا۔ شاید انھوں نے اپنی ترقی کی خواہشوں کو ہی اپنا معبود بنا لیا تھا۔ ہماری ٹیسٹ ایکسرسائز انجام دینے ہی میں ہوئی، اور اللہ کا فضل رہا۔ کوئی سنگین مسئلہ نہ پیش آیا۔

یہ سلسلہ پھیلتا ہی جا رہا ہے۔ کچھ لوگ کام صرف اس نیت سے کرتے ہیں کہ اپنا دور خوش اسلوبی سے گزار لو، اچھی رپورٹ لے لو، یہ سلسلہ پھیلتا ہی جا رہا ہے۔ کچھ لوگ کام صرف اس نیت سے کرتے ہیں کہ اپنا دور خوش اسلوبی سے گزار لو، اچھی رپورٹ لے لو، جنگ ہوگی تو دیکھا جائے گا۔ ۱۹۷۱ کی لڑائی میں اس کے خوفناک اثرات ہم دیکھ چکے ہیں، اللہ نہ کرے پھر دیکھنے کو ملیں۔ کب تک کمزوریوں پر پردہ ڈالتے رہیں گے، "سب اچھا ہے" کہتے رہیں گے؟

یہ زخم ہیں یا مہرباں کے *

سورج ہمارے سامنے غروب ہو چکا تھا۔ آسمان کی لالی نہر کے پانی پر تیر رہی تھی، جس میں کالے سایوں کی لمبی قطاریں نہر کے پرلے کنارے کی طرف آہستہ آہستہ بڑھ رہی تھیں، تیز بہاؤ کے ساتھ نیچے کو جا رہی تھیں۔ سپاہی آبی رکاوٹ کے پار دشمن کے مورچوں پر حملہ آور تھے۔ ایک ٹیلے پر بیٹھے بریگیڈیئر بابر، میں اور چند اور افسرانہیں دیکھ رہے تھے، سینڈوچ اور چکن کے پکوڑے کھا رہے تھے، چائے پی رہے تھے۔ یہ پلٹن ہمارے بریگیڈ میں نئی آئی تھی اور اپنی تربیت کے اختتام پر بریگیڈ کمانڈر کو نہر کے پار حملہ کر کے دکھا رہی تھی۔

کچھ دنوں بعد ان کی سالانہ جنگی تیاری کی انسپیکشن (Annual Fitness for War Inspection) کا وقت آ گیا۔ سال میں ایک مرتبہ فوج کے تمام سیفوں کی یہ انسپیکشن ہوتی ہے، جس میں ان کی کارکردگی جانچی جاتی ہے۔ میں بریگیڈ کی طرف سے پلٹن میں گیا، پلٹن پر ایڈگراؤنڈ میں کھڑی تھی۔ میں نے انہیں بتایا کہ فلاں فلاں ٹیسٹ ہوں گے۔ یونٹ کیونکہ نئی آئی تھی اور ہماری فارمیشن کی تربیت سے اتنی واقف نہیں تھی، میں نے انہیں کہا کہ پانی کی رکاوٹ کے پار حملہ (Assault Across Water Obstacle) کرنے کے ٹیسٹ کے لئے خود ہی چالیس آدمیوں کا انتخاب کر لیں۔ کمپنی کمانڈر میں نے نامزد کر دیا۔ اصولی طور پر میں پلٹن سے کسی کو بھی چن سکتا تھا، مگر میں نے ان پر آسانی کے لئے انہیں یہ سہولت دی۔

ڈویژن میں ایک تربیتی پانی کی رکاوٹ بنی ہوئی تھی، میں نے انہیں وہاں پہنچ کر تیار رہنے کا وقت بتایا اور دیئے ہوئے وقت پر وہاں پہنچ گیا۔ وہاں پلٹن کے سیکنڈ ان کمانڈ میجر صاحب بھی موجود تھے، جنہوں نے اجازت چاہی کہ کمپنی کمانڈر صاحب کی آنکھ میں کچھ خرابی ہے، تو کسی اور افسر کو ان کی جگہ لگا دیں۔ دوسرے میجر صاحب پہلے ہی تیار کھڑے تھے۔ میں نے اجازت دے دی۔ سیکنڈ ان کمانڈ صاحب، میں اور وہ کمپنی کمانڈر جن کی آنکھ خراب تھی کچھ فاصلے پر ایک درخت کے سائے میں بیٹھ گئے۔ حملہ شروع ہوا۔ سب نے پانی میں جان بچانے والی جیکٹس (life jackets) پہنی ہوئی تھیں۔ سپاہی پانی کی رکاوٹ پر پہنچ کر رک گئے۔ پھر سب ایک ساتھ پانی میں اتر گئے۔ کچھ لمحوں میں ہی چیخ و پکار شروع ہو گئی۔ سب کے سب ڈوبنے لگے۔ چالیس لوگ تھے، کھرام مچ گیا۔ چند انجینئر کور کے لوگ وہاں کام کر رہے تھے، کچھ انہوں نے، کچھ ہم لوگوں نے سپاہیوں کو کھینچ کر باہر گھسیٹا۔ پھر بھی پانچ سپاہی ڈوب کر مر گئے۔

چوتھا سفر شکستہ قدم

جب اس واقعے کی انکوائری ہوئی تو میں اپنا بیان لکھنے کے بعد یونٹ کے کمانڈنگ آفسر کے گھر گیا تاکہ اُن کو پڑھا دوں، کہ اُس میں کوئی ایسی چیز نہ ہو جس سے اُن کی مشکلوں میں اضافہ ہوتا ہو۔ اُن کی بیگم نے دروازہ کھولا اور کہا کہ بھائی آجائیں، سب ہی کھانے کے کمرے میں بیٹھے ہیں۔ میں کچھ حیران ہوا کہ سب کون۔ جب اندر پہنچا تو دیکھا کہ وہاں کمانڈنگ آفسر کے ساتھ، سیکنڈ ان کمانڈ صاحب، کمپنی کمانڈر صاحب، اور دوسرے میجر صاحب جنھوں نے اُن کی جگہ حملہ کروایا تھا، سب موجود تھے، بہت سے کاغذ میز پر بکھرے تھے اور کوئی مباحثہ چل رہا تھا۔ مجھے دیکھ کر سب گھبرا گئے اور کاغذ سمیٹنے لگے۔

بیگم صاحبہ شاید واقف نہیں تھیں کہ ماجرا کیا ہے اور سمجھیں کہ میں بھی اُسی کام سے آیا ہوں جو سب کر رہے ہیں، اسی لئے مجھے سیدھا وہیں بھیج دیا۔ یہ سب اصل میں مل کر اپنے اپنے بیان ایسے بنا رہے تھے کہ قصور وار مجھے ٹھہرایا جائے۔ میں سمجھ تو گیا، مگر اُن کو اپنا بیان دے کر اور یہ کہہ کر واپس آ گیا کہ اگر اس میں کچھ تبدیلی کرنا چاہیں تو مجھے بتادیں۔ میں نے سوچا مشکل گھڑی میں کچھ ایسا نہ کہہ دوں کہ اُن کا نقصان ہو۔ میں کس دل سے وہاں گیا، اور وہاں کیا جال بنا جا رہا تھا، میری عقل حیران تھی۔ کہنے کو وہ میرے دوست ہی تھے۔ آج، کتنی ہی ٹھوکریں کھانے کے بعد بھی اسی طرح لوگوں کا اعتبار کرتا ہوں، چوٹ کھاتا ہوں۔ وہ مجھ پر ہنستے ہیں۔ پھر اللہ مجھے ہنساتا ہے۔

اُس پلٹن کے کچھ آفسران اُونچے عہدوں پر فائز تھے۔ اُن کا زور تھا کہ یونٹ پر کوئی آنچ نہ آئے، ہمارے افسروں کو کچھ نہ ہو، بریگیڈ کو ہی ذمہ دار ٹھہرایا جائے۔ ڈویژن کی آبی رکاوٹ کے پار حملہ کرنے کی کتاب (SOP) میں لکھا تھا کہ حملہ آور سپاہ آبی رکاوٹ پر خود اپنا حفاظتی بندوبست کرے گی، یعنی حفاظتی جیکٹس کا استعمال اور لائف گارڈ (life guard) کھڑے کرنا۔ بریگیڈ تو یہ کام نہیں کرتا، وہ تو صرف کمانڈ کا ایک ہیڈ کوارٹر ہے۔ اُس کے پاس تو ایسی سپاہ ہی نہیں ہوتی۔ الزام مجھ پر یہ تھا کہ میں نے لائف گارڈ نہیں کھڑے کئے۔

جو لائف جیکٹیں GHQ سے ملی تھیں، انکوائری کے دوران ٹیسٹ کرنے پر معلوم ہوا کہ ایک سپاہی کا ہتھیار سمیت پانی میں وزن نہیں اٹھا سکتیں۔ یہ حیران کن بات تھی۔ مگر GHQ پر انگلی کون اٹھاتا۔ یہ بات بھی واضح ہو گئی کہ یونٹ نے جو پندرہ دن کی تربیت کی تھی، اُس میں لکڑی کے ہتھیار اٹھائے تھے جن کا وزن لائف جیکٹس سنبھال لیتیں، ٹیسٹ کے دن اصل ہتھیار لے کر گئے جو خاصے وزنی تھے۔ تمام افراد جو ڈوب گئے تھے، یونٹ نے اپنی تربیت کے اختتام پر جو رپورٹ بھیجی، اُس میں اپنی اچھی کارکردگی ظاہر کرنے کے لئے انھیں تیراک (swimmers) دکھایا ہوا تھا۔ یہ رپورٹ ہر یونٹ بھیجتی ہے کہ اس تربیت کے دوران ہم نے کتنے لوگوں کو تیراک بنایا۔ خیر انکوائری ہو کر ڈویژن ہیڈ کوارٹر میں گئی، پھر جنرل صاحب نے اپنی سفارشات لکھ کر کور ہیڈ کوارٹر میں بھیج دی۔ میں نے کسی سے نہ کچھ پوچھا، نہ کہا۔ سوچا جو اللہ کی طرف سے آئے گا، کافی ہوگا۔ اُس ہی میں میرے لئے کوئی بہتری ہوگی۔

کور ہیڈ کوارٹر ملتان میں تھا۔ یہاں پر ایک کرنل صاحب، جو اس سلسلے سے وابستہ تھے، اُنھوں نے مجھے بلوایا۔ ہم ایک دوسرے کو جانتے نہیں تھے۔ کہنے لگے میں نے جب انکوائری پڑھی تو دیکھا کہ انکوائری کے انکشافات (findings) کچھ اور ہیں اور آخر میں رائے (opinion) اُن کے برعکس ہے، اور اس رائے کی بنیاد پر مجھے سزا کا مستحق قرار دیا گیا ہے۔ عموماً کورٹ آف انکوائری کی رائے ہی پڑھی جاتی ہے، انکشافات کی تفصیل میں کون جاتا ہے۔ کہنے لگے میں سمجھتا ہوں رائے کا صفحہ انکوائری کے بعد دوبارہ لکھوایا گیا ہے، کیونکہ اس کا انکوائری سے کوئی واسطہ نہیں۔ اور اسی رائے کے مطابق جنرل صاحب نے اپنی سفارشات (recommendations) لکھی ہیں۔ مجھ سے کچھ تفصیلات پوچھیں۔ شاید کوئی سر پھرے تھے جو بالا حکام کی خواہشوں سے ہٹ کر انصاف چاہتے تھے۔ کاش ہمیں ایسے ہی کچھ اور سر پھرے مل جائیں۔ اللہ اُن کا بھلا کرے۔ اُنھوں نے فائل پر خاصی سخت باتیں لکھیں جن کی وجہ سے کور کمانڈر کوڈ ویشن کمانڈر کی سفارشات سے ہٹ کر فیصلہ دینا پڑا، اور میری سزا میں کچھ کمی ہوئی۔ باقیوں نے بھی کچھ نا کچھ سزا پائی۔

جیسے ہمارے ملک میں کنبہ پروری کا رواج چلتا ہے کہ اپنوں کا خاص خیال رکھا جائے، ویسے ہی فوج میں بھی ہے۔ یونہی کہا جاتا ہے، "بڑا حوصلے والا شخص ہے، یاروں کا یار ہے۔ دوستوں کے لئے کچھ بھی کر سکتا ہے"، چاہے کسی اور کا گلا ہی کیوں نہ کٹتا ہو۔ فوج میں عام رواج ہے کہ اپنی یونٹ کے لئے سب کچھ جائز ہے، جھوٹ بھی، دھوکا بھی اور چوری بھی۔ میں کوئی انوکھی بات نہیں کہہ رہا۔ یہی دستور ہے۔ میں اس سلسلے میں فوج میں بھی اور کچھ اپنوں میں بھی بدنام ہی رہا۔ کہا جاتا کہ یہ خود غرض ہے، اسے صرف اپنی پڑی ہے، کسی کا کوئی کام نہیں کرتا، ڈرپوک ہے، وغیرہ وغیرہ۔ انصاف کا کوئی رتبہ نہیں۔ مگر میں پھر بھی سچ کے تعاقب میں سرگرداں رہا۔ خراشیں تو لگیں، تنہائی بھی ملی، باتیں بھی سنیں، مگر اللہ کے شکر سے کبھی ایسی چوٹ نہ کھائی کہ اُنھ نہ سکوں۔

پھر ہوا سے سلگ اٹھے پتے*

نہ جانے کیوں آج گولیاں چل پڑیں۔ سبز کوٹ کے سبز پہاڑوں میں بھاری مشین گنوں کی آوازیں گونج اٹھیں۔ آج پھر مورچے گرم تھے۔ میں اور میرا بیٹا عدنان، جو شاید اُس وقت گیارہ سال کا تھا، پہاڑوں میں پھر رہے تھے، چھپ گئے۔ اُس نے لال رنگ کی اونی ٹوپی پہنی ہوئی تھی۔ میں نے مزاق میں کہا، "تمھاری ٹوپی دور سے دشمن کو نظر آتی ہوگی۔ دشمن نے تم پر ہی فائر کیا ہے۔" اُس نے فوراً ٹوپی اتار کر جیکٹ کے اندر رکھ لی۔ وہ بہت ایکسائٹڈ (excited) تھا۔ ہم چھپتے چھپتے اپنے مورچوں پر واپس پہنچ گئے۔ میں نے پوچھا، "دشمن کے فائر کا جواب دینا ہے؟" فوراً مشین گن کے پیچھے بیٹھ گیا اور خوب فائر کیا۔ رات تک فائر یوں ہی چلتا رہا۔ بے سود۔ پھر سب سو گئے۔ دوسرے دن امن تھا، جیسے کچھ ہوا ہی نہ ہو۔ ہم پہاڑوں پر پھرتے رہے، دشمن بھی۔

مجھے کشمیر آئے ہوئے کچھ عرصہ ہو چکا تھا۔ گوجرانوالہ سے تبدیلی پر واپس اپنی پلٹن دس بلوچ میں آچکا تھا۔ پلٹن سبز کوٹ کے علاقے میں دفاعی مورچوں میں لگی تھی۔ کبھی کبھی دونوں طرف سے فائر کھل جاتا، ورنہ عموماً امن رہتا۔ منگلا میں چھوٹا سا گھر مل گیا، ہر دوسرے ہفتے دودن کو گھر چلا جاتا۔ چیر کے درختوں سے ڈھکے پہاڑوں پر ہمارے مورچے تھے، زیادہ وقت ان پہاڑوں میں ہی پھرتا رہتا۔ بچے بھی چھٹیاں گزارنے کچھ دنوں کے لئے آجاتے، میرے ساتھ ہی بکر میں رہتے۔

ایک ٹیلے پر چنار کا ایک سوکھا درخت تھا، شاید بجلی گرنے سے جل گیا تھا۔ اندر سے کھوکھلا تھا۔ میں وقت گزارنے کے لئے اسے تراشتا رہتا۔ ایک فارغ کارپینٹر کو بھی ساتھ لے لیا تھا، جب وقت ملتا درخت پر سیڑھی لگائے ہتھوڑے اور چھینی سے اُسے نوچتا رہتا۔ اچھا خاصہ ماڈرن آرٹ کا مجسمہ تراش لیا تھا، شاید اب کسی چولہے کی نظر ہو گیا ہو۔

کرنل محمد انور صاحب (مرحوم) پلٹن کمانڈ کر رہے تھے، بریگیڈئیر ہو کر فوج سے ریٹائر ہوئے اور پاکستان کو ایٹمی طاقت بنانے میں بہت اہم کردار ادا کیا۔ کئی سال ان اداروں سے منسلک رہے۔ نہایت محنتی، غریب پرور اور شفیق انسان تھے، کسی کا بھی کام ہوتا، کرنے نکل کھڑے ہوتے۔ اللہ نے جلد ہی اپنے پاس بلا لیا۔ یاد کرنے کو پیچھے ایک جم غفیر چھوڑ گئے۔ چند ہی ماہ یہاں رہا، مگر کشمیر کے سبز پہاڑوں پر گزارے ہوئے یہ یادگار دن تھے۔

کچھ عرصے میں پلٹیں اوکاڑا روانہ ہو گئی۔ کمانڈر کرنل طارق حمید صاحب نے سنبھال لی، جو مجھ سے چھ ماہ سینئر تھے اور ہم PMA سے ایک دوسرے کو جانتے تھے۔ آپ جنرل عبدالحمید خان کے صاحبزادے ہیں، جو فوج کے سربراہ رہ چکے ہیں۔ ہم نے کئی بار یونٹ میں اکٹھی نوکری کی۔ کراچی میں مارشل لاء ڈیوٹیوں پر بھی بار بار میری آڑ بن جاتے اور مجھے بچاتے رہتے۔ بریگیڈ میجر بن کر ریٹائر ہوئے۔ انتابا اخلاق اور شریف طبع انسان ان کے سوا مجھے نہیں ملا۔ نہایت شگفتہ اور تحمل مزاج طبیعت پائی۔ محبت کرنے والے انسان ہیں، کسی لڑائی جھگڑے میں نہیں پڑتے۔ اونچے گھرانے کے باوجود نہایت سادہ طبیعت کے مالک ہیں اور خوش رہتے ہیں۔

اُن دنوں، ۱۹۸۶ اور ۸۷ کی سر دیوں میں، ہندوستان کی فوج ایکسرسائز براس ٹیکس (Exercise Brass Tacks) کے بہانے ہماری سرحدوں پر آگئی، جس سے جنگ کا خدشہ پیدا ہو گیا۔ ہم ڈویژن کی ذخیرہ (reserve) سپاہ تھے اور سارے علاقے میں ہمارے فرائض پھیلے ہوئے تھے۔ پورے علاقے میں گھومنے پھرنے کا اور فوجی مشقوں کا خوب موقع ملا۔ کافی عرصہ سلیمان کی میں بھی رہے۔ گھروں سے دور بارڈروں پر رہتے، مگر مصروف رہتے، طارق حمید صاحب کی کمانڈ میں میرا بہت اچھا وقت گزرا۔

بریگیڈ میجر احسن بھٹی صاحب ہمارے بریگیڈ کمانڈر تھے۔ فوجی اصولوں کے پابند، صاف ستھرے کردار کے مالک اور کام میں نہایت ہنرمند۔ نہ جانے اُنھوں نے ایک میجر میں ایسا کیا دیکھا کہ میری سالانہ رپورٹ میں لکھا کہ یہ افسر ایک دن پائے کالیفٹمنٹ جنرل ("of some consequence") بنے گا۔ انجام کار تو نہ ہوا، مگر پھسلتا لڑھکتا لیفٹیننٹ جنرل ضرور بن گیا۔ الحمد للہ۔

سعودی عرب جانے کا ایک موقع ملا، مگر میں آمادہ نہ ہوا۔ اُن دنوں فوج کے کافی لوگ سعودی عرب جا رہے تھے۔ مجھ سے بھی پوچھا گیا کہ تمہارا نام بھی وہاں جانے کے لئے آیا ہے، اگر جانا چاہتے ہو تو تیاری کر لو، ہم خط بھیج رہے ہیں۔ دل تو بڑا چاہا کہ اُس صحرا میں بھی جھانک لوں، مگر حوصلہ نہ ہوا۔ سعودی حکومت کے ساتھ معاہدے میں ایک یہ بھی شق تھی کہ سعودی حکومت ان فوجی دستوں کو رسول نافرمانی کی صورت میں اندرون ملک استعمال کرنے کی مجاز ہوگی۔ یہ صورت میں کیسے قبول کرتا؟ انکار کر دیا۔ سوچا اپنے ہی کسی دشت کی خاک چھان لوں گا۔

ان ہی دنوں فوج نے صحرائیں اونٹوں کے استعمال کا ایک تربیتی کورس (Camel Handling Course) تشکیل دیا، جس کی ذمہ داری سندھ ریجنل کمانڈر کو سونپی گئی۔ شاید دو ماہ کی تربیت تھی، جس میں سارا وقت تھر پار کر کے ریگستان میں اونٹوں پر گزرتا تھا۔ صحرائیں کھرجانا، دشمن سے چھپتے پھرتا، اُس کو ڈھونڈنا، اونٹوں کے نشانات تلاش کرنے، اُن کو پہچاننا، ستاروں کی مدد سے سمت معلوم کرنی، اندھیروں

چوتھا سفر شکستہ قدم

میں راہ تلاش کرنی اور بغیر رسد کے دن گزارنے کی تربیت اس کورس میں شامل تھی۔ GHQ نے اُن کے نام طلب کئے جو یہ کورس کرنا چاہتے ہوں۔ لگا جیسے میرے ہی لئے کسی نے کورس ترتیب دیا ہے، فوراً نام دے دیا۔ مگر فوج سے ایک ہی شوقین کا نام آیا۔ کورس منسوخ کر دیا گیا۔ چند ہی کورس ہیں جو میں نے بہت شوق سے کئے۔ ایک پیراشوٹ سے اترنے کا، جو پشاور میں SSG نے کروایا اور ایک سمندر میں غوطہ خوری کا، جو پاکستان نیوی نے منوڑا میں کروایا۔ ایک یہ بھی ہو جاتا تو صحرا میں لوٹنے کی اور یوں مارا مارا پھرنے کی آرزو بھی پوری ہو جاتی۔ آج بھی جب تھر کا خیال آتا ہے، ایک دوست یاد آتا ہے، "ہلکے ہلکے سروں میں نوحہ کنناں۔"

میں کہیں ہمسفر اب رواں کیوں نہ ہوا*

شمالی چترال کی یارخون دریا کے ساتھ ساتھ، اپنے بھاری بھرکم جھولے اٹھائے، ہم آہستہ آہستہ پہاڑی راستے پر چڑھ رہے تھے۔ ابھی اس وادی میں بہت سفر باقی تھا۔ دوپہر کی دھوپ میں برف سے ڈھکے ہوئے سرد پہاڑوں کی آسمان پر اٹھتی چوٹیاں چمک رہی تھیں، بنا رہی تھیں۔ پگھلتی برف سے نکلتا شفاف پانی پتھروں پر یوں چل رہا تھا جیسے اس جمود سے آزادی پاتے ہی کسی عشق کی طرف لپکتا ہو۔ جیسے اس ہی ایک آرزو نے زندگی بخشی ہو، اس ہی کی جستجو میں تیز چل رہا ہو۔ اس کا چمکیلا پانی جگہ جگہ آبشاریں بناتا، پتھروں سے ٹکراتا، بیتابی سے بہہ رہا تھا، ہزار میل دور میلے سمندر سے ملنے۔ ساحل پر ناپنے۔ ایک ہی کنارے پر بار بار سر پٹختے۔ جھوٹ کی شدت میں جلنے۔ جل کر وہ پھر پیدا ہوگا، دوبارہ پاک ہو کر، پھر نئی آبشاروں کو جنم دے گا۔ دور کراچی کا ساحل اور اس پر سر پٹختا سمندر میری آنکھوں میں گھوم گیا۔

ہم پانچ افسر، جن میں ایک ڈاکٹر بھی شامل تھا، گوجرانوالہ سے فوجی جیپوں پر یہاں ٹریکنگ (trekking) کے لئے آئے تھے۔ فوج میں اس طرح کی مہمات پر جانے کا باقاعدہ پروگرام ہوا کرتا تھا، اور اس دوران آپ ڈیوٹی پر تصور کئے جاتے۔ اس مہم کا منصوبہ میں نے اُن دنوں بنایا جب میں گوجرانوالہ میں بریگیڈ میجر (BM) تھا، مگر جب تک یہ منظور ہوا، میری تبدیلی ہو چکی تھی۔ میرے ساتھیوں نے میرا شوق دیکھتے ہوئے مجھے ساتھ چلنے کی دعوت دی، اور میں ایک ماہ کی چھٹی لے کر ان کے ساتھ ہولیا۔

چترال پہنچنے پر پہلے گنہار وادی سے گزرتے ہوئے اُردو گئے۔ بہت خوبصورت وادی ہے۔ پھر کافرستان کی وادیوں میں پھرتے رہے، جہاں کے لوگوں کو ترقی کرنے کی اجازت نہیں، کیونکہ انہیں سیاحوں کے نام لکھ دیا گیا ہے، جن کے حقیر ڈالر ہماری آنکھوں میں چمکتے ہیں۔ آخر میں ٹریج میر کی چوٹی کے ساتھ سے ہوتے ہوئے، گاڑیاں مستوج میں چھوڑ کر یارخون دریا کے ساتھ ساتھ اپنا بوجھ لئے چل پڑے۔ اُن دنوں جیپیں اور آگے نہ جاسکتی تھیں۔ یہاں سے یہ چترال کی وادی کو چھوڑتے ہوئے، گاڑیاں گلگت کی وادی میں داخل ہوئیں، پھر یاتین میں ہمارا انتظار کرتی رہیں۔ ہم کو گلشیر (glacier) سے گزرتے ہوئے ڈرکوٹ ڈرے سے نیچے اُتر کر یاسین آنا تھا۔

ہمیں اس راستے پر چلتے ہوئے کئی دن ہو گئے تھے۔ اب ڈاکٹر کے انتظار میں دیر سے پگڈنڈی پر بیٹھے تھے۔ ڈاکٹر میجر صاحب، جو اپنے ساتھ بہت سی دوائیاں بھی لائے تھے، مریضوں اور تماش بینوں کے ہجوم میں گھرے، آنکھوں سے اوجھل تھے۔ ہم

جہاں رکتے، ڈاکٹر کو جمع گھیر لیتا۔ ان کی خبر ہمارے آگے آگے چل رہی تھی۔ پہاڑوں پر بنے دور دراز گھروں سے لوگ اپنی تکلیفیں اٹھائے راستے پر جمع ہو جاتے، پھر ہمیں رکنا پڑتا۔ یہاں تو نہ کوئی ڈاکٹر تھا نہ دوا، بس دعاؤں سے ہی شفا پاتے، مگر اب ان میں بھی اثر کہاں رہ گیا تھا۔ آج بھی ہمیں روز کی طرح دیر ہو رہی تھی۔ جب کافی انتظار کر لیا، تو میں نے کہا کہ میں صابر کو نکال کر لاتا ہوں۔ مجھے کو چیر کر جب بیچ میں پہنچا تو دیکھا کہ ایک نوجوان، جو اپنی بیمار ماں کو چار پائی پہ ڈال کر لایا تھا، کاغذ میں لپیٹی کوئی چیز ڈاکٹر کو دینے پر بضد ہے اور ڈاکٹر مستقل اُس کا ہاتھ پیچھے ہٹا رہا ہے۔ یہ لوگ عموماً ڈاکٹر صاحب کو تحفے دیتے، سوکھی خوبانیاں، باداموں کے ہار، وغیرہ۔ ڈاکٹر نے کہا، "دیکھیں سر یہ مجھے کیا دے رہا ہے؟" میں نے نوجوان کے ہاتھ سے ماچس کی ڈبیا جتنا چرس کا ٹکڑا لیا، اُس سے ہاتھ ملایا، شکریہ ادا کیا، چرس کو اپنے چھوٹے سے بھرے ہوئے بیگ (pouch) میں ڈالا، جو بیگٹ کے ساتھ لٹکایا ہوا تھا، اور صابر کو وہاں سے لے کر نکل آیا۔ میں نے کہا یہ تو تحفہ دے رہا تھا، دنیا کے منشیات کے مسائل سے ناواقف ہے، آپ کیوں اتنے ناراض ہیں۔ وہاں جگہ جگہ پوست کی کاشت ہوتی تھی، اب بھی پھول کھلتے تھے، اور افیون اور چرس عورتوں اور مردوں کے عام استعمال میں تھیں۔ پھر ہم آگے چل پڑے۔ وقت کے ساتھ، جیسے جیسے اس بیگ سے چیزیں استعمال ہوتی رہیں، وہ ٹکڑا کہیں سگریٹ کی ڈبیوں، پیسوں، ٹافیوں، واک مین (walkman) اور اُس کی کیسٹوں کے نیچے چلا گیا۔ ذہن سے بھی چلا گیا۔

یارخون وادی کے مشرق میں ہندو راج پہاڑیوں کی برف پوش چوٹیاں تھیں، جو چترال کو گلگت سے علیحدہ کرتی ہیں۔ مغرب میں ہندوکش سلسلے کے پیچھے دریائے آکسس (River Oxus)، یا آمودریا ہے، جس کی وادی کو واخان کوریڈار (Wakhan Corridor) کہتے ہیں۔ یہ وہ تاریخی راستہ ہے جہاں سے مارکو پولو قریب ساڑھے سات سو سال پہلے چین گیا تھا۔ کہتے ہیں منگولوں کے بھی کچھ دستے اس ہی راستے سے افغانستان میں داخل ہوئے تھے۔

باروغل پہنچ کر ہم نے ایک دن افغانستان کے بارڈر پر گزرا۔ درہ باروغل (Baroghil Pass) سے افغانستان کی سرحد پار کی، یہاں سے آمودریا نظر آتا ہے۔ پھر سرحد کے ساتھ چلتے ہوئے درہ دروازہ (Darwaza Pass) سے واپس آئے۔ باروغل اس وادی کی آخری آبادی ہے۔ نیچی نیچی چھتوں والے پتھر کے چند مکان تھے، جن میں بیٹھ کر داخل ہونا پڑتا۔ ان میں سوکھی مٹی کے چبٹے ٹکڑے احتیاط سے تہ بہ تہ رکھے تھے۔ ان ہی پر بیٹھے، ان ہی پر لیٹتے۔ پتا چلا کہ جہاں گلشیر پکھلتا ہے اُس سے نیچے جو کائی (moss) پیدا ہوتی ہے اُس کی جڑیں اس مٹی میں بھری ہوتی ہیں۔ جب یہ خشک ہو کر ٹکڑے ہو جاتی ہے تو گھروں میں محفوظ کر لیتے ہیں۔ ساری سردیاں، جونہایت شدید ہوتی ہیں، ان ہی کو جلا کر زندگی کو گرمائی ملتی ہے۔ مویشی بھی یہی کھاتے ہیں۔ اُن کی زندگی ان مٹی کے ٹکڑوں کو خشک رکھنے پر قائم تھی۔

باروئل سے اپنے ساتھ دو یاک (yak) لئے اور سامان لاد کر درّہ درکوٹ پر چڑھنے لگے۔ سخت چڑھائی تھی اور گلشیر (glacier) پر چلنا خاصا دشوار۔ روزمرہ کی گزرگاہ بھی نہ تھی کہ کوئی راستے کا نشان ملتا۔ بس یاک کے پیچھے پیچھے چلتے رہے۔ یاک کو برف سے ڈھکی ہوئی کھائی (crevice) کی پہچان ہوتی ہے۔ کبھی اُس پر پاؤں نہیں رکھتا۔ کہتے ہیں اُس کھائی کے اندر سے ہوا آتی ہے جو اوپر پڑی ہوئی برف کو ایسی شکل دیتی ہے جس سے دھوپ کی پڑتی روشنی کی چمک باقی جگہوں سے مختلف ہو جاتی ہے، جو یاک پہچان لیتا ہے۔ ہلکی ہلکی برف باری ہو رہی تھی۔ تیز ہوا کے ساتھ برف کے ذرے فضا میں اڑ رہے تھے۔ کچھ فاصلے تک ہی دکھائی دے رہا تھا۔ جب چوٹی سے پار ہو کر اترنا شروع کیا تو اچانک شدید ڈھلوان آگئی، جیسے برف پوش پہاڑ یکا یک زمین بوس ہو گیا ہو، ہزاروں فیٹ نیچے گر گیا ہو۔ اونچائی اس قدر تھی کہ نیچے وادی میں گاؤں بمشکل نظر آ رہا تھا۔ اس بلندی سے اترنے میں جو مشکل ہوئی، چڑھنے میں نہیہ ہوئی تھی۔ کچھ فاصلہ اتر کے، راستے سے ذرا دائیں طرف ہٹ کر، ایک گرم چشمہ ہے، ساتھ ہی پتھر کاٹ کر کسی نے ایک تالاب بنایا ہوا ہے جس میں بھرے پانی سے بھاپ اُٹھتی رہتی ہے۔ میں اور ڈاکٹر صابر کافی دیر اس کے گرم پانی میں پڑے رہے۔ سفید پوش پہاڑوں کے نیچے یہ کیا خوب حمام ہے۔

جب ہم گلگت پہنچے تو گاڑیوں کو دیکھ بھال کے لئے ورکشاپ بھیج دیا اور باقی گروپ چند دنوں کے لئے گلگت ٹھہر گیا۔ میں چونکہ چھٹی لے کر آیا تھا، دوسرے دن ہوائی جہاز سے واپسی کے لئے ایئر پورٹ روانہ ہوا، کہ جو چھٹی باقی ہے اوکاڑہ میں گھر پر گزار لوں۔ ہمیں کشمیر سے اوکاڑہ آئے زیادہ دن نہیں ہوئے تھے۔ یہیں سے میں چترال کے لئے روانہ ہوا تھا۔

جب گلگت ایئر پورٹ کے اندر جانے لگا تو سیکورٹی والے کو اپنا چھوٹا بیگ بیلٹ سے اتار کر دیا۔ اُن دنوں تلاشی کی مشینیں نہیں تھیں۔ جب اُس نے اسے کھولا تو اُس میں سے چرس نکلی۔ یہ اب تک وہیں پڑی تھی، اور میں بھول چکا تھا۔ اُس نے مجھے اپنے بالا افسر کے پاس بھیج دیا۔ میں نے اُسے بیگ میں چرس کی موجودگی کا قصہ سنایا۔ کچھ منت سماجت بھی کی، جو نہ اس سے پہلے کبھی کی تھی اور نہ کبھی بعد میں اللہ نے یوں گرنے دیا۔ مگر شاید اللہ نے ایک باریوں مجھے جھکانا بھی تھا۔ میں نے کہا فوج میں میجر ہوں، چار بچے ہیں، اگر منشیات کے کیس میں پکڑا گیا تو عزت خاک میں مل جائے گی، روزی بھی۔ اچھا انسان تھا، مان گیا۔ کہنے لگا، "یہ کوئی ایسا مسئلہ نہیں ہے، عموماً غیر ملکیوں کے پاس سے بھی نکلتی رہتی ہے، نہ جانے سیکورٹی گارڈ آج اتنا خفا کیوں ہے۔ آپ جائیں، مگر کسی سے اس کا تذکرہ نہ کریں ورنہ ہم مشکل میں پڑ جائیں گے۔" میں نے اُس کا شکریہ ادا کیا کہ میری جان بچائی، اور جہاز میں بیٹھ کر اوپنڈی آ گیا۔

میرے ذہن میں بہت دنوں تک یارخون وادی ہی گھومتی رہی۔ کیا کچھ ہونے والا تھا، میں نہیں جانتا تھا۔ بیشک اللہ ہی جانتا ہے کہ آگے کیا رکھا ہے۔ جو میری منتیں تھیں راہیگاں تھیں، جو میرے دل میں شک تھا کہ اللہ کے سوا بھی کوئی بچانے والا ہے، دور ہونے والا تھا۔

مضحل لئے رباب ہستی کی *

رات کے اندھیرے میں ٹرین کسی ویرانے سے گزر رہی تھی۔ میں اپنی سوچوں میں گم، AC کلاس کے ڈبے کی کھڑکی سے باہر دیکھنے کی کوشش کر رہا تھا، لیکن شیشے میں صرف ڈبے کے اندر کا عکس ہی نظر آتا۔ یہ کیا کہ جب باہر نظر ڈالوں تو اندر ہی دکھائی دے! شاید اس لئے کہ باہر اندھیرا ہے۔ اور اندر؟ میں بے ترتیبی سوچوں میں گم راولپنڈی سٹیشن کے انتظار میں بیٹھا تھا۔ ٹرین تو پٹریوں پر چلتی ہے، میں غیر متعین راہ پر، ہر سو پھیلے اندھیرے میں، کیسے راستہ تلاش کروں؟ اس قحط الز جال میں کسے رہہ کروں؟

"اُٹھو اُٹھو، جلدی کرو"، میں اپنی سوچوں سے چونک پڑا۔ ٹرین آہستہ ہو چکی تھی، شاید سٹیشن قریب تھا۔ ڈبے میں میرے کزن بریگیڈئیر فیروز حسن خان، جو اُن دنوں میجر تھے، کھڑے تھے، بہت گہرائے ہوئے لگ رہے تھے۔ میں نے بیگ اٹھایا، میرا ہاتھ پکڑے گھیسٹے ہوئے مجھے چلتی ٹرین سے، پلیٹ فارم سے پہلے ہی اتار لیا، اور اندھیرے میں کسی کنارے کے راستے سے باہر لے آئے۔ کار کھڑی تھی، بٹھایا اور تیزی سے گلیوں میں سے گزرتے ہوئے نکل گئے۔ اُن کی بیگم اگلی سیٹ پر بیٹھی رو رہی تھیں۔ تمام باتوں سے ناواقف، میں نے کہا ماجرا کیا ہے؟ پوچھا، "تم گلگت ایئر پورٹ پر ہیروئن سمگل کرتے پکڑے گئے تھے؟" گلگت سے آئے کئی ماہ گزر چکے تھے۔ سارا واقعہ کہیں ذہن میں پیچھے چلا گیا تھا۔ میں نے سوچا تھا ماجرا ختم ہوا۔ میں نے سارا قصہ انھیں سنایا، تو کہنے لگے، "رپورٹ میں تو لکھا ہے کہ تم تین کلو ہیروئن سمگل کرتے پکڑے گئے تھے، مگر نکلنے میں کامیاب ہو گئے۔"

پھر انھوں نے مجھے بتایا کہ میرے خلاف ملٹری انٹیلیجنس (MI) کی یہی رپورٹ ہے اور کہا کہ راولپنڈی سٹیشن پر ملٹری پولیس (MP) مجھے گرفتار کرنے کھڑی ہے۔ دوسرے دن صبح میرا بیرون ملک سٹاف کورس پر جانے کے لئے انٹرویو تھا، جس کے لئے میں یہاں آیا تھا۔ میجر فیروز MS برانچ میں تھے، جہاں سے مجھے اس انٹرویو کا بلاوا آیا تھا اور MS برانچ کو MI نے یہ تفصیلات بتائی تھیں۔

اُس ہی صبح اوکاڑہ میں ڈویژن ہیڈ کوارٹر کو بھی MI کا خط ملا کہ یہ افسر تین کلو ہیروئن گلگت ایئر پورٹ سے نکالنے میں کامیاب ہو گیا تھا۔ اب اسے فوری گرفتار کیا جائے۔ بعد میں پتا چلا کہ گلگت ایئر پورٹ پر ایک MI کے کارندے نے دیکھا کہ میں سیکورٹی والوں کے دفتر میں گیا، اور پھر واپس جہاز میں آیا، تو اُس نے اُن سے ماجرا پوچھا، اُنھوں نے کچھ نہ بتایا چونکہ مجھے چھوڑ چکے تھے۔ کافی دن یہ انہیں کریدتا رہا،

آخر سیکورٹی والوں سے خفا ہو کر یہ رپورٹ اپنی طرف سے بنا کر بھیج دی۔ اُن بیچاروں کی بھی انکوائری کروادی۔ مجھے ان باتوں کی کچھ خبر نہ ہوئی۔

میرے گھر سے جانے کے کچھ دیر بعد، ڈویژن کے انٹیلی جنس افسر ملٹری پولیس سمیت میرے گھر پہنچے۔ پتا چلا کہ میں ٹرین سے راولپنڈی چلا گیا ہوں۔ کینٹ کے قریب گیمبر سٹیشن کی طرف لپکے، مجھے وہاں نہ پا کر گاڑی اوکاڑہ سٹیشن کی طرف دوڑائی اور ٹریفک میں پھنس کر جب تک پہنچے، ٹرین جا چکی تھی۔ ہوش کرتے تو گیمبر سٹیشن سے ہی ٹرین میں بیٹھ جاتے اور مجھے اوکاڑہ سٹیشن پر پالیتے۔ پر اس سانحے میں اللہ کی یہ ترتیب نہ تھی۔ اُس نے میری پہلی ملاقات کسی اور ہی جگہ، کسی اور ہی سے کرائی تھی۔ قید ہونا نہ لکھا تھا۔ ۱۰ کے افسر نے GHQ میں خبر دے دی کہ افسر بھاگ گیا ہے، شاید راولپنڈی سٹیشن پر اترے۔

رات کو ہم بریگیڈیئر علوی (مرحوم) کے گھر گئے۔ انھیں جنگ میں بازو پر شدید زخم آیا تھا جس بنا پر وہ سالوں MS برانچ میں ہی رہے۔ یہ دفتر افسران کی کارکردگی کا ریکارڈ رکھتا ہے اور اُن کی پوسٹنگ (posting) اور پروموشن (promotions) وغیرہ کا ذمہ دار ہے۔ بریگیڈیئر صاحب ان معاملات میں نہایت تجربہ کار تھے اور مجھے بھی جانتے تھے۔ کہنے لگے، "جب تمہاری انکوائری ہوگی، کیا تم اس بات کا اقرار کرو گے کہ تمہارے پاس سے چرس نکلی تھی؟" میں نے کہا، "ہاں"۔ تو کہتے ہیں، "باقی سب کہانی ہے، کون سنے گا۔ جنرل ضیاء کے بہت سخت احکامات ہیں کہ منشیات کے معاملات میں کورٹ مائل کیا جائے اور سبق آموز سزا دی جائے، تاکہ فوج کے نوجوان افسروں میں اس پھیلنے والے رجحان پر قابو پایا جاسکے"، پھر کہتے ہیں، "اگر تو بہت برا ہوا تو جیل جاؤ گے، اور اگر کسی نے مدد کی، اور بہت اچھا ہوا، تو شاید تمہاری پنشن بچائی جاسکے"۔ اُن دنوں شاید پانچ یا چھ لاکھ بنتی تھی۔ کہنے لگے، "اس سے زیادہ کی امید نہ رکھو۔ نوکری بحال رہنا ممکن نہیں"۔ میں نے سوچا، چلو جیسے اللہ کی مرضی۔ اور سوچنے کو تھا ہی کیا۔

دوسرے دن سریمونیل (ceremonial) وردی پہن کر انٹرویو دینے GHQ پہنچ گیا۔ جو افسرانٹرویو کے لئے آئے تھے سب کو خبر ہو چکی تھی۔ مجھے مفروضہ سمجھتے تھے، خوش ہوں گے کہ مقابلہ کم ہوا۔ دیکھ کر بہت حیران تھے، آنکھیں چرا رہے تھے۔ آپس میں گھس گھس کر تے، مجھ سے کوئی بات نہ کرتا، جو میجر صاحب MS برانچ سے انٹرویو کے افسروں کا ریکارڈ ساتھ لائے تھے، انھوں نے بتایا کہ DGMI خاص میرے انٹرویو میں شرکت کریں گے۔

میں انٹرویو کے لئے خوب تیار تھا۔ آتے وقت انجم سے کہا تھا کہ انٹرویو کے لئے دو جواب تیار کیے ہیں، وہ یہی پوچھیں گے۔ میرے پاس دو ہی نسخے تھے۔ ایک مرتبہ جب میں PMA میں پڑھا رہا تھا، افسروں کی تربیت پر تحقیق ہوئی، جس میں میں بھی شامل تھا۔ اس

چوتھا سفر فکلتی قدم

کی کچھ تفصیلات مجھے یاد تھیں۔ دوسرا، سٹاف کورس کے دوران مجھے اسلامی قیادت کے اصولوں پر ریسرچ کرنے کا موقع ملا تھا۔ میں نے کہا بس یہی دو سوالوں کا جواب میں دوں گا۔ وہ ہنس کر کہنے لگی، "کیا پرچہ آؤٹ (out) ہو گیا ہے؟" میں نے کہا، "نہیں سوال تو وہ اپنی مرضی کے ہی پوچھیں گے، مگر جواب تو میں نے اپنی مرضی کے دینے ہیں نا۔ تم دیکھنا۔"

انٹرویو کے کمرے میں پہنچا۔ بڑا سا دفتر تھا، میز کے پیچھے ایک لیفٹیننٹ جنرل صاحب بیٹھے تھے اور دونوں اطراف کوئی پانچ یا چھ آفسران تھے۔ کمرے کے پتھوں بیچ کھلی جگہ پر ایک بغیر بازو کی کرسی رکھی تھی۔ مجھے اشارہ کیا کہ بیٹھیں۔ بیٹھ گیا۔ میری دہنی طرف دیوار کے ساتھ ایک جنرل صاحب اور بیٹھے تھے، جن کی جھلک آنکھ کے کونے سے دکھائی دیتی تھی۔ میرا اندازہ ہوا کہ یہ DGMI ہیں۔ یقیناً سب کو قصہ پتا تھا۔

سوال کیا گیا، "فرض کریں ہم آپ کو ملک سے باہر سٹاف کورس کے لئے چن لیتے ہیں۔ آپ مختصر اُبتائیں کہ آپ وہاں جا کر ایسا کیا کہیں گے کہ لوگ پاکستان سے متاثر ہوں؟" یہ میرے دو تیار کردہ جوابوں میں سے نہ تھا۔ جنرل ضیاء کے اسلامی نظام کا دور تھا۔ میں نے کہا، "اُن کو بتاؤں گا کہ ہم نے دنیا سے ہٹ کر ایک نیا نظام اپنے ملک میں لگایا ہے اور دنیا کو چاہیے کہ ہمیں موقع دے، تاکہ وہ یہ جان سکیں کہ آیا یہ نظام اپنانے کے لائق ہے یا نہیں۔ ہم اسے بہترین نظام سمجھتے ہیں۔" پھر اس سے پہلے کہ وہ کچھ کہتے، کہا، "لیکن اُن کو یہ نہیں بتاؤں گا کہ یہ نظام پاکستان میں کامیاب نہیں ہو سکتا۔" اب ظاہر ہے کہ اُنھوں نے مجھ سے پوچھنا تھا کہ کیوں کامیاب نہیں ہو سکتا۔ کوئی امتحان تھوڑی تھا، بس مجھے جانچنا تھا۔ پھر کافی دیر اسلامی قیادت کے اصولوں اور ہمارے معاشرے کی منافقت پر ہی بات ہوتی رہی۔ یہ میرا تیار کردہ جواب تھا۔

پھر اُنھوں نے کوئی اور بات پوچھی، تو میں اُسے گھما کر افسروں کی تربیت پہ لے گیا، کہ جب بنیادی تربیت ہی ٹھیک نہیں تو آگے کیا ہوگا۔ جنرل صاحب فوج میں تربیت کے ذمہ دار تھے۔ پھر یہی موضوع رہا، جو میرا تیار جواب تھا۔ بہر حال کہنا یہ کہ انٹرویو بہت ہی اچھا ہو گیا۔ یہ شاید اُس وقت میرے لئے بہت اہم تھا، مگر میں انٹرویو کے بارے میں نہیں سوچ رہا تھا۔ بیرونی سٹاف کورس کی کسے پڑی تھی، میرے اور مسئلے تھے۔ پھر آخر میں DGMI نے سوال کیا، "شاید، گلگت ایئر پورٹ پر کیا ہوا تھا؟" میں کرسی سے تھوڑا اٹھا، اُن کی طرف منہ کیا اور سارا ماجرا کہہ سنایا۔ وہ غور سے مجھے دیکھتے رہے۔ اور کوئی سوال نہ پوچھا۔ مجھے شکریہ کہہ کر عزت سے کمرے سے باہر بھیج دیا گیا۔

باہر آیا تو بتایا گیا کہ مجھے ایڈجوئنٹ جنرل (AG) صاحب کے پاس جانا ہوگا۔ یہ وہی تھے جو PMA میں کمانڈنٹ ہوا کرتے تھے جب میں وہاں پڑھاتا تھا، اور مجھے اتنا پسند نہیں کرتے تھے۔ میں کچھ پریشان ہوا کہ مجھ سے ناراض ہیں، نہ جانے کس انجام کو پہنچائیں۔

جب اُن کے دفتر پہنچا تو دیکھا کرسی خالی تھی، اور ایک اور کرسی پر ایک بریگیڈیئر صاحب بیٹھے تھے۔ یہ اُس دفتر کے سربراہ تھے جو فوج میں نظم و ضبط کا ذمہ دار ہے اور AG صاحب کے ماتحت کام کرتا ہے۔ آج کل یہاں میجر جنرل ہوتا ہے۔ کہنے لگے AG صاحب آج کہیں دورے پر گئے ہوئے ہیں۔ سن کر میری جان میں جان آئی۔ یہ اللہ کی مدد تھی۔ بریگیڈیئر صاحب نہایت ہی خوش مزاج اور ہمدرد انسان تھے۔ پورا ماجرہ پوچھا، پھر کہا دوسرے دفتر میں بیٹھ کر سارا قصہ لکھ دو۔ ہم انکو انری کروائیں گے، اگر تمھاری بات ٹھیک ہوئی تو پھر بات یہیں ختم، ورنہ جو انجام ہوا بھگتنا پڑے گا۔

انٹرویو میں میرے کاغذوں پر لکھ دیا گیا کہ افسر امریکہ کے سٹاف کالج کے لئے چن لیا گیا ہے، اگر MI سے کلیر ہو گیا۔ انکو انری شروع ہو گئی۔ سارے گروپ کو بلوایا گیا اور انری پورٹ کے متعلقہ لوگوں کو بھی۔ ہم بہت عرصے GHQ کے ساتھ منسلک رہے۔ اُن دنوں میرے بارے میں عجیب عجیب باتیں بنائی گئیں۔ کسی نے کہا اس نے امریکہ میں منشیات کے کاروباریوں سے تعلق بنا لیا ہے۔ وہ اسے نکال کر لے جائیں گے، یہ بھاگ جائے گا، جہی اس کو پرواہ نہیں ہے۔ شاید مجھے فیصلے سے پہلے ہی قید کروانا چاہتے تھے۔ لوگوں نے ملنا جلنا، بات کرنی چھوڑ دی۔ GHQ کی سڑکوں پر مجھے آتا دیکھ کر راستہ بدل لیتے، کسی دفتر میں گھس جاتے۔ شاید سمجھتے کہ مجھ سے بات کر کے خود کو مشکل میں نا پھنسا لیں۔ میری پلٹن کے کچھ سینئر افسران اہم عہدوں پر فائز تھے، جن میں سے ایک تو ناراض بھی ہوئے کہ اُس نے ایک دفعہ فون پر بھی نہیں بتایا کہ میں کسی مشکل میں ہوں، مدد چاہتا ہوں، حالانکہ سب جانتے تھے میں کس حال میں ہوں۔ مگر میرے لئے معاملہ اتنا گھمبیر تھا کہ کسی سے کہنے سننے کی ہمت ہی نہ ہوئی۔ ڈوبتی کشتی میں صرف اللہ ہی یاد آتا۔ پھر میں کسی اور کا سہارا لے کر اُسے کیسے چھوڑ دیتا؟ دو خدا کیسے بناتا؟ میں نے کسی سے مدد کی التجا نہیں کی۔ صرف اللہ کو پکارا۔

اُن دنوں ایک بورڈنگ سکول کے خواب دیکھا کرتا تھا، جہاں دین اور دنیا کی تعلیم بغیر جھگڑوں کے دی جاسکے۔ جہاں بچوں کی نشوونما ایسی ہو کہ وہ صرف اللہ ہی کو رب مانیں، صرف اُس ہی کے آگے ہاتھ پھیلائیں۔ غلامانہ ذہنیت نہ رکھیں، بلکہ آزاد انسانوں کی طرح سوچیں۔ نوکر ہی نہ بنیں، خود کچھ کریں۔ جہاں کوئی فرسٹ نہ آئے اور کامیابی کا معیار ہنر میں مہارت اور کردار کی بلندی ہو، نہ کہ دولت یا اونچا رتبہ۔ ایسا ادارہ جو ایثار اور محبت سکھائے، دوسروں پر سبقت لے جانا نہیں۔ اس کا نام میں نے علی آباد رکھا۔ میرا دل بہلتا رہا۔ سوچا، شاید اللہ نے کہا ہو کہ ریٹائرمنٹ کا انتظار کیوں کرتے ہو، فوج سے نکلو، ابھی شروع کرو۔ خواب کا غمزہ پر اتار تار با اور اس کی تفصیلات بناتا رہا۔ وقت گزرتا رہا۔ آخر اللہ نے مجھے کنارے لگا دیا۔ انکو انری میں میری باتیں سچی نکلیں اور میں جیل جانے کے بجائے بیوی بچوں کے ساتھ ایک سال کے لئے امریکہ چلا گیا۔

اب یہ بتا کہ روح کے شعلے کا کیا ہے رنگ؟*

میں ایک لکیر کی طرح سیدھے راستے پر کچھ ساتھیوں کے ہمراہ جارہا ہوں، جو سب ہی میری طرف متوجہ ہیں۔ دونوں طرف چٹیل میدان ہے اور دور افق پر نیو یارک (New York) جیسی سکاٹی لائن (sky line) نظر آرہی ہے۔ بائیں طرف، کچھ دور، ایک تناور سوکھے درخت پر بہت بڑا اژدہا لپٹا ہوا، میری طرف دیکھ کر پھنکار رہا ہے۔ میں جانتا ہوں کہ یہ میرا کچھ نہیں بگاڑ سکتا اور میں ہنستا ہوا ہاتھیں کرتا چلا جا رہا ہوں۔ یہ خواب میں نے اُن دنوں دیکھا جب میرے خلاف منشیات سمگلنگ کی انوائٹری ہو رہی تھی۔ میرے دل کو اُس اللہ نے سکون عطا کیا، جس نے میرے ہاتھ کسی اور کے آگے اٹھنے سے روک دیئے۔ اور میرے دل کو یقین عطا کیا کہ ایک وہی بادشاہ ہے اور وہی میرا پالنے والا۔ اس کے علاوہ اور کوئی رازق نہیں۔ صرف اُس ہی کے آگے جھکنا جائز ہے۔ یہ صرف اُسی کا حق ہے۔

لیکن میں بھی مٹی کا ہی بنا تھا۔ امریکہ جا کہ اُسے بھولا تو نہیں، پر یاد بھی نہ کیا۔ اُس نے مجھے پھر بھی یاد رکھا، اور ہر مشکل سے بچاتا رہا، ہر غلط فیصلے سے روکتا رہا۔ ایسی محبت کی توقع کسی انسان سے کیسے کروں؟ مجھ میں خود اتنی سکت نہیں۔

پاکستان سے دو افسر فیمیلیوں کے ساتھ ایک سال کے کورس پر آئے تھے۔ میں اور میجر اشفاق پرویز کیانی، جو بعد میں جنرل پروموٹ ہوئے، اور فوج کے سربراہ متعین ہوئے۔ ہم اس سے پہلے انٹرنی سکول کوئٹہ میں ایک ساتھ پڑھاتے تھے اور ساتھ ساتھ گھر بھی تھے۔ پھر OTS میں بھی اکٹھے رہے۔ امریکہ آ کر سب ہی خوش تھے۔ کئی ممالک کے افسران کورس پر آئے ہوئے تھے، خوب ملنا جلتا رہتا۔ چاروں بچے سکول جاتے۔ انجمن کی توجہ ہر سے بنتی تو دکا نوں پر رہتی۔ تفریح کی خاطر بی مال (Mall) میں گھنٹوں گزار لیتی۔ گل ملا کر مہینے میں سترہ سو ڈالر ملتے تھے، جس میں سے سارے پانچ سو ڈالر فیسٹ کا کرایہ لگ جاتا، کچھ گاڑی کی قسطوں میں چلے جاتے، پھر بھی مزے میں رہے۔ سب ہی بہت اچھے لوگ ملے، استاد بھی اور طالب علم بھی اور ان کے ساتھ پڑھ کر بہت مزا آیا، ان سے بہت کچھ سیکھا۔ ہندوستان، بنگلہ دیش، ملائیشیا اور نیپال کے افسروں سے کافی ملنا جلتا رہا۔ سب ہی نہایت اچھے اور منسا رہتے۔ زیادہ گھوم پھر تو نہ سکے اور نہ ہی کورس کے اختتام پر چھٹیوں گزارنے کا کوئی خرچہ بچا۔ جب واپسی کا وقت آیا تو میں نے بچوں سے پوچھا کہ یہاں رہو گے یا واپس پاکستان چلیں، سب نے ایک زبان ہو کر کہا، "بس اب ہمیں گھر جانا ہے"۔ نا جانے کیا ہے اس مٹی میں!

چوتھا سفر شکستہ قدم

یہاں پھر وہی قصہ دہرایا گیا۔ خفیہ ایجنسی کے ایک حضرت نے تعلق قائم کیا، پھر ایک دن کہا کہ میں پاکستان کی فوج پر ایک کتاب لکھ رہا ہوں۔ فوج کے بارے میں باتیں کرتے رہے۔ پچھلے تجربے کے باوجود میں چونکا نہ تھا، پہچانا نہیں۔ ایک دن کہنے لگے میں سکواش کا شوقین ہوں تم کھیلتے ہو، مجھے بھی سکھاؤ۔ ہفتے میں ایک دو مرتبہ کھیلنے بھی آ جاتے۔ کورس کے اختتام کے قریب، جب ہماری خوب جان پہچان ہو گئی تھی، مجھ سے کہا کہ اگر تم امریکہ کی فوج میں ہوتے تو دنیا کی جدید ترین فوج میں اعلیٰ کمانڈ پاتے، دنیا کے مختلف علاقوں میں تمہاری کاروائیاں پھیلتیں۔ ایک پیشہ دارانہ سپاہی کا تو یہ خواب ہے کہ بہترین سے بہترین فوج کی کمان کرے۔ اگر تم چاہو تو یہ ہو سکتا ہے۔ میں نے بات کو ٹال دیا کہ میں اپنا ملک چھوڑنا نہیں چاہتا، تو کہنے لگے اچھا تو ایسا کرو کہ بچوں کو یہاں چھوڑ جاؤ۔ جس تعلیمی ادارے میں چاہو گے اور جتنا وہ چاہیں گے پڑھیں گے۔ خرچے کی فکر نہ کرو۔ کہنے لگے، "میں دفاعی محکمے (Defence Department) سے تعلق رکھتا ہوں، اور تم سے مستند بات کہہ رہا ہوں، بات کرنے کا اختیار رکھتا ہوں۔ ہم اپنے دوست ممالک کے چنے ہوئے افسران کا خیال رکھتے ہیں۔" میں نے سوچا دیکھوں کیا چاہتا ہے۔ پوچھا مجھے کیا کرنا ہوگا؟ کہنے لگے کہ سینئر افسران سے ہمیں آپ کی فوج کے مسائل اور ضروریات ملتی رہتی ہیں، لیکن ہم چاہتے ہیں کہ ان کی تصدیق ہو سکے، اور اگر کوئی فوج کی ضروریات نچلے درجے پر ہوں تو ہم انہیں بھی پورا کر سکیں۔ یہ ہمیں اوپر کی سطح سے نہیں پتا چلتا۔ تم اپنی فوج میں ہی رہو اور اپنی فوج کی بہتری کے لئے یہ باتیں ہم تک پہنچاتے رہو، تاکہ ہم تمہاری فوج کی بہتر مدد کر سکیں۔ مجھے اُس کی دانش پر افسوس ہوا، اور اُس سے زیادہ اپنوں کی وفاداریوں پر۔ یقیناً یہ صرف مجھ پر ہی تو عنایت نہیں کر رہے تھے، سب کو ہی دانہ ڈالتے ہوں گے۔ کامیابی بھی پاتے ہوں گے، تب ہی تو سلسلہ جاری تھا۔ اور صرف یہاں ہی کیوں، اور ملکوں میں بھی ہوتا ہوگا، خاص کر برطانیہ میں۔ میں نے پھر اُس وفاداریوں کے خریدار سے جان چھڑائی۔

کورس میں کچھ مضامین تو لازم تھے اور کچھ ہمیں اختیار تھا کہ اپنی مرضی سے انتخاب کر لیں۔ میں نے خانہ جنگی اور انقلاب (Internal Wars and Revolution) کے مضمون کو بھی بغور پڑھا۔ اس سلسلے کے کئی اختیاری مضامین چنے۔ اس میں ایک خاصی دلچپ ایکسرسائز (exercise) تھی، جس میں ایک جزیرہ تصور کیا گیا تھا، جو تقریباً آسٹریلیا کے برابر تھا اور بحر اوقیانوس (Atlantic Ocean) کے بیچ میں تھا۔ اس جزیرے میں کئی ممالک دکھائے گئے تھے، جو مختلف حالات سے گزر رہے تھے۔ ہر ملک کے بارے میں تمام تفصیلات مہیا کی گئی تھیں، اُن کے مسائل اور معاشرتی حقائق، سیاسی نظام اور حالات، قبیلوں کے جھگڑے اور مسائل، افواج کی تفصیلات، آبادی، تعلیمی معیار، پیداوار، زمین کی بناوٹ، موسم کے اثرات، وغیرہ وغیرہ۔ ان میں سے کچھ ممالک امریکہ کے زیر اثر تھے، کچھ سوویٹ یونین کے، اور باقی جگہوں پر کچھ پیچیدہ سے مسائل تھے، کہیں سیاسی جھگڑے چل رہے تھے، کہیں خانہ جنگی تھی۔ غرض ایک چھوٹی سی دنیا پیش کی گئی تھی۔

چوتھا سفر شکستہ قدم

ہمیں امریکہ کی حکومت اور فوج کے مختلف عہدوں پر فائز کر دیا گیا، اور یہ احکامات ملے کہ اس علاقے سے سوویٹ یونین کے اثر و رسوخ کو ختم کر کے تمام ممالک کو "آزاد" کرایا جائے، تاکہ عوام کی زندگیوں میں بہتری آ سکے اور وہ اپنی مرضی کے مطابق، ہمارے اتحادی بن کر، امن سے رہ سکیں۔ پھر منصوبے پیش کئے جاتے، مختلف مسائل پر مباحثے ہوتے۔ نفسیاتی جنگ جیتنے کے لئے میڈیا کا اہم کردار رہتا۔ کچھ دنوں بعد وقت کو آگے بڑھا دیا جاتا اور حالات میں تبدیلی دکھائی جاتی، عہدے بھی تبدیل کر دیئے جاتے۔ اس ہی طرح یہ خرابی پھیلانے اور اقوام کو قابو کرنے کا بے لگام سلسلہ جاری رہا۔ ہمیں کھلی چھوٹ تھی، جو چاہے کریں، مگر اس کا انجام ہمارے مقاصد کے حصول پر اثر انداز نہ ہو۔ امن اور آزادی کی آڑ میں اس فتنہ خیز پالیسی کو قریب سے دیکھنے اور سمجھنے کا ایک اچھا موقع ملا۔

اس ہی سلسلے کا ایک چھوٹا کورس ویتنام کی جنگ کے بارے میں بھی لیا، اور اس میں ویٹکانگ کی گوریلا لڑائی مطالعے کے لئے چنی۔ کسی نے گوریلا کے خلاف کاروائیاں پڑھیں، کسی نے میڈیا کا کردار اور اہمیت، اور اس ہی طرح اس جنگ کے مختلف پہلوؤں کو لوگوں نے چنا۔ پھر سب اپنا اپنا حصہ بیان کرتے اور اس پر تبادلہ خیال ہوتا۔ اس طرح سب ایک دوسرے سے مستفید ہوتے۔ اس کام سے ہٹ کر ہمیں ایک ایک کتاب بھی دی گئی، جسے پڑھ کر ہم نے اپنے تاثرات کلاس میں پیش کرنے تھے۔ مجھے جنگ کے آخری مراحل میں جنگ بندی کے لئے کی گئی ڈاکٹر ہنری کسنجر (Dr. Henry Kissinger) کی ڈپلومیسی (diplomacy) کے بارے میں کتاب دی گئی۔ میں نے اپنی پیشکش میں اس ڈپلومیسی کو بیان کرتے ہوئے اسے میکا ویلین (Machiavilleian) کہا تو استاد نہایت برہم ہوئے۔ کہنے لگے جن لوگوں کو مسائل کی پیچیدگی کا علم نہیں ہوتا وہ ایسی ہی جہالت کی باتیں کرتے ہیں۔ مجھ سے ذاتی ناراضگی مول لی اور خفا ہی رہے۔

ایک اور حصے میں میرا پاؤں بھی پھسلا، جو آج بھی بھولا نہیں۔ ایک رات ہم کسی پارٹی پر گئے، بہت دیر سے ڈولتا ہوا گھر پہنچا۔ صبح ایک مضمون جمع کروانا تھا، لکھنے بیٹھ گیا۔ تھکے ہوئے ذہن سے بمشکل صبح کے قریب ختم کیا، اور کچھ جملے ایک کتاب سے لکھے، حوالہ دینا رہ گیا۔ استاد نے کوتاہی پکڑ لی۔ بہت شرمندگی ہوئی۔

ایک ایکسرسائز کا اور تذکرہ کرتا چلوں۔ یہ فوجی نقل و حرکت اور بندوبستی کاروائیوں (logistics) کی ایکسرسائز تھی۔ اُن دنوں سوویٹ یونین کا افغانستان پر قبضہ تھا، جیسے آج امریکہ کا ہے۔ اس ایکسرسائز میں یہ تصویر پیش کی گئی تھی کہ کمیونسٹ فوجیں افغانستان سے نکل کر ایران میں داخل ہونے کا ارادہ رکھتی ہیں اور ایرانی بلوچستان پر قبضہ کر کے سمندر تک راستہ کھولنا چاہتی ہیں۔ امریکی فوج نے، جو اومان (Oman) میں دکھائی گئی تھی، ایران کے ساحل پر حملہ (Amphibious Landing) کرنا تھا، چابہار (Chabahar) پر قبضہ کر کے، فوجوں نے آگے بڑھتے ہوئے سوویٹ فوجوں کو سمندر سے دور ہی روکنا تھا۔ یہ ۱۹۸۷ء کی بات ہے۔ سنا تھا کہ اُن ہی دنوں میں امریکی



ڈاکٹر لیون ورتھ، پریڈ آف نیشنز



پریڈ میں ہمارا رنگ



امریکہ میں قومی جھنڈے کو سلامی

چوتھا سفر شکستہ قدم

فوج کی سطح پر ایسی ہی ایک تجزیہ کار ایکسپسٹ گواڈر کے علاقے کے لئے بھی نقوشوں پر کی گئی تھی۔ اب کچھ ہی سال پہلے ان کی افواج گواڈر کے علاقے میں اس حملے کی مشق بھی کر چکی ہیں، جس میں پانی کے جہازوں سے کافی فوجی سامان ساحل پر اتارا گیا، پاکستانی حکومت کے تعاون سے۔ یقیناً یہ افغانستان کے لئے متبادل راستے کی تیاری ہے، جب بلوچستان کو پاکستان سے توڑنے کے منصوبے پر عمل کرنا موزوں ہوگا۔

ایک مرتبہ مجھے کلاس میں پاکستان کے بارے میں ایک پریذینٹیشن دینے کو کہا گیا۔ اُن دنوں افغانستان پر سوویت یونین کے قبضے کا کلاس میں ذکر رہتا، کہ اس کے بعد کہیں پاکستان کی باری نہ آجائے۔ جن دنوں میں کونٹہ میں شاف کالج میں پڑھ رہا تھا، میں نے ایک جنرل صاحب کی تقریر کے بعد، جس میں انہوں نے اس خدشے کا اظہار کیا تھا کہ اگر افغانستان پر سوویت یونین کا قبضہ مستحکم ہو گیا تو وہ پاکستان پر چڑھائی کر سکتا ہے، اُن سے سوال کیا تھا کہ اس سلسلے میں ہم کیا تیاری کر رہے ہیں، کیونکہ ہماری فوج تو ایک روایتی جنگ میں اُن کی فوج کا مقابلہ نہیں کر سکتی؟ انہوں نے تو جواب نہیں دیا تھا، لیکن ایک میجر کے ذہن میں یہ فکر زندہ رہی۔ اس ہی موضوع پر میں نے کلاس کو پریذینٹیشن دے دی۔ میں نے کہا کہ اگر حالات ایسے سنگین ہو جائیں کہ ملک اُن کے قبضے میں جانے لگے، تو حکومت اور افواج پھر بھی دشمن کے ہاتھ نہیں لگنی چاہئیں۔ افغانستان میں دونوں ہی دشمن کے ہاتھ آگئی تھیں، اور اس وجہ سے ملک پر اُن کا قبضہ مستحکم ہو سکا۔ پھر فوج سے ٹوٹ ٹوٹ کر لوگ علیحدہ ہوئے اور آبادی کے ساتھ مل کر اُن کے خلاف جہاد شروع کیا۔ قریب دس سال لڑتے رہے۔ پھر خانہ جنگی شروع ہو گئی کیونکہ اس لڑائی میں کوئی اعلیٰ کمانڈ نہیں تھی، سب ٹکڑوں میں بٹے ہوئے تھے۔

کچھ پاکستان کے شمالی علاقہ جات، چترال، کشمیر اور اُن سے منسلک پہاڑی علاقوں کے جغرافیائی حالات بیان کئے۔ میں نے کہا کہ ہمیں چاہیے کہ ان علاقوں میں ایسی تیاری رکھیں کہ ضرورت پڑنے پر حکومت اور افواج کے اہم لیڈر اور کارندے اسلام آباد اور راولپنڈی چھوڑ کر یہاں آسکیں اور، ان بگڑے ہوئے حالات میں بھی، ہماری حکومت قائم رہے۔ اس طرح اسلام آباد میں دشمن کی قائم کی گئی کسی دوسری حکومت کو دنیا کے لئے تسلیم کرنا ممکن نہیں ہوگا، یا کم از کم اس میں دشواری ہوگی۔ یہاں ہمارے ریڈیو اور ٹی وی کی نشریات کا بھی بندوبست ہو اور مکمل مواصلاتی نظام بھی ہو، تاکہ دنیا سے تعلق قائم رکھا جاسکے۔ یہاں سے حکومت دشمن کے خلاف جنگ جاری رکھ سکتی ہے۔ چین کا تعاون اور امداد بھی رہے گی۔ اُس وقت میزائل تو نہ تھے، ورنہ وہ بھی نصب کئے جاسکتے تھے۔

فوج کی تنظیم اور تربیت ایسی ہو کہ وہ گوریلا لڑائی کے لئے بھی تیار ہو۔ فوج کا ایک حصہ اس پہاڑی علاقے کی دفاع پر لگا دیا جائے۔ آخری حالت میں بقایا فوج اپنے چھوٹے ہتھیاروں کے ساتھ دیہی اور شہری علاقوں میں پناہ لے کر گوریلا لڑائی شروع کر دے۔ آبادی میں سے بھی بہت سے لوگ امداد کو اٹھ کھڑے ہوں گے۔ اس کی کمانڈ کے لئے پوری تنظیم بھی پیش کی اور ساری کارروائی کی ترتیب

چوتھا سفر شکستہ قدم

بھی۔ بتایا کہ چھوٹے ہتھیاروں کا امونیشن مختلف جگہوں پر ذخیرہ کیا جاسکتا ہے، جوان حالات میں فوج کی گوریلا تنظیمیں اٹھالیں گی۔ بھاری ہتھیار کچھ فوج کے ساتھ بڑے شہروں میں مورچہ بند ہو سکتے ہیں، بقایا تباہ کر دیے جائیں۔ ہوائی جہاز بھی شمالی علاقوں میں موجود ہوائی اڈوں پر رکھے جاسکتے ہیں، اگر ان اڈوں کو اس کے لئے تیار کر لیا جائے۔ کچھ مورچہ بند شہروں میں بھی رہ سکتے ہیں۔ خوراک کا ذخیرہ بھی کرنا ہوگا۔ نیوی کسی دوست ملک منتقل ہو سکتی ہے۔ میں نے کہا تو میں وہی فلاح پاتی ہیں جو کسی بھی صورت ہتھیار ڈالنے پر آمادہ نہیں ہوتیں۔ کہا کہ جیت اور ہار کمانڈر کے ذہن میں ہوتی ہے، میدان جنگ میں نہیں۔ پھر کچھ دوستوں نے میرا نام 'کنگ' رکھ دیا، اور مذاق میں مجھے اسی نام سے بلاتے۔

کورس کے اختتام کے قریب پیرو (Peru) کے ایک افسر نے، جو میرے ساتھ ہی کورس کر رہا تھا، مجھ سے کہا، "میں فری میسنز (Free Masons) کی تنظیم سے منسلک ہوں"، اُن کی انگوٹھی بھی دکھائی۔ کہنے لگا، "ہم ساری دنیا میں امن اور بہتری کے لئے کام کرتے ہیں۔ ہمارے ایک بڑے عہدیدار تم سے ملنا چاہتے ہیں۔ وہ اتنے اونچے مرتبے پر ہیں کہ میں نے بھی انہیں کبھی نہیں دیکھا۔" میں نے پوچھا کہ آخر میں ہی کیوں؟ کہنے لگے، "یہ میں نہیں جانتا۔ وہ خود ہی چناؤ کرتے ہیں۔ تم اگر ہمارے ساتھ مل کر اس نیک کام میں حصہ لو گے تو تمہیں کبھی زندگی میں کوئی مسئلہ پیش نہیں آئے گا۔ ہم تمہارا خیال رکھیں گے، اور ہم اچھا خیال رکھنے والے ہیں۔ تمہارے بچوں کی تعلیم، تمہارے اخراجات، فوج میں ترقی، ہر چیز میں بہتری ہوگی۔ ہمارے اثر و رسوخ وسیع ہیں اور کامل۔" میں نے معذرت کی تو کہنے لگا، "ایسا کرو کہ بیوی بچوں کے ساتھ پیرو چلو، ہمارے ساتھ چھٹیاں گزارو۔ ہمارے بالا عہدیدار سے بھی مل لینا، پھر جو بہتر لگے اپنا فیصلہ خود کر لینا۔" میں نے اُسے ٹال دیا۔ اُن دنوں میں فری میسنز سے اتنا واقف نہ تھا۔ آج جانتا ہوں کہ یہ شیطان کے کارندے دنیا کی دولت کے مالک ہیں اور دنیا پر اپنا نظام لاگو کرنا چاہتے ہیں۔ یقیناً شیطان کا جال بہت وسیع ہے۔ نہ جانے ہمارے کتنے حکومتی ملازمین اور دانشور آج ان کے ایجنٹ ہیں۔

اللہ ہماری پاک سرزمین کو دشمنوں سے محفوظ رکھے۔ قرآن نے تصدیق کی ہے کہ شیطان اور اُس کے کارندے بیشک تمہارے کھلے دشمن ہیں۔ اللہ ہی جانتا ہے کتنے اپنے ان میں ملے ہوئے ہیں۔ جب دولت حاصل کرنا ہی زندگی کا محور ہوگا اور ہاتھ غیر اللہ کے آگے پھیلانے سے جی گریز نہ کرے گا، تو یہی تو دجال کا بلاوا ہوگا۔

امریکہ کے چند یادگار لمحے

میں اُس گلی میں اکیلا تھا اور سائے بہت *

وردی پر نئی نئی کرنیلی لگائے، میں تربیتی علاقے کے کنارے کیکر کے درخت کے نیچے کھڑا تھا۔ ساتھ میرا ایڈ جوئنٹ اور صوبیدار میجر معیز خان صاحب کھڑے تھے۔ بریگیڈ کمانڈر صاحب ہماری روزمرہ کی تربیت دیکھنے آرہے تھے، اُن کا انتظار تھا۔ کچھ دن پہلے ہی میں نے دس بلوچ کی کمانڈ سنبھالی تھی، جس میں یہ بریگیڈ کمانڈر کی پہلی وزٹ تھی۔ اُن دنوں کافی لوگ مختلف بندوبستی کاموں پر ڈویژن اور بریگیڈ کی جانب سے بھیجے گئے تھے۔ کم ہی سپاہ تربیت کے لئے حاضر تھی۔ ایڈ جوئنٹ نے مجھے مشورہ دیا کہ آج بندوبستی کاروائیوں پر لوگوں کو نہیں بھیجتے، کمانڈر کی وزٹ ہو جائے تو کل سے پھر جانا شروع ہو جائیں گے۔ میں نے کہا کوئی تبدیلی کی ضرورت نہیں ہے، جو اصل حالات ہیں کمانڈر کو پتا ہونے چاہئیں۔ صبح صبح کا وقت تھا۔ تربیتی علاقے میں سات یا آٹھ کلاسیں چل رہی تھیں۔ ہر کلاس میں گنتی کے تھوڑے ہی لوگ تھے، کسی میں تین کسی میں چھ۔

بریگیڈیئر صاحب تجربہ کار انسان تھے، جب آئے تو دور سے ہی بھانپ لیا کہ کچھ گڑبڑ ہے اور گاڑی پیچھے ہی روک لی۔ میں اُن تک گیا۔ جپ سے اتر کر خفا سے کھڑے تھے، کہنے لگے تمہارے سب لوگ کہاں ہیں؟ میں نے ایڈ جوئنٹ کی طرف دیکھا اور کہا، "ایڈ جوئنٹ، بریگیڈ کمانڈر کو پریڈ سٹیٹ (parade state) بتائیں۔" ایڈ جوئنٹ نے کاغذ پر لکھی ہوئی تھی، بولنا شروع کیا، "۱۸۵ آدمی چھٹی پر، ۲۵ سکول میں، ۲۰۰ ڈویژن کی گندم کٹائی پر، ۳۵ گالف کورس میں گھاس کٹائی پر، ۱۵ بریگیڈ کمانڈر کے گھر پر ورکنگ (علاقے کی صفائی)، ----۔" یہیں تک سنا تھا، ہاتھ کے اشارے سے ایڈ جوئنٹ کو چپ کروادیا۔ کچھ کہا نہیں، گاڑی میں بیٹھے اور واپس چلے گئے۔ کچھ دیر بعد بریگیڈ میجر کا فون آیا، مجھے جانتے تھے، کہنے لگے بریگیڈ کمانڈر بہت ناراض ہیں۔ کہہ رہے تھے کہ کیسا کمانڈنگ افسر (CO) آیا ہے، ایک وزٹ بھی کروانی نہیں آتی۔ میں نے دل میں سوچا، جو 'کروانا' آج تک نہ سیکھا وہ اب کیا سیکھے گا۔

جب امریکہ سے واپس اپنی پلٹن میں آیا، تو کمانڈنگ افسر نامزد ہو کر آیا تھا۔ کرنل طارق حمید کمانڈ کر رہے تھے۔ اُن کے جانے میں کچھ دن لگ گئے، تب تک میں نے رینک نہیں لگایا۔ اس عرصے میں، ایک اتوار کے دن ہم دفتر میں کسی کام کے سلسلے سے آئے ہوئے تھے۔ پتا چلا کہ لیفٹیننٹ زاہد صاحب آئے ہیں، ملنا چاہتے ہیں، زاہد کو بلایا تو وہ یہ شکایت لئے آئے تھے کہ ایک میجر صاحب، جو اُس کے کمرے کے

چوتھا سفر شکستہ قدم

قریب ہی رہتے تھے، اپنے بیٹ مین (سپاہی) کے ہمراہ اُس کے کمرے میں آئے اور اُس کو ڈانٹا کہ تم اتنی اونچی آواز میں گانے کیوں بجا رہے ہو۔ بات چیت کے دوران میجر صاحب نے اُسے گالیاں بھی دیں اور اُن کے بیٹ مین نے زاہد کو دھکے بھی دیئے۔

جب زاہد نے یہ بات بتائی تو میں نے پوچھا کہ پھر تم نے کیا کیا؟ کہنے لگا وہ سینئر تھے، اُن کی عزت کی خاطر کچھ نہ کیا۔ میں نے کہانی کی تصدیق کرنے کی خاطر کہا، "گرا ایک سپاہی، میجر صاحب کی آڑ میں، تمہیں خواہ مخواہ دھکے دیتا ہے، تو پھر کس کی عزت کی خاطر تم چپ رہے، تمہاری بھی تو عزت ہے؟ میں یہ بات کیسے مان لوں کہ تم نے کچھ نہیں کیا؟" اُس نے کہا یہی حقیقت ہے، میں نے کچھ نہیں کیا۔ یہ کہہ کر اُسے بھیج دیا کہ میں میجر صاحب سے بات کروں گا۔ میرے ساتھ یونٹ کے سیکنڈ ان کمانڈ (2IC) میجر صاحب بھی بیٹھے ہوئے تھے۔

دوپہر کے کھانے پر میس میں، یونٹ کے افسران کی موجودگی میں، 2IC صاحب نے، جو میس میں ہی رہتے تھے، زاہد کو آڑے ہاتھوں لے لیا۔ کہنے لگے، "نا جانے کس قسم کے بے غیرت افسر ہماری پلٹن میں آگئے ہیں، جو سپاہیوں سے دھکے کھاتے ہیں اور چپ رہتے ہیں"، اور کافی باتیں سنائیں۔ بات کا رنگ ہی بدل دیا۔ ظاہر ہے زاہد بھی غیرت مند انسان تھا، اُس پر یہ بات بہت بھاری گزری۔ شام کو وہ میجر صاحب کے گھر گیا، دروازہ کھٹکھٹایا تو بیٹ مین نکلا۔ زاہد نے کہا کہ میں میجر صاحب سے معافی مانگنے آیا ہوں۔ بیٹ مین نے اُنہیں جا کر بتایا تو اُنھوں نے کہا تم اُن کے لئے چائے بناؤ میں لیفٹنٹ صاحب سے ملتا ہوں۔ جب وہ دروازے پر آئے، زاہد نے کھینچ کر منہ پر ایک مگّا رسید کیا، ناک سے خون بہہ نکلا۔ اُنھوں نے بیٹ مین کو آواز دی کہ ہاکی لے کر آؤ۔ زاہد وہاں سے کھسک لیا۔ وہ ہسپتال چلے گئے۔ ہنگامہ کھڑا ہو گیا۔ پھر ڈویژن ہیڈ کوارٹر نے انکوائری شروع کرادی۔ اتنے میں کرنل طارق حمید چلے گئے اور کمانڈ میں نے سنبھال لی۔

لیفٹیننٹ زاہد کی انکوائری جب آخر کو پہنچی تو اُس کے بیان کی باری آگئی۔ میں نے اُس سے کہا کہ بیان لکھ کر پہلے مجھے دکھانا۔ وہ بیان لکھ کر لے آیا۔ پڑھا تو لکھا تھا کہ میں میجر صاحب کے گھر معافی مانگنے ہی گیا تھا، مگر جب وہ باہر آئے تو اُنھوں نے مجھے بڑی بری گالیاں دیں، جس پر میں مشتعل ہو گیا اور طیش میں آ کر میرا ہاتھ اٹھ گیا۔ معافی مانگنے کی بات کی تصدیق میجر صاحب اور اُن کے بیٹ مین دونوں کے بیان سے ہوتی تھی۔ مگّا مارنے کا کوئی اور گواہ نہیں تھا۔ میں نے کہا یہ تو غلط بیان ہے۔ کہنے لگا میں نے قانونی ماہرین سے مشورہ کیا ہے، اس ہی طرح میری جان بچ سکتی ہے۔ سوچی سمجھی تدبیر کے تحت، اور گالیوں کے جواب میں مشتعل ہو کر مارنے میں بہت فرق ہے۔

میں نے زاہد سے کہا تم دس بلوچ رجمنٹ کے افسر ہو، ایک تو تم نے اُنہیں مارا، اب غلط بیان بھی اُن کے خلاف دے رہے ہو، یہ تو افسروں جیسی بات نہیں۔ کہنے لگا پھر میرا بہت نقصان ہو جائے گا۔ زاہد کسی بڑے گھرانے کا بچہ نہیں تھا، صاف دل اور اچھا انسان تھا، شاید اسی

لئے مصیبت میں گھر گیا۔ میں نے کہا کہ اگر تو غلط بیان دیتے ہو تو میں بھی بیان دوں گا اور سچ ظاہر کر دوں گا، تمہارا اور زیادہ نقصان ہوگا، اور اگر سچ بولو گے تو میں آخر تک تمہارے ساتھ رہوں گا۔ اُس نے سچ بیان دے دیا۔

میں انکوائری کر نیوالے افسر کے پاس اپنا بیان لکھ کر لے گیا، حالانکہ اُس نے مجھ سے بیان نہیں مانگا تھا۔ یہ سگنل کور کے ایک کرنل صاحب تھے، جو بعد میں بریگیڈ میجر ہو گئے اور GHQ میں میرے ساتھ ہی تھے، جب میں لیفٹیننٹ جنرل تھا اور چیف آف جنرل سٹاف (CGS) کی کرسی پر بیٹھا تھا۔ جب ملتے کچھ پریشان ہوتے کہ میں انہیں پہچان نہ لوں، مگر میں نے کبھی پہچاننا اُن پر ظاہر نہ ہونے دیا۔ اپنے بیان میں لکھا کہ پوچھ گچھ کے دوران میں نے کچھ ایسی باتیں کہیں جن سے زاہد مشتعل ہو گیا اور یہ واقعہ پیش آیا۔ میں میں جو باتیں 2IC صاحب نے کی تھیں اُن کا کوئی ذکر نہ کیا، کیونکہ اُن کی پروموشن قریب تھی اور وہ بھی خاصے پریشان تھے۔ میں CO تھا، اور مجھ پر ہی لازم تھا کہ اپنے افسران کو محفوظ رکھوں۔

کرنل صاحب کہنے لگے میں انکوائری مکمل کر چکا ہوں، آپ کے بیان کی ضرورت نہیں ہے۔ میں نے اصرار کر کے اپنا بیان اُس میں شامل کروایا اور کہا کہ اس سے بات کی نوعیت بدل جاتی ہے، اس پر غور کریں۔ اُنھوں نے میرا بیان تو لے لیا، لیکن انکوائری میں دی ہوئی اپنی سفارشات میں کوئی تبدیلی نہیں کی۔ کرنل کے درجے کے افسر کو ہاتھ ڈالتے لوگ گھبراتے ہیں کہ بات کہیں بڑھ نہ جائے، لیفٹیننٹ کا معاملہ ذرا آسان ہے۔ وہ شاید ڈویژن ہیڈ کوارٹر کے لئے پریشانیاں پیدا نہیں کرنا چاہتے تھے۔ کچھ دنوں میں زاہد کے کورٹ مارشل (court martial) کے احکامات جاری ہو گئے۔

میں نے کئی بار بریگیڈ کمانڈر سے بات کی، انہیں زاہد کے مسئلے کی تفصیلات بتائیں اور کہا کہ اس میں میں بھی قصور وار ہوں۔ اُن سے گزارش کی کہ میرا ڈویژن کمانڈر سے انٹرویو کروادیں۔ کسی بڑے کمانڈر سے سرکاری ملاقات کا فوج میں یہی طریقہ ہے، بالاکمانڈر کے ذریعے ہی جاتے ہیں۔ وہ ہر بار کہتے کہ جنرل صاحب مصروف ہیں، اور تھوڑے دن ٹھہر جاؤ، میں بات کر چکا ہوں، ہو جائے گا۔ وقت گزرتا گیا، کورٹ مارشل چلتا رہا۔ زاہد کو لوگوں نے ڈرانا شروع کر دیا کہ تمہارے CO نے سچ بیان دلوا کر تمہیں مراد دیا، اپنی نوکری داؤ پر لگا کر کون کسی کا ساتھ دیتا ہے؟ سب کو اپنی اپنی پڑی ہے۔ وہ بہت پریشان رہنے لگا۔

جب کورٹ مارشل ختم ہونے کے قریب آ گیا، اور میری ڈویژن کمانڈر سے ملاقات نہ ہو سکی تو میں نے انہیں ایک خط لکھا۔ سرکاری معاملات میں یوں خط لکھنے کی اجازت نہیں ہوتی۔ لکھا کہ تمام تر کوششوں کے باوجود چونکہ آپ سے ملاقات نہیں ہو رہی، اس لئے خط

چوتھا سفر شکستہ قدم

لکھنے کے علاوہ مجھے کوئی اور طریقہ نہ ملا کہ آپ کو حالات سے آگاہ کروں۔ یہ بھی اللہ کا کرنا تھا، ورنہ شاید اتنا کچھ میں زبانی نہ کہہ سکتا اور بات کرنے کا وہ اثر بھی نہ ہوتا۔ اُن دنوں ۱۴ ڈویژن کے کمانڈر میجر جنرل ظہور ملک صاحب ہوتے تھے۔ میں نے واقعے کی تھوڑی سی تفصیلات بتائیں اور اس میں اپنا کردار ظاہر کیا اور لکھا کہ زاہد بہت جو نیر افسر ہے اور ایک خوددار انسان، اُس سے میری کوتاہی کی وجہ سے یہ غلطی سرزد ہوئی ہے، اُس کا کورٹ مارشل نہ کیا جائے بلکہ کوئی ہلکی سزا دی جائے تاکہ اُس کی نوکری بحال رہے۔ اگر آپ یہ مناسب نہیں سمجھتے تو دونوں قصورواروں کا، یعنی میرا اور اُس کا، اکٹھا کورٹ مارشل کیا جائے۔ اگر ان دونوں میں سے کوئی بھی راستہ نہ لیا گیا تو میں اپنے افسران پر کمانڈ کرنے کا اخلاقی منصب (moral authority) کھودوں گا اور اس پلٹن میں سچ بولنے کی اہمیت ہمیشہ کے لئے مٹ جائے گی۔ ایسے میں بہتر ہوگا کہ مجھے کمانڈ سے سبکدوش کر دیا جائے۔ میں نے یہ بھی لکھا کہ میرے گھر کا مستقل پتہ دس بلوچ رجمنٹ ہی ہے۔ اس کے علاوہ نہ میرا اس ملک کے اندر کوئی گھر ہے نہ باہر۔ اس وجہ سے میں دس بلوچ کی کمانڈ کے فریضے کو مقدس سمجھتا ہوں اور یہ خط لکھنے پر مجبور ہوں۔ یہ خط لکھ کر میں نے اپنے کلرک کے ہاتھ دیا کہ دفتر ختم ہونے پر جنرل صاحب کے پی اے (PA) کو دے آئے۔

دوسرے دن مجھے جنرل صاحب نے بلا لیا۔ میں بہت ٹینس (tense) تھا۔ چار بچوں کا بٹھکانا باپ تھا، نوکری داؤ پر تھی۔ ڈر تھا کہ آج شاہد سے شہید نہ ہو جاؤں۔ دھڑکتے دل سے دفتر میں داخل ہو کر سیلوٹ کیا۔ میں سمجھا جنرل صاحب اکیلے ہوں گے، لیکن وہاں اللہ بھی موجود تھا۔ مجھے دیکھ کر کھل اُٹھے، گرم جوشی سے میز کے پیچھے سے اُٹھ کر آئے، ہاتھ ملایا اور کہا، "آؤ آؤ یہاں بیٹھتے ہیں۔" ہم صوفوں پر بیٹھ گئے۔ کہنے لگے، "چائے پیو گے یا کافی؟" میں نے گھٹی ہوئی آواز میں کہا، "شکریہ سر، کچھ نہیں۔" گھنٹی بجائی، کافی منگوائی۔ کہنے لگے، "مجھے فخر ہے کہ تمہارے جیسے کمانڈنگ افسر میرے ڈویژن میں ہیں۔ تم بے غم رہو۔ زاہد کا کورٹ مارشل ختم ہو جائے گا۔"

میری سمجھ میں نہیں آ رہا تھا کہ یہ کیا ہوا۔ اللہ اُن کا بھلا کرے، جنرل صاحب سے اس عزت کی توقع نہیں تھی۔ بہت پخت کی بھی امید رکھتا تو یہ کہ زاہد کچھ کم سزا پائے گا، اور میں بھی زیرِ عتاب آؤں گا، کم از کم سالانہ رپورٹ خراب ہوگی اور آئندہ ترقی کی گنجائش نہ رہے گی۔ یہ تو میڈل مل گیا! کافی کے دو گھونٹ پیئے، ہاتھ ملایا، شکریہ ادا کیا اور باہر آ گیا۔ الحمد للہ، بیشک اللہ جسے چاہتا ہے عزت عطا کرتا ہے۔

کئی دنوں تک اوکاڑہ کے ینگ افسران (young officers) مجھ سے ملنے دفتر آتے رہے، "سر، بس آپ سے ہاتھ ملانے آئے ہیں۔" مگر ساتھ والوں کا ردِ عمل مختلف تھا۔ ایک CO صاحب سے ملاقات ہوئی، کہنے لگے، "بھائی، آپ کا جواب نہیں۔ نوکری بنانے کا گر تو کوئی آپ سے سیکھے، ایسی چال چلتے ہیں کہ سب کو پیچھے چھوڑ جاتے ہیں۔ اب اتنا تو ہم سے نہیں ہو سکتا۔ صحیح ہے، کہ لگانے سے ہی ملے گا۔" میں حیرت سے اُن کا منہ دیکھتا رہا۔

چوتھا سفر شکستہ قدم

میجر جنرل ظہور کا جلد ہی تبادلہ ہو گیا۔ نئے ڈویژن کمانڈر میجر جنرل نذر آئے، جو بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے۔ جب پہلی مرتبہ یونٹ میں آئے تو میں نے اُن کو مختصر بات بتائی۔ کہا کہ ایک خط ۱۴ ڈویژن کے کمانڈر کو لکھا تھا، اب آپ کمانڈر ہیں۔ سمجھدار اور ہمدرد انسان تھے۔ کچھ دنوں میں کور ہیڈ کوارٹر سے کورٹ مارشل ختم کرنے کے احکامات آ گئے۔

جن دنوں لاہور میں کور کمانڈر تھا، ریٹائرڈ جنرل افسران کو ایک مرتبہ چائے پر بلایا۔ میجر جنرل ظہور بھی آئے۔ میں نے پوچھا، "سر، آپ نے مجھے پہچانا" ہنس کر میری پیٹھ پر ہاتھ رکھ کر کہنے لگے، "تمہیں کیسے بھول سکتا ہوں"۔ آج پرانے دن یاد کرتا ہوں تو اپنے کئے پر اللہ سے خوف آتا ہے۔ کہاں کہاں اُس نے مجھے بچایا، گرتے ہوئے کو نا صرف سنبھالا بلکہ انعام عطا کیا، عزت بخشی۔ اور میں پھر بھی ویسے ہی بدراہوں پر ٹھکراتا رہا۔

آگ جب دل میں سلگتی تھی، دھواں کیوں نہ ہوا*

"تو کیا اب میں جنرل صاحب کے منہ پر یہ قانون کی کتاب پھینکوں؟" بریگیڈ کمانڈر صاحب بہت غصے میں تھے، "تم عجیب باتیں کرتے ہو!" ماجرا یہ ہوا کہ جنرل صاحب کے گھر پر باری باری ہریونٹ سے ایک ایک ماہ کے لئے گارڈ جاتی تھی۔ جب ہماری یونٹ کی باری آئی تو ہم فوجی مشقوں کے سلسلے میں چھاؤنی سے باہر آئے ہوئے تھے۔ میں نے ڈویژن کے لکھے ہوئے احکامات (SOP) کے مطابق سپاہی بھیج دیئے، یاد نہیں شاید بارہ یا چودہ رہے ہوں گے۔ اُن کے ADC صاحب کا فون آیا کہ آپ کے آدمی پورے نہیں آئے۔ میں نے کہا بالکل پورے ہیں، آپ چیک کر لیں۔ اُنھوں نے بھی کھل کہ نہیں کہا، میں نے بھی وضاحت نہیں کی۔ کچھ دیر بعد ڈویژن ہیڈ کوارٹر سے کرنل سٹاف صاحب کا فون آگیا۔ اُن کو بھی میں نے یہی کہا، کہ احکامات کے مطابق پورے آدمی ہیں، آپ کو کسی نے غلط بتایا ہے۔ بات ختم نہ ہوئی۔ بریگیڈ کمانڈر صاحب کا فون آگیا، جب میں نے یہی کہا، تو مجھے دفتر بلا لیا۔ میں ڈویژن کے احکامات کی کتاب ساتھ لے گیا، اس میں مختلف چیزوں کے لئے احکامات درج تھے۔ میں نے کتاب اُنہیں دکھائی کہ حکم کے مطابق آدمی بھیجے ہیں۔ کہنے لگے پچھلی یونٹ کے کتنے آدمی تھے؟ میں نے کہا چالیس (تقریباً کہہ رہا ہوں، صحیح گنتی یاد نہیں ہے)۔ کہنے لگے پھر آپ نے چالیس آدمی کیوں نہیں بھیجے؟ میں نے کہا جو جنرل صاحب کے لکھے ہوئے احکامات ہیں، اُن ہی کے مطابق بھیجے ہیں۔ خفگی اس وجہ سے ہوئی۔ پھر میں نے کہا کہ اگر آپ کا حکم ہے کہ چالیس بھیجوں، تو چالیس بھیج دیتا ہوں، مگر مجھے صاف حکم دیں۔ پھر چالیس بھیج دیئے۔

شاید آپ کو بھی لگے کہ عجیب سر پھرا آدمی ہے۔ لیکن بات یہ ہے کہ ہم سالانہ تربیت کے لئے چھاؤنی سے باہر آئے ہوئے تھے۔ سال بھر میں ایک ہی موقع ملا تھا۔ جنرل صاحب کے گھر کام کرنے والے سب ہی اہمیت حاصل کر لیتے ہیں، چاہے اُن کا ڈرائیور ہو چاہے مالی، سب VIP۔ اُن کا خاص خیال رکھا جاتا ہے کہ کہیں جنرل صاحب تک کوئی شکوہ نہ پہنچے۔ جہاں ایک آدمی کام کر سکتا ہے وہاں چار کرتے ہیں۔ جنرل صاحب کو صحیح حالات کوئی نہیں بتاتا کہ سالانہ مشقیں ہو رہی ہیں، کچھ عرصے کے لئے سپاہیوں کی بندوبستی کاروائیوں میں کمی کی جائے تاکہ وہ تربیت سے محروم نہ رہ جائیں۔ شاید اُن کو پتا بھی نہ ہو کہ کتنے لوگ اُن کے گھر مختلف کاموں پر لگے ہیں۔ اُن کے اور بہت مسائل ہیں۔ دوسرا رخ یہ بھی ہے کہ کہیں کہیں یہ رواج قائم ہو گیا ہے کہ احکامات میں مناسب بات لکھو اور جو غیر مناسب چیزیں کرنی ہیں، زبانی کام چلاؤ، اور تاثر دو (pretend) کہ تمہیں تو ان غیر مناسب باتوں کا علم ہی نہیں، نچلے درجے کے لوگ خود ہی کر لیتے ہوں گے۔ اس طرح بالا افسر پر آنچ بھی نہیں آتی اور مرضی کا کام بھی ہوتا رہتا ہے۔ یہ کیا مذاق ہے، کیسی منافقت ہے؟

چوتھا سفر شکستہ قدم

اس ہی عرصے میں میرے 2IC میجر صاحب کی ترقی پر موشن بورڈ (promotion board) نے منظور کی۔ اُن دنوں MS برانچ کی پالیسی تھی کہ CO جب تک اپنی کمانڈ کے دو سال پورے نہیں کرتا، اُس کو ہٹایا نہیں جائے گا۔ اپنی پلٹن کمانڈ کرنا فوج میں فخر کی بات ہوتی ہے۔ میں نے میجر صاحب سے کہا کہ میرا ایک سال ہو گیا ہے، اگر تم میری جگہ آنا چاہتے ہو اور اپنا تبادلہ کروا سکتے ہو تو کروالو، مجھے کوئی شکایت نہیں ہوگی۔ دل میں جانتا تھا کہ انہوں نے یہی کرنا ہے، مگر میں نے کہہ دینا مناسب سمجھا، تاکہ رنجشیں پیدا نہ ہوں۔ آخر میں ہی اُن کا بھی CO تھا۔

کچھ عرصے بعد ہماری یونٹ کے ایک جنرل صاحب کا فون آیا، کہنے لگے سامان باندھ لو۔ میں نے پوچھا کہاں کو؟ کہتے ہیں یہ تو پتا نہیں، مگر میں MS صاحب کے پاس گیا تھا، اُن کی میز پر آرمی چیف کی چٹ پڑی تھی، کہ میجر صاحب 2IC کو تمہاری جگہ تعینات کر دیا جائے۔ کچھ دنوں بعد میرا تبادلہ سٹاف کالج، کوئٹہ ہو گیا۔

اُن دنوں فوج میں ایک سرساز ضرب مومن کی تیاریاں ہو رہی تھیں۔ ہمارا ڈویژن ایک سرساز میں تو حصہ نہیں لے رہا تھا، مگر ہماری پلٹن کو مہمانوں کے لئے سرگودھا میں کیمپ لگانے کا کام مل گیا۔ مجھے کوئٹہ جانے سے روک دیا گیا، کہ نئے CO ایک سرساز کے بعد کمانڈ سنبھالیں گے۔ پہلی بار فوج میں اتنے بڑے پیمانے پر اس قسم کی سہولیات فراہم کی جا رہی تھیں۔ آنے والوں میں فوج کے بہت سے جنرلوں کے علاوہ غیر ملکی افواج کے نمائندے میڈیا اور حکومت کے نمائندے اور کچھ معزز شہری بھی شامل تھے۔ بہت وسیع پیمانے کا کیمپ تھا اور ناراضگیوں کا خدشہ۔

میرے سپاہی سارا سارا دن سخت محنت سے کام کرتے۔ میں بھی اُن کے ساتھ کھدائی میں کچھ حصہ لیتا، تاکہ اُن کا حوصلہ بلند رہے۔ میں جنگی مشقوں میں بھی یوں ہی کرتا تھا۔ یہاں مہمانوں کے تہموں کے لئے جگہیں کھودیں، تاکہ تہموں کے نیچے کشادہ جگہ ہو اور رہنے والے کا سر تہموں کو نہ لگے۔ پھر ان میں اینٹوں کے فرش لگائے۔ ساتھ پکے غسل خانے بنائے، جس میں باقاعدہ گرم پانی آتا تھا اور فلش اور شاور بھی لگائے۔ ہر تہموں میں کیمپ کی مناسبت سے فرنیچر سجایا گیا، ساتھ ایک چار دیواری سمیت آنگن بھی بنایا۔ جنرلوں کا الگ کیمپ تھا اور بقایا مہمانوں کا الگ۔ آرمی چیف کا بھی ایک چھوٹا سا کیمپ تھا۔ پھر یونٹ کا اپنا کیمپ اور آنے والے لوگوں کے ساتھ ڈرائیوروں وغیرہ کے لئے بھی الگ کیمپ تھا۔ سب جگہ حفاظتی بندوبست بھی کیا۔ پیغامات پہنچانے کا سلسلہ بھی تشکیل دیا۔ مختلف جگہوں پر گاڑیوں کے کھڑے ہونے کی جگہیں تھیں۔ سب کچھ ہی تھا، جام کا اڈا، ٹیلر کا ٹھکانا، دھوبی گھاٹ، چھوٹا ہسپتال، گاڑیوں کی مرمت اور دھونے کا بند بست، ٹیلیفون، فیکس اور کمپیوٹر کی سہولت، وغیرہ وغیرہ۔ تمام جگہ بجلی مہیا کی گئی۔ کشادہ راستے بنائے، سبز بانسوں پر جھولتی ہوئی بتیاں سارے کیمپوں اور راستوں پر لگائیں۔ صبح شام تمام علاقے میں پانی کا چھڑکاؤ ہوتا کہ دھول نہ اڑے۔ ہر کیمپ میں پنڈال میں بیٹھنے اور کھانے کے کشادہ کمرے بنائے

چوتھا سفر شکستہ قدم

گئے۔ بہترین کٹلری کرا کری اور تربیت یافتہ بیروں کا انتظام کیا۔ طرح طرح کے کھانے، پھل، چائے، کافی، اور ہر قسم کی مشروبات ہر وقت دستیاب ہوتیں۔ جنرلوں سمیت تمام مہمانوں کو سپاہیوں میں سے خدمت گزار مہیا کئے۔ جن کو باقاعدہ تربیت دی گئی، لباس سلائے گئے۔ سوپروں کی بھی ایک فوج تھی، اُن کے بھی پیلے رنگ کے لباس سلوائے گئے۔ غرض ایک چھوٹی سی VIP آبادی کے لئے ہر سہولت فراہم کی گئی، اور پائے کی۔ تین VIP ٹرینیں بھی چلتی تھیں جو مہمانوں کو ایکسر سائز کے مختلف مقامات پر لے جاتیں۔ ان میں بھی بہترین ڈانگ کار اور رات گزارنے کے اس ہی قسم کے انتظامات تھے۔ بے بہا پیسہ اس ایکسر سائز پر GHQ ڈول رہا تھا۔

یونٹ کے افسران اور جوانوں نے بہت محنت اور لگن سے کام کیا اور GHQ کے نمائندے ہمارا کیمپ دیکھ کر بہت حیران ہوئے کہ ہم نے اتنے تھوڑے وقت میں کیا جادو سے یہ بستی کھڑی کی ہے؟ میجر منور احمد صاحب 2IC تو نہ تھے مگر اس سارے کام میں میری معاونت اُنھوں نے ہی کی۔ کرنل بن کر صحت کی خرابی کے باعث فوج سے ریٹائر ہوئے۔ ان کے بغیر شاید میں اتنا کچھ سنبھال نہ سکتا۔ ایک یہ اور ایک بریگیڈئیر ماجد عظیم صاحب دونوں اکٹھے ۱۹۷۱ کی جنگ کے فوراً بعد ہماری یونٹ میں آئے تھے، جب ہم بارڈر پر ہی تھے۔ دونوں ہی نہایت اچھے افسر تھے اور یونٹ کے ہر کام کے لئے کھڑے ہو جاتے، کبھی اپنے آرام یا ذاتی مفاد کو پلٹن کے کام پر ترجیح نہیں دی۔ آج بھی اسی طرح سب کا خیال رکھتے ہیں۔ میجر منور کے علاوہ ایک میجر وسیم صادق (بعد میں میجر جنرل بنے)، نے بھی بہت لگن سے کام کیا۔ تمام ہی افسران نے دن رات محنت سے یہ انوکھا اور پیچیدہ سلسلہ کامیابی سے چلایا۔

مہمان نوازیوں پر اتنا پیسہ خرچ ہوتے دیکھ کر، مجھ کو یونٹ کے کچھ افسران نے کہا کہ ہمارے جوانوں کو کچھ نہیں مل رہا، ان کے لئے بھی کچھ کریں، یعنی کچھ پیسے بچا کر یونٹ کے فنڈ میں ڈال لیں، جوان کی بہبود پر خرچ کئے جائیں۔ میں ان چیزوں کے ہمیشہ سے ہی خلاف رہا تھا، یونٹ کے سب افسر جانتے تھے۔ جب کراچی میں مارشل لاء ڈیوٹیوں پر تھے تو یہ عام رواج تھا کہ کچھ سپاہی جو چھٹی پر ہوتے انہیں حاضر دکھا کر، اُن کا بھی مارشل لاء الاؤنس کلیم کیا جاتا، اور اُسے فنڈ میں ڈال لیتے۔ اس ہی سے یونٹ کے سپاہیوں کے لئے پیڈل پٹلے اور پانی کے کولر لئے گئے تھے۔ ہر کمپنی کے شاید دس لوگوں کے الاؤنس کی رقم یونٹ میں ماہانہ جمع کروائی جاتی۔ جب پہلی مرتبہ میری کمپنی کا کلیم بن کر میرے پاس آیا تو میں نے اسے دستخط کرنے سے انکار کر دیا، اور حقیقی شمار پر کلیم بنا کر بھیجا۔ کافی لے دے ہوئی، مگر میجر (بعد میں بریگیڈئیر) طارق حمید نے CO کو منایا کہ اسے ان باتوں پر نہ چھیڑیں، اور یوں میرا بچاؤ ہوا۔ یہ اُن دنوں 21C کے فرائض انجام دے رہے تھے۔ اس کے بعد میری کمپنی سے درست کلیم ہی جاتا رہا۔ مگر اب میں CO تھا، تمام پلٹن کے سپاہیوں کی بہبود کا ذمہ دار، اور ان فضول خرچیوں پر نالاں۔ شاید اس عرصے میں کچھ گرج بھی چکا تھا۔ میجر منور، ہی نے سارا مالیاتی نظام سنبھالا ہوا تھا، کہنے لگے اگر آپ کہیں تو میں کچھ پیسے یونٹ کے لئے بچا سکتا ہوں، کوئی اور افسر اس میں شامل نہیں ہوگا اور کسی کو پتا نہیں چلے گا۔ میں نے دل میں سوچا کہ اگر گندا کام کرنا ہی ہے تو کیوں اپنا منہ چھپاؤں، منور کے ہی منہ پر کا لک کیوں ملوں، اس بددیانتی کی چوٹ بھی مجھے ہی سہنی چاہیے۔ پھر میں نے منور سے کہا کہ



کرنل انور کی روائی، کرنل طارق کی آمد



کمانڈنگ آفسر، دس بلوچ



دس بلوچ کے آفسروں کے ہمراہ

چوتھا سفر شکستہ قدم

میں بھی تمہارے ساتھ بازار جاؤں گا۔ اُس نے بہت منع کیا، مگر میں نے کہا اگر یونٹ کے لئے برا کام کرنا ہے تو بھی میں ہی CO ہوں۔ شلوار قمیض پہن کر اُس کے ساتھ ہولیا۔ جب چیزیں خریدیں اور جعلی رسیدیں بنوائیں تو مجھے اپنا آپ اس قدر گھٹیا لگا کہ میں آج تک اُس کی گھٹن محسوس کرتا ہوں۔ پھر آئندہ اس سمت قدم اٹھانے کی ہمت نہ ہوئی۔

اس دوران ہی ہمارے 2IC میجر صاحب کو بھی پروموشن دے دی گئی لیکن ذمہ داری نہ سونپی گئی، کمانڈ میرے پاس ہی رہی۔ یعنی یونٹ میں دو کنٹرل موجود تھے، جو غیر مناسب ہے اور کیا نہیں جاتا۔ میں جب یونٹ میں آیا تھا تو میری بھی پروموشن آچکی تھی، لیکن پچھلے CO کے جانے تک، کئی مہینے، مجھے رینک نہیں لگایا گیا۔ پھر اُن کی سالانہ رپورٹ کا وقت پورا ہوا تو وہ گئے، اور میں نے تب رینک لگایا جب میں نے کمانڈ سنبھالی۔ یہی فوج کا طریقہ ہے۔

جب آرمی چیف ایکسرسائز پر آئے، تو مجھ سے ہاتھ ملاتے ہوئے تعجب سے کہا، "تم ابھی تک یہیں ہو!" میرا دل چاہا اُن سے کہوں کہ آپ کے چہیتے اتنی رسک (risk) اور ایکسپوشر (exposure) والے کام کی ذمہ داری لینے کو تیار نہیں۔ چہیتے نے پھر کچھ اخبار نویسوں سے مل کر، جو وہاں مہمان آئے ہوئے تھے، ایک بڑی خبر چھپوائی کہ کیا کمانڈر ہیں اور کیا بہترین کیمپ ضرب مومن کے لئے انہوں نے لگایا ہے، حالانکہ وہ اس کے کمانڈر نہیں تھے اور نہ ہی کیمپ لگانے میں کوئی کارگر حصہ لیا تھا، صرف شاباش لینے کو کھڑے ہو جاتے۔ میں نے اس بات کو بھی نظر انداز کر دیا۔

میں شاف کالج جانے پر خوش تھا، یہاں پڑھانے کا فوج میں ایک اہم مقام ہے، اور زیادہ تر جنرل یہاں سے ہو کر گزرتے ہیں، لیکن دل میں اس بات کی چھین ضرور تھی کہ فوج کے چیف بھی اسی قسم کے کام کرتے ہیں۔ میں شروع سے ہی سفارشوں سے بہت چڑتا اور ان پر جھگڑتا تھا، سوچتا تھا کہ کم از کم فوج کا سربراہ تو ان باتوں سے اوپر ہوگا۔ پلٹن کی کمانڈ پوری ہونے سے پہلے چھوڑ دینے پر دل میں کوئی کدورت نہیں تھی، میں نے خود ہی نئے پروموشن ہونے والے میجر صاحب کو یہ مشورہ دیا تھا۔ مگر یہ سفارش اُس اونچی کرسی سے ہوگی، میرے وہم و گمان میں بھی نہیں تھا۔ اُس وقت تک میں اتنے اونچے درجوں کی حکمتوں سے واقف نہ تھا۔ دل پر بوجھ محسوس کرتا رہا۔

سفارش کا یہ ناسور آہستہ آہستہ ہر ادارے کو کھوکھلا کر رہا ہے۔ فوج کو بھی۔ اس کی جڑیں اوپر سے لے کر نچلی سطحوں تک پھیل چکی ہیں۔ محنت سے کام کرنے والوں کی راہیں کاٹ رہی ہیں۔ افسران کا اپنے ادارے پر اعتماد اٹھ رہا ہے۔ کمانڈر خود ہی اپنے آپ کو اپنی کمانڈ کی نظروں سے گرا رہے ہیں۔ ان کے حکم پر کیسے کوئی جان دے گا؟

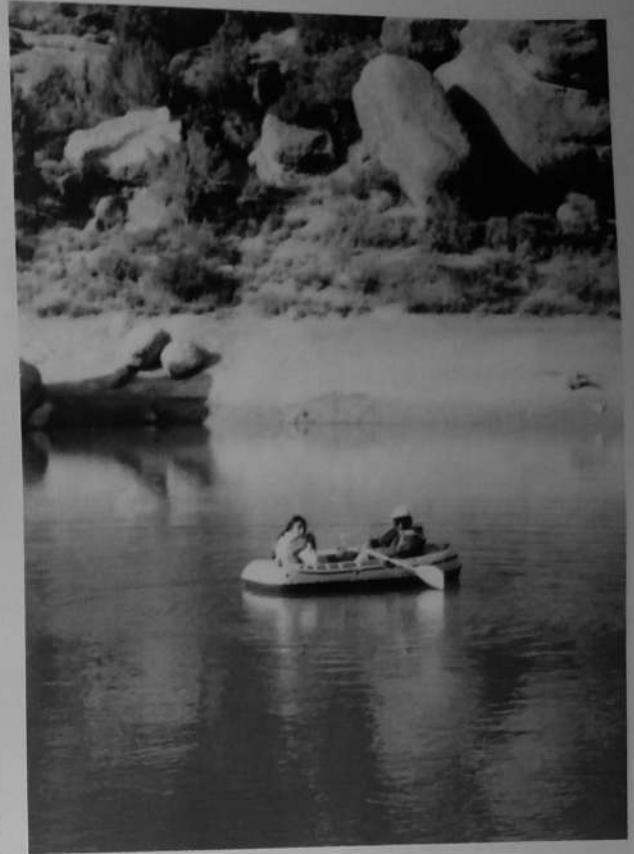
اپنے بے خواب کواڑوں کو مقفل کرلو*

میں نے فوج سے استعفیٰ دے دیا۔ لگتا تکلفات کی دنیا میں رہتا ہوں۔ بناوٹی دنیا، جسے ذرا ہلادو، گر کر بکھر جائے گی۔ کچھ سچ نہیں تھا۔ جیسے دکھاوے کی مسکراہٹوں کے پیچھے بغض و حسد چھپے جھانک رہے ہوں۔ جیسے ہر کوئی دوسرے کے گرنے کے انتظار میں ہو۔ سوائے آگے جانے کے اور کوئی خواہش، کوئی فکر کسی کو نہ ہو۔ رشتے بھی جھوٹے، محبتیں بھی تکلف۔ گھٹن محسوس کرنے لگا تھا۔ جی کرتا کہیں بھاگ جاؤں۔ بہت دور۔ جہاں کوئی راستہ نہ آتا ہو۔

شاف کالج آئے ہوئے ابھی سال بھی نہ ہوا تھا۔ سب ٹھیک تھا۔ انجمن کالج کے ہی سکول میں پڑھا رہی تھیں، بچے پڑھ رہے تھے، میں بہت اچھے مرتبے پر فائز تھا، تمام فوج سے چنے ہوئے افسران میں شامل، بہت شوق سے پڑھا رہا تھا۔ اور ایک ایسے ادارے میں تھا جہاں بہت پیشہ ورانہ اور دوستانہ ماحول تھا۔ تقریباً سب ہی ہم عمر تھے اور نہایت اچھے لوگ تھے۔ سب ایک دوسرے کا خیال رکھتے، رواج کسی کا گیٹ کبھی بند نہ ہوتا۔ پوری فیملی کے لئے ہر طرح کی سہولیات میسر تھیں، سب ہی بہت خوش تھے۔ شاف کالج فوج کے اندر ایک الگ ہی دنیا تھی۔ اتنا اچھا اور خوش گوار ماحول اور کہیں دیکھنے کو نہیں ملتا۔ پھر جرنیلی کی گاجر بھی سامنے لٹک رہی تھی۔ ہر طرح کا اطمینان تھا۔ پھر بھی نہ جانے کیوں یہ ہوا۔ جیسے دل بھر گیا ہو۔ جیسے بے سودی زندگی میں الجھ گیا ہوں۔

بار بار ولی تنگی چلا جاتا۔ یہ سنوبر کے درختوں سے ڈھکی ہوئی زرغون پہاڑیوں میں ایک جھیل ہے۔ شفاف پانی پتھروں پر گرتا ہوا، آبشاریں بناتا اس کو بھرتا، پھر نیچے آ کر اڑک میں سیبوں کے باغات کو سیراب کرتا ہے۔ سردیوں میں برف سے راستہ بند ہو جاتا تو پیدل ہی چل پڑتا۔ اس کے گرد چٹانوں اور نالوں میں گھومتا رہتا۔ پھر رو کر دماغ خالی ہو جاتا تو کسی پیڑ کے نیچے لیٹ کر سو جاتا۔

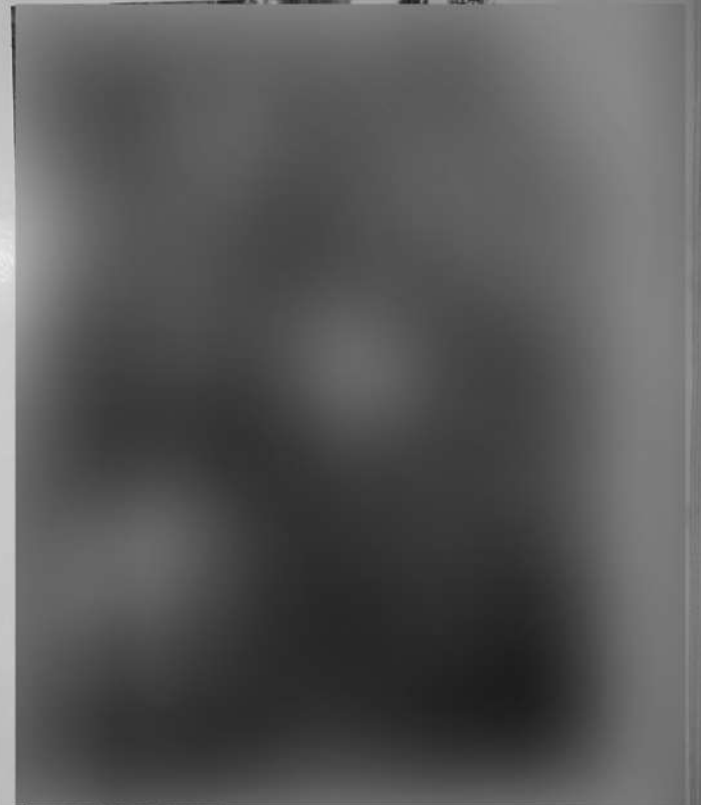
بہت شوق اور لگن سے پڑھاتا تھا۔ شاف کالج میں تین ڈویژن تھے میرے ڈویژن کے سینئر انسٹرکٹر (Senior Instructor) کرنل غضنفر (بعد میں میجر جنرل بنے)، عموماً کلاس میں آ کر بیٹھ جاتے۔ ایک دن مجھ سے کہنے لگے کہ میں بار بار تمہاری کلاس میں آتا ہوں، تم ہر مرتبہ اتنی اچھی کلاس چلاتے ہو، کاش میں کوئی ایک کلاس بھی اس طرح چلا سکتا۔ اُن کی بڑائی تھی کہ انہوں نے مجھے اس طرح داد دی۔ بہت محنت سے تیاری کر کے جاتا اور مضمون میں ڈوب کر پڑھاتا۔ مجھے، اصل میں، خود اس کام میں بہت لطف آتا تھا۔



ولی تنگی جھیل، کوئٹہ



وادی غدر، شمالی علاقہ



صنوبر کے جنگل کی یادگار دوپہر، ولی تنگی

چوتھا سفر شکستہ قدم

سٹاف کالج میں میرے ایک ساتھی کرنل صفدر حسین (بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے) نے بھی استعفیٰ دیا تھا، اور راولپنڈی کے لئے تبدیلی کی درخواست بھی۔ اُن کی تبدیلی راولپنڈی ہو گئی۔ مجھے پڑھانے کے کام سے ہٹا کر تحقیقی (Research) حصے میں لگا دیا گیا تھا، کہ اوروں کو بھی خراب نہ کروں۔ کچھ دنوں میں نئے کمانڈانٹ لیفٹیننٹ جنرل تنویر حسین نقوی آ گئے۔ سخت طبیعت کے انسان تھے۔ وقت گزرتا رہا، میرے استعفیٰ کا کوئی جواب نہ آیا۔

جنرل نقوی نے دفتر میں بلا کر کئی بار سمجھایا مگر میرا دل اُکتا چکا تھا۔ مجھ سے ہمیشہ بہت شفقت سے پیش آتے رہے۔ میرا اندازہ تھا کہ صرف یہی ایک شخص میرا درد محسوس کرتا ہے، میری بات کو سمجھ رہا ہے، شاید مجھے بھی۔ اُن کے تحت اور روکھے ایکسٹیریئر (exterior) کے نیچے ایک نہایت ہمدرد انسان چھپا ہوا تھا۔ نہ جانے کیا ہوا کہ اُنھوں نے اسے یوں بند کر لیا۔ اگر یہ کبھی کسی کو نظر آ جاتا تو وہ گھبرا سے جاتے۔ ایک دن کہنے لگے فوج سے نکل کر کیا کرنے کا ارادہ ہے؟ میں نہیں جانتا تھا کہ کیا کروں گا اور کس ریلوے سٹیشن کے ویٹنگ روم (waiting room) میں بچوں کو لے کر جاؤں گا۔ کہا اللہ مالک ہے۔

پھر ایک دن MS کسی کام سے کوئٹہ آئے۔ مجھے بتایا گیا کہ اُن سے ملوں۔ جب پہنچا تو سٹاف افسر میجر مغنی (بریگیڈیئر بن کر ریٹائر ہوئے) سے ملاقات ہوئی۔ کہنے لگے آخر مسئلہ کیا ہے؟ میں نے ہنس کر کہا، "کوئی ایک ہو تو بتاؤں"۔ کوئی ایسی چیز نہ تھی، جو اُن سے کہتا۔ کہہ دیا، "اب دیکھو نا بے نظیر کی حکومت حرام کھا رہی ہے اور اُس ہی کو سلام کرتا ہوں، اُس ہی سے تنخواہ پاتا ہوں"۔ وہ اُس وقت مجھے لے کر MS لیفٹیننٹ جنرل فرخ کے پاس جا رہے تھے۔ جنرل صاحب نے مجھے عزت سے بٹھایا اور بہت وقت دیا۔ کہنے لگے، "تمہیں فوج اچھی نہیں لگتی؟" میں نے کہا، "یہ بات نہیں ہے، بلکہ میں فوج سے محبت کرتا ہوں، مگر مجھ سے یہ دیکھا نہیں جاتا کہ فوج اپنے ہی ہاتھوں کس طرح خود کو تباہ کر رہی ہے اور کوئی روکنے والا نہیں"۔ میں نے اُن کو کچھ تفصیلات بتائیں، جن سے وہ بخوبی واقف تھے۔ میں نے کہا، "آخر کن کن چیزوں پر کوئی جھگڑ سکتا ہے۔ یہ تو روزمرہ کی زندگی ہے، کوئی میدان جنگ تو نہیں۔ دیوانگی لگتی ہے"۔

بہت صبر والے انسان تھے ورنہ میری ایک بات سن کر باہر بھیج دیتے، جو جی میں آتا کرتے۔ میں تھا ہی کون۔ میرے مستقبل کی اُنھوں نے مجھ دیوانے سے زیادہ فکر کی۔ ہمارا صرف وردی کا ہی رشتہ تھا، اور پہلی ملاقات۔ کوئی ادارہ اپنے لوگوں کی اتنی پرواہ نہیں کرتا۔ میں بولتا ہی جا رہا تھا، "جب میں فوج میں آیا تھا تو بہت صاف خیالات تھے، اب اتنے سال گزارنے کے بعد یوں محسوس ہوتا ہے کہ آہستہ آہستہ میں پکتا رہا، کبھی نوکری کے لئے، کبھی بچوں کے لئے، کبھی کسی کی خوشی کے لئے، کبھی جان چھڑانے کو، کبھی کام بچانے کی خاطر، کبھی چڑ کر، کبھی دیوانگی کا لیبل (label) بچانے اور کبھی یوں ہی بے دلی سے۔ اگر میں فوج میں ہی رہا تو جب تک ریٹائرمنٹ کی عمر کو پہنچوں گا، گلے میں

'SOLD OUT' (بکا ہوا مال) کا بورڈ لٹک رہا ہوگا۔ میں اس حال میں گھر نہیں جانا چاہتا، آج سوچتا ہوں شاید اتنے بڑے بول مجھے نہیں بولنے چاہیے تھے۔

پھر میں نے اپنی پوسٹنگ اور فوج کے سربراہ کی سفارش کا ذکر کیا، انھوں نے تردید نہیں کی، کہا، "پھر تمہارا تو نقصان نہیں ہونا، تمہیں تو ہم نے اچھی جگہ ہی دی۔" میں نے کہا، "سر، یہاں بھی آپ نے کسی کو تو بھیجنا ہوتا ہے۔ میرا یہاں آنا کوئی مجھ پر مہربانی تو نہیں، میں اپنی کارکردگی کی بنیاد پر آیا ہوں۔" پھر کہنے لگے، "اچھا تم ایسے کرو کہ جہاں جانا چاہتے ہو، اُنکی رکھو میں تمہیں وہیں بھیج دوں گا۔" میں نے کہا میں گھر جانا چاہتا ہوں۔ کیا بتاتا کہ اُس گھر کا کوئی پتہ ہی نہیں ہے۔ میں نے کہا، "سر، جب آرمی چیف مجھ سے وفادار نہیں تو میں اُن سے کیسے وفاداری کر سکتا ہوں، اور ایک بے وفا (disloyal) افسر کے طور پر میں فوج میں نہیں رہ سکتا۔"

مالی حالات کے بارے میں پوچھا، میں نے کہا کہ ساری عمر ہی ایک فوجی باپ کے مالی حالات میں گزری ہے، اور آج تو پہلی مرتبہ بیوی بھی نوکری کر رہی ہے، دو تنخواہیں آتی ہیں۔ مسکرا کر کہنے لگے کہ QMG (Quarter Master General) آئیں گے انہیں درخواست دے دینا، "ہم تمہاری مدد کریں گے۔" آخر میں کہا، "فوج سے تو تم نہیں جاسکتے۔ اب اگر ہماری مرضی سے کام کرو گے تو جہاں چاہو گے رہو گے، مزے کرو گے، ورنہ تمہیں کسی تکلیف دہ جگہ پر بھیج دیں گے۔ نوکری تو پوری کرنی ہوگی۔ اب سوچ لو۔" محبت سے ہاتھ ملایا اور واپس بھیج دیا۔

دن گزرتے رہے۔ QMG آئے، اُن کے سٹاف افسر نے مجھ سے امداد کی درخواست مانگی کہ کوئی پلاٹ الاٹ کر دیا جائے تاکہ میری پریشانیاں کم ہوں۔ میں نے کہا اللہ کے شکر سے مجھے کوئی مالی پریشانی نہیں ہے۔ اُن دنوں تنخواہوں میں کمی پر فوج میں پریشانی تھی اور یہ کہہ دیا گیا تھا کہ دونوں افسران نے استعفیٰ اس ہی وجہ سے دیا ہے۔ ساری فوج کو یہی خبر تھی۔ صحیح وجوہات کا کیوں کر ذکر کرتے۔ بعد میں جب تنخواہیں بڑھیں تو کچھ لوگوں نے فوج پر میرا شکریہ بھی ادا کیا۔ میں کیا کہہ سکتا تھا۔ کئی مہینے بات ہوا ہی میں لٹکی رہی۔ پھر جنرل نقوی نے کہا کہ یہ تمہیں چھوڑیں گے تو نہیں۔ ابھی استعفیٰ واپس لے لو، جیسے نوکری چل رہی ہے چلے دو۔ پھر بعد میں دیکھنا۔ تب تک میرا بخار بھی کم ہو چکا تھا۔ کاغذ واپس لے لئے۔

نثار میں تری گلیوں کے اے وطن کہ جہاں
چلی ہے رسم کہ کوئی نہ سر اٹھا کے چلے
جو کوئی چاہنے والا طواف کو نکلے
نظر چرا کے چلے، جسم و جاں بچا کے چلے

ہے اہل دل کے لئے اب یہ نظمِ بست و کشاد
کہ سنگ و نشت مقید ہیں اور سنگ آزاد

بہت ہے ظلم کے دستِ بہانہ جو کے لئے
جو چند اہل جنوں تیرے نام لیوا ہیں
بنے ہیں اہل ہوس، مدعی بھی، منصف بھی
کسے وکیل کریں، کس سے منصفی چاہیں

مگر گزار نے والوں کے دن گزرتے ہیں
ترے فراق میں یوں صبح و شام کرتے ہیں

یونہی ہمیشہ اُلجھتی رہی ہے ظلم سے خلق
نہ اُن کی رسم نئی ہے، نہ اپنی ریت نئی
یونہی ہمیشہ کھلائے ہیں ہم نے آگ میں پھول
نہ اُن کی ہار نئی ہے نہ اپنی جیت نئی

اسی سبب سے فلک کا گلہ نہیں کرتے
ترے فراق میں ہم دل بُرا نہیں کرتے
(فیض)

پانچواں سفر
ترنگ و جدان

کوئی نہ جان سکا، ساز و رخت ایسا تھا*

تیز بارش ہو رہی تھی، لگتا تھا آسمان سے ندیاں کھل گئیں ہیں۔ بارش تو کئی دنوں سے جاری تھی، مگر آج تو صبح سے اتنی موسلا دھار تھی کہ سانس لینے کو بھی نہ رُکی۔ اب تو رات بھی کافی گزر چکی تھی۔ میں نے قرآن بند کیا اور کروٹ لے کر سونے لیٹ گیا۔ دو کمروں کے چھوٹے سے بجرے کے باہر کافی پانی کھڑا ہو چکا تھا، جس پر بارش کرنے کی آواز ٹھہرے ہوئے شور کی طرح لگتا رہی تھی۔ آواز میں کوئی اونچ نیچ نہیں تھی، کوئی لہر نہیں، جیسے میری سوچوں میں اب کوئی تغیر نہیں رہ گیا تھا۔ بس ایک لگاتار سی ٹھہری ہوئی یکسانیت (monotony)۔ اسی میں ڈوب کر سو گیا۔ فون کی گھنٹی نے نیند سے چونکا کر اٹھایا۔ "اللہ خیر کرے"، دل سے آواز آئی۔ شاید رات کے تین بج رہے تھے۔ "سر، دریا کا پانی بہت چڑھ گیا ہے۔ سیلاب کے ریلے میں منڈیا لہ پُل کے کنارے کی کافی زمین بہہ گئی ہے، حفاظتی بند بھی دریا میں چلا گیا اور بہت سے بکر (bunker) بھی ساتھ لے گیا۔" ایڈ جونٹ کا فون تھا۔ میں نے لوگوں کی خیریت دریافت کی، تو کہا، "لوگ اور سامان تو پیچھے نکال لئے تھے، سب خیریت ہے، لیکن رسیوں کا پُل ٹوٹ چکا ہے۔" ۱۰ ستمبر ۱۹۹۲ کی رات تھی، بہت بڑا سیلاب آیا۔

میں کونہ میں ڈھائی سال گزار کر ۴۰ بلوچ کی کمانڈ پر چھمب (افتخار آباد) آ گیا تھا۔ ہم کشمیر میں لائن آف کنٹرول (Line of Control) پر توی دریا کے کنارے دفاعی پوزیشن میں تھے۔ وہیں جہاں میں نے اے کی جنگ میں چیخوں بھری رات گزاری تھی۔ شراب میں نہایا تھا۔ اب نیا میں تھا، نیا ماحول اور نئے لوگ۔

میں پُل کے کنارے پہنچ گیا۔ ۱۹۷۱ کی جنگ میں دشمن نے اس پُل کو اپنی طرف سے گرا دیا تھا۔ پُل کے اوپر، دشمن کی جانب، جہاں سے وہ ٹوٹا ہوا تھا، ہمارا ایک مضبوط بکر تھا۔ جنگ کی فائر بندی کے انجام میں اب لائن آف کنٹرول توی دریا کے بیچ سے گزرتی تھی۔ یہی ہماری سرحد تھی۔ پُل کا دوسرا کنارہ اُس کے پار تھا، اور ہمارا بکر بھی۔ راستہ صرف ہمازی طرف سے ہی تھا۔ اس لئے اس پر ہم نے قبضہ جمائے رکھا۔ دشمن نے کئی بار یہ بکر ہٹانے کو کہا مگر جس کا ہاتھ اوپر ہو جائے وہ اس جھگڑے میں کیسے پیچھے ہٹے۔ وہ اس پر فائر کرتے رہتے۔

پھر وقت کے ساتھ ساتھ دریا کا ہمارا کنارہ، جو پانی سے خاصا اونچا تھا، دریا کے بہاؤ سے کٹتا رہا، کنکریٹ (concrete) کے پُل سے دور ہوتا گیا۔ زمین سے پُل تک پہنچنے کو ایک رسیوں کا پُل بنالیا تھا، جس پر چڑھ کر پکے پُل تک پہنچتے۔ پُل کے دوسرے سرے پر

پانچواں سفر ترکی و جدان

پوسٹ میں قریب تین سپاہی اور ایک حوالدار رہتے تھے۔ راستہ کچھ تو رسیوں پر تھا، بقایا ٹیل کی کھلی زمین پر سے گزرتا تھا۔ اندھیرے میں تیزی سے پار کرنا پڑتا۔ اگر فائر کھل گیا تو دوڑتے رہو پہنچ گئے تو ٹھیک، ورنہ کوئی آکے اٹھا لے گا۔ یا پھر پل پر لیٹ کر رینگ رینگ کر پہنچ جاؤ۔ اگر رسیوں کے پل پر مارے گئے تو وہیں لٹک گئے۔ میرا بیٹا ذیشان، جو ماشاء اللہ آج فوج میں میجر ہے، وہ بھی ایک رات یہ پل پار کر کے میرے ساتھ اس پوسٹ پر گیا تھا۔ پوسٹ کو برقرار رکھنے میں کوئی فائدہ نہ تھا، بس ایک انا کی تسکین تھی۔ شاید یہ بات عجیب لگے، لیکن زندگی اور موت کے اس کھیل میں ایسے ہی ہوتا ہے۔ اپنا ہاتھ اوپر ہی رکھتے ہیں۔ جنگجو کا ذہن غالب رہنا لازم ہے۔

میں نے وہاں پہنچ کر حالات کا جائزہ لیا، وائرلیس پر مورچے میں پھنسے لوگوں کو دلا سہ دیا، اور کمپنی کمانڈر کو بتایا کہ ٹیلیفون کی لائن کو بحال کرنے کی کوشش کرو۔ وائرلیس کی بیٹریاں کمزور لگتی تھیں۔ شاید متواتر تبدیل نہیں ہو رہی تھیں۔ ایک دفعہ لائن بحال ہو گئی، تو پھر اس لائن کے زور پر کوئی رسی پار لگالیں گے اور پل (pully) پر ٹوکری میں راشن وغیرہ کا نظام چل پڑے گا۔ ابھی کئی دن کا خشک راشن اُن کے پاس تھا۔ پانی تو دریا سے ہی ڈول میں کھینچ لیں گے۔ لوگوں کو منتقل کرنے کا بھی کوئی ایسا ہی طریقہ بنا لیں گے۔ خبر ملی کہ دہنی والی کمپنی، جو دریا کے کنارے سروٹوں میں لگی تھی، وہاں بھی کافی پانی چڑھ گیا ہے۔ مورچے ڈوب چکے ہیں، لوگ بند پر کھڑے ہیں۔ میں اُس طرف چل پڑا۔

مجھے ۴۰ بلوچ کے لوگ بہت اچھے لگے۔ سب ہی شوق اور لگن سے کام کرتے۔ میجر فاروق اسلم صاحب 21C تھے، اور کوئی میجر نہ تھا، بقایا افسر بہت کم سروس کے تھے۔ روزمرہ کی تھوڑی بہت تربیت ہوتی، کوئی خاص مصروفیات نہیں تھیں۔ جھمب میں ہمارا بٹالین ہیڈ کوارٹر تھا، اور کچھ فاصلے پر الگ تھلگ دو کمروں کا ایک چھوٹا سا مکان، جس میں میں رہتا تھا۔ زیادہ وقت تنہائی میں گزرتا۔ شام کو میس میں کم ہی بیٹھتا، کہ میری وجہ سے شاید افسر گھل کر ہنس نہ سکیں۔ دو یا تین ہی افسر ہوتے، باقی اپنی کمپنیوں کے ساتھ رہتے تھے۔ صبح کسی کمپنی کا چکر لگا لیتا، کچھ تربیت دیکھ لیتا۔ پیدل زیادہ پھرتا۔

پانچ وقت مسجد جاتا، جو میس کے ساتھ ہی تھی۔ کمرے میں بھی قرآن ترجمے کے ساتھ پڑھتا رہتا۔ کیسٹ پر تلاوت اور ترجمہ لے لیا تھا، بس ٹیپ ریکارڈر کے ساتھ انک انک کر پڑھتا، آہستہ آہستہ زبان کھل گئی۔ خوبصورت قرأت کے ساتھ پڑھنے کا بہت مزا آتا۔ میں شاف کالج کے دنوں سے ہی دین کی طرف بہت مائل ہو چکا تھا۔ یہاں کی تنہائی اور نسبتاً فراغت نے اور اس طرف دھیان لگا دیا۔ ہر وقت کسی نہ کسی قرآنی آیات کی تسبیح کرتا رہتا، دل ہی دل میں، گنتی کے بغیر۔ بے کراں اللہ کو رگن کے کیا یاد کرنا۔

شام کو ایک نیزا باز نے نیزے سے ڈوری باندھ کر پل تک پھینکنے کی کافی کوشش کی، مگر کامیابی نہ ہوئی۔ رات کو سوئمنگ ٹیم کے کچھ جوانوں کو پار بھیجا، مگر پانی کی تیزی کی وجہ سے پار نہ لگ سکے۔ دوسری رات پھر یہی آزما یا، پانی کافی کم ہو گیا تھا۔ ایک لانس نانک اسلم پار لگ

پانچواں سفر ترنگ وجدان

سکا، باقی واپس نکل آئے۔ کچھ کام نہ بنا۔ اگلی صبح بکر میں موجود سپاہی چھوٹے سے دروازے سے، ہمیں دکھانے کو، دعا کے لئے ہاتھ نکالنے لگے۔ وارنریس کی بیڑیاں جواب دے چکی تھیں۔ کھانا پانی سب تھا، کوئی ایسا مسئلہ نہیں تھا، صرف کٹ جانے پر احساس تنہائی اور پریشانی۔ تمام سپاہی اُن کو دیکھتے اور دلگیر ہوتے۔ جو سنتے وہ بھی۔ سب میری طرف دیکھتے۔

میں نے برٹلین ہیڈ کوارٹر میں سب افسران کو بلا لیا، اور کہا کہ دونوں سے سوئمنگ ٹیم کے لوگ کوشش کر رہے ہیں، لیکن کامیابی نہیں ہو رہی۔ میں چاہتا ہوں آج کوئی افسران کو ساتھ لے کر جائے اور پل پر موجود لوگوں کے ساتھ ایک رسی کا رابطہ پیدا کرے۔ سب مجھے پھٹی آنکھوں سے دیکھنے لگے۔ کسی کو بھی تیرنا نہیں آتا تھا۔ بعد میں ایک سیکنڈ لیفٹیننٹ، جو نیا PMA سے آیا تھا، میرے پاس آیا کہ مجھے تیرنا آتا ہے۔

میس میں، جہاں ہم بیٹھے تھے، دو شہید لفظیوں کی تصویریں لگی تھیں، دونوں ٹلہ رینجز (ranges) پر فائرنگ کے دوران ایک حادثے میں شہید ہوئے تھے۔ پھر مجھے اپنے چھوٹے بھائی کا بھی خیال آیا، وہ بھی سیکنڈ لیفٹیننٹ ہی شہید ہوا اور یونٹ میں سب سے چھوٹا تھا۔ جب اُس کا جسم آیا تو اُس وقت میرے دل میں یہی خیال آیا تھا کہ کیا کوئی اور تجربہ کار افسر نہ تھا، جو لڑائی کی واحد کاروائی میں سب سے چھوٹے بچے کو بھیج دیا۔ سب اپنے اپنے مورچوں میں ہی بیٹھے رہے۔ یونٹ کا، پوری لڑائی میں، ایک ہی شہید تھا۔ اُس کے جانے پر شاید اُس وقت دل میں خفگی زیادہ تھی۔ میں نے سیکنڈ لیفٹیننٹ سے کہا آپ نہیں جاسکتے۔ دل میں یہ احساس تھا کہ میں بھی یونٹ کا ہی ایک افسر ہوں اور اچھا تیراک بھی، مگر کچھ کہا نہیں اور اپنے کمرے میں آ گیا۔ سوچ لیا کہ رات کو خود ہی جاؤں گا۔

صوبیدار میجر صاحب سے کہا کہ رات کو سوئمنگ ٹیم کے اچھے تیراک پُل کے نزدیک پہنچے ہوں۔ اُنھوں نے کچھ پھیکا سا، "ٹھیک ہے، سر" کہا۔ شاید افسران سے کی ہوئی باتوں میں سے کچھ سن لیا تھا، اور خدشہ تھا کہ کہیں میں خود ہی نہ چل پڑوں۔ عمر رسیدہ آدمی تھے، میری طبیعت سے بھی واقف تھے۔

دن کے وقت یوں سوچا کہ ۱۶ ایم ایم مارٹر کے گولوں کا فیوز نکال کر کوئی ہلکی سی ڈوری کا چھلا مارٹر کے گولے کے ساتھ ہوا میں پھینکا جائے تو شاید پُل کے پار ہو سکے۔ بعد میں اس کے ساتھ موٹی رسی کھینچ لی جائے۔ ایک دفعہ یہ تعلق قائم ہو گیا تو پھر باقی سب چیزیں بھی چل پڑیں گی۔ راہ کھل جائے گی۔ ہم نے دن کو پیچھے کے علاقے میں مشق بھی کر لی۔ چاند پورا تھا اور اُس کی روشنی میں پانی چمکتا تھا۔ رات کے آخری حصے میں، جب ہماری طرف کے دریا کے کھڑے کنارے کا سایہ پانی پر پڑتا تو وہی پانی میں لوگ اتر سکتے تھے۔ سوچا کہ رات کو جب

پانچواں سفر ترنگ وجدان

تک ہمارے کنارے کے کھڑے کٹاؤ کا سایہ پانی پر نہیں آ جاتا، ہم ڈوری پار کرانے کی کوشش کریں گے۔ اگر ڈوری پار لگ گئی تو شاید مجھے جانا ہی نہ پڑے۔ یقیناً خوف کی ہلکی سی لہر دل میں آہستہ آہستہ اُٹھ رہی تھی۔ سورج کے ساتھ ساتھ شاید دل بھی غروب ہونے کو آ رہا تھا۔

رات ہوا چل پڑی۔ کافی کوششوں کے باوجود مارٹر کے گولے ڈوری پار نہ کرا سکے۔ ہم ایک سمت سے گولے پھینکتے تاکہ ٹیل کی لمبائی کو کہیں سے بھی ڈوری پار کر لے، مگر بات بن نہیں رہی تھی۔ جو گولے لائے تھے کچھ دیر میں ختم ہو گئے۔ میں ٹھٹکا۔ کیا تقدیر مجھے جانے پر مجبور کر رہی ہے۔ پھر گھٹتے حوصلے کو سہارا دیا، مزید گولے منگوا لئے۔ جب وہ پہنچے تو پتا چلا کہ ان کے فیوز کسی طرح کھلتے ہی نہیں۔ جم چکے تھے۔ مجھے جانا ہی تھا۔

ابھی دریا پر سایہ نہیں آیا تھا۔ صوبیدار میجر صاحب سے پوچھا کہ کیا سوئمنگ ٹیم کے لوگ پہنچ گئے؟ کہنے لگے ابھی تک تو نہیں آئے۔ کہا فوراً بلوائیں۔ میں کچھ دیر کو لیٹ گیا کہ چاند بھی زرا ڈھل جائے۔ سوئمنگ ٹیم کے لوگ پھر بھی نہ آئے۔ صوبیدار میجر صاحب کسی صورت مجھے دریا پار نہیں جانے دینا چاہتے تھے۔ میرے دل میں خوف کا دہرا گمان اُٹھا۔ کیا اکیلا ہی جاؤں گا؟ اگر آج اللہ کے بھروسے پر دریا میں اکیلا ہی کود گیا تو اللہ کو پالوں گا، ورنہ بہتر ہے یہ دین ہی چھوڑ دوں۔ پھر کہانیاں گھڑنے سے کیا حاصل۔ اُٹھ بیٹھا۔

ٹیلیفون کی تار کا ایک چھلا بنوایا اور پانی کی طرف چل پڑا۔ نیکر کمرے سے ہی کپڑوں کے نیچے پہن کر آیا تھا۔ میں نے کہا میگافون پر اُن کو پشتو میں بتاؤ کہ جو تار اُن کے پاس ہے پُل کے ہمارے سرے سے نیچے لٹکا دیں، میں اس میں جوڑ لگا کر تار واپس لے آؤں گا۔ سیکنڈ لیفٹیننٹ صاحب بھی آ گئے، کہنے لگے آپ کے ساتھ چلوں گا۔ تار کا چھلا اُنھوں نے لے لیا۔ جب دریا میں اترے تو پانی اتنا تیز تھا کہ واپس نکل آئے۔ پانی کا اتنا تجربہ نہیں رکھتے تھے۔ پھر اُن کی ذمہ داری بھی تو نہیں تھی۔ میں ہی CO تھا۔

آگ کے درمیان سے نکلا، میں بھی کس امتحان سے نکلا *

توی دریا بہت تیز بہہ رہا ہے۔ سیلابی ریلے کو گزرے تین دن ہو چکے، پھر بھی کس قدر بہاؤ ہے۔ تقدیر مجھے بیس سال بعد واپس توی دریا پر لے آئی ہے۔ شاید کچھ رہ گیا تھا یہاں۔ آج پھر اس کے ٹھنڈے پانی میں اُتروں گا۔ کیا کچھ کھو گیا تھا جو لینے آیا ہوں؟ میں دریا کی موجوں سے بہت اُوپر، زمینی کٹاؤ کے کنارے مشین گن کے مورچے پر کھڑا تھا۔ پورا چاند میرے پیچھے کی جانب چمک رہا تھا، پانی کے پار چمکتی ریت کی ڈھلوان میرے سامنے۔ یہ پانی سے کچھ دور تک اُٹھتی ہوئی جاتی، جہاں کنارے پر جھاڑیوں سے ڈھانپے ہوئے بند کی قطار میں چھپے ہوئے دشمن کے مورچے، شاید مجھے دیکھ رہے تھے۔ دائنی طرف کافی فاصلے پر، منڈیالہ کا ٹوٹا ہوا پل، دونوں طرف سے زمین سے جدا، پانی کے بیچ کھڑا تھا، صرف اپنے لئے۔ میں کٹاؤ پر تیز تیز نیچے اُترنے لگا۔ صبح ہونے میں زیادہ وقت نہیں ہے۔ کتنی دیر سے انتظار میں تھا کہ دریا پر کٹاؤ کا سایہ آجائے، کہ آج پھر چاندنی میں پانی چمکتا تھا۔ میں چمک سے ڈرتا تھا۔

دریا کے کنارے پہنچ کر میں رُک گیا۔ لہریں بہت تیز تھیں۔ میں ٹھنک نہیں سکتا، چالیس بلوچ کا CO ہوں۔ سب میری ہی طرف دیکھتے ہیں۔ میں نے تھوک گھونٹا۔ ڈرومت، آج تم تنہا نہیں ہو۔ اللہ تمہیں دیکھ رہا ہے، تمہارے ساتھ ہے۔ میں آہستہ سے پانی میں اُتر گیا۔ پار کنارے پر دشمن جاگ رہا ہے۔ تم بھی جاگتے رہنا، میں نے اپنے کنارے کی طرف دیکھا۔ دریا کے کنارے پر کھڑے میرے ساتھی مجھے دیکھ رہے تھے۔ پھر پانی کی تیز دھار نے مجھے اپنی آغوش میں سمیٹ لیا۔ اپنوں سے دور کھینچ لیا۔

پچھلی بار جب توی میں اُتر تھا، ہجوم میں بھی اکیلا تھا۔ ایک خواب کی تصویر تھامے، ادھر میں لٹک رہا تھا۔ آج تیز دھارے کے بیچ اکیلا اللہ کی رسی تھامے ہوئے تھا۔ اب کیا ڈرنا۔ کنارہ چھوڑتے ہی حوصلہ بڑھ گیا۔

پانی مجھے کھینچنے لئے جارہا ہے۔ تیز۔ بہت تیز۔ لگا جیسے پل کے ستون سے ٹکرا جاؤں گا۔ اُس چبوترے پر کیسے چڑھوں گا جس پر ستون کھڑا ہے؟ میں ماہر تیراک ہوں، مگر آج کچھ اور ہی کرنا ہوگا۔ مجھے تو پانی کے بہاؤ نے ہی اُٹھایا ہوا ہے۔ میں نے تیرنا چھوڑ دیا۔ پیٹھ کے بل ہو گیا، پیر پل کی جانب کر کے گھٹنے موڑ کر پاؤں ہوا میں اٹھالے، کہ ریل کے ڈبے کی طرح ستون کے چبوترے سے ٹکرانے کا دھکا برداشت کر سکوں۔ ہاتھوں سے پانی کو کاٹنا اپنی سمت درست کرتا رہا، تاکہ ستون کی سیدھ برقرار رکھوں، کہیں ایسا نہ ہو کہ پل کے نیچے سے ہی

گزر جاؤں۔ گردن کھینچ کر سر اُپر اٹھایا ہوا تھا کہ آگے دیکھ سکوں، پاؤں کی جانب۔ آج ناچار الٹی سمت جا رہا تھا۔ تقدیر نے چھوٹی چھوٹی باتوں پر بھی مجبور کیا ہوا تھا۔ میرے ہاتھ میں کیا تھا!

پانی کی سطح سے کالا پل، آسمان پر نظر آرہا تھا۔ میں بہت تیزی سے اُس کے قریب ہو رہا تھا، نہیں، لگتا ہے پل تیزی سے بڑا ہوتا جا رہا ہے۔ پورے آسمان پر چھا گیا، سائے کی طرح۔ میرے پاؤں زور سے دیوار سے ٹکرائے، پانی نے مجھے دھکیلا اور میں نے بڑھ کر ستون کے تھڑے کو دونوں ہاتھوں سے تھام لیا۔ اس کا چکنا کنا راگولائی میں تھا۔ پاؤں پانی نے کھینچ کر ایک طرف دھکیل دیئے، جسم بھی، ہاتھ پھسلنے لگے۔ پاؤں اُپر چڑھانے کی کوشش میں پانی سے لڑتا رہا، پھسلتی گرفت سے دیوار نوچتا رہا۔ آخر اُپر چڑھ گیا، ہانپتا ہوا۔ سانس برابر کرنے کو پانی میں پاؤں لٹکا کر چبوترے پر بیٹھ گیا۔ سگریٹ کے مارے ہوئے پھیپڑے سینے کو کھینچ رہے تھے، دل زور زور سے دھڑک رہا تھا، آنکھوں میں چنگاریاں تیر رہی تھیں۔ میں پہنچ گیا تھا۔

پل پر سے میرے ساتھیوں نے ٹیلیفون کی تار لٹکانی ہے، میں نے اسے لے کر واپس جانا ہے۔ چبوترے پر لیٹا میں پل کے کنارے کو دیکھ رہا تھا، جو تقریباً چالیس فیٹ اُونچا تھا۔ وہ آتے کیوں نہیں؟ دور آسمان پر بادل تیر رہے تھے۔ میرے مورچوں سے کوئی میگا فون پر پشتوں میں بول رہا تھا، کہ دشمن نہ سمجھے، پل پر موجود لوگوں کو جگہ رہا تھا۔ اُن سے کوئی اور رابطہ نہ تھا۔ اب آ بھی جاؤ، صبح ہو جائے گی۔

دشمن کی مشین گن نے ایک برسٹ (burst) مارا۔ بدن میں بجلی سی کوند گئی۔ رُواں رُواں جاگ اُٹھا۔ ایک ہی لمحے میں ستون کی آڑ میں کھڑا تھا۔ دوسرا برسٹ آیا۔ میرے کندھے ستون کے کناروں سے باہر نکلے ہوئے تھے، اُن کی جلد پر کیڑے سے چلنے لگے۔ چاند میرے سامنے کی طرف بادلوں میں سے نور کی ایک دھار (shaft) نیچے گر رہا تھا۔ ایک ابابیل، نہ جانے کس اندھیرے سے اس میں اُپر کو اُٹھی، پھر غوطہ مار کر اندھیرے میں غائب ہو گئی۔ اتنی رات میں! کیا پتا تھا کہ اس ہی لمحے ایک روح پرواز کر گئی تھی۔ پھر ہماری مشین گنیں بھی کھل گئیں۔ ہمارے مورچے اُونچی زمین پر تھے۔ دشمن کا فائر ریت اور پانی کے اُپر پھرتا، ہمارا اُپر سے نیچے جاتا، ایک ہی جگہ گرتا۔ دونوں طرف سے مشین گنوں کی تھرکتی گھنگھناہٹ اور گولیوں کے ہوا میں گزرنے کی آوازوں سے دماغ بھر گیا۔ میں برہنہ، صرف ایک نیکر پہنے، دریا کے بیچ ایک چبوترے پر اکیلا کھڑا تھا۔ موت میرے گرد قفس کرتی تھی۔ کتنی تنہائی تھی سرکتے ہوئے اُن لمحوں میں۔ کتنی بے بسی۔ یہاں سے کس کو پکاروں؟ کوئی ہے اللہ کے سوا جو مجھے یہاں سے نکال لے جائے؟

صبح کی ہلکی ہلکی روشنی آسمان کے کنارے پر پھیل رہی ہے۔ فائر کچھ دیر سے بند ہے۔ شاید دشمن سو گیا ہو۔ شاید میرے ساتھی بھی۔ مجھے یہاں سے نکلنا چاہیے، دن کی روشنی میں تو میں زندہ نہیں بچ سکتا۔ اور اب دن ہے ہی کتنا دور۔ مگر شاید دشمن جاگ رہا ہو، مجھے دیکھ رہا ہو، ستون کی آڑ سے نکلنے کے انتظار میں ہو۔ پانی میں اترتے ہی فائر کھول دے۔ وہ تو بالکل قریب ہے۔ اور صبح بھی۔

پانچواں سفر ترنگ وجدان

ہر طرف سناٹا چھایا ہوا ہے۔ صرف پانی کی آواز مجھے بلارہی ہے۔ جیسے کہہ رہی ہو "زندگی مجھ سے ہی ہے، میرے ہی کوکھ سے جنم لیتی ہے۔ آؤ میں تمہیں اپنی گود میں اٹھا کر گھر پہنچا دوں"۔ آج اس کی باتیں کتنی مختلف تھیں۔ میں آہستہ آہستہ ستون کی آڑ میں بیٹھ گیا۔ وضو کیا، پھر کھڑے ہو کر دو رکعت نماز پڑھی۔ اتنی پر خلوص نماز کہاں کبھی نصیب ہوئی تھی۔ کبھی سورۃ فلق میں اتنا نہیں ڈوبا جتنا اس صبح۔ پھر بیٹھ کر دریا سے ایک گھونٹ میا لاپانی پیا، اور اُس سے کہا میں آ رہا ہوں، مجھے حفاظت سے اُس پار اُتار دینا۔ نہ جانے کیوں ایسے لگا جیسے دریا زندہ ہو، جیسے میرا اُس کا ایک رشتہ قائم ہو گیا ہو۔ بیس سال پرانی دشمنی مٹ گئی ہو۔ مجھے ذرا بھی خیال نہ آیا کہ میں شاید واپس نہ پہنچوں۔ یقین کے اُس مقام کو پالیا کہ دل ٹھہر گیا۔ لگا جیسے اللہ نے میرے دل کو تھام لیا ہو۔ مجھے چھو لیا ہو۔ میں آہستہ سے پانی میں اُتر گیا، اور واپس اپنے مورچوں پر پہنچ گیا۔ جیسا گیا تھا ویسا ہی جسم لئے واپس آ گیا۔ مگر دل میں ایک ایمان کا نور اُجاگر ہو گیا تھا، جیسے اللہ کو قریب سے دیکھ لیا ہو۔ شاید یہی کھو گیا تھا، یہی لینے آیا تھا۔ ورنہ دنیا کے کام میں تو آج بھی پہلی دفعہ کی طرح ناکام ہی لوٹا۔

جو کرن قتل ہوئی، شعلہء خورشید بنی *

"سر، سیکنڈ ان کمانڈ صاحب شہید ہو گئے۔" دریا سے واپس اپنے مورچے پر پہنچا تو ایک سپاہی نے بتایا۔ میجر فاروق اسلم اور کمپنی کمانڈر دونوں پُل کے قریب جہاں سے زمین کٹ گئی تھی اور بند بھی گر چکا تھا، بغیر کسی آڑ کے، بیٹھ کر رات کو دیکھنے والی دور بین (night vision goggle) سے مجھے دیکھ رہے تھے۔ انھوں نے مجھے چبوترے پر چڑھتے دیکھا، پھر میگا فون سے پُل پر لوگوں کو بلانے کا کہا۔ جب مشین گن کا برسٹ آیا تو پیچھے آڑ لینے دوڑے۔ کراٹل ٹرنچ (crawl trench) میں کود ہی رہے تھے کہ دوسرا برسٹ آیا، وہیں کراٹل ٹرنچ میں گر گئے۔ ایک ہی گولی لگی، دل میں۔ ابابیل نور میں اڑ گئی۔ بٹالین کی تاریخ میں لکھ دیا گیا، "۱۳ ستمبر ۱۹۹۲ کو صبح چار بجے میجر فاروق اسلم نے ایک آپریشن کے دوران شہادت پائی۔" اللہ انھیں جنت الفردوس میں جگہ عطا فرمائے۔ بریگیڈ کورپورٹ دے دی کہ کمانڈنگ آفسر دریا کے پار گئے تھے، دشمن نے فائر کھول دیا، سیکنڈ ان کمانڈ شہید ہو چکے ہیں اور کمانڈنگ آفسر واپس نہیں آئے، اُن کا کچھ پتا نہیں۔

کچھ دیر میں بریگیڈ کمانڈر بریگیڈیئر صولت عباس صاحب آ گئے۔ ہم ٹاف کالج میں بھی ایک ساتھ تھے۔ نہایت دلیر، بے باک اور ہنس مکھ آفسر تھے۔ ہمدردی چہرے سے نظر نہ آتی اور نہ ہی غریب پروری، ڈھانک کر رکھتے۔ فراخ دلی دل ہی میں چھپائے رکھتے۔ اُن کو بھی اللہ نے جلد ہم سے جدا کر دیا۔ اللہ اُن کی مغفرت کرے اور جنت الفردوس میں جگہ عطا فرمائے۔ آج اُن کی بڑی بیٹی، سب کا خیال رکھنے والی شیریں، میری بہو ہے، اور اپنی ساس کی لاڈلی۔ ہماری بیٹیاں ایک ساتھ پڑھتی تھیں اور بہت دوست تھیں۔ ایک دوسرے کے گھر آتی جاتی رہتیں۔ کہنے لگے، "تم نے یہ کیا کیا، تمھاری بیٹی پوچھتی کہ اُو کہاں ہیں تو میں اُس کو کیا جواب دیتا؟" آنکھوں میں آنسو بھرے تھے، بہت ناراض تھے۔ "یہ کوئی کرنے کا کام تھا۔ مجھے بتاتے، ہم کوئی اور طریقہ ڈھونڈ لیتے۔ اکیلے دریا پار کرنے کی کیا ضرورت تھی؟ ڈویژن کمانڈر کہہ رہے تھے کہ کرنل صاحب بٹالین کمانڈ کر رہے ہیں یا سیکشن؟ یہ کوئی CO کے کرنے کا کام تھا؟"

پھر کچھ دیر بعد ڈویژن کمانڈر صاحب میجر جنرل غازی الدین رانا بھی آ گئے۔ بہت باعزم اور سخت مزاج انسان تھے، سب ہی اُن سے ڈرتے تھے۔ میدان جنگ میں ڈویژن پر گرفت آسان نہیں ہوتی۔ میں نے تفصیلات بتائیں تو کچھ نہ بولے۔ سمجھ گئے۔ مجھ پر بھروسہ کیا۔ زیادہ بات نہیں کرتے تھے۔ کہنے لگے "اُس پوسٹ کو خالی کر دو، اپنے آدمیوں کو نکال لو، لیکن تم نہیں جاؤ گے۔"

پانچواں سفر ترنگ و جدان

میجر صاحب کی شہادت کی اور میرے واپس نہ آنے کی اڑتی ہوئی خبر نے مل جل کر نیا رنگ لے لیا۔ میرے دونوں بیٹے کھاریاں کینٹ کے کالج میں پڑھتے تھے۔ ایک میجر صاحب نے انھیں یہ خبر دی کہ تمہارے والد دریا کے پار گئے تھے شہید ہو گئے، ابھی باڈی (body) نہیں ملی۔ ہماری ٹیلیفون لائنیں کٹی ہوئی تھیں، میں نے دودن گھر فون نہیں کیا۔ وہ دودن یہی سمجھتے رہے اور ماں کو کچھ نہ بتایا۔ چپ سادہ کر بیٹھے رہے۔

اُس ہی دن لانس نائیک اسلم میرے پاس آیا، اور کہا کہ سر مجھے موقع دیں میں اُن کو نکال کر لاؤں گا، لیکن اکیلا ہی جاؤں گا، خود پر بھروسہ ہے اور اللہ پر۔ وہ پہلوانی بھی کرتا تھا، ہماری یونٹ کی ٹیم میں تھا۔ پھر ہم دونوں نے بیٹھ کر منصوبہ بنایا کہ یہ کام کیسے ہوگا، اُس کا سامان تیار کروایا۔ رات کو چاند نیچے ہونے کے بعد وہ دریا پار کر گیا۔ وقت کم تھا۔ میں نے کہا اگر صبح قریب ہو جائے تو رات بکر ہی میں ٹھہرے رہنا، اگلی رات نکلتا۔ میں ایک جگہ بیٹھ کر رات کی دور بین سے اُسے دیکھتا رہا۔

پانی کچھ اور اتر چکا تھا۔ کافی نیچے سے دریا پار کیا، جہاں دشمن کے مورچے سامنے نہ تھے۔ پھر پانی کے ساتھ ساتھ ہوتا ہوا پل کے نیچے آ گیا۔ پل کے نیچے نیچے سائے میں، ستونوں سے ہوتا ہوا، تیزی سے دوسرے سرے تک جا پہنچا۔ اتنا پھر تیرا اور اتنا دلیر، جیسے دشمن سے آنکھ مچولی کھیل رہا ہو۔ میں اُسے حیرت سے دیکھ رہا تھا۔ پل کے پرلے کنارے پر زمین اُونچی تھی اور ستون چھوٹے، مگر دشمن کی پوزیشن قریب تھی۔ اُس نے رسی میں بندھا ہوا تین نوکوں والا بوبے کا کنڈا اوپر پھینکا۔ دیوار سے ٹکرا کر نیچے آگرا۔ پھر کئی بار پھینکا، ہر بار پل سے ٹکراتا، آواز آتی، مگر اُس نے کوئی پرواہ نہیں کی۔ آخر وہ کہیں پھنس گیا۔ تیزی سے اوپر چڑھ گیا۔ کچھ ہی دیر میں تمام لوگ پل کے ہمارے کنارے کی طرف آ گئے، اور ایک ایک کر کے رے کی مدد سے نیچے اتر گئے۔ آخر میں وہ اُترا۔ پانی پار کر کے اپنی پوزیشنوں میں پہنچ گئے، ہتھیاروں سمیت۔ سب کاروائی خاموشی سے انجام پائی، دشمن کو کچھ خبر نہ ہوئی۔ بہادر اسلم نے سب کام آسان کر دکھایا۔ سب کچھ اکیلے ہی کیا۔ اتنا حوصلہ اللہ چن کر ہی عطا کرتا ہے۔ مجھ میں تو نہ تھا۔ لانس نائیک اسلم حوالدار بن گیا اور فوج کی طرف سے کچھ زمین بھی انعام میں پائی۔

اللہ تو لوگوں کو دلوں سے جانتا ہے، رینک سے نہیں۔ ایسا دل میں کہاں سے لاتا۔ پھر آنکھیں اوپر کیونکر کروں؟

بدل رہا ہے جنوں زاویے اڑانوں کے *

میں بٹالین کی ساری بڑی مارٹریں پیچھے سے اٹھا کر اگلے مورچوں پر لے آیا، مشین گنوں کی لائن میں، اور یہاں لگا دیں۔ حکم دیا کہ پلانوالا کی آبادی پر فائر کھول دو۔ یہاں سے پلانوالا ہماری ریج کی آخری حد پر تھا۔ فائر ختم کر کے بریگیڈ کمانڈر کو فون کیا، "سر، میں نے پلانوالا پر بڑی مارٹروں کے ۳۴ گولے فائر کر دیئے ہیں۔" بریگیڈ کمانڈر نے گھبرا کے پوچھا، "فائر کر چکے ہو یا کرنا ہے؟" میں نے کہا، "کر چکا ہوں۔" کہنے لگے، "جانتے ہو اس سلسلے کے احکامات کیا ہیں؟" میں نے کہا، "ہاں، جانتا ہوں۔" انھوں نے "OK" کہہ کر بات ختم کر دی۔ بڑے ہتھیاروں کے استعمال کی اجازت کے باقاعدہ احکامات تھے - (Standing Operation Procedures SOP) ہماری مشین گنیں بریگیڈ کمانڈر کی اجازت سے استعمال ہوں گی، ریکونیلنس رائفلیں (recoilles rifles) جو جیپوں پر لگی ہوتی ہیں، ڈویژن کمانڈر کی اجازت سے اور بڑی مارٹروں کے لئے کور کمانڈر کی اجازت درکار تھی۔ یہ سلسلہ اس لئے تھا کہ نچلی سطحوں پر جنگ بندی کی خلاف ورزی بے قابو نہ ہو جائے۔

دو دن گزر چکے تھے جب دشمن نے چھمب پر گولے گرائے تھے، جو ہوا میں پھٹ رہے تھے، رپورٹ بھی اوپر بھیج چکے تھے۔ اب بالاکمانڈر سے کیا پوچھتا؟ اگر میری چوٹ کا جواب دینا تھا، تو جواب دیتے۔ اور جواب کتنی دیر بعد دیتے ہیں؟ میرے سپاہیوں پر گولے گرے تھے، میں اُن کے اچھے برے کا ذمہ دار تھا۔ اُن کی توقعات مجھ سے تھیں، کور کمانڈر سے نہیں۔ اُن کا جواب مجھ کو دینا تھا۔ اُن کا بھروسہ مجھ پر تھا، مجھے ہی ان کا اعتبار بحال رکھنا تھا۔ بس گولے چلا دیے، جواب دے دیا۔ جو ہو، سو ہو، میری سپاہ کا مجھ پر بھروسہ نہ ٹوٹے۔ اگر اُن کا بھروسہ اٹھ گیا تو میں انھیں موت کے منہ میں کودنے کا حکم دینے کا اختیار کھودوں گا۔ یہی میری کمانڈ کی کنجی ہے۔

چھمب میں سولین تو نہیں رہتے تھے، لیکن پرانی آبادی تھی، نقشے پر ایک بڑا گاؤں ہی دکھایا ہوا تھا۔ اُن دنوں کشمیر میں ۱۲ ڈویژن کے علاقے میں بھی آئے دن دشمن ہماری آبادیوں پر بلا اشتعال توپ خانے کے گولے گراتا، شہریوں کا خون بہاتا۔ روز اخباروں میں خبریں چھپتیں۔ ہم جواب نہ دے سکتے، کیونکہ لائن آف کنٹرول کے پار بھی مسلمانوں کی ہی بستیاں تھیں۔ بہت دل کڑھتا۔ میرے سامنے، البتہ، ایک ہندوؤں کی آبادی تھی، پلانوالا۔ جب اُس نے میرے گاؤں پر گولے گرائے، تو میرے پاس جو ہتھیار اُس کے گاؤں تک فائر کر سکتا تھا میں نے استعمال کیا۔

پانچواں سفر تریگ و جدان

اُن دنوں اس علاقے میں ہمارا ٹی وی نہیں آتا تھا، انڈیا کا ہی دیکھتے۔ رات کو اُن کی خبروں میں دکھایا کہ "پاکستان کی بزدلانہ فوج نے نہتے شہریوں پر گولے گرائے"۔ شاید پانچ لوگ مارے گئے تھے، جن میں ایک بچہ بھی تھا، جس کا مجھے افسوس ہوا۔ مگر جو ہماری کشمیر کی نہتی آبادیوں پر گولے گرتے اور جو بچے وہاں مرتے، اُن کا کیا؟ دوسرے دن یہ بھی دکھایا کہ شہریوں نے جلوس نکالا کہ سیلاب سے جمو (Jammu) جانے کا پل بھی ٹوٹا ہوا ہے، کوئی ٹھیک نہیں کرتا اور اب شہر پر گولے بھی آنے لگے۔ حکومت کو بہت برا بھلا کہا، کہ آبادی کی کوئی دیکھ بھال نہیں، ان کو کوئی تحفظ نہیں۔ حزب مخالف کے سیاست دانوں نے خوب گڈی اڑائی۔ پھر بتایا کہ حکومت نے UN (United Nations) میں شکایت درج کروائی ہے اور جو لوگ مارے گئے ہیں اُن کا معاوضہ (compensation) بھی UN کے ذریعے پاکستان سے مانگا ہے۔ تین دن گزر گئے، ٹی وی پر یہی رونا آتا رہا۔ مجھ سے کسی نے کوئی سوال نہ کیا، کوئی فون نہ آیا۔ مکمل خاموشی رہی۔ ایک جاننے والے نے پوچھا کیا ہوا، میں نے بتایا تو کہا، "براہ، لگدا اے، ہُن اک گولہ تیرے اُتے وی آسی"۔ پھر شام کو بریگیڈ کمانڈر کا مبارک باد کا فون آیا۔

بعد میں پتا چلا کہ بات اتنی بڑھ چکی تھی کہ جب تک رپورٹ فوج کے سربراہ تک نہیں پہنچی سب چپ رہے۔ اُن دنوں فوج کی کمانڈ جنرل آصف نواز جنجوعہ کر رہے تھے۔ جب اُن کو رپورٹ دی گئی تو اُنھوں نے کہا، "مجھے خوشی ہے کہ ہمارے پاس ایسے بھی CO ہیں جو احکامات کے لئے بیٹھے ہی نہیں رہتے، پہل کرتے ہیں۔ دشمن کو پتا ہونا چاہیے کہ ہمارے افسران نے چوڑیاں نہیں پہنیں ہوئیں۔ فائر کریں گے تو جواب بھی ملے گا"۔ پھر کچھ دیر میں سب کے واہ واہ کے فون آنے لگے۔ کسی نے کہا، "دیکھا تم نے ہماری فارمیشن کو!" ایک بار پھر اللہ نے مجھے گڑھے کے کنارے سے نکال کر پہاڑ کی چوٹی پر کھڑا کر دیا۔ الحمد للہ۔

اُن دنوں لیفٹیننٹ جنرل غلام محمد اکور کے کمانڈر تھے، جنرل GM کہلاتے تھے اور جنرل ضیاء کے قریبی ساتھیوں میں سے تھے۔ اُنھوں نے اپنی کور میں اسلامی تعلیمات کا سلسلہ جاری رکھا ہوا تھا۔ اس تربیت کو "تعمیر کردار" کا نام دیا گیا تھا۔ ہر مہینے اس کی رپورٹ یونٹ سے بریگیڈ بھیجی جاتی، پھر ڈویژن سے ہوتی ہوئی کور ہیڈ کوارٹر پہنچتی۔ تیار شدہ خاکہ تھا، اُس میں اعداد و شمار بھرنے ہوتے۔ کتنے لوگوں کو کتنے کلمے آتے ہیں، کتنے لوگ نماز جانتے ہیں، کتنے تہجد کے ساتھ، دعائے قنوت کتنوں کو آتی ہے، قرآن کتنے پڑھ سکتے ہیں، اور اس ہی طرح کے کئی خانے تھے۔ کافی تفصیلی خاکہ تھا۔ معمول کی رپورٹ تھی، ہر مہینے خانہ پری کر کے، کچھ اعداد و شمار بڑھا کر بھیج دی جاتی۔ ساتھ میں کچھ بندشیں بھی تھیں۔ جیسے اگر نماز نہیں آتی تو چھٹی نہیں ملے گی، یا کورس نہیں ملے گا، ترقی نہیں ہوگی، وغیرہ وغیرہ۔

مورچوں میں کچھ نہ کچھ اس سلسلے کی تربیت بھی ہوتی رہتی۔ اچھا نظام تھا، لیکن رپورٹوں میں خاصی مبالغہ آرائی ہوتی۔ میں نے دوسری یونٹوں سے پتا کیا، سب کا یہی حال تھا۔ کہتے تھے اگر ہر ماہ رپورٹ میں بہتری نہ دکھائی جائے تو CO کی شامت آجائے۔ آٹھ سو کے

پانچال سفر ترک و جدان

قریب لوگ ہوتے، جن میں بہت سے ان پڑھ، کس کس کو یاد کرائیں۔ میں نے پھر کچھ لوگوں کا ٹیسٹ (Test) لیا تو پتا چلا کہ ہماری بھی رپورٹ اُس ہی طرح بہت بڑھ چڑھ کے بنی ہوئی تھی۔ ہر مہینے رپورٹ میں بہتری جو دکھاتے رہے۔ اب اگر اُسے درست کرتا ہوں، تو یہ آفت ہے کہ پہلے جھوٹی رپورٹ کیوں بھیجی، اور اگر یوں ہی چلنے دیتا ہوں تو ذہن میں کوفت ہوتی ہے۔ میں کچھ عرصہ کوفت اٹھاتا رہا۔

کور ہیڈ کوارٹر میں اسی ہی سلسلے کا ایک تربیتی پروگرام بھی چلتا تھا، جس میں نئے آنے والے بریگیڈیئر اور کرنل صاحبان آتے۔ شاید دو ہفتوں کا پروگرام تھا، کئی عالم دینی تعلیم دینے آتے۔ میرا نام بھی اس کے لئے آگیا، اور میں راولپنڈی چلا گیا۔ کور کمانڈر صاحب اس تربیت میں خاصی دلچسپی لیتے اور عموماً ہال میں آکر بیٹھ جاتے۔ آخر میں ہر ڈویژن کے ایک افسر نے اپنی ڈویژن میں تعمیر کردار پر کئے جانے والے کام کے بارے میں بتایا۔ خوب سوال جواب ہوئے۔ ۲۳ ڈویژن کی باری آخری دن تھی۔ ۴۰ بلوچ کے CO کو اپنے ڈویژن میں تعمیر کردار کی تفصیلات بتانی تھیں، اُس یونٹ کے CO نے جس کے گیٹ پر بڑا بڑا لکھا تھا، "ہم تیری ہی عبادت کرتے ہیں اور تجھ ہی سے مدد مانگتے ہیں"۔ جو میرے دل میں تھا میں نے سب کہہ دیا، ادب سے۔ بتا دیا کہ اس سلسلے سے کردار کی تعمیر تو نہیں ہو رہی، بلکہ ایک جھوٹ کا نظام قائم ہو گیا ہے۔ ایک ڈھونگ رچا ہے۔ اپنے صحیح اعداد و شمار بھی بتائے اور وہ بھی جو میں رپورٹوں میں بھیج رہا تھا۔ کور کمانڈر خاموشی سے سنتے رہے، پھر اٹھ کر چلے گئے۔ کوئی سوال جواب نہ ہوا۔ بریگیڈیئر قادر بلوچ بھی کلاس میں موجود تھے، جو بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے اور بلوچستان کے گورنر بھی رہے۔ جنرل عزیز خان، جو CJCSC (Chairman Joint Chief of Staff Committee) بنے اُس وقت بریگیڈیئر تھے اور کور کے COS (Chief of Staff) وہ بھی وہیں بیٹھے تھے۔ اُن سے ایک ملاقات پہلے بھی ہوئی تھی، جب وہ استور میں بریگیڈ کمانڈ کر رہے تھے اور میں نانگا پربت کی طرف روپل وادی میں ٹریکنگ کی غرض سے گیا ہوا تھا۔ پھر ایک مرتبہ اور جب میں بریگیڈیئر تھا اور وادی یاسین کے شمال سے ٹریک کر کے اشکومن وادی آیا۔ وہ اُن دنوں کمانڈر FCNA (گلگت) تھے۔

کچھ دنوں میں میرا پروموشن بورڈ ہونا تھا۔ چند جاننے والوں نے، جو میری حرکتوں سے واقف تھے، مجھ سے کہا کہ تم پروموشن بورڈ کے سال میں بہت کچھ کر چکے ہو، اب آخر اور کیا کیا کرو گے۔ آرام سے بیٹھو۔ مشورہ دیا کہ اپنے آپ کو اس طرح نہ اچھا لو کہ کسی جنرل کا فٹ بال کی طرح تمہیں کک (kick) مارنے کا دل کرے۔ لیکن میرا ایسا کوئی تجربہ کسی سینئر افسر کے ساتھ کبھی نہیں ہوا تھا۔ میں نے اُن کو پریشان ضرور کیا ہوگا، مگر کسی نے میرا نقصان نہیں کیا۔ ہر ایک نے میری مدد ہی کی۔ جہاں بڑی سفارش آڑے آئی تھی، اللہ نے وہاں سے بھی نکال لیا۔ میں نہیں جانتا کہ سچ بولنے کا کوئی ایسا نقصان ہو سکتا ہے کہ ڈبو ہی دے۔ تھوڑا بہت اُوپر نیچے تو ہو سکتا ہے، اس سے زیادہ نہیں۔ میں نے اس مشورے کو لپیٹ کر ردی میں ڈال دیا۔

پانچواں سفر ترک و جدان

جب پروموشن بورڈ کا وقت آیا تو میں بیوی بچوں کو لے کر سوات سیر کرنے چلا گیا۔ بورڈ کے بعد خبریں نکل ہی آتی ہیں۔ سنا کہ بورڈ میں کچھ لوگ میرے خلاف بھی تھے، مگر جنرل رانا، میرے ڈویژن کمانڈر نے میری بہت حمایت کی۔ شاف کالج میں طالب علمی کے دوران کارکردگی پر کسی نے کہا کہ اس کا نوکری کی طرف رویہ ٹھیک نہیں (incorrect attitude towards service)، اوکاڑہ کے مار پیٹ کے واقعے پر کہا گیا کہ یہ افسر اپنے یگ افسران (Young Officers) سے دوسرے افسروں کو پٹواتا ہے، پھر انھیں بچانے کھڑا ہو جاتا ہے۔ کسی نے کہا، "گینگسٹر ٹچ" (gangster touch) ہے۔ جب میں نے سنا تو ہنسی آ گئی۔ مجھ پر یہ فیض؟ استعفیٰ دینا میرے حق میں رہا، MS صاحب کی ذرہ نوازی۔ چھمب میں کی ہوئی حرکتوں پر بھی تبصرہ ہوا، تفصیل مجھے معلوم نہ ہو سکی۔ میرے ریکارڈ (dossier) پر لکھا تھا، "افسر غیر مستقل مزاجی دکھاتا ہے" (officer shows erratic behavior)، شاید کہنا چاہ رہے تھے کہ لگتا نہیں، مگر خطرناک ہے۔ لیکن میں پروموٹ ہو گیا، مگر چھ مہینے کے لئے فل کرنل کا رینک دیا گیا، کہ اگر ٹھیک کام کیا تو بریگیڈیئر کا رینک ملے گا۔

لوگوں نے کہا یہ تو بتاؤ تم پروموٹ ہو کیسے گئے، تمہارے قصوں جیسا تو ایک قصہ بھی ڈبونے کے لئے کافی تھا؟ میں نے پوری نوکری میں اپنے کام کے لئے کبھی کسی کو ایک لفظ بھی نہیں کہا۔ بلکہ شاید کسی کام کے لئے بھی۔ ہمیشہ سفارش سے نفرت ہی کی۔ صرف اللہ سے مانگا۔ میں نے جواب دیا کہ میں یہ تو نہیں کہہ سکتا کہ فوج اندھی ہے، یہی کہوں گا کہ اللہ کا کرم ہے اور اس ادارے کی مضبوطی۔

اس تمام عرصے انجم اور بچے جہلم میں رہے، ہر دو ہفتوں پر ویک اینڈ (weekend) گزارنے گھر چلا جاتا۔ انجم سکول میں شوق پورا کرنے کو پڑھاتی تھیں۔ کبھی کبھی وہ لوگ بھی آ جاتے، کچھ روز میرے ساتھ گزار لیتے، مگر ہماری محبت بھری دُوریاں یوں ہی چلتی رہیں۔ سچ ہے کہ اللہ ہی نے دو دریا رواں کئے جو آپس میں ملتے ہیں، مگر دونوں میں ایک آڑ ہے کہ اس سے تجاوز نہیں کر سکتے۔ اور دونوں ہی دریاؤں سے موتی اور مونگے نکلتے ہیں۔ یقیناً، دنیا کے اس گلدستے کے ہر پھول کا اپنا ہی رنگ ہے اور اپنی ہی خوشبو۔ اسی سے دنیا کا حسن ہے۔ تو ہم اپنی اپنی دنیاؤں کی مہک میں ہی رہے، آڑ پار نہ کر سکے، مل نہ سکے۔ اور وقت گزرنے پر ہی کھلا کہ دل پر رکھے اس بوجھ کے سبب کون کون سے پھل پیدا ہوئے۔ پھر میں اپنے رب کی کن کن نعمتوں کو جھٹلاؤں؟

آج پرانے کاغذوں میں جھانک رہا تھا، سیلاب کی تاریخ ڈھونڈنے۔ چند کاغذ نکل آئے جن پر ان دنوں کے احساسات بکھرے ہیں۔ شاید کسی روکھی دوپہر، ویک اینڈ سے واپسی پر، یہ پکار دل سے ابھری ہوگی۔ چھمب کا قصہ اس پر تمام کرتا ہوں۔

شاخو! بھری بہار میں رقصِ برہنگی!*

The Fruit Shop,
at the edge of
The Marketplace.
31st Mayday 93.

Neither reason nor passion guides me
on this stumbling upwards path.
The senselessness
of my endeavours
to please.

Am I there yet?

Slipping and sliding through the narrow tunnel.
And my tunneled vision ----
narrowing,
But never enough to focus.

The huffing and puffing,
the hunger,
and the rattle in the chest.
Ecstatic moments of giving,
abandoning life.

Love me.

Blurred visions in semi darkness,
of animals running in all directions.
Is the forest on fire?
Or is it blood in my eyes?
Huff, huff.
Soaring with burning wings.

Look at me.

For you,
I have starved myself to the bone.
Removing every shred of flesh.
The intenseness
of my need,
baring itself.

My remnants,
leftovers from last night's dinner,
I have clothed.
My silence,
a raiment for the honour of your look.

My nakedness will never embarrass you again.
Nor the softness in my eyes.

What is this madness that burns
like fire
in the pit of my stomach?
It grows with waiting.
The smoke spreads to fill my veins,
flames shoot into my eyes.
And I tremble
like the last leaf,
afraid that it has lived much too long.

With a parched mouth filled with acrid smoke,
I wait,
fearing the bursting of this smouldering
silence
to blazingly efface the night.

Care, masquerading as love.
Cold.
Measured.
Lunatic hope
to save happiness
from being battered against the rock.

The anguish of yesterday,
the intenseness of the desire, the soaring without wings,
the hypnotic moments,
the tears that wouldn't dry.

Is yesterday my only hope?

And now
an unspeakable loneliness engulfs me.
The search for meaning has ended.
The unquenchable thirst
eroded.

Now loneliness is only a word
like aloneness.

There is no waiting
only an unearthly calmness.
And no storm on the horizon.

And a hollowness that can only
be dispelled by touch.

Somehow the dead around me have found tongue.
There is a strange mixing in my consciousness
of sounds

and movements
and thoughts.

They are all saying something,
loud but not yet clear.
And they speak the same language,
the ticking of the furniture,
the chirping of a bird,
the musical horn above the distant traffic noise,
the falling of a leaf,
a cricket's cry.

A strange interconnectedness
is coming to life.

An eerie synchronous timing
to merge with my thoughts.

Am I there yet?
Are these the heights?
Is my soul here too?

Who goes there?
Beyond me!

Tomorrow
nothing will remain
but frozen prisms.

The Naked
Deceiver

یہ بستیوں کی فضا کیوں دھواں اُگلنے لگی *

ایک دوپہر چولستان کی خاک چھان رہا تھا۔ دور سے کسی مسجد کا اونچا مینار نظر آیا، میں نے کہا دیکھو یہ کیسی بستی ہے۔ پہنچا تو ایک خاصی بڑی کچی آبادی تھی، جس کے بچوں بیچ یہ مسجد کھڑی تھی۔ کوئی بھی پکا مکان نہ تھا سوائے اس مسجد کے، جو اس قدر شاندار تھی کہ میں دیکھتا رہ گیا۔ سفید رنگ کی پوری عمارت ہزاروں آئینوں کے ٹکڑوں سے ڈھکی ہوئی تھی۔ شیش محل کی طرح چمک رہی تھی۔ اونچے اونچے گنبد بھی۔ ارد گرد ہر طرف جھگیوں میں بکھری ہوئی شاید وہ بھوکے مخلوق رہتی تھی، جن کے جسم سے بوٹیاں نوج نوج کے یہ عالی شان مسجد بنائی گئی تھی۔ وہ آج بھی اپنے نوالے اسے کھلاتے ہوں گے، کہ شاید یہی ان کی بخشش کا ذریعہ بن جائے۔ شاید اس ہی کی برکت سے اس دوزخ سے نکل سکیں، جس میں ہم نے انھیں قید کر رکھا تھا۔ مسجد کا دروازہ بند تھا۔ میرا حوصلہ نہ ہوا کہ اسے کھٹکھٹاتا، اس کی دھلیز کو پار کرتا۔ چپ چاپ وہاں سے دور بھاگ آیا۔ ریت پر جانماز بچھا کر اللہ کے آگے پھیکا سا بے معنی سجدہ کیا۔

وہ بھی کیا کڑوا دن تھا۔ شام کے قریب کچے راستے پر میری جیب گرد اڑاتی جا رہی تھی۔ کیا دیکھتا ہوں کے راستے کے بیچ ایک رنگین کپڑوں کا ڈھیر پڑا ہے۔ جب قریب ہوا تو دیکھا ایک قدیم بڑھیا سجدے میں گری ہے۔ جیب سے اُترا، اس کا حال پوچھا، مگر وہ سجدے سے اٹھنے پر آمادہ ہی نہیں تھی۔ اُس کے کچھ گھر والے قریب کی گنم جھگیوں سے آگئے۔ اُس ٹھٹھری ہوئی جسم کی گانٹھ کو اٹھا کر لے گئے۔ کہنے لگے یہ دور سے آپ کی گاڑی آتے دیکھ کر ڈر گئی تھی اس لئے ایسا کیا۔ آپ جانیں۔

جب میں نے بہت پوچھا کہ کیوں ڈر گئی تھی؟ کیا ماجرا ہے؟ تو بتایا کہ ان کے گھر کی ایک لڑکی کو وہ لوگ اٹھا کر لے گئے، جن کو انھوں نے ووٹ نہیں دیے، مگر وہ الیکشن جیت گئے تھے۔ شاید مہینے سے اوپر ہو چلا تھا۔ یہ اُن لوگوں کے پاس بھی گئے، انھوں نے کہا کہ اُس کے پاس جاؤ جسے ووٹ دیے تھے۔ اُس سے مانگو۔ ہم سے کیا لینے آئے ہو؟ جب میں نے کہا کہ مجھے تفصیلات بتاؤ میں کچھ کرتا ہوں، کہنے لگے خدارا آپ کچھ نہ کرنا ورنہ ہماری لڑکی قتل کر دی جائے گی۔ وہ کچھ عرصے میں واپس بھیج دیں گے۔ یہ بڑھیا سمجھی کہ آپ کچھ اور لینے آئے ہیں اس لئے ڈر گئی تھی، پاگل ہے۔ میں نے بہت کہا کہ کچھ نہیں ہوگا، ہم اُس کو واپس لے آئیں گے، مگر انھوں نے کہا آپ نہیں سمجھتے۔ سب اُن کے ساتھ ہیں، پولیس بھی، حکومت بھی۔ آپ چلے جائیں گے، ہم کو یہیں رہنا ہے۔ وہ طاقتور لوگ ہیں، ہمارا جینا حرام کر دیں گے۔ آپ ہمارے لئے اور مصیبت نہ کھڑی کریں۔ بس ہم پر برا وقت آیا ہے، گزر جائے گا۔ دعا ہے کہ ہماری بیٹی زندہ آجائے۔ اتنا ہی کافی ہے۔

پانچواں سفر تریک و جدان

صحرا کے چھپے گوشوں میں بھی ہمارے نظام کے پنجے گڑے تھے۔ بھوکے گدھ کی طرح، بے بسی کو دیکھ کر اُس پر جھپٹ پڑتے ہیں۔ یہی بے بسی ان کی خوراک ہے۔ یہ عوام کے خادم، جب تک اپنے آقاؤں کو خوش رکھتے ہیں انہیں ہر چیز کی چھوٹ ہے۔ لوگوں کا کیا ہے، وہ تو صرف اعداد و شمار ہیں۔ یہاں کتنے پیدا ہوئے، وہاں کتنے مرے۔ غربت کی سطح سے اتنے نیچے ہیں، اتنے جاہل، اتنے بھکاری۔ سیلاب میں کتنے ڈوب گئے، بھوک سے کتنے گرے؟ آگ میں کتنے جلتے ہیں؟ کتنوں کا دل چیر کہ دیکھا؟ کون کسے پوچھے؟

پروموٹ ہو کر میں اوکاڑہ آچکا تھا اور ۴۰ ڈویژن میں بریگیڈ کی کمانڈ سنبھال لی تھی۔ جنرل جو لین پیٹر ہمارے ڈویژن کمانڈر، نہایت نیک سیرت، مخلص اور سادہ طبیعت انسان تھے۔ ہمارا لڑائی کا علاقہ چولستان کا صحرا تھا، جہاں میں نے یہ دل سوز مناظر دیکھے۔ ۱۴ ڈویژن، جس میں میں بنالین کمانڈ کر چکا تھا، بھی اوکاڑہ ہی میں تھا۔ اس کی کمانڈ میجر جنرل مشتاق حسین کر رہے تھے جو بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے۔ شاف کالج میں میرے استاد بھی رہ چکے تھے۔ نہایت سادہ طبیعت کے پُر خلوص انسان تھے۔ سوائے اللہ کے اور کوئی خوف دل میں نہ رکھتے۔ جب فارغ ہوتے میرے پاس دفتر آ جاتے، بیٹھتے، گپ لگاتے۔ میں ان کی قربت سے حوصلہ پاتا۔ اُن چند لوگوں کا ذکر ضرور کرنا چاہتا ہوں جن کی ذات سے میں مرعوب ہوا، اور میں نے چاہا کہ ان سے کوئی اچھی چیز سیکھ لوں۔ اُسے اپنالوں۔ ایک ان ہی جیسے ان کی ڈویژن کے کرنل شاف تھے، کرنل محمد صابر (بعد میں لیفٹیننٹ جنرل ہوئے)۔ ہم دونوں شاف کالج میں اکٹھے پڑھاتے بھی رہے اور خاصی دوستی رہی۔ اللہ نے ایسا دل دیا تھا کہ خطا کرنے والے کو خطا کرنے سے پہلے ہی بخش دیتے۔ ان سے زیادتی کر کے لوگوں کو افسوس ہوتا، کیونکہ وہ اس کا بدل احسان سے دیتے۔ میں کچھ کہتا تو زیادتی کرنے والے کی صفائی پیش کرتے۔ آج بھی ایسے ہی ہیں۔

ہماری تربیت کی تمام مشقیں ٹینکوں کے ساتھ حملہ آور کاروائیوں پر مبنی، چولستان کے صحرا میں ہوتیں۔ ایک ایسی ہی کوری ایکسرسائز میں میرے بریگیڈ کے زیر کمان ایک ٹینک رجمنٹ تھی اور ہم آزاد محور پر حملہ کرتے ہوئے آگے بڑھ رہے تھے۔ ایک سینیئر پیادہ فوج کے بریگیڈیئر صاحب میرے ساتھ ایمپائر (umpire) تھے۔ ہر تھوڑی دیر بعد جنگ کی کوئی نئی صورت حال پیش کر دیتے، تاکہ میرے بریگیڈ کی کارکردگی جانچ سکیں۔ صبح سے رات تک، پھر رات کو، اور پھر دوسرے دن شام تک یہی ہوتا رہا۔ لگاتار حرکت کے دوران تمام کاروائیاں وائرلیس کے ذریعے کنٹرول ہو رہی تھیں۔ جب رات آئی تو انفنٹری کو آگے لاکر جارحانہ کاروائیاں جاری رکھیں۔ پھر صبح کی روشنی پھوٹے ہی ٹینک آگے آ گئے۔ جب ایکسرسائز ختم ہوئی تو کہنے لگے میں اب ریٹائر ہونے کے قریب ہوں، مگر آج تک اتنی تیزی اور پُر اعتمادی سے کاروائیاں چلاتے کسی کمانڈر کو نہیں دیکھا۔ شاید وہ آرٹڈ فارمیشن میں نہیں رہے تھے۔ ماشاء اللہ، ہمارے آرٹڈ کور میں زیادہ تر کمانڈر ایسی صلاحیت خوب رکھتے ہیں، جبکہ انفنٹری فارمیشن میں، چونکہ اُن کا کام مختلف ہے، یہ سلسلہ اتنا عام نہیں۔

پانچواں سفر ترک و جدان

اجتماعی تربیت کے دوران ایک ٹینک بریگیڈ کی رات کے حملے کی ٹیسٹ ایکسرسائز تھی۔ کورکمانڈر نے دیکھنے آنا تھا۔ کئی دن رات تمام تربیت چھوڑ کر فرضی دشمن کے علاقے میں اسی حملے کی مشق ہوتی رہی۔ کورکمانڈر آئے، دیکھا اور بہت خوش ہو کر گئے۔ سب نے شاباش اپنی جھولیوں میں بٹوری۔ صبح پھوٹنے کو تھی۔ لنگروں سے ناشتہ آگیا اور ریت کے ٹیلوں پر جگہ جگہ پیٹر و میکس کی روشنیاں جلا دی گئیں۔ سب خوش تھے، جلوہ پوری چل رہا تھا۔ واپس جاتے ہوئے کہیں راستے سے روشنیاں دیکھی گئیں۔ بریگیڈ کمانڈر صاحب کو یہ غلطی نظر آ جانے سے صدمہ ہوا۔ جب ایکسرسائز پر تبصرے (debriefing) کا وقت آیا تو بریگیڈ کمانڈر نے افسران کی سرزنش کی، کہ دشمن کے علاقے میں حملے کے بعد آپ لوگوں نے اتنی روشنیاں جلا دیں۔ ایسے کام نہ کریں جو جنگ میں نہیں کر سکتے۔ اس پر ایک حوصلے والے دل جے کیپٹن صاحب نے اٹھ کر کہا، "سر، کیا جنگ میں اصل حملے سے پہلے دشمن کے مورچوں پر حملے کی دن رات بار بار مشقیں کی جاسکتی ہیں؟" پھر کپتان صاحب کا کیا بنا، میں کہہ نہیں سکتا۔ مگر نہ جانے یہ دل جے کیپٹن یا میجر ہی کیوں ہوتے ہیں!

ایک اور جگہ بڑے پیمانے کی کور کی جنگی مشق میں، ایک ڈویژن کونہر کے پار حملہ کرنا تھا اور پھر اس میں ایک ٹینکوں کے بریگیڈ کو داخل ہو کر آگے نکلنا تھا۔ GHQ سے کئی سینئر افسران دیکھنے آرہے تھے۔ کورکمانڈر نے چاہا کہ سب ٹھیک ہو۔ سب ٹھیک ہوا۔ دشمن کے علاقے میں نہر تک راستے اور نہر پر پل بنانے کی اور نہر کے پار کی تمام تیاریاں پہلے سے ہی مکمل کر لی گئیں۔ سارا سامان اپنی اپنی جگہ پہنچا دیا گیا۔ بس اشاروں پہ تمام کام کھٹا کھٹ ہو گئے۔ سب نے بہت تعریف کی۔ یقیناً ایسی تربیت کی صرف دشمن ہی تعریف کر سکتا ہے۔ تو پھر یہ دوست کے لباس میں کون لوگ ہیں؟

یہ فوج کا معمول تو ہر گز نہیں ہے، لیکن جگہ جگہ یہ دیکھنے کو ضرور ملتا ہے۔ اور اگر اسے روکا نہ گیا تو یہ عام رواج بن جائے گا۔ مشق ہمیشہ اُن ہی حالات میں ہونی چاہیے جو میدانِ جنگ میں ہوں گے۔ واہ! میں نے بھی کیا نئی بات کہی! کون نہیں جانتا؟ مگر پھر بھی جھوٹ اور دھوکہ پھیلتا جا رہا ہے۔

مجھے ہمیشہ سے گاڑیوں پر ستارے اور جھنڈے اچھے نہیں لگتے تھے۔ لگتا جیسے یہ بیساکھیاں ہیں، جن کے سہارے ایک شخص اپنے آپ کو عزت کے لائق ٹھہراتا ہے۔ جھنڈا کہتا ہے، چاہے تم مجھے عزت کے قابل نہ سمجھتے ہو، مگر میں اُس رتبے پر فائز ہوں کہ تم پر میری عزت لازم ہے۔ میں سوچتا کہ کسی بڑے آدمی کے لئے یہ سوچ چھوٹی ہے۔ عزت تو جھنڈے کی ہوئی، اُس شخص کی تو نہیں۔ جو عزت کے لائق ہو، اُسے اس شناخت کی بھلا کیا ضرورت؟ اس سے غرور ٹپکتا تھا۔ اب جو بریگیڈ کمانڈر بن کر آیا تو جھنڈا اور ستار (star) نہ لگایا۔ ستار ملنے میں تو ویسے ہی چھ ماہ لگ گئے۔ پھر میرا تماشا بنا۔

پانچواں سفر ترک و جدان

ایک دن اوکاڑہ چھاؤنی سے باہر کسی فوجی کارروائی کا مظاہرہ تھا۔ ساری چھاؤنی کے افسر، بمعہ شاید درجن بھر بریگیڈیئروں کے، کور کمانڈر کے انتظار میں بیٹھے تھے۔ بریگیڈ کمانڈر کچھ فاصلے پر بیٹھے چائے پی رہے تھے۔ میں سب میں جونیئر (junior) تھا۔ ایک سینئر (senior) بریگیڈیئر خان صاحب نے مجھ سے جھنڈے کے بارے میں سوال کیا۔ روایتی طور پر فوج میں جھنڈا میدان جنگ میں یہ دکھانے کے لئے ہوتا ہے کہ سپاہ کو پتا ہو کہ ہمارا کمانڈر ہمارے درمیان موجود ہے، تاکہ اُن کا حوصلہ بڑھے۔ میں نے چھوٹا سا جواب دے کر بات ٹالنی چاہی، مگر وہ نہ مانے۔ کچھ اور بھی بیچ میں کود پڑے۔ آخر جب خان صاحب تنگ آگئے تو کہنے لگے، "اَلَاکَا، یا تو تُو ٹھیک ہے، یا ہم سب خراب ہیں۔" ناراض ہو گئے۔ میں صرف مسکرا دیا۔ سوچا یہ جھنڈا نہ لگانا تو جھنڈے سے بڑا جھنڈا ہو گیا۔ پھر جب کسی ایسی جگہ جاتا جہاں سب جھنڈے والے آئے ہوتے تو جھنڈا لگالیتا، ورنہ نہیں۔

پھر موسم بہار آ گیا۔ اس موسم میں فوج ہر سال لاکھوں درخت مختلف علاقوں میں لگاتی ہے۔ اس کارروائی کا افتتاح ایک چھوٹی سی تقریب سے کیا جاتا ہے۔ ہر چھاؤنی میں یادگار کے طور پر ایک درخت جنرل صاحب سے لگوا یا جاتا ہے۔ یہ کارروائی ویسے بھی سینئر افسران سے مختلف موقعوں پر کروائی جاتی ہے، تاکہ درخت کے ساتھ اُن کے نام کی یادگار تختی لگائی جائے۔ جب ہمارے ڈویژن میں سالانہ درخت لگانے کی مہم کا آغاز ہوا تو سارے بریگیڈ کمانڈر اور سارے کرنل صاحبان صبح کے وقت، ڈویژن کمانڈر کے انتظار میں، ایک باغ میں جمع ہو گئے۔ پتا چلا کہ اُن کو کسی کام سے باہر جانا پڑ گیا اور وہ نہیں آ سکتے۔ میں ہی سینئر وہاں موجود تھا۔ مجھ سے کہا گیا کہ آپ درخت لگا دیں۔ میں نے وہاں موجود ایک سپاہی کو بلایا اور اُس سے درخت لگوا یا، اور کہا کہ اس کے نام کی یادگار تختی لگاؤ۔ وہ شاید آج بھی لگی ہو۔

فوج میں تختیوں کا رواج بڑھتا جا رہا ہے۔ اوکاڑہ میں ایک باغ میں مسجد کی تعمیر کے لئے جگہ رکھی ہوئی تھی۔ اس پر تختی لگی تھی کہ اس مسجد کی زمین کی کھدائی (ground breaking) فلاں کور کمانڈر صاحب نے اس تاریخ کو کی۔ پھر ایک دن نئے کور کمانڈر صاحب کی اس ہی قسم کی تقریب میں شامل ہوا، جس میں اس ہی جگہ پرانی تختی ہٹا کر ایک عالی شان نئی تختی لگائی گئی۔ سب نے تالیاں بجائیں، مولوی صاحب نے دعا پڑھی، جو شاید مسلمان فوج میں کسی افسر کے پڑھنے سے قبولیت کے لائق نہ ہوتی۔ پھر بھی مولویوں سے شکوہ ہے۔ کمال ہے نا! ایک اور جگہ کشمیر کے بارڈر پر، کور کمانڈر کے آنے کی تیاری میں، کسی اور مقام سے مورچوں کے پتھر اکھیڑ کر ایک نیا دفاعی علاقہ، رات دن کی محنت سے، بنایا گیا اور اُن سے اس کا افتتاح کروا کر تختی لگائی گئی۔ افسوس تو یہ ہے کہ جہاں سے پتھر اکھیڑے تھے وہ جگہ آج بھی اہم ہے اور نقشوں پر مضبوط دفاعی علاقے کے طور پر دکھائی گئی ہے۔

اس ہی طرح جب میں مری میں ڈویژن کمانڈر تھا تو میں نے احکامات دیئے تھے کہ اس قسم کا کوئی کام میرے لئے نہ کیا جائے۔ پھر بھی جب میں آنے لگا تو ایک الوداعی ملاقات میں ایک بریگیڈ میں جب گیا تو وہاں لان میں بہت سے افسر کھڑے تھے، اور مجھے کہا گیا کہ

یادگار کے طور پر درخت لگا دیں۔ میں نے احکام کی خلاف ورزی پر ناراضگی کا اظہار کیا اور کہا کہ ایسی عزت افزائی نہ کیا کریں۔ اگر کسی کو عزت کے لائق سمجھتے ہیں تو وہ باتیں اپنائیں جن کی وجہ سے آپ اُس کی عزت کرتے ہیں۔ قصیدہ خوانی نہ کیا کریں، یہ افسروں کو زیب نہیں دیتی۔

جب CGS (Chief of General Staff) تھا تو ایک جدید خود کار ایکس چینج (GHQ exchange) میں لگائی گئی۔ مجھے افتتاح کے لئے بلایا، میں نے ٹال دیا۔ پھر کافی دن بعد اُن کے جنرل صاحب آئے اور کہنے لگے کہ سر، ایکس چینج نے ابھی تک کام نہیں شروع کیا کیونکہ آپ افتتاح کرنے نہیں آ سکے۔ میں سُن کر حیران رہ گیا، اور کہا کہ کیا قینچی کے فیتے کاٹنے سے اس کی کارکردگی پر کوئی اچھا اثر پڑے گا جو آپ نے ابھی تک اُسے چلایا نہیں؟ یہ سینئر افسران کے چونچلے چھوڑ دو اور صرف پیشہ ورانہ کام کیا کرو۔ اللہ کے شکر سے، نہ ہی کہیں میرے نام کی تختی لگی ہے اور نہ ہی میں نے کسی کو اپنی تصویر کہیں لٹکانے کی اجازت دی۔

میرے بریگیڈ کمانڈر تعین ہونے کے کچھ عرصہ بعد لیفٹیننٹ جنرل محمد مقبول ہمارے کور کمانڈر آ گئے۔ جب پہلی مرتبہ آئے تو میں ڈویژن کا ایک سٹڈی پیریڈ چلا رہا تھا۔ ریت کے ماڈل پر نہر پار حملہ کرنے کی کاروائیوں پر بحث ہو رہی تھی۔ انھیں کچھ باتوں سے اختلاف ہوا، میں نے اُن کا نکتہ نظر قبول نہ کیا اور اپنی ہی ہانگی۔ ہماری کچھ بحث ہو گئی، نہ وہ مانے نہ میں۔ جب وہ چلے گئے تو میرے کچھ ساتھیوں نے مجھے طعنہ بھی دیا کہ آج تم پکڑے گئے۔ مگر وہ اُس دن کے بعد سے مجھے سراہنے لگے۔ مجھے بھی اُن کا سادہ اور صاف گوانداز بہت پسند آیا۔ ایک معلم کے رول (role) میں رہتے اور صرف پیشہ ورانہ کام پر دھیان دیتے۔ منافقت اور قصیدہ گوئی بالکل پسند نہیں کرتے تھے۔ اُن کی بیگم نے بھی اُن ہی کی طرح شگفتہ طبیعت پائی تھی، اور تمام خواتین میں نہایت مقبول رہیں۔ دونوں میں ذرا گھمنڈ کے آثار دکھائی نہ دیتے اور نہ ہی کوئی بدمزاجی۔ وہ صرف نام ہی کے مقبول نہیں تھے، ہم سب ہی اُن سے بہت متاثر تھے۔ جنرل صاحب نے لاہور میں غریب بچوں کے لئے ایک شاندار سکول اور کالج، Teach a Child کے نام سے، خود اپنے زور بازو پر بنایا اور زندگی اُس ہی کو وقف کر دی۔

دو سال یوں ہی آنکھیں بند کئے گزر گئے۔ پھر میں ایک سال کے لئے نیشنل ڈیفنس یونیورسٹی (National Defense University) وار کورس پر اسلام آباد چلا گیا۔ بڑے بڑے عالم آتے اور ملک کے دلگیر حالات بتاتے۔ ہر پہلو تکلیف دہ تھا۔ پہلے کی طرح خاموش ہی رہتا۔ کئی بار بولنے کی کوشش کی مگر بولنے والوں کے ہجوم نے حوصلہ نہ دیا۔ نہ ہی کچھ کہنے کو تھا، سوائے اس کے کہ میں نمبر بنانے کے لئے خود نمائی کرتا۔ اور وہ بھی خاک ہوتی، کہ یہاں تک آتے آتے میری سوچیں ارد گرد کے چہروں پر پھیلے سکون سے ٹکراتی تھیں۔ ایک مرتبہ کشمیر کی پالیسی پر نکتہ چینی کی کہ یہ کیسی پالیسی ہے کہ ہم صرف دشمن کی فوج کو وہاں پھنسائے رکھنے کے لئے کشمیریوں کا خون بہا رہے ہیں؟ کیا اس جہاد کا کوئی آخر بھی ہے؟ کیا اسے کسی انجام کو پہنچانا ہے، یا صرف ایک حد تک رکھنا ہے کہ ہندوستان پھنسا رہے؟ کچھ دیر خاموشی رہی، مجھے ایسے دیکھا گیا جیسے میں ذہنی طور پر معذور ہوں۔ پھر اس بات کو ٹال دیا گیا۔ ہم ملک کو دشمن سے بچانے کے منصوبے بناتے۔ کئی کئی دن ان پر

پانچواں سفر ترک و جدان

مباحثے کرتے۔ مگر ملک اندر سے کھوکھلا ہو چکا تھا، اقتصادی لحاظ سے بھی اور اخلاقی لحاظ سے بھی۔ میرے دو دوست بھی کورس پر تھے، برگڈیئر شاہد ترمری (لیفٹیننٹ جنرل بنے) اور کرنل آفتاب احمد (میجر جنرل بنے)، اور دونوں ہی میرا حوصلہ بڑھاتے رہتے۔ ایسے ہی پُر خلوص انسانوں سے فوج بچی تھی۔

کبھی میں سوچتا کہ یہ ملک کس کے لئے بچانا ہے۔ یہ کیسی آزادی ہے، جہاں صرف طاقتور اور پیسے والا آزاد ہے، جہاں انصاف بکتا ہے، جہاں غربت اور بے بسی کو نچوڑنا ایک فن کی حد کو چھو چکا ہے۔ بس آزادی کا ایک کاغذی سا تصور، جس کی حقیقی تصویر ہر اُس دل میں دھڑکتی ہے جو اس آزادی کے نیچے پس رہا ہے۔ غریب کی کیسی آزادی؟ یہ باتیں میرے دل کو چبھتی تھیں۔ جانتا تھا کہ فوج کا ان باتوں سے کوئی تعلق نہیں، لیکن یقیناً ہر احساس رکھنے والے دل میں یہ کھٹکتی ہوں گی۔

کئی سال پہلے جب میں دس بلوچ کی کمانڈ کر رہا تھا، رات گئے ایک فوجی مشق کے دوران ایک شوگر مل کے پاس سے گزرے، بہت سی روشنیوں سے آراستہ تھی۔ کسی سپاہی نے دوسرے سے پوچھا، "یہ کیا ہے؟" میں کھڑا تھا، پاس سے سپاہیوں کی قطار گزر رہی تھی۔ دوسرے نے کہا، "ان ہی لوگوں کے لئے تم اتنی رات گئے دھکے کھا رہے ہو۔ ان ہی کا پاکستان ہے جسے تم نے بچانا ہے۔" ایک سپاہی کے منہ سے یہ بات سن کر میں چونک پڑا تھا۔ پاکستان کی تصویر کا دوسرا رخ ایک دن وار کورس کی کلاس میں دیکھا۔ پی اے ایف کے جیٹ بہت نیچی پرواز کرتے ہوئے اسلام آباد کے اوپر سے گزرے۔ دوسرے دن ایک افسر نے، جس کا بیٹا اسلام آباد کے ایک elite سکول میں پڑھتا تھا، یہ قصہ سنایا۔ کہنے لگا میرے بیٹے نے بتایا کہ جب یہ جہاز سکول کے اوپر سے گزرے تو کسی بچے نے کہا جنگ شروع ہو گئی ہے، یہ انڈیا کے جہاز ہیں۔ کسی دوسرے نے کہا نہیں نہیں، جنگ نہیں شروع ہوئی، یہ پاکستانی جہاز تھے۔ ٹیچر نے پوچھا کہ آپ کلاس کے اندر بیٹھے ہوئے، جہازوں کو دیکھے بغیر یہ کیسے کہہ سکتے ہیں؟ تو لڑکے نے جواب دیا کہ ڈیڈی نے بتایا تھا کہ جب جنگ ہوگی تو ہم سب پاکستان سے باہر چلے جائیں گے، لیکن ہم چونکہ ابھی تک پاکستان میں ہیں، اس کا مطلب ہے کہ جنگ شروع نہیں ہوئی، اور یہ جہاز ہمارے تھے۔

یہ ہیں اس ملک کے بڑے لوگوں کی سوچیں۔ کیا طاقت اور پیسے کے ساتھ دل سخت ہو جاتے ہیں، خلوص مٹ جاتا ہے؟ کوئی اپنا نہیں رہتا؟ کیا سب کو آگ کے گڑھے میں جھونک کر خود باہر نکل لوگے؟ ملک سے کوئی غرض نہیں؟ ماں، باپ، بھائی، بہن، کسی سے بھی نہیں؟ ایسے حاکموں کی حاکمیت پر کوئی پریشان نظر نہیں آتا۔ سب اپنی ہی دنیا میں مگن نظر آتے ہیں۔ شاید سب کو اپنی ہی پڑی ہے، سوچتے ہوں کہ دوسروں کی فکر کرنا بچپن ہے۔ شاید ہر دلوں کی دنیا ایسی ہی ہوتی ہو۔ لگتا تھا جیسے یہ سب کچھ کسی کو نظر نہیں آ رہا، جیسے یہ سب معمول کی باتیں ہوں، کوئی پریشانی کا باعث نہ ہوں۔ پھر میں خاموش ہی رہتا۔ شاید میں اب تک تخیل کی دنیا سے نکل کر حقیقی دنیا میں نہ پہنچ پایا تھا۔ شاید اُس دنیا سے میں ڈرتا تھا۔ اُس میں میرے پر جلتے تھے۔

میں ناپتا چلا قدموں سے اپنے سائے کو*

کس سمت میں جا رہا ہوں، کہاں جانا ہے، منزل کیا ہے، ان سب باتوں سے میں نا آشنا تو نہ تھا، لیکن بے پرواہ ضرور تھا۔ میرا کبھی کوئی مقصدِ حیات نہ رہا۔ اس کی اہمیت کے بارے میں بہت سنا اور پڑھا، پھر سوچا بھی، لیکن کسی منزل کو پانے کی امنگ دل میں نہ اٹھی۔ نہ کبھی بڑا بننے کی خواہش ہوئی اور نہ ہی کوئی بڑا آدمی زیادہ دن بڑا لگا۔ کوئی کام ایسا نظر نہ آیا کہ میری زندگی کا رخ موڑ دے، مجھے متحرک کر دے، ہمیشہ کے لئے کسی سمت انرجائز (energise) کر دے۔ بہت سی چیزوں میں انہماک سے ڈوب رہا، مگر کوئی ایسی نہ تھی کہ تمام زندگی کا محور بن جاتی۔ بس یوں ہی عام سے روز و شب گزرتے رہے۔

بچپن میں والد صاحب نے دو چیزیں پڑھنے سے منع کیا تھا۔ ایک قرآن کی تفسیر، کہتے تھے بہک جاؤ گے، معنی سے پڑھو، جتنا سمجھ میں آتا ہے کافی ہے، جب بڑے ہو جاؤ گے تفسیریں بھی پڑھ لینا۔ دوسرے، کسی بڑے آدمی کی سوانحِ حیات نہ پڑھنا، جب تک ذہن پختہ نہ ہو جائے، ورنہ اُس کی طرح بننے کی کوشش میں خود کو بھی کھود دو گے۔ پھر نہ ہی کوئی بڑا آدمی آنکھوں میں اُجاگر ہو سکا اور نہ ہی کوئی بڑا کام۔ چھوٹی سی عمر میں عشق نے ایک پٹری پر چڑھا دیا، وہ پیاس بجھ ہی نہ پائی کہ کوئی اور جستجو اُٹھتی۔

اگر یہ کہوں کہ ترقی پانے کا شوق نہ تھا، تو یہ غلط ہوگا۔ لیکن ترقی میرے لئے کوئی اتنی اہم چیز نہیں تھی کہ مجھے مروڑ دیتی، سچ کی راہ سے ہٹا دیتی، گرا دیتی۔ ترقی کی خواہش اور انا میں اکثر تصادم رہتا، مگر جیت ہمیشہ انا ہی کی ہوئی۔ ترقی اللہ نے ویسے ہی دے دی۔ عزت اور روزی کا وعدہ اُس ہی کا ہے۔ شاف کا لُج کے میرے استاد نے اچھے الفاظ میں اسے ڈھالا تھا کہ اتنی محنت بھی کرتے ہو، پھر خود پر کلہاڑیاں بھی چلاتے ہو۔

اپنی عزت اور اپنے اصولوں پر ذرا سمجھوتہ (compromise) کرنے پر دل کبھی آمادہ نہ ہوتا۔ انا یا خودی غالب رہتی، مگر صرف غیرت یا خوداری کی حد تک، جس کا خا کہ میرے ذہن کی گہرائی میں نہ جانے کہاں سے آیا تھا۔ اس پر میں کافی حساس تھا۔ ان حدوں کا تعین ذہن خود ہی کر لیتا اور ان کا دفاع بھی۔ یہ خود کا نظام (auto mechanism) تھا۔ ردِ عمل خود با خود آتا، سوچا سمجھا نہ ہوتا۔ ایک حد تک پیچھے ہٹتا، پھر پنچے گاڑ لیتا۔ کبھی لگتا انا ہی مجھے خرچ کر ڈالے گی۔ نامعلوم ان میں سے کون سی کب آگے آجاتی، انا یا خودی۔ شاید یہ میری

پانچواں سفر ترک و جدان

حیا میں پیدا ہوئیں، عشق میں پروان چڑھیں اور آج کسی اور عشق میں پلتی ہیں۔ اب آہستہ آہستہ خودی نے انا کو تراشنا شروع کر دیا ہے۔ ان کے ایک ہونے کا منتظر ہوں۔

محنت اس لئے کرتا کہ کسی کی باتیں سننے کا حوصلہ نہیں تھا۔ بہت شرمندگی ہوتی اگر کہیں ٹو کا جاتا۔ ڈھیٹ نہ بن سکا۔ کوئی نئی چیز سیکھنے میں، کسی سے پوچھنے میں کبھی شرمندگی محسوس نہیں کی۔ کبھی یہ نہیں سوچا کہ وہ مجھ سے چھوٹا ہے، یا یہ کہ میری کم علمی لوگوں پر عیاں ہوگی۔ محنت سے زندگی گزاری۔ لگن سے کام سیکھا اور کیا۔ کسی پر فوقیت حاصل کرنے کی جستجو نہیں تھی، صرف اپنے کام میں فائق ہونے کی، ایکسل (excel) کرنے کی۔ اس سے میرے دل کو سکون ملتا۔ شاید یہ میری شرم کا، اپنے کام کے حلقے (sphere) میں، توازن نظام (balancing mechanism) تھا۔ یا شاید اُس ہستی کو متاثر کرنے کے لئے چمکنا چاہتا، جو میری گردشِ ایام کا محور تھی۔ یا متاثر کرنے کی ناکامی نے یہ خواہش تسکین اوروں تک پھیلا دی، اُن پر منتقل کر دی، کہہ نہیں سکتا۔ شاید سوچا ہو کہ جب اوروں کو اچھا لگوں تو شاید تم بھی اچھا سمجھو۔ یا یوں تھا کہ میں اُسے موردِ الزام ٹھہرانے کے لئے یہ سوچوں کہ سب تو مجھے اچھا سمجھتے ہیں، آخر تم کیوں نہیں؟ نا جانے ذہن کے جال کن پیچیدگیوں پر بُنے ہوتے ہیں۔ ان کی گرہیں مجھ سے تو نہیں کھلتیں۔ یہی سچ ہے کہ اللہ نے جسے جہاں لانا ہوتا ہے، کسی ناکسی بہانے، لے ہی آتا ہے۔ چاہے خوشی سے آویانا خوشی سے۔

لوک اور پیسپی کا فرق پتا نہیں چلتا، دونوں میں خوش ہوں۔ زندگی میں اتنی ترجیحات (preferences) نہیں ہیں۔ نا ان چھوٹی چیزوں کی اہمیت۔ شاید کچھ لوگوں کا خیال ہوگا کہ فیصلہ کرنے میں دشواری ہوگی، مگر ایسا نہیں ہے۔ بے معنی چیزوں میں کہہ سکتا ہوں کہ فیصلہ کرنے کی دشواری ہوتی، کیونکہ کوئی فریم آف ریفرنس (frame of reference) میرے ذہن میں نہ بنتا کہ کس بنیاد پر یہ فیصلہ ہو گا۔ اپنے کام میں، لڑائی کے میدان میں اور اس کی مشقوں میں، یا زندگی کے کسی موڑ پر مجھے فیصلہ کرنے میں کوئی جھجک نہیں ہوئی۔ میدانِ جنگ کی مشقوں میں، ٹینکوں کے ساتھ تیز چلتی ہوئی کاروائیوں میں، نقشہ ہاتھ میں لئے، کھٹا کھٹ فیصلے وائرلیس پر سناتا۔ آخری دنوں میں نہایت مصروفِ دفتروں میں رہا، جہاں بہت پیچیدہ اور اُلجھے ہوئے مسائل سامنے آتے، مگر جو فائلیں آتیں فوراً ہی واپس جاتیں۔ فیصلہ ہمیشہ صاف اور واضح لکھتا۔ البتہ، ذرا ردِ عمل (reactions) سست رفتار تھے۔ محفل میں بات گزر جاتی تو بہت خوب جواب ذہن میں آتا۔ پھر کسی کتاب میں پڑھ لیا کہ گہرے کنوؤں کا ردِ عمل دیر سے اُٹھتا ہے، انھیں ٹھہرنا پڑتا ہے یہ جاننے کے لئے کہ اُن کی گہرائیوں میں کیا گرا ہے، اس ہی پر خوش ہو گیا۔

نئے ماحول میں بے چینی (awkward) محسوس کرتا۔ سمجھ نہ آتا کیا بات کروں۔ سطحی، معمول کی باتوں میں ناکام ہی رہا۔ مگر اپنا کام کرنے میں اس کی کمی کبھی محسوس نہ کی۔ ہر کام بے خوفی سے (boldly) کرتا اور اس سلسلے میں بولنے میں بھی کوئی جھجک نہیں محسوس کی۔ یہ

مسئلہ صرف سماجی میل جول (social context) میں اٹھتا۔ مباحثوں میں حصہ نہ لیتا اور اگر بات سمجھ میں آجائے تو اپنا نکتہ نظر بدلنے میں کبھی آرمحسوس نہیں کی۔ اگر نا سمجھوں، تو کسی زور پر اپنی سوچ نہ بدلتا۔ چپ رہتا۔ لیکن اگر موضوع دل سے قریب ہو تو مباحثے میں پھنس جاتا۔ مشتعل ہو جاتا، آنکھیں ابل آتیں، آواز بھی اونچی ہونے لگتی۔ کبھی بات مان لیتا، کبھی بھڑک اٹھتا، بات کی نوعیت پر تھا۔ اس میں سننے والے کی ہٹ دھرمی بھی شامل ہوتی۔ اگر وہ صرف اپنی بات سچ منوانے پر ہی تلا ہو، حالانکہ حقیقت کو پہچان چکا ہو، پھر میری بھی سوئی انک جاتی۔ دیکھنے والوں کو میری طبیعت میں تضاد دکھائی دیتا، کہ کبھی اتنا نرم کہ ہاتھ لگاؤ تو مڑ جائے اور کبھی پتھر کی طرح سخت اور اڑیل۔ لوگ مجھ سے الجھنے سے کتراتے۔

میں نے حساس فطرت پائی۔ کم عمری میں تو اس کے منفی اثرات ہی میری نظروں میں رہتے، مگر ایک عمر کو پہنچ کر احساس ہوا کہ میرے حساس آئینے پر اس قدر نقوش منعکس ہوئے، کہ میری سوچوں کے تانے بانے آسمانوں کی وسعت میں پھیل گئے۔ میرے تخیل کو اڑان ملی۔ ہاں، میں بہت پُر تخیل (imaginative) ہوں، چھوٹے بچوں کی طرح۔ شاید ذہن سے اب تک بچپنا نکلا نہیں، یا شاید خواب دیکھ دیکھ کر ایسا ہو گیا۔ کھلی آنکھوں سے بھی ایک تصوّر راتی دنیا وجود میں لے آتا ہوں۔ جنگ کا منصوبہ بناتا تو ذہن میں اُس کی فلم چلتی رہتی۔ پھر بار بار بار سین بدلنے اور ساتھ ساتھ منصوبہ بھی۔ اس قسم کے کاموں میں مجھے مزا آتا اور میری صلاحیت اُن ہی کاموں میں بہتر ہوتی جن میں میرا تخیل بروئے کار آتا ہو۔ میرے بہت سے فیصلے سوچے سمجھے نہ ہوتے۔ بہت سوچ بچار کے بعد جب ذہن تھک جاتا، اچانک ایک تصوّر (idea) کو دکر آتا، اور فوراً احساس ہو جاتا کہ یہ بہت خوب بات ہے۔ اس میں غور و فکر کا پہلو یقیناً اہم ہوتا، لیکن یہ میری سوچ کا نتیجہ نہ ہوتا۔ ایک تحفہ ہوتا۔

دو چیزیں میری طبیعت میں نمایاں رہیں۔ ایک جدّت پسندی اور دوسری جذبہ و جنون (passion)۔ شاید یہ بدلتے موسموں کی رنگینی اور سمندر کی ہيجانی شدّت آرزو سے مجھے ملی تھیں۔ ہر چیز میں جدّت ڈھونڈتا۔ چیزوں کو بدلنا چاہتا۔ ٹھہراؤ (status quo) منظور نہ تھا، اپنے اندر بھی۔ کبھی میرے ماتحت تنگ ہوتے کہ کیا نیا کام شروع کر دیا۔ کبھی بالا افسران کہتے کہ آخر کب سے یہی ہو رہا ہے، تم نے کیا الٹ پلٹ کرنا شروع کر دیا۔ مگر مجھے جو چیز صحیح نہ لگتی میں اُسے بدلنے بیٹھ جاتا، اپنا ہی کام بڑھا لیتا۔ لیکن جو کچھ کیا، کچھ ہی باقی رہ گیا، زیادہ چیزیں واپس اپنے پرانے طریقوں پر آگئیں۔ خود کو بھی بدلنے میں لگا رہتا مگر کم ہی اپنے بس میں پایا۔ کبھی یہ نہیں سوچا کہ میں ایسا ہی ہوں، کبھی اس پر اکتفا نہیں کیا، اور نہ ہی کبھی اترایا۔ بچوں سے بھی یہی کہتا کہ جس دن بالیدگی (growth) ختم ہوئی، اُس دن زوال (decay) کا عمل شروع ہو جائے گا۔ کائنات میں ہر زندہ چیز کی یہی حقیقت ہے۔ ٹھہراؤ میں موت ہے۔

پانچواں سفرِ ترنگ و جدان

میرے اندر اتنا passion کہاں سے آیا، پتا نہیں۔ شاید اپنی ماں سے ودیعت ہوا تھا۔ وہ مجسمہٴ محبت تھیں، جلد ہی ہمیں چھوڑ گئیں۔ عشق، جس نے میری ہر شے بدل ڈالی، کا سرچشمہ بھی یہی جذبہ تھا۔ جو بھی کرتا یا تو بے دلی سے کرتا، یا اُس میں شدت سے ڈوب جاتا۔ اپنے کام میں لوگوں سے بہت سے جھگڑے اس ہی بنا ہوئے۔ زندگی کے بہت سے شدت آمیز فیصلوں کے پیچھے بھی یہی چھپا تھا۔ پھر میں ہر انجام سے بے پرواہ ہو جاتا۔ کبھی خوف آتا ہے کہ کہیں یہ جنون، یہ دیوانگی، بجائے ایک متحرک قوت (dynamic force) کے، بذاتِ خود ہی مقصدِ حیات نہ بن گئی ہو۔ اس ہی سے تسکین حاصل کرنے کو دل نے کافی سمجھ لیا ہو۔ اگر اللہ کی راہ نہ پاتا، تو یقیناً ایسا ہی ہو جاتا۔ اللہ مجھے راہِ راست پر رکھے۔

ٹھنڈا ذہن پایا۔ عموماً غصہ دور رہتا، لیکن جب کبھی آتا اُٹھ کر آتا، جیسے کب سے جمع ہو رہا ہو، پھر شرمندہ چھوڑ جاتا۔ بھوک بھی غصے کو ابھارتی، روزہ رکھنا مجھ پر بھاری ہوتا۔ کبھی دل میں بات نہیں رکھی، کڑواہٹیں نہیں پالیں۔ لوگوں کا اعتبار کیا، نقصان اُٹھانے پر بھی۔ جس کی مدد کی، اُس نے برا جانا، اُسے بھلا دیا۔ کوشش کی کہ اپنے ماتحتوں پر زیادہ بوجھ نہ ڈالوں، سختی نہ کروں۔ لوگوں سے ہمیشہ مسکرا کر ملتا، کبھی منہ ٹیڑھا نہیں کیا۔ کبھی چہرے پر خوں نہیں چڑھایا، اتنا ڈرامہ آتا ہی نہیں تھا۔ نہ ہی زندگی کا کوئی پہلو بناوٹی (pretentious) رہا، جو تھا سامنے تھا۔ بڑا ہو یا چھوٹا، سب سے عزت سے پیش آتا، اُنھیں جگہ دیتا۔ کبھی کسی کو "قابو" کرنے کے لئے دبایا نہیں، پیچھے ہٹ جاتا۔ مگر اپنی پرسنل سپیس (personal space) کی شدت سے حفاظت کرتا۔ غلبہ (dominance) برداشت نہ ہوتا۔ جب کہیں بے وجہ دباؤ محسوس کرتا، ردِ عمل پھوٹ پڑتا۔ سنئیر افسر کی موجودگی مجھے ٹینس (tense) کر دیتی۔ میں اُن سے بات کرتے ہوئے بغیر اشتعال کے، دفاعی مورچے میں اُتر جاتا، ہتھیار تان لیتا۔ شاید اُن کا غلبہ کا کھیل مجھے کبھی سے پسند نہ رہا اور میں اس میں الجھنے سے کتراتا۔

زندگی کے مزوں سے جلد بھر پاتا، کچھ نیا ڈھونڈتا۔ ٹھوڑا سا کھاتا، پیٹ بھر جاتا۔ ٹھہر نہ سکتا۔ حُسن آنکھوں میں بہت چچتا، مگر صرف آنکھوں میں، قربت مجھ پر بھاری ہوتی۔ پھر حیوانیت اُس کے چہرے سے ٹپکتی اور میرے وجود کا اُبال بھی میری آنکھوں سے چھلکنے لگتا۔ لگتا جانور ایک دوسرے کو دیکھ رہے ہیں۔ زیادہ دیر اُس جگہ ٹھہر نہ پاتا۔ اپنی کمزوری سے ڈر لگتا اور درندگی سے گھبن آتی۔ پھر میں آنکھیں نیچی کر لیتا۔ تصور میں حسن ہمیشہ چمکتا رہا، لبھاتا رہا۔ حقیقت پسندی سے دور، شاید جو پیکر میرے تخیل میں تھا کسی حور کا تھا، حالانکہ خود حیوانوں کے درجے سے آگے نہ نکل پایا۔ کبھی تو خوف آتا ہے کہ کہیں دل کی گہرائیوں میں دونوں دنیا میں ضم کر کے کسی دیوی کی تلاش نہ ہو۔

سچ کی تلاش میں سرگرداں رہا، لیکن زندگی میں زیادہ جھوٹ اور فریب ہی پایا۔ بناوٹی باتوں اور تکلفات سے جلد اُکتا جاتا، مگر ہر طرف یہی نظر آتا۔ برے کام کا حوصلہ نہ تھا، خوف آتا کہ پکڑا جاؤں گا تو شرمندگی ہوگی۔ اللہ کا خوف بھی ہمیشہ دل میں رہتا۔ یہ نہیں تھا کہ گناہ

پانچواں سفر ترکیب و جہان

کی رغبت نہ تھی۔ اس لئے کئی بار گرا بھی، اٹھا بھی۔ نا جانے برائی سے دور رکھنے کی اصل طاقت کیا تھی، خوفِ خدا یا شرمندگی۔ شاید دونوں ہی اپنی اپنی جگہ ایک دوسرے کو تقویت پہنچاتے۔ اب تک ایمان کے اُس درجے کو نہیں پہنچا کہ وہ ہر پہلو پر چھا جائے۔ دل نے اخلاص کے رتبے کو نہیں چھوا۔

میری زیادہ خوبیاں فطرتی کمزوریوں کی بنا تھیں، جن میں سب سے زیادہ نمایاں میری ذات میں شرم و حیاء تھی اور دوسری نرم دلی، پھر سماجی محفل میں خود اعتمادی کی کمی۔ پختہ عمر کو پہنچتے پہنچتے وہ اچھائیاں، جو اُن کمزوریوں سے پیدا ہوئیں جن پر میں گڑھتا تھا، عادت بن گئیں۔ اب کوفت نہیں ہوتی، اچھا محسوس کرتا ہوں۔ اب اپنے اندر کی عورت سے صلح کر لی ہے۔ اب اُسے برا بھلا نہیں کہتا، اُس سے نہیں لڑتا۔ یہ مجھ پر اللہ کا کرم تھا کہ اُس نے مجھے ایسی کمزوریاں دیں جن سے میرے اندر کا حیوان سہا رہا۔

عجب تضاد تھا میری طبیعت میں۔ میں بھی کبھی سوچتا کہ آخر میں اعتدال پسند (balanced) کیوں نہیں رہ سکتا، پھر اپنے آپ کو بہلانے کے لئے یہ سوچ لیا کہ آخر پنڈولم (pendulum) کا بھی تو ایک بیلنس ہے۔۔۔۔۔ پرفیکٹ بیلنس (perfect balance)! ٹھہراؤ کا بھی بھلا کوئی بیلنس ہوا؟ منجملہ۔ کامل بیلنس تو حرکت میں ہے، متواتر ادھر سے ادھر، جھولنے کی طرح۔ پیٹنگوں کا اپنا ہی مزا ہے۔

عمر کے آخری حصے کو پہنچ چکا ہوں، مگر خود کو نہ پاسکا۔ اپنے اندر جھانکتا رہتا ہوں، اپنی کوتاہیوں کو محسوس کرتا ہوں، مگر ان سے چھٹکارا نہ پاسکا۔ گٹھی میں بندھی ہوں جیسے۔ اس اندر جھانکنے میں، آئینہ دیکھنے میں، ایک خوف اور ہے۔ اس کا کب سے شکار ہوں، کہہ نہیں سکتا۔ اپنی ہی ذات کی خاموش محبت میں مبتلا ہوں، وہ بھی پنڈولم کی طرح جھولتی ہے۔ خوف ہے کہ اگر اللہ کی راہ چھوٹی تو کہیں خود پرستی تک نہ پہنچ جاؤں۔ کبھی یوں لگتا ہے کہ اللہ کی رضا پر راضی ہونے کے بجائے اسے اپنی مرضی پر کاربند کرنا چاہتا ہوں۔

خطاؤں میں الجھ کر گرتا ہوں، گول چکر میں گھوم رہا ہوں، اُن ہی جگہوں سے بار بار گزرتا ہوں۔ کیا یہ گھومنا، اگر ایمان کی شدت پکڑ لے، تو مجھے اُپر اٹھا لے گا؟ یا یوں ہی لٹو کی طرح اپنے گرد ہی طواف کرتا رہوں گا؟

دار کی رسیوں کے گلوبند گردن میں پہنے ہوئے
گانے والے ہراک روز گاتے رہے
پائلیں بیڑیوں کی بجاتے ہوئے
ناچنے والے دھو میں مچاتے رہے
ہم نہ اس صف میں تھے اور نہ اس صف میں تھے
راستے میں کھڑے اُن کو تکتے رہے
ریشم کرتے رہے
اور چپ چاپ آنسو بہاتے رہے

لوٹ کر آ کے دیکھا تو پھولوں کا رنگ
جو کبھی سُرخ تھا، زرد ہی زرد ہے
اپنا پہلو ٹوٹا تو ایسا لگا
دل جہاں تھا، وہاں درد ہی درد ہے
گلو میں کبھی طوق کا واہمہ
کبھی پاؤں میں رقص زنجیر
اور پھر ایک دن، عشق انہی کی طرح
رسن در گلو، پابجولاں ہمیں
اسی قافلے میں کشاں لے چلا

(فیض)

چھٹا سفر

تشنہ لبی

پر پرواز پہ یہ راز کھلا *

ملٹری آپریشنز ڈائریکٹریٹ (Military Operations Directorate)، عام اصطلاح میں MO، فوج کے تمام اہم فیصلوں میں دماغ کا کام کرتا ہے۔ بنیادی طور پر جنگی کارروائیوں کی منصوبہ بندی بھی کرتا ہے جو منصوبہ جات کے ڈویژن کا کام ہے، اور انہیں کنٹرول بھی کرتا ہے جو آپریشنز کے ڈویژن کا کام ہے۔ یہی دفتر فوج کے سربراہ کی جانب سے تمام فوج کو احکام بھی دیتا ہے اور فوج پر کنٹرول بھی رکھتا ہے۔ اس کی کبھی ہوئی بات آرمی چیف کا حکم سمجھی جاتی ہے۔

نیشنل ڈیفنس یونیورسٹی سے وار کورس (War Course) کے اختتام پر میں منصوبہ جات کے ڈویژن کا ڈائریکٹر (Director Plans) تعینات ہوا۔ اُن دنوں MO میں صرف دو ہی ڈویژن ہوتے تھے۔ اب، چونکہ زمانہ امن میں بھی جنگ ہو رہی ہے، MO کافی وسیع ہو چکا ہے۔ منصوبہ جات کا ڈویژن ممکنہ جنگی کارروائیوں کی منصوبہ بندی اور ان کے لئے فوج کی تنظیم نو اور ساز و سامان سے منسلک تیاریوں کے علاوہ ملک کے تمام بیرونی مسائل پر سوچ بچار کرتا ہے۔ کوئی اہم پہلو ہو جس کا فوج کی صلاحیت یا کارکردگی پر اثر پڑتا ہو، کوئی کام جو فوج کے ذمے آسکتا ہو، وہ MO پلانز کی فکر ہے۔ مستقبل میں کیا ہو سکتا ہے، ہمیشہ اُس کی نظر میں رہتا ہے۔ ہر پہلو پر سوچ بچار کرتا رہتا ہے، مختلف قسم کے منصوبے بناتا رہتا ہے، تاکہ خدشہ جب حقیقت میں تبدیل ہونے لگے، ہاتھ بندھے نہ رہ جائیں۔ پھر گاہے بگاڑے ان منصوبوں کو تازہ کرتا رہتا ہے۔ اس کا کام کبھی ختم نہیں ہوتا۔ دماغ فارغ نہیں رہ سکتا، MO سو نہیں سکتا۔ اس کے علاوہ جب بھی کوئی اہم یا پیچیدہ پہلو کسی اور دفتر سے فوج کے سربراہ کے پاس آتا، جس پر وہ دوسری رائے معلوم کرنا چاہتے، MO کو بھیج دیتے۔ MO کے مشورے کی چیف کے فیصلوں میں بہت اہمیت ہوتی ہے۔ اتنی مصروف کرسی پر کبھی نہ بیٹھا تھا، اور نہ ہی اس سطح کی سوچ و بچار میں گم ہوا تھا۔ نہایت اہم اور حساس نوعیت کا کام تھا۔ ذرا غلطی کی گنجائش نہ تھی اور کوئی لمحہ خالی نہ گزرتا۔ MO میں غلطی کفر کے برابر سمجھی جاتی۔ مگر MO جیسا ماحول پوری فوج میں کہیں نہیں دیکھا۔ ہر کوئی کھل کر اپنی رائے کا اظہار کرتا اور اس کی حوصلہ افزائی کی جاتی، تاکہ سوچ کے صحیح نتائج نکلیں۔ آرمی چیف اور CGS (Chief of General Staff) مختلف مسائل پر MO کے مشورے سننے آتے رہتے۔ کام بہت تھا اور میں اس میں منہمک ہو گیا۔ ہر چیز کے اندر کی خبر مجھے ہوتی اور میں خود کو اہم محسوس کرتا، کام کرنے کا مزہ آتا۔ لیکن کئی چیزیں، خاص کر ملک کے اندرونی حالات مجھے افسردہ کر دیتے۔

چھانسر تشنبلی

میرے اس عرصہ ملازمت میں میجر جنرل توقیر ضیا (لیفٹیننٹ جنرل بنے) ڈائریکٹر جنرل (DGMO) رہے۔ نہایت تیز ذہن کے مالک تھے، فوراً ہی بات سمجھ جاتے اور فیصلہ کرنے میں کوئی دشواری نہ پاتے۔ بلا کے خود اعتماد، خوش اخلاق اور کھلے دل کے انسان تھے۔ اپنی ٹیم پر پورا بھروسہ کرتے، خوش رہتے اور اپنی زندگی سے لطف اٹھاتے۔ کبھی انہیں کام کے بوجھ تلے دبا ہوا اور پریشان حال نہیں دیکھا۔

ان ہی دنوں فوج کی تشکیل نو بھی ہو رہی تھی۔ یہ بہت بڑا منصوبہ تھا۔ ہندوستان کی اٹھتی ہوئی معیشت، بڑھتی ہوئی افواج اور پھیلتے ہوئے عزائم سے جو خدشات پیدا ہو رہے تھے ان سے نبھنے کا بوجھ ہماری سکرتی ہوئی معیشت برداشت نہیں کر سکتی تھی۔ اس سوچ کے ساتھ فوج اپنی ضروریات پوری کرنے کے لئے موزوں اقدامات کر رہی تھی، کہ ہم کم سے کم اخراجات پر ممکنہ خطروں سے پاک سرزمین کا مستحکم دفاع کر سکیں۔

ماڈہ پرستوں نے ایک عجیب سا تاثر لوگوں کو دیا ہوا ہے، جیسے فوج خود کو اتنا بڑا رکھنے میں کوئی اپنا فائدہ دیکھتی ہے۔ یقیناً ایسی کوئی سوچ ہرگز کبھی نہیں رہی۔ بڑی یا چھوٹی فوج سے فوجیوں کی زندگی پر کیا اثر؟ ہاں، تنخواہ کا اثر ہو سکتا ہے، مراعات کی لالچ ہو سکتی ہے، مگر فوج کے حجم سے کسی فرد کا کیا فائدہ؟ یہ ہو سکتا ہے کہ فوج جدید سے جدید اسلحہ اور دیگر نظام چاہتی ہو، لیکن وہ بھی صرف فوجی صلاحیت بڑھانے کے لئے، کسی کے ذاتی مفاد میں نہیں۔ یہ سوچنا کہ فوج اپنی بقا کے تحفظ کے لئے خود کو بڑا رکھتی ہے، تاکہ حکومت پر دباؤ رہے، ناجائز کی بات ہے۔ تختہ الٹنے کے لئے ایک چھوٹی سی فوج کافی ہے، اگر ملک کی سب سے بڑی طاقت --- عوام، اُس کے ساتھ ہو۔ اگر حکومت عوام کے دل سے اتر جائے، اور فوج کا سربراہ طاقت حاصل کرنا چاہے تو ہمارے ملک میں فوج ہی اقتدار میں آئے گی، چاہے اسے چھوٹی کر دیں۔ یہاں اب تک قانون کی کوئی حیثیت نہیں، اور نہ ہی آئین کی۔ جب حکمرانوں کے لئے ان کی کوئی وقعت نہیں، تو فوج کے لئے کیوں ہو؟

سعودی عرب میں فوج کے متوازی ایک اور فوج، نیشنل گارڈ کے نام سے، حکومت کو بچانے کے لئے کھڑی ہے، جیسے بھٹو صاحب نے فیڈرل سکیورٹی فورس (FSF) کھڑی کی تھی۔ ان دونوں کے باوجود جب پاکستانی فوج کے دستے سعودی عرب میں تعینات تھے تو معاہدے کے مطابق، ہماری فوج کی یہ بھی ذمہ داری تھی کہ اگر حکومت کے لئے کوئی اندرونی خدشہ ہوگا تو ہماری فوج کے دستے اُسے تحفظ فراہم کریں گے۔ حکومت کو اس طرح بندوق سے بچانے کا سلسلہ نہ ختم ہونے والا سلسلہ ہے۔ حکمران کو تحفظ صرف اچھی حکمرانی دے سکتی ہے اور اچھے قوانین، جن کی حکومت بھی پاسداری کرے۔ اگر عوام مطمئن نہیں تو حکومت کو کوئی طاقت نہیں بچا سکتی۔ ہم بار بار دنیا میں یہی تماشہ دیکھتے ہیں، مگر سبق نہیں سیکھتے۔

اگر ہمیں یہ غلط فہمی ہے کہ ہماری معیشت فوج کی وجہ سے ڈوب رہی ہے اور ہم نے فوج کے حجم کو کم ہی کرنا ہے، تو ہم یوں کر سکتے ہیں کہ دشمن کی شرائط پر دوستی کر لیں، اور فوج کو مکمل طور پر بگٹھا دیں۔ پھر اس چھوٹی فوج کو پالنے کا بھی کوئی مقصد سوچ لیں۔ کیا یہ صرف

سلا میوں کے لئے رکھنی ہے، یا عوام سے تخت شاہی کو بچانے کے لئے؟ چھوٹی فوج کا بھی تو کوئی مقصد ہوگا۔ کشمیر کو شروع سے ہی خیر آباد کہہ دیں۔ پھر اور بہت سے قومی تحفظات کو بھولنا پڑے گا۔ اور سوچنا ہوگا، کہ کیا اس طرح ہم اپنے اڑوس پڑوس کے موجودہ ماحول میں اپنے مادی مفادات کا تحفظ کر سکیں گے؟ کیا ہماری دریاؤں کو خشک ہونے سے بچایا جاسکے گا؟ کیا زبردستی کی لگائی ہوئی نقصان دہ کاروباری شرائط پر ہماری معیشت سنبھل کر چل سکے گی؟ کیا سمندری حدود کے ذخائر بچے رہیں گے؟ کیا اپنی زمین میں دفن اربوں ڈالر کے معدنی وسائل کوڑیوں کے مول بکنے سے بچا سکیں گے؟ کیا ہم ہندوستان کے تابع ہو کر بھی مالی خوش حالی میں جی سکیں گے؟ کیا اُن کا بازو مروڑنا برداشت کر لیں گے؟ کیا اس ہی میں ہمارا مادی فائدہ ہے؟ اور آج مغربی سرحدوں پر بیٹھے دشمن اور ہندوستان کے گٹھ جوڑ کے کیا اثرات ہوں گے؟ آئندہ کیا ہو سکتا ہے؟ کیا ان سب خدشات کے باوجود بھی ہم افواج کو ناکارہ کر کے ایک قوم کی حیثیت سے جی سکیں گے؟ اگر قوم کو اعتراض نہیں، تو پھر بسم اللہ۔

یہ کہہ دینا کہ فوجی صلاحیت بھی ان سب کو نہیں بچا سکتی، احمقانہ بات ہے۔ اگر فوجی صلاحیت کے باوجود بھی ہم ان سب کو کھورہے ہیں تو یہ حکمرانوں کی خود غرضی، ہماری خوف زدہ خارجہ پالیسی، جو دور اندیشی پر مبنی نہیں، ظالمانہ، غیر منصفانہ اور ناکارہ حکومتی مشین اور ہمارے نظام میں پھیلی ہوئی کرپشن کا نتیجہ ہے۔ جب معیشت کرپشن اور غلط پالیسیوں کی وجہ سے تباہ ہو جائے اور بجائے ان کو سنبھالنے کے، ہم اپنی صلاحیتوں کو گھٹانا شروع کر دیں، اپنی انگلیاں کاٹ ڈالیں، تو کیا یہ حماقت نہیں؟ کیا اپنے ہاتھ کاٹنے سے پیٹ بھر جائے گا؟ کل پیٹ بھرنے کو کیا اپنی گردن کاٹیں گے؟

سو ویٹ یونین کی معیشت تباہ ہونے کی ذمہ دار اُن کی فوج نہیں، بلکہ اُن کا ناکارہ نظام، اُن کی پالیسیاں اور پھیلی ہوئی کرپشن تھی۔ یہ صحیح ہے کہ یورپ کے کئی ممالک بغیر اتنی فوجی صلاحیت کے چین سے رہ رہے ہیں، لیکن اُن کے وہ خدشات نہیں جو ہمارے ہیں اور نہ ہی ایسا پڑوسی جس نے پہلے دن سے ہی پاکستان کے وجود کو تسلیم نہیں کیا۔ پھر بھی سوئزر لینڈ جیسے ملک نے بھی اپنا حربی نظام (military system) ایسا رکھا ہے کہ ضرورت پڑنے پر تمام کی تمام قابل آبادی لڑائی کے لئے تیار ہو سکتی ہے۔ ہاں، اگر ہم اپنا حربی نظام بدل لیں تو وہ علیحدہ بات ہے، مگر ہم ابھی قومی یک جہتی کے اُس مقام پر نہیں پہنچے کہ یہ کر پائیں۔

اگر ان سب باتوں سے بھی جی نہیں بھرتا، اور پھر بھی دل میں یہی واہمہ ہے کہ فوج، فوجی صلاحیت گھٹانے پر آمادہ نہیں اور ملک کو ڈبو رہی ہے، تو پھر اس نظام کے حکمران تو کھٹ پتلی ہی ہوئے، اُن سے جان چھڑائیں، اور اس ملک کو ڈوبنے سے بچائیں۔ کوئی ایسا نظام، کوئی ایسی حکومت لائیں جو حکم چلا سکتی ہو۔ خوف زدہ حکمران کیوں سر پر بٹھائے ہیں؟ وہ کیسی حکومت، جس کا حکم ہی نہ چلے؟! فوج کو کیوں مورد الزام ٹھہراتے ہو؟ جو حکومت اپنا نہیں بلکہ عوام کا سوچے گی، اُس کی فکر کرے گی، عوام کو اپنے ساتھ پائے گی۔ پھر کسی کی کیا مجال کہ حکومت کے آگے چوں چا کر سکے؟

کون سا عرش ہے جس کا کوئی زینہ ہی نہیں؟*

MO کے پلیننگ روم (Planning Room) میں خاموشی چھائی ہوئی تھی۔ میں نے جنرل جہانگیر کرامت کی طرف دیکھا، "سرسب تیار ہیں"۔ اُنہوں نے کہا، "بسم اللہ"۔ میں نے یہی الفاظ فون پر دہرائے۔ چاغی سے آواز آئی، "بسم اللہ"۔ کچھ دیر میں کاؤنٹ ڈاؤن شروع ہو گیا، میں گنتی دہراتا رہا۔ ایک ایک لمحہ سب پر بھاری تھا، دل دھڑک رہے تھے، میری ہتھیلیاں پسینے سے بھیگی ہوئی تھیں۔ پھر فون پر اللہ اکبر کے نعرے گونجنے لگے، میں نے بھی کہا، "اللہ اکبر، دھماکہ کامیاب ہوا"، سب نے کہا، "اللہ اکبر"۔ کمر اخوشی سے جھوم اُٹھا۔ الحمد للہ، ہم ایٹمی طاقت بن چکے تھے۔

۲۸ مئی ۱۹۹۸ کا تاریخی دن تھا۔ چیف آف آرمی سٹاف کے علاوہ، لیفٹیننٹ جنرل علی قلی خان، CGS، میجر جنرل توقیر ضیا اور ہمارے ساتھ کچھ اور سٹاف افسران موجود تھے۔ ہم سب بہت پُر جوش (excited) تھے۔ کتنے ہی دنوں سے تیاریاں جاری تھیں، لیکن حکومت فیصلہ ہی نہیں کر پا رہی تھی۔ آج ہمارا ملک دنیا میں ایک نئی ایٹمی طاقت بن چکا تھا۔ ہمارا سر فخر سے بلند تھا۔ اب اسے کوئی نہیں جھکا سکے گا۔

سب کے چہروں سے خود اعتمادی اور عزم پھوٹ رہا تھا۔ نہ جانے اب کیا کرنا تھا؟ لیکن جو بھی تھا، ہم کر سکتے تھے۔ پانی پر چل سکتے تھے۔ ساری مسلم اُمّت کے لئے آج کا دن فخر کا دن تھا۔ آج ہمیں اللہ نے وہ طاقت بخشی تھی کہ اگر غلام ذہنیت کے آقاؤں سے، جو صرف غلامی اس لئے قبول کئے بیٹھے ہیں کہ اُن کی بادشاہت چلتی رہے اور دولت محفوظ رہے، چھٹکارا حاصل کر لیں تو دنیا کی کوئی طاقت ہمیں زیر نہیں کر سکتی۔ اب ہم سر اُٹھا کر جی سکتے ہیں، اگر حوصلہ کریں۔

جب ۱۱ مئی ۱۹۹۸ کو ہندوستان نے ایٹمی دھماکے کئے تو ہم سب جوابی کارروائی کے لئے ڈٹ گئے تھے۔ آرمی چیف کا حکم تھا کہ فوری طور پر تمام تیاریاں مکمل کر لی جائیں۔ حکومت فیصلہ کرنے پر کافی ہچکچا رہی تھی۔ MO نے چیف کو کچھ ٹانگنگ پوائنٹس (talking points) بنا کر بھی دیے، جو دھماکہ کرنے یا نہ کرنے کے فیصلے پر اثر انداز ہوتے تھے۔ کئی بار اُن کی ملاقات وزیراعظم نواز شریف صاحب سے بھی ہوئی، مگر وہ دونوں صورتوں کے انجام سے خائف تھے۔ ہم لگا تار تیاریوں میں مشغول رہے، اور ہمارے سائنس دان بھی۔

خبر تھی کہ ہندوستان اسرائیل کے ساتھ مل کر ہمیں ٹیسٹ سے روکنے کی کوشش کرے گا۔ یہ بھی پتا چلا کہ اسرائیل کے کچھ جدید لڑاکا تیارے ہندوستان پہنچ چکے ہیں۔ امریکہ کی بحریہ کے کئی جہاز، بشمول ایئر کرافٹ کیریئر (air craft carrier)، ہمارے ساحل پر گھوم رہے تھے۔ ساحلی علاقوں میں اُن کی فضائی پروازیں لگاتار جاری تھیں، جو گاہے بگاہے ہماری فضائی حدود کی خلاف ورزی بھی کرتے رہتے۔ سفارتی سطح پر وہ ہمیں ٹیسٹ سے روکتے رہے، دھمکاتے رہے۔ عسکری ہتھکنڈوں سے ڈراتے رہے۔ بھوک اور افلاس کا خوف دلاتے رہے۔ فوج ہر طرح سے دھماکا کرنے کے حق میں تھی، تیاری بھی مکمل کے قریب تھی، صرف حکومت کو رضامند کرنا تھا۔

انڈیا کے دھماکے کے بعد سے MO لگاتار رات دن کام میں مصروف رہا۔ ٹیسٹ کے علاقے میں کافی سپاہ پہنچانی تھیں۔ زمینی اور فضائی حملوں کے خلاف ایک مضبوط دفاع قائم کی گئی، جس میں PAF کا کردار نہایت اہم تھا۔ پھر سائنس دانوں اور ٹیسٹ کے اہم ساز و سامان کو وہاں پہنچانا تھا۔ اس میں بھی PAF کا کردار رہا۔ ہم ہر طرح سے ایٹمی ٹیسٹ کے علاقے کی دفاع کرنے کو تیار تھے۔ آخر نواز شریف صاحب مان گئے۔ فوج کے علاوہ نہ جانے اُن پر اور کس کس کا دباؤ تھا۔ شاید سب سے کارگر یہ ذہنی دباؤ رہا ہو کہ "سنہری تاریخی سیاسی فائدہ کیوں کھوتے ہو؟"

آج کل ایک نئی سوچ کو پاکستان کے دشمن، پیسے کے بل پر، تقویت پہنچا رہے ہیں۔ وہ یہ کہ ایٹمی صلاحیت ہمارے لئے نقصان دہ ہے۔ جیسے یہ صلاحیت حاصل کر کے ہم سے کوئی غلطی ہوگئی ہو، اور ہم بجائے طاقتور ہونے کے کمزور ہو گئے ہوں۔ اُن کا کہنا ہے کہ ہم نے ایٹمی صلاحیت حاصل کی تھی خود کو بچانے کے لئے، اب اسے بچاتے بچاتے خود کو تباہ کر لیں گے۔ کیسی شکست آلود سوچ ہے! پاکستان میں ان سوچوں کو امریکہ نواز پاکستانی فروغ دے رہے ہیں تاکہ قوم کو ذہنی طور پر، امریکہ کے ایجنڈے کے مطابق، ایٹمی صلاحیت سے دستبردار ہونے کے لئے تیار کیا جائے۔

کارگل کی مثال دیتے ہیں، کہ کیا ہم ایٹمی طاقت ہونے کے باوجود کچھ کر سکے؟ کیا کرنا تھا جو نہیں کر سکے؟ اس میں ایٹمی طاقت کا کیا تصور تھا؟ کارگل سے تو تختہ اُلٹنے کے حالات پیدا ہوئے، اور تو اس کا کچھ حاصل نہ تھا۔ شاید اگر ہم اتنے طاقتور نہ ہوتے تو اس بیوقوفی کی بہت بڑی سزا بھگتنی پڑتی۔ پھر شاید ہندوستان حملہ کرنے سے نہ چوکتا، اور نہ ہی امریکہ لڑائی بند کرانے میں دلچسپی رکھتا۔ پھر تو اس حصے میں امریکہ کا کھیل اور آسان تھا۔ یہ بھی کہا جا رہا ہے کہ افغانستان کے حالات میں اس سے ہمیں کیا تقویت ملی؟ سوچنا یہ ہے کہ اگر یہ طاقت نہ ہوتی تو کیا یہ سب نہ ہوتا؟ تو اور کیا کیا ہوتا؟ امریکہ کا کھیل بہت جلد ختم ہو جاتا۔ یہ صلاحیت غریب عوام کا پیٹ کاٹ کر حاصل نہیں کی گئی۔ اس پر اتنے اخراجات ہی نہیں آئے۔ غریب عوام کا پیٹ کاٹ کر تو صرف حکمران پنپ رہے ہیں، ایٹمی صلاحیت کے حصول میں عوام پر کوئی ایسا بوجھ نہیں ڈالا گیا کہ ملک میں افلاس چھا جاتا۔

چھٹا سفر تشنہ لبی

ہمارے دشمن دنیا کو اس پروپیگنڈے سے ڈراتے ہیں کہ پاکستان کی ایٹمی صلاحیت غیر محفوظ ہے اور اگر یہ "دہشت گردوں" کے ہاتھوں آگئی تو دنیا کے لئے بہت خطرہ ہوگا۔ یہ سوچ اُس ذہن کی پیداوار ہے جو پاکستان کی ایٹمی صلاحیت سلب کرنا چاہتا ہے، اور ابھی سے اس قسم کی سوچیں پیدا کر رہا ہے، کہ جب وقت آئے تو قوم ایٹمی صلاحیت کھونے پر ذہنی طور پر تیار ہو چکی ہو، اور دنیا ہم سے یہ طاقت چھیننے والے کے لئے تالیاں بجائے۔ اس پر جو خرچہ آئے اور جو بھی ظلم کرنا پڑے، اُسے دنیا جائز سمجھے، کیمیائی ہتھیاروں کا استعمال بھی۔ اصل خوف یہ نہیں کہ ہمارے پاس یہ صلاحیت ہے۔ اصل خوف یہ ہے کہ اگر پاکستان میں کوئی ایسا حکمران آ گیا جو دل میں اللہ کا خوف رکھتا ہو تو پھر کیا ہو گا؟ کوئی ایسا حکمران جو صرف منہ سے نہ کہے کہ میں ڈرتا نہیں، بلکہ واقعی صرف اللہ ہی سے ڈرتا ہو۔ افسوس ہے اُن پاکستانیوں پر جو دشمن کے اس کھیل میں شامل ہیں، یا تو وہ احمق ہیں یا غدار۔

پس غبار بھی کیا کیا دکھائی دیتا ہے *

مغربی ممالک نے ہماری ایٹمی صلاحیت کو اسلامی بم غلط نہیں کہا تھا۔ جب ہم نے ایٹمی دھماکہ کیا تو ساری مسلم دنیا میں جوش اور خوشی کی ایک لہر اٹھی۔ جگہ جگہ مسجدوں میں شکرانے کی نمازیں پڑھی گئیں، مٹھائیاں بانٹی گئیں۔ بہت سے لوگوں نے ہمارے سفارتخانوں کو پیسے بھجوائے، کیونکہ ہم پر پابندیاں لگ چکی تھیں۔ طالب علموں نے محبت بھرے خطوں کے ساتھ اپنے جیب خرچ بھجوا دیئے۔ کئی لڑکیوں نے پاکستانی بننے کی خواہش میں یہ تک لکھ بھیجا کہ ہمارے لئے پاکستان میں کوئی رشتہ ڈھونڈ دیں۔ یہ سب میں نے ISI (انٹرسروسز انٹیلی جنس) میں آنے کے بعد دیکھا۔ یہی ہے مسلم اُمہ کی حقیقت، جو اب تک ابھر کر دنیا کے سامنے نہیں آئی۔ میری پروموشن آچکی تھی، مگر میں ایٹمی دھماکے میں مصروفیت کی وجہ سے MO میں ہی ٹھہرا رہا۔ اس کام پر مجھے تمنغہ بسالت سے بھی نوازا گیا۔ اُس کے فوراً بعد میجر جنرل بن کر، لیفٹیننٹ جنرل نسیم رانا کے بہت اسرار پر، ISI میں بھیج دیا گیا۔ جنرل رانا بہت سادے، خوش مزاج اور پُر خلوص انسان تھے۔ ایسے نیک طبع شخص کے ساتھ کام کرنے کا مزہ بھی آتا ہے۔

ہمیں تو مسلم دنیا کی ابھرتی ہوئی ہم آہنگی شاید نظر نہیں آتی، لیکن دنیا کی بڑی طاقتیں اس حقیقت کو دیکھ رہی ہیں اور اس سے خائف ہیں۔ اُن ہی کا کھیل ہے جس نے مسلم دنیا کو یوں تتر بتر کیا ہوا ہے۔ ہمارے زیادہ حکمران اُن ہی سے تقویت پاتے ہیں اور اُن ہی کے مفاد میں کام کرتے ہیں۔ مگر اُن کو کیا کہیں، یہ ہماری ہی کمزوریاں ہیں، جن کا وہ فائدہ اٹھاتے ہیں۔ وہ دن دور نہیں، انشاء اللہ، جب دنیا کے مسلمان ایک دوسرے کو طاقت پہنچائیں گے۔ ہم مل کر کام کریں تو دنیا کی سب سے بڑی طاقت ہیں۔

میں ISI میں تجزیاتی شعبے (Analysis Wing) کا DG تعینات ہوا۔ آتے ہی چین کے دورے پر چلا گیا۔ وہ پاکستان کے ایٹمی طاقت بننے پر بہت خوش تھے اور اس خطے میں ہمیں ابھرتی ہوئی طاقت سمجھتے۔ ہر طرح سے ہماری مدد کو تیار تھے۔ ہمارے اور اُن کے دشمن ایک ہی تھے۔ آج بھی، جب مسلم ممالک پر، یہودیوں کی سازش سے، امریکہ اور اُن کے ساتھی یلغار شروع کر چکے ہیں، چین ہمارے لئے ایک ستون کی حیثیت رکھتا ہے۔

ISI کا تجربہ خاصہ انوکھا تھا۔ یہاں اُن امور پر کام کرنے کا موقع ملا جن پر پیشہ ورانہ طریقے سے پہلے مرکوز نہ رہا تھا۔ اس کا تجزیاتی ونگ کافی بڑا ادارہ تھا، اور ISI کا دماغ کہلاتا۔ یہی ISI کا ظاہری چہرہ (overt face) بھی تھا، اس کی پہچان تھی۔ باقی شعبہ خفیہ * شکیب جلالی

چھانسنر تشہلی

طور پر کام کرتے۔ ہماری ذمہ داری پاکستان کو درپیش ممکنہ بیرونی خطرات کی نشان دہی کرنا تھی۔ اندرونی معاملات سے ہمارا بس اتنا ہی تعلق ہوتا، کہ ایک تصویر ہمارے پاس ہوتی، تاکہ بیرونی خدشات سے مل کر اگر کوئی نیا پہلو نمایاں ہوتا ہو تو ہم اُس پر غور و خوض کر سکیں۔ ISI میں نہایت بند اور محدود (compartmentalized) ماحول تھا۔ ہمارے ونگ کا ISI کے کسی اور محکمے سے یا اُن کے کارندوں سے کوئی رابطہ نہیں تھا۔ بس اُن کی رپورٹیں تجزیے کے لئے آ جاتیں، یا ہماری کوئی مخصوص طلب ہوتی تو ہم اُنہیں کام دے دیتے۔

دنیا میں پھیلے ہوئے ISI کے تمام کارندوں کی رپورٹیں آتیں، اور ہمارے سفارتخانوں سے بھی جو تار دفتر خارجہ کو آتے اُن کی کاپیاں وصول ہوتیں۔ الیکٹرونک انٹیلی جنس سے بھی کافی معلومات حاصل ہوتیں۔ دنیا کے اور اپنے اخباروں، ٹی وی چینلز اور ویب سائٹس پر بھی ہماری نظر رہتی۔ کئی ممالک کی خفیہ ایجنسیوں سے بھی مختلف امور پر رابطہ رہتے اور فوڈ آتے جاتے رہتے، جن سے معنی خیز تبادلہ خیال ہوتا۔ پاکستان میں موجود تمام ممالک کے سفارتی اہلکاروں سے بھی ملاقاتیں رہتیں۔ کچھ اندرونی اور بیرونی مفکرین اور تھنک ٹینکس سے بھی مستفید ہوتے اور انہیں بھی اپنا نکتہ نظر پیش کرتے۔ مختلف امور پر دفتر خارجہ سے بھی رابطہ رہتا۔ پھر ساری معلومات اکٹھی کر کے ہمارے ماہرین ان کا تجزیہ کرتے اور ہم اپنی سفارشات حکومت، افواج اور دوسرے اہم اداروں کو بھیجتے، یہ کوئی انوکھا کام نہیں، تمام دنیا کی خفیہ ایجنسیوں کے تجزیاتی ادارے اس ہی قسم کے کام کرتے ہیں۔ تنظیم کی مزید تفصیلات اور اس کے کام میں جانا مناسب نہیں۔

اپنے قریبی دشمن ہندوستان پر خاص نظر رہتی۔ اسرائیل کے ساتھ اُن کا گٹھ جوڑ اور امریکہ کے ساتھ بڑھتے ہوئے خفیہ تعلقات خاصی اہمیت کے حامل تھے۔ دنیا اب دو مقابلے کی طاقتوں میں بٹی ہوئی نہ تھی۔ ابھرتے ہوئے یونی پولر ورلڈ (Unipolar World) کے اثرات کا نقشہ کھلتا جا رہا تھا۔ دنیا میں پھیلتا ہوا کاروباری شلجہ اور پیسے کا کھیل، جسے ہم جیسے ممالک کو دو بونے اور مروڑنے کے لئے استعمال کیا جا رہا ہے، تجزیاتی ونگ میں خاصی دلچسپی کا باعث تھا۔ مسلمانوں کے بیوپاری حکمران بھی نظر میں رہتے، اور اُن کو دیا ہوا اُن کی فوج کا تحفظ بھی۔ فوج ادارہ ہی ایسا ہے جس پر ایک شخص کا مکمل کنٹرول ہوتا ہے، اور اس کے نظم و ضبط کی وجہ سے ذاتی مفاد کے لئے استعمال آسان۔ پھر امریکہ کے لئے فوجی تعاون کے نام پر، افواج کی ہر سطح پر مراسم قائم رکھنے بھی آسان ہیں۔

ایسے کاروباری حکمرانوں کو قابو میں رکھنے کے لئے ورلڈ بینک اور IMF جیسے اداروں کا بھی استعمال ہوتا ہے۔ یہ امداد کے بہانے تمام اندرونی معاملات میں دخل انداز ہو جاتے، اور ان ہی کے نمائندے ملک کے اہم مالیاتی اداروں کا کنٹرول سنبھال لیتے، اور ملک کو ان کا محکوم رکھتے۔ یہ وہی شہری ہوتے جو ان اداروں میں سالوں نوکریاں کرتے، پھر اپنے ملک میں ان کے نمائندے کے طور پر اہم مالیاتی ادارے چلاتے۔ کئی مسلم ممالک میں یہی کھیل چل رہا ہے۔ ان طریقوں سے کاروباری مقاصد بھی حل کئے جاتے ہیں، ملک کی معیشت کو اُن ہی کے شہریوں سے قابو بھی کیا جاتا ہے اور دنیا پر اثر و رسوخ بھی قائم رکھا جاتا ہے۔

چھٹا سفر تشنہ لبی

میڈیا کا کھیل پتا تو تھا، مگر یہاں اُسے قریب سے سمجھنے کا موقع ملا۔ دنیا کے میڈیا پر کسی اُن دیکھے ہاتھ کا کنٹرول پھیلتا جا رہا تھا، اور ایک سوچی سمجھی تدبیر کے تحت امریکہ اور دیگر ممالک کی عوام میں ایسے تاثرات پیدا کئے جاتے جن سے امریکہ کی حکومت کے ناجائز مقاصد پورے ہو سکیں۔ ہر ملک کے لئے اور ہر موقع کی اپنی ہی تدبیر (strategy) ہوتی، مگر یہ تمام ایک بڑی تصویر کا حصہ ہوتے، ایک ہی جال کے تانے بانے نکلتے۔ عوام کے ذہنوں کو گھائل کر دیتے۔ آہستہ آہستہ، بار بار وہی ترانے سن سن کر عوام بھی اُن کا یقین کرنے لگتی اور وہی گیت گاتی۔ اُن دنوں پاکستان میں تو نجی ٹی وی چینلز تھے نہیں۔ اخبار نویسوں پر ہی زور رہتا۔

حکومت پر دباؤ رہتا تھا کہ پاکستان میں الیکٹرونک میڈیا کو آزاد کرایا جائے، یعنی کاروباری بنایا جائے، تاکہ اسے پیسے سے قابو میں کر سکیں۔ ہمیں اس کا احساس یوں ہوا کہ حکومت ہم سے نالاں رہتی کہ اس کام میں ہم اتنی رکاوٹ کیوں ڈالتے ہیں۔ بار بار یہ مسئلہ اٹھتا مگر ISI اس سازش کو کامیاب نہیں ہونے دیتی تھی۔ جب میڈیا کاروباری ہوگا تو کسی بھی کاروباری ادارے کی طرح ان کی پہلی ترجیح پیسہ بنانا ہوگی۔ ایک ہی کمپنی کئی ٹی وی چینلز اور اخباروں کی مالک بن کر بہت طاقت حاصل کر لیتی ہے، پھر اپنی طاقت کو بیچ کر پیسے کماتی ہے۔ بیرونی طاقتیں پیسوں کے زور پر عوام کے ذہنوں پر کھل کر حملہ کرتی ہیں۔ اُن کی فکریں بدل دیتی ہیں۔

کئی ممالک میں کامیابی سے یہ جال پھیلایا جا چکا تھا۔ آہستہ آہستہ، نہایت چالاکی سے، عوام کو اپنے نکتہ نظر پر آمادہ کرتے۔ کچھ خبروں سے، کچھ اُن پر تبصروں سے، کچھ طنز و مزاح میں، کچھ دل فریب باتوں اور کہانیوں سے۔ اس میں فلم انڈسٹری اور انٹرنٹ کا پورا نظام بھی شامل تھا۔ آج، جب ہمارے ٹی وی چینلز کاروباری ہو چکے ہیں، باتیں کس قدر مہنگے دام بکتی ہیں۔ ایک سے ایک جعلی عالم اور عالم دین، ڈھکے چھپے انداز میں امریکہ ہی کے گیت گاتے ہیں۔

ایک اہم ہدف مسلمانوں کو دین سے گھسیٹ کر صرف دنیا پر مرکوز کرنا تھا، چونکہ دین ایک ایسا طرز زندگی (life style) بتاتا جو ان کی تہذیب سے مختلف تھا، اور ان کا خیال تھا کہ دنیا میں دو اتنی متضاد تہذیبیں ناچاقتی اور تنازعے کا باعث ہوں گی۔ یہ معاشرے میں ایک چھوٹ کا ایسا شیطانی نظام چاہتے ہیں جس میں سب کچھ جائز سمجھا جائے۔ ہر چیز کی آزادی ہو۔ کبھی ایسا تاثر پیدا ہوتا ہے کہ اس سوچ کا علامتی نشان (symbol) فرانس کا دیا ہوا تحفہ مجسمہ آزادی (Statue of Liberty) تو نہیں؟ کہیں یہ مجسمہ آزادی کے بجائے خود اختیاری اور بے راہ روی کا مجسمہ تو نہیں؟ شاید یہ آزادی کا تصور انفرادی کردار کی آزادی کا ہی ہو۔ معاشرے کے رجحان کو دیکھ کر تو یہی لگتا ہے۔

یقیناً ہمارا دین اس غلبے کی راہ میں سب سے بڑی رکاوٹ ہے۔ اپنے مذہب میں تو مرضی سے رد و بدل کر لیتے ہیں، مگر اسلام اٹل ہے اور مسلمانوں کو اس طرز زندگی کی دفاع میں، جسے دین کہتے ہیں، لڑنے مرنے پر آمادہ کرتا ہے۔ اس لئے ان کو دین سے دور کرنا لازم تھا۔

چھٹا سفر تشدلی
اس کام کے لئے سب سے اہم عورت کی آزادی کو سمجھا گیا۔ سوچا کہ اگر عورت کی حیات ختم کر دی جائے تو وہ بھی خوش ہوگی اور مرد حضرات بھی۔ ساتھ شراب بھی عام ہو جائے تو سونے پہ سہاگہ۔ پھر ذہن عیاشی کی طرف مائل رہیں گے اور دین کی رغبت گھٹتی جائے گی۔ یہ کھیل سا لہا سال سے شروع ہے اور اس پر اربوں ڈالر خرچ کئے جاتے ہیں۔

ISI میں رہ کر میں نے بہت کچھ دیکھا اور سیکھا۔ یہ ایک بہت مؤثر اور کارگر قومی ادارہ ہے۔ اگر اس میں کوئی خرابی ہے تو وہ اس کے استعمال سے متعلق ہے۔ اگر صحیح کام کے لئے استعمال کریں گے تو ملک کے مفاد میں ہے، ورنہ تیز دھار سے تو پتھر بھی تراشا جاسکتا ہے اور اپنا گلا بھی کاٹا جاسکتا ہے۔ ایسا بہترین ادارہ ہونے کے باوجود اگر ہمارے حکمران اندھوں کی طرح چلتے ہیں، تو یہ یقیناً آنکھوں کی خرابی نہیں ہے۔ قرآن میں خوب فرمایا گیا ہے کہ بیشک آنکھیں اندھی نہیں ہوتیں، دل اندھے ہوتے ہیں۔

تیرگی ہے کہ انڈی ہی چلی آتی ہے *

"سر، یہ کچھ عجیب سے انڈیا کے مواصلاتی انٹرسیپٹ (wireless intercepts) آرہے ہیں"، میں نے ہاتھ میں پکڑے کاغذات DG ISI کی طرف بڑھائے بہت پریشان سی، بوکھلائی ہوئی باتیں تھیں، جھگڑ رہے تھے، "انڈیا کے فوجی بہت گھبرائے ہوئے نظر آتے ہیں"، میں نے کہا، "لگتا ہے ہماری فوج نے کارگل کے علاقے میں کوئی بڑی کارروائی کی ہے"۔ انہوں نے ہاتھ کا اشارہ کیا کہ کاغذات اپنے پاس ہی رکھوں اور کہا بیٹھیں۔ لیفٹیننٹ جنرل ضیا الدین، جنہوں نے جنرل رانا کے بعد ISI کو سنبھالا، نہایت بااخلاق اور مہذب انسان تھے، ہر ایک کی عزت کرتے، جب دفتر میں جاتا کھڑے ہو کر ملتے، ہمیشہ مسکرا کر بات کرتے۔ ایک دن پہلے بھی کچھ مشتبہ سے انٹرسیپٹس آئے تھے، تو میں نے کہا اس علاقے پر فوکس رکھیں، سوچا دیکھوں، کیا یہ کوئی مشق ہو رہی ہے یا معاملہ کچھ اور ہے۔ مگر آج کے انٹرسیپٹس سے تو لگتا تھا ۱۰ کور نے کوئی جارحانہ کارروائی کی ہے۔ میں بیٹھ گیا تو انہوں نے بتایا کہ ہماری فوج کارگل کے خاصے بڑے خالی علاقوں پر قبضہ کر چکی ہے۔ شاید ۳ یا ۴ مئی ۹۹ کا دن تھا۔

دوسرے دن MO میں ہمیں بریفنگ کے لئے بلا لیا گیا۔ CGS، لیفٹیننٹ جنرل عزیز خان، سمیت تمام GHQ کے لیفٹیننٹ جنرل بھی موجود تھے۔ بریفنگ میجر جنرل توقیر ضیا، DGMO نے دی، جس میں بتایا گیا کہ ہماری فوج کی ناردرن لائن انفنٹری (NLI) اور ریگولر فوج کی یونٹوں نے کارگل کے علاقے میں وہ پہاڑی چوٹیاں قبضے میں کر لی ہیں جو خالی پڑی تھیں۔ ان میں سے کچھ پر تو ہندوستان کی فوج گرمیوں میں رہتی تھی اور سردیوں میں چھوڑ جاتی تھی، باقی ویسے ہی خالی پڑی تھیں۔ اب ان جگہوں سے ہماری فوج کافی آگے تک جا چکی ہے اور در اس کارگل روڈ پر ہمارے چھوٹے ہتھیاروں کا فائر گرتا ہے۔ راستہ بند ہو چکا ہے۔ اب سیانچن سیکٹر کی سپلائی لائن کٹ چکی ہے، اور سردیوں کے لئے ڈمپنگ (ذخیرہ اندوزی) مکمل نہیں ہو سکے گی۔ انہیں سیانچن چھوڑنا پڑے گا۔ بعد میں پتا چلا کہ یہ تجزیہ MO کا نہیں، جوائنٹ سٹاف ہیڈ کوارٹر (JS HQ) کا تھا۔ اگلے دن کارگل کی خبر اخباروں میں آ گئی۔

جنرل مشرف صاحب نے اپنی کتاب میں جو کارگل کی تاریخ رقم کی ہے، اُس میں چند باتوں کی درستگی کرنا چاہوں گا۔ یہ ہماری تاریخ ہے اور اس قوم کے جوانوں کے خون سے لکھی گئی ہے۔ میں سمجھتا ہوں اگر حقیقت نہ بیان کی گئی تو اُن کا لہور ایگاں جائے گا، اور کل پھر یوں ہی سپاہیوں کی قطاریں اندھی آنکھوں سے آگ میں جھونک دی جائیں گی۔ اور ہم پھر سے اُس کا جشن منائیں گے، کہیں گے بہت اچھا

* فیض احمد فیض

چھٹا سفر تشنہ لبی

کیا۔ سب کو ایک ایک میڈل اور ملے گا۔ ہم نے ۱۹۷۱ کی جنگ کی بھی حقیقتیں چھپا کر رکھیں، اور آج پھر اُس ہی راہ پر چل رہے ہیں۔ جب سچ پر پردہ ڈال دیا جائے تو اُس سے کیا سبق کوئی سیکھے؟ جب سب ٹھیک تھا، کوئی غلطی ہی نہیں ہوئی، تو یقیناً آئندہ بھی ویسے ہی کیا جائے گا۔ پھر تاریخ کے کڑوے لمحے پلٹ کر آئیں گے، ہمارا خون بہائیں گے اور ہمارے حکمران ایسے ہی جھوٹ بولیں گے، جسے آج ہم سیاسی مصلحت کہنے لگے ہیں، جھوٹ نہیں۔ اب نہ تو اس کی کوئی گنجائش رہ گئی ہے اور نہ ہی حوصلہ۔

جن دنوں میں چیف آف جنرل سٹاف (CGS) کے عہدے پر فائز تھا، ۲۰۰۲ میں، میں نے کارگل کی جنگ کے بارے میں ایک مطالعاتی ریسرچ شروع کروائی، تاکہ فوج کی کمزوریاں سامنے آسکیں اور ہم اپنی لڑائی کی صلاحیت میں بہتری لاسکیں۔ صدر صاحب کی اس جنگ کے بارے میں حساس طبیعت اور اُس وقت کے ماحول پر سچ کے سیاسی اثرات کو دیکھتے ہوئے، میں نے اس سٹڈی کو بٹالین کی سطح تک محدود رکھا۔ حدف صرف یہ تھا کہ نچلے درجے پر، یعنی بٹالین اور اُس سے نیچے کی سطح پر، جو کاروائیاں ہوئی ہیں، اُن سے آئندہ کے لئے اسباق حاصل کئے جاسکیں۔ تمام حصہ لینے والی یونٹوں سے اُن کی روداد اور تبصرے منگوائے اور سٹڈی شروع کروادی۔ پھر مشرف صاحب کو خبر ہوئی تو انہوں نے مجھ سے بہت ناراضگی کا اظہار کیا اور پوچھا کہ آخر آپ چاہتے کیا ہیں؟ میں نے اُنہیں سٹڈی کا مقصد بتایا تو کافی خفگی سے سٹڈی فوری طور پر بند کروادی۔ ISI میں اس قسم کی نہ ہی کوئی سٹڈی کروائی گئی اور نہ ہی ہو سکتی تھی، کیونکہ اس کے لئے تمام اہلکار کی یونٹوں سے تفصیلات چاہیے تھیں، جو کارگل کے بعد کے دنوں جیسے ماحول میں ISI کو نہیں مل سکتی تھیں۔

ISI میں آنے سے پہلے میں دو سال MO میں رہ کر آیا تھا، وہاں کی چیزیں مجھ سے چھپی نہیں تھیں۔ جب MO میں بریفنگ کے لئے پہنچا تو پتا چلا کہ سوائے جنرل مشرف، لیفٹیننٹ جنرل محمد عزیز خان CGS، جو کمانڈر فورس کمانڈ ناردرن ایریا (FCNA) گلگت بھی رہ چکے تھے، لیفٹیننٹ جنرل محمود (کمانڈر اہلکار) اور میجر جنرل جاوید حسن (کمانڈر FCNA) کے، کسی اور سینئر افسر کو اس کاروائی کا کانوں کان علم نہ تھا۔ حتیٰ کہ ہیڈ کوارٹر اہلکار کے سٹاف بھی شروع میں اس سے نا آشنا تھے، جبکہ MO ڈائریکٹریٹ کو بھی بہت بعد میں پتا چلا، جب پانی سر سے گزر چکا تھا۔ یہ کہنا کہ فیصلہ کرنے سے پہلے اس کاروائی کا باقاعدہ GHQ میں جائزہ لیا گیا، سچائی سے بہت دور ہے۔ یہ باتیں پھر مختلف جگہوں سے بھی میرے علم میں آتی رہیں۔ IMO اتنا نا کارہ ادارہ نہیں کہ تجزیوں کے ایسے نتائج نکالے۔

جب لڑائی کے اثرات کھل کر سامنے آئے تو کیا یہ کہا جاسکتا ہے کہ آرمی ہیڈ کوارٹر میں، صرف CGS کو بتا دینا کافی تھا؟ یہ بھی نہیں کہہ سکتے کہ بتانے سے بات چھپی نہ رہتی۔ آخر اعتماد کا کوئی تو دائرہ اعلیٰ قیادت کی سطح پر ہوگا۔ اس کے بغیر تو فوج جنگ نہیں لڑ سکتی۔ یہ کہنا کہ صرف چھوٹا سا کور کی سطح پر آپریشن تھا، کوئی بڑی کاروائی تو تھی نہیں کہ کسی کو بتاتے، غلط بات ہے۔ دنیا میں تہلکہ مچ گیا، پاکستان کے منہ پر

مٹی ملی گئی، کیا یہ کوئی چھوٹی بات تھی؟ "اطلاعات ضرورت کے تحت (need to know basis) دی گئیں"، ایک ایسا جملہ ہے جس کے پیچھے کاروائیوں کو چھپانے والا اوٹ لیتا ہے۔ آج ہر کوئی جانتا ہے کہ کس کس کو خبر ہونی چاہیے تھی، اور نہ تھی۔ یہی جملہ ۹/۱۱ کے بعد بھی بار بار استعمال ہوتا رہا، مختلف پوشیدہ کاروائیوں کے انکشاف پر، اور آج بھی استعمال ہو رہا ہے۔

خفیہ رکھنے کا صرف ایک ہی مقصد ہو سکتا ہے کہ یہ منصوبہ فوجی نکتہ نظر سے اس قدر کمزور تھا اور اس کی تیاری اتنی محدود، پھر حالات کی مناسبت سے اس کا وقت اتنا نامناسب تھا، کہ کوئی بھی اس کے حق میں نہ ہوتا۔ شاید اس وجہ سے کسی کو بتایا نہیں۔ پھر سوال اٹھتا ہے کہ آخر کیا ہی کیوں؟ کیا اس کے کوئی اور مقاصد بھی تھے، یا صرف ایک غلطی ہی تھی؟ شاید یہ راز کبھی کھلے۔

فوج میں جب بھی کوئی منصوبہ بنایا جاتا ہے، ہر قسم کی مشکلات اور دشمن کے ہر ردِ عمل کا جائزہ لیا جاتا ہے۔ یہاں تو لگتا تھا کہ کوئی ردِ عمل متوقع ہی نہ تھا۔ بس فرض (assume) کر لیا گیا تھا کہ دشمن سہم کر بیٹھا رہے گا، ان پوسٹوں کو واپس نہ لے سکے گا اور مصالحت کی میز (negotiating table) پر آجائے گا۔۔۔۔ وہ جو آپ کا آدھا ملک کھا گیا، ڈکار بھی نہ لی۔ یہ کہاں تک درست ہوگا کہ اپنی صفائی میں کہہ دیا جائے کہ دشمن نے اور ری ایکٹ (over react) کیا، ضرورت سے زیادہ بڑا جواب دیا، مکھی کو ہتھوڑے سے مارا؟ یہی مطلب ہوا کہ ہمارا تجربہ غلط نہیں تھا، اُس کا ردِ عمل ہی غلط تھا، ہم تو ہمیشہ کی طرح ٹھیک تھے! تجربہ تو ردِ عمل کا ہی کرنا تھا، تو کیا ٹھیک تھا؟ کن مفروضوں (assumptions) پر یہ منصوبہ بنا اور بعد میں جو صفائیاں پیش کی جا رہی ہیں، حیران کن ہیں۔

میں ISI میں ہندوستان کی تمام کاروائیوں پر نظر رکھنے پر معمور تھا۔ اُن کی طرف سے کوئی ایسی حرکت نہیں تھی جس سے یہ تجربہ لگایا جائے کہ وہ کسی جارحانہ کاروائی کا ارادہ رکھتے تھے۔ جو اُن کی کچھ پوسٹوں سے یہ تاثر دیا جا رہا تھا کہ پاکستان کی فوج کا حملہ اُن پر آیا اور اُسے مار بھگا گیا، ٹپلی سطح پر کچھ انڈیا کے افسران کی تمنغے لینے کی بھونڈی ترکیب تھی، جو بعد میں کھل گئی۔ ISI میں اس کی تفصیلات موجود ہیں۔

ہمارے پاس اس قسم کی کاروائی کرنے کا کسی قسم کا کوئی جواز نہیں تھا۔ شملہ معاہدے کے بعد سے، سوائے سیاچن کے، جہاں لائن آف کنٹرول (LOC) کی نشان دہی مکمل طور پر نہیں کی گئی تھی، کسی جگہ پر انڈیا نے یہ لائن پار نہیں کی۔ ایک آدھ مورچے کی سطح پر جھگڑا ہو سکتا ہے، اس سے زیادہ نہیں۔ اگر کسی معنی خیز پیمانے پر لائن پار کی ہوتی تو ہم نے اس پر کم از کم کوئی احتجاج تو یقیناً کیا ہوتا، دفتر خارجہ میں اس کا کوئی ریکارڈ (record) ہوتا۔ ایسا کچھ نہ تھا۔ اُن کی طرف سے نہ ہی کسی حملے کی تیاری تھی اور نہ ہی کسی طرح سے کوئی ارادہ نظر آتا تھا۔ یہ کہنا

کہ ہمارے سینئر کمانڈروں کی دورانہدیشی اور چوکس رہنے کی وجہ سے انڈیا کا حملہ ہماری پہل (preemption) سے رُک گیا، حقیقت نہیں، محض اصلی حقائق کی پردہ پوشی ہے۔

یہ کہنا کہ LOC کے ساتھ خالی جگہوں پر قبضہ کرنا کسی معاہدے کی خلاف ورزی نہیں تھی اور زمین پر موجود کمانڈر کے دائرہ کار میں آتا تھا، غلط تصویر پیش کرتا ہے۔ اگر یہ کسی معاہدے کی خلاف ورزی ہی نہیں تھی، اور ہم جو کر رہے تھے ٹھیک تھا، تو ہندوستان سمیت ساری دنیا ہم سے لڑنے پر کیوں اُتر آئی اور ہم اتنے گھبرا کیوں گئے، جیسے کوئی بڑا گناہ کر دیا ہو؟ ہندوستان تو اُس معاہدے کی خلاف ورزی لگاتار کر رہا ہے، جس میں فیلڈ مارشل ایوب خان نے تین دریاؤں کا پانی اُنہیں بخش دیا، محض اپنے دوست امریکہ کو خوش کرنے کی خاطر، اور اپنے آقا ورلڈ بینک کے چند سکوں کے عوض۔ آج وہ ہمارا پانی بند کر کے ہماری زمینوں کو بنجر کر رہا ہے، ہمیں سیلاب میں ڈبوئے کی صلاحیت حاصل کر چکا ہے، ہمارے دفاعی نظام کو درہم برہم کر سکتا ہے، مگر ہم پھر بھی سوائے چُر چُر کرنے کے کچھ آگے نہیں بڑھتے۔ کیا ہم اتنے گئے گزر رہے ہیں کہ ہم نے کوئی خلاف ورزی بھی نہیں کی، پھر بھی شامت آگئی؟ ہم LOC سے میلوں آگے گھس بیٹھے، پھر بھی کیا کوئی معاہدہ نہیں ٹوٹا؟ یہ علاقہ ۱۹۷۱ء کی لڑائی کے بعد شملہ معاہدے کے تحت انہوں نے اپنے پاس ہی رکھا۔ اسے واپس لینے کا مجاز کیا زمین پر موجود کمانڈر ہی تھا؟ کسی اور کو بتانے کی ضرورت نہیں تھی؟ کیا یہ بجا توقع تھی کہ ہندوستان چُر کر کے بیٹھا رہے گا؟

FCNA کا منصوبہ دفاعی نوعیت کا ہرگز نہیں تھا۔ یہ مکمل طور پر جارحانہ کاروائی تھی، اور LOC کے پار کے علاقے پر بلا اشتعال قبضہ کرنے کا منصوبہ، تاکہ سیاحین کے مواصلاتی راستے (lines of communication) کو کاٹا جاسکے، جو بذاتِ خود ایک بہکا ہوا مفروضہ تھا۔ یہ کوئی معمولی نتیجہ نہیں تھا، جو ہم حاصل کرنا چاہتے تھے۔ اس کو چھوٹی سی "tactical" حرکت کہنا کیسے بجا ہو، جب کہ جنرل مشرف ہی کی کتاب میں یہ درج ہے کہ، اس دشوار پہاڑی علاقے میں، ۸۰۰ مربع کلومیٹر علاقے پر ہم نے قبضہ کیا۔ کتابی طور پر تو ہماری اور ہندوستان کی ہر لڑائی tactical ہی کہلائے گی مگر جب خود کہہ رہے ہیں کہ "معنی خیز سٹریٹجک اثرات" (significant strategic effects) حاصل ہوئے، تو پھر یہ دفاعی نوعیت کا چھوٹا سا آپریشن کیونکر ہو سکتا ہے، کہ صرف زمین پر موجود کمانڈر کے ہی دائرہ کار میں آتا ہو؟ اور یہ کہ ۱۰ کور کے علاوہ کسی اور کو بتانے کی ضرورت نہیں تھی؟ کیا یہ سوچا نہیں تھا کہ اس آپریشن کے اثرات سٹریٹجک ہوں گے، بعد میں پتا چلا؟ کسی واقعے کے وقوع پذیر ہونے کے بعد تو اثرات سب کو نظر آ جاتے ہیں۔ فوجی لیڈر کی دانائی اگر اس قدر محدود ہے کہ فیصلہ لینے سے پہلے اسے اپنے فیصلے کے اثرات کا علم ہی نہیں، تو اسے فوج کی کمانڈ کا ہرگز حق نہیں۔ مگر افسوس ہے کہ ہماری تاریخ میں ایسے کمانڈر فوج کو نصیب ہوئے۔

چھٹا سفر تشنہ لبی

اس پوری لڑائی میں مجاہدین کا کوئی حصہ نہیں تھا۔ جب پہلی مرتبہ MO میں بریفنگ (briefing) کے لئے گیا تو جنرل توقیر ضیا (DGMO) نے بتایا کہ یہ ظاہر کرنے کے لئے کہ فوج اس کاروائی میں شامل نہیں، ٹیپ پر ریکارڈ کئے ہوئے پشتوں میں پیغامات وائرلیس پر شروع دن سے چلائے جا رہے تھے، تاکہ یہ تصور قائم ہو کہ یہ سب کام مجاہدین ہی نے کئے ہیں۔ یہ سن کر میں بڑا حیران ہوا، اور میں نے سوال کیا کہ اس کا کیا فائدہ، کیونکہ ہماری اتنی فوج دشمن کے علاقے میں گھس بیٹھی ہے، وہ ہم سے لڑیں گے، کچھ ہمارا سامان بھی اُن کے قبضے میں آئے گا، کچھ قیدی بھی، اور کچھ شہیدوں کے جسم بھی۔ کسی بھی جنگ میں اس طرح کی بات چھپائی نہیں جاسکتی۔ اس پر جنرل عزیز بھی ناراض ہوئے اور کچھ بحث بھی ہوئی، پھر DGMO نے مجھے بیٹھنے کا اشارہ کیا اور کہا آپ ٹھیک کہہ رہے ہیں، مگر ہوا ایسے ہی ہے۔

میں نہیں سمجھتا کہ ISI کو کارگل میں فوج کی کاروائیوں کی خبر نہ تھی، کیونکہ اُن کے نمائندے ہر جگہ موجود ہوتے ہیں۔ اتنے بڑے پیمانے پر فوج کی نقل و حرکت، توپوں کو نئے علاقے میں لے جانا، اُن کا امونیشن جگہ جگہ پہنچانا چھپ نہیں سکتا۔ صرف گاڑیوں ہی کی حرکت بات سمجھنے کو کافی ہوگی۔ پھر FCNA میں ہزاروں لوگوں کو ان کاروائیوں کا علم تھا، آپ اوپر کے درجے پر جتنی بھی خاموشی رکھیں ISI کے کارندوں سے یہ سب چھپ نہیں سکتا۔ جس ماحول میں یہ سب ہوا، یقیناً نواز شریف صاحب، جو پرائم منسٹر تھے اور جنہیں DG ISI خبریں پہنچاتے تھے، اس کی تیاری سے بے خبر نہیں ہو سکتے۔ اس کے علاوہ میں وثوق سے نہیں کہہ سکتا کہ اُن کو باقاعدہ طریقے سے بتایا گیا یا نہیں، اور اگر بتایا بھی گیا تو کیا اور کتنا بتایا اور کیا تاثر دیا۔ اُن دنوں سننے میں جو باتیں آتی تھیں اُن سے یہی پتا چلتا ہے کہ بتایا گیا تھا۔ ایک صاحب نے تو یہ بھی کہا کہ بریفنگ کے بعد چائے کے دوران نواز شریف صاحب نے اُن سے کہا، "جنرل صاحب، پھر آپ ہمیں کشمیر کب دلوارہ ہیں؟ واللہ عالم۔ مجھے تو یقین نہیں کہ امریکہ بھی اس کاروائی سے لاعلم تھا۔

لوگو مجھے اس شہر کے آداب سکھا دو *

"سر، یہ تجزیہ ٹھیک نہیں ہے۔ در اس کا رگل روڈ کے کٹنے سے سیاچن سیکٹر کی سپلائی بند نہیں ہوتی۔" جنرل مشرف نے پلٹ کر مجھے غصے سے گھورا، میں پیچھے بیٹھا تھا۔ کہا، "آپ JS HQ کے سٹاف کے ساتھ بیٹھیں، اور سمجھیں کہ یہ حساب کیسے لگایا گیا ہے۔ اور اگلے ہفتے آ کر اپنا نتیجہ پھر سے ہمیں بتائیں۔" نیشنل ملٹری آپریشنز سنٹر (NMOC) کی میٹنگ ہو رہی تھی، کارگل لڑائی کے دوران ہر ہفتے ہوتی تھی۔ تمام افواج کے سربراہ، ان کے آپریشنز اور انٹیلی جنس کے سٹاف، JS HQ کا سٹاف، ISI کے سربراہ، سیکرٹری دفاع، اور دفتر خارجہ کے نمائندے، سب حاضر ہوتے۔ وزیر اعظم صاحب، جو اس کا حصہ ہیں، نہیں آتے تھے۔

JS HQ کی طرف سے پریزنٹیشن (presentation) دی جا رہی تھی، جس میں یہ ظاہر کیا گیا تھا کہ در اس کا رگل سڑک کٹ جانے سے سپلائی لائن (supply line) پر صرف تھوڑی سی گاڑیاں رات کو گزر سکتی ہیں۔ قریب ۲۰% ٹرکل (trickle) باقی رہ گیا ہے، جو نومبر کے مہینے میں، زو جیلا پاس پر برف باری کی وجہ سے، بند ہو جائے گا۔ پورا حساب لگا کر بتایا گیا کہ سیاچن کی سپلائی سردیوں کے اختتام تک سوکھ چکی ہوں گی اور دشمن مجبور ہو جائے گا کہ سیاچن سے اپنی سپاہ نکال لے۔ میرا تجزیہ اس سے مختلف تھا۔

میرا ادارہ چونکہ قومی سطح پر دشمن کی صلاحیتوں اور کاروائیوں کا سرکاری تجزیہ کرتا تھا، ہم نے بھی اس پہلو کا تجزیہ کیا ہوا تھا۔ ہر ہفتے میں بھی اس میٹنگ میں موجود ہوتا اور پاکستان کو درپیش خطرات کا تجزیہ (threat picture) پیش کرتا، ساتھ ساتھ اپنی سفارشات بھی۔ اس پیشکش کو جنرل ضیا الدین، DG ISI، نے کبھی پہلے نہیں دیکھا، وہیں سنتے۔ میں نے پہلی مرتبہ پوچھا کہ آپ کو دکھا دوں، تو انہوں نے کہا ضرورت نہیں، تم وہیں پیش کر دینا۔ میرے تجزیے میں ملٹری خدشات کے علاوہ اس جنگ پر اثر انداز تمام پہلوؤں کا جائزہ بھی شامل ہوتا۔ اس پر تبصرے کے بعد جنگ کی زمینی صورت حال DGMO بتاتے، پھر اُس پر تبادلہ خیال ہوتا۔ دفتر خارجہ کے لوگ نہایت شش و پنج کا شکار نظر آتے، حیران رہتے کہ یہ سب کیا ہو رہا ہے۔

میں ہر ہفتے اپنا تجزیہ پیش کرنے کے بعد اپنی سفارشات ضرور دیتا۔ ہر بار اُن کا ایک ہی رنگ ہوتا، کہ اب یہاں تک بات پہنچ چکی ہے، اتنا نقصان ہم اٹھا چکے ہیں، اب بھی اس میں سے کم از کم یہ مقاصد حاصل کئے جاسکتے ہیں۔ ہر ہفتے یہ مقاصد گھٹتے جاتے۔ میں یہی سوچتا کہ اب کر جو بیٹھے ہیں، تو اس میں سے جو نچوڑ سکتے ہیں نچوڑ لیں۔ مگر ان باتوں پر کبھی تبصرہ نہ ہوتا۔ سُن کر آگے بڑھ جاتے۔

چھٹا سفر تشنہ لبی

MO میں ہماری بریفنگ کے دوسرے ہی دن کارگل کی خبر اخباروں میں شائع ہو گئی تھی۔ پھر حکومت شدید تنقید کا نشانہ بنی اور خاصے دباؤ میں آ گئی۔ میں ان دنوں دوسرے مشاہد حسین صاحب سے بھی ملا، جو اطلاعات و نشریات کے وزیر تھے۔ جب اُن سے پوچھا کہ آخر ہندوستان کا میڈیا تو اس بات کو اس قدر بڑھا کر لکھ رہا ہے اور پوری قوم کو جنگ کے لئے تیار کر رہا ہے، ہم اس پر اتنے خاموش کیوں ہیں؟ میں نے اُن سے کہا کہ اسلام آباد میں سفارتی حلقوں کا تجزیہ ہے کہ پاکستان کی حکومت اس لڑائی میں کھڑے ہونے کو تیار نہیں۔ اس پر مشاہد صاحب نے بتایا کہ نواز شریف صاحب کے احکامات ہیں کہ اس بات کو زیادہ نہ اچھالا جائے، اس وجہ سے میڈیا کو دبا ہوا (low key) رکھا ہے۔ یہیں سے نظر آ رہا تھا کہ ہم بھاگنے کو تیار تھے، اور اگر عوام کو زیادہ جوش دلوادیا جاتا تو پھر جنگ سے نکلنا مشکل ہو جاتا، خاصا سیاسی نقصان اٹھانا پڑتا۔ نہ جانے پھر اس آگ میں کو دے ہی کیوں؟

سرینگر، زوجیلا، دراس، کارگل، لیج کی سڑک زو جیلا پاس پر سے گزرتی، جو سرینگر اور دراس کے بیچ واقع تھا۔ نومبر سے اپریل تک برف باری کی وجہ سے یہ پاس بند ہو جاتا، باقی سڑک کھلی رہتی۔ سرینگر سے راستہ کٹ جانے کی وجہ سے ہر سال گرمیوں میں، سردیوں کے موسم کے لئے راشن وغیرہ ذخیرہ (dump) کر لیا جاتا۔ اب تخمینہ تھا کہ کارگل کے مقام پر سڑک کٹنے کی وجہ سے گرمیوں میں صرف ۲۰% سامان جاسکتا ہے، جو سردیوں میں زو جیلا کی وجہ سے بالکل بند ہو جائے گا۔ مگر ان نئے حالات میں ہندوستان اس کاروائی میں کچھ رد و بدل بھی کر سکتا تھا۔ زو جیلا کے پار کارگل تک میلوں لمبی سڑک تھی، جس کے دونوں جانب، پہاڑوں کی موجودگی کے باوجود، راشن ذخیرہ کرنے کی خاصی گنجائش تھی۔ اتنی موزوں نہ صحیح، لیکن ایمر جنسی کا بندوبست ہو سکتا تھا، کچھ کام کر کے بہتر بھی کیا جاسکتا تھا۔ یہ تو نہیں کہ سیاچن کا راستہ ہم کاٹ دیں، اور دشمن ہاتھ پہ ہاتھ دھرے بیٹھا رہے۔ گرمیوں کے موسم میں ۲۰% آگے جاتا رہتا اور ۸۰% یہاں ذخیرہ کرتے رہتے، جو تمام سردیاں کارگل کے ۲۰% ٹرکل سے گزرتا رہتا۔ ڈمپنگ، جو ہر سال سردیوں میں بند ہو جاتی، اس سال کچھ نہ کچھ اس طرح جاری رکھ سکتے تھے۔ اس کی گنجائش JS HQ نے نہیں رکھی تھی۔

دوسری غلطی یہ تھی کہ لیج کے ہوائی اڈے پر صرف انڈین ایئر فورس (IAF) کے کارگو (cargo) جہازوں سے سامان لانے کا حساب کیا گیا تھا۔ یہ جیٹ ایئر فیلڈ ہے اور بڑے جہاز یہاں اُتر سکتے ہیں۔ صرف انڈیا کے کمرشل جہاز ہی کافی تھے، ورنہ اور جہاز کرائے پر بھی لئے جاسکتے تھے۔ ساری ہی ضروریات ان سے پوری ہو سکتی تھیں۔ ہندوستان کوئی چھوٹی سی طاقت تو نہیں کہ اپنے مفاد کا دفاع کرنے سے قاصر ہو۔ پھر لڈاخ سے آنے والی سڑک پر بھی سامان کا حساب نہیں کیا تھا۔ اگرچہ یہ خاصہ لمبا راستہ تھا مگر ہندوستانی فوج اسے رسد کی ترسیل کے لئے استعمال تو کر سکتی تھی۔ میں نے اگلے ہفتے یہ انکشافات (findings) بمعہ حساب کتاب NMOC میں پیش کر دیے، اور کہا کہ یہ مفروضہ درست نہیں کہ سیاچن کی رسد (supplies) سوکھ جائیں گی اور انہیں وہاں سے نکلنا پڑے گا۔ جب میں یہ کہہ چکا تو جنرل

چھٹا سفر تشنہ لبی

مشرف نے کوئی نکتہ نہ اٹھایا اور موضوع ہی بدل دیا، کسی سے کوئی اور بات شروع کر دی۔ ایسے لگا کہ میں کوئی نا اہم سی بات کہہ رہا ہوں، جو بہتر ہے نہ سنی جائے۔ پھر DGMO کی پیشکش شروع ہو گئی۔

جیسے دشمن نے دھوکے سے، چھپی ہوئی کارروائی کر کے سیاچن پر قبضہ کیا تھا، ویسے ہی چھپی ہوئی کارروائی سے ہم سیاچن کو واپس لینا چاہ رہے تھے۔ بنا سوچے سمجھے اور بغیر حوصلہ رکھے، بغیر کسی عزم کے۔ پھر اُس دن کے بعد سے یہ کہنا چھوڑ دیا کہ کارگل میں ہمارا مقصد سیاچن کا راستہ کاٹنا اور دشمن کو مجبور کرنا تھا کہ وہ سیاچن ہمیں واپس کر دے۔ اب موضوع جان بچانے پر آچکا تھا۔

ترانے گائیں تو گٹوں کی آوازیں نکلتی ہیں *

"سر، کشمیر میں ایک اور محاذ کھول دیں"، میں نے روسٹرم کے پیچھے کھڑے ہوئے کہا۔ جنرل مشرف چونک پڑے، پہلے ہی اتنے پریشان تھے، کھسک کر کرسی کے اگلے سرے پر آگئے، پھر مجھ پر برس پڑے، "تم کیا کہہ رہے ہو؟ اتنی بگڑی ہوئی صورت حال میں تم چاہتے ہو کہ میں بات کو اور بگاڑ دوں؟ جنگ کو پھیلا دوں؟" میں بھی روسٹرم کے پیچھے سے باہر نکل آیا، دونوں ہاتھ کمر پر رکھ لئے، "آپ نے جو سوال پوچھا تھا اُس کا کوئی اور حل نہیں ہے۔ اس کے سوا مورچوں کو گرنے سے بچانے کا کوئی اور طریقہ نہیں۔ میں جنگ پھیلانے کا مشورہ نہیں دے رہا، باعزت طریقے سے سپاہ کو نکالنے کا واحد حل تجویز کر رہا ہوں۔ اگر آپ اس کو مناسب نہیں سمجھتے تو کوئی اور طریقہ اپنے مورچوں کو دشمن کے قبضے میں آنے سے اور ان میں پھنسے ہوئے جوانوں کو بچانے کا نہیں ہے۔"

NMOC کی میٹنگ ہو رہی تھی۔ سب ہی بیٹھے تھے۔ کارگل کی سنگلاخ پہاڑوں پر ہماری پوٹیں لگا تار گر رہی تھیں۔ اُن دنوں جنرل مشرف اور جنرل محمود واضح طور پر خاصے پریشان دکھائی دیتے تھے۔ ہر کوئی اس بات پر تبصرہ کرتا۔ اب کارگل سے کسی طرح بچی کچھی عزت بچا کر نکلنے کا طریقہ سوچا جا رہا تھا۔ مجھے پچھلی NMOC کی میٹنگ میں جنرل مشرف نے کہا تھا کہ اس بات کا تجزیہ کر کے بتاؤں کہ پوسٹوں کو گرنے سے کیسے روکا جاسکتا ہے۔ PAF شروع سے ہی اس تنازعے سے باہر رکھی گئی تھی، کہ بات بڑھ نہ جائے، جب کہ اُن کی ایئر فورس لگا تار کاروائیاں کر رہی تھی، ہمارے جوانوں پر برس رہی تھی۔ عجب منطق تھی، پہلے خواہ مخواہ چڑھائی کر دی، جنگ مول لی، پھر اپنے ہاتھ باندھ لئے۔ اُتنا بھی کرنے کا حوصلہ نہ رہا جتنا دشمن کر رہا تھا۔ ڈر گئے۔ ہوائیاں اُڑنے لگیں۔ کیا یہ سب سوچا نہیں تھا؟

تمام زمینی حقائق کا جائزہ لینے کے بعد میں نے NMOC کی میٹنگ میں اپنا تجزیہ پیش کیا۔ دشمن کی کاروائیاں اور دیگر پیردنی حالات بتائے، جو کچھ یوں تھے۔ ہندوستان کی فوج پوری طرح بارڈروں پر نہیں لائی گئی تھی۔ حملہ آور فارمیشنوں کے ہر سیفے کے تھوڑے تھوڑے حصے دکھاوے کے طور پر ہمارے بارڈروں پر پہنچائے گئے تھے۔ بہت سی فوجی ٹرینیں جو منگوائی گئی تھیں، سپاہ کو لے کر نہیں چلی تھیں۔ کچھ واپس لوٹا دی گئی تھیں۔ بارودی سرنگیں نہیں بچھائی گئی تھیں، جس پر کافی خرچہ آتا ہے۔ کشمیر کا ذخیرہ (reserve) ڈویژن مدھوپور ہیڈورکس کے علاقے میں تھا، جس کی سپاہ دفاعی نوعیت (posture) میں سیالکوٹ اور شکر گڑھ دونوں اطراف اپنا جھکاؤ رکھتی تھیں۔ توپ خانے کا ایک بڑا حصہ کارگل کی نظر ہو چکا تھا، اور کشمیر سے پیادہ فوج کی بہت سی یونٹیں بھی۔ سوائے کارگل کے کسی اور جگہ کوئی حملے کی تیاری تک

چھٹا سفر تشدیدی

نظر نہیں آتی تھی، بلکہ وہ ہمارے کسی مزید حملے سے خائف تھے۔ جنرل مشرف بھی اپنی کتاب میں لکھ چکے ہیں کہ ہندوستان کی فوج میں کسی اور جگہ حملہ کرنے کی فوری صلاحیت نہ رہی تھی، اور کشمیر میں ہمارے جوابی حملے (counter offensive) کے لئے حالات سازگار تھے۔

ہندوستان نے صرف ہمیں روکنے کے لئے ایک سیاسی اور ڈپلومیٹک ہنگامہ کھڑا کیا تھا۔ ہر جگہ وہ یہی کہہ رہے تھے کہ اب ہم پوری جنگ لڑیں گے اور پاکستان کو سبق سکھائیں گے۔ امریکہ بھی ہمیں بھارت کے بڑے حملے سے ڈرا رہا تھا۔ دنیا بھی اس ہی وجہ سے خائف تھی۔ دنیا میں ہماری تصویر سہمے ہوئے جانور کی سی تھی۔ افسوس کہ اصلیت بھی یہی تھی۔

ہماری کئی پوسٹیں دشمن کے قبضے میں آچکی تھیں۔ کچھ اور بھی گر چکی تھیں جو اب تک GHQ کورپورٹ نہیں کی گئی تھیں۔ جھوٹ بولنے کے عام رواج کے مطابق غلط رپورٹیں دی جا رہی تھیں۔ باقی پوسٹیں بھی لگا تار دباؤ میں تھیں، گر رہی تھیں۔ کوئی کارگل کے دفاعی علاقے میں ایسا ردِ عمل نہیں تھا جس سے ان پوسٹوں کا گرنا روکا جاسکے۔ کارگل کی سپاہ جو کر سکتی تھی، پہلے ہی کر رہی تھی۔ PAF کو جنگ میں شامل نہیں کرنا چاہتے تھے۔ سپاہ کا مورال بھی گر چکا تھا۔ اب مزید پوسٹوں کو گرنے سے بچانے کا صرف ایک ہی طریقہ تھا، کہ اس جنگ کو کشمیر کے چند اور علاقوں میں پھیلایا جائے، تاکہ دشمن کارگل سے فوج کم کرنے پر مجبور ہو۔ میں نے مشورہ دیا کہ اگر مورچوں کو گرنے سے بچانا چاہتے ہیں، تو کچھ سپاہ سے ۱۲ ڈویژن کے علاقے میں، جہاں سے دشمن کی ذخیرہ (reserve) سپاہ نکال کر کارگل لائی گئی تھیں، ایک چھوٹا محاذ اور کھول دیں، اور کہیں کہ انڈیا نے جوابی حملہ کر دیا ہے۔ ہندوستان کی فوج کارگل کے محاذ سے سپاہ اور توپیں نکالنے پر مجبور ہو جائے گی۔ اُن کے پاس فوری طور پر اور کوئی چارہ نہیں۔ اور ہمارے پاس اپنی سپاہ کو محفوظ کرنے کا اور کوئی راستہ نہیں۔

آخر ۱۹۶۵ء کی لڑائی میں بھی تو یہی کیا تھا۔ اُس کا تو کسی نے یقین نہیں کیا، ہم البتہ اب تک قوم سے یہی جھوٹ بولے جا رہے ہیں کہ جنگ دشمن نے شروع کی، جبکہ اس کا حملہ کشمیر میں ہمارے آپریشن جبرالٹر کی جوابی کارروائی تھی۔ اب تک ۶ ستمبر مناتے ہیں۔ ڈھول بجاتے ہیں۔ اس بار چونکہ انڈیا کا اتنا دباؤ تھا، اور ہم اس حالت میں نظر نہیں آ رہے تھے کہ مزید جارحانہ کارروائی کریں، ہماری بات اتنی آسانی سے ٹالی نہیں جاسکتی تھی۔ لوگ یقین کرتے کہ انڈیا ہی نے حملہ کیا ہوگا، لگا تار حملہ کرنے کی دھمکیاں جو دے رہا تھا۔ جنگ میں دشمن سے جھوٹ جائز ہے، اور دوست کون تھا؟ میں نے کہا کہ اس سے یہ ہوگا کہ کارگل سیکٹر سے ہم پر، کم از کم کچھ عرصے کے لئے، بوجھ کم ہو جائے گا۔ اتنے میں کچھ آبرو بچا کے جنگ سے باہر نکلا جاسکتا ہے۔ جب کارگل سے نکلیں گے تو دوسرے چھوٹے محاذ سے بھی ساتھ ہی نکل آئیں گے۔

خیر، میری منطق صحیح تھی یا غلط، وہ الگ بحث ہے۔ مجھ سے پوچھا گیا کہ مورچے گرنے سے کیسے بچائیں، میں نے واحد حل بتا دیا، جس میں یقیناً پیچیدگیاں تھیں، خدشات بھی۔ جنگ ہے ہی خدشات سے بھری چیز۔ اب اس میں کو دو جو پڑے تھے، پھر خدشات تو ہوں گے۔

چھٹا سفر تشنہ لبی

یہ راستہ لینا ہے یا نہیں لینا، آپ کا فیصلہ تھا۔ یہاں کہنے کا میرا مقصد یہ ہے کہ اتنی بات ہونے کے باوجود، اپنی کتاب میں یہ لکھنا کہ زمین پر ہماری حالت کمزور (precarious) نہیں تھی اور دشمن ہمیں وہاں سے ہرگز نکال نہیں سکتا تھا، غلط ہے۔ یہ NMOC کی آخری میٹنگ تھی۔ چند روز بعد جنگ بندی ہو گئی۔ کیا کوئی جنگ کے اختتام کی حکمت عملی (war termination strategy) تھی؟ یا یوں ہی شرمندگی میں چادر لپیٹنا ہی مقصود تھا؟

کچھ عرصے بعد، جب فوجی حکومت آچکی تھی، تو ایک کور کمانڈر کانفرنس میں کسی کور کمانڈر نے کارگل کا حوالہ دیتے ہوئے اسے قطعی ناکامی (debacle) کہا، جنرل مشرف پھٹ پڑے۔ غصے میں کہنے لگے، "ڈیپیکل! کیسا ڈیپیکل؟ تمہیں پتا ہے کشمیر کا (cause) کو کتنا فائدہ پہنچا ہے؟ کارگل کی وجہ سے دنیا کی توجہ اس پر مرکوز ہوئی ہے۔ اب دنیا کو پتا ہے کہ کشمیر کے لئے ہم کہاں تک جاسکتے ہیں۔ یہ ہماری فتح ہے"۔ اب آخر میں آکر کارگل کی جنگ کے مقاصد اور اہداف ہی بدل دیے گئے، تاکہ جیت کا اعلان کر سکیں۔ چلے تھے سیاچن لینے، دنیا کے آگے کشمیر کا لئے کھڑے ہو گئے اور کہا کہ منزل آگئی۔ ہم اس ہی طرح ہمیشہ جیتتے ہیں۔ سب جانتے ہیں کہ صرف کشمیر کا ہی نہیں ہماری کن کن چیزوں کو کارگل کے شوشے سے دھچکا لگا۔ پورا ملک ہل کر رہ گیا۔ ہزاروں فوجیوں کا بے سود خون بہایا گیا۔ کشمیر وہیں کا وہیں کھڑا ہے۔ پھر مشرف اُسے بیچنے ہندوستان بھی چلے گئے۔ آج ہم اس کی بات کرنے سے بھی ڈرتے ہیں۔

آہستہ آہستہ کارگل کی تصویر مجھ پر کھلی۔ اس کو غلط بیانی سے ڈھانپنے کی کوشش تو سالوں بعد مشرف صاحب کی کتاب آنے پر ہی کھلی۔ جنگ میں شامل اور اس سے منسلک رہنے والے حلقوں کی زبان سے بہت سی حقیقتیں بھی دیر سے منظر عام پر آئیں۔ اوپر سے لے کر نیچے تک کے افسران نے ایک ہی تصویر پیش کی، اور پوری فوج اس سے واقف ہے۔ کارگل میں سپاہ کو تیاری کا وقت بہت کم ملا۔ سنگلاخ پہاڑوں پر قبضہ جمانا تھا، راشن اور اموनिشن دے کر چڑھا دیا گیا۔ دشمن کے خالی مورچے اتنے کام نہ آئے کیونکہ ہماری فوج کافی آگے نکل چکی تھی۔ چٹانوں میں مورچے تو کھود نہیں سکتے تھے، کھلے آسمان کے نیچے پتھر کی ڈھیریوں سے دیواریں کھڑی کر کے مورچے کی شکل دے دی، جنہیں سگھو کہتے ہیں۔ سب کے حوصلے بلند تھے کیونکہ دشمن کے خالی علاقے پر قبضہ کر رہے تھے، اور کافی دنوں تک دشمن کا کوئی دباؤ بھی نہ آیا۔ پھر تخمینہ یہ بتایا گیا تھا کہ چھوٹے موٹے حملے ہوں گے، شدید دباؤ متوقع نہیں۔

جب لڑائی شروع ہوئی تو ہندوستان کے ہوائی جہازوں سے لے کر توپ خانے کی ایک بڑی تعداد وہاں جمع ہو گئی۔ ہم نے PAF کو لڑائی سے باہر رکھا، کیونکہ ہندوستان کا رد عمل دیکھ کر ہم گھبرا گئے، اور بات بڑھانا نہیں چاہتے تھے۔ لگاتار حملے شروع ہو گئے۔ ایک کے پیچھے ایک لہراتی۔ لوگ پتھروں کے پیچھے ہی چھپتے رہے، گو لے قریب بھی گرتے تو سنگڑ ڈھلک جاتے۔ ہوا میں پھٹنے والے گولوں سے کسی کو

کوئی آڑ نہیں تھی۔ پھر ان اُونچے پہاڑوں کی چوٹیوں سے نہ ہی وادیوں کی گہرائی میں نظر آتا تھا اور نہ ہی ان پر فائر کرتا تھا۔ جب دشمن کے حملے شروع ہوئے تو شروع میں وہ بھی چوٹیوں پر قبضہ نہ کر سکے، وادیوں میں بھر گئے، اور ہماری سپاہ کے تمام راستے کٹ گئے۔ لوگ پوسٹوں پر کئی دن بھوکے رہے، زخمیوں کے خون رستے رہے۔ مگر یہ باہمت جوان، پاک فوج کے سپاہی، اور ان کے شیردل کمانڈر، ہمارے میجر اور کیپٹن، آخری حد تک لڑتے رہے۔ کتنی ہی جگہوں پر، جب انہیں واپس نکلنے کا حکم ملا تو انہوں نے انکار کر دیا۔ آخری گولی، آخری سانس تک لڑتے رہے۔ یہی ہیرے آج بھی اس اندھیری رات میں یوں ہی چمکتے ہیں۔ "کیوں؟" نہیں کہتے، صرف "کب"۔ "Yes sir!" کہتے ہیں اور اپنا سرخ نورزمین پر بکھیر دیتے ہیں۔

ہم نے بلا مقصد انہیں آگ میں جھونک دیا۔ پھر کہا اب واپس آ جاؤ، غلطی ہو گئی۔ یہ ہمارے منہ سے نکلے ہر حکم پر جان دیتے ہیں۔ کسی نے نہ سوچا کہ اس مخلص جوان کے خون کی کیا قیمت ہے؟ اس نایاب لہو کو مٹی میں ملا کر کیا حاصل کرنا چاہتا ہوں؟ کسی نے انہیں اپنا بیٹا نہ سمجھا! اپنے ہی ہاتھوں سے انہیں قتل کر دیا۔ پھر ہنس کر کہا، "میں نے بڑا تیر چلایا"۔ لاشیں بھی واپس نہ لیں، ان کی گنتی بھی نہ بتائی۔ کبھی اُس ماں سے جا کر پوچھو، جس کے بیٹے کا نام چوک پر لگا دیا گیا ہے۔ اُس سے پوچھو جس کے بیٹے کی لاش بھی، اور بہت سی لاشوں کی طرح، ہم نے دشمن سے واپس لینے سے انکار کر دیا تھا۔

اور کتنے نو جوانوں کے سینوں پر تمغے سجا کر اور ان کے لئے ترانے گا کر، ہمارے آقا اپنا مقصد حاصل کرتے رہیں گے، ہمارے بچوں کا خون بہاتے رہیں گے؟ کب تک اپنی کوتاہیوں کو یوں چھپاتے رہیں گے؟ اب تو ترانے سن کر خوف آتا ہے۔ اگر با مقصد جنگ ہو تو ہر سپاہی کے لئے اس پاک سرزمین کی مٹی کو اپنے لہو سے سینچنا فخر کی بات ہے۔ یہی سپاہی کی زندگی کا مقصد ہے۔ لیکن جس جنگ کے مقاصد اور حقیقتوں کو، شرمندگی چھپانے کی غرض سے جھوٹ سے ڈھانپ دینا پڑے، اُس جنگ کے لئے خون یوں ہی پتھروں پر ڈول دینا کہاں کا انصاف ہے؟ یہ کیسی قربانی ہے؟ کس کے لئے ہمارے بچے قربان ہوئے؟ ہم اب اور کتنے ترانے سنیں گے؟ کیا کوئی کبھی پوچھے گا؟

ٹھہر گئی آسمان کی ندیا
 وہ جا لگی ہے اُفق کنارے
 اُداس رنگوں کی چاندنیا
 اُتر گئے ساحلِ زمیں پر
 سبھی کھویا، تمام تارے
 اُکھڑ گئی سانس پتیوں کی
 چلی گئیں اونگھ میں ہوائیں
 گجر بجا حکمِ خامشی کا
 توپ میں گم ہو گئیں صدائیں
 سحر کی گوری کی چھاتیوں سے
 ڈھلک گئی تیرگی کی چادر
 اور اس بجائے
 بکھر گئے اُس کے تن بدن پر
 نراس تنہائیوں کے سائے
 اور اُس کو کچھ بھی خبر نہیں ہے
 کسی کو کچھ بھی خبر نہیں ہے
 کہ دن ڈھلے شہر سے نکل کر
 کدھر کو جانے کا رخ کیا تھا
 نہ کوئی جادہ، نہ کوئی منزل
 کسی مسافر کو
 اب دماغِ سفر نہیں ہے
 یہ وقت زنجیرِ روز و شب کی
 کہیں سے ٹوٹی ہوئی کڑی ہے
 یہ ماتمِ وقت کی گھڑی ہے

سہ ماہی

ساتواں سفر

ناپینا مصوّر

سب تاج اچھالے جائیں گے، ہم دیکھیں گے *

"آپ تینوں میں سے ہر ایک انفرادی طور پر اس بات کا مجاز ہوگا کہ حکومت کا تختہ الٹنے کے لئے احکامات جاری کرے۔ میں آپ تینوں کو اس بات کا ذمہ دار ٹھہراتا ہوں، جنرل محمود، جنرل عزیز اور شاہد آپ"، جنرل مشرف نے میٹنگ ختم کرتے ہوئے ہمیں اس سلسلے میں با اختیار کیا اور ذمہ دار ٹھہرایا۔ "یہ اس لئے کہہ رہا ہوں کہ اگر کسی وجہ سے آپس میں آپ لوگوں کا رابطہ نہ ہو سکے، یا کوئی اور دشواری پیش آجائے، تو پھر بھی کارروائی میں رکاوٹ نہ پڑے"، یہ کہہ کر وہ کھڑے ہو گئے۔ شاید یہ بات اس لئے بھی کہی ہو کہ کوئی ایک شخص آخری وقت پر پیچھے ہٹنا چاہے تو بھی کارروائی نہ کرے۔ ہم سب نے انہیں الوداع کہا اور اپنے گھروں کو لوٹ آئے۔

سری لنکا جانے سے پہلے یہ آخری ملاقات تھی۔ فیصلہ یہ تھا کہ اگر ان کی غیر موجودگی میں نواز شریف صاحب انہیں فوج کے سربراہ کی کرسی سے ہٹانے کی کارروائی کریں، تو فوری طور پر حکومت کا تختہ الٹ دیا جائے۔ کئی دنوں سے ان کے گھر پر اس سلسلے کی ملاقاتیں جاری تھیں۔ ان ملاقاتوں میں میرے علاوہ لیفٹیننٹ جنرل محمود، کمانڈر ۱۰ کور، لیفٹیننٹ جنرل عزیز خان، CGS (بعد میں جنرل بنے) میجر جنرل احسان الحق، DGMI (بعد میں جنرل بنے)، بریگیڈیئر راشد قریشی، DG ISPR اور چیف کے پرنسپل سٹاف افسر موجود ہوتے۔

کچھ ہی عرصہ پہلے ۱۲ ستمبر ۱۹۹۹ کو میں نے ڈائریکٹر جنرل ملٹری آپریشنز (DGMO) کا چارج سنبھالا تھا۔ جنرل عزیز CGS تھے۔ ملاقات ہوئی اور حالات حاضرہ پر تبادلہ خیال بھی، نواز شریف صاحب کے کردار پر بھی۔ پچھلے آرمی چیف جنرل جہانگیر کرامت کو یوں نکال دینے پر ہم دونوں نے غم و غصے کا اظہار کیا۔ جس دن انہوں نے نیول کالج، لاہور میں کسی سوال کے جواب میں کچھ ایسا کہہ دیا کہ وہ حکومت کی ناراضگی کا سبب بنا، اُس سے شاید ایک دن پہلے، ۲۹ ستمبر ۱۹۹۸ کو، میں بھی اُس ہی کالج میں خطاب کے لئے مدعو تھا۔ میں ان دنوں ISI میں تھا۔ ملک میں جو کچھ ہو رہا تھا، نیوی کے افسران سے بھرے کمرے میں، اُس پر دل کھول کر اپنی رائے کا اظہار کیا تھا۔ شاید سوچا ہو کہ کہہ دینے سے دل کا بوجھ کم ہو جائے گا۔

میں جہاں بھی بولتا کھل کر ہی بولتا، اور ان دنوں ذہن پر حالات کا اتنا دباؤ تھا، نہ بولنا ظلم ہوتا۔ سورۃ رحمن میں اللہ تعالیٰ فرماتا ہے کہ ہم نے تمہیں بولنا سکھایا، پھر ایسے کڑے وقت میں منہ بند کیسے رکھتا۔ میری تقریر کے بعد حاضرین بہت مشتعل تھے، اور مجھ سے کافی سوال کئے، کہ جب آپ ان سب باتوں سے آگاہ بھی ہیں تو آخر فوج کیوں سوئی ہوئی ہے؟ کیا آپ لوگ یوں ہی آرام سے بیٹھے رہیں گے اور ملک فیض احمد فیض

کو تباہ ہوتا دیکھتے رہیں گے؟ ملک کی سیاست اور جمہوریت کے تصور اور اقدار پر بھی بحث ہوئی۔ کسی نے پوچھا کہ کیا جمہوریت جمہور کی بقا کے لئے ہے، یا جمہور جمہوریت کی بقا کے لئے؟ جو نظام عوام کے خون پر پلتا ہو، کیا اُس کا ساتھ دینا قوم سے وفاداری ہو سکتی ہے؟ میرے پاس ان سوالوں کا کوئی جواب نہ تھا، کہہ دیا کہ فوج جو کر سکتی ہے مجھے یقین ہے کر رہی ہوگی، اور آئندہ جو مناسب سمجھے گی کرے گی۔ اپنی بے بسی کا اظہار بھی کیا۔ مجھے ذرا علم نہ تھا کہ اگلے دن آرمی چیف کو ان سے خطاب کرنے آنا ہے اور اب یہ سوال اُن سے دہرائے جائیں گے۔ میرے ذہن میں کوئی فتور نہیں تھا، بس دل کی پکار الفاظ میں ڈھل گئی۔

اُن دنوں اخباروں میں بھی اس ہی قسم کے تبصرے آتے رہتے۔ شاید ان ہی سے یہ رنگ سب نے لیا تھا۔ کچھ زمینی حقائق بھی ایسے ہی تھے۔ فوج کے کچھ سینئر افسران کو پارسل کے ذریعے تحفے کے طور پر کچھ لوگوں نے چوڑیاں بھی بھیجی تھیں۔ یہ خبریں بھی اخبار میں آتی رہیں۔ کیا ان سب کے پیچھے بھی کسی کا ہاتھ تھا؟ میں کہہ نہیں سکتا۔ آج اتنا کچھ دیکھ چکا ہوں کہ کسی بات کا اعتبار کرنے سے ڈرتا ہوں۔

پہلی ملاقات میں جنرل عزیز سے خوشگوار ماحول میں اسی قسم کے موضوعات پر گفتگو ہوتی رہی۔ کہنے لگے حکومت فوج کو پولیٹیسائز (politicise) کرنا چاہتی ہے، یعنی اُس کو بھی سیاسی رنگ میں رنگنا چاہتی ہے، تاکہ جو بھی فیصلے حکومت کرے فوج اُس کا ساتھ دے۔ لوٹ مار پر چپ رہے۔ جو افسر سیاسی حکمران سے ذاتی وفاداری رکھتے ہوں صرف وہ ہی ترقی پا سکیں، قابلیت کی کوئی اہمیت نہ ہو۔ ایک چیف نکال کر پھینک چکے ہیں، اب دوسرے کے پیچھے ہاتھ دھو کر پڑے ہیں۔ اس طرح تو یہ فوج کو تباہ کر کے چھوڑیں گے۔ ایک ہی ادارہ ان کے ہاتھوں سے بچا ہے، اس کا بھی ستیاناس کرنا چاہتے ہیں۔ پھر اس ملک کو تباہی سے بچانے والا کون رہ جائے گا؟ میں نے بھی ان باتوں کو مانا کہ بالکل یہی ہوتا نظر آ رہا ہے۔ میں ISI میں رہتے ہوئے بھی کافی کچھ دیکھ چکا تھا اور سن چکا تھا۔ سب کے ہی تاثرات ایسے تھے۔ سفارتی حلقوں سے لے کر افواج کے ارکان، سول سوسائٹی، غریب عوام، جن سے بھی میں ملتا، انہیں حکومت کے خلاف نفرتوں سے بھرا ہوا ہی پاتا۔

ایک آدھ دن اپنے کام میں مشغول رہا، پھر CGS سے ایک ملاقات اور ہوئی جس میں DG ملٹری انٹیلی جنس (MI) میجر جنرل احسان الحق بھی موجود تھے۔ انہوں نے بتایا کہ لیفٹیننٹ جنرل ضیا الدین نواز شریف صاحب سے گٹھ جوڑ کر رہے ہیں کہ جنرل مشرف کو ہٹا کر خود چیف بن جائیں۔ نواز شریف کا ارادہ پختہ ہوتا نظر آ رہا ہے اور یہ فوج کی تباہی پر تلے ہوئے ہیں۔ کچھ دن ملاقاتوں میں DGMI اسی قسم کی خبریں لاتے رہے اور ہم ان پر تبصرے کرتے رہے۔

جو تفصیلات بعد میں علم میں آئیں، اُن سے یہی لگتا ہے کہ جنرل ضیا الدین نواز شریف صاحب سے فوج کے سربراہ کے خلاف، ذاتی مفاد میں، گٹھ جوڑ کر رہے تھے۔ اُن کا کردار یہ ہونا چاہیے تھا کہ وہ اس صورت حال کو ڈی فیوز (defuse) کرنے کی کوشش کرتے۔

وہی ایک شخص تھا جو ان دونوں کی کدورتیں ختم کر سکتا تھا۔ اُدھر وہ وزیر اعظم کو بھڑکار رہے تھے، اور اُدھر DGMI چیف کو خبریں پہنچا رہے تھے۔ دونوں ہی ایک دوسرے سے خائف تھے۔

پھر ایک شام جنرل مشرف نے ہم سب کو اپنے گھر بلا لیا۔ کچھ دیر سیاسی حالات پر اور نواز شریف اور جنرل ضیا الدین کے بارے میں اُس ہی قسم کی باتیں کیں، جو جنرل عزیز اور جنرل احسان پہلے بھی کرتے رہتے تھے۔ جنرل احسان نے جنرل مشرف کو سبکدوش کرنے کے بارے میں نواز شریف اور جنرل ضیا کی سرگرمیوں کے بارے میں کچھ خبریں دیں۔ پھر جنرل مشرف نے کہا کہ ہمیں ہر حالت میں فوج کو تحفظ دینا ہوگا۔ اگر اس بار پھر نواز شریف صاحب آرمی چیف کو ہٹانے کی کوشش کرتے ہیں تو اُن کو وزیر اعظم کی کرسی سے ہٹانے کے سوا اور کوئی راستہ ہمارے پاس نہیں۔ ہمیں حکم دیا کہ اس سلسلے کی تیاری کر لیں۔

اس موضوع پر بھی بات ہوئی کہ تختہ اُلٹنے کے بعد، فوج کا حکومت کرنے کا کوئی ارادہ نہیں، اور نہ ہی مارشل لاء لگایا جائے گا۔ جنرل مشرف نے جمہوریت پر اپنا اعتماد ظاہر کیا اور کہا، لیکن ایسی جمہوریت جو عوام کی صحیح نمائندگی کرتی ہو، انہیں لوٹنے پر ہی نہ لگی رہے۔ سیاست کے نظام پر بھی بات ہوئی۔ اُنہوں نے کہا کہ نظام میں کچھ ایسی تبدیلیاں کریں گے کہ اچھے لوگ حکومت کی کرسیوں پر فائز ہو سکیں اور چور بازاری کا ماحول ختم ہو۔ پھر شفاف الیکشن کرا کے، حکومت عوام کے بہترین نمائندوں کو سونپ دیں گے۔ فوج کا کام حکومت چلانا نہیں۔

پھر ایک شام اور اسی طرح ملاقات ہوئی اور تازہ ترین صورت حال جنرل احسان نے پیش کی۔ ہم نے اپنی تیاریوں کے بارے میں بتایا۔ کچھ کا خیال ہے کہ فوج میں تختہ اُلٹنے کا منصوبہ تیار ہوتا ہے۔ ایسا نہیں ہے۔ فوج میں کسی بھی غلط کام کا یوں کھل کے حکم نہیں دیا جاسکتا۔ فوج کی نہ ایسی تہذیب ہے اور نہ ہی رواج۔ البتہ کچھ لوگ مل کر سازش کر سکتے ہیں، جیسا اب ہو رہا تھا۔ ویسے بھی تختہ اُلٹنا کوئی ایسا پیچیدہ کام تو ہے نہیں جس کے لئے کوئی لمبی منصوبہ بندی کی ضرورت ہو۔

میں نے بھی اپنی تیاری کے بارے میں بتایا کہ چیف کے حکم کے مطابق، ایک متبادل منصوبہ سپیشل سروسز گروپ (SSG) پر مبنی بھی بنالیا ہے، جس میں ہیلی کاپٹروں کے ذریعے کارروائی ہوگی۔ اس پر چیف نے اجازت دی کہ اُن کے چُنے ہوئے اشخاص کو اعتماد میں لے سکتا ہوں تاکہ تیاری مکمل کی جاسکے۔ میں نے اس خدشے کا اظہار کیا کہ آپ بنا حفاظتی دستے کے پرائم منسٹر ہاؤس میں جاتے ہیں، ایسا نہ ہو کہ وہ آپ کو وہیں بٹھالیں اور نیا چیف لگا دیں۔ پھر نئے چیف کے فعال ہونے تک آپ کو وہیں رکھیں، لیکن جنرل مشرف نے اس صورت حال کو ممکن نہ سمجھا۔

شاید ایک یا دو ملاقاتیں اور ہوئیں، صحیح یا نہیں۔ کسی ایک ملاقات میں جنرل احسان نے بتایا کہ نواز شریف صاحب جنرل مشرف کو ہٹانے کا فیصلہ کر چکے ہیں، اور اس سلسلے کی ایک خفیہ ملاقات دہلی میں بھی ہوئی ہے، جس میں جنرل ضیاء بھی شامل تھے۔ لیفٹیننٹ جنرل طارق پرویز (کوئٹہ کے کور کمانڈر) کی بے وفائی اور نقل و حرکت کا قصہ بھی جنرل احسان نے بیان کیا کہ یہ کس طرح نواز شریف صاحب کے ساتھ اس کھیل میں شامل تھے۔ ان ہی حرکات کی وجہ سے ان کو ریٹائر کر دیا گیا تھا۔ آٹھ دس دن چھٹی دے کر ریٹائرمنٹ کی تاریخ آگے بڑھانے پر میں نے اعتراض کیا، کچھ اور لوگوں نے بھی۔ جنرل مشرف نے کراچی کور کمانڈر لیفٹیننٹ جنرل مظفر عثمانی پر پورے بھروسے کا اظہار کیا، مگر لاہور کے بارے میں اتنے پُر اعتماد نہ تھے۔

۱۱۱ بریگیڈ کو تیاری کا حکم دے دیا گیا تھا۔ اس سلسلے میں کچھ خطوط بھی بریگیڈ ہیڈ کوارٹر سے یونٹوں کو لکھے گئے، جو کسی نے لا کر مجھے بھی دکھائے۔ اس بات پر میں نے ایک ایسی ہی میٹنگ میں جنرل مشرف کے سامنے نکتہ چینی بھی کی، کہ بات اس طرح کھول کرنے کی جائے کہ باہر نکل جائے۔ ظاہر ہے خط کسی کلرک نے ٹائپ کیا ہوگا، پھر کسی کلرک نے کھولا ہوگا، یونٹ کی ڈاک میں ایڈ جوائنٹ صاحب نے دیکھا ہوگا۔ سب کو خبر پھیل چکی ہوگی۔ مگر میری شکایت ٹال دی گئی۔ جنرل محمود بعد میں ناراض بھی ہوئے کہ میں نے یہ بات کیوں کہی۔ میری باتوں میں کوئی پوشیدہ پہلو نہ ہوتا، اور میرے اس بچپنے سے لوگ خائف رہتے۔ میں نے تو ایک سازشی کے طور پر سازشیوں کے گروہ میں کھل کر بات کی۔ مقصد شکایت نہیں تھا۔ مگر آج اتنے دن گزر جانے کے بعد سوچتا ہوں کہ اس طرح کا خط لکھنا غلطی نہیں ہو سکتی۔ اتنی بیوقوفی کوئی نہیں کرتا۔ پھر کیا مقصد تھا بات یوں کھولنے کا؟ شاید سوچا ہو کہ ISI کو یہ خبر ضرور پہنچے گی اور اس طرح وزیر اعظم صاحب کو بھی علم ہوگا کہ فوج انہیں ہٹانے والی ہے۔ اس کے ڈر سے نواز شریف صاحب فوج کے چیف کو ہٹانے کی کوشش کریں اور یوں فوج کو حکومت گرانے کا بہانہ مل جائے۔ کہہ نہیں سکتا، شاید صرف یہ میری سوچ ہی ہو۔

میں کب سے اس انتظار میں تھا کہ کوئی بہتر نظام اس ملک میں آئے جو غریب کے دکھ درد کا مداوا کرے۔ اس تمام عرصے میں ذرا خیال نہ آیا کہ میں کوئی غلط قدم اٹھانے لگا ہوں۔ اور نہ ہی کسی قسم کا خوف دل میں اٹھا۔ آج پلٹ کر دیکھتا ہوں تو ہول اٹھتا ہے۔ جو کچھ بعد میں فوج کی حکومت میں ہوا، اس کا اندازہ اُس وقت میں نہیں لگا سکا تھا۔ خواب سے جاگنے میں دیر کر دی۔ کارگل پر جنرل مشرف کی غلط بیانیوں تو بہت بعد میں کھلیں اور اُس وقت کون جانتا تھا کہ کس انجام پر وہ اس ملک کو پہنچائیں گے۔ اُن دنوں جنرل مشرف کی باتوں کو دل کے اتنا قریب پایا اور ایسا یقین کیا جیسے سب کچھ بدلنے ہی والا ہے۔ لگا ان سا مخلص اور کوئی نہیں۔

ہر فوجی کو اپنے کمانڈر پر پورا بھروسہ ہوتا ہے، یہی فوج کی طاقت ہے۔ پھر اُن کی شخصیت ہی کچھ ایسی بھرپور تھی کہ اُن کی باتوں کا یقین کرنے پر دل فوری آمادہ ہو جاتا۔ اُن کی خوش اخلاق طبیعت، خود اعتمادی اور ولولہ انگیز شخصیت سے میں بہت متاثر تھا، اور سمجھا کہ یہی

ساتواں سفر ناپیدامصور

پاکستان کے مسائل کا حل ہیں۔ جلد ہمیں ایک نیا نظام مل جائے گا، جس میں ہر ایک کو انصاف ملے گا۔ جو کچھ سر پر رکھا ہے، اُتار پھینکیں گے۔ منصف اور ہمدرد حکمران ہوں گے۔ ملک بہاروں سے کھل اُٹھے گا، سوچا اللہ ہی نے ایسے حالات پیدا کر دیے ہیں۔ میرے لئے بہت فخر کی بات تھی کہ میں اس تبدیلی کا حصہ ہوں۔ میں نے اللہ کا شکر ادا کیا کہ اُس نے مجھے اس کام کے لئے چنا، اور نہایت انہماک سے تیاریوں میں لگ گیا۔

جب فوجی حکومت کے نئے نئے دن تھے تو فیض صاحب کے اُمنگوں بھرے الفاظ، "سب تاج اُچھالے جائیں گے، ہم دیکھیں گے" جگہ جگہ جہاں جنرل مشرف ہوتے قصیدے کے طور پر سنائی دیتے۔ وہ بھی اس پر خوب جھومتے اور حاضرین بھی۔ یہ سلسلہ بہت دنوں تک جاری رہا، پھر کچھ عرصے بعد، جب کچھ نہ بدلا، آہستہ آہستہ یہ نغمہ ایک طنز کی صورت اختیار کرتا گیا اور لوگوں نے جنرل مشرف صاحب کی تیوری دیکھ کر اسے بجانا بند کر دیا۔ آج پھر دل میں یہی ہوک اُٹھتی ہے۔

پاکستان کے آئین پر میں نے بھی قسم اُٹھائی تھی، مگر صرف میں نے ہی نہیں، تمام حکمرانوں اور ججوں نے بھی تو قسم اُٹھائی تھی۔ ان میں سے تو کسی کو آئین کا کوئی پاس نہ تھا۔ سپریم کورٹ پر حملہ بھی کیا، کسی نے نہ پوچھا کہ آئین کہاں گیا؟ کیا چور بازاری کی آئین اجازت دیتا تھا؟ کیا سیاسی مفاد میں اپنے ہی لوگوں کا قتل عام آئین کا حصہ ہے؟ کیا عدالتوں میں ججوں کی خریداری آئین کے مطابق ہوتی ہے؟ چیف جسٹس کی بھی؟ کیا پولیس آئین کے مطابق عوام پر ظلم کرتی ہے؟ کیا عوام کا خون چوس کر جیسیں بھرنا میرے گناہ سے کم تھا، اُس کی آئین میں اجازت تھی؟ کیا صرف میں ہی مجبور تھا کہ آئین کا پاس کرتا؟ کیا آئین کی اہمیت صرف حکمران کی کرسی بچانے تک ہے، جس کو ہلانے کی سزا موت لکھی گئی ہے؟ باقی ہر گناہ کی معافی ہے۔

یہ بدبودار نظام جمہوریت کا ایک تماشہ ہے، جس میں جمہوریت بچانے کے نام پر سب اپنے مفادات کے لئے ایک دوسرے کو تحفظ دیتے ہیں۔ صرف اپنی غرض پوری کرتے ہیں۔ کرسی قائم رہے، پیسہ بنتا رہے، عیاشی چلتی رہے، عوام بھاڑ میں جائیں۔ سیاست دان بھی، بڑے بڑے عہدوں پر فائز حکومت کے کارندے بھی، دولت سے لپٹے ہوئے وہ تمام ارباب اختیار بھی جو پیسے چباتے ہیں مگر بھوک نہیں مٹی، اور صد افسوس کے ساتھ، لالچی دانشور بھی، سب ہی اس بھیا نک کھیل میں شامل ہیں۔ کچھ کہو تو سب ایسے کھڑے ہو جاتے ہیں جیسے آئین کی یہ کتاب آسمان سے اُتری ہوئی کوئی پاک چیز ہو، بلکہ اُس سے بھی اونچی۔ قرآن کو تو بس چومو اور رکھ دو، اس کے احکامات کی خلاف ورزی پر کوئی آواز نہیں اُٹھتی۔ اور اس نظام کو بنایا کس نے؟ ان ہی خود غرض سیاست دانوں نے، جنہوں نے اسے اپنے مفادات کو تحفظ دینے کے لئے ڈھالا، پھر قبر کے پتھر کی طرح قوم کو اس کے نیچے دبا دیا۔ مَرُ دوں کی سجدہ گاہ! سوچا اگر سولی چڑھوں گا تو شہید ہوں گا۔

تنہا نہیں لوٹی کبھی آواز جرس کی *

"سر، جلدی ٹی وی لگائیں، دیکھیں کیا آرہا ہے، جنرل ضیاء کو نیا آرمی چیف بنادیا گیا ہے"، MO سے ایک کرنل صاحب کا فون تھا۔ اکتوبر کی بارہ تاریخ ۱۹۹۹ کی شام، تقریباً پانچ بج رہے تھے، میں ابھی دفتر سے گھر پہنچا ہی تھا۔ گیسٹ روم سے نکل کر اپنے نئے گھر میں آئے ہوئے ہمیں شاید دو یا تین روز ہوئے تھے، سامان بھی پورا نہیں کھلا تھا۔ سوٹ کیسوں کو پھلانگتا ہوا فوراً ہی واپس دفتر کی طرف بھاگا۔ جاتے ہوئے انجم سے کہا، "گیسٹ بند کروالو۔ اور ہاں، میرا لپ ٹاپ (laptop computer) بھائی کے گھر بھجوادو"۔ اس میں حکومت کا تختہ الٹنے کی ساری تفصیلات پر کام کیا تھا۔ نہ جانے آج کیا ہوگا۔ اگر ناکام رہا تو ----، "شاید آنے میں دیر ہو جائے ---- کہہ نہیں سکتا کتنی"۔ انجم ان تمام باتوں سے ناواقف تھی۔ میں نے کبھی اُسے اپنے کام میں نہیں الجھایا۔ دفتر کے پیچ و خم سے ناواقف ہی رہتی۔ مگر آج مجھے اس تیزی سے نکلنے دیکھ کر کچھ پریشان سی ہو گئی۔ گھبراتی تو وہ نہیں تھی، پھر اتنا عرصہ ساتھ رہ کر کچھ انجانے حالات کا سامنا کرنے کا حوصلہ بھی ہو گیا تھا۔ کچھ پوچھ رہی تھی، لیکن میں نکل چکا تھا۔ یہی ہوگا کہ کھانے پر آجائیں گے نا؟ گھر پر کوئی گارڈ نہیں رکھتا تھا، اُس وقت خیال آیا کہ ان دنوں رکھنی چاہیے تھی۔

گاڑی لے کر سڑک پر نکلا تو ادھر ادھر دیکھتا رہا۔ مجھے خوف ہوا کہ راستے میں روک نہ لیا جاؤں۔ اگر جنرل ضیاء کا اندازہ تھا کہ فوج حکومت کا تختہ الٹنا چاہتی ہے تو اس موقع پر فوج کا ردِ عمل لازم تھا اور یہی موقع تھا کہ کاروائی کو روکا جاسکے۔ اُن دنوں ISI کے پاس SSG کی کافی سپاہ ہوتی تھی۔ تین لوگوں کو ہی تو روکنا تھا۔ ۹/۱۱ سے پہلے گارڈ ساتھ لے کر چلنے کا رواج بھی نہ تھا، آسانی سے سارا معاملہ ٹھپ کیا جا سکتا تھا۔ مگر کوئی رکاوٹ کہیں نہ ملی۔ جنرل عزیز اور جنرل محمود بھی ایک ساتھ ٹینس کھیل رہے تھے، وہیں ٹھہرائے جاسکتے تھے۔ حکومت کو اس ردِ عمل کی توقع ضرور تھی، کیونکہ اسلام آباد میں جگہ جگہ پولیس تعینات کی گئی تھی اور پولیس کی بکتر بند گاڑیاں سڑکوں پر کھڑی تھیں۔ ہم نے بھی بے وقوفی کی کہ گارڈ نہ رکھی اور اُن کے ہاتھ سے بھی سنہری موقع نکل گیا۔ جتنا بھی سوچو، کچھ نہ کچھ رہ ہی جاتا ہے۔ اللہ ہی جدھر چاہے پورا کرتا ہے۔

دفتر پہنچ کر جنرل عزیز کو فون کیا، پتا چلا کہ جنرل محمود ۱۱۱ بریگیڈ کو "گو" (go) دے چکے ہیں۔ کہنے لگے تم باقی جگہوں پر کاروائی شروع کرواؤ، میں دفتر پہنچ رہا ہوں۔ سب سے اہم مسئلہ تو اسلام آباد، اور راولپنڈی کا ہی تھا، ان میں ہونے والی کاروائیوں کو مانیٹر

ساتواں سفر ناپیامصور

(monitor) کرنا تھا۔ صدر اور وزیر اعظم کے گھروں اور دفاتروں کے علاوہ، ٹیلیفون ایکس چینجز اور ان کا سارا مواصلاتی نظام، موبائل ٹیلیفون کا نظام، ٹی وی اور ریڈیو سٹیشن، ہوائی اڈہ، ریلوے سٹیشن، بجلی کا نظام، شہر سے آنے جانے کے راستے اور ایسی اور مختلف اہم چیزوں کو بھی اپنے قابو میں کرنا تھا۔ فوج کے بھی مواصلاتی نظام کو دیکھنا تھا۔ ان سب کاروائیوں پر نظر رکھنی ضروری تھی۔ پہلے سے تمام کو احکام تو دیے نہیں تھے، کہ سب اپنا اپنا کام جانتے ہوں۔ ایک ایک کو بتانا تھا، ہر لمحے کی خبر رکھنی تھی۔

جب جنرل عزیز میرے دفتر پہنچے تو انہوں نے کہا کہ کراچی کے کور کمانڈر سے میں خود بات کر لوں گا، آپ باقی چیزوں کو سنبھالیں۔ یہ کہہ کر اپنے دفتر چلے گئے۔ کچھ دیر بعد لوٹے، اور پھر میرے پاس ہی بیٹھ گئے۔ کبھی اٹھ کر چلے جاتے، پھر کچھ دیر میں واپس آ جاتے۔ اس طرح اُن کو بھی خبر ہوتی، کیونکہ سارا کام MO سے ہی ہو رہا تھا۔ میرے پاس فوج کا سب سے بہترین سٹاف تھا، جو ذرا نہ چوکتا۔

جنرل مشرف سری لنکا سے چل چکے تھے، جہاز کراچی کی طرف پرواز میں تھا۔ ملیر کے ڈویژن کمانڈر میجر جنرل افتخار خان کو فون کیا، حالات بتائے اور کہا کہ فوراً ایئر پورٹ پہنچیں اور اُس کا کنٹرول سنبھال لیں، جنرل مشرف کا جہاز آنے والا ہے۔ انہوں نے کہا کہ ابھی ایئر پورٹ پہنچتے ہیں۔

لاہور فون کیا تو پتا چلا کہ کور کمانڈر لیفٹیننٹ جنرل خالد مقبول غیر حاضر ہیں۔ ڈھونڈنے پر پتا چلا کہ گوجرانوالہ گالف کھیلنے گئے ہوئے ہیں۔ کور کمانڈر جب بھی اپنے علاقے سے باہر جاتے ہیں، CGS کو لازماً خبر ہوتی ہے، لیکن آج کسی کو اُن کی لاہور سے غیر حاضری کا پتا نہیں تھا۔ گالف کورس میں بھی وہ کافی دیر نہل سکے۔ میجر جنرل طارق مجید (بعد میں جنرل بنے اور چیرمین جوینٹ چیف آف سٹاف کمیٹی تعینات ہوئے) کو فون کیا، جولاہور میں ڈویژن کمانڈ کر رہے تھے۔ اُن کو تمام احکامات دیئے، اور کہا کہ آپ کور کمانڈر کے آنے تک کور کی کمانڈ سنبھال لیں۔ قابل اور بھروسے والے افسر تھے اور انہوں نے نہایت حوصلے اور خوش اسلوبی سے لاہور کو سنبھالا۔

کوئٹہ میں کور کمانڈر پر تو بھروسہ رہا نہیں تھا، دو ڈویژن کمانڈر تھے، دونوں ہی غیر حاضر اور تمام حالات سے بے خبر تھے۔ پتا چلا کہ دونوں کور کمانڈر کے ساتھ اُن کے دفتر میں بیٹھے ہیں۔ میٹنگ چل رہی ہے۔ یقیناً کور کمانڈر کو پتا تھا کہ کیا ہونے والا ہے، اسی لئے انہوں نے دونوں جنرلوں کو اپنے پاس ہی رکھا، کہ ان کو کوئی احکامات نہل سکیں۔ بعد میں پتا چلا کہ جنرل TP ٹی وی دیکھتے رہے اور لگاتار لوگوں سے فون پر حالات پوچھتے رہے۔ کوئی چارہ سمجھ نہ آیا۔ پھر ایک بریگیڈ کمانڈر بریگیڈیئر غففر (بعد میں میجر جنرل بنے) جو میرے کورس میٹ تھے لیکن

ابھی پروموٹ نہیں ہوئے تھے، اُن سے بات کی اور صورتِ حال بتائی۔ اُن کو بتایا کہ دونوں ڈویژن کمانڈروں کو کور کمانڈر نے اپنے دفتر میٹنگ کے بہانے بٹھایا ہوا ہے، اور اس کے علاوہ اور کوئی چارہ نہیں کہ اب یہ تمام کام آپ ہی کریں۔ اُنہوں نے حامی بھری، پھر کوئٹہ کو سنبھالا بھی۔

پشاور کے کور کمانڈر لیفٹیننٹ جنرل سعید الظفر کے بارے میں جنرل مشرف اتنے پُر اعتماد نہیں تھے۔ جب وہ سری لنکا جا رہے تھے، تو آخری ملاقات میں یہ مسئلہ سامنے آیا کہ اُن کے جانے پر فوج کی کمانڈ سوچنے کے بارے میں کیا کیا جائے۔ اُصولی طور پر جب بھی چیف باہر جاتے ہیں، فوج کی کمانڈ سب سے سینئر کور کمانڈر کو دی جاتی ہے۔ فوج کی ہر سطح پر یہی دستور ہے کہ نچلے کمانڈروں میں سب سے سینئر کو کمانڈ سونپی جائے۔ کبھی کمانڈ سونپنے بغیر کمانڈر اپنی سپاہ کو نہیں چھوڑتا۔ اب پشاور کور کمانڈر کو ایسے موقع پر فوج کی کمانڈ دینے پر وہ رضامند نہ تھے، اس لئے بغیر کسی کو کمانڈ سونپنے چلے گئے۔ کہہ دیا تھا کہ اس مسئلے کو نہ اٹھاؤ۔ اگر اُن کی غیر حاضری میں کوئی جھگڑا کھڑا ہو جاتا تو ملک میں آفت آ جاتی۔ فوج بغیر کمانڈر کے تھی۔ جنرل عزیز نے مجھ سے کہا کہ آج بھی اُن سے بات نہ کروں، اور پشاور کو اس کا روائی سے باہر ہی رہنے دوں۔

پھر راولپنڈی کے ارد گرد دفاعی سپاہ بھی تعینات کرنی تھی۔ یہ تو نہیں پتا تھا کہ پشاور یا کھاریاں کی سمت سے کوئی دخل اندازی ہوگی یا نہیں۔ وہاں بہت مضبوط سپاہ موجود تھیں۔ سب تو اس منصوبے میں پہلے سے شامل تھے نہیں، کیا پتا تھا اُن کی وفاداریاں کس سمت بیٹھیں۔ مسئلہ صرف فوج اور رسول حکومت کا نہیں تھا، فوج کا ایک نیا سربراہ تعینات ہو چکا تھا، جو ISI جیسے ادارے کا سربراہ تھا اور فوج میں اُس کی عزت تھی، اثر و رسوخ رکھتا تھا۔ پھر اس مسئلے کی کچھڑی دونوں جانب سے کئی دنوں سے پک رہی تھی، نہ جانے کون کدھر تھا۔ راولپنڈی میں تو ایک ہی بریگیڈ تھا، جو اسلام آباد کی نظر ہو گیا۔ ضرورت کے تحت ۱۰ کور کا ڈویژن منگلا سے منگوا یا، جس کی کمانڈ میجر جنرل عارف حسن (بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے) کر رہے تھے۔ یہ سپاہ کھاریاں اور پشاور سے مداخلت کی صورت میں، یقیناً کافی تھی، خدا نخواستہ اگر ایسا مسئلہ اُٹھ جاتا کہ فوج آپس میں الجھ جاتی، تو تباہ ہو جاتی۔ بس صرف ایک ایسی صورتِ حال پیدا کرنی تھی کہ مداخلت کرنے والا سوچے، کہ مداخلت کا فوج کے لئے کیا انجام ہو سکتا ہے، اور باز رہے۔

اسلام آباد میں پرائم منسٹر اور پریذیڈنٹ ہاؤس گھیرے میں لئے جا چکے تھے۔ پھر میں نے پریذیڈنٹ ہاؤس کی بنالین سے ایک میجر صاحب کچھ سپاہ کے ساتھ ٹی وی سٹیشن کو کنٹرول میں لینے کے لئے بھیجے تاکہ وہاں سے جو لگاتار نئے چیف کورینک کے بیچ لگانے کی ویڈیو چل رہی تھی اُسے بند کروایا جائے۔ تب یہ سلسلہ بند ہوا۔ مگر کچھ دیر میں پھر ٹی وی سٹیشن سے جنرل ضیاء اور نواز شریف کی ویڈیو چلنی شروع

ہو گئی۔ میں نے جب پتا کیا تو بتایا گیا کہ ٹی وی سٹیشن پر تو ہمارا کنٹرول ہو چکا ہے، نہ جانے کیا مسئلہ ہے۔ اتنا بڑا سٹیشن ہے، ہو سکتا ہے کنٹرول روم نہ مل رہا ہو یا کوئی اور مسئلہ پیش ہو۔ میں نے کہا اگر ان سے ٹی وی سٹیشن نہیں سنبھالا جاتا تو اُسے بند کروادو۔ ابھی وقت نہیں تھا کہ میں اس مسئلے میں الجھتا۔ جب ٹی وی سٹیشن پر بھیجے ہوئے افسر سے کوئی رابطہ نہ ہو سکا تو انہوں نے ایک اور افسر کے ساتھ کچھ سپاہی یہ حکم دے کر بھجوائے کہ ٹی وی کی نشریات بند کر دی جائیں۔

جب ٹی وی پر نواز شریف صاحب کی ویڈیو چلنی بند ہوئی، تو انہوں نے بریگیڈئیر جاوید اقبال کو بھیجا، جو PM کے سٹاف افسر تھے، کہ دیکھ کر آئیں کیا مسئلہ ہے۔ جب وہ وردی میں وہاں پہنچے تو وہاں موجود میجر صاحب نے انہیں سیلوٹ کیا اور دستور کے مطابق اپنی کاروائی کی رپورٹ دی، بتایا کہ میں نے نئے چیف کی ویڈیو بند کروادی ہے۔ انہوں نے سمجھا بریگیڈئیر صاحب اُن کے ہی ساتھ ہیں۔ بریگیڈئیر صاحب نے انہیں پھسلا کر اُن کا ہتھیار لے لیا اور تمام سپاہ کو ہتھیار لینے کے بعد ایک کمرے میں کیا، اور باہر سے دروازہ بند کر کے تالا لگا دیا۔ ٹی وی والوں کو حکم دیا کہ وہی ویڈیو چلاتے رہیں اور اعلان کرتے رہیں کہ نیا آرمی چیف لگایا جا چکا ہے، اور ٹی وی سٹیشن کے گیٹ پر بھی تالا لگا کر واپس PM ہاؤس چلے گئے۔ وہاں گیٹ پر موجود سپاہیوں نے نہ ہی انہیں باہر جانے سے روکا اور نہ ہی واپسی پر۔ پھر جب اور سپاہی ٹی وی سٹیشن پہنچے تو انہوں نے آکر دوبارہ ٹی وی سٹیشن کا کنٹرول سنبھالا، اور بند کمرے سے اپنے ساتھیوں کو نکالا۔ جو ٹی وی پر سپاہیوں کی گیٹ پھلانگتے ہوئے تصویریں دکھائی جاتی تھیں وہ ان ہی کی تھیں۔ کچھ ہی دیر میں ٹی وی سٹیشن بند کر دیا گیا۔ مجھے یہ کہانی بہت بعد میں پتا چلی، ورنہ ٹی وی کی نشریات بند نہ کرواتا۔ لیکن اُس وقت میرے اور بڑے اہم اور ارجنٹ (urgent) مسئلے تھے، نہ کہ ٹی وی سٹیشن۔ کراچی میں ایئرپورٹ کی کوئی خبر نہیں مل رہی تھی، اور وقت کم رہ گیا تھا۔

ایک اور پریشان کن خبر یہ تھی کہ کھاریاں میں کچھ ٹینکوں اور بکتر بند گاڑیوں پر مبنی سپاہ کو اسلام آباد جانے کے لئے تیار رہنے کے احکامات دیئے گئے ہیں۔ راولپنڈی میں ان کے مقابلے کی سپاہ موجود نہیں تھیں۔ اس ممکنہ پیچیدگی کے لئے بھی دفاعی اقدامات کرنے تھے۔ کھاریاں کی یہ سپاہ رات دیر تک تیار ہی رہی اور ایک مرتبہ گاڑیوں میں بھی بیٹھ گئی، مگر یہ چلے نہیں۔ ہمارے لئے رات گئے تک پریشانی کا سبب رہے۔ پھر جب جنرل مشرف کا جہاز خیریت سے اتر گیا اور PM صاحب حراست میں لے لئے گئے تو کچھ دیر بعد یہ بھی آرام سے بیٹھ گئے۔

خبر ملی کہ کراچی ایئرپورٹ پر اب تک فوج نہیں پہنچی اور جنرل مشرف کا جہاز قریب پہنچ رہا ہے۔ دوبارہ ملیز فون کیا، پھر ڈویژن کمانڈر نے یہی کہا کہ ابھی ہم ایئرپورٹ پہنچتے ہیں۔ وقت کم تھا، بریگیڈئیر جبار بھٹی کو، جو بہت باہمت اور حوصلے والے افسر تھے (میجر جنرل

بنے) اور ملیز میں ایک بریگیڈ کمانڈ کر رہے تھے، ایئر پورٹ کی طرف بھیجا اور وہ فوراً ہی پہنچ گئے۔ چونکہ پہلے سے تیاری نہیں تھی اس لئے پرانے ایئر پورٹ کے کنٹرول ٹاور پر جانکے۔ پھر وہاں سے نئے کی طرف چلے۔

رن وے کی تمام بتیاں بند تھیں اور اس پر آگ بجھانے والی گاڑیاں کھڑی تھیں۔ ایئر ٹریفک کنٹرول (ATC) میں پہنچے تو پتا چلا کہ جہاز نوابشاہ کی طرف جا رہا ہے۔ جب میں نے نوابشاہ سے پتا کیا تو انٹیلی جنس والوں نے رپورٹ دی کہ پولیس کی بھاری نفری ایک DIG کی قیادت میں ایئر پورٹ پر جنرل مشرف کو اپنی تحویل میں لینے کے لئے موجود ہے۔ بریگیڈ ایئر جہاز بھٹی سے کہا کہ جہاز کو فوراً واپس کراچی کی طرف موڑیں اور رن وے کو خالی کروائیں۔ پائلٹ پہلے تو آمادہ نہیں تھا، کہنے لگا کہ بامشکل کراچی پہنچ سکتا ہوں۔ اُسے کہا کہ فوراً جہاز کو واپس موڑو۔ نہایت تناؤ کے (tense) لمحے تھے۔ نہ جانے کراچی ایئر پورٹ پر سپاہ کے پہنچنے میں دیر کیوں ہوئی؟ پھر جنرل افتخار بھی پہنچ گئے اور انہوں نے ہوائی جہاز میں بیٹھے جنرل مشرف سے رابطہ کیا۔ چند منٹ ہی کا فرق تھا، ورنہ جہاز گر کر تباہ ہو جاتا۔ پائلٹ کا ہی حوصلہ تھا جو اُس نے اتنا بڑا قدم اٹھایا۔ جب جہاز اتر گیا تو سب کی جان میں جان آئی۔ کراچی کے کور کمانڈر جنرل مشرف کو لینے ایئر پورٹ پہنچے ہوئے تھے۔

وقت ایسا تھا کہ جگہ جگہ لوگ غائب تھے۔ کچھ نے تو جب خبر سنی، دبک کر بیٹھ رہے۔ سوچا دیکھتے ہیں اونٹ کس کروٹ بیٹھتا ہے۔ کئی جگہوں پر تو جب متعلقہ افسر کو بتا دیا اور اُس نے حامی بھی بھر لی، ہمیں تسلی بھی دے دی، پھر بھی اپنی جگہ سے ہلنا نہیں۔ انتظار میں رہا کہ وفادار یاں کہاں دکھلاؤں۔ ایسے موقعوں پر پتا چلتا ہے کہ انسانی وفادار یاں کیسے بدلتی ہیں۔

جب وزیر اعظم کے گھر لگی پلٹن کے CO کرنل شاہد علی (بریگیڈیئر بنے) پر ائم منسٹر ہاؤس کے گیٹ کے اندر گئے تو وہاں جنرل ضیا الدین کی گاڑی چار ستاروں اور چیف کے جھنڈے کے ساتھ کھڑی تھی۔ یہیں انہیں چیف کے رینک لگی وردی میں جنرل ضیا، وردی میں لیفٹیننٹ جنرل اکرم اور بریگیڈیئر جاوید کچھ اور ساتھیوں کے ہمراہ ملے۔ ان کے ساتھ ہتھیاروں سمیت گارڈ بھی تھی۔ کرنل شاہد علی نے مجھے بعد میں بتایا کہ ان دونوں نے پہلے تو انہیں ڈرایا دھمکایا، پھر لالچ دی کہ تم فکر نہ کرو ایسے موقع پر انسان سے فیصلہ کرنے میں غلطی ہو جاتی ہے، ہم تمہارا خاص خیال رکھیں گے۔ پھر جب وہ نہ مانے تو یہ بھی کہا کہ ابھی کچھ دیر میں پشاور سے سپاہ پہنچ جائے گی، تو تم لوگوں کا یہ سارا ڈرامہ دھرا کا دھرا رہ جائے گا، اور تم بہت خسارے میں رہو گے۔ پھر یہاں موجود سپاہ نے اُن پر ہتھیار تان لئے اور کہا گیا کہ اپنی پلٹن کے لوگوں کو فوراً گیٹ سے ہٹ جانے کا حکم دو اور نئے چیف کو GHQ پہنچنے دو، ورنہ تمہاری خیر نہیں۔ کرنل صاحب نے جواب دیا کہ اگر گولی چلائی تو میرے جوانوں نے پورا گھر گھیرے میں لیا ہوا ہے، کسی کی بھی خیر نہیں ہوگی۔ اس نوجوان افسر کا حوصلہ تھا کہ یہ یوں اکیلے کھڑا رہا۔ پھر باقی سب گھر کے اندر چلے گئے۔

ساتواں سفر ناپیداموڑ

کچھ دیر پہلے جنرل محمود بھی میرے دفتر میں آچکے تھے، اور اُن کے ساتھ میجر جنرل عارف حسن بھی۔ میرے دفتر میں بیٹھے جنرل عزیز سے بات کرتے رہے، پھر جنرل محمود اور عارف حسن اُنھیں وزیراعظم اور اُن کے ساتھیوں کو تحویل میں لینے چلے گئے۔ رات کے ڈھائی بجے جنرل مشرف نے SSG کی وردی پہن کر، ملک کے نئے سربراہ کی حیثیت سے ٹی وی پر قوم سے خطاب کیا۔ اللہ کا کرنا ہے کہ آج، جب میں یہ لکھ رہا ہوں، ۱۲ اکتوبر ۲۰۱۱ ہے۔ بارہ سال ہو گئے اُس دن کو جب میرے دفتر سے نکلے ہوئے احکامات پر ملک میں فوجی حکومت قائم ہوئی۔ ہم سب نے چین کا سانس لیا تھا۔ سڑکوں پر لوگ نکل کر ناچے تھے، مٹھائیاں بانٹی گئیں۔ کیا علم تھا کہ ہم راہ ہی میں کھوجائیں گے، قوم کی امیدوں کا خون ہوگا۔

میں شاخ سے اڑا تھا ستاروں کی آس میں *

شروع کے دنوں میں بہت جوش اور ولولہ تھا، کہ ملک کی حالت کو ٹھیک کیا جائے۔ میں نے فوراً ہی اس پہلو پر سوچ و بچار شروع کر دی، اور کئی دن کی محنت کے بعد، ۱۷ اکتوبر تک تجاویز تیار کر کے ۱۸ تاریخ کی صبح جنرل مشرف صاحب کو بھجوا دیں۔ پندرہ صفحات پر مشتمل یہ تجاویز میں نے خود ہی لکھیں اور ٹائپ کیں، کسی اور کو اس میں شامل نہیں کیا۔ بس جو ذہن میں آیا، خلوص سے لکھ دیا۔ اب جب پرانے کاغذوں میں سے ڈھونڈ کر یہ کاغذ نکالے، تو کیا دیکھتا ہوں کہ کمپیوٹر پر فائل کا نام ہے،

"Of Despair and Hope -- 17 Oct 99.doc"

(ذکر مایوسی اور امید کا)، جو چھوٹے حروف میں ہر صفحہ کے نیچے چھپا ہوا ہے۔ فائل کا یہ نام میری اُس وقت کی ذہنی کیفیت کو ظاہر کرتا ہے۔

میں نے لکھا، "آج اس قوم میں امید اور خوشی کی ایک لہر اٹھی ہے۔ ہم نے بہت اچھا آغاز کیا ہے۔ قوم ہمارے ساتھ ہے اور دنیا اپنے بناوٹی اعتراضات نگل چکی ہے۔ ایسے لگتا ہے جیسے عالم غیب سے قوم کو یہ تحفہ ملا ہے۔ اس وقت ایک احساسِ نجات ضرور ہے، مگر خدشات اب بھی قائم ہیں۔ امید ہے کہ بہت سے تو آپ کی تقریر کے بعد دور ہو گئے ہوں گے (انہوں نے ۱۷ تاریخ کی شام ہی قوم سے دوسرا خطاب کیا تھا، جس میں سات نکاتی ایجنڈا پیش کیا)، مگر چونکہ اعتبار کا خلا بہت بڑھ چکا ہے، بہت سے خدشات باقی رہیں گے اور بڑھتے بھی جائیں گے۔ قوم کے صبر کا پیمانہ لبریز ہو چکا ہے۔ بہت کچھ داؤ پر ہے، اور شاید امید کی آخری کرن کے بجھ جانے کا ایک حق بجانب خوف بھی ہے۔ مگر جوان آرزوئیں متلاطم ہیں، متحرک ہیں۔ یہی اٹھتا ہوا موج کا اُبھار ہماری سب سے بڑی طاقت ہے اور ہمارا مرکز توازن بھی۔ یہ اُمڈتا ہوا جوش برقرار رکھنا لازم ہے، اگر ہم اس اندھیرے سے نکلنا چاہتے ہیں، کامیاب ہونا چاہتے ہیں۔ اس قوم کو جتنی دور تک ہو سکے اس اُونچی لہر پر ہی لے جانا ہے۔ اس جذبے کو خود اعتمادی اور فخر میں بدلنا ہوگا، تب ہی ہم منزل کی طرف گامزن ہو سکیں گے۔"

"ان صفحات میں کچھ میرے تاثرات اور مشورے ہیں، جو اس غرض سے لکھے ہیں کہ ہماری سمت درست ہو سکے اور قوم ایسی راہ پر گامزن ہو جائے، جو اسے اُس منزل پر پہنچا دے، جو اسے زیب دیتی ہے۔ یہ بہت بڑی نوعیت کا اور عظیم کام ہے۔ یہاں، بنیادی طور پر آپ تنہا ہی کھڑے ہیں، جیسے ہر ایک نے کھڑے ہونا ہے، اور آخر کار ہوگا۔ آپ کی تنہائی کا بوجھ صرف دل میں اللہ کی موجودگی ہی کم کر سکتی ہے، جو آپ کو خلوت میں تلاش کرنی ہوگی۔ پھر ڈوب کر غور و فکر کرنی ہوگی۔"

"یہ ایک آدمی کا کام نہیں۔ اور جو ٹیم بھی آپ چنیں گے، وہ اس کام کے لئے ناکافی ہوگی۔ اتنے بڑے کام کے لئے پوری قوم کو جگانا ہوگا اور جب تک سب ہاتھوں میں ہاتھ ڈال کر نہ چلیں، ہم زیادہ دور نہیں جاسکتے۔ اور اگر آپ قوم کو اس بلندی پر نہیں لاسکتے تو پھر آپ ناکام ہوں گے، قوم ناکام ہوگی۔ یہ ایک قیادت کا چیلنج ہے، اور شاید جو آپ سمجھتے ہیں، اُس سے عظیم تر چیلنج۔"

اس سے آگے پھر میں نے اپنی سفارشات تحریر کیں۔ شاید کچھ قابل عمل تھیں اور کچھ نہیں، مگر یہ میرے اُن دنوں کے احساسات کی عکاسی کرتی ہیں۔ یہ صفحات، بمعہ جنرل مشرف کی حاشیہ آرائی، کتاب کے آخر میں رکھ دیے ہیں۔ (دیکھئے ضمیمہ الف)

ایک شعلہ، پھراک دھویں کی لکیر *

"تم وہ بات جنرل مشرف کو بتاؤ نا، جو مجھ سے کہہ رہے تھے"، ہمارے دوست نے کہا۔ میں چونک پڑا اور کہا نہیں وہ تو ویسے ہی ایک خدشے کا آپ سے ذکر کیا تھا، کوئی مستند بات تو نہیں۔ جنرل مشرف نے کہا، "نہیں نہیں بتاؤ"۔ تو میں نے کہا کہ سینئر افسران کے تبادلے اپنے ہی ہاتھ میں رکھیں تو بہتر ہوگا۔ کہنے لگے کیا تم کہہ رہے ہو کہ میرے ساتھی اعتبار کے لائق نہیں؟ میں نے کہا میرا ہرگز یہ مطلب نہیں، مگر اُن کے جملے نے مجھے عجیب رنگ میں ڈھال دیا تھا۔ کہنے لگے، "نہیں یہ بہت اچھے لوگ ہیں، تم غلط سمجھتے ہو۔ آخر کن وجوہات پر تم نے یوں سوچا؟" اصرار کرنے لگے کہ میں اپنی صفائی پیش کروں، کچھ ناراضگی بھی چہرے پر آگئی۔ میرے پاس تو کوئی ایسی بات ہی نہیں تھی، کیا کہتا۔ میں تو ایک اصولی سی بات کر رہا تھا۔

فوجی حکومت کو آئے ابھی کچھ ہی دن گزرے تھے، کہ جنرل مشرف نے مجھے اور انجم کو کھانے پر اپنے گھر بلایا۔ ایک اور صاحب بھی مدعو تھے، جو ہم دونوں کے قریب تھے۔ ہم پہلے اُن کے گھر چلے گئے۔ کچھ دیر وہاں بیٹھے۔ اُن کے پوچھنے پر کہ کیا ہو رہا ہے، میں نے کہا میں بھی وہی جانتا ہوں جو آپ اخبار میں پڑھتے ہیں۔ بہت حیران ہوئے، کہنے لگے تم معاملات میں شامل رہا کرو، جنرل مشرف کو یوں تنہا نہ چھوڑو۔ میں نے کہا کہ کوئی ایسی پریشانی کی بات نہیں، مگر ایک بات ہے جس کا جنرل مشرف کو خیال رکھنا چاہیے۔ میں سمجھتا ہوں کہ جہاں تک فوج کے سینئر افسران کی تعیناتی کا سوال ہے، جنرل مشرف کو یہ سلسلہ اپنے ہاتھ ہی میں رکھنا چاہیے۔ یہ بات مجھے ذرا پریشان کرتی ہے۔ پھر ہم اُٹھ کر آرمی ہاؤس چلے گئے۔ کھانے کے بعد جب بیٹھے تو پاکستان کے بارے میں بات چیت شروع ہوگئی۔ اس دوران ہمارے دوست نے اچانک مجھے یہ کہہ کر چونکا دیا کہ یہ بات جنرل مشرف کو بھی بتاؤں۔ پھر جنرل مشرف کی آنکھوں سے جھلکا کہ اُنہوں نے میری باتوں سے کچھ اور ہی سمجھا، جو میں کہہ نہیں رہا تھا۔

ہاں، اتنا ضرور تھا کہ حکومت کا تختہ اُلٹنے کے بعد تمام معاملات سے مجھے باہر رکھا جاتا، جو مجھے اچھا نہیں لگتا تھا، کہ آخر مجھے ہی کیوں اس اعتبار کے دائرے سے باہر رکھا جاتا ہے۔ سوچا شاید اس لئے کہ میں کھری بات سب کے سامنے کہہ دیتا ہوں، سچ اجاگر کر دیتا ہوں، جیسے سری لنکا جانے سے پہلے کی ایک ملاقات میں تختہ اُلٹنے کی تیاری کا خط لکھنے پر کیا تھا، جس پر سب ہی خفا تھے۔ شاید ناموزوں سوالات بھی پوچھتا ہوں۔ اور شاید جنرل محمود اور جنرل عزیز نہیں چاہتے تھے کہ میری موجودگی سے جنرل مشرف اُن چھوٹی چھوٹی باتوں میں الجھ جائیں جن

سے اُن کو ناواقف رکھنا ہی بہتر ہو۔ شاید میری موجودگی کچھ ایسے مسائل پیدا کرتی ہو۔ میں نے جنرل مشرف سے یہی کہہ دیا کہ میں ہر حکومتی معاملے سے باہر رہتا ہوں، شاید اس وجہ سے مجھے یہ خیال آیا ہو۔ اب اتنے اصرار پر اور کیا جواب دیتا؟ اُنہوں نے عجیب طرح سے مجھے دیکھا۔ پھر ہم سب اُٹھ کر آگئے۔

مجھے یوں محسوس ہوا جیسے اُنہوں نے سوچا ہو کہ میں یہ باتیں کہہ کر اپنی مخصوص وفاداریاں دکھانا چاہتا ہوں، تاکہ اُن کے قریب آ سکوں۔ اس سوچ سے مجھے سخت کوفت ہوئی۔ اور شاید اُس دن سے قدرتی طور پر میرا رویہ کچھ اس طرح کھنچا ہوا ہو گیا کہ اُن پر یہ بات واضح ہو جائے کہ میں اتنا گرا ہوا نہیں جتنا اُنہوں نے سمجھا۔ شاید میں اپنے خلوص پر یہ دھچکا برداشت نہ کر پایا۔ شاید میری انا پھر آڑے آ گئی۔ کہہ نہیں سکتا کہ میری اس فطری کمزوری کا ہمارے بیچ تناؤ میں کتنا دخل رہا، مگر یہ تناؤ کبھی ختم نہ ہوا۔ چھپا رہا، بڑھتا رہا۔ ہر ملاقات میں کوئی نہ کوئی ایسی بات ہوتی جو انڈر کرنٹس (under currents) چھوڑ جاتی۔ مگر میں نے ہمیشہ ہی سچائی سے اُن کا ساتھ دیا، کبھی کسی بات پر اُنہیں دھوکے میں نہیں رکھا اور نہ ہی کوئی دھکی چھپی بات کی۔ جب تک اُن کا ساتھی تھا، ساتھ دیا، آخری دن تک۔ جو غلط سمجھا نہیں کیا، جو کہنا تھا صاف کہا۔

اُن دنوں جنرل مشرف بہت پُر عزم دکھائی دیتے، اور میں سمجھتا ہوں کہ یقیناً وہ قوم کے آنسو پونچھنا چاہتے تھے، چیزوں کو بدلنا چاہتے تھے، اور اس کی صلاحیت اور طاقت بھی رکھتے تھے۔ میں کہہ نہیں سکتا، کیا رکاوٹیں اور مسائل پیش آئے کہ یہ سب کچھ ہو نہ سکا۔ ان باتوں کو شاید وہ ہی سمجھ سکتا ہے جس نے یہ بھاری ذمہ داری اٹھائی ہو۔ میرا باہر سے بیٹھ کر تنقید کرنا آسان ہے۔ اُنہوں نے بہت خلوص اور لگن سے کام شروع کیا، اور بہت سے مسائل پر جلد قابو پا لیا۔ اس ملک کو بہت کچھ دیا۔ پھر بھی، میں اُن چند اسباب کا ذکر ضرور کرنا چاہوں گا جن سے میرے وجود میں لپکتے شعلے سرد ہوئے، امیدیں خاک میں ملیں۔

جنرل مشرف کے کراچی سے آتے ہی، قریبی ساتھیوں کے ساتھ اُن کی متواتر میٹنگز شروع ہو گئیں۔ صبح سے رات دیر گئے تک یہ سلسلہ جاری رہتا۔ ان میں شامل ہوتے لیفٹیننٹ جنرل محمود (جو DGISI تعینات ہوئے)، لیفٹیننٹ جنرل عزیز (CGS)، جنرل غلام احمد (چیف آف سٹاف -- COS)، جو GA کہلاتے تھے، ہر دل عزیز انسان تھے، اللہ انہیں جنت نصیب کرے۔ ہم ISI میں اکٹھے رہے تھے)، میجر جنرل احسان (DGMI)، بریگیڈیئر راشد قریشی (DGISPR) اور طارق عزیز صاحب (اُن کے پرنسپل سیکرٹری)۔ میں GHQ ہی میں رہتا، اور کچھ علم نہ ہوتا کہ کیا ہو رہا ہے۔ بس وہی جانتا جو اخباروں میں پڑھتا۔ اس عرصے میں کابینٹ (cabinet) کے لئے لوگوں کا چناؤ بھی شروع ہو گیا۔ انٹرویو جنرل عزیز کے دفتر میں ہوتے، جن میں جنرل احسان موجود ہوتے اور عموماً جنرل محمود، جنرل GA یا طارق عزیز صاحب ہی آ جاتے۔ میں باہر ہی رہتا۔ پھر کچھ فوج کے سینئر افسران کی اہم جگہوں پر تبدیلیاں ہوئیں، جن کے بارے میں مجھے علم ہوا کہ یہ جنرل محمود اور جنرل عزیز نے کروائیں۔ اس ہی پر کٹہ چینی سے جنرل مشرف کے ساتھ تناؤ شروع ہوا۔

ساتواں سفر ناپیدامصور

اُس رات کے بعد، دوسرے دن جب کیبنٹ کے انٹرویو ہونے لگے تو جنرل عزیز نے مجھے بھی بلوایا۔ یقیناً جنرل مشرف نے کچھ کہا ہوگا۔ باتوں باتوں میں کہنے لگے، ہم سب ہی ملک کے کاموں میں بہت مصروف رہتے ہیں، اس لئے تمہیں GHQ میں چھوڑ جاتے ہیں تاکہ تم فوج کو سنبھالے رہو ("somebody to hold the fort")۔ ہم دونوں میں بہت اچھا تعلق تھا اور مجھے اُن کے خلوص پر ذرا شک نہ تھا، میں کیا کہتا۔ بس اُس رات یوں ہی تقدیر کے ہاتھوں اُلجھ گیا تھا، حالانکہ کچھ کہنے کو نہیں تھا۔ زندگی بے ترتیب سی ہی چلتی ہے، جیسے نیم تاریکی میں پتھر لی ڈھلوان پر ٹھوکریں کھاتے۔ سمجھتا ہوں کہ اختیار رکھتا ہوں، مگر کسی لمحے پر بھی قادر نہیں۔

کیبنٹ کے لئے انٹرویو میرے لئے ایک عجیب سا تماشا تھے۔ اچانک فون آتا کہ آجاؤ۔ جنرل عزیز کے دفتر میں عموماً جنرل احسان پہلے سے موجود ہوتے۔ جو لوگ آرہے ہوتے اُن کے بارے میں معلومات بتاتے۔ پھر کچھ لوگ آتے تو ہم اُن سے یوں ہی ادھر ادھر کے سوال پوچھتے۔ جب میں نے جاننا چاہا کہ یہ نام کیسے چنے جاتے ہیں تو بتایا گیا کہ ایک لمبی ترتیب ہے، جنرل احسان مختلف جگہوں سے نام تلاش کرتے ہیں پھر اُن کے بارے میں معلومات حاصل کرتے ہیں، پھر کچھ کا چناؤ کر کے انٹرویو کے لئے بلوایا جاتا ہے۔ میرے پاس بھی ڈاک میں سینکڑوں لوگوں کی پیشکش آتی، کہ میں قوم کی خدمت کے لئے حاضر ہوں۔ میں یہ تمام کاغذات DGMI کو بھجوا دیتا۔ کبھی کسی ایک کی بھی سفارش نہیں کی۔ میں منصفانہ نظام چاہتا تھا، خود ہی اس کو چھیڑ کر کیسے خراب کرتا۔ آج بھی مجھ سے بہت سے لوگ ان جیسی باتوں پر نالاں ہیں، کچھ میرے رشتے دار بھی اور بہت سے احباب بھی۔ اللہ سے ڈرتا ہوں کہ وہ مجھ سے ناراض نہ ہو۔

کبھی یوں لگتا جیسے چناؤ انٹرویو سے پہلے ہی ہو چکا ہے، صرف شکل دیکھنی ہے، یا یوں ہی کاروائی پوری کرنی ہے۔ لیکن یہ صرف میرا اندازہ تھا، وثوق سے نہیں کہہ سکتا۔ مذہبی امور کی وزارت کے لئے جب انٹرویو ہو گیا تو میں نے کہا کہ یہ صاحب تو اس کام کے لئے بالکل مناسب نہیں، کیونکہ اُن کا پرانا ریکارڈ بھی کچھ مشکوک سا تھا اور مجھے یوں بھی اس کام کے لئے پسند نہ آئے۔ لیکن کہا گیا کہ یہی ٹھیک ہیں۔ شاید سرکاری عالم دین ایسے ہی بہتر ہوتے ہوں، جو آسانی سے مڑ سکیں۔ دین کے شرعی احکام کی وہ تشریح کریں جو حکمران کو موافق آئے۔

ہماری معیشت اور مالیاتی اداروں سے متعلق جو لوگ آئے وہ پہلے ہی چنے جا چکے تھے۔ بتایا گیا کہ شوکت عزیز صاحب فنانس (finance) منسٹر ہوں گے، انٹرویو نہیں ہوگا۔ تمام منسٹریاں جن کا ہماری معیشت پر براہ راست اثر پڑتا ہے اور اُن سے منسلک مالیاتی اداروں وغیرہ کے لئے اپنی ٹیم کا چناؤ بھی شوکت عزیز صاحب خود ہی کریں گے۔ ان میں ٹریڈ (trade)، کامرس (commerce)، انڈسٹری (industry)، پرائیویٹائزیشن (privatisation)، وغیرہ کے کیبنٹ ممبران شامل تھے۔ پیٹرولیم منسٹری کے لئے بھی چناؤ پہلے کا تھا۔ لیکن ان سب کو بلا یا ضرور گیا کہ دیکھ ہی لیں۔ باقی کارگر جگہوں میں ایک وزیر داخلہ، ایک وزیر اطلاعات اور دفتر خارجہ ہی رہ گئے، جن کا چناؤ بھی اس انٹرویو کے سلسلے سے باہر ہی ہوا۔ البتہ شوکت عزیز صاحب کے علاوہ سب ہی نے چہرہ کرایا۔

شروع میں کیبنٹ کے علاوہ ماہرین کی ایک مشاورتی ٹیم بھی چنی گئی، جس میں خاص کر معیشت سے متعلق ماہرین بھی شامل تھے، تاکہ جنرل مشرف کو فیصلہ کرنے میں مشورہ دے سکیں اور ایک مختلف نکتہ نظر بھی اُن کے سامنے ہو۔ کرپشن کی روک تھام کے لئے NAB (قومی احتساب بیورو) کا ادارہ قائم کیا گیا اور اس کی سربراہی کے لئے فوج سے لیفٹیننٹ جنرل محمد امجد کا چناؤ ہوا، جس پر سب ہی خوش تھے۔ ملک میں پھیلی ہوئی کرپشن ہم سب کے لئے بہت اہم مسئلہ تھی۔ ہر ایک جانتا تھا کہ باقی ہر مسئلے میں اس کی جڑیں پہنچتی ہیں۔ حکومت میں رد و بدل کی تجاویز تیار کرنے کے لئے جنرل ریٹائرڈ تنویر حسین نقوی کو چنا گیا۔ یہ دونوں افسر باصلاحیت اور اعلیٰ کردار کے مالک تھے۔ ان کا فوج میں بہت نام تھا۔ پولیس اور انصاف کے نظام میں بہتری لانے کے لئے بھی فوری کام شروع کر دیا گیا۔ عدلیہ اور پولیس کا نظام ٹھیک کرنا اُن دنوں ہماری اہم ترجیح تھی۔ ساتھ ہی ساتھ سول سروس (civil service) کی کارکردگی بہتر بنانے کے لئے بھی کوششیں شروع ہو گئیں۔

جتنے بھی لوگ مختلف جگہوں پر تعینات ہوئے، سب ہی قابلیت رکھتے تھے۔ ہم سب بھی بہت پُر امید تھے کہ اب ہمارے ملک کا نظام سنبھل جائے گا۔ اس کیبنٹ کی امداد میں مانیٹرنگ (monitoring) کا نظام میں نے تشکیل دیا، پھر ٹی وی پر اس کی تفصیلات بھی بیان کیں۔ میں ہی DGMO کی حیثیت سے، اس نظام کی سربراہی کرتا اور تمام پاکستان سے آئی ہوئی رپورٹوں کو چھانٹ کر متعلقہ وزیروں کو بھیجتا اور ایک کاپی چیف ایگزیکٹو (Chief Executive) کے دفتر بھی۔ ہمارا بس اتنا ہی کام تھا۔ ہم صرف اُن سے سوال کرنے کے مجاز تھے، کوئی احکامات جاری کرنے کا اختیار نہیں تھا۔

فیصلہ یہ ہوا تھا کہ فوج کسی چیز میں مداخلت نہیں کرے گی، جب تک حکومت اُس سے کسی سلسلے میں امداد نہ مانگے۔ صرف خلی سطحوں پر حکومت کی کاروائیوں پر نظر رکھے گی، تاکہ چُنی ہوئی جنرل مشرف کی ٹیم کو باخبر رکھ سکے، کہ اُن کے احکامات پر اور حکومت کی پالیسیوں پر کہاں تک عمل ہو رہا ہے۔ اس کے علاوہ کیبنٹ کو کسی مخصوص چیز کے بارے میں پتا کرنا ہوتا تو ہم سے کہہ دیتے، ہم اُس کی رپورٹ بنا کر انہیں بھیج دیتے۔ اگر اُن کے سامنے صحیح تصویر ہوگی، تو وہ درست فیصلے کر سکیں گے اور حکومت کی کارکردگی بہتر ہوگی۔ اس طرح عوام اچھی حکومت (good governance) کے اثرات بھی جلد دیکھ پائیں گے۔ اس اصول پر مانیٹرنگ کا نظام قائم ہوا۔

ہر طرف بہت جوش و خروش سے کام شروع ہو گیا۔ پھر آہستہ آہستہ معاملات پرانے ڈگر پر ہی چلنے شروع ہو گئے۔ سول سروس کے جمود نے کچھ بھی آگے نہ بڑھنے دیا۔ ہر چیز میں اُن کے خدشات آڑے آجاتے۔ انہیں اپنی آزادی پر کسی کی گرفت قبول نہیں تھی، اور نہ ہی اپنی کارکردگی پر فوج کی نظر۔ کیبنٹ اُن کے بغیر ناکارہ تھی، حکمران بھی۔ سب اُن کے مرہونِ منت تھے۔ جو ماہرین کی مشاورتی ٹیم چنی گئی

تھی، اور جن کا دوسرا نکتہ نظر سول سروس سے تصادم پیدا کرتا، جلد ناکارہ بنا دی گئی۔ مانیٹرنگ بھی جنرل مشرف پر بوجھ بن گئی اور وہ اس سے خفا رہتے، کیونکہ اس کے خلاف اُن پر سول سروس کا دباؤ روز بروز بڑھتا جا رہا تھا۔ NAB بھی شوکت عزیز صاحب کے کہنے پر حکومت کے دباؤ میں آنا شروع ہو چکی تھی، کہ اس سے معیشت کو خطرہ ہے۔ ہر بات پر قومی مفاد کے جھوٹے نام پر مفاہمت (compromise) ہو رہی تھی، اُسے لمبے راستوں پر ڈالا جا رہا تھا، تاکہ کسی انجام کو نہ پہنچے۔ جنرل مشرف کو بھی ایسی پیچیدگیوں میں الجھا دیا تھا کہ اُن کے ہاتھ بندھ چکے تھے۔ کوئی سلسلہ بھی آگے بڑھتا نظر نہیں آتا تھا۔ اب گھاگ قسم کی نوکر شاہی جنرل صاحب کی نئی ٹیم تھی، چونکہ اب ملک چلانا تھا۔ نئی ٹیم کو خوش رکھنا تھا، اُنہیں خوش رکھا۔ قوم سے جھوٹ بولنے کا اور وعدوں کے دلاسوں کا سلسلہ شروع ہو چکا تھا۔

جب ۱۲ اکتوبر ۲۰۰۰ آیا، فوجی حکومت کی پہلی سالگرہ، تو میں دفتر میں بیٹھا تھا۔ نہ جانے کیوں اُس دن کوئی کام میرے پاس نہیں آ رہا تھا۔ کافی دیر بیٹھا کھڑکی سے باہر دیکھتا رہا۔ ذہن میں ایسے خیالات پھرتے رہے جن کا میرے پاس کوئی جواب نہ تھا۔ سوچا، نہ جانے اللہ کو کیا جواب دوں گا؟ فون اٹھایا اور کہا کہ میری حج کے لئے سیٹ بک کروادیں۔ اب تک کعبہ کا دیدار نہیں کیا تھا۔

رات تھی، میں تھا اور اک میری سوچ کا جال *

"جنرل صاحب، آپ نئے معلوم ہوتے ہیں"، میں سمجھا تو نہیں مگر میں نے ہاں کہا۔ بزرگ تھے، کہنے لگے، "میرے پاس بیٹھیں۔" میں بیٹھ گیا۔ ۲۰۰۱ میں کشمیر کے الیکشن کا انتظام کر رہا تھا۔ MO سے تبدیل ہو کر مری میں ڈویژن کمانڈر تعینات ہوا تھا، کشمیر کے علاقے کا ذمہ دار تھا، جہاں سیاسی حکومت بدستور قائم تھی۔ جب اپنے کام سے اگلے مورچوں پر جاتا، تو فارغ ہو کر وہاں کے لوگوں سے بھی مل لیتا، کہ الیکشن کے سلسلے میں معلومات رہیں، اور لوگوں سے ملاقات بھی۔ ایک ایسی ہی چائے پر میں نے معمول کے مطابق لوگوں سے بات کی اور کہا کہ اچھے لوگوں کو ووٹ دیں تاکہ اچھی حکومت آئے اور آپ سب کا فائدہ ہو، وغیرہ وغیرہ۔ جب اپنی سناچکا تو ان بزرگ نے مجھے بلایا اور اپنے پاس بٹھالیا۔

کہنے لگے، "آپ نے اچھی باتیں کیں، لیکن اگر ہم آپ کے کہنے کے مطابق اچھے لوگوں کو ووٹ دیں، تو ہمارے علاقے کا اچھا نمائندہ مظفر آباد میں بیٹھ کر اچھی باتیں کرے گا اور اپنے تمام ساتھیوں کو ناراض کر دے گا، کیونکہ وہ باتیں اُن سب پر چوٹ ہوں گی۔ پھر ہمارے سارے کام کیسے ہوں گے؟" میں سنتا رہا۔ کہنے لگے، "ہمیں تو ایسا نمائندہ چاہیے جو باقی علاقوں کے ترقیاتی بجٹ موڑ کر ہمارے علاقے میں لگا دے، باقی سب کے بچوں کو پیچھے دھکیل کر ہمارے بچوں کو نوکریاں دلوائے، ہمارے تھانہ کچہری کے تمام معاملات نبھائے۔ اب بھلا بتائیں کہ کیا ایک اچھا آدمی یہ سب کچھ کر سکے گا؟" میں نے سر ہلایا، تو کہا، "پھر ہم اپنے پاؤں پر کلہاڑی کیوں ماریں؟" میں زمین کو تکتا رہا۔ "اُس نظام میں جہاں سارا گندا آتا ہو، اچھے آدمی کا کیا کام؟ وہ تو نہ ہی جیت سکتا ہے اور نہ ہی جیت کر کچھ کر سکتا ہے۔ جب نظام اچھا ہوگا پھر ہم اچھے لوگوں کو چنیں گے۔"

ان بزرگ نے دنیا دیکھی تھی، سیاست کی اونچ نیچ کو سمجھتے تھے۔ ٹھیک کہتے تھے۔ ایک صاحب، جو بہت اچھا نام رکھتے تھے، میں سوچتا تھا اگر جیت گئے تو موزوں وزیر اعظم ہو سکتے ہیں۔ مگر الیکشن بالکل شفاف ہوئے، اور ایسے میں شریف آدمی کے جیتنے کی گنجائش کہاں۔ الیکشن سے کسی کو کوئی شکایت نہ تھی۔ ہارنے والوں نے بھی اس بات کی تصدیق کی اور آزاد کشمیر کے تمام اخباروں نے بھی۔ پھر کچھ مسئلہ رہا کہ وزیر اعظم کون ہوگا، مگر یہ بھی حل ہوئی گیا، اور سب نے قبول کیا۔

ہماری سپاہ کشمیر کے سرسبز پہاڑوں پر سرحدوں کی حفاظت میں لگی تھی۔ چونکہ ڈویژن کا پھیلاؤ بہت تھا اور زمینی راستوں سے جگہ جگہ پہنچنا ممکن نہ تھا، مجھے ایک چھوٹا ہیلی کاپٹر ملا ہوا تھا۔ ہفتے میں تین روز اپنی سپاہ کے ساتھ گزارتا۔ صبح سویرے نکلتا اور مغرب سے پہلے واپس آتا۔ خوبصورت وادیوں میں اڑتا پھرتا، جہاں دل کرتا اتر جاتا۔ کشمیر کا کونہ کونہ دیکھ لیا۔

مری میں ڈویژن ہیڈ کوارٹر رکھنا مجھے پسند نہ آیا تھا۔ سارا ڈویژن کشمیر میں لگا تھا، اور ڈویژن ہیڈ کوارٹر جہلم دریا کے پیچھے۔ ہسپتال بھی یہیں اور بہت سے اور سیٹھ بھی۔ پھر گرمیوں میں سڑکوں پر اتنا ترش ہوتا کہ کسی ایمر جنسی میں آگے کے علاقوں میں پہنچنے میں خاصی دشواری ہوتی، مری کے ارد گرد بھی حرکت مشکل ہوتی۔ اس ہی طرح زخمیوں کو پیچھے نکالنے کی بھی دشواریاں تھیں۔ اور اگر جنگ کے دوران جہلم دریا کا پل تباہ کر دیا جاتا تو ہیڈ کوارٹر اپنی سپاہ سے کٹ کر رہ جاتا۔ مری میں تمام فوجی عمارتیں بھی نہایت بوسیدہ حال میں تھیں، جبکہ جس زمین پر وہ بنی ہوئی تھیں، وہ سونے کے مول تھی۔ میں نے دریا کے پار ایک موزوں جگہ دیکھی اور جنرل مشرف کو تجویز دی کہ اگر ہم مری میں اپنی زمین فروخت کر دیں تو ایک بہتر جگہ پر مناسب طرز کا نیا ڈویژن ہیڈ کوارٹر تعمیر کیا جاسکتا ہے۔ مگر انہیں بات پسند نہ آئی۔

کشمیر میں رہتے ہوئے جنگی مشقیں بھی کروائیں۔ جارحانہ کاروائیوں کے نئے منصوبے بھی بنائے۔ جو پیسے فوج سے دفاعی پوزیشنیں بنانے کے لئے ملتے تھے، یقین کروایا کہ ان کا صحیح استعمال ہو۔ ناجائز چیزوں پر صرف نہ ہوں۔ نئی دفاعی پوزیشنیں بنوائیں۔ اگلے علاقوں میں سپاہیوں کے رہنے کی جگہوں کو اہمیت دی، بہتر کروائیں۔ مری میں گھومنے پھرنے کے لئے سپاہیوں اور ان کی فیملیوں کے لئے کوئی بندوبست نہیں تھا، اس پر کام شروع کروایا کہ ان کو بھی یہ سہولیات میسر ہوں۔ بچوں کو لے کر آئیں تو سستی رہنے کی اور کھانے کی جگہ مل سکے۔ فوج کے جو نئیر افسران کے لئے ایسی جگہوں کو بہتر کیا۔ سینئر افسران سے بل لینے کا رواج قائم کیا، سرکاری مہمان نوازی ختم کروائیں۔ ہر فوج کا کمانڈر، حدالمقدور، اس طرح کے کام کرتا ہے۔ جو مجھ سے ہوسکا میں نے بھی کیا۔ کوشش کی کہ لوگوں میں اچھی قدریں ابھار سکوں۔

جس پلٹن کی پوسٹوں پر جاتا، دوپہر کا کھانا ان کے ساتھ ہی کھا لیتا۔ پہلی مرتبہ جہاں گیا، ایک دعوت تھی۔ قریب قریب کے سب افسران کو بلوایا ہوا تھا، شاندار کھانے چنے تھے۔ میں نے تھوڑا سا کھا کر پلیٹ رکھ دی۔ کھاتا ہی کم ہوں۔ جب واپس آیا تو سٹاف سے پوچھا کہ یہ کیا ماجرا ہے۔ کہنے لگے یونٹ کے لئے عزت کی بات ہوتی ہے کہ ڈویژن کمانڈر ان کے ساتھ کھانا کھائے۔ میں نے کہا یہ مناسب طریقہ نہیں، ان کو بتائیں ایسی دعوت نہ کیا کریں۔ اگر کوئی عزت دے تو بدتمیزی بھی اچھی نہیں لگتی، زیادہ کہا نہیں۔ اگلی مرتبہ کہیں اور گیا تو پھر یہی تماشہ ہوا۔ جب واپسی پر سٹاف سے پوچھا تو پتا چلا کہ تمام بریگیڈ کمانڈروں کو بتایا گیا تھا، پھر بھی یہی ہوا۔

پھر بریگیڈ کمانڈروں کی کانفرنس میں انہیں سمجھایا کہ یہ فوج کا طریقہ نہیں کہ سرکاری پیسوں پر سینٹر افسران کی دعوتیں کی جائیں۔ کہنے لگے کہ اس طرح سے آپ کی ملاقات ارد گرد کے دوسرے افسران سے بھی ہو جاتی ہے۔ میں نے پوچھا اس دعوت کے پیسے کون بھرتا ہے، تو کہا کہ یونٹ کے فنڈ سے آتے ہیں۔ میں نے کہا فوری طور پر یہ سلسلہ بند کر دیں، لیکن شاید میرا بیٹھا انداز انہیں نہ بھایا۔ سلسلہ بند نہ ہوا۔ آخر مجھے ایک تکلیف دہ سرکاری خط لکھنا پڑا کہ کھانے پر ایک ڈش ہوگی اور یونٹ کے علاوہ کوئی باہر کا افسر نہیں آئے گا، تب جا کر میری جان چھٹی۔ بدتمیزی کرنی پڑی۔

ایک یونٹ میں گیا تو جب واپس آنے لگا تو انہوں نے مہمانوں کی کتاب (Visitors' Book) میرے سامنے رکھ دی، کہ اس میں اپنے تاثرات لکھ دیں۔ میں نے کہا میں آپ کا مہمان تو نہیں، کمانڈر ہوں اور دیکھنے آیا ہوں کہ آپ لڑائی کے لئے کس قدر تیار ہیں۔ کہنے لگے آپ کی یادگار رہے گی۔ میں نے کہا اسے فوراً ہٹالیں، اس سے پہلے کہ میں اس میں آپ کی یونٹ کے بارے میں سچ لکھ دوں، اور پھر آپ مجھے بھول نہ پائیں۔

ایک مرتبہ سپاہیوں کی فیملیوں کی بہبودی تنظیم کا کوئی فنکشن تھا جس میں انجم مدعو تھیں۔ جب واپس آنے لگیں تو الوداع کہنے والی بریگیڈیئر صاحب کی بیگم نے گاڑی میں بیٹھتے ہوئے آہستہ سے کہا آپ کے لئے کچھ تحفے گاڑی کی ڈبگی میں رکھوا دیے ہیں۔ کافی خواتین وہاں کھڑی تھیں، آپا پیچاری شرمندگی سے کچھ بول نہ پائیں اور چپ چاپ گاڑی میں بیٹھ گئیں۔ آکر مجھے بتایا تو میں نے بریگیڈیئر صاحب کو فون کیا اور ڈانٹ پلائی، پھر کہا کہ اس بار تحفے واپس نہیں کر رہا تا کہ آپ کو سب کے سامنے شرمندگی نہ ہو، پیسے بھجوا رہا ہوں، اگلی مرتبہ محفل میں واپس کروں گا۔ بازار سے اُن کی قیمت پتا کروا کے انہیں خاموشی سے لفافے میں پیسے ڈال کر بھجوا دیے۔ دوبارہ ایسا نہیں ہوا۔

یہ تمام سلسلے فوج میں اب جگہ جگہ نظر آنے لگے ہیں۔ اس طرح کی تبدیلیاں میرے دیکھتے دیکھتے فوج میں آئیں۔ یہ نوکری بہتر بنانے کے لئے چھپھوری حرکتیں سختی سے روکنی پڑیں گی۔ ایک افسر اگر اپنا وقار ایسی حرکتوں سے کھو دے، تو وہ افسر کے عہدے پر فائز رہنے کے قابل نہیں رہتا۔ اُسے پھر بوٹ پالش کے کام پر لگا دینا چاہیے۔

ڈویژن کے دو وار کورس کو الیفانڈ (war course qualified) بریگیڈیئروں کو میں نے اُن کی پیشہ وارانہ کمزوریوں کی وجہ سے سالانہ رپورٹ میں اُن فٹ فار پروموشن (unfit for promotion) قرار دیا۔ دونوں جنرل بننے کے قریب تھے اور اثر و رسوخ رکھتے تھے۔ سینٹر افسران کے بہت فون آئے، مگر میں نے کہا کہ رپورٹیں ایسی ہی رہیں گی۔ بعد میں جب لیفٹیننٹ جنرل ہوا تو ان کے

پروموشن بورڈ میں بھی بیٹھا۔ ان کے لئے خوب زور ڈالا گیا مگر میں نے انہیں پروموشن نہ ملنے دی۔ اسی طرح ایک اور افسر کو، جو میرے قریبی جاننے والوں میں سے تھا، میں نے جنرل بننے کے لئے موزوں نہ سمجھا اور اُس کی ہوتی ہوئی پروموشن رکوا دی۔ ان باتوں پر مجھ سے کافی لوگ ناراض ہوئے، کہ تم اپنے جاننے والوں کی بجائے مدد کرنے کے، اُن کی "جرؤں میں بیٹھ جاتے ہو"۔ میں آئندہ بھی ایسے ہی کرتا رہا، اور لوگ ناراض ہوتے رہے۔ آج تک ہیں۔ مجھے مختلف ناموں سے بھی پکارا گیا، مگر میں یوں ہی کرتا رہا کیونکہ فوج میں میرٹ پر سمجھوتہ کرنا، خاص کر اس عہدے پر، ملک اور قوم کے ساتھ عظیم ظلم ہے۔

میں جب تک طاقتور کرسی پر رہا، اللہ کے شکر سے کبھی فوج کے مفاد کو کسی اور ترجیح پر قربان نہیں کیا۔ نہ ہی اپنے اور نہ ہی کسی اور افسر کے لئے کوئی سفارش کی، چاہے اُس کے کام کو صحیح ہی جانتا ہوں، نظام میں دخل نہیں دیا۔ اور نہ ہی کبھی کسی کی سنی۔ حالانکہ سفارش کا فوج میں بھی بہت رواج ہو چکا ہے۔ ان باتوں سے نہ صرف فوج کا نقصان ہوتا ہے، بلکہ حقداروں کی حق تلفی بھی۔ ایک مرتبہ جب میں CGS تھا، ایک میجر صاحب میرے پاس آئے، جن کی بیٹی کینسر کی مریضہ، قریب المرگ تھی، مشین پر سانس چل رہی تھی۔ کہنے لگے کہ میری تبدیلی کراچی ہوگئی ہے، کچھ دن کور کوادیں، میری بیٹی اللہ کو پیاری ہو جائے تو میں چلا جاؤں گا، کوئی میری سنتا نہیں۔ ان کی تبدیلی کچھ دن کور کوادی تھی۔ پھر شاید یہ ایک یا دو ماہ بعد گئے۔ اس کے علاوہ مجھے کوئی ایسا واقعہ یاد نہیں۔ الحمد للہ۔

جب میں MO میں تھا، تو یہاں یونٹوں کی نقل و حرکت کا فیصلہ ہوتا ہے اور اُس کے لئے باقاعدہ ایک نظام اور ایک دستور بنا ہے۔ ایک باقاعدہ لکھی ہوئی کتاب ہے، تاکہ یونٹوں کو باری باری اچھی چھاؤنی میں اور پاکستان کے مختلف علاقوں میں رہنے کا موقع ملے۔ ایک لیفٹیننٹ جنرل صاحب کی یونٹ کئی مرتبہ، "ملاپ" سے، اچھی چھاؤنیوں میں لگا تار رہ چکی تھی، میں نے اُسے کسی دور کی چھوٹی چھاؤنی میں بھیجنے کے احکامات جاری کر دیے۔ پہلے تو اُن کا فون آیا، میں نے اُنہیں اصول بتایا، کچھ ناراض ہوئے کہ میں ریٹائر ہونے والا ہوں اور آپ مجھے اصول بتا رہے ہیں، میری بات کا لحاظ کریں۔ کافی دباؤ والے انسان تھے، اور مجھ سے خاصے سینئر۔ پھر انہوں نے CGS کو فون کیا، میں نے اُن سے بھی یہی کہا کہ قانون کے مطابق یہ ہو نہیں سکتا۔

پھر جنرل صاحب نے جنرل مشرف کو خط لکھا کہ میری اتنی سروس کا کچھ لحاظ نہیں کیا جا رہا۔ میری ریٹائرمنٹ پر میری یونٹ نے ایک وردی اُتارنے کی تقریب رکھی ہے، لیکن اگر فوج میں میری عزت نہیں اور میری آخری خواہش پوری نہیں کی جاسکتی تو میں یونٹ کی اس تقریب میں شرکت نہیں کر سکوں گا۔ یونٹ کے لوگوں کی مجھ سے کچھ توقعات ہیں، میں وہاں کیسے منہ دکھاؤں گا۔ لکھا کہ مجھے امید ہے کہ میری بات کو آپ ضرور اہمیت دیں گے۔ جنرل مشرف نے یہ خط CGS کو عمل کے لئے بھجوا دیا۔ انہوں نے مجھے خط دیا اور کہا کہ مشرف صاحب

نے کہا ہے، اس کام کو کریں۔ میں نے خط فائل میں لگایا، اُس پر نوٹ لکھا کہ یونٹ پچھلے کتنے سالوں سے کن کن اچھی چھاؤنیوں میں رہی ہے اور اب بھی اگر اسے اچھا سٹیشن دیا جائے گا تو فوج میں یہ بات ظاہر ہو جائے گی کہ یہاں صرف سینئر افسران کی یونٹوں کا خیال رکھا جاتا ہے، باقی یونٹوں کا کوئی پوچھنے والا نہیں۔ اس سے فوج کے مورال پر بہت برا اثر پڑے گا۔ یہ لکھ کر نیچے لکھا کہ اپنے احکام سے آگاہ کریں۔ اور فائل اوپر بھیج دی۔ خالی دستخط ہو کر واپس آ گئی، اور یونٹ دیے ہوئے سٹیشن پر ہی گئی۔

مری میں کچھ عرصے کے لئے حکومت کی کاروائیوں سے دور رہا، مگر اپنی پیشہ وارانہ مصروفیات کے ساتھ ساتھ کشمیر کی سیاسی حکومت کے بھی کچھ نہ کچھ مسائل میں الجھنا پڑتا۔ یہ کام بھی مری کے ڈویژن کمانڈر کا تھا۔ یہاں مجھے ایک چھوٹی سی ہمارے طرز کی حکومت کو قریب سے دیکھنے کا موقع ملا۔ چھوٹے چھوٹے مسائل تھے، جن میں زیادہ تر سیاسی جھگڑے ہی ہوتے۔ سب ہی اپنے مفاد کے لئے کام کر رہے تھے، عوام کا غم صرف سیاسی دکھلاوے کی حد تک ہی رہتا۔

جنوری ۲۰۰۱ میں مری ڈویژن کی کمانڈ پر آیا تھا۔ صرف آٹھ ماہ ہی یہاں رہ سکا، لیکن فوج کی تمام سروس میں اتنا لطف کسی اور کام میں نہیں آیا۔ ایک بٹالین کی کمانڈ اور ایک ڈویژن کی، فوج میں دو ہی کمانڈ ہیں جہاں آپ اپنی سپاہ کی براہ راست سربراہی کرتے ہیں اور ان کے اچھے اور برے کے ذمہ دار ہوتے ہیں۔ اس کا ایک الگ ہی چرکا ہے، مگر مجھے تھوڑے ہی دن یہ موقع ملا۔ پھر ترقی ہو گئی، تو شکوہ بھی نہ کر پایا۔

مری آکر اُس گھر میں رہے جس کو میں بچپن میں سڑک کے کنارے سے دیکھا کرتا تھا۔ سڑک سے صرف اونچی دیوار ہی نظر آتی تھی، لیکن ایک خاکہ ساز ذہن میں تھا کہ مری کا جنرل یہاں رہتا ہے۔ شاید گھر کے چھپے ہونے سے اس کا کچھ پُر اسرار سا تصور میرے ذہن میں بنا تھا۔ آج میں اس میں رہ رہا تھا۔ انگریزوں کے زمانے کا بنا گھر تھا، CMH کا CO رہا کرتا تھا۔ اونچی اونچی چھتیں، ہر طرف روشن دان، گرمیوں میں بھی خاصا ٹھنڈا ہوتا۔ گیٹ پر گارڈ کھڑی تھی اور پہلی مرتبہ پاکستان کا جھنڈا گھر پر لہرا رہا تھا۔ شام کو جب جھنڈا نیچے آتا، گارڈ سلامی دیتی، تو سڑک پر چلنے والے رُک جاتے۔ یہ منظر دیکھنے کا کافی لوگ ہر شام جمع ہوتے۔

گھر کے پچھلی طرف بہت بڑی وادی تھی، شام کو جگمگانے لگتی۔ میں ہر شام سورج ڈھلنے پر یہاں آ جاتا، کمبل اوڑھے رات تک بیٹھا رہتا۔ جب جگمگ کر کے آیا تو دل میں ایک سکون سا آ گیا۔ پہلی بار لیبک پکارا تھا، یہ دل میں گھس بیٹھا تھا۔ کعبے کے آگے بیٹھ کر سارا رونا رو آیا۔ خود کو دھوا آیا۔ پھر بھی ہر شام جب اس وادی میں غمگینی بٹیاں ستاروں سے مل جاتیں تو گھنٹوں بیٹھا اپنے اندر غمو طے کھاتا رہتا۔

شروع کے دنوں کی ایک شام لان میں بیٹھا تھا، تو نہ جانے کیوں گیٹ پر لہراتے ہوئے جھنڈے کو دیکھتے دیکھتے میری آنکھیں بہہ
 اٹھیں۔ کتنی بھاری ذمہ داری مجھ پر تھی۔ کتنی عزت مجھے قوم نے دی، کتنا بھروسہ مجھ پر کیا، میں اس لائق تو نہ تھا۔ میں نے اس بھروسے کو مٹی
 میں ملا دیا، بس ایک جھوٹی عزت لئے پھرتا ہوں۔ لوگ رُک کر، میرے گھر کو کچھ امید، کچھ نفرت اور شاید کچھ حقارت سے دیکھتے ہوں گے۔
 ملک افلاس میں رزق تلاش کرتا ہے، اُن دکھوں کو روتا ہے جنہیں میں پہچانتا بھی نہیں، اور میں جھنڈا لہراتا ہوں! بہت دیر بیٹھا ان ہی سوچوں
 میں ڈوبا، روتا رہا۔ جس دفتر کو چھوڑ کر آیا تھا، سارے بوجھ سر پر اٹھالایا تھا، اور اُس شام سب ہی مجھ پر چڑھ بیٹھے۔ پاکستان کا جھنڈا ہوا میں
 لہراتا کتنا حسین لگ رہا تھا۔ میں دھندلائی ہوئی ندامت بھری آنکھوں سے اُسے دیکھتا رہا، شاید آنکھوں میں حسرت بھی اٹھتی تھی۔

یہ داغ داغ اُجالا، یہ شب گزیدہ سحر
وہ انتظار تھا جس کا، یہ وہ سحر تو نہیں
یہ وہ سحر تو نہیں، جس کی آرزو لے کر
چلے تھے یار کہ مل جائے گی کہیں نہ کہیں
فلک کے دشت میں تاروں کی آخری منزل
کہیں تو ہو گا شبِ سُست موج کا ساحل
کہیں تو جا کے رُکے گا سفینہء غمِ دل

جگر کی آگ، نظر کی امنگ، دل کی جلن
کسی پہ چارہ ہجراں کا کچھ اثر ہی نہیں
کہاں سے آئی نگارِ صبا، کدھر کو گئی
ابھی چراغِ سرِ رہ کو کچھ خبر ہی نہیں
ابھی گرانیِ شب میں کمی نہیں آئی
نجاتِ دیدہ و دل کی گھڑی نہیں آئی
چلے چلو کہ وہ منزل ابھی نہیں آئی
(فیض)

آٹھواں سفر

زرد دوپہر

بام و در خاموشی کے بوجھ سے چور *

ایک شام میری بیٹی سارہ نے کہا، "جلدی ٹی وی دیکھیں، یہ کیا ہو رہا ہے!" نیویارک کے ورلڈ ٹریڈ سنٹر کی ایک بلند و بالا عمارت سے ہوائی جہاز ٹکرا چکا تھا، دھواں نکل رہا تھا۔ دیکھتے ہی دیکھتے ایک اور جہاز نمودار ہوا اور دوسری عمارت میں جا گھسا۔ سڑکوں پر ہنگامہ تھا۔ کچھ دیر میں دونوں ہی عمارتیں زمین بوس ہو گئیں۔ اُس وقت ہم سمجھے نہیں کہ مسلمانوں پر بھی سورج غروب ہو رہا ہے۔ ایک مہینے بعد، اکتوبر کی ۱۲ تاریخ کو، میں ترقی پا کر واپس GHQ میں CGS تعینات ہو گیا۔ واپس ملک کے مسائل میں الجھنے۔ جھوٹ کے بازار میں پاکستان کا نعرہ بیچنے۔

۱۱ ستمبر ۲۰۰۱ کو ورلڈ ٹریڈ سنٹر کے ٹاورز گرنے کے بعد یونی پولر ورلڈ (unipolar world) کی حقیقتیں کھل کر دنیا کے سامنے آ گئیں۔ یہ واقعہ انتہائی مشکوک حالات میں رونما ہوا۔ امریکہ کے بہت سے ماہرین کا دعویٰ ہے کہ یہ کام امریکہ کی خفیہ ایجنسیوں اور یہودی تخریب کاروں کے گٹھ جوڑ سے رونما ہوا۔ وہ اس کے شواہد پیش کرتے ہیں۔ کسی بھی مجرمانہ کاروائی میں سب سے پہلے یہ چیز دیکھی جاتی ہے کہ اس کاروائی سے مستفید کون ہوا، اور ۹/۱۱ کے واقعے سے یقیناً یہودیوں کے عزائم کو، جن کا بیڑا امریکہ کی حکومت اور اُن کے ساتھیوں نے اٹھایا ہوا ہے، تقویت ملی۔

یہ جیسے بھی ہوا، امریکہ کے لئے مسلم دنیا پر چھا جانے کا ٹرگر (trigger) بنا۔ دوسرے ہی دن جنرل کولن پاول (General Colin Powell, US Secretary of State) نے جنرل مشرف کو فون کر کے کہا، "کیا آپ ہمارے ساتھ ہیں، یا ہمارے خلاف؟" جنرل مشرف کی کتاب سے پتا چلا کہ انہوں نے جواب دیا کہ ہم آپ کے ساتھ ہیں۔ اس ساتھ دینے کی کیا حدیں تھیں، نہیں لکھا۔ جس طرح بعد میں امریکہ کے احکامات کی ہم نے تابعداری کی، پتا لگا کہ ان حدود کا تعین نہیں کیا گیا۔ کوئی معاہدہ نہیں تھا جس سے حدود کا تعین ہو سکتا۔ جنرل مشرف بھی آہستہ آہستہ بات کو کھولتے رہے، جیسے لوگوں کو چھوٹے چھوٹے گناہ کرواتے ہوئے بڑے گناہ کی طرف مائل کیا جائے۔ پھر جہاں رکاوٹ نظر آتی اُسے یا تو دبا کر چپ کر دیا جاتا، یا ہٹا دیا جاتا، یا پھر اطلاعات اور احکامات کے دائرے سے باہر رکھا جاتا۔ اس کی صفائی بعد میں انہوں نے یوں پیش کی کہ کہہ دیا کہ سب کو بتانا لازم نہیں ہوتا، ضرورت کے مطابق "need to know basis" بتایا جاتا تھا۔ ایک زبانی سا امدادی نظام چلتا رہا، جس کی حدیں آہستہ آہستہ بڑھائی جاتیں، اور ہمارے دشمن اپنے مقاصد حاصل کرتے رہتے۔ ہم ہاں کرتے رہے اور اس دلدل میں ڈوبتے رہے۔ حکومت محفوظ رہی اور پیسے آتے رہے۔

* فیض احمد فیض

جب کورکمانڈر کانفرنس میں یہ مسئلہ اٹھا، میں مری میں تھا، ایک ماہ بعد GHQ آیا۔ تب تک اس موضوع پر تمام جھگڑے بنائے جا چکے تھے۔ مجھے آنے پر پتا چلا کہ کورکمانڈروں کی کانفرنس میں کچھ کورکمانڈروں نے امریکہ کا ساتھ دینے کی مخالفت کی، کچھ نے جنرل مشرف کا ساتھ دیا اور زیادہ تر خاموش رہے۔ جنرل مشرف مخالفت کرنے والوں پر ناراض ہوئے، پھر اپنا نکتہ نظر بیان کر کے بات ختم کر دی۔ خاموش رہنے والے 'ہاں' میں شامل ہوئے۔ میں وثوق سے نہیں کہہ سکتا کہ کیا باتیں ہوئیں، مگر لب لباب یہ تھا کہ پاکستان کے مفاد میں نہیں کہ ہم امریکہ کے خلاف کھڑے ہوں، اور نہ ہی ہماری صلاحیت اتنی ہے۔ ہم نے اپنی معیشت کو تباہی سے بچانا ہوگا، یہ تمام باتوں سے اہم ہے۔ ہندوستان امریکہ کو اپنی سرزمین استعمال کرنے کا عندیہ دے چکا ہے، اور کہا ہے کہ آخر آپ کو پاکستان سے بھی تو نبھنا ہے، ہندوستان سے کاروائیاں شروع کریں اور افغانستان اور پاکستان دونوں مسئلوں کو ایک بار ہی پٹیٹ لیں۔ کہا گیا کہ ہم اس لڑائی سے باہر رہیں گے۔ اپنی کتاب میں لکھتے ہیں، اگر غلط فیصلہ کرتے تو ہماری ایٹمی صلاحیت بھی خطرے میں پڑ سکتی تھی۔ یعنی بھوک کا جھوٹا خوف دلا کر، اپنی طاقت کو اپنی کمزوری ظاہر کیا۔

ملک میں بھی سوائے چند بچھے بچھے سے اختلافات کے، سب نے ہی اُن کا ساتھ دیا۔ اسلامی تنظیموں کے علاوہ کوئی اور آواز نہ اُٹھی، وہ بھی بس اس حد تک کہ لوگوں کی نظروں میں سرخرو ہو جائیں۔ ساری حکومتی مشین اس ہی پالیسی پر چل پڑی، اور ہماری فوج بھی۔ زیادہ تر لوگوں کا یہی خیال تھا کہ مشرف صاحب کا فیصلہ درست تھا۔ آج بھی یہی سوچ نمایاں ہے۔

CGS کی کرسی پر لیفٹیننٹ جنرل عزیز کے بعد لیفٹیننٹ جنرل یوسف آگئے تھے۔ جب میں CGS آیا تو وہ جنرل بن کر وائس چیف کے عہدے پر فائز تھے۔ جنرل یوسف فوج میں سخت خوشکمانڈر کے طور پر جانے جاتے تھے، مگر ایک سخت خول کے اندر ایک نہایت نرم دل انسان تھا، اللہ سے خوف کھانے والا۔ جب نیا CGS تعینات کرنا تھا، تو چونکہ جنرل مشرف خود آرٹلری سے تھے اور نئے وائس چیف آرٹلری کورس سے تھے، اس لئے انہیں مشورہ دیا گیا کہ کسی انفنٹری کے افسر کو لگانا مناسب ہوگا، ورنہ اُن کے ذہن میں CGS کے لئے کسی اور کا نام تھا۔ اس وجہ سے مجھے، جنرل یوسف کے کہنے پر، آٹھ ماہ کی ڈویژن کی کمانڈ کے بعد ہی پروموشن دے کر یہاں لایا گیا۔ دو سال بعد جب میں یہاں سے فارغ ہو کر جا رہا تھا تو الوداعی چائے پر، جہاں GHQ کے اور بہت سے جنرل افسر آئے ہوئے تھے، جنرل یوسف نے میرے بارے میں کہا، "ان کی وجہ سے میرا کام نہایت آسان رہا، کیونکہ یہ تمام چیزوں پر خود ہی فیصلہ دے دیا کرتے تھے"۔ نہ جانے وہ ناراض تھے یا تعریف کی تھی۔

مجھے جنرل مشرف کے احکامات وائس چیف ہی کے ذریعے ملتے۔ میرے دو سال یہاں رہنے میں، ایک مرتبہ بھی CGS کے طور پر میری اپنے چیف سے اکیلے میں ملاقات نہیں ہوئی۔ جب ملاقات ہوتی کسی میٹنگ میں ہوتی، جہاں کافی لوگ ہوتے۔ یا پھر کسی نجی محفل

آٹھواں سفر زرد دوپہر

میں جہاں سرکاری بات نہ ہو سکتی۔ فوج کے دستور کے مطابق ایک شاف افسر اپنے کمانڈر کی مخالفت، اُس کے ماتحت کمانڈروں کی موجودگی میں نہیں کرتا۔ اگر کوئی اختلاف ہو تو علیحدگی میں اُسے آگاہ کرتا ہے۔ شاید اس ہی وجہ سے مجھے مشرف صاحب سے یوں ملنے کا شرف حاصل نہ ہو سکا۔

جنرل مشرف نے حکومت میں آنے کے کچھ عرصہ بعد ہی فرقہ وارانہ تنظیموں پر سختی شروع کر دی تھی۔ یہ خوفناک گروہ ایران عراق کی جنگ کے دنوں سے پاکستان میں زور پکڑ چکے تھے۔ سعودی اور ایرانی پیسوں پر پلنے والی یہ تنظیمیں ملک میں نفرتوں کے بیج بوتیں اور فرقہ وارانہ فساد پیدا کرتیں۔ فساد پھیلانے کی خاطر عوام پر حملے بھی کرتے۔ ایک زمانے میں ایران کے ثقافتی مراکز بند کرنے کی تجویز بھی دی گئی تھی، لیکن پیچیدگیوں کے باعث اس منصوبے پر عمل نہ ہو سکا۔ سعودی عرب سے چونکہ تیل کی صورت میں مالی امداد ملتی تھی، اس لئے اُن کا زور زیادہ تھا۔ پچھلی حکومتوں نے، کچھ ان کے خوف سے اور کچھ ان کی پشت پر کھڑی طاقتوں کے دبدبے سے، دونوں اطراف کی تنظیموں پر ہلکا ہاتھ رکھا رہا۔ ان تنظیموں نے ملک میں بہت خرابی پھیلائی۔

پھر، جنرل ضیاء کے دور میں افغانستان اور کشمیر کی جہادی تنظیمیں وجود میں لائی جا چکی تھیں۔ یہ سب ہی اپنی طاقت مسجدوں اور مدرسوں سے حاصل کرتے، کیونکہ یہ اُس وقت کی حکومت کی پالیسی تھی۔ عوام میں بھی جہادیوں کی خاصی قدر تھی۔ ان کا کام ہی ایسا تھا۔ افغانستان اور کشمیر کی بالکل علیحدہ مجاہدین تنظیمیں تھیں۔ گو کچھ رابطے ضرور رہتے، لیکن کوئی براہ راست تعلق نہیں تھا۔ فرقہ وارانہ تنظیمیں اور مجاہدین، دو علیحدہ سلسلے تھے۔ ایک ہمارے ہیرو تھے اور دوسرے ناسور، مگر دونوں ہی مذہب کے زور پر چلتے۔

پھر جب ۹/۱۱ کا یوٹرن لیا تو اچانک کل کے ہیرو آج کے دشمن بن گئے، غدار کہلائے۔ کشمیر کے مجاہدین تو کچھ نہ کچھ سنبھل ہی گئے، کیونکہ اُن کا سلسلہ آہستہ آہستہ ختم کیا گیا۔ افغانستان میں ایک آزاد حکومت قائم تھی، جسے ہم نے تسلیم بھی کیا ہوا تھا۔ روس کے خلاف شروع کئے ہوئے جہاد میں افغانیوں اور القاعدہ کے علاوہ اور کئی ممالک کے باشندے بھی شامل تھے، جن سب کو ہمارا اور امریکہ کا تعاون حاصل تھا۔ پھر جب افغانستان سے سوویٹ یونین چلا گیا تو کئی غیر ملکی مجاہدین پاکستان ہی میں رہ گئے۔ یہیں شادیاں کیں اور اپنے بچوں کے ساتھ رہتے رہے۔ اس کے علاوہ، لاکھوں افغان مہاجرین بھی یہاں رہتے تھے۔ ایک کھڑی سی تھی، جو امریکہ کا حملہ شروع ہوتے ہی پھر سے اُبلنے لگی۔

میرے یہاں آنے کے کچھ بعد MO میں ایک میٹنگ ہوئی، جس میں جنرل مشرف بھی آئے۔ MO میں ایسی ملاقاتوں پر وائس چیف، میس، DGMO، DGMI، چیف کے شاف افسر اور کچھ MO کا شاف ہوتا۔ کبھی کبھار، ضرورت پر، اوروں کو بلوا لیتے۔ جنرل

مشرق نے صاف الفاظ میں کہا کہ ہم اس لڑائی میں غیر جانبدار رہیں گے۔ کہنے لگے کہ جب پاکستان اور ہندوستان کی لڑائی ہوتی ہے تو کوئی بھی ہمارا ساتھ دینے کھڑا نہیں ہوتا۔ اگر آج امریکہ افغانستان پر حملہ کر رہا ہے تو ہم اکیلے اس کا ساتھ کیسے دیں؟ اگر اور بھی مسلم ممالک اس کا ساتھ دینے پر آمادہ ہوں، تو پھر ہم بھی مل کر ساتھ دے سکتے ہیں۔ کہا کہ ہم اس جنگ سے باہر رہیں گے، اس کا حصہ نہیں بنیں گے۔ ہم سب نے اس بات پر رضامندی کا اظہار کیا۔

امریکی ہوائی جہازوں کو، افغانستان پر حملے کے لئے، بلوچستان کے اوپر سے گزرنے کی اجازت دی جا چکی تھی۔ کچھ دنوں بعد MO میں ایک اور میٹنگ ہوئی، جس میں جنرل مشرف نے کہا کہ امریکہ جبکہ آباد کا ہوائی اڈہ استعمال کرنا چاہتا ہے، تاکہ اگر کسی ہوائی جہاز میں، کاروائی کے دوران، فنی خرابی ہو جائے تو ایمرجنسی لینڈنگ کر سکے۔ میں نے کہا کہ یہ تو ہماری غیر جانبدارانہ پالیسی کے خلاف ہے، تو کہنے لگے نہیں میں تو انسانیت کی بنیادوں (humanitarian grounds) پر دینا چاہتا ہوں، صرف پائلٹ کی جان بچانے کے لئے۔ جب کوئی بھی اُن کی طرف داری میں نہ بولا تو ناراض ہو گئے اور غصے سے کہا کہ میں اُن کو ہاں کہہ چکا ہوں۔ ہم ایک دوسرے کا منہ دیکھتے رہے۔

کچھ دنوں میں اُن کے دفتر سے حکم ملا کہ جبکہ آباد ہوائی اڈے کی حفاظت کے لئے کچھ سپاہ تعینات کر دیں۔ کوئٹہ کی کوروا حکامات جاری کر دیے کہ ایک بٹالین بھیج دیں۔ بٹالین جب وہاں پہنچی تو وہاں پہلے سے امریکی فوج کے لوگ موجود تھے، جنہوں نے ہماری سپاہ کو انٹر پورٹ کے باہر ہی روک دیا اور کہا کہ اس جگہ کی حفاظت ہم خود کر رہے ہیں، آپ لوگ یہاں نہیں آ سکتے۔ آپ نے جو دفاع لگانی ہے وہ ہمارے حفاظتی حصار کے باہر رہتے ہوئے لگائیں۔ پھر اُن کی سپاہ کے باہر رہتے ہوئے ہماری سپاہ نے حفاظتی پوزیشنیں اختیار کیں۔ کچھ عرصے بعد اُس ہی بٹالین سے پتا چلا کہ یہ اڈہ لگاتار جنگی ہوائی جہازوں کے لئے استعمال ہو رہا ہے، جن کی پروازیں رات دن جاری رہتی ہیں۔ یقیناً اس ہی مقصد سے اڈہ دیا گیا تھا، پائلٹ کی جان بچانے کو نہیں۔ جب جنرل مشرف کو یہ بات بتائی گئی تو انہوں نے کہا کہ امریکنوں نے لیا تو اُس ہی غرض سے تھا، اب پتا نہیں وہ یہاں کیا کر رہے ہیں۔ بات کو یوں ٹال کر آگے بڑھ گئے، جیسے کوئی غیر اہم سی بات ہو۔

ہم آہستہ آہستہ اس جنگ میں پوری طرح سے امریکہ کے اتحادی بن گئے۔ افغانستان میں مسلمانوں کے قتل عام میں اُس ہی طرح ملوث ہو گئے جیسے امریکہ کے باقی اتحادی۔ صرف ایک جھوٹ کا پردہ آنکھوں پر ڈال دیا گیا، جسے رفتہ رفتہ یہ رنگ دینا شروع کیا کہ یہ جنگ ہماری اپنی بقا کی جنگ ہے۔

یہ ماتم وقت کی گھڑی ہے *

میں گوادر کے ساحل پر بیٹھا چائے پی رہا تھا۔ شام کے ڈھلتے سورج کی کرنیں پانی کے سکوت پر چمک رہی تھیں۔ ایک ریٹائرڈ میجر صاحب، جو گوادر پورٹ پر کام کرتے تھے، مجھے ملنے آئے، پاس بٹھالیا۔ مجھے بھی فوج سے ریٹائر ہوئے سال بھر ہو چکا تھا۔ NAB میں کام کر رہا تھا اور اس ہی سلسلے میں یہاں آیا تھا۔ باتوں باتوں میں میجر صاحب نے کہا، "سر، یہاں امریکنوں کی نیوی نے ساحل پر اُترنے (amphibious landing) کی خاصی بڑی کارروائی کی تھی اور پانی کے جہازوں سے کافی جنگی ساز و سامان اُتار رہا تھا، پھر اُن کی گاڑیاں، جوان جہازوں پر ہی آئیں تھیں، یہ سامان لے کر افغانستان کی جانب چلی گئیں۔" میں نے پوچھا، "یہ کب کی بات ہے؟" تو جو وقت میجر صاحب نے بتایا، میں اُن دنوں CGS تھا۔ مجھے یقین نہ آیا۔ میں نے کہا، "اگر ایسا ہوا ہوتا تو مجھے ضرور علم ہوتا۔" کہنے لگے، "اگر میری بات کا یقین نہیں تو میرے ساتھ صبح چلیں، آج بھی وہاں اُن کے نشانات موجود ہیں۔" میں اُن کے اصرار پر صبح اُن کے ساتھ اُس جگہ پہنچ گیا۔ یقیناً ساحل پر تمام نشانات موجود تھے، بکتر بند گاڑیوں کے بھی۔ دفاعی مورچے بھی کھدے تھے۔ میں دیکھ کر بہت حیران ہوا، اور سوچا کہ کیا وجہ تھی کہ فوج کے CGS سے یہ بات چھپائی گئی۔ کتنے ہی لوگوں کو تو خبر ہوگی، آخر مجھے کیوں نہ پتا چلا۔ یقیناً ISI اور MI دونوں کو اس کا علم ہوگا۔ MI کا ادارہ تو میرے نیچے ہی کام کرتا تھا، مگر اُن دنوں کچھ نوعیت ایسی تھی کہ جو اجازت ہوتی وہی مجھ کو بتایا جاتا۔ پھر کوسٹ گارڈ (Coast Guard) جو فوجی کاروائیوں میں کراچی کے کور کے نیچے کام کرتی ہے، اُنہیں بھی یقیناً علم ہوگا اور کراچی کے کور کمانڈر کو بھی، فضائیہ اور نیوی کو بھی۔ لیکن CGS کو اس کی بھٹک نہ لگنے دی گئی۔

واپس آیا تو پُرانی نوٹ بک کھولی، صفحے پلٹے تو دیکھا لکھا تھا، "امریکی فوج اُرمارہ یا جیوانی کے ساحل سے افغانستان کو ایک زمینی راستہ کھولنے کا سوچ رہی ہے۔" کچھ آگے لکھا تھا، "۱۹ نومبر ۲۰۰۱ء، صدر صاحب کے دفتر سے بتایا گیا کہ پسپائی اور اُرمارہ کا علاقہ دیکھنے کے لئے امریکنوں کو اجازت دے دی گئی ہے۔" پھر اس علاقے میں دو یا تین امریکن میرینز (marines) بھی آئے جو نومبر کے آخر تک علاقہ دیکھ کر واپس چلے گئے۔ اس کا بھی اندراج ڈائری میں تھا۔ اس کے علاوہ اور کوئی اطلاع میرے پاس نہیں تھی۔ جنرل یوسف صاحب سے ملنے گیا، جو اُن دنوں وائس چیف ہوا کرتے تھے، اب ریٹائر ہو چکے تھے۔ وہ بھی لاعلم تھے، اور سُن کر بہت حیران ہوئے۔ مجھ سے کیوں چھپایا گیا، کہہ نہیں سکتا۔ یہ بھی شاید "need to know basis" پر ہوا تھا۔

CGS فوج میں وہ منصب ہے، جسے فوج کی تمام کاروائیوں کی خبر ہونی لازم ہے، خاص کر اس نوعیت کی کاروائیاں۔ مگر ان دنوں، کیونکہ فوج میں امریکہ کے ساتھ اس گٹھ جوڑ پر بہت اعتراضات تھے، اس وجہ سے "need to know basis" پر کام کیا جا رہا تھا۔ ایک اور ایسا ہی قصہ یوں کھلا کہ میرے دفتر میں MI سے روزانہ اخباروں کی تمام اہم خبروں کے کلپ کردہ تراشوں کی فائل بھیجی جاتی تھی۔ ایک دن ایک خبر آئی کہ کراچی کے پرانے ایئر پورٹ کے نزدیک کوئی جھگڑا ہو گیا، جس میں کچھ فوجی بھی شامل تھے۔ میں نے اس خبر پر سوالیہ نشان لگا دیا۔ اگلے دن اُس کا جواب لکھا ہوا آیا تو پتا چلا کہ یہ سپاہی جن کا جھگڑا ہوا تھا NLC (National Logistic Cell) کے ڈرائیور تھے، جو یہاں پر قائم ایک امریکی دفتر کے ساتھ کام کر رہے تھے۔ یہ دفتر کراچی پورٹ سے NLC کی گاڑیوں پر سامان لاد کر افغانستان پہنچانے کے لئے قائم کیا گیا تھا۔ یہ کام فوج کی نگرانی میں ہو رہا تھا۔ میں نے QMG (Quarter Master General) کو فون کیا، جو GHQ میں بیٹھتے ہیں اور NLC ان ہی کے نیچے کام کرتی ہے، تو انہوں نے اس بات کی تصدیق کی۔ اگر یہ خبر میں اخبار میں نہ پڑھتا اور اُس پر سوالیہ نشان نہ لگاتا تو شاید یہ بات بھی میرے علم میں نہ آتی۔ ہماری فوج، امریکی فوج کی رسد لئے کراچی سے افغانستان تک پھیلی ہوئی تھی، اور CGS بے خبر تھا۔

جنرل مشرف سے جب بھی کوئی ایسی بات کہی جاتی، وہ گول مول کر کے ٹال دیتے۔ کہتے ہیں سب سمجھ رہا ہوں، جو پاکستان کے لئے بہتر ہے وہی کر رہا ہوں۔ آپ لوگ نہیں جانتے امریکہ کی حکومت کا کتنا دباؤ ہے، اور ہم کس مشکل میں پھنسے ہوئے ہیں۔ میں تمام تصویر دیکھتا ہوں (I see the bigger picture)، آپ کی نظر سارے معاملات پر نہیں ہوتی۔ سب کچھ ملک کے لئے ہی کر رہا ہوں۔ حالات کی پیچیدگیوں کو سمجھیں، اور صرف جذباتی انداز میں چیزوں کو نہ دیکھیں۔ آج حقیقت پسندی کی ضرورت ہے۔ ہمارا ملک کبھی ایسے حالات سے دوچار نہیں ہوا۔ حوصلے اور تحمل سے کام لینا ہوگا۔ پھر میں چپ ہو جاتا۔ کبھی لگتا کہ شاید میں ہی جذبات میں بہک رہا ہوں، باقی سب تو ان ہی کے خیالات رکھتے ہیں۔ سارا ملک ہی۔ مگر اپنے آپ کو لاکھ سمجھانے پر بھی دل کو چین نہ آتا۔

نومبر ۲۰۰۱ کے شروع میں MO سے پتا چلا کہ امریکی فوج کی ٹاسک فورس سورڈ (TF SWORD) کی کاروائیاں شمالی اتحاد کے ساتھ مل کر شروع ہیں اور وہ شمالی افغانستان سے کابل کی طرف پیش قدمی کریں گی۔ اس کاروائی کے لئے چیف ایگزیکٹو (Chief Executive -- CE) کے دفتر سے امریکنوں کو سٹشی، ژوب اور دالبندین کی ایئر سٹریپس (airstrips) کچھ عرصے کے لئے استعمال کرنے کی اجازت دے دی گئی ہے۔ امریکی CENTCOM کے نمائندے MO میں ارتباط کے لئے بھی آئے۔ یہ اور CIA کے نمائندے گا ہے بگا ہے MO میں آتے رہتے۔ مجھ سے بھی کبھی کبھار ملنے آتے۔ MO سے بتایا گیا کہ سٹشی پر ان کا بیس ہوگا، جہاں جیٹ ایئر فیلڈ موجود تھی جو متحدہ عرب امارات کے کسی شہزادے نے شکار میں سہولت کے لئے بنوائی تھی۔ اگر ضرورت پڑی تو دالبندین اور ژوب کی

ایئر سٹرپس استعمال کی جائیں گی۔ ہمارے اندرونی خدشات اور لوگوں کی ناراضگی کو ذہن میں رکھتے ہوئے یہ فیصلہ ہوا کہ اگر دالبندین اور ثروبا ایئر جیسی میں استعمال بھی ہوئے تو صرف رات کو ہی ہوں گے۔ سٹشی پر، صرف اس آپریشن کے لئے چار C-130 جہاز اور بارہ ہیلی کاپٹر ہوں گے، جو طالعان کے سپلائی کے راستوں کو کاٹنے (interdict) میں استعمال ہوں گے۔ اس ہی مہینے یہ بھی پتا چلا کہ CIA کے ڈرونز (drones) سٹشی پہنچ چکے ہیں اور یہیں رہیں گے۔ کہا گیا کہ یہ ویسے بھی ہمارا ہوائی اڈہ نہیں ہے۔ یہ علاقہ ہم نے متحدہ عرب امارات کو طویل مدت کی لیز پر دیا ہوا ہے اور انھوں نے ہی یہ اڈہ تعمیر کروایا ہے۔ ہمارا اس پر کوئی اختیار نہیں۔ ویسے بھی چونکہ یہ آبادی سے دور ہے لوگوں کی نظروں میں نہیں آئے گا۔

MO سے ملی ہوئی یہ خبریں میں نے جنرل یوسف کو بتائیں اور کہا کہ ہمارے لئے یہ باتیں بہت پیچیدہ گئیں۔ ہمیں اس طرح امریکہ کی جنگ میں ملوث نہیں ہونا چاہیے۔ انھوں نے امریکہ کے بڑھتے ہوئے دباؤ اور ہماری مجبوریوں کا ذکر کیا اور کہا کہ جنرل مشرف بھی ان تمام چیزوں کی پیچیدگیوں سے واقف ہیں اور جو کم سے کم کر سکتے ہیں وہی کر رہے ہیں، حالات کو ہم سے بہتر سمجھتے ہیں۔ جنرل یوسف خود بھی ان باتوں سے پریشان رہتے تھے اور امریکہ کے حق میں اس جنگ میں ہماری شمولیت کے حامی نہ تھے، مگر ہماری کمزوریوں کا بھی لحاظ تھا۔

امریکی فوج کے کابل پر قبضہ کرتے ہی ہندوستان کے بہت سے لوگ وہاں پہنچ گئے۔ یہ اپنے ساتھ ٹی وی، وی سی آر، اداکاروں کے نیم عریاں پوسٹرز اور اس ہی قسم کے اور مواد لے کر آئے اور فوراً ہی کابل ٹی وی سٹیشن کی نشریات بھی شروع کر دیں۔ تمام سامان لوگوں میں اونے پونے داموں بانٹ دیا۔ یہ ان کا افغانستان میں پہلا قدم تھا۔ پھر آہستہ آہستہ حکومت کے ہر محکمے میں داخل ہوتے گئے، کہیں مشیر، کہیں تربیت دینے، کہیں محکموں کی تعمیر نو کی خاطر اور کہیں بہبود نسواں کے لئے۔ اہم محکمے جوانہوں نے چنے وہ تھے، انصاف اور پولیس کا نظام، فوج کی تشکیل اور تربیت، دفتر خارجہ، تعلیمی نظام اور خفیہ ایجنسی۔ ان کی تمام تفصیلات ISI کے ذریعے ہمیں ملتی رہیں۔

دسمبر ۲۰۰۱ کے شروع میں فوج نے قبائلی علاقے میں پہلا قدم رکھا، وہاں کے لوگوں کے لئے ترقیاتی منصوبے شروع کرنے کے لئے۔ اس ہی دوران ہمیں یہ خبر دی گئی کہ افغانستان سے کچھ عرب جنگجو پاکستان میں داخل ہو سکتے ہیں، جس کا زیادہ خدشہ بلوچستان کے علاقے سے ہے۔ بارڈر پر بارہ جگہیں چمن کے ارد گرد اور آٹھ پاراچنار کے علاقے میں ایسی تھیں جن پر فرنٹیر کور (FC) کے دستے تعینات کر دئے گئے۔ پانچ عرب مجاہدین چمن سے گرفتار بھی ہوئے اور ISI نے بتایا کہ چمن، ثروبا اور چاغی کے علاقوں سے اور لوگوں کے آنے کا خطرہ ہے۔

آٹھواں سفر آرد دوپہر

CENTCOM کے کمانڈر جنرل ٹومی فرینکس جب پاکستان آتے، مجھے خوش آمدید کہنے انٹرپورٹ جانا پڑتا۔ عموماً تو اسلام آباد سے ہو کر واپس چلے جاتے، اور میری صرف انٹرپورٹ پر سرسری سی ملاقات ہوتی۔ کبھی کبھار GHQ جنرل یوسف سے ملنے بھی آ جاتے۔ جب پہلی مرتبہ مجھے انٹرپورٹ جانے کا کہا گیا تو میں نے جنرل یوسف سے کہا کہ میں بہت مصروف رہتا ہوں، GHQ میں کئی لیفٹیننٹ جنرل ہیں، کسی ایک کو یہ کام سونپ دیں۔ کہنے لگے، نہیں یہ ضروری ہے کہ آپ ہی انہیں لینے جائیں، اُن کا فوج سے متعلق سارا کام آپ کے ہی نیچے آتا ہے۔

ایک مرتبہ جنرل مشرف MO آئے اور بتایا کہ امریکنوں کو خدشہ ہے کہ ہمارے علاقے میں جو غیر ملکی مجاہدین رہتے ہیں وہ بارڈر پار کر کے افغانستان میں نہ داخل ہو جائیں، ہمارے ملک سے امریکنوں پر حملہ نہیں ہونا چاہیے۔ اس سلسلے میں کچھ سپاہ کو FATA (Federally Administered Tribal Areas) میں بھیجا جائے۔ تاکہ وہ تمام غیر ملکیوں کو رجسٹر کر لیں۔ ہمیں پتا تو چلے کہ ہیں کتنے۔ میں نے کہا کہ اس میں افغان باشندے تو شامل نہیں ہو سکتے، کیونکہ یہ اُس طرح کے غیر ملکی نہیں ہیں اور ان کو شامل کرنے میں بہت مسائل پیدا ہونگے۔ انہوں نے کہا، نہیں افغانیوں کے علاوہ، دوسرے غیر ملکیوں کا حساب کتاب لگالیں، پھر سوچتے ہیں کہ کیسے یقین کیا جائے کہ یہ بارڈر پار نہیں جائیں گے۔ کیا ان کو کسی ایک جگہ اکٹھا کر لیں یا کچھ اور طریقہ کریں۔ پہلے تو اس بات کا تعین کر لیں کہ ہیں کتنے اور کہاں ہیں۔ اس کام کے لئے پشاور کے کور کو احکامات جاری کر دیئے گئے۔

غیر ملکی مجاہدین کے سلسلے میں جنرل ٹومی فرینکس بھی GHQ آئے۔ کہنے لگے، "اپنے تالاب کو مگر مچھوں (غیر ملکی مجاہدین) سے خالی کر لیں تاکہ آپ کی مچھلیاں (ہماری آبادی) سکون سے رہ سکیں۔ ہمارے اور آپ کے لئے یہ بہت اہم مسئلہ ہے، اس میں دونوں کا بہت نقصان ہو سکتا ہے۔"

امریکہ کی فوجیں شمال سے طالبان کو دھکیلتی ہوئی نیچے لے آئیں۔ پھر انہیں گھیر کر ہمارے بارڈر کے ساتھ تورا بورا (Tora Bora) کی پہاڑیوں کی طرف دھکیل دیا، اور اپنی کاروائیاں کچھ دنوں کے لئے روک رکھیں، تاکہ طالبان کی بچی کچھی سپاہ بھی یہیں پہنچ جائے۔ ان پہاڑوں میں غاروں کے کئی سلسلے بنے تھے جن سے امریکی بخوبی واقف تھے، کیونکہ سوویٹ یونین کے خلاف مجاہدین کو یہاں سے CIA اور ISI بھیجا کرتی تھیں۔ امریکی حکام کے مطابق اب اسامہ بن لادن اور القاعدہ کی تمام اعلیٰ قیادت اس علاقے میں تھی اور CIA کے پاس اسکی مکمل اطلاع موجود تھی، مگر انہیں گھیرے میں لینے اور پکڑنے کی کوئی کوشش نہیں کی گئی، بلکہ پاکستان میں داخل ہونے کے راستے اور مواقع فراہم کئے گئے۔

ہمیں کسی بات کی کوئی خبر نہ لگنے دی اور مگر مجھے ڈھونڈنے کے کام پر لگائے رکھا۔ جب تو را بورا پر گھیرا تنگ کیا اور امریکی لڑاکا طیاروں نے شدید بمباری سے ان غاروں کے سلسلے کو تباہ کرنا شروع کیا جہاں جہادیوں نے پناہ لی ہوئی تھی، تو یہاں سے بچے کچھے جہادی پاکستان میں داخل ہونے لگے۔ دسمبر ۲۰۰۱ کے وسط میں خفیہ اداروں سے خبر ملی کہ کافی مجاہدین سرحد کے پار تو را بورا کے علاقے سے پاکستان میں داخل ہو رہے ہیں۔ پھر پشاور کی کور نے بھی اس کی تصدیق کی۔

۱۸ دسمبر کو خبر ملی کہ جنرل ٹومی فرینکس کا CE کوفون آیا تھا کہ بارڈروں پر اپنی کاروائی کا ارتباط ہماری فوج سے کر لیں۔ اب کیا ارتباط ہو سکتا تھا، اس کا وقت تو گزر چکا تھا، دودھ بہہ چکا تھا، اب زمین ہی چاٹ سکتے تھے۔ فوری طور پر کچھ سہا بارڈروں کی جانب روانہ کیا گیا۔ یہ پہاڑی سلسلہ بہت اونچا تھا اور ان دنوں برف سے ڈھکا ہوا۔ پشاور کی کور کے پاس برفانی علاقوں میں کاروائیوں کے لئے کپڑے تک نہیں تھے، FC کے لوگ بچارے شلوار قمیض اور چپلوں میں ہی برف پوش پہاڑوں پر چڑھ دوڑے۔ FCNA گلگت کا سامان کچھ راولپنڈی اور کچھ گلگت سے منگوایا، مگر ان تک پہنچتے پہنچتے کافی وقت صرف ہو گیا۔ جب تک سپاہ پہاڑوں پر صف آراء ہوئی، مجاہدین تمام پہلے ہی بارڈر پار کر چکے تھے۔ پھر آہستہ آہستہ FATA کے علاقے میں فوج کی تعداد بڑھتی رہی۔

قریب دو سو مجاہدین پاکستان کے اندرونی علاقوں سے حراست میں لئے گئے۔ وہ پکڑے بھی اس لئے گئے کہ ہم سے چھپ نہیں رہے تھے، سمجھتے تھے کہ ہم محفوظ مقام پر پہنچ گئے ہیں۔ ان کو بسوں میں بٹھا کر جب پیچھے منتقل کیا جا رہا تھا تو ایک بس میں انہوں نے ڈرائیور اور گارڈ پر قابو پا لیا اور بس سے اتر کر فرار ہو گئے۔ پھر ان کو ڈھونڈا گیا، باقی تو پکڑے گئے لیکن چھ غائب ہو گئے۔ نہ جانے اور کتنے تھے جو ہم سے چھپ گئے۔

جب اگلی ملاقات میں جنرل ٹومی فرینکس سے میں نے پوچھا کہ ہمیں کیوں نہ بتایا گیا کہ آپ کی فوج یہ کاروائی کرنے لگی ہے، تو معذرت سے کہا کہ کچھ ارتباط میں دیر ہو گئی۔ لڑائی میں ایسی غلطیاں ہوتی رہتی ہیں۔ یہ بات کسی صورت مانی نہیں جاسکتی۔ لڑائیوں کے منصوبے اس طرح بغیر سوچے سمجھے نہیں بنائے جاتے۔ یہ تو ایک سوچی ہوئی تدبیر کے مطابق عین موقع پر ہمیں ڈائیورٹ (divert) کیا گیا، کہ ہم غیر ملکیتوں کی گنتی میں لگ جائیں اور ہمارا دھیان دوسری طرف ہو جائے، تاکہ ان مجاہدین کو پاکستان میں دھکیلا جاسکے۔

افغانستان پر حملے کا منصوبہ صرف روایتی فوجی منطق پر نہیں بنایا تھا۔ اُس کے کچھ اور بھی مقاصد تھے، جو اُس وقت نظر نہیں آتے تھے۔ طالبان کی فوج کا سارا رجحان شمال کی جانب تھا، اُن کی سپاہ کا جھکاؤ بھی اُدھر ہی تھا، کیونکہ وہ شمالی اتحاد (Northern Alliance)

سے لڑ رہے تھے۔ جب کہ اُن کی ساری سپلائی لائن پاکستان کی طرف سے جاتی تھی۔ امریکہ کی بھی ساری سپلائی لائن پاکستان سے جاتی تھی، یہیں اُن کے اڈے بھی تھے۔ موزوں منصوبہ یہ ہوتا کہ شمال میں شمالی اتحاد سے مل کر طالبان کو اس غلط فہمی میں رکھتے کہ حملہ یہیں سے ہوگا۔ پھر حملہ پاکستان کی جانب سے کرتے۔ اس کے فوائد بہت تھے۔ یہاں سے کاروائیوں کے لئے زمینی راستے بھی آسان تھے، بہ نسبت شمالی راستوں کے۔

اگر پشاور کی جانب سے ایک اور چھوٹا حملہ کابل کی طرف بھی ہوتا، جو شمالی اتحاد کے حملے سے منسلک کیا جاتا تو طالبان کی ساری فوج ان ہی میں اُلجھ جاتی۔ پھر چین کی طرف سے بڑا حملہ کرتے، جہاں نسبتاً میدانی زمین اور سپاہ سے خالی علاقے ملتے۔ بلوچستان میں اتنی رکاوٹ بھی نہ تھی۔ حملہ شروع ہوتے ہی طالبان کی سپلائی لائنیں کٹ جاتیں اور وہ حملے کے اس ہتھوڑے اور شمالی اتحاد کے سندان (anvil) کے درمیان پس جاتے۔ کوئی نکلنے نہ پاتا۔ اور نہ ہی ہماری طرف سے کوئی قبائلی امداد شروع ہو سکتی۔ اُس وقت قبائلی علاقوں میں اتنی بل چل بھی نہیں تھی۔ کچھ عرصے کے لئے امریکہ کی سپلائی کے راستوں کو محفوظ بنانا کوئی اتنا پیچیدہ مسئلہ نہیں تھا۔ یہ کہہ دینا کہ پاکستان کی فوج رکاوٹ ڈالتی یا یہ کہ ان پر اتنا بھروسہ نہیں تھا، غلط ہے۔ جنرل مشرف ہر طرح کی امداد دینے پر راضی تھے، اور فوج اُن کے حکم پر کاربند۔ کیا کہیں کبھی کوئی رکاوٹ ملی؟ انہوں نے اوپر سے حملہ شروع کیا اور پھر ہمیں بھی اس سے آگاہ نہ کیا، کہ جب حملے کا ہتھوڑا نیچے پہنچا تو کوئی سندان موجود نہ تھا، اور سب کو دھکیل کر پاکستان میں پہنچا دیا۔

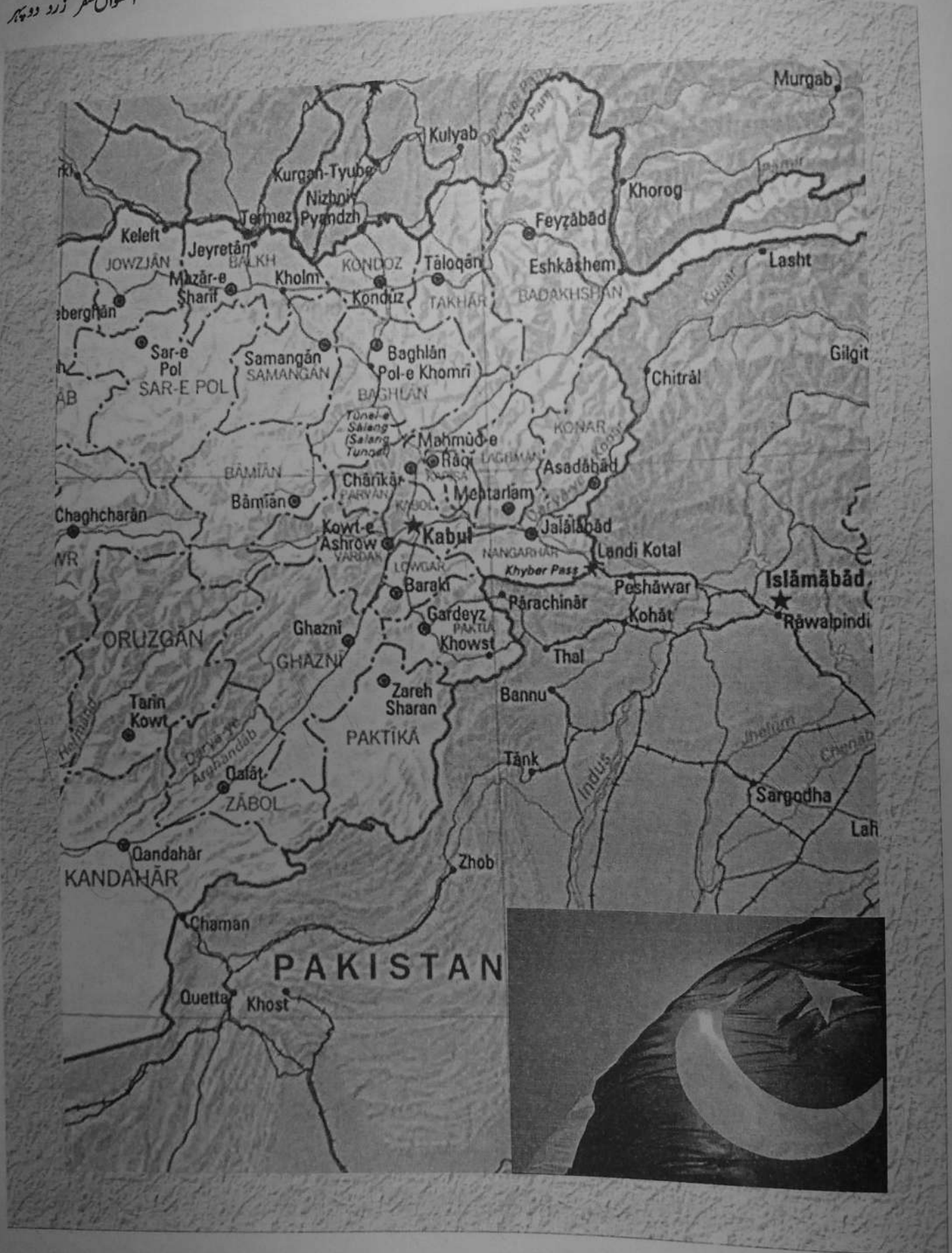
اتنی بڑی غلطی فوجی نہیں کرتا، جو ایک عام انسان کو بھی نظر آجائے۔ ایک آدمی تو منصوبہ نہیں بناتا، کتنے ہی لوگ اس میں شامل ہوں گے، کیا کسی کو یہ عام سی غلطی نظر نہیں آئی؟ اگر یہ غلطی تھی، پھر اس پر دوسری بھی کیا غلطی تھی جو ہمیں تمام باتوں سے لاعلم رکھا گیا، جب کہ ان دونوں غلطیوں کا ایک ہی انجام ہوا، کہ سارے مجاہدین کو پاکستان میں محفوظ ٹھکانے ملے۔ یہ صرف ایک سوچا سمجھا منصوبہ تھا کہ پاکستان کو اس جنگ میں لپیٹ لیا جائے اور جنگ اس ڈھنگ سے کی جائے کہ پورے علاقے میں پھیل جائے اور لمبے عرصے تک جاری رہے۔ پھر آہستہ آہستہ پاکستان کو دباؤ کے نیچے لایا جائے۔ کیوں شروع میں ہی پاکستان کی گردن چھڑا دیں؟

جنرل مشرف سے میں نے کہا کہ امریکی فوج نے ہمیں جان بوجھ کر اپنی کاروائیوں سے غافل رکھا، اور ہمارے لئے اتنی پیچیدگیاں پیدا کر دیں، ہم اُن پر بھروسہ نہیں کر سکتے۔ میں نے کہا کہ وہ ہمارے دوست کیسے ہو سکتے ہیں، جبکہ انہوں نے ہمارے واحد دشمن، ہندوستان کو ہماری پیٹھ کے پیچھے لا بٹھایا ہے؟ نظر آتا ہے کہ ان کے عزائم ہمارے لئے خطرہ ہیں۔ وہ امریکنوں کے خلاف ایسی باتیں سننا پسند نہیں کرتے تھے، کہنے لگے کہ مفروضوں پر تو ہم ملک کی پالیسیاں نہیں بنا سکتے اور نہ ہی سازشی قیاس آرائیوں (conspiracy)

(theories) پر یقین کر کے ہم امریکہ کو اپنا دشمن سمجھ سکتے ہیں۔ جو سامنے نظر آ رہا ہے اُس ہی کے مطابق ملک چلانا ہوگا۔ شاید اُن کے دل میں بھی ایسے خدشات ہوں، مگر اس نازک وقت پر کہہ نہ سکتے ہوں اور نہ ہی کسی کو کہنے کی اجازت دے سکتے ہوں۔

۲۶ جنوری ۲۰۰۲ کو ہماری ایک پلٹن کے تقریباً پچاس لوگ، اُن کے ساتھ ایک SSG کی ٹیم، بمعہ چار امریکنوں کے، مگر مچھوں کی تلاش میں ایک گھر پر پہنچے۔ خبر ملی تھی کہ یہاں غیر ملکی مجاہدین موجود ہیں۔ کئی بار ایسی خبریں ملتیں مگر کچھ نکلتا نہیں۔ جب گھر پہنچ کر دروازہ کھٹکھٹایا تو ایک شخص نکلا۔ اُس سے پوچھا کہ گھر میں کون کون ہے، تو اُس نے کہا عورتیں اور بچے ہیں۔ کہا ہم تلاشی لینا چاہتے ہیں۔ جواب دیا، "ٹھہریں عورتوں کو پردہ کرنے کا کہہ دوں۔" یہ کہہ کر وہ اندر چلا گیا۔ پھر واپس نہ آیا۔ کافی دیر دروازہ کھٹکھٹانے، بعد باہر نکلا اور کہا کہ اندر چلے جائیں۔ کچھ لوگ اندر داخل ہوئے۔ جب آنگن میں پہنچے تو وہاں موجود لوگوں نے فائر کھول دیا۔ کچھ تو وہیں گر گئے اور کچھ، جو دروازے کے قریب تھے، باہر بھاگ آئے۔ اس تمام کاروائی کی ایک افسر نے کمرے سے وڈیو بھی بنالی، جو بعد میں سب نے دیکھی۔ پھر سپاہیوں نے گھر کا گھیراؤ لیا۔ رات دس بجے تک دونوں جانب سے فائر ہوتا رہا۔ پھر خاموشی ہو گئی۔ فائر بند ہونے کے کچھ دیر بعد یہ غیر ملکی جنگجو گھر سے نکلے اور سپاہیوں کا گھیراؤڑتے ہوئے کامیابی سے فرار ہو گئے۔ ایک سپاہی کی رائفل بھی ہاتھ سے چھین کر لے گئے۔ کوئی ہاتھ نہ آیا۔

یہ پہلا واقعہ تھا کہ فوج اور مجاہدین میں براہ راست فائر کا تبادلہ ہوا۔ فوج کے لئے باعث شرمندگی تھا۔ باقاعدہ انکوائری ہوئی اور کئی افسران کو سزا ملی۔ اس کے بعد فوج اور زیادہ محتاط ہو گئی اور فائر کرنے میں پہل کار حجامانے لگا۔ گا ہے بگا ہے کہیں نہ کہیں فائر کا تبادلہ ہوتا رہتا۔ SSG کا پہلا آپریشن بھی اسی نوعیت کا رہا۔ کچھ غیر ملکی مجاہدین کو گھیرے میں لے لیا گیا، پھر انہیں میگا فون کے ذریعے بہت سمجھایا کہ ہتھیار ڈال دیں انہیں کچھ نہیں کہا جائے گا، مگر وہ صرف گولیوں سے جواب دیتے۔ آخر دم تک مجاہدین لڑتے رہے اور سب نے جان دے دی۔ ایک نے بھی ہتھیار نہ پھینکا۔ آخری زخمی لمبی گھاس میں چھپ گیا۔ SSG کے گھیرے میں پھنسا، گا ہے بگا ہے رات تک فائر کرتا رہا۔ صبح اُس کی لاش ملی۔ تنخواہ لینے والا سپاہی شہادت کے متلاشی کا سامنا کرتے گھبراتا۔ آمنے سامنے مقابلے میں مجاہدین کا ہاتھ ہمیشہ بھاری رہتا۔



نئی جہت کا لگے اب اس درخت میں پیوند*

۱۳ دسمبر ۲۰۰۱ کو ہندوستان کی پارلیمنٹ بلڈنگ پر ایک مسلح گروہ نے حملہ کیا، اور ہم کو اس حملے کا مورد الزام ٹھہرایا گیا۔ پھر ہندوستان نے اپنی فوجیں ہمارے بارڈروں پر لگانی شروع کر دیں۔ ہمیں بھی دفاعی اقدام لینے پڑے۔ جنگ کا ڈنکا بجایا گیا۔ قوم کو بتایا گیا کہ سب میرے جھنڈے تلے اکٹھے ہو جاؤ، سب مل کر میری سی کو مضبوطی سے تھام لو۔ پاکستان کو خطرہ ہے، کسی وقت بھی جنگ ہو سکتی ہے۔

عجب اتفاق ہے کہ اس سے ایک ہی دن پہلے ملک کے چیف ایگزیکٹو (CE) نے ایک کانفرنس میں بتایا تھا کہ امریکہ کا کہنا ہے کہ ISI میں نچلے طبقوں میں اب بھی مجاہدین کی طرف داری کے اثرات موجود ہیں۔ دوسرے دن مجاہدین کی کارروائی ہو گئی۔ حکم دیا کہ جن لوگوں میں یہ رجحان نظر آئے انہیں فوراً تبدیل کر دیا جائے۔ جنرل مشرف نے کہا کہ ہم کسی بھی صورت اپنی سرزمین کو "دہشت گردی" کے لئے استعمال نہیں ہونے دیں گے۔ یہ بات وہ اس سے پہلے بھی کہہ چکے تھے۔ کشمیری مجاہدین بھی دہشت گرد قرار پا چکے تھے۔ جہاد بند کر دیا گیا تھا اور فوج کو بھی یہی حکم تھا کہ کوئی بارڈر کے پار نہ جانے پائے۔ یہ سب پہلے ہی ہو چکا تھا، لیکن کھل کر عوام کے سامنے اس بات کا اظہار نہیں کیا گیا تھا، تاکہ لوگ مشتعل نہ ہوں۔ اب تک کشمیر کی جہادی تنظیمیں برقرار تھیں، مگر ان کو آہستہ آہستہ لپیٹا جا رہا تھا۔ افغانستان پر یوٹرن (U turn) کے بعد، اتنی جلدی کشمیر کے جہاد سے ہاتھ اٹھانے پر حکمران کو عوام سے خوف آتا تھا، مگر کام جاری تھا۔

دہلی میں دھماکے کے بعد ہم دنیا کی نظروں میں مجرم بنے کہ اب تک دہشت گرد تنظیموں کی امداد کرتے ہیں۔ یہ بے بنیاد الزام جرم تھا۔ اس وقت تک پاکستان کشمیریوں کے جہاد کے لئے امداد بند کر چکا تھا اور امریکہ کو یقین دلوا چکا تھا کہ آئندہ ایسا ہرگز نہیں ہوگا۔ ISI سختی سے اس پالیسی پر کاربند تھی۔ ظاہر ہے، کشمیری مجاہدین کا کوئی ایک منظم گروہ تو تھا نہیں، کچھ نہ کچھ سر پھرے جان ہتھیلی پر لئے پھرتے تھے، اللہ کی راہ میں نکلے تھے، کسی کی کیوں سنتے۔ لیکن حکومت ہرگز اس میں ملوث نہیں تھی۔ پھر یہ دھماکے کرنے صرف مجاہدین کا ہی کام تو نہیں۔ انٹیلی رکھتیں۔ اپنے ملک میں دھماکے کروانے میں کوئی آر نہیں سمجھتیں۔ انہیں صرف مقاصد (ends) کی فکر ہوتی ہے، ذرائع (means) کی نہیں۔

آٹھواں سفر زرد دوپہر

۱۶ دسمبر کو چاند رات تھی۔ جنرل مشرف کے گھر ایک میٹنگ بلوائی گئی۔ انہوں نے بتایا کہ امریکی سفیر نے ایک ڈیمارش (demarche) پیش کیا ہے جس میں مطالبہ کیا گیا ہے کہ لشکرِ طیبہ اور جیشِ محمد کے خلاف سخت کارروائی کی جائے، حزبِ المجاہدین کو بھی روکا جائے۔ ان تمام دہشت گرد تنظیموں کو غیر قانونی قرار دیا جائے۔ انہوں نے پڑھ کر سنایا۔ لکھا تھا کہ لشکرِ طیبہ اور جیشِ محمد امریکہ کے مفاد کو خطرہ ہیں اور یہ تنظیمیں جلد UNO کی دہشت گرد تنظیموں کی فہرست میں شامل ہو جائیں گی۔ پاکستان کے مفاد میں ہے کہ اس سے پہلے ہی ان کے خلاف کارروائی کر لے۔ ابھی تک امریکہ نے پاکستان سے یہ مطالبات سرعام نہیں کئے ہیں، کیونکہ ہم چاہتے ہیں کہ پاکستان کے لئے دشواریاں نہ پیدا کریں۔ ڈیمارش میں مطالبہ کیا گیا کہ آزاد کشمیر میں تمام دہشت گرد تربیتی کیمپ فوری بند کر دیے جائیں، ان کے اثاثے منجمد کئے جائیں اور اہم شخصیات کو قید کر دیا جائے۔

ڈیمارش پڑھ کر سننے کے بعد جنرل مشرف نے کہا کہ ہم کسی صورت اپنی سرزمین کو دہشتگردی کے لئے استعمال نہیں ہونے دیں گے، مگر کشمیر کی جنگِ آزادی دہشتگردی نہیں ہے۔ ہم آہستہ آہستہ ان تنظیموں کو بند کریں گے۔ کہنے لگے، پہلے ہندوستان کو یہ قبول کرنا ہوگا کہ کشمیر ہی ہمارا اصل مسئلہ ہے اور ہم سے معنی خیز مذاکرات شروع کرنے ہوں گے۔ خارجہ سیکرٹری صاحب نے فرمایا کہ امریکہ دہشت گرد اور فریڈم فائٹرز (freedom fighters) میں فرق نہیں کرتا۔ اس سلسلے کی ہر میٹنگ میں دفترِ خارجہ کا موقف واضح ہوتا۔ وہ امریکہ اور بھارت سے تعلقات بڑھانا چاہتے اور جہادی رجحان کی مخالفت کرتے۔ کشمیر کی جنگِ آزادی کے سخت خلاف تھے اور کشمیر کے مسئلے کو پیچھے رکھتے ہوئے، بھارت سے کاروباری مراسم بڑھانے پر زور دیتے۔ جنرل مشرف کا بھی یہی نکتہ نظر ہوتا، مگر کھل کر نہ کہتے۔

میں نے جنرل مشرف سے ایک مرتبہ کہا کہ جب ہمارا موقف درست ہے، اور اس پر UNO کی قراردادیں بھی موجود ہیں، تو ہم اسے دہشتگردی سے کیوں ملاتے ہیں؟ ہمارا مطالبہ ہونا چاہیے کہ اگر ہندوستان کشمیریوں کو سیاسی آزادی کا حق دیتا ہے، تو پھر ہم بھی مجاہدین کو روک لیں گے۔ کشمیریوں کا حق دنیا نے قبول کیا ہے، اگر انہیں سیاست میں بھی آزادی نہیں اور آواز بھی بلند نہیں کر سکتے تو پھر ان کے پاس لڑنے کے سوا چارہ ہی کیا ہے۔ کشمیر میں تو میڈیا اور انسانی حقوق کی تنظیموں کو بھی جانے کی آزادی نہیں۔ کہنے لگے درست ہے، مگر دنیا اس وقت صرف دہشتگردی کے خلاف متحد ہے، اور نان سٹیٹ ایکٹرز (non state actors) کی فوجی کارروائیاں دہشتگردی کہلاتی ہیں۔ کوئی یہ بات سننے کے لئے تیار نہیں ہوگا۔

پھر میں نے مشورہ دیا کہ اگر تمام کشمیری مجاہدین کو گھر بھیج دیا جائے تو ہماری یہ صلاحیت ختم ہو جائے گی، نہ جانے کل حالات کیسے ہوں۔ یہ بھی خدشہ رہے گا کہ وہ کسی اور تخریبی کارروائیوں میں ملوث ہو جائیں اور ہمارے لئے کوئی نئی مصیبت کھڑی کر دیں، انہیں لڑنے کے

سوا آتا ہی کیا ہے۔ امریکہ کو نان سٹیٹ ایکٹرز سے اختلاف ہے، تو ہم انہیں بھرتی کر لیتے ہیں اور ان کی مجاہدین بٹالین بنا لیتے ہیں۔ انہیں کشمیر سے دور کسی جگہ تربیت کے لئے رکھ لیتے ہیں۔ ان کی خدمت کے صلے میں ان کی روزی بھی جاری رہے گی، ہمارے قابو میں بھی رہیں گے اور ہماری صلاحیت بھی برقرار رہے گی۔ ہماری فوج میں نیم فوجی مجاہد بٹالین پہلے سے بھی موجود ہیں، کوئی نئی چیز نہیں۔ آخر ساری بڑی بڑی افواج میں سپیشل فورسز (مخصوص نوعیت کی سپاہ) ہوتی ہیں، یہ بھی ایک قسم کی سپیشل فورس ہوگی۔ کہنے لگے نہیں یہ آج کل کے حالات میں ہم نہیں کر سکتے۔

آہستہ آہستہ بارڈر پر ہندوستان کی فوجی صلاحیت بڑھتی جا رہی تھی، دفاعی اقدام لینا لازم تھا۔ فوج کا اصول ہے کہ دشمن کی صلاحیت کا جواب دیا جائے، چاہے اُس کا ارادہ نظر نہ آتا ہو، کیونکہ ارادہ تو کبھی بھی بدل سکتا ہے۔ لیکن ایک اور چیز جو ذہن میں رکھنی چاہیے وہ یہ کہ اگر آپ اُس کا ارادہ صحیح طرح نہ بھانپ سکیں تو اس دھمکی اور دباؤ کے کھیل میں، جو ابھی چل رہا تھا، نقصان اٹھا سکتے ہیں۔

حقیقت میں جنگ کا کوئی خطرہ نہیں تھا۔ اس فوجی دباؤ کے مقاصد اور تھے۔ البتہ اس مرتبہ، کارگل کے تجربے کے بعد جہاں اُن کی فوجی صف آرائی کا ڈھونگ کھل گیا تھا، انہوں نے تقریباً پوری فوج بارڈر پر لگا دی، بارودی سرنگیں بھی بچھائیں، تاکہ جھوٹ چھپ سکے۔ مگر جنگ کا خدشہ صرف مگادکھانے سے نہیں پیدا ہوتا۔ جنگ کے کچھ حالات ہوتے ہیں اور کچھ مقاصد۔ اگر ان کا تجزیہ کیا جائے تو کافی حد تک دیکھا جاسکتا ہے کہ آیا جنگ ہی دشمن کے مفاد میں ہے یا فوجی دباؤ کے کچھ اور مقاصد بھی ہو سکتے ہیں۔

یہ وہ وقت تھا کہ دہشت گردی کے خلاف پاکستان اور امریکہ کا تعاون جاری تھا۔ پاکستان امریکہ کی ہر فرمائش پوری کرنے پر آمادہ تھا، اور کر رہا تھا۔ کشمیر کے جہاد کی امداد امریکہ کے ہی دباؤ پر ختم کی گئی تھی۔ اس میں بھارت کا براہ راست کوئی کردار نہیں تھا۔ پھر بھارت مجاہدین کا دباؤ سا لہا سال سے برداشت کر رہا تھا، کوئی نیا کھیل نہیں تھا، اور اب تو بند بھی کر دیا گیا تھا۔ اگر خدشہ تھا کہ پاکستان کشمیری مجاہدین کے سلسلے میں دھوکہ دے رہا ہے، تو امریکہ کافی تھا اُس کی گردن مروڑنے کو۔ امریکہ کا دباؤ بہت کارگر تھا۔ اور جو مقصد جنگ کے بغیر حل ہو سکتا ہو اُس کے لئے کون نامعقول دوا بیٹی ملکوں کو جنگ میں دھکیلے گا؟ یہ جنگ کے لئے معقول وجہ (sufficient cause) نہیں تھی۔

اگر بھارت جنگ شروع کر دیتا تو لامحالہ ہمیں مغربی سرحدوں سے تمام افواج اٹھا کر بھارت کے بارڈر پر لے جانی پڑتیں، فوج بھی اور FC بھی۔ پاکستان کی سرزمین سے افغان مجاہدین کی امداد کون روکتا؟ اور بھارت سے کامیاب جنگ کرنے کے لئے مجاہدین ایک بار پھر ہمارے بھائی بن جاتے۔ کشمیر کا جہاد پھر جائز ہو جاتا۔ بمشکل تو امریکہ کے دباؤ سے انہیں مجاہد کے رتبے سے گرا کر ملعون کیا تھا۔ تو جس

اٹھواں سفر زرد دوپہر

بلا کو ختم کرنے ہندوستان اٹھ کھڑا ہوا تھا، وہ جنگ کے نتیجے میں اور بڑی ہو جاتی۔ کیا حاصل ہوتا؟ اور پھر ابھی تو پاکستان کی عوام کا دل مغربی تہذیب کی طرف مائل کرنا ہی شروع کیا تھا، وہ پھر سے اللہ و اکبر کے نعرے لگانے لگتے۔

تو ایسے میں امریکہ اور اُس کے اتحادیوں کی دہشت گردی کے خلاف جنگ پر کیا اثرات نکلتے؟ کیا امریکہ کو یہ قبول ہو سکتا تھا؟ کیا بھارت امریکہ اور اُس کے ساتھیوں کے کھیل کو تباہ کر کے اور اُن کو ناراض کر کے کامیابی حاصل کر سکتا تھا؟ اُس کی اُٹھتی ہوئی معیشت کا کیا ہوتا؟ وہ کام جو امریکہ خود ہی، بغیر معاوضہ کے کر رہا تھا، اُس کے لئے جنگ کا خطرہ مول لے کر اتنا بڑا فتنہ وہ اپنے لئے اور دنیا کے لئے کیونکر کھڑا کر سکتا تھا، جس میں کچھ حاصل ہونے کے بجائے انجام اُلٹا ہی نکلتا۔

بھارت نے تو شروع دن سے ہی امریکہ کو کہا تھا کہ آپ یہاں آئیں اور کھیل یہاں سے شروع کریں، تاکہ وہ اس کھیل کا حصہ ہو۔ ۱۹۷۱ کے بعد اب بقایا پاکستان کا بھی صفایا کیا جائے، اور بھارت اس خطے کی واحد بڑی طاقت بن کر ابھر سکے۔ یہ چونکہ ہونہ سکا، اب وہ اس کھیل میں کودنا چاہ رہا تھا کہ دنیا کو باور کرائے کہ اس خطے میں بھارت ہی بڑی طاقت ہے اور یہاں جو کچھ بھی ہوگا بھارت کی شمولیت سے ہی ہوگا۔ اور پاکستان کو دونوں طرف سے گھیرے میں رکھ کر دنیا کو یہ بھی دکھائے کہ اُس کے ہوتے ہوئے پاکستان کی کیا مجال کہ امریکہ کا کھل کر ساتھ نہ دے! وہ پاکستان کو مجبور کرے گا کہ اس جنگ میں امریکہ سے بھرپور تعاون کرے۔ دنیا کو پتا ہو کہ دہشت گردی کے خلاف اس جنگ میں بھارت ایک بڑا کھلاڑی ہے۔ اس طرح پاکستان کے خلاف اس کھیل میں بھارت نے خود کو حصے دار بنایا، اور خطے میں بڑی طاقت کے طور پر اپنا لوہا منوایا۔ دوسرا حدف یہ تھا کہ دنیا کھل کر اس بات کو تسلیم کرے کہ کشمیر کی جنگ آزادی دہشت گردی ہے، اور یہ کہ بھارت عرصہ دراز سے پاکستان کے ہاتھوں اس ظلم کا سامنا کر رہا ہے۔ اب تک دنیا کشمیری مجاہدین کی کاروائیوں پر خاموش تھی اور بھارت کے موقف کو تسلیم نہیں کیا گیا تھا۔ یہ بحث چل رہی تھی کہ جنگ آزادی اور دہشت گردی میں کیسے تفریق کی جائے، حتیٰ کہ دہشت گردی کی تعریف پر ہی اتفاق نہیں تھا۔

سالہا سال سے بھارت اس جہاد کے خلاف دنیا کے آگے کھل کر آواز نہیں اٹھا سکتا تھا۔ خود جو مجرم تھا، پھنسا ہوا تھا۔ جو ظلم وہ آزادی کی اس جدوجہد پر ڈھارہا تھا، جسے تاریخ کی روشنی میں دنیا جائز سمجھتی تھی، ۹/۱۱ کے بعد اب دنیا میں وہ ظلم جائز اور آزادی کی جدوجہد ناجائز سمجھی جانے لگی۔ اب کشمیر کا مسئلہ بھی ختم ہوا۔ اب صرف اس کی باتیں ہی کر سکتے ہیں۔ اس راہ پر چلتے چلتے، آج پاکستان کے پاس کوئی اور راستہ نہیں سوائے اس کے کہ کشمیر پر زبانی جمع خرچ کرتا رہے، جس کا نہ کوئی حاصل، نہ وصول۔

امریکہ کے کھیل میں بھی بھارت کی فوج کشی موزوں تھی، کہ خطے میں جنگ کے بادل دکھائے جائیں، اور یہ چال اُن کی مرضی کے بغیر وقوع پذیر ہونے لگی تھی۔ پاکستان اور بھارت کی جنگ کے خدشے سے دنیا گھبراتی ہے۔ کارگل کے بعد پاکستان سے لوگ اور بھی خائف تھے، اور وہاں بھی ہم نے مجاہدین کا ہی جھوٹا کھیل کھیلا تھا۔ اپنے گلے میں جوتوں کا ہار لٹکایا تھا۔ پھر اب پاکستان کو اس رنگ میں بھی دکھانا تھا کہ دنیا میں دہشت گردی کا یہی خطرناک گڑھ ہے، جس نے سب کی ناک میں دم کیا ہوا ہے۔ اور یہ ایٹمی طاقت ہے، جس کی موجودہ حالت اور رجحانات کے خوفناک نتائج نکل سکتے ہیں۔ بھارت کو ساتھ ملائے بغیر یہ سب نہیں ہو سکتا تھا، اور ملایا یوں بھی لازم تھا کہ اس خطے میں آئندہ کے تمام کھیلوں میں یہی امریکہ کا ساتھ دے سکتا تھا۔ شروع سے ہی بڑی تعداد میں انہیں افغانستان میں داخل کر لیا گیا تھا۔ انڈیا ہی جنوبی ایشیا کے تیل اور گیس کے ذخائر پر قبضہ کرنے اور چین کی اُبھرتی ہوئی طاقت اور اس کا روس سے الحاق روکنے کے لئے امریکہ کا بڑا منصوبہ ساز ساتھی (strategic partner) بننے کا اہل ہو سکتا تھا۔ پھر امریکہ کا ساتھ دینے پر پاکستان کے عوام کی چوں چراں بھی اس جنگ کے خطرے سے بند ہوئی۔

ہماری حکومت کے لئے بھی یہی قرین مصلحت تھا، چونکہ اس وقت جب کہ امریکہ کا ساتھ دینے پر قوم میں کافی تحفظات تھے، اس جنگ کے خطرے کی تصویر سے قوم کو امریکہ نواز پالیسی کے پیچھے اکٹھا کرنے میں مدد ملی۔ جنگ کا یہ دباؤ ہماری عوام پر تھا، تاکہ اس گھبراہٹ میں سب ہی حکومت کے پیچھے کھڑے ہو جائیں، حکمران کے ہاتھ مضبوط ہوں اور مجاہدین کے خلاف کھل کر کاروائیاں کی جاسکیں۔ جنرل مشرف کے لئے یہ ایک تحفہ ثابت ہوا۔ جنگ کے خدشے سے لوگوں نے اور بہت کچھ نظر انداز کر دیا اور مشرف صاحب ایک مدبر کی حیثیت سے اُبھرے، جنہوں نے اس دوہرے خطرے کے درمیان سے ملک کو بچا کر نکالا۔ تینوں فریق ہی اس صف آرائی سے مستفید ہوئے۔

گل جنگ کا خطرہ تو نہ تھا، مگر کچھ نہ کچھ muscle flexing کی گنجائش ضرور تھی۔ ان دنوں اس سلسلے میں کئی میٹنگز ہوئیں۔ ۲۲ دسمبر ۲۰۰۱ کو جوائنٹ چیف آف سٹاف کمیٹی (JCSC) کی میٹنگ ہوئی۔ تجزیہ تھا کہ بھارت کشمیر میں محدود کارروائی کر سکتا ہے، اور زیادہ خدشہ صرف فضائی حملے کا ہے۔ کسی جگہ حملہ کر کے کہہ سکتا ہے کہ ہم نے مجاہدین کے تربیتی کیمپ پر حملہ کیا ہے۔ یہ بھی خیال تھا کہ امریکہ ہندوستان کو کشمیر کے علاقے میں مظاہرے کے طور پر تعزیری کارروائی (demonstrative punitive strike) سے نہیں روکے گا۔ مگر صرف کشمیر میں فضائی حملہ بھارت کو فوجی لحاظ سے سودمند نہیں تھا۔ محدود کارروائی میں پاکستان کے جواب برابر کے ہو سکتے تھے۔ اس لئے وہ باز رہا۔

پھر اُس ہی رات CE نے ایک اور میٹنگ بلوائی، جس میں خارجہ امور کے وزیر نے بتایا کہ امریکہ اور برطانیہ نے کہا ہے کہ اُن کے پاس ثبوت موجود ہیں کہ لشکرِ طیبہ اور جیشِ محمد ہندوستان میں ISI کی مدد سے دہشت گردی کر رہے ہیں، اور ان دونوں کا بہت دباؤ ہے کہ

آٹھواں سفر زرد دوپہر

ہم ان تنظیموں کے خلاف کروائی کریں۔ خارجہ سیکرٹری صاحب نے کہا کہ جب تک ہم کچھ کرتے نہیں، تمام مغربی ممالک ہم پر دباؤ بڑھاتے رہیں گے، چاہے ثبوت ہو یا نہ ہو۔ CE صاحب نے احکام دیے کہ اظہر مسعود کو قید کر دیا جائے اور جیش محمد کو غیر قانونی قرار دیا جائے۔

میرا نکتہ نظر تھا کہ یہ ظاہر کر دیا جائے کہ کشمیر افغانستان نہیں ہے، اور یہاں آزادی کی جدوجہد ہو رہی ہے، دہشت گردی نہیں۔ میری سوچ تھی کہ آج پاکستان دنیا کی دہشت گردی کے خلاف جنگ میں نہایت اہم کردار رکھتا ہے، ابھی امریکہ نے افغانستان میں قدم رکھا ہی ہے، اُسے ہماری بہت ضرورت ہے۔ ہم اس میں سے کچھ تو اپنا فائدہ نکالیں۔ اگر ہم ہندوستان کے دباؤ کے آگے کشمیر پر اپنے موقف سے ہٹ گئے تو کشمیر کا معاملہ ہمیشہ کے لئے لپیٹ دیا جائے گا۔ بہتر یہ ہے کہ اگر بھارت کشمیر میں محدود جنگ کا آغاز کرتا ہے، تو ہم شروع میں تو اُس کی کاروائیوں کا برابر کا جواب دیں، پھر مجاہدین کی کاروائیوں میں یک دم اضافہ کر دیں اور معاملے کو اُس حد تک بڑھا دیں کہ اس کا حل کرنا ناگزیر ہو جائے۔

میرا خیال تھا کہ یہی موقع ہے کہ دنیا کو کشمیر کا مسئلہ حل کرانے کے لئے دباؤ میں لایا جاسکتا ہے۔ اگر بھارت ہمیں یہ موقع فراہم کرتا ہے تو ہمیں اس کا فائدہ اٹھانا چاہیے۔ ہمیں سمجھنا چاہیے کہ جنگ کا یہ ڈھونگ نقلی ہے اور دیکھنے کے بجائے ان حالات کو اپنے مفاد میں استعمال کرنا چاہیے۔ دہشت گردی ختم کرنے کا جو دباؤ دنیا ڈال رہی ہے، اس ہی کو استعمال کرتے ہوئے ہم کشمیر کے مسئلے کو حل کریں، جیسے جاپان کی سوموگشتی (sumo wrestling) میں ہوتا ہے کہ دشمن کے دھکے کے زور پر ہی اُسے گرایا جاتا ہے۔

دنیا پہلے ہی مانتی ہے کہ پاکستان کے نان سٹیٹ ایکٹرز کی کاروائیوں کی جڑ کشمیر کا مسئلہ ہے۔ دنیا کو دکھائیں کہ جنگ اس کا حل نہیں ہے، جنگ کے خدشے کی وجہ سے یہ اور بڑھ گئی ہیں۔ واضح کر دیں کہ اس کا مداوا صرف مسئلے کے مکمل حل سے ہی ہو سکتا ہے۔ جب بات یہاں تک پہنچ جائے گی، اور مجاہدین کی کاروائیاں عروج پر ہوں گی، تو اور کوئی راستہ واپسی کا نہیں رہ جائے گا۔ جب دشمن ہمیں میدان جنگ میں گھسیٹ ہی لایا ہے تو پھر اُس کو بھی اس کا مزا چکھائیں۔ ہم سے آگ کا کھیل کھیلتا ہے، تو قیمت بھی چکائے۔ اگر ہم پیچھے ہٹ گئے اور ایسا نہ کیا تو اس کے بعد کوئی معنی خیز پیش رفت کشمیر کے سلسلے میں نہیں ہو سکے گی۔ حقیقت پسندی یہ ہے کہ مذاکرات سے کبھی کچھ حل نہیں ہوگا، یہ ایک ڈھونگ کے طور پر دونوں اطراف سے کئے جاتے رہیں گے۔ یا ابھی قدم اٹھائیں، یا پھر بھول جائیں۔ مگر یہ بات کسی کو بھی پسند نہ تھی۔ یہ بہترین موقع تھا ایٹمی طاقت کی آڑ لینے کا، جس سے مکمل جنگ کا خطرہ ٹلا رہتا۔ آج ہم کمزور دلوں کو لئے کہتے پھرتے ہیں کہ یہ طاقت ہماری کمزوری ہے۔

میں نے GHQ کی ایک میٹنگ میں بھی چیف صاحب سے اپنے تحفظات کا اظہار کیا اور کہا کہ ہمیں اس جھوٹے دباؤ میں آکر کشمیر پر اپنے موقف سے نہیں ہٹنا چاہیے۔ میرا کہنا تھا کہ اس نا انصافی اور ظلم کے خلاف اگر آج آواز نہ اٹھائی گئی تو یہ آواز ہمیشہ کے لئے بند ہو جائے گی۔ مگر انہوں نے میرے اس خیال سے اتفاق نہیں کیا کہ جنگ کا خدشہ نہیں اور کہا کہ کوئی کشمیر کے جہاد کو جائز نہیں سمجھتا، دنیا سے دہشت گردی ہی ماننی ہے۔ خود جب ہماری قیادت جہاد کے تصور سے شرمندہ ہوگی تو دنیا کو کیا منائیں گے۔ جب میٹنگ سے باہر آئے تو جنرل یوسف کہنے لگے کہ ایسی باتیں مت کرو۔ فوج میدان جنگ میں کھڑی ہے اور فوج کا CGS کہتا ہے کہ جنگ کا خطرہ نہیں، فوج کے مورال (morale) پر برا اثر پڑے گا۔ میں نے کہا کہ میں اعلانیہ تو نہیں کہہ رہا، لیکن فوج کی اعلیٰ قیادت کو تو یہ باتیں سمجھنی چاہئیں، تاکہ درست فیصلے کر سکیں، دشمن کے دباؤ میں آکر نہ سوچیں۔ ہم دفاعی طرز (back foot) پر کیوں کھیل رہے ہیں؟ کیا یوں پسپائی اختیار کرنا کسی بھی فوج کا شیوہ ہونا چاہیے؟ یہی ذہنوں کی شکست ہے۔

جنرل مشرف کا خیال تھا کہ یہ وقت ایسا نہیں کہ ہم کشمیر کے سلسلے میں کوئی بھی مطالبہ کر سکیں، اُن کا کہنا تھا کہ ہم خود اس وقت دباؤ میں ہیں کہ دہشت گردی بند کریں۔ کہتے تھے کہ کشمیر کا حل صرف پُر امن مذاکرات کے ذریعے ہی ممکن ہے، اور دنیا ہمیں کشمیر کی آڑ میں دہشت گردی کرنے کی اجازت نہیں دے گی۔ یہاں بھی مذاکرات کا تقاضا صرف ایک آڑ ہی تھا، جس کے پیچھے چھپ کر کشمیر کو خیر آباد کہا جا سکے۔ جن مذاکرات کے پیچھے کوئی زور نہ ہو، اُن سے بھی کبھی ایسے مسئلے حل ہوئے ہیں؟ جب آپ خود کو پہلے ہی نیچے گرا دیں، تو پھر معنی خیز مذاکرات کیسے؟ صرف ایک پردہ، تاکہ کوئی یہ نہ کہے کہ اپنی جان بچانے کو کشمیر سے جان چھڑائی۔ ہندوستان تو کبھی اس موقف سے بھی نہیں ہٹا کہ "کشمیر ہمارا الٹا انگ ہے"، ہم کیا مذاکرات کرنے چلے ہیں۔

کشمیر کے سلسلے میں ہمیشہ پاکستان کی یہی پالیسی رہی تھی کہ مذاکرات کے کسی بھی پہلو پر پیش رفت، کشمیر پر مذاکرات میں پیش رفت کے متوازی رہے گی۔ جب تک کشمیر پر کوئی معنی خیز پیش رفت نہیں ہوتی، کسی اور پہلو پر بات نہیں بڑھے گی، خاص کر تجارتی معاملات میں ہندوستان کو کوئی چھوٹ نہیں دی جائے گی۔ امریکہ اور برطانیہ کا ہم پر دباؤ رہتا کہ آپ تجارت شروع ہونے دیں، پھر جب ماحول سازگار ہو جائے گا تو کشمیر پر بھی بات ہو سکے گی۔ اس بات میں کسی قسم کی منطق نہیں تھی۔ یہ صرف کشمیر پر اپنے موقف سے منہ موڑنے کی پردہ پوشی تھی، کشمیر کو ہندوستان کا حصہ ماننے کی راہ پر پہلا قدم۔ ہندوستان کی دوستی کے عوض کشمیر کی قربانی۔ حالانکہ سب جانتے تھے کہ اس کے اثرات کیا ہوں گے، سب جانتے تھے کہ ایسا کرنے سے پاکستان کا کتنا خسارہ ہوگا۔ لیکن حکومتیں فوری فوائد کی خاطر دور رس نتیجوں کی پروا نہیں کرتیں۔ سیاسی مفاد ہمیشہ ناعاقبت اندیش ہوتے ہیں۔

آٹھواں سفر زرد دوپہر

جب ہندوستان کے مقاصد پورے ہوئے تو انہوں نے اپنی فوجیں واپس لے جانی شروع کر دیں۔ ۲۳ مئی ۲۰۰۲ کو کورکمانڈر کانفرنس میں جنرل مشرف نے ہمیشہ کی طرح اپنی جیت کا اعلان کیا۔ کہنے لگے کولن پاول نے بتایا ہے کہ ہندوستان فوجوں کی واپسی چاہتا ہے۔ انہوں نے اس سلسلے میں اپنی برتری اور فوقیت ظاہر کرنے کے لئے کہا، "جو ہم کشمیر میں کر رہے تھے، ساری دنیا جانتی تھی۔ اب ہم مجاہدین کو ہمیشہ کے لئے تو روک نہیں سکتے۔ یہ پالیسی اُس وقت تک کامیاب نہیں ہو سکتی جب تک ہندوستان مذاکرات شروع نہ کرے، آبادیوں سے اپنی افواج نہ ہٹائے اور میڈیا اور انسانی حقوق کی تنظیموں کو کشمیر میں جانے کی اجازت نہ دے۔ اگر جنگ ہوئی تو ایسے حالات پیدا ہو جائیں گے کہ ان پر نہ میں قابو پاسکوں گا اور نہ ہی دنیا۔ ہزاروں لوگ پاکستان سے اٹھ کر کشمیر میں داخل ہو جائیں گے۔" مجھے ایسے لگا جیسے ۱۹۷۱ کی لڑائی میں مشرقی پاکستان میں ہتھیار ڈالنے کے بعد جنرل یحییٰ نے قوم سے گرج دار خطاب کیا تھا، کہ ہماری جنگ جاری ہے۔ پھر اسی طرح جنرل مشرف نے اپنی جیت کے جشن کے طور پر کہا، "کل ہم پہلا غوری میزائل فائر کریں گے۔"

سایہ کیوں جل کے ہوا خاک، تجھے کیا معلوم *

دسمبر ۲۰۰۱ کے آخری ایام میں ہم نے کوہاٹ کی جیل خالی کرا کر اُس میں غیر ملکی اور اس لڑائی سے منسلک پاکستانی قیدی رکھ دیے۔ اسی (۸۰) عرب شہری اور پکڑے گئے تھے اور بتایا گیا تھا کہ یہ امریکہ کو نہیں دیے جائیں گے۔ یہ خبر بھی ISI سے ملی کہ جو پاکستانی یہاں سے جہاد کے لئے افغانستان گئے تھے اُن میں سے ۱۱۰ کابل سے جہاز میں بٹھا کر ہندوستان لے جائے گئے ہیں۔ اس کے بعد ان کی کوئی خبر نہیں ملی۔ پھر جنرل ٹومی فرینکس سے پیغام ملا کہ ۸۹۲ پاکستانی کابل جیل میں ہیں جنہیں واپس پاکستان بھیجا جائے گا اور جو ۲۳۲ غیر ملکی قیدی پاکستان میں ہیں، امریکہ کی سنٹرل کمانڈ (CENTCOM) کے لوگ انہیں قندھار لے جائیں گے۔ کچھ دنوں بعد PAF کے جہاز گیارہ سو (۱۱۰۰) پاکستانی قیدی لے کر افغانستان سے آئے۔ انہیں ہری پور جیل بھجوا دیا گیا۔ یہ تمام کام ISI کی زیر نگرانی ہوتے تھے، ہمیں صرف خبر ملتی تھی۔ فوج جو بھی مجاہدین پکڑتی تفتیش کے لئے ISI کے حوالے کر دیتی۔ پھر وہ کہاں جاتے فوج کو خبر نہ ہوتی۔

۲۱ اگست ۲۰۰۲ کو جنرل ڈین میکنیل (General Dan McNeill, US Army) سے جنرل یوسف کے دفتر میں ملاقات ہوئی، یہ اُن دنوں افغانستان میں کولیشن فورسز کمانڈر (Commander Coalition Forces, Afghanistan) تھے۔ میں نے اُن سے کہا کہ امریکہ نے ہمیں دونوں طرف سے گھیرا ہوا ہے۔ ایک طرف تو آپ کی فوج نے القاعدہ کو پاکستان میں آنے کا موقع فراہم کیا، ہم کو اپنی کاروائیوں کی کوئی خبر نہ لگنے دی، دوسری طرف سے آپ کے ساتھی ہندوستان نے ہمیں مشرق کی طرف کھینچنا شروع کیا۔ ان باتوں سے ہمارے بیچ بے اعتباری پیدا ہوئی۔ پاکستان کے تعاون کے بغیر تو آپ کامیاب نہیں ہو سکتے۔ افغانستان میں جو ہندوستان کو منظم کرنے کی کوشش ہو رہی ہے، ہمارے لئے دہرا خطرہ پیدا کیا جا رہا ہے۔ میں نے یہ بھی کہا کہ ایسی توقع نہ رکھیں کہ اس ہی دباؤ میں آکر ہم کشمیر کو بھی بھلا دیں گے۔ سخت طبعیت کے انسان دکھائی دیتے تھے، مگر ہنس کر میری باتوں کے گول مول جواب دے دیے۔

اس ہی دن براستہ MO چیف صاحب کا حکم بھی موصول ہوا کہ ہماری فوج کے کچھ افسران افغانستان میں بگرام کے امریکی ہیڈ کوارٹر میں تعینات ہوں گے، تاکہ اُن سے بہتر ہم آہنگی رہے۔ پھر ایک سال کے اندر اندر ہماری فوج کا ایک نمائندہ CENTCOM ہیڈ کوارٹر ٹامپا، فلوریڈا (Tampa, Florida) میں بھی بھیج دیا گیا۔ SSG میں تیز ردِ عمل کرنے والی ٹیمیں (Quick Reaction Force -- QRF) تشکیل دی گئیں، جن کی تربیت امریکی تربیلا کے علاقے میں کرتے۔ SSG کی ایک سپیشل آپریشنز ٹاسک فورس

* شکیب جلالی

آٹھواں سفر زرد دوپہر

(Special Operations Task Force -- SOTF) فائٹ میں کاروائیوں کے لئے قائم کی گئی۔ ان کے لئے فراہم کیا ہوا ساز و سامان بھی تربیلا میں ہی رکھا گیا اور یہیں SOTF کے لئے ہیلی کاپٹروں کے پائلٹوں کی رات میں کاروائی کی تربیت بھی دی جاتی۔ کافی امریکی یہاں پر مقیم ہو گئے۔ پھر سپاہیوں کے چالیس چالیس کے گروپ تربیت کے لئے امریکہ جانے شروع ہوئے۔ تربیت کیا تھی، امریکہ کی سوچوں پر ڈھالنا تھا، اُن کی محبت پیدا کرنی تھی۔

SOTF پشاور کی کور کے احکام پر کام کرتی تھی، لیکن امریکہ سے زیادہ تعاون ISI کا رہتا، اور اُن دنوں فوج اور ISI میں FATA کے سلسلے میں خاصا کھینچاؤ رہنے لگا۔ کئی مرتبہ چیف کی موجودگی میں تنازعہ اُٹھ چکا تھا۔ پھر چیف نے زور دینا شروع کر دیا کہ SOTF کو ISI کے ہی نیچے کر دیا جائے، اور وہ ہی امریکہ سے ملاپ رکھتے ہوئے اس کی کاروائیوں کو کنٹرول کرے۔ شاید اُن کا خیال تھا کہ فوج دل سے اس کام پر مائل نہیں۔ اس پر کافی لے دے ہوئی، مگر فوج آمادہ نہ ہوئی، نہ وائس چیف، نہ کور کمانڈر، اور نہ ہی میں۔ فوج کے ایک سیف کی کمانڈ ISI کو کیسے دے دیتے، ISI میں فوجی تو ضرور تھے مگر وہ فوج کا حصہ تو نہیں تھے۔ تنازعہ چلتا رہا، فوج کی کارکردگی کی شکایات چیف کو جاتی رہیں۔ امریکہ سے کچھ نہ کچھ فوجی ساز و سامان بھی ملتا رہا، جس میں سامان کم اور ساز زیادہ ہوتا۔ سامان کسی اہم نوعیت کا نہیں تھا اور زیادہ وعدے ہی رہتے، سامان کہیں پائپ لائن (pipe line) میں ہی پھنسا رہتا۔ جنرل یوسف ہر درجے پر ملاقات میں اُن سے شکوہ کرتے۔

جنرل مشرف امریکہ کے ایک دورے پر گئے، جہاں یہودیوں نے اُن کی خوب آؤ بھگت کی۔ یہ سلسلے اخباروں اور ٹی وی پر سب ہی نے دیکھے۔ واپس آئے تو GHQ تشریف لائے اور کہنے لگے، "ہمیں اسرائیل سے سفارتی تعلقات قائم کر لینے چاہئیں۔ ترکی کے بھی تعلقات ہیں اور کئی عرب ممالک کے بھی، آخر ہم ہی کیوں اپنا نقصان کر رہے ہیں، ہم خواہ مخواہ فلسطین کی خاطر عربوں سے بھی سبقت لے جانا چاہتے ہیں۔" کسی نے بھی اس تجویز سے اتفاق نہ کیا۔ کچھ دیر بحث و مباحثہ کے بعد ناراض ہو کر چلے گئے۔ کہنے لگے کہ اس میں ہمارا بہت فائدہ ہے، تم لوگ بات کی گہرائی کو نہیں سمجھتے۔

پھر اگلی دفعہ آئے تو کہا کہ امریکہ ہم سے عراق میں فوجی امداد چاہتا ہے۔ اس کی بھی سب نے مخالفت کی، کہ ہمیں مسلمانوں کے خلاف اپنی سپاہ نہیں استعمال کرنی چاہیے، تو کہنے لگے کہ ہم عوام کی امداد میں سپاہ بھیجیں گے، صرف کچھ ڈاکٹر اور تعمیر نو کے لئے انجینئر کی سپاہ۔ سب سمجھتے تھے کہ یہ صرف ایک بہانا ہے، اصل مقصد لڑاکا سپاہ بھیجنا ہی ہے۔ میں نے کہا کہ ابھی تو ہماری سپاہ FATA میں بھی چاہیے اور ہندوستان کے بارڈر پر اب بھی کچھ فوج لگی ہے، ہمارے پاس سپاہ کی بہت قلت ہے۔ کافی ناراض ہوئے مگر اپنی بات سے نہ ہٹے۔

یہ مسئلہ کافی عرصے تک چلتا رہا۔ پھر مئی ۲۰۰۳ میں کورکمانڈروں کی کانفرنس میں بھی یہ بات اٹھائی گئی، لیکن کورکمانڈر اس پر آمادہ نہ تھے۔ کچھ نے اعتراض کیا، زیادہ خاموش رہے مگر کسی نے بھی اُن کا ساتھ نہ دیا۔ کہنے لگے دیکھتے ہیں کہ اس میں خرچے کا کیا بندوبست ہوگا اور یہ کہ آیا اور مسلم ممالک بھی سپاہ بھیجتے ہیں یا نہیں۔ اگر نہیں، تو کم از کم UN یا OIC کی چھتری کی آڑ ملنی چاہیے۔ یہ اس لئے لازم تھا کہ زیادہ اعتراضات نہ ہوں۔ مئی کے آخری ہفتے میں عراق پر اقوام متحدہ کی قرارداد بھی آگئی اور کہا گیا کہ DGMO CENTCOM ہیڈ کوارٹر، قطر، جائیں تاکہ عراق فوج بھیجنے کے سلسلے میں معاملات طے کر لیں۔ جون میں امریکی ٹیم بھی اس سلسلے میں آئی اور پہلے بتایا گیا کہ ایک ڈویژن بھیجا جائے گا، پھر حکم ملا کہ ڈویژن ہیڈ کوارٹر اور دو پیادہ فوج کے بریگیڈ ستمبر کے مہینے میں بھیجیں گے، تیاری کر لیں۔ نہ جانے وہ ڈاکٹروں اور انجینئروں کو بھیجنے کی کہانی کہاں رہ گئی تھی۔ اگست میں کورکمانڈر کانفرنس میں جنرل مشرف نے پھر کہا کہ سپاہ شاید عراق بھیجی جائیں، ابھی حتمی فیصلہ نہیں کیا ہے۔ کچھ عرصے بعد پتا چلا کہ یہ معاملہ ختم ہو چکا ہے، اور سپاہ عراق نہیں جائیں گی۔ شاید فوج کے علاوہ اور بھی جگہوں سے مخالفت تھی۔

جون ۲۰۰۲ میں بلوچستان سے متعلق ISI سے ایک رپورٹ ملی کہ خیر بخش مری کو ہندوستان کی خفیہ ایجنسی RAW (Research and Analysis Wing) پیسے دے رہی ہے۔ بگتی صاحب نے پہلے ہی خاصے مسائل پیدا کر رکھے تھے، اور گیس کی کھوج شروع نہیں کرنے دیتے تھے۔ اس رپورٹ میں اس سلسلے کی بھی تفصیلات تھیں۔ پھر دو دن بعد بتایا گیا کہ خیر بخش مری نے اپنے قبیلے کے ۲۰۰ لوگ بگتی صاحب کی حفاظت کے لئے فراہم کئے ہیں۔ بگتی صاحب کے ساتھ یہ مسائل چلتے رہے۔ ہمیں خبریں ملتی رہیں کہ بلوچستان سے کچھ اور اہم لوگ بھی افغانستان جاتے اور وہاں سے انہیں امریکہ کی طرف سے پیسے دیے جاتے۔ جنرل مشرف کی حکومت نے بلوچستان کے سلسلے میں کئی اچھے اقدامات بھی لئے مگر عمومی طور پر معاملہ سلجھا نہیں۔

یہ وہ سحر تو نہیں، چلے تھے جس کی آرزو لے کر *

فوجی حکومت کے شروع کے سال عام طور پر اچھے سمجھے جاتے ہیں۔ کہا جاتا ہے کہ جب تک فوجی سربراہ کو سیاسی حکومت کا بوجھ نہیں اٹھانا پڑا، حکومت اچھی چلتی رہی۔ خرابی کی ذمہ داری سیاست دانوں پر ہی رہی۔ میں نے DGMO کے طور پر، اور جب سیاسی حکومت آگئی تو CGS کے طور پر، دونوں دور میں قریب سے حکومت کو کام کرتے دیکھا ہے۔ پورے ملک میں حکومتی ڈھانچے کی مانیٹرنگ بھی کی۔ پھر NAB میں رہتے ہوئے بھی بہت سی باتیں مجھ پر کھلیں۔ میں یہ سمجھتا ہوں کہ اصل میں اُونٹ پہلے سال ہی ایک کروٹ بیٹھ چکا تھا۔ دیکھنے والوں کو نظر آتا تھا۔

بہت سے اچھے اقدامات جنرل مشرف نے شروع کئے، اور اُس وقت ہمارا یہ تاثر تھا کہ بہت خلوص کے ساتھ آغاز کیا۔ پھر جیسے جیسے حکومت کی پیچیدگیوں میں اُلجھتے گئے، اُن کاموں پر اُن کی گرفت کمزور پڑتی گئی، جنہیں ہم سب اہم سمجھتے تھے۔ یقیناً پیسے کی قلت بھی تھی، لیکن ایسی بھی نہیں کہ ان تبدیلیوں کے لئے رکاوٹ بنتی۔ وقت کے ساتھ ساتھ اُن کی ترجیحات بدلتی گئیں اور ابتدائی اہداف سکڑتے رہے۔ میں سمجھتا ہوں کہ اس کی بنیادی وجہ ہماری سول سروس تھی۔ یہی اس جمود کی جڑ تھی۔ پُنے ہوئے منسٹروں کی ٹیم کے باوجود انہوں نے کسی چیز کو بدلنے نہیں دیا اور نہ ہی یہ کسی طور پر اپنی کارکردگی ظاہر کرنے پر رضامند تھے۔ ہر چیز کو خفیہ رکھنا چاہتے، ہر بات کی پردہ پوشی ہوتی۔ ایک دوسرے کو آڑ مہیا کرتے۔ ملک یہی چلاتے ہیں اور اپنے اس کاروباری نظام کو تحفظ دینا ان کی پہلی ترجیح تھی۔ پھر سیاستدان آگئے۔ یہ بھی صرف ذاتی مفاد پر ہی مرکوز رہے۔ اب خرابی اور بڑھ گئی کہ اب منسٹر بھی نااہل آگئے، اور سول سروس کے مزید مہر ہون منت ٹھہرے۔ یہ کارکردگی کی بنیاد پر تو آتے نہیں، صرف ووٹ کی بنیاد پر آتے ہیں اور اس ہی کی فکر میں رہتے ہیں۔ اپنی شخصی حیثیت کے مطابق منسٹری پاتے ہیں۔ سیاست کا سارا کھیل اس ہی ایک اقدار پر چلتا ہے۔ جس کی کوئی ضرر رسانی کی صلاحیت (nuisance value) نہیں اُسے استعمال کے بعد پھینک دیا جاتا ہے۔

شروع کے ہی دنوں میں جنرل صاحب نے حکم دیا کہ حکومت کو شفاف بنانے (transparency) کے لئے تمام حکومت کے دفاتر اپنی ویب سائٹ (website) کھولیں گے اور روزمرہ کے فیصلے اور کاروائیاں اُس پر ظاہر کریں گے۔ حکومت کے کسی دفتر نے اس پر عمل نہیں کیا۔ مانیٹرنگ نظام کے بہت اسرار پر چند نے ویب سائٹس کھولیں، مگر صرف دکھاوے کے طور پر اپنی کچھ معلوماتی چیزیں ظاہر کر

آٹھواں سفر زرد دوپہر

دیں، اس سے آگے نہ بڑھے۔ سب نے کہا کہ ہمارے پاس نہ ہی اس کام کیلئے پیسے ہیں اور نہ ہی صلاحیت۔ حالت جوں کی توں رہی۔ شروع کے دنوں میں جنرل مشرف نے اپنے اثاثے ظاہر کئے اور احکامات دیے کہ تمام سول سروس بھی ایک دیئے ہوئے فارم پر اپنے اثاثے ظاہر کریں۔ فارم بھی تیار کر لئے گئے۔ کورکمانڈر کانفرنس میں اس بات پر خاصا زور بھی دیا گیا۔ اس خبر سے پوری سول سروس میں ایک کھلبلی مچ گئی۔ کہا گیا کہ سول سروس میں اس بے اعتمادی پر بہت بے چینی ہے، اور اگر اس بات پر زور دیا گیا تو خطرہ ہے کہ قلم بند (pens down) ہڑتال ہو سکتی ہے۔ جنرل مشرف پیچھے ہٹ گئے۔ آخر حکومت بھی چلائی تھی۔

مانیٹرنگ کا نظام، جو بڑے زور و شور سے شروع ہوا تھا، جلد ہی لڑکھڑانے لگا۔ لپیٹ لیا گیا۔ آہستہ آہستہ اس کے خلاف شکایات بڑھتی جا رہی تھیں۔ میں جنرل مشرف کی خفکیاں سہتا رہا، مگر اسے بچانہ سکا۔ جب حکومت کو آنکھیں درکار نہیں تو ہم اپنی آنکھیں کب تک پھوڑتے؟ سول سروس نے کہا کہ ہمارے کام میں اتنی مداخلت ہے کہ ہم کام ہی نہیں کر سکتے؛ فوج کے سوالوں کے جواب دیتے رہیں یا اپنا کام کریں؟ مانیٹرنگ کے نظام میں کوئی فوجی کسی قسم کے احکام دینے کا مجاز نہیں تھا۔ احکامات صرف حکومتی نظام کے ذریعے ہی دیے جاسکتے تھے۔ پھر بھی یہ بوجھ دکھائی دیا۔

کہا گیا کہ فوجی افسران اپنے ذاتی کام زیادہ کرواتے ہیں اور سرکاری کاموں پر کم توجہ دیتے ہیں۔ یقیناً کہیں ایسا بھی ہوا ہوگا، مگر اسے کافی حد تک روکا جاسکتا تھا، فوج کو قابو کرنا مشکل نہیں۔ شکایت کی وجہ یہ نہیں تھی۔ ہمارے حکومتی طور طریقوں کو میں نے بہت غور سے دیکھا ہے، اور میں یہ سمجھتا ہوں کہ یہ بالکل غلط تاثر تھا۔ میں نے سرکاری ملازمین میں ایک سے ایک عمدہ انسان بھی دیکھے ہیں، مگر عام طور پر، سرکاری ملازمین بالا افسران کے ذاتی کام ڈھونڈ ڈھونڈ کر نکالتے ہیں، اور انہیں پورا کرنے میں ایک دوسرے سے سبقت لے جانے میں لگے رہتے ہیں۔ انہیں اور چاہیے ہی کیا، کہ ان کا بالا افسران کا شکر گزار رہے۔ جب ان کے اوپر والا ان سے خوش ہے، تو پھر انہیں کون پوچھے گا؟ ان کی تو آرزو ہوتی ہے کہ بڑے صاحب کو "کانا" کر دیں۔ جب تو صرف اتنی تھی کہ ہمارے کام پر کسی کی نظر نہ ہو۔ کوئی پوچھنے والا نہ ہو۔

جو مشاورتی کونسل چیف ایگزیکٹو کی امداد کے لئے بنائی گئی تھی، گھر بھیج دی گئی۔ وزارتوں کی تجاویز سول سروس کی بنائی ہوئی ہوتیں، اور جب چیف ایگزیکٹو کو ان کے برخلاف مشاورتی کونسل مشورہ دیتی، تو پیچیدگیاں پیدا ہوتیں۔ اسے ختم کرنا ہی مناسب سمجھا گیا، حالانکہ وہ صرف اجتماعی دانش (collective wisdom) تھی، ایک اچھا مشورہ ملتا تھا۔ سربراہ کا دماغ اس حکمت سے محروم ہو کر، پورے طور پر سول سروس کے تابع ہوا۔ نمبروں کو یاد رکھنے کی اچھی صلاحیت تھی، حکمران نے اسی جھلکتی دانائی پر اکتفاء کیا۔

آٹھواں سفر درد دوپہر

کرپشن کے خاتمے کے لئے نیشنل اکاؤنٹیبلٹی بیورو (NAB) کھڑا کیا گیا اور ایک سخت قانون بنا، جو نہایت موثر تھا۔ شروع میں (NAB) کی کاروائی تیز تھی، ٹوٹے ہوئے اربوں روپے واپس آئے۔ پھر کچھ ہی عرصے میں شوکت عزیز صاحب کا محکمہ پریشان ہونے لگا۔ کہنے لگے سارا پیسہ ملک سے باہر جا رہا ہے، اگر NAB کو نہ روکا گیا تو ملک دیوالیہ ہو جائے گا۔ پیسے والوں سے یہ پوچھنا چھوڑیں کہ اتنی دولت کہاں سے کمائی۔ سول سروس کا بھی لگا تار دباؤ رہا کہ سرکاری ملازمین NAB کی وجہ سے خوف و ہراس کا شکار ہیں، کسی کی بھی عزت کو تحفظ نہیں۔ اس خوف سے لوگ فیصلے کرنے سے گھبراتے ہیں اور یوں حکومت کا کاروبار نہیں چل سکتا۔ حکومت کا کام رک جائے گا اور معیشت ڈوب جائے گی۔ جس کی وجہ سے عوام ہی خسارے میں رہیں گے، غریب کا بہت نقصان ہوگا۔ NAB کے سربراہ جنرل امجد کو ہٹا دیا گیا۔ سب نے سکھ کا سانس لیا۔ جنرل مشرف نے بھی۔

جو سول سروس کی اصلاحات تھیں، کچھ عرصہ ادھر ادھر لڑھکتی رہیں، پھر دم توڑ گئیں۔ ڈسٹرکٹ مینجمنٹ گروپ (DMG) نے کہا آپ نے ہماری کمرہ ہی توڑ دی۔ بے معنی سی چند تبدیلیاں ہوئیں، اور کچھ نہیں۔ نیا پولیس آرڈیننس تیار کیا گیا، مگر پولیس کی کارکردگی میں کوئی تبدیلی نہ آئی۔ کہا گیا کہ اس کی کارکردگی بہتر بنانے کے لئے پیسہ درکار ہے جو ہمارے پاس نہیں ہے۔ یہ نہیں کہا کہ ہم نے ان سے بہت سے غلط کام کروانے ہوتے ہیں، پھر جب یہ ہمارے ناجائز کام کرتے ہیں تو انہیں اپنے لئے غلط کام کرنے سے کوئی کیسے روکے؟

عدالتوں میں انصاف مہیا کرنے کے لئے جنرل مشرف نے یہی کہا کہ ابھی پیسے نہیں ہیں، پہلے پیسے بنالیں پھر یہ سب ٹھیک ہو سکتا ہے۔ کیسے کہتے کہ عدالتوں نے اگر انصاف شروع کر دیا تو حکومت کیسے چلے گی؟ ایک مرتبہ فوج نے بہت زور دے کر جسٹس فلک شیر صاحب کو لاہور کا چیف جسٹس لگوا دیا۔ ان کا نام لوگ بہت عزت سے لیتے تھے۔ کچھ ہی دنوں میں یہ شکایت آئی کہ یہ کسے لگوا دیا، یہ تو کسی کی سنتا ہی نہیں۔ پھر موقع پاتے ہی انہیں سپریم کورٹ منتقل کر دیا گیا۔ کتنی مشکل سے ایسا ڈھونڈا تھا جو سنتا نہیں تھا، لیکن حکومت کے گلے میں پھنسنے لگا۔

اب سات نکاتی ایجنڈا سکڑنے لگا اور توجہ صرف مالیاتی حیثیت بہتر کرنے پر مرکوز کر دی گئی۔ باقی کچھ ہو جو نہیں رہا تھا اور پھر کامیابی بھی تو دکھانی تھی۔ مگر جب امریکی حمایت کے عوض ملک میں غیر ملکی پیسہ آ بھی گیا، تو کیا ٹھیک ہوا؟ ایک مرتبہ کورکمانڈر کانفرنس میں نکتہ چینی کی گئی کہ تمام معاشی ترجیحات ایسی ہیں کہ پیسے والا ہی امیر سے امیر تر ہوتا جا رہا ہے۔ غربت پر ہماری پالیسیوں کا کچھ اثر نظر نہیں آتا۔ جنرل مشرف نے شوکت عزیز صاحب کا فلسفہ دہرایا کہ جب اوپر کی سطح پر پیسہ آئے گا تو آہستہ آہستہ قطرے (trickle) نیچے پہنچیں گے، یہی معیشت کا اصول ہے، اس میں ذرا وقت لگتا ہے۔ صبر کرنا ہوگا۔ نیچے والے بیچارے آج تک صبر ہی کر رہے ہیں۔

پھر وزارت خزانہ سے ایک تجویز آئی کہ ٹیکس دینے والوں کی تعداد بڑھائی جائے (broadening the tax base)۔ اس سلسلے میں فوج کو کہا گیا کہ CBR (آج کا FBR) کی امداد میں تجارتی طبقے سے نئے ٹیکس فارم بھروائے جائیں۔ میں نے کہا کہ فوج کی بندوتوں کے زور پر دکان داروں کے اوپر ایک کرپٹ محکمے کو حملہ آور نہ کرایا جائے۔ اگر عوام پر یوں بوجھ ڈالنا ہی ہے، تو پہلے اس محکمے کی کچھ صفائی کر لیں۔ پھر اس میں سے چند لوگوں کی لسٹ تیار ہوئی، کہ یہ کچھ زیادہ ہی خراب ہیں۔ چیرمین CBR نے کہا کہ اگر آپ صرف صاف لوگ ہی چاہتے ہیں تو CBR میں میرے پاس ایک بھی آدمی ایسا نہیں جو "للی وائٹ" (lilly white) ہو۔ جو ہیں اُن ہی سے کام چلائیں۔ پھر فوج دکان دکان پھر کر ذلیل ہوئی۔ دکانداروں نے ہڑتالیں شروع کر دیں اور کچھ دن خوب ہنگامہ ہوا۔ آخر حکومت پیچھے ہٹ گئی، اور دکانداروں سے مذاکرات کر کے ٹیکس فارم پھاڑ ڈالا، اپنے ٹیکس کے اہداف ہی تبدیل کر لئے۔ پھر کہا کامیابی ہوئی۔

سپریم کورٹ نے جنرل مشرف کو تین سال کا عرصہ دیا تھا کہ الیکشن کرا کے حکومت عوام کے نمائندوں کو ۲۰۰۲ تک سوئپ دی جائے۔ جنرل مشرف کو کچھ کورکمانڈروں نے کانفرنس میں کہا کہ آپ خود سیاست میں نہ اُجھیں، گندے ہوں گے۔ آپ صاف ستھرے لوگوں کو الیکشن میں حصہ لینے کی اجازت دیں اور خود کو اس سے اوپر رکھیں۔ اگر حکومت صحیح کام نہیں کرتی تو سیاسی نظام اُسے بدل دے گا۔ کہنے لگے کہ جو سیاسی پنڈت ہیں، اُن کا کہنا ہے کہ سیاست سے باہر رہو گے تو کوئی چیز قابو میں نہ رہے گی۔ اگر حکومت کرنی ہے تو سیاست کے میدان میں اُترنا ہی پڑے گا۔ اور یہ کھیل ہے ہی گندا، تو پھر گندا ہونا پڑے گا۔

ناکارہ اور کمزور سیاسی قیادت کے چناؤ کی بھی یہی وجہ تھی کہ طاقت کا سرچشمہ فوجی ٹوپی کے نیچے ہی رہے۔ اس کے لئے تابعدار بول سروس، طارق عزیز صاحب کی سربراہی میں، حاضر تھی۔۔۔ جنرل مشرف کی نئی ٹیم۔ بندوق کی نوک پر جاگیر دارانہ، موروٹی سیاسی نظام ختم کر کے نیا سیاسی نظام لانا تھا، جو لوگوں کی امنگوں کا آئینہ دار ہوتا۔ یہی حکمران کا شروع سے منصوبہ تھا اور یہی وعدہ۔ شروع کے دنوں میں فوج کا بھی اس سلسلے پر خاصہ زور تھا۔ کوئی کہتا صدارتی نظام لگا دیں، ہمارے ملک کے لئے یہی موزوں ہے۔ کوئی کہتا یہی نظام ٹھیک ہے، بس الیکٹورل نظام کو مضبوط کریں، تاکہ اچھے لوگ اُبھر سکیں۔

اس بحث کو ختم کرتے ہوئے، ایک مرتبہ جنرل صاحب کہنے لگے کہ میں چین گیا تھا، وہاں اپنے چینی بھائیوں سے بھی مشورہ کیا۔ اُن کی بات میں بہت گہرائی ہے۔ اُن کا کہنا ہے کہ نظام جو بھی ہو، کوئی فرق نہیں پڑتا، اہم چیز یہ ہے کہ جو بھی نظام ہو اُس کی ملک پر گرفت صحیح ہونی چاہیے۔ مسکرائے۔ کچھ دیر خاموش رہے۔ سوچا ہوگا کہ میں کمانڈو ہوں، سخت گرفت رکھتا ہوں، بس اتنا کافی ہے۔ یہ نہیں سوچا کہ چینی بھائی نے کہا تھا کہ نظام کی گرفت ہونی چاہیے، ناظم کی نہیں۔ اس نظام کی گرفت میں تو کچھ بھی نہیں تھا، سوائے کسی لاچار شخص کے۔ اور یہ بھی

آٹھواں سفر زرد دوپہر

نہیں سوچا کہ اگر مان بھی لیں کہ فوجی حکمران سخت گرفت سے چیزوں کو قابو کر لے گا، تو پھر اُس کے جانے کے بعد کیا ہوگا؟ ناظم تو بدلتے ہی رہیں گے، نظام مضبوط نہ ہوا تو ملک تو پھر بھی ڈوب ہی جائے گا۔

جنرل مشرف کو عوام کا تعاون بھی حاصل تھا، فوج بھی ساتھ کھڑی تھی اور پوری دنیا نے بھی گلے لگایا ہوا تھا، کوئی روک ٹوک نہ تھی۔ اتنی طاقت کسے ملتی ہے؟ لیکن ملک کو نیا نظام دینے کی سمت کوئی کام نہ کیا گیا۔ شاید اس لئے کہ اتنا بڑا جھمیل اکون سر پر اٹھائے، شاید اس لئے بھی کہ اگر نیا مضبوط سیاسی نظام تشکیل دیا جاتا، جس میں ملک کے بہترین لوگ آگے آسکتے اور حکومت کا رگر ہوتی، تو ایسا نظام خود طاقت اختیار کر لیتا۔ پھر ان سب کا کیا ہوتا؟

سیاسی ڈھانچے میں رد و بدل صرف سترویں ترمیم تک ہی رہی۔ نظام میں کوئی تبدیلی نہ ہوئی۔ ظاہر ہے، اب جو موجودہ نظام کے تحت منتخب ہو کر آئیں گے وہ کیسے اس نظام کو بدلیں گے، جس کے زور پر انہیں طاقت ملی۔ نظام یہی رہے گا جب تک اسے نوچ کر نہ ہٹایا جائے۔ نیشنل سیکورٹی کونسل (NSC) پر اکتفا کیا گیا اور یہ ادارہ بھی ناکارہ ہی رہا۔ اس کا حکومت میں کوئی کردار (contribution) نہیں تھا۔ بلدیاتی نظام (local government) پر جنرل نقوی کی قیادت میں NRB نے خاصا کام کیا، مگر نہ ہی یہ سول سروس کو بھایا اور نہ ہی سیاست دانوں نے اسے قبول کیا۔ سول سروس کی گرفت میں وہ سختی نہ رہی جو انگریز بادشاہ عطا کر گیا تھا، اور وہ نچلی سطح پر بھی عوام کے نمائندوں کے تابع ہوئی۔ کیوں خوش ہوتی؟ سیاست دانوں کو یہ شکایت رہی کہ کیا پارلیمنٹ صرف قانون سازی ہی کرے اور سارا ترقیاتی بجٹ ناظمین کو ہی ملے؟ صوبائی حکومتوں نے کہا کہ ناظمین خود مختار ہیں، پھر ہماری کیا طاقت رہ گئی؟ جھگڑا سارا طاقت اور پیسے کا تھا، عوام کی بہتری کا نہیں۔ کچھ رد و بدل کی گئی، طاقت اور پیسے کو بانٹا گیا، لیکن پھر بھی کوئی خوش نہ تھا۔ یہ نظام بھی ناکارہ ہوا۔ جب اوپر کی سطح پر نظام میں تبدیلی نہ لائی جائے تو نیچے کوئی تبدیلی کیسے آئے؟ یہ سارا نظام ان ہی سیاست دانوں نے تشکیل دیا ہے اور اس جمود اور بدستور حالت (status quo) کو ہلانے میں ان سب کا نقصان ہے، جو اس سے مستفید ہو رہے ہیں۔ کیونکر یہ اقتدار اور پیسے کے پجاری اس نظام میں کوئی تبدیلی لانے دیں گے۔

جنرل مشرف نے پھر کورکمانڈر کانفرنس میں یہ صفائی پیش کی کہ جہاں تک شفاف سیاست دانوں کا سوال ہے تو جتنے سیاست دان ہیں، جب تک طاقت میں نہیں آئے تھے تو سب ہی صاف تھے۔ یہ گند تو بعد میں ان سے چپکا۔ تو اگر ہم صاف لوگوں کو لے لیں، تو کیا گارنٹی کہ کل جب یہ طاقت میں آتے ہیں، تو گندے نہیں ہو جائیں گے؟ پھر ہم پہلی بار سیاسی نظام کو چلانے لگے ہیں، ضروری ہے کہ یہ لوگ ہمارے قابو میں رہیں۔ شفاف لوگوں کو کون قابو کرے گا؟ وعدہ کیا کہ اگلے الیکشن میں شفاف لوگوں کو ہی لاؤں گا۔ یوں چوہدری برادران کو،

فوج کی سخت مخالفت کے باوجود، سیاسی قیادت کے لئے جگہ ملی۔ پھر جنرل مشرف کو سیاست دان بن کر، وردی پہنے، قماش قماش کی ٹوپوں میں سب نے دیکھا۔ فوجی ٹوپیاں پہننے والے وردی کی اس بے حرمتی پر گڑھتے رہے۔

یہ نہیں تھا کہ جنرل صاحب کو رکمانڈروں کو آگاہ نہیں رکھتے تھے، لیکن اتنا ہی بتاتے جتنا مناسب ہوتا۔ یعنی need to know basis کی بنیاد پر۔ کیا کچھ چھپا رہتا، بعد میں پتا چلتا۔ ہر کانفرنس میں لمبی باتیں کرتے، پھر لوگوں کو بولنے کا موقع دیتے، تسلی سے بات سنتے، صرف شکوے مٹانے کے لئے۔ لیکن اگر کوئی اُن کی سوچ سے زیادہ دور ہٹ جاتا، یا وہ دیکھتے کہ مخالفت بڑھ رہی ہے تو ناراض ہو جاتے۔ پھر چُپ چھا جاتی۔ وقت کے ساتھ ساتھ یہ مسئلہ زیادہ گھمبیر ہوتا گیا۔ آخری دنوں میں کچھ سننے کا حوصلہ ہی نہیں رہا۔ لوگ زیادہ اختلافات کرنے سے کتراتے۔ کچھ تو ہلکا سا اشارتاً کہہ کر کنارے ہو جاتے، کہ میں نے تو کہہ دیا اور اس طرح سرخرو ہو جاتے۔ کچھ ایسے بھی تھے جو مباحثہ کرتے، اُن کی باتیں بھی سنتے، غصہ بھی سہتے۔ مگر آخر میں جنرل صاحب کرتے وہی جو کر رہے ہوتے۔ کہتے تم لوگوں کی نظر پوری تصویر پر نہیں۔ میں اسے دیکھتا ہوں اور بہتر سمجھتا ہوں۔

مارچ ۲۰۰۲ میں ریفرنڈم کی خبریں آنے لگیں اور کورکمانڈر کی ایک کانفرنس میں جنرل مشرف نے یہ بات اُٹھائی کہ صدر کو پانچ سال کے لئے قانونی طور پر جائز (legitimate) قرار دینے کے لئے کیا کیا جائے؟ کچھ نے کہا ریفرنڈم کرائیں، کچھ نے کہا الیکشن کے بعد پارلیمنٹ کا راستہ لیں، کچھ نے کہا صدارتی نظام لگادیں۔ مگر سب نے اس بات پر زور دیا کہ صاف ستھرا نظام لائیں، خراب لوگوں کو اندر نہ آنے دیں۔

پھر اپریل میں جب ریفرنڈم ہوا تو کئی جگہوں پر جتنے ووٹ جنرل مشرف کو ملے، کُل اُتنے ووٹر بھی نہ تھے۔ سول سروس خدمت کے لئے بچھ گئی۔ فوج کو سیکورٹی کا کام سونپا گیا، اور عام تاثیر یہ دیا گیا کہ ریفرنڈم فوج کروارہی ہے۔ ایسا ہرگز نہیں تھا۔ کوئی بھی الیکشن فوج نہیں کرواتی۔ نہ ہی وہ پولنگ بوتھ کے اندر جاسکتی ہے اور نہ ہی اُس جگہ داخل ہو سکتی ہے جہاں ووٹوں کی گنتی ہوتی ہے۔ بس گنتی ختم ہونے پر نتیجہ جب باہر نکلتا، وہ حاصل کر کے تیزی سے اپنے مواصلاتی نظام پر ہمیں بھیج دیتی۔ جو نتیجہ ٹی وی پر دکھایا جاتا تھا وہ بہت کم کر کے دکھایا جاتا، ورنہ جو ووٹوں کی گنتی کا اصل نتیجہ فوج کو موصول ہو رہا تھا، دیکھ کر ہنسی آتی تھی۔ افسوس، میں نے اپنی زندگی کا پہلا، اور شاید آخری ووٹ اس ریفرنڈم میں مشرف صاحب کو دیا۔

اس کے نتائج کے خلاف کافی شور مچا، مگر معاملہ رفع دفع کر دیا گیا۔ جنرل مشرف نے معافی مانگ لی اور پانچ سال کے لئے صدر مقرر ہوئے۔ اس موڑ پر پہنچ کر قوم میں آخر یہ بات کھلنے لگی کہ حاکم ایسا نہیں جیسا سمجھتے تھے۔ جو اندر بیٹھے تھے پہلے سے جانتے تھے، مگر جب اپنے پاؤں پر کھباڑی مار چکے ہوں، تو پھر لنگڑا کر چلنے کے سوا چارہ ہی کیا تھا؟

آٹھواں سفر زرد دوپہر

نواز شریف صاحب کو جہاز ہائی جیکنگ کی عمر قید سزا ملی۔ پھر وہ مشرف صاحب سے کوئی معاہدہ کر کے ملک سے باہر چلے گئے۔ میں جانتا نہیں کیا معاہدہ تھا۔ ۳۱ جنوری ۲۰۰۲ کو کورکمانڈر کانفرنس میں سیاسی حالات پر خیالات کا اظہار کرتے ہوئے جنرل مشرف نے کہا کہ ہم PML(Q) کی امداد کریں گے، جو اُن دنوں طارق عزیز (principal secretary) صاحب کی کوششوں سے تشکیل دی جا رہی تھی۔ کہنے لگے کہ PPP کو توڑا جائے گا اور PML(N) کو کمزور کیا جائے گا۔ اگست ۲۰۰۲ کے الیکشن کی تیاری کا عجب تماشا تھا۔

ووٹ کرنے کی عمر ۲۱ سے گھٹا کر ۱۸ سال کر دی گئی، کیونکہ اندازہ تھا کہ اس گروپ میں روشن خیال اعتدال پسندی (Enlightened Moderation) کے پروگرام کی وجہ سے جنرل مشرف کے حامی زیادہ ہوں گے۔ خیال تھا کہ خواتین کے لئے جتنے کام مغربی ممالک کو خوش کرنے کے لئے کئے ہیں، اُن سے خواتین میں بھی مقبولیت ہوگی۔ اس مقبولیت کو اور بڑھانے کیلئے انہیں اسمبلی میں ۶۰ مخصوص (reserved) سیٹوں کا کوٹہ الاٹ کیا گیا، تاکہ خواتین کا زیادہ سے زیادہ ووٹ حاصل کیا جاسکے۔ اس ہی طرح اقلیتوں کو بھی بلواسطہ حیثیت سے منتخب ہونے کے علاوہ عام انتخابات میں ووٹ ڈالنے کی اجازت بھی دی گئی۔ دین کے خلاف اپنے اس نئے پروگرام کی وجہ سے ان کا بھی تعاون حاصل تھا۔ پھر الیکشن میں حصہ لینے کے لئے گریجویشن کی شرط رکھ دی، کہ زیادہ پرانے سیاست دانوں کا صفایا کیا جاسکے۔ یہ بھی قانون بنادیا کہ کوئی بھی دو مرتبہ وزیر اعظم یا صدر نہیں رہ سکتا۔ بینظیر اور نواز شریف تو یوں باہر ہوئے۔ آخر میں نیشنل اسمبلی کی سیٹیں ۲۱۷ سے بڑھا کر ۳۴۲ کر دیں۔ الیکشن کے حلقوں کی پرانی حدیں تبدیل ہو گئیں، خواہش کے مطابق نئی حد بندیاں کی گئیں اور نئی سیٹوں پر اپنے لوگوں کے جیتنے کی امید زیادہ ہوئی۔ ناظمین نے بھی خوب ساتھ دیا۔ لیکن ان تمام کے باوجود الیکشن دھاندلی کے الزامات سے بھرے پڑے تھے۔

مشرف صاحب نے ۲۰۰۴ کے آخر تک وردی اُتارنے کا وعدہ کیا۔ پھر ایک فوج کی سالانہ کانفرنس میں، جہاں تمام جنرل حاضر تھے، اس پر بات کی۔ میں نے کہا کہ فوج آج تک پچھلے فوجی حکمرانوں کے کئے پر بدنام ہے۔ ۱۹۷۱ کا کچھڑ آج بھی ہر فوجی، جو اُس وقت پیدا بھی نہیں ہوا تھا، اپنے منہ پر لئے پھرتا ہے۔ آپ نے جو وعدے کئے تھے، ہم ابھی اُن کے قریب بھی نہیں پہنچے۔ جس کام کا بیڑا اٹھایا ہے اُسے پورا کریں۔ اگر آپ اس حال میں ملک کو چھوڑ کر جائیں گے تو فوج کبھی اس بدنامی کے داغ کو نہیں دھو سکے گی۔ کہنے لگے میں صرف وردی اُتارنے کا پوچھ رہا ہوں، گھر جانے کا تو نہیں کہہ رہا۔ اُنہوں نے میری پوری بات میں صرف یہی سنا۔ میں نے کہا جب وردی اُتاری تو سمجھیں گھر گئے۔ کافی دیر اس موضوع پر بات ہوئی، مگر میں اور کچھ نہ بولا۔ سوچا یہ بھی نہ کہتا تو بہتر تھا، غلطی کی۔ جنرل مشرف سے اتنی ناامیدی کے باوجود، مجھے سیاست دانوں سے کسی قسم کی بہتری کی کوئی امید نہیں تھی، اور نہ ہی اس سیاسی نظام پر کوئی بھروسہ تھا۔ کچھ نے وردی اُتارنے کا کہا، کچھ نے کہا نہ اُتاریں۔ کہنے لگے میں سوچ کر فیصلہ کروں گا۔ پھر مشرف صاحب کے آخری دنوں میں فوج کو وہ وقت بھی دیکھنا

آٹھواں سفر زرد دوپہر

پڑا کہ فوجی منہ چھپاتے پھرتے تھے۔ گھر سے سول کیڑے پہن کر نکلتے اور وردی دفتر میں جا کر پہنتے۔ محفل میں تعارف کراتے تو اپنا عہدہ چھپاتے۔ نا جانے یہ کالک ہمارے منہ سے کب دھلے گی۔

سوچو تو سلوٹوں سے بھری ہے تمام روح *

"میں کل آرہا ہوں، مجھے بہت اچھی نوکری مل گئی ہے، اب اسلام آباد ہی میں رہوں گا"، میرے ایک بہت قریبی رشتہ دار کا، جو ان دنوں نوکری کے سلسلے میں پریشان رہتے تھے، فون تھا۔ کہنے لگے آپ سے بھی تعلق رہے گا۔ میں نے پوچھا کیسا تعلق، تو کہا کہ آکر بتاؤں گا۔ میں ابھی نیانیا ہی CGS بنا تھا، گھر بھی نہیں ملا تھا، میس میں رہ رہا تھا۔ جب آئے تو کہنے لگے اسلام آباد میں اتنا ترک روڈ پر ایک شاندار مکان بھی مل رہا ہے، تنخواہ بھی بہت اچھی ہے۔ پتا چلا کہ پاکستان کی ایک اثرورسوخ رکھنے والی کاروباری شخصیت نے، اپنے فوج سے منسلک کاروبار کے دفتر کا سربراہ بنالیا ہے۔ اُن کے دفتر میں چند ریٹائرڈ بریگیڈیئر صاحبان بھی ملازم تھے، جواب ان کے نیچے کام کریں گے۔ یہ کمپنی فوج کو ہیلی کاپٹر اور دیگر بڑے ساز و سامان فراہم کرتی تھی اور ان کا کاروبار کئی ممالک میں پھیلا ہوا تھا۔ میں چونک پڑا۔ یہ مجھ پر ہتھیار فروشوں کا پہلا حملہ تھا۔

میں نے اپنے رشتہ دار سے کہا تم کن چکروں میں پڑ گئے، تمہیں تو یہ بھی نہیں پتا کہ بندوق میں گولی کدھر سے ڈالتے ہیں، اتنا بڑا کاروبار کیسے سنبھالو گے؟ کہنے لگے آپ فکر نہ کریں میں سب سنبھال لوں گا۔ میں نے کہا آپ کا جہاں جی چاہے نوکری کریں، مگر مجھ سے کوئی توقع نہ رکھیں۔ کہنے لگے نہیں آپ سے کیا توقع رکھنی، کیا میں آپ کو جانتا نہیں؟ آپ کو تنگ نہیں کروں گا۔ بس اگر کہیں ملاقات کرنی ہو تو آپ اتنا کر دیں کہ اُن سے کہہ دیں کہ وہ ہم سے مل لیں، باقی میں سنبھال لوں گا۔ کوئی آپ سے غلط کام تو کروانا نہیں۔ میں نے کہا میں اس سلسلے میں کوئی ٹیلیفون نہیں کروں گا اور نہ ہی اس قسم کی اور کوئی امداد کر سکتا ہوں۔ ایک ٹیلیفون سے ہی ان کا سب کام ہو جاتا۔ اور میرا کام تمام۔ مجھ پر خاندان والوں کا بھی بوجھ پڑتا رہا، کہ تم سے اتنا بھی نہیں ہو سکتا، کہ اپنوں کی ذرا سی مدد کرو؟ میں نے کہا ذاتی طور پر ہر مدد کے لئے تیار ہوں، لیکن اپنے دفتر سے نہیں۔ پھر طعنے بھی سنے کہ اب بڑے آدمی بن گئے ہیں، نظریں پھیر لی ہیں۔ غرور اور خود غرضی کے الزامات بھی سہے۔ نہ جانے اس کاروباری شخصیت نے انہیں کیسے ڈھونڈ نکالا تھا۔

فوج میں ہر سال بجٹ کا ایک بڑا حصہ فوجی سامان کی خرید میں لگتا ہے۔ فوج کے اندر یہ سارا سلسلہ CGS کے تحت کام کرتا ہے۔ ایک مخصوص ڈائریکٹریٹ، W&E (Weapons and Equipment Directorate)، اس کام کے لئے موجود ہے۔ اس کے ساتھ ایک ITD (Inspectorate of Technical Development) ہے جو تمام اشیاء کی فنی موذونیت کو

جانچتی ہے۔ فوج کے ہر شعبے کی اپنی ڈائریکٹریٹ بھی CGS کے نیچے کام کرتی تھی۔ یہ ڈائریکٹریٹس اپنی ضروریات کی فہرست بناتیں اور MO ان کا تجزیہ کرتا، تاکہ ضروریات کو اہمیت کے لحاظ سے ترجیح دی جاسکے۔ پھر ایک سالانہ کانفرنس میں CGS، بجٹ کو دیکھتے ہوئے ان تجاویز پر فیصلہ کرتا ہے کہ کیا کچھ اس سال خریدا جائے گا۔ اس حتمی لسٹ کو وزارتِ دفاع بھیج دیا جاتا ہے، پھر ان کی خریداری وہی کرتے ہیں۔ اس کام کی نگرانی اور وزارتِ دفاع سے ارتباط W&E کرتی ہے۔ اگر کوئی نیا سامان ہو تو فوج میں اس کو آزمایا (trials) جاتا ہے۔

سامان بیچنے والی کمپنیوں کے نمائندے، اس سلسلے سے منسلک تمام فوجی دفتروں سے اپنا میل جول شروع کرتے ہیں، پھر ITD اور W&E میں اثر و رسوخ استعمال ہوتا ہے، اور آخر میں ساری توجہ وزارتِ دفاع پر مرکوز ہو جاتی ہے۔ میں MO میں دو سال بریگیڈیئر کے طور پر اور پھر دو سال DGMO کے طور پر اس کام سے منسلک رہا۔ پھر CGS کے طور پر دو سال اس تمام عمل کی سربراہی کی اور بغور مشاہدہ بھی۔ میں وثوق سے کہہ سکتا ہوں کہ اس کام میں فوج کا بہت سا پیسہ کمیشن کی صورت میں، کچھ مخصوص لوگوں کی جیبوں میں پہنچ جاتا ہے۔

MO میں دو مختلف عہدوں پر تجربے کے بعد، جہاں مجھ پر ہتھیار فروشوں کی زور آزمائی ہو چکی تھی، میں نے آتے ہی اس سلسلے کو محدود کرنے کے لئے اقدامات لینے شروع کر دیے۔ پہلا کام یہ کیا کہ جوان کے نمائندے GHQ میں کھلے عام پھرتے تھے، ان کا داخلہ بند کیا، ان کے لئے ایک گیٹ کے نزدیک پرانی بیرک کو ٹھیک کروا کر اس میں کئی کمرے میٹنگ کے لئے بنوائے۔ پھر اس کا ایک باقاعدہ نظام قائم کیا۔ W&E میں ایک ٹیلیفون نمبر دیا جس پر تمام ملاقاتی ملاقات کا ٹائم لیتے۔ ملاقات میں GHQ کے کم از کم تین افسر موجود ہوتے۔ W&E کا متعلقہ افسر، اس ڈائریکٹریٹ کا افسر جن کا سامان ہوتا اور ITD کا افسر۔ ملاقات صرف دی ہوئی جگہ پر ہوتی اور اس کی تفصیل کا باقاعدہ ریکارڈ رکھا جاتا۔ ملاقات کے کمرے MI کے انتظام میں تھے اور ہر کمرائی وی کیمرے سے آراستہ۔ اس کی آگاہی کے لئے نشانات بھی لگا دیے گئے کہ ہر کمرائی وی کیمرے سے مانیٹر ہوتا ہے۔ MI بھی ملاقاتیوں کا ریکارڈ رکھتی۔

پھر یہ احکامات جاری کئے کہ کوئی بھی افسر جو فوجی سامان کی خرید سے منسلک ہے، ان کمپنیوں کے نمائندوں سے کسی قسم کا رابطہ نہیں رکھے گا، سوائے مخصوص ملاقات کی جگہ پر۔ ان سے فون پر رابطہ رکھنا، ان سے ملاقات یا ان کی دعوت میں شمولیت، یا تحائف وصول کرنا قانون کی خلاف ورزی قرار دی۔ کچھ اعتراضات مجھ تک پہنچے کہ افسران پر اعتبار نہیں کیا جا رہا۔ میں نے کہا کہ آپ سب ہی جانتے ہیں کہ یہ سلسلہ کس قدر بدنام ہے، تو بہتر نہیں کہ ہر بات کھلی ہو اور آپ کا نام محفوظ رہے؟ یہاں تکلف کی کوئی گنجائش نہیں تھی۔ کافی کوشش کی کہ وزارتِ دفاع اور GHQ مل کر پورے نظام کا تجزیہ کر لیں، تاکہ کرپشن کی روک تھام کی جاسکے، مگر منسٹری کا کہنا تھا کہ ہمارے طریقے صحیح چل رہے ہیں، کوئی رد و بدل کی ضرورت نہیں۔ آپ GHQ میں جو چاہیں کریں، وزارتِ دفاع کے کام میں دخل نہ دیں۔

آٹھواں سفر درو دوپہر

میں نے پھر اپنے رشتے دار سے کہا کہ آپ جب تک فوج سے منسلک کاروباری ادارے کے ساتھ نوکری کر رہے ہیں، یا میں جب تک اس کرسی پر ہوں، مجھ سے تعلق نہ رکھیں، نہ ہی میرے گھر آئیں اور نہ ہی گھر میں کسی کو ٹیلیفون کریں۔ اس کے علاوہ آپ کی اپنی مرضی ہے جو چاہیں بخوشی کریں۔ میں آپ کو نوکری سے منع نہیں کروں گا، وہ آپ کا فیصلہ ہے۔

قانونی ماہرین سے مشورہ کیا کہ کیا میں ایسے کاروباری شخص کو بلیک لسٹ (black list) کر سکتا ہوں جو فوج کے لئے سامان خریدنے کے نظام کو یوں ناکارہ (neutralize) کرنے کی کوشش کرے۔ تاہم اگر اس سلسلے میں کوئی قانونی کارروائی کی بھی جاتی تو نہایت پیچیدہ ہوتی۔ میں نے پھر DGMI سے مشورہ کیا، اور ان حضرات کے بارے میں تمام فوج سے منسلک دفاتر میں ایک سرکاری خط بھجوا دیا۔ اس میں لکھا کہ ان صاحب کی سیکورٹی کلیئرنس (security clearance) نہیں ہے، اور جب تک یہ سیکورٹی کے لحاظ سے کلیئر نہیں کئے جاتے ان سے کسی قسم کا تعلق نہ رکھا جائے۔ یہ خط میں نے GHQ کے تمام دفاتروں کے علاوہ POF (Pakistan Ordnance Factories) واہ اور HIT (Heavy Industries Taxila)، کو بھی بھجوا دیے اور اس کی ایک کاپی برائے اطلاع وزارت دفاع کو بھی۔ ان کا فوج کے ساتھ کاروبار رک گیا۔

کچھ ہی دن گزرے تھے کہ DGMI صاحب میرے پاس آئے اور کہا کہ جنرل مشرف صاحب بہت خفا ہیں کہ یہ کیا ماجرا ہے۔ کہنے لگے میں نے انہیں بتایا تو انہوں نے کہا کہ شاید کو چاہیے کہ اپنے رشتہ دار کو روکے، اسلحے کے کاروبار کرنے والی فرم کے مالک کا کیا قصور ہے، اس کو کیوں دبایا جا رہا ہے؟ میں نے کہا کہ ان سے کہہ دیں کہ میں اُس کے خلاف کارروائی کروں گا جس سے فوج سرکاری طور پر کاروبار کرتی ہے، اُس کمپنی کے ملازمین سے مجھے غرض نہیں۔ انہوں نے پھر دوبارہ بھی مجھے غصے سے بھرا پیغام بھجوایا کہ عجیب سر پھر انسان ہے۔ میرے دو سال وہاں رہتے میں فوج نے اُن صاحب سے کوئی کاروبار نہیں کیا۔ میرے رشتے دار کی نوکری بھی چھوٹی۔ جب میں اُس کرسی سے ہٹ رہا تھا تو وہ مجھ سے ملنے آئے اور معذرت کی کہ میں آپ کو سمجھ نہ پایا تھا۔ میں نے آتے وقت وہ خط جس سے اُن کا کاروبار رکا ہوا تھا منسوخ کروا دیا۔

دیکھو تو اک شکن بھی نہیں ہے لباس میں *

اخبار میں خبر چھپی، "فوج میں کرپشن کا انکشاف، سستی گاڑیاں چھوڑ کر مہنگی گاڑیاں خریدی گئیں۔ کروڑوں ڈالر کا گھپلا۔" الزام مجھ پر تھا۔ میں نے کوئی ردِ عمل نہیں دیا۔ سوچا، فضول باتوں میں کیا پڑنا، فوج کے ایک ریٹائرڈ سینئر افسر کا نام خراب ہوگا۔ انہوں نے تو خود شرم نہ کی، مجھ پر کیچڑ اُچھالا۔ کچھ دن اور گزر گئے۔ پھر وزارتِ دفاع سے ایک خط موصول ہوا۔ لکھا تھا NAB آپ سے گاڑیوں کی خرید میں گھپلے کے سلسلے میں تفصیلات چاہتا ہے۔ جواب دیں۔ ساتھ NAB کا خط لگا تھا، ساتھ کسی سیاستدان کی NAB کو بھیجی ہوئی شکایت اور اُس کے ساتھ اخبار کی اس خبر کا تراشہ۔

میں نے چیرمین NAB کو فون کیا۔ پوچھا کہ یہ خط کس سلسلے میں لکھا ہے؟ کہنے لگے، "فوج پر یہ الزام تھا، میں نے چاہا کہ آپ کا نام خراب نہ ہو، اس لئے لکھا ہے۔ آپ ہمیں جواب دے دیں، تاکہ میں آپ کی طرف سے صفائی پیش کر دوں۔" میں نے کہا، "آپ کو کس نے یہ اختیار دیا کہ آپ میری صفائیاں پیش کریں؟ آپ تو فوج سے پوچھنے کے مجاز بھی نہیں؟" پھر میں نے کہا، "آپ کا یہ پلندہ، جو آپ نے ساری منسٹری اور GHQ میں پھرایا ہے، میرا نام خراب کرنے کو کافی ہے، کہ NAB نے CGS کی انکوائری شروع کر دی۔" میری بات خاموشی سے سنتے رہے۔ حاضر سروس لیفٹیننٹ جنرل تھے اور مجھ سے خاصے سینئر تھے، یقیناً ایسا ردِ عمل متوقع نہ تھا۔ میں نے بات آگے بڑھاتے ہوئے کہا، "اب میں یہ تمام کاغذات جنرل مشرف کو بھیج رہا ہوں، کیونکہ میں تو اُن کا سٹاف افسر ہوں۔ آپ کے ادارے کو اگر GHQ سے کوئی جواب چاہیے تو وہ صرف چیف ہی دے سکتے ہیں۔ میں فائل پر لکھ کر بھیج رہا ہوں کہ چیرمین NAB کی تسلی کے لئے اپنی صفائی انہیں پیش کریں۔ پھر انہوں نے مجھ سے جو پوچھنا ہوگا، پوچھ لیں گے۔ میں آپ کو جواب دہ نہیں ہوں۔" میری بات سن کر بہت شیشائے کہنے لگے، "پارٹنریہ اُس لیول کی بات نہیں ہے۔ آپ خود ہی جواب دے دیں۔" میں نے کہا اب جواب وہ ہی دیں گے اور فون بند کر دیا۔

کچھ دیر بعد سیکرٹری دفاع، لیفٹیننٹ جنرل ریٹائرڈ حامد نواز صاحب کا فون آ گیا۔ کہنے لگے بھائی تم تو ناراض ہو گئے۔ میں نے کہا ناراضگی کیسی؟ پھر انہیں تفصیل بتائی اور کہا کہ NAB نے صرف مجھ پر کیچڑ اُچھالنے کے لئے یہ کیا ہے۔ اب فوج سے جو کچھ پوچھا ہے، چیف ہی اُس کا جواب دے سکتے ہیں۔ انہوں نے مجھے کافی سمجھایا کہ جیسا ہوا ہے لکھ دو، مگر میرا میٹر گھوم چکا تھا، NAB کے چیرمین کی جستجو سمجھتا تھا۔ پروموشن کی تمنا میں ایسی گری ہوئی حرکت! اُن کی کوشش تھی کہ میں اتنا بدنام ہو جاؤں کہ وائس چیف کے عہدے پر ترقی کے لئے

* شکیب جلالی

آٹھواں سفر زرد دوپہر

ناموزوں ٹھہروں۔ میں نے کہا اس بات کا فیصلہ چیف پر ہی چھوڑ دیں۔ جب یہاں سے کام نہ بنا تو چیئر مین نیب صاحب نے جنرل یوسف کو فون کیا کہ CGS کو روکیں۔ اگلے دن انہوں نے مجھے بلا کر سمجھایا، کہ معاملے کو رفع دفع کرو۔ پھر میں نے منسٹری کو ایک سطر کا جواب دے دیا کہ گاڑیوں کی خرید دیے ہوئے فوج کے اصولوں کے مطابق ہوئی ہے۔ میں نے سوچا چھوڑو، کون سی پہلی بار ہے کہ مجھ پر کچھ اچھالا گیا ہو۔ اللہ ہی قدر دان کافی ہے، اور وہ سب سے بہتر قدر دان ہے، جسے چاہتا ہے عزت دیتا ہے اور جسے چاہے ذلت۔ یہ اگست ۲۰۰۲ کی بات ہے۔

فوج میں شروع سے ڈھائی ٹن ٹرک اور ڈیڑھ ٹن ٹریلر استعمال ہو رہے تھے۔ میرے اس دفتر میں آنے سے کافی پہلے فوج کے ایک سابقہ سربراہ نے لکھ کر فیصلہ دیا تھا کہ اب سے اس کے بجائے چارٹن ٹرک لئے جائیں گے، کیونکہ یہ ٹرک اب بازار میں ملنے لگے تھے۔ یہ زیادہ موزوں گاڑی تھی کیونکہ کچے راستوں پر، صحراؤں میں اور پہاڑی راستوں پر ٹریلر کھینچنے میں دشواری ہوتی ہے۔ میں نے چیف صاحب کا یہ فیصلہ دیکھا، مگر اس پر کبھی عمل نہیں ہوا تھا۔ چیف کے اس پرانے فیصلے کے مطابق، فوج کی طرف سے چارٹن ٹرک کی ضرورت پیش کر دی گئی۔ پھر راز کھلا کہ اس فیصلے پر عمل کیوں نہیں ہوا تھا۔

پاکستان کی دو کمپنیوں نے اپنے ٹرک پیش کئے۔ ITD سے رپورٹ ملی کہ ایک کمپنی نے وہی گاڑی بھجوائی ہے جو اب تک ڈھائی ٹن کے طور پر ہم خریدتے تھے۔ کمپنی کے نمائندے نے بتایا کہ یہ چارٹن وزن اٹھاتی ہے۔ ITD سے میں نے کہا کہ دونوں گاڑیوں پر چارٹن وزن لا کر دیکھیں۔ اگلے دن دونوں گاڑیاں چارٹن امونیشن لا کر دفتر کے باہر کھڑی تھیں۔ جب میں گیا تو مجھے ITD کے جنرل صاحب، میجر جنرل اکبر سعید اعوان نے، جو نہایت پاکیزہ طبیعت کے مالک تھے، دکھایا کہ گاڑی کی کمائیاں سیدھی ہو کر اپنی جگہ کنڈوں (studs) پر بیٹھ چکی تھیں۔ کہنے لگے یہ ڈھائی ٹن گاڑی ہے، پھر جاپان کی کمپنی کا اصل کتابچہ (original brochure) بھی دکھایا جس میں یہ گاڑی ڈھائی ٹن ہی دکھائی گئی تھی۔ کمپنی کے نمائندے نے کہا کہ ہمیں کچھ اور وقت دیا جائے، ہم دوسری گاڑی پیش کریں گے۔ میں نے اور وقت دے دیا۔

کچھ دنوں بعد دوسری گاڑی لائی گئی۔ DG ITD نے دکھایا کہ گاڑی وہی تھی، مگر اس میں خرابی سے زائد کمائیاں ڈلوائی گئیں تھیں، جو نظر آرہی تھیں۔ DG ITD نے کہا کہ گاڑی کے انجن کی طاقت اور وزن کا تناسب (power to weight ratio) ہوتا ہے، پھر ایک ایکسل کے وزن اٹھانے کی صلاحیت (axle load) ہوتی ہے اور پھر زمین پر ٹائر کا دباؤ ہوتا ہے، کہ گاڑی کچی زمین میں دھنس نہ جائے۔ کہنے لگے یہ گاڑی ابھی تو پکے فرش پر کھڑی ہے، جب یہ ریگستانوں میں، پہاڑوں میں اور پنجاب کے کچے علاقوں میں چلے گی تو یہ کبھی وزن اٹھا کر نہیں چل سکے گی۔ ITD نے ٹیکنیکی (technical) وجوہات پر گاڑی کو قبول نہ کیا۔ نمائندے کے پاس کوئی جواب نہیں تھا۔ میں نے گاڑی رد (reject) کر دی۔

ایک ریٹائرڈ سینئر افسر اس کمپنی سے منسلک تھے، فون آگیا۔ کہنے لگے ہمارا ٹرک اچھا ہے، وہ کیوں نہیں لے رہے؟ میں نے انہیں ساری بات بتائی، تو کہنے لگے میں بھی وہاں رہ چکا ہوں، سب جانتا ہوں۔ یہ جون ۲۰۰۲ کا واقعہ ہے۔ کچھ دن بعد وائس چیف نے بتایا کہ اُن کو بھی اس سلسلے میں فون آیا تھا۔ میں نے انہیں بھی تفصیلات سے آگاہ کیا۔ کچھ دنوں بعد وائس چیف کو ان ریٹائرڈ افسر کا ایک سخت ساختہ موصول ہوا۔ پھر اس موضوع پر بات ہوئی، مجھے خط دیا اور کہنے لگے اس کا جواب دے دو۔ میں نے تمام تفصیلات لکھ کر بھیج دیں۔

ہم نے وزارتِ دفاع کو اپنے فیصلے سے آگاہ کر دیا۔ کچھ دنوں بعد اس کمپنی کی طرف سے ایک خط آیا، جس کی کاپی منسٹری کو بھی بھیجی گئی تھی۔ لکھا تھا کہ ہم آپ کو اپنی گاڑی ۲۵،۰۰۰ ڈالر میں دینے کو تیار ہیں۔ اس سے پہلے ہم یہی گاڑی ڈھائی ٹن کے طور پر لگ بھگ ۴۳،۰۰۰ ڈالر میں خریدتے تھے۔ میں سمجھ گیا کہ کھیل کھیلا جا رہا ہے، تاکہ مجھے بدنام کیا جائے۔ میں نے W&E سے کہا کہ اُن کو جواب دیں کہ آپ کی گاڑی ڈھائی ٹن کے طور پر ہمیں قبول ہے اور اگر آپ اب اس قیمت پر دے رہے ہیں تو فوج میں گاڑیوں کی قلت کو دیکھتے ہوئے ہم، چارٹن گاڑیوں کے علاوہ، آپ سے ایک ہزار ڈھائی ٹن گاڑیاں خریدنا چاہتے ہیں۔ خط کی ایک کاپی وزارتِ دفاع کو بھی بھیج دی۔ اس کے بعد اُن کا کوئی جواب نہیں آیا۔ چند ماہ بعد اخبار میں وہ خبر چھپی، جس پر NAB نے خط لکھا۔ چاہے کاروباری مفاد ہو یا ترقی کی خواہش، مفاد پرست اشخاص کسی بے گناہ کا گلا کاٹنے سے دریغ نہیں کرتے۔ یہ وہ ہیں جنہوں نے اپنی زندگیوں کو کاروباری اصولوں پر ڈھال لیا ہے۔ ہر پہلو کو صرف نفع اور نقصان کے رنگ میں دیکھتے ہیں۔ سرمایہ دارانہ معیشت کے اس مغربی پیکر میں غلط اور صحیح کا کوئی تصور نہیں۔ صرف ذاتی مفاد ہی راہ کا تعین کرتا ہے۔

سفارتوں کا سلسلہ بھی لگا تار جاری رہتا۔ ایک دن میری یونٹ کے ایک پرانے افسر میرے پاس آئے اور کہنے لگے تم سے ایک کام ہے۔ اسلام آباد میں پولیس کی زمین پر پولیس سے شراکت کے تحت ایک CNG اسٹیشن لگانے کی اجازت ملی تھی، اب IG صاحب تبدیل ہو گئے ہیں اور نئے IG میرا کنٹریکٹ ختم کر رہے ہیں۔ تم انہیں فون کر کے کہو کہ ایسا نہ کریں۔ میں نے بہت معذرت کی کہ یہ کام مجھے نہ سونپیں۔ اُن کے جنرل مشرف سے اچھے تعلقات تھے، کہنے لگے کیا میں اُن سے کہوں؟ میں نے کہا جیسا آپ مناسب سمجھیں۔ اگلی مرتبہ جب جنرل مشرف صاحب آئے تو ہم سب MO کی طرف جا رہے تھے، کہنے لگے، "تمہاری یونٹ کے افسر کا ایک چھوٹا سا کام ہے، کروادو"۔ میں چپ رہا۔ کچھ دن بعد اُن کے دفتر سے اس سلسلے کے کاغذات مجھے بھجوا دیے گئے۔ کافی دن گزر گئے، وہ کاغذ میرے دراز ہی میں پڑے رہے۔ اُن صاحب نے پھر مجھ سے پوچھا۔ کہنے لگے کہ اب تو صدر صاحب نے تم سے کہا ہے، اب تو کروادو۔ میں نے پھر معذرت کی کہ میں ایسی سفارش نہ کرنے پر مجبور ہوں، تو کہا اگر برا نہ مناؤ تو پھر سے صدر صاحب سے کہوں، کیونکہ میرا کام تو جوں کا توں پڑا ہے۔ میں نے کہا ضرور کہیں، شاید وہ خود ہی کروادیں۔ اگلی مرتبہ جب جنرل مشرف صاحب آئے تو ناراض ہوئے کہ تم سے اتنا سا کام بھی

نہیں ہوتا۔ ایک اور جنرل صاحب بھی وہاں موجود تھے، کہنے لگے سر مجھے بتائیں کیا مسئلہ ہے۔ پھر میں نے وہ کاغذات انہیں بھجوا دیے۔ نہیں جانتا ان کے کام کا کیا ہوا۔ یہ بات میں نے صرف جملہ معترضہ کے طور پر لکھی ہے، چونکہ میرے بہت سے رشتے دار اور احباب شاید اس ہی وجہ سے آج بھی مجھ سے ناراض ہیں کہ ان کے کام نہیں کروائے۔

CGS کے دفتر کا کام بہت پھیلا ہوا تھا، ختم ہونے کو ہی نہیں آتا تھا۔ فوج کی تنظیم نو کا کام بھی جاری تھا۔ میں نے اس سلسلے میں جنرل یوسف سے کہا کہ جو سپاہی فوج میں لڑنے کے لئے بھرتی ہوتے ہیں، ان سے بیٹ مین کا کام لینا درست نہیں۔ میں ہمیشہ سے ہی اس دستور کے خلاف تھا۔ سپاہی کی ایک عزت ہے، ایک شناخت ہے، اُس سے جوتا پالش کروانا ٹھیک نہیں۔ جنرل یوسف نے میری بات سے اتفاق کیا۔ ایک سپاہی ویسے بھی اس کام کے لئے بہت مہنگا پڑتا تھا، اسے لڑائی کے لئے تیار کرنے میں فوج کا بہت خرچہ آتا، پھر یہ میدان جنگ سے بھی باہر رہتا۔ سپاہیوں میں بھی اس بات پر بہت بے چینی رہتی تھی۔ دنیا کی کسی فوج میں ایسا نہیں ہوتا، سوائے ان کے جو غلامی میں رہے ہوں۔ اور اب سپاہی پڑھے لکھے آرہے تھے، اس کام پر آمادہ نہیں تھے۔ یہ مسئلہ جنرل مشرف کو بتایا تو وہ کہنے لگے بہت اچھی بات ہے، تفصیل سے جائزہ لے لو۔ جب ہم نے حساب کیا تو اگر ہم بیٹ مین ختم کر دیتے تو فوج میں آسانی سے ۵۰,۰۰۰ کی تعداد بھی گھٹائی جاسکتی تھی، اور سول نوکروں کی تنخواہ وغیرہ بھی اس سے نکل سکتی تھی، پھر بھی خاصی مالی بچت تھی۔ مسئلہ پیسے کا تو تھا ہی نہیں، مگر ہر چیز میں مالی نکتہ نظر بھی جانچنا ہوتا ہے۔ فوج کے افسروں میں یہ تبدیلی زیادہ مقبول نہیں تھی، کیونکہ جیسا اعتبار والا اور تابعدار ایک فوج کا سپاہی تھا، ویسا بھروسہ ایک عام نوکر پر کرنا مشکل تھا، مگر کڑوا گھونٹ سمجھ کر فوج کے افسران نے سپاہیوں کے پیشے کے احترام میں اسے قبول کیا۔ فوج میں یہ ایک بہت بڑی تبدیلی تھی۔ شروع میں لوگوں کو بہت مشکلات پیش آئیں، پھر آہستہ آہستہ لوگ عادی ہو گئے۔ کچھ پریشانیاں بدستور ہیں۔ اگر اس سلسلے کو دوبارہ شروع کیا گیا تو یقیناً سپاہیوں کو بہت تکلیف ہوگی۔

فوج کی بہتری کے لئے ایک کوشش اور کی تھی مگر کامیاب نہ ہو سکی۔ فوج کے افسروں کی ایک کثیر تعداد کی ترقی میجر کے رینک پر جا کر رک جاتی ہے۔ آگے ترقی کی راہ بند ہونے پر یہ دل برداشتہ افسران سالوں فوج میں اس ہی عہدہ پر نوکری کرتے رہتے ہیں۔ ان میں اکثریت عموماً نہ ہی دل لگا کر کام کرتی ہے اور نہ ہی ان کا ڈسپلن اُس معیار کا رہ جاتا ہے جو فوج کے لئے موزوں ہو۔ پھر یہ دوسرے افسروں کے لئے غلط مثال بھی قائم کرتے ہیں اور ان کا جذبہ بھی ماند پڑتا ہے۔ دوسری جانب اب فوج میں بہت پڑھے لکھے سپاہی آرہے ہیں، جن میں سے میرٹ پر قابلیت رکھنے والوں کو ترقی دے کر اگر افسر بنایا جائے تو نہایت شوق سے کام کریں گے۔ اور ان کا حق بھی ہے۔ اس طرح سے ہم جے سی او (Junior Commissioned Officer) کا رینک بھی ختم کر سکتے ہیں اور جو سپاہیوں اور افسروں کے درمیان خلا ہے اسے بھی پُر کر سکتے ہیں۔ ایک تخمینے کے مطابق قریب تیس فی صد افسر یہاں سے لئے جاسکتے ہیں جو کمپنی کے درجے کی کمان اور ہندوستانی

کاروائیوں پر میجر اور کرنل تک کی اسامیاں پڑ کر سکتے ہیں۔ اس طرح PMA سے آنے والے افسروں کی تعداد بھی گھٹائی جاسکتی ہے اور چنے ہوئے مخصوص تعداد کے لوگ لئے جاسکتے ہیں، جن کو مزید تربیت، جو انہیں اہم عہدوں کے لئے تیار کرے، بھی بہتر طریقے سے دی جاسکتی ہے۔ اس سلسلے میں خاصی مالی بچت کی بھی گنجائش ہے۔

اس تجویز کے خلاف جو بات کی جاتی تھی وہ یہ تھی کہ اس طرح فوج میں دو قسم کے افسران ہو جائیں گے، ایک PMA سے آنے والے اور ایک سپاہیوں سے ترقی پانے والے، اور ان دونوں کے بیچ کھچاؤ رہے گا۔ میرا کہنا تھا کہ اگر کوئی کھچاؤ ہوا بھی تو اتنا شدید نہ ہوگا جتنا آج افسر اور سپاہی کے درمیان ہے۔ میں سمجھتا ہوں کہ اس سے ہم آہنگی بڑھے گی۔ آج بھی تو دو قسم کے افسر فوج میں نوکری کر رہے ہیں۔ ایک وہ جن کی ترقی کی راہ کھلی ہے اور ایک وہ جن کے آگے جانے کے دروازے بند ہو چکے ہیں۔ فوج میں ایک کوشش کی گئی تھی لیکن اُس وقت تعلیم اتنی عام نہ تھی اور زیادہ تر کلرک ہی افسر بنے۔ شاید یہ تجربہ اتنا اچھا نہ رہا ہو جو یہ سلسلہ ختم کر دیا گیا۔ کئی ممالک کی فوجوں میں جب افسر آگے ترقی کے لئے موزوں قرار نہیں پاتا تو اسے مزید فوج میں نہیں رکھتے، گھر بھیج دیتے ہیں۔ اور کئی افواج میں تمام افسر صرف سپاہی سے ترقی پا کر ہی آتے ہیں۔ میں سمجھتا ہوں کہ یہ ایسی تبدیلی ہے جو آج نہ سہی، کل تو آئے ہی گی۔ جتنی جلدی یہ تبدیلی لائی جائے فوج کے لئے اُتنا ہی بہتر ہے۔ انگریز حاکموں کی بنائی ہوئی افسر اور سپاہی کے درمیان کی دیوار گرانی ہوگی۔

ان ہی دنوں ۲۰۰۳ کے وسط میں، JS HQ نے ہماری دفاعی پالیسی پر، جو وزیر اعظم معین قریشی صاحب کی نگرانی حکومت کے دوران بنی تھی، نظر ثانی شروع کی۔ پہلے غلطی سطحوں پر کچھ مینٹلنگز ہوئیں، پھر جنرل عزیز، جو چیرمین تھے، انہوں نے میٹنگ بلوائی، اور آخر میں تبدیلی کی سفارشات صدر صاحب کو پیش کی گئیں۔ تینوں سروں کے چیف اور دیگر سینئر افسران بھی موجود تھے۔ وزارتِ دفاع اور وزارتِ خارجہ کے لوگ بھی موجود تھے۔ میں اپنے اختلافات شروع دن سے ہی دے رہا تھا، مگر ان پر بحث کے بعد کوئی تبدیلی نہ ہوتی۔ جو سفارشات شروع میں بنائی گئیں تھیں وہی صدر صاحب کو پیش کر دیں۔ پہلے قومی نصب العین (National Aim) پیش کیا گیا۔ گو کہ اس سے دفاعی پالیسی پر براہِ راست اتنا اثر نہیں پڑتا تھا، پھر بھی اگر آپ قومی نصب العین تشکیل دے رہے ہیں، تو سوچا سمجھا ہونا چاہیے۔

دونوںوں پر میرا اختلاف تھا۔ ایک یہ کہ لکھا گیا تھا کہ پاکستان کو ایک جدید (modern) اور ترقی پسند (progressive) مملکت بن کر ابھرنا ہے۔ میرا کہنا یہ تھا جب ترقی پسند کہہ دیا تو جدید سے اور کیا مراد ہے؟ کیا یہ معاشرتی تبدیلی کی طرف اشارہ ہے؟ اس پر میں نے خاصی بحث کی، مگر کوئی فیصلہ نہ ہو سکا۔ دوسرا اختلاف یہ تھا کہ اس قوم کی جو آخری منزل متعین کی گئی تھی وہ یہ تھی کہ ہم دنیا کی قوموں میں احترام کی حیثیت پائیں (find an honourable place amongst the comity of nations)۔ میں نے

آشواں سفر زرد دوپہر

پوچھا کیا نیپال جیسی حیثیت ہمیں منظور ہوگی؟ دوسروں کی نظروں میں عزت پانے کے لئے ہمیں کیا کرنا ہوگا؟ کیا جیسے ایران کو آج "روگ سٹیٹ" (rogue state) کا خطاب دیا گیا ہے، ہمیں ایسے القاب سے بچنا ہوگا؟ یا یوں دیکھ لیں کہ یہ فیصلہ کون کرے گا کہ ہم اب قابل احترام ہو گئے؟ کیا UN کی مہر چاہیے ہوگی؟ میں نے ایک نصب العین تجویز بھی کیا۔ خاصی بحث کے بعد مسئلہ ملتوی کر دیا گیا۔

ہم ساٹھ سالوں میں یہی فیصلہ نہ کر سکے کہ ہماری منزل کیا ہے۔ کوئی کہتا ہے قائد اعظم یہ چاہتے تھے، کوئی کہتا ہے نہیں وہ یہ نہیں چاہتے تھے۔ کسی نے قوم سے نہیں پوچھا کہ تم کیا چاہتے ہو۔ وہ بیچارے اپنا روز و شب بہتر بنانے کے قابل ہوں، تو اور کچھ سوچیں۔ نہ جانے ہم کہاں جانا چاہتے ہیں؟ ہماری کیا امنگیں ہیں، کون سی منزل ہماری نگاہوں میں چمکتی ہے؟ اُس کی راہ کون سی ہے؟ کون ہمیں بتائے گا؟

تیرگی چھوڑ گئے دل میں اُجالے کے خطوط *

۲۵ دسمبر ۲۰۰۳ء قائد اعظم کی یومِ پیدائش کے دن، میں گاڑی میں بیٹھا لاہور کی طرف روانہ تھا، لاہور کے کورکمانڈر کا منصب سنبھالنے۔ ابھی کار راولپنڈی سے نکلی نہیں تھی کہ دوزوردار دھماکوں کی آوازیں سنیں۔ فون کیا تو پتا چلا کہ جنرل مشرف پر خودکش حملہ ہوا ہے، اللہ نے بچالیا۔

CGS کی کرسی پر دو سال مجھ پر بہت بھاری گزرے۔ سب کچھ ہی غلط ہوا۔ افغانستان پر غیر جانبداری کا جھانسا دے کر امریکہ سے گٹھ جوڑ کیا اور مسلمانوں کے قتل و غارت میں شامل ہوئے، نئے نظام کے وعدے پر آنے والا ڈکٹیٹر ریفرنڈم کے جعلی نتیجے کے بل بوتے پر پانچ سال کے لئے صدر بنا، نااہل اور کرپٹ سیاستدانوں کی حکومت فوج کے ہاتھوں قائم کی گئی، امریکہ کے دباؤ پر کشمیر کو خیر آباد کہا، بلوچستان میں علیحدگی پسندی کی آگ لگائی گئی، کاروباری ٹی وی چینلز کھولنے کا فیصلہ کر کے قوم کی فکریں بھی منڈی میں رکھ دیں۔ پھر "سب سے پہلے پاکستان" کا دوغلا نعرہ لگایا اور دین کو روشن خیال اعتدال پسندی (enlightened moderation) کا نیارنگ دیا۔۔۔۔۔ دین اکبری سے آگے نکل کر، دین پرویزی۔

پاکستان میں دین کا رجحان ختم کرنے کے لئے یہ نسخہ امریکہ کا تجویز کردہ تھا۔ قبلہ واشنگٹن کی طرف موڑنے کے بعد، آہستہ آہستہ لوگوں کے ذہنوں کو قابو کرنے کا سلسلہ شروع ہوا۔ تمام ٹی وی چینلز پیش پیش رہے۔ ایک سے ایک عالم اور فقیہ خریدے گئے۔ فرقہ وارانہ تنظیموں کی گند کو اُچھال اُچھال کر اُسے جہادیوں سے جاملایا۔ پھر مُلا کی جہالت کو مروڑ کر دین کو بدنام کیا اور اُسے نیارنگ دے کر، نئی اصطلاحات پیش کی گئیں۔ اسلام کے قواعد پر چلنے کو "بنیاد پرستی" کہا گیا، پھر اُسے "شدت پسندی" سے جاملایا۔ یعنی "مُلا کی جہالت کو چھوڑ دو اور اصل اسلام پر آ جاؤ، وہ یہ ہے جو میں بتا رہا ہوں"۔ کچھ سچ میں تمام جھوٹ ملا کر، ڈھولک کی تھاپ پر ایک ناچتا ہوا معاشرہ سیدھی راہ بتائی گئی، جہاں ہر شخص کو اللہ کی رضا چھوڑ کر اپنی من مانی کی چھوٹ ہو۔ جب منزل دنیا کی راعنائیاں ہی ہو اور دھن دولت ہی خدا ہو، تو پھر یہی سیدھی راہ ہے۔

پھر عورتوں پر معاشرے میں ہوتے ہوئے مظالم کو دینی رجحان سے منسلک کیا گیا اور حقوقِ نسواں کو آزادیِ نسواں کا وہ رنگ دیا کہ عورت کو عزت کے مرتبے سے گرا کر نیم عریاں حالت میں لوگوں کے لئے تماشا بنایا۔ ایک مرتبہ کورکمانڈر کا نفرنس میں کورکمانڈروں نے ملک

* شکیب جلالی

آٹھواں سفر زرد دوپہر

میں پھیلتی ہوئی فاشی پر اظہار تشویش کیا، تو مشرف صاحب ہنس کر کہنے لگے میں اس کا کیا کروں کہ لوگوں کو ایک انتہا سے روکتا ہوں تو وہ دوسری انتہا کو پہنچ جاتے ہیں۔ بات کو ہنسی میں ٹال دیا۔ مگر حقیقت مختلف تھی۔ صدر صاحب کی طرف سے باقاعدہ حوصلہ افزائی کی گئی اور پشت پناہی ہوئی، تو بات یہاں تک پہنچی۔ اس سلسلے میں کئی NGOs بھی کام کر رہی تھیں اور بے بہا پیسہ خرچ کیا جا رہا تھا۔ یہ سب کی آنکھوں دیکھا حال ہے۔

GHQ آڈیٹوریم میں جنرلوں کو فوجی سیریمنیئل لباس (ceremonial dress) میں، جو خاص احترام کے موقعوں پر پہنا جاتا ہے، بٹھا کر گانوں کی محفلیں سجائی گئیں۔ پھر طوائفوں کی عزت پر حملے کے الزام میں لال مسجد کو عورتوں اور بچوں سمیت جلایا گیا، اور کہا گیا کہ حکومت کی رٹ (writ) کو لکارنے نہیں دیں گے۔ یقیناً لال مسجد کی انتظامیہ نے غلط راہ اختیار کی، کوئی بھی حکومت اسے برداشت نہ کرتی، مگر کیا ایک عمارت کا قابو کرنا پولیس کے بس میں نہ تھا، کہ باقاعدہ فوج کا حملہ کروانے کی ضرورت پڑی؟ کیا اس کے سوا اور کوئی راہ نہ تھی؟ پھر حکومت کے وزراء رکھیلوں کو لئے سرکاری محفلوں میں آتے اور شان پاتے۔

جنرل مشرف خود کو معتدل مسلمان کہتے تھے اور شروع سے ہی اپنے آپ کو کمال اتاترک کے رنگ میں رنگ لیا تھا۔ اپنی کتاب میں لکھتے ہیں کہ ایک لیڈر کی پہلی ترجیح اپنے ملک اور عوام کی زندگی اور املاک کو تحفظ دینا ہے، اور ملاً عمر جیسے لوگ دین کو دنیا کے مال و متاع اور زندگی پر ترجیح دیتے ہیں (انگریزی کتاب کا صفحہ ۲۱۶)۔ صرف الفاظ میں تھوڑا گھماؤ ڈال دیا کہ "دین" کی جگہ "اپنے اصولوں اور روایات" کے الفاظ استعمال کئے۔ ملاً عمر کے اصول دین سے تھے، روایات اپنی تھیں۔ ان دونوں کو گڈنڈ کر دیا کہ مسلمان ناراض نہ ہوں اور مغربی معاشرہ، جن کے لئے یہ کتاب لکھی گئی، اصل مطلب سمجھ سکیں اور داد دیں۔ لب لباب وہی ہے کہ آخرت کو اس دنیا پر ترجیح دینا جہالت ہے۔ دو مختلف موقعوں پر، میری موجودگی میں، افسران سے خطاب کرتے ہوئے، ایک حدیث کے حوالے سے کہا، "اُس ملک کے حالات کیسے سدھر سکتے ہیں جس کے لوگ اس دنیا کو قید خانہ سمجھتے ہوں، اور اگلی دنیا کی ہی فکر میں لگے رہتے ہوں؟ پھر اُن کی یہ دنیا تو برباد ہی رہے گی۔"

میری ریٹائرمنٹ کے بعد، مارچ ۲۰۰۶ میں، جن دنوں میں NAB میں تھا، امریکہ کے صدر حضرت جارج بوش اسلام آباد تشریف لائے۔ رات کو پریزیڈنٹ ہاؤس میں کھانا ہوا اور ایک ثقافتی پروگرام پیش کیا گیا۔ پروگرام میں پاکستان کی تہذیب پر ایک نگاہ ڈالی گئی، کہ ہماری تہذیب پر تاریخ کے کیا اثرات رہے۔ پہلی تصویر ہمارے معاشرے کی موہنجو ڈارو کے ادوار کی پیش کی گئی۔ نیم عریاں لڑکیوں نے ناچ کر ہمیں سمجھایا کہ ہماری ثقافت کی ابتدا کہاں سے ہوئی۔ پھر بتایا گیا کہ الیگزینڈر کے آنے سے ہم نے ایک نیارنگ حاصل کیا۔ اس

رقص میں فیشن بھی بدل گیا اور لباس بھی مزید سکڑ گئے۔ پھر اگلے رقص عکاسی کرتا تھا ہندوانہ تہذیب کی برہنگی کا، جس کا اثر ہماری تہذیب پر رہا۔ جب لباس غائب ہونے لگے تو میں ڈرا کہ آگے کیا آئے گا۔ لیکن پھر کافرستان کی رقاصائیں آگئیں، کہ یہ اب بھی یہاں ناچتی ہیں۔ صرف اس ایک پیش کش میں کچھ ملبوس نظر آئے۔ اگلے رقص میں چھتیاں لئے برطانیہ کی میم صاحبائیں دکھائی گئیں، جنہوں نے چھتریوں کے علاوہ دستانے بھی پہنے تھے، اور کچھ رومالیاں سی باندھی ہوئی تھیں۔ پھر اگلے رقص میں پاکستان کی موجودہ تہذیب کی عکاسی میں لڑکوں اور لڑکیوں نے مل کر، خفیف سے ملبوس میں جنسی کنائیوں (sexual innuendoes) سے بھرپور رقص پیش کر کے حاضرین کو محظوظ کیا۔ آخر میں ایک اور انوکھا رقص پیش کیا گیا اور کہا گیا کہ یہ وہ مستقبل ہے جس کی طرف ہم رواں ہیں۔ سٹیج پر برہنہ جانوروں کی مانند بل کھاتے، لپٹتے ہوئے اپنے مستقبل کی تصویر دیکھ کر جی چاہا شرم سے ڈوب مروں، مگر میری حیوانیت نے آنکھیں بند نہ ہونے دیں۔ بچپن میں سنا تھا کہ یہاں کبھی محمد بن قاسم بھی آیا تھا، اور بہت سے بزرگان دین بھی۔ لیکن شاید ان کا کچھ اثر باقی نہ رہا تھا۔

جب ہم اپنا تماشہ دکھا چکے، اور حضرت بُش اُٹھ کر جانے لگے تو تمام مجمع بھی اُن کے پیچھے دروازے کی طرف بڑھا۔ وہ دروازے پر پہنچ کر رک گئے۔ پھر ہماری طرف مڑے تو سارا مجمع بھی ٹھہر گیا۔ دانت نکال کر اپنے مخصوص انداز میں مسکرائے، گھٹنے جھکا کر کوہے مٹکائے، دونوں ہاتھوں سے چٹکیاں بجائیں اور سر ہلا کر تھوڑا اور مٹک کر دکھایا، جیسے کہہ رہے ہوں، "ہُن نچو"۔ جس کی خوشی کے لئے ہم نے قبلہ بدل لیا، اپنی تاریخ جھٹلا دی، اپنا تمدن نوچ کر پھینک دیا، وہ بھی لعنت کر گیا۔

کوئی شک نہیں ہمارے دین کا سخت ترین رنگ، کچھ مولوی صاحبان ہمارے سامنے پیش کرتے ہیں۔ یہ دین میں شدت پسندی کی طرف مائل ہیں، جس سے ہمیں کچھ اُکتاہٹ سی ہونے لگی ہے۔ ہم مولویوں کو ذمہ دار ٹھہراتے ہیں کہ ان کے سخت رویوں سے لوگ دین سے دور ہو رہے ہیں۔ مگر ہمیں رک کر ذرا سوچنا چاہیے۔ اب مولوی ایک پیشہ بن چکا ہے، جو دین کی بتائی ہوئی راہ نہیں ہے۔ اور ہر پیشے کی طرح اس میں بھی اچھے اور برے لوگ موجود ہیں، لیکن یقیناً نسبتاً باقی پیشوں کے، برے لوگ کم ہیں۔ پھر ہم نے دین کا سارا علم اُن لوگوں پر چھوڑ دیا ہے جو معاشرے کی غریب ترین سطح سے آتے ہیں۔ پیسے والے گھرانوں سے گنتی کے چند ہی نوجوان ہوں گے، جنہیں اُن کا شوق دینی تعلیم کی طرف کھینچ لائے۔ جب میں اپنے بچے کو صرف پیسے کمانے کے لئے تعلیم دلواتا ہوں، تو غریب کا بچہ مدرسے میں پڑھ کر روزی کا متنبی کیوں نہ ہو؟ اُس کی کیوں پکڑ کہ تم نماز پڑھانے کے پیسے لیتے ہو؟ اُسے اور آتا ہی کیا ہے؟ پھر جب معاشرے کی چلی ترین سطح سے ہی دین پڑھنے والے نکلیں گے، تو دین کو وہی رنگ دیں گے جتنی اُن کی ذہنی وسعت ہے۔ شکوہ کیسا؟

مدرسوں کا کہنا ہے کہ یہاں صرف دینی عالم پیدا کئے جاتے ہیں۔ اس کی ایک مثال میں نے ٹی وی کے پروگرام میں سنی۔ کہنے لگے کہ گلاس کی فیکٹری میں گلاس ہی بنے گا، اس سے زیادہ کی توقع کیوں رکھتے ہیں؟ کسی نے جواب دیا کہ قرآن میں سائنس کی تحقیق کے

آٹھواں سفر زرد دوپہر

لئے کتنی ہی باتیں ہیں، سائنس کی تعلیم کے بغیر کیا دینی عالم ان سب کو نظر انداز کر دے؟ ایسے ہی اور مضامین ہیں۔ تو قرآن خود تقاضا کر رہا ہے کہ مکمل تعلیم دی جائے۔ دوسرا پہلو یہ ہے کہ مدرسوں کے علاوہ دین کی تفصیلی تعلیم اور کہیں نہیں دی جاتی۔ ہمارے سکولوں کے تعلیمی نظام میں دینی تعلیم کا ایسا نصاب بنایا گیا ہے کہ پندرہ سال بھی لازمی مضمون کے طور پر پڑھ کر ہمیں دین کا کچھ پتا نہیں ہوتا۔ اگر غریبوں کے بچے مدرسوں میں نہ پڑھتے تو پاکستان سے دین مٹ چکا ہوتا۔ ہمیں قرآن پڑھنا نہ آتا، اور نہ ہی کسی کا نکاح پڑھا جاتا، نہ ہی جنازہ۔ یقیناً دین کا یہ رنگ درست نہیں، مگر کیا اس کا یہ مطلب ہے کہ ہم دین ہی چھوڑ دیں؟ کیا اس امن کے پیکر کو خیر آباد کہیں اور مغربیت کی راہ اختیار کریں؟

میں نے یہ بات ایک مرتبہ جنرل مشرف کے سامنے کی۔ ہم کسی کے گھر کھانے پر مدعو تھے اور مدرسوں کا رنگ بدلنے پر بات ہو رہی تھی۔ میں نے کہا کہ ہم مدرسوں میں جدید تعلیم دلوانا چاہتے ہیں، بہت اچھی بات ہے، لیکن ساتھ ساتھ سکولوں میں بھی ایسی تعلیم دی جائے کہ دین کی صحیح سمجھ حاصل ہو سکے، ورنہ ہم معاشرے میں دو طرح کے افراد پیدا کر دیں گے، اور ان کے بیچ ہمیشہ کھچاؤ رہے گا۔ پھر جب مدرسوں کے بچے جدید تعلیم بھی حاصل کر لیں گے تو یہ کھچاؤ اور بڑھ جائے گا، کیونکہ یہ پھر ملازمتوں کے لئے عام بچوں سے مقابلہ کریں گے۔ ہر دفتر میں دونوں مکتبوں سے آئے لوگ ہوں گے اور دو گروہ بن جائیں گے۔ یہ تاثر درست نہیں کہ مدرسوں میں جدید تعلیم پانے کے بعد یہ 'روشن خیال' ہو جائیں گے۔ ہمیں چاہیے کہ مدرسوں اور سکولوں کی تعلیم کو ایسے تشکیل دیں کہ دس یا پندرہ سالوں بعد دونوں تعلیمی نظام کسی حد تک متوازی آسکیں۔ پھر مسجد میں وہ نماز پڑھائے جس پر نمازیوں کا اتفاق ہو۔ یقیناً دین جس کے دل میں داخل ہو چکا ہو، وہ دین ہی کی راہ پر چلے گا، ورنہ دینی تعلیم حاصل کرنے والا بھی کاروباری سوچ کا مالک ہوگا، صرف دنیاوی فائدہ ڈھونڈے گا، چاہے مدرسے میں پڑھا ہو یا عام سکول میں۔

اُس شام کچھ اور بھی ایسے ہی روشن خیال مسلمان وہاں بیٹھے تھے۔ سب میری طرف پریشان نظروں سے دیکھ رہے تھے۔ ایک صاحب کہنے لگے، "سکولوں میں تو جو دین کی تعلیم دی جاتی ہے، کافی ہے، اس میں کیا خرابی ہے؟" پھر کہا، "مجھے دین کے بارے میں، جو جاننا چاہیے، جانتا ہوں۔" مجھ سے رہا نہ گیا، آواز اونچی ہو گئی، کہا "آپ کچھ بھی نہیں جانتے۔" جانتا تو میں بھی نہ تھا، مگر مجھ سے برداشت نہ ہوا۔ انہوں نے میرا چیلنج قبول نہ کیا اور خاموش ہو گئے۔ میری بھی بچت ہوئی۔ پھر دوسرے بولے، "جنرل صاحب، ہم پہلے ہی ان مولویوں سے تنگ ہیں، اب آپ چاہتے ہیں کہ پورے ملک کو ہی مولوی بنادیں۔" اس پر سب کھلکھلا کر ہنس دیئے اور موضوع بدل دیا گیا۔

یہ صرف 'روشن خیال' لوگوں کی سوچ نہیں ہے۔ مدرسوں کے عالم بھی نہیں چاہتے کہ سکولوں میں دین کی صحیح تعلیم دی جائے، ورنہ دین پر ان کی اجارہ داری ختم ہو جائے گی۔ اس موضوع کو فرقوں کے جھگڑوں میں کچھ یوں الجھایا گیا ہے کہ آسانی سے کہہ دیا جاتا ہے، "کس

کادین؟" یہ مسئلہ اتنا پیچیدہ نہیں جتنا دکھایا جاتا ہے۔ یہ بہکواوے کی منطق دونوں ہی جانبوں سے دی جاتی ہے، اور دونوں ہی کو موافق آتی ہے۔

جن دنوں میں بریگیڈ کمانڈ کر رہا تھا، ایک دینی عالم سے رابطہ رہا۔ ایک مرتبہ میں نے کہا کہ فوج بھی اللہ اکبر کے نعرے پر لڑتی ہے۔ ہم بھی لوگوں کو دین کے جذبے سے ہی سرشار کرتے ہیں، ہمیں چاہیے کہ فوج کے افسران کو بھی مناسب دین کی تعلیم دی جائے۔ کہنے لگے، "بریگیڈیئر صاحب یہ سوچ ٹھیک نہیں۔ بھلا بتائیں اگر میں آپ کا بریگیڈ لے کر میدان جنگ میں اتر جاؤں تو سب ہی کو مردادوں گانا، کیونکہ مجھے لڑائی لڑنے کا ڈھنگ نہیں آتا۔ ہم دونوں کا اپنا اپنا کام ہے، اور ہمیں چاہیے کہ مل کر کام کریں۔" اُن کا کہنا یہ تھا کہ اگر مدرسوں کے باہر بھی دین کی مکمل تعلیم ملنے لگی تو پھر ہم مدرسے والے کہاں جائیں گے؟ یہی تو ان کی گرفت ہے۔ جنرل ضیاء کے دور میں ان ہی مدرسوں کے عالموں نے سکولوں کا دینی نصاب بنایا تھا، جسے پڑھ کر دین کا کچھ علم حاصل نہیں ہوتا۔

پھر جب فوجی حکومت آچکی تھی اور میں مری میں ڈویژن کمانڈ کر رہا تھا، ایک مرتبہ وزیر مذہبی امور کو ملنے اُن کے دفتر گیا، اور اس سلسلے میں بات کی۔ کہنے لگے، "سکولوں کا معاملہ میرے نیچے نہیں آتا، یہ وزیر تعلیم کا دائرہء کار ہے۔" میں نے کہا، "آپ ملک میں مذہبی امور کے وزیر ہیں، دیندار آدمی بھی لگتے ہیں، کیا آپ کو اس بات کی فکر نہیں کہ ملک کے سارے بچے سکولوں میں دین کی سطحی سی تعلیم حاصل کر رہے ہیں؟ وزیر تعلیم کو دین سے کیا غرض؟" وہ کچھ نہ بولے۔ میز پر پڑے کاغذوں کو تکتے رہے۔ میں نے جھنجھلا کر غصے سے کہا، "کیا آپ صرف عمرے اور حج کروانے کے لئے وزیر لگائے گئے ہیں؟" اور اُٹھ کر واپس آ گیا۔

دوسرا رخ یہ ہے کہ ہم دین کی سمجھ رکھے بغیر اُس پر تبصرہ کرتے ہیں، بغیر سوچے اور بغیر سمجھے۔ خود کو عالم تصور کرتے ہیں۔ دین کو اُس رنگ میں ڈھالتے ہیں جو ہماری طرز زندگی سے مناسبت رکھے تاکہ ہماری زندگی ہم پر آسان ہو جائے۔ اپنے ضمیر کے دباؤ سے چھوٹ پائیں۔ اگر ہمارے یہاں دین کی کچھ غلط تشریح ہو رہی ہے، تو یقیناً اسے درست کرنا چاہیے۔ مگر کسی بھی مسئلے پر تبصرہ یا اُس میں رد و بدل کرنے کے لئے اُس ہی شعبے کے ماہرین کی ضرورت ہے۔ اور دین جیسے اہم مسئلے کو ہم، بغیر مکمل علم کے، چھیڑنے کا کیسے حوصلہ کر سکتے ہیں؟

یہاں یوں بھی کہا جائے گا کہ چھیڑنے کی ضرورت ہی کیا ہے؟ جو جس رنگ میں اللہ کو یاد کرتا ہے کرے۔ کسی اور کو اس سے کیا غرض؟ مجھے اس بات پر اعتراض نہیں، سب نے اپنا اپنا حساب دینا ہے۔ یہ ہر فرد کا ذاتی مسئلہ ہے۔ مگر جب ایک مسلمان یہ کہتا ہے کہ، "میں بھی مسلمان ہوں، میرا اللہ کے ساتھ اپنا تعلق ہے، تم کیا جانو، تمہیں کیا حق کہ تم اور مسلمانوں پر انگلیاں اٹھاؤ، میرا حساب اللہ کے ساتھ

آٹھواں سفر درو دوپہر

ہے، "تو ایسا انسان صرف خود فریبی ہی نہیں کرتا، بلکہ اوروں کو بہکانے کی بے بنیاد منطق بھی جھاڑتا ہے۔ یقیناً اللہ کیساتھ ہر ایک کا اپنا تعلق ہے، چاہے وہ مسلمان ہو یا کافر۔ اللہ سب کا ہے۔ لیکن جو یہ کہتا ہے مگر قرآن اور سنت پر عمل کرنے سے انکار کرتا ہے اور ان کے خلاف دلیلیں پیش کرتا ہے، وہ مسلمان تو نہ رہا، منافق ہو گیا۔ پھر بھی مجھے اعتراض نہیں، وہ جانے اور اللہ جانے۔ اعتراض تو یہ ہے کہ جب خود کو مسلمان کہتا ہے تو دین کا چہرہ بگاڑتا ہے کہ مسلمان ایسے ہوتے ہیں۔ منافقت کو اسلام بتاتا ہے۔ اور مسلمانوں کے لئے خود فریبی اور گمراہی کی راہ کھولتا ہے۔

اور اسی طرز پر جب حکومت دین سے منحرف کرنے والوں کی پشت پناہی کرنے لگے اور یہ تمام عوام پر اثر انداز ہو جائیں، اور پھر اس سے آگے نکل کر کھلم کھلا اجتماعی طور پر اللہ کے احکامات کی خلاف ورزی پر عوام کو اکسایا جائے، تو یہ کسی کا ذاتی مسئلہ نہیں رہ جاتا۔ پھر حکومت اللہ کے خلاف محاذ آرائی کر رہی ہے۔ ایسے میں ہر مسلمان کا فرض ہے کہ اُسے روکے۔ اس سیکولر سوچ کو جنرل مشرف نے شروع سے ہی ملک میں فروغ دیا۔ اور آج بات کہاں سے کہاں تک جا پہنچی ہے۔

یقیناً جہاد کا اعلان حکومت کا ذمہ ہے۔ کسی فرد یا تنظیم کو حق نہیں کہ اپنے طور پر جہاد کا اعلان کرے۔ لیکن اگر مسلمانوں کی حکومت کافروں کے ساتھ مل کر، ایک پڑوسی اسلامی مملکت پر حملے میں اُن کی اتحادی بن جائے، اور مسلمانوں کے قتل و غارت میں برابر کی شریک ہو، تو مسلمانوں کے لئے اللہ کا کیا حکم ہے؟ ایک دن میں کسی کے گھر بیٹھا تھا۔ مشرف صاحب بھی آئے، اور آتے ہی کہنے لگے ذرا قرآن تو لائیے۔ ابھی ہم نئے نئے امریکہ کے اتحادی بنے تھے۔ پھر جیب سے ایک کاغذ نکالا اور کہا کہ آیت نمبر ۲۸: ۳ نکالیں اور پڑھیں۔ اتنا پڑھا گیا، "مومنوں کو چاہیے کہ مومنوں کے سوا کافروں کو دوست نہ بنائیں، اور جو ایسا کرے گا اُس کا اللہ سے (کچھ عہد) نہیں۔ ہاں اگر اس طریق سے تم اُن (کے شر) سے بچاؤ کی صورت پیدا کرو تو مذا لفقہ نہیں"۔ کہنے لگے کہ اللہ نے اس کی اجازت دی ہے، آج ایسے ہی حالات ہم پر ہیں۔ میں نے بھی اس پر زیادہ غور نہ کیا، اور درست ہی جانا، مگر دل راضی نہ تھا۔ پھر اور باتیں ہونے لگیں۔

کافی عرصے بعد سورۃ آل عمران کی یہ آیات پھر میری نظروں سے گزریں۔ اس سے پہلے کی دو آیات کا مفہوم یہ ہے کہ اللہ ہی بادشاہت کا مالک ہے، وہ ہی بادشاہت عطا کرتا ہے، وہ ہی عزت اور ذلت دیتا ہے، ہر طرح کی بھلائی اُس ہی کے ہاتھ میں ہے اور وہ ہی ہر چیز پر قادر ہے۔ روز و شب بھی وہ ہی ہم پر گزراتا ہے اور زندگی اور موت بھی وہ ہی دیتا ہے اور جسے چاہتا ہے بے شمار رزق بخشتا ہے۔ اتنا کچھ بتانے کے بعد، کہ ان تمام چیزوں کے طلب گار اللہ کے سوا کسی اور سے نہ ہونا، اللہ نے فرمایا کہ مومنوں کو چھوڑ کر کافروں کو دوست نہ بناؤ، مگر اُن کے شر سے بچاؤ حاصل کرنے کی اجازت دی۔ پھر آخر میں یہ کہا، "اللہ تم کو اپنے (غذاب) سے ڈراتا ہے اور اللہ ہی کی طرف (تم کو)

لوٹ کر جانا ہے۔" یہاں شر سے بچاؤ میں اتنی چھوٹ نہیں کہ ہم مسلمانوں کے خون خرابے میں کافروں کے ساتھی بن جائیں۔ جس کے شر سے بچنے کے لئے کوئی ترکیب کرنی پڑے وہ یقیناً دوست تو نہیں ہو سکتا۔ ہاں، اس جھگڑے میں غیر جانبدار رہنے تک کی چھوٹ میں مان سکتا ہوں۔ اور اُن دنوں جنرل مشرف کا اعلان بھی یہی تھا، کہ ہم غیر جانبدار رہیں گے۔ بعد میں سرک سرک کر اُن کے مکمل ساتھی بن گئے۔ بلکہ کھل کر کہتے تھے کہ اگر اُن کا ساتھ نہ دیا تو ہماری معیشت کا کیا بنے گا؟ اور اُن ہی کی نظروں میں عزت پانا نصب العین جانا۔ بہت فکر رہتی کہ مغربی ممالک میں ہمیں اچھی نظروں سے نہیں دیکھا جاتا۔ یعنی عزت دینے والے بھی وہی اور رازق بھی وہی۔ آج بھی حکومت میں اور بہت سے مغربی ذہنیت رکھنے والوں میں یہی سوچ ہے۔

صلح حدیبیہ کا بھی جگہ جگہ حوالہ دیا جاتا کہ مسلمانوں نے کافروں سے صلح کی اور یہ کہ اسلام امن کا دین ہے۔ اس آدھے سچ کے اندر جو جھوٹ چھپایا تھا وہ یہ مسلمان مکہ میں داخلہ چاہ رہے تھے، جو انہوں نے موخر کر دیا، کافروں سے صلح کر کے انہیں مسلمانوں کی سرزمین پر قبضے کی اجازت نہیں دی تھی۔ اس صلح کی آڑ میں اجازت تو کیا، مشرف صاحب نے مسلمانوں کے قتل و غارت میں اُن کے اتحادی بننے کی توثیق چاہی۔ اسلام یقیناً امن چاہتا ہے مگر انصاف کی بنیاد پر۔

جن دنوں امریکہ عراق پر حملے کی تیاری کر رہا تھا تو امریکہ کی ایک اخبار میں خبر چھپی کہ حکومت نے ماہرین کی ایک ٹیم تشکیل دی ہے، جس کو یہ ذمہ داری سونپی گئی ہے کہ عراق پر قبضے کے بعد وہاں کے تدریسی نظام میں ایسی تبدیلیاں لائی جائیں کی مغربی طرز زندگی کو اچھی نظر سے دیکھا جائے ("to develop respect for western values")۔ امریکہ کے یہاں آنے پر ہمارے درس تعلیم پر بھی یہی سوچ اثر انداز ہوئی۔ تعلیمی نظام کو بہتر بنانے کے بہانے NGOs کے ذریعے پیسے دیے گئے، پھر اس زور پر نصاب تعلیم میں رد و بدل کی گئی، تاکہ تعلیم کو سیکولر رنگ دیا جائے، حتیٰ کہ نصاب سے جہاد کی تلقین والی آیات بھی نکال دی گئیں۔ یہ سلسلہ اب تک جاری ہے۔ کتنے ہی ہمارے تعلیمی ادارے آج ان کی نگہداشت میں ہیں، اور ہمارا مستقبل ان کی گود میں پلتا ہے۔

اس سیکولر سوچ سے مراد لادینیت نہیں ہے، بلکہ دین اور دنیا کو علیحدہ کرنا مقصود ہے۔ یعنی دین ذاتی سطح تک رہے اور حکومت کے کسی فیصلے یا امر میں اس کی مداخلت نہ ہو۔ فرعون کا بھی موسیٰ سے یہی جھگڑا تھا۔ "سب سے پہلے پاکستان" کے نعرے میں بھی چھپا ہوا یہی رنگ ہے۔ جب دین کو انفرادی حیثیت دے دی گئی، تو کہہ دیا کہ دین فرد و واحد کا ذاتی مسئلہ ہے، اور اجتماعی طور پر ہم صرف پاکستانی ہیں۔ اجتماعی طور پر، ایک قوم کی حیثیت سے، ہمیں دین سے کوئی غرض نہیں۔ ہم دنیا داری کے اصولوں پر چل کر قوم کو معاشی ترقی کی راہ پر لگائیں گے، جیسے دین غربت کی ہی راہ دکھاتا ہو۔ فرق صرف اتنا ہے کہ دین میں پیسہ کمانے کے کچھ اصول ہیں، کچھ چیزیں ایسی ہیں جو بکاؤ نہیں۔

آشواں سفر زرد دوپہر

دنیا داری کے اصولوں کے مطابق تو پیسہ ہی خدا ہے۔ اور کیونکہ ہم سمجھتے ہیں کہ رزق براستہ امریکہ آتا ہے، اس لئے قوم کا سجدہ و اشتغال کو ہوگا۔
پھر قاعدہ یہ ٹھہرا کہ آپ انفرادی طور پر بیشک اللہ کو سجدہ کرتے رہیں، حکومت کو کوئی اعتراض نہیں، جب تک آپ ان دو سجدوں کو تصادم کا رنگ
دینے کی کوشش نہ کریں۔ پھر یقیناً ان کی نظروں میں امریکہ کی اسلام کے خلاف یہ جنگ ہماری جنگ ہی ہوگی۔

کیوں رور ہے ہوراہ کے اندھے چراغ کو*

میں نے جنرل مشرف کو پاکستان کا وفادار ہی سمجھا۔ میرے دل میں یہ خیال نہیں آیا کہ وہ جو کچھ کر رہے ہیں، اپنی سوچ کے مطابق، ملک کی بھلائی کے لئے نہیں کر رہے۔ ایک ملک کا سربراہ ہونے کی حیثیت سے، انہوں نے ملک کے لئے جو بہتر سمجھا کیا۔ یقیناً اپنی ذات کو ملک سے اوپر جانا، اور اپنے ذاتی فائدے کو ملک کا مفاد ظاہر کیا، مگر اس سے ہٹ کر تو میں کسی حکمران سے توقع بھی نہیں رکھتا۔ میں نہیں سمجھتا کہ ہمیں کوئی ایسا حکمران نصیب ہو سکے گا جو خود کو ڈبو لے، لیکن ملک کا مفاد نہ چھوڑے۔ ایسا فرشتہ کہاں سے لائیں گے؟ باتیں آسان ہیں، حقیقت ایسی نہیں ہوتی۔ انہوں نے بہت سی غلطیاں کیں، جن کو وہ کوئی نہ کوئی رنگ دے دیتے، ان کی وجوہات کہیں اور ٹھہراتے۔ کوئی بھی حکمران اپنی غلطیوں کو نہیں مانتا۔ قصور وار تو کوئی نہیں رہا، نہ فوجی حکمران نہ سیاسی۔ غلطی کا اقرار یہ بھی کبھی نہ کرتے۔ خود کو باصلاحیت حکمران ہی تصور کرتے۔ شاید حکمرانی میں آکر انسان کی سوچ ایسی ہی ہو جاتی ہو۔ کیا کہہ سکتا ہوں۔

فوج کا سربراہ بننے کے بعد ان کی پہلی غلطی کارگل کا معرکہ تھی۔ بہت بڑی غلطی کی، پھر سالوں بعد اپنی کتاب میں اُس پر غلط بیانی کی۔ جہاں اپنے نام پر کیچڑ اُچھلتا ہو، سچ بولنا بھی سیاسی خودکشی ہے۔ اتنے سچ کی بھی میں حکمران توقع نہیں رکھتا۔ سیاسی قائدین سے تو ہر گز نہیں۔ حکومتیں ہمیشہ وہی کہتی ہیں جس میں مصلحت اندیشی ہو۔ ان سے بچوں کی طرح کے سچ کی امید نہ رکھیں۔ وہ تو آج کا عام آدمی بھی نہیں بولتا، سیاست دانوں سے ایسی توقع کیوں؟ کچھ نہ کچھ مکاری ہماری سیاست کا حصہ ہے۔ اگر آپ یوں مان لیں کہ "سب سے پہلے میں، پھر پاکستان" تو مشرف صاحب اتنے برے بھی نہ تھے۔

کوئی بھی حکمران تمام باتیں تمام لوگوں سے نہیں کہہ سکتا۔ اور میں نے یہی دیکھا کہ اس سطح پر جھوٹ اور سچ کوئی معنی بھی نہیں رکھتے۔ صرف بات مناسبت کی منطق پر کہی جاتی ہے۔ ہماری سیاست میں جھوٹ کو جھوٹ نہیں کہتے، سیاست کہتے ہیں۔ پھر ہماری تاریخ میں سچائی اور لیڈری کا جوڑ کہاں رہا؟ یہ سب خیالی باتیں ہیں، میرے جیسے بے وقوفوں کی ذہنی معذوریوں۔

عام تصور سے ہٹ کر، یہ سمجھنا چاہیے کہ ہر حکمران نہایت خوف زدہ شخص ہوتا ہے۔ وہ اُس اُونچائی پر بیٹھا ہوتا ہے جہاں سے ذرا سی جنبش اُسے گرا سکتی ہے۔ وہ اپنی بلندی برقرار رکھنے کے لئے کسی ہل چل کو پسند نہیں کرتا۔ درخت کا تنہا ہی مضبوط ہوتا ہے، قوم کی ٹڈل

آٹھواں سفر زرد دوپہر

کلاس۔ سب سے اونچی ٹہنی، جس پر یہ حکمران چڑھ بیٹھتے ہیں، سب سے کمزور ہوتی ہے۔ غریب عوام جو جڑوں کی طرح زمین میں دھنسے ہیں، اس اونچائی سے انہیں نظر نہیں آتے۔ بھول جاتے ہیں کہ جس شاخ پر بیٹھے ہیں، اُس کی ساری طاقت زمین میں دبی جڑوں سے ہی آتی ہے۔ یہی مزدور اور کسان اور سپاہی اس ملک کو اپنے خون پسینے سے بناتے اور اس کا دفاع کرتے ہیں۔ اگر یہ احساس زندہ رہتا تو شاخ سے کبھی نہ گرتے۔ اب اُس پر ٹھہرنے کے لئے بہت جتن کرنے پڑتے ہیں۔ ذرا سی ہوا سے بھی ڈر لگتا ہے۔ خود کو درخت کی بقا ظاہر کرنا پڑتا ہے، کہ اگر کہیں وہ شاخ ٹوٹی، تو درخت سوکھ جائے گا۔ اس ہی خاطر کبھی خود کو قائد اعظم کی تصویر کے نیچے کھڑا کرتے ہیں، کبھی پاکستان کا جھنڈا سر پہ لپیٹے ہیں اور کبھی اللہ کے ناموں کی قالین دیوار پر سجا کر اُس کے سائے میں کھڑے ہو جاتے ہیں۔ جھوٹ کی آڑ میں زندہ رہتے ہیں۔ تمام محلات، لہراتے ہوئے جھنڈے، لمبی لمبی گاڑیاں، سلامی دیتی خوش نما ملبوس میں گاڑیں، تمام شان و شوکت صرف ایک بیساکھی ہے، خود کو معتبر اور عزت کے لائق دکھانے کے لئے۔ ان کی ایک بیساکھی اور ہے۔ ملک کے بڑے بڑے عہدے دار، جن کے سر پر بیٹھ کر حکومت کی جاتی ہے۔ ان وفادار جھکے ہوئے سروں کا تخت بچتا ہے، جس پر شاہ بیٹھتا ہے۔ پھر ان جھکے سروں کی قیمت چکاتا ہے، انہیں عوام کا خون چوسنے کی اجازت دے کر۔

جنرل مشرف نے دو مرتبہ، میری موجودگی میں، فوج کے سینئر افسران کو خطاب کرتے ہوئے وفاداری کی اہمیت پر بات کی۔ کہنے لگے وفاداری کئی قسم کی ہوتی ہے۔ ایک ذاتی وفاداری (personal loyalty)، کہ آپ میرے دوست ہیں اور مجھ سے اس بنا وفادار ہیں۔ اچھی بات ہے۔ دوسری یہ کہ آپ کی وفاداری ادارے کے ساتھ ہے (institutional loyalty)، جیسے فوج یا ملک سے وفاداری۔ قابل احترام ہے۔ مگر میں جس وفاداری کی قدر کرتا ہوں وہ ہے خیالات کی وفاداری (loyalty of ideas)۔ اگر میری اور آپ کی سوچ ایک ہے تو پھر بے وفائی کی کوئی وجہ نہیں رہتی۔ انہوں نے یہ بات سب پر واضح کر دی کہ اگر کوئی مجھ سے اختلاف کرے گا، تو وہ وفاداروں کے بلند دائرے سے گر جائے گا۔ اُس کے بعد اگر لوگوں کو اختلاف بھی ہوتا، تو خاموش رہنا مناسب سمجھتے۔ یہی اُن کی منشا تھی۔

چونکہ اُن کے روز و شب اُن ہی وفاداروں کے ساتھ گزرتے جو اُن جیسی سوچ رکھتے، یا کم از کم ویسی ہی سوچ ظاہر کرتے، تو مشرف صاحب اُس ہی سمت میں چلتے رہے۔ یہ اُن کی بہت بڑی غلطی تھی۔ متضاد سوچوں کو بھی سننا چاہیے، ذہن ماؤف نہیں ہوتے۔ کٹھ پتلی قصیدہ خوانوں میں گھرے رہے اور ان ہی میں خوشی ڈھونڈی اور تسکین پائی۔ آسانی سے لوگوں کے بہکاؤں میں آ جاتے۔ مذہبی رجحان نہیں تھا، سیکولر اور آزاد خیال نظر یہ رکھتے تھے، فقط دنیا داری کے قائل تھے، اس وجہ سے مغربی طرز پر معاشرے کو ڈھالنا چاہتے تھے۔ وہ اسے ترقی سمجھتے۔

جہاں تک اس نام نہاد ڈیموکریسی کا تعلق ہے، اس پر ویسے ہی نہ میرا اعتقاد تھا اور نہ ہے۔ اُنہوں نے نیا شفاف نظام تشکیل دینا تھا، نہیں دیا۔ کیا کوئی پیچیدگیاں تھیں؟ میں کہہ نہیں سکتا۔ مجھے کوئی ایسی مجبوریوں نظر تو نہیں آئیں۔ نظام پر اتنا اعتقاد نہیں رکھتے تھے، نظام چلانے والے پر زیادہ انحصار کرتے۔ اس ہی لئے نظام کو چھیڑنا غیر ضروری سمجھا، کہ میں سب سنبھال لوں گا۔ پھر ہر ڈکٹیٹر کی طرح وہ بھی یہی سمجھتے تھے اگر وہ منظر سے ہٹ گئے تو ملک ڈوب جائے گا۔ جب نظام درست نہیں کیا، تو یقیناً حکومت ڈوبے گی اور آخر کار ملک بھی۔ پھر ہماری تاریخ کا ہر حکمران اپنی کرسی بچانے کے لئے جو بھی کر سکتا ہے کرتا ہے۔ تو جب نظام لڑکھڑانے لگا، اُنہوں نے بھی جو کر سکتے تھے کیا۔ وہ چونکہ زیادہ طاقتور تھے، کندھے پر بندوق تھی، کچھ زیادہ ہی کر گئے۔

افغانستان پر امریکہ اور اُس کے اتحادیوں کا قبضہ تھا۔ جوان کے خلاف اُٹھتا اُسے القاعدہ کا ساتھی اور دہشت گرد کہا جاتا۔ دہشت گردی کسے کہتے ہیں، کوئی نہ پوچھتا۔ بس کہہ دیا کہ سیاسی مفاد کی خاطر عوام کو نشانہ بنانا دہشت گردی ہے۔ اور جو امریکہ اپنے مفاد کی خاطر افغانستان کے بے گناہ شہریوں کا قتل عام کر رہا تھا اُسے دہشت گردی کے خلاف جنگ قرار دیا۔ اور جو افغان اپنی آزادی کے لئے لڑ رہے تھے وہ دہشت گرد ٹھہرے۔ امریکہ کا ساتھ دینے والے مسلمان، ہوشمند کہلائے۔ اس سے اختلاف رکھنے والے جاہل، شدت پسند۔ جیسے ہماری تاریخ کا ہر فوجی حکمران ایک بڑے گناہ کا بوجھ لئے کھڑا ہے، مشرف صاحب مسلمانوں کے قاتل کے طور پر یاد کئے جائیں گے۔ دین سے منہ پھیرنے کے اثرات ابھی پوری طرح نمودار نہیں ہوئے ہیں۔ یہ وہ کالک ہے جو فوج اپنے منہ پر لئے، نہ جانے کتنی نسلوں تک پھرے گی۔

یہ احساسات اُن دنوں بھی میرے دل میں تھے، لیکن میں گنتی کے چند لوگوں میں سے تھا جو امریکہ کا ساتھ دینے کے حق میں نہیں تھے۔ کچھ تو شروع میں تاثر یہ رہا کہ ہم غیر جانبدار ہیں۔ کچھ فرقہ وارانہ دہشت گردی اور شدت پسند رجحانات سے سب ہی خائف تھے، میں بھی۔ پھر میرے CGS رہنے کے دوران نہ ہی FATA میں کوئی ایسے بڑے آپریشن شروع ہوئے تھے اور نہ ہی امریکہ کا گھناؤنا کھیل اس طرح کھل کر سامنے آیا تھا۔ اُن دنوں جنرل مشرف بھی ملک میں خاصے مقبول تھے۔ میڈیا میں بھی امریکہ کا ساتھ دینے کو ان کی دانائی ہی قرار دیا جاتا۔ کبھی لگتا شاید میرا ہی نظریہ شدت پسندی کی طرف مائل ہے۔

۲۰۱۰ تک تو ٹی وی چینلز پر بھی امریکہ کے اتحادی ہونے پر کوئی آواز نہیں اُٹھتی تھی۔ آج بھی بہت سے لوگ یہی سوچ رکھتے ہیں کہ ہماری بقا امریکہ کی پالیسیوں پر چلنے میں ہی ہے۔ بس ڈرون حملوں، ہماری چوکیوں پر فضائی حملوں اور بلیک وائر جیسی نجی سیکورٹی کمپنیوں کی آڑ میں اُن کی خفیہ ایجنسیوں کی کاروائیوں پر کچھ تشویش ہے۔ وہ بھی اب شروع ہوئی ہے۔ افغانستان میں اُن کا اتحادی ہونے پر پاکستان کو خیر آباد کہہ کر ہندوستان سے کاروباری مراسم بڑھانے پر آج بھی خاموشی رہتی ہے۔

آٹھواں سفر زرد دوپہر

میرے بارے میں کچھ لوگوں کو خدشہ تھا کہ کہیں ۲۰۰۴ کی پروموشن میں جنرل نہ بن جاؤں اور اُن کو موقع نہ ملے۔ میرے خلاف پروپیگنڈا بھی ہوتا رہا، کچھ سازشیں بھی۔ مگر میں ان سب چیزوں سے دور ہٹنا چاہتا تھا۔ اگر مجھے ترقی کی اتنی خواہش ہوتی تو میرے لئے صدر صاحب کی ہاں میں ہاں ملانا کوئی ایسا کٹھن مسئلہ تو تھا نہیں۔ سب ہی کر رہے تھے۔ پھر بہت سے دوست مجھے بھی یہی سمجھاتے رہے۔ مگر میں ہی ہر جگہ الجھتا رہتا۔ ترقی کی خواہش کوئی انوکھی بات نہیں۔ مگر اس ماحول میں مجھے مزید پروموشن لینے کی آرزو نہیں رہی تھی۔ اگر ہوتی تو جنرل مشرف کو خوش رکھنا کوئی ایسا پیچیدہ مسئلہ نہیں تھا، مگر یہ طور طریقے میری طبیعت کو کبھی موافق نہیں آئے۔

جب وہ کورکمانڈر منگلا تھے تو اُن سے میری پہلی ملاقات ہوئی۔ میری تایا زاد بہن کی بیٹی کی مگنی اُن کے بیٹے سے ہوئی۔ اُن دنوں میں MO میں بریگیڈیئر تھا۔ اس سے پہلے ہم ایک دوسرے سے واقف نہیں تھے۔ اس شادی سے ہماری رشتہ داری ہوئی۔ پھر فوجی حکومت قائم کرنے میں میرا خاصہ کردار رہا تھا۔ اپنے ہاتھ سے بنائی عمارت کی اینٹیں اکھیڑنا بھی عجیب سا لگتا ہے، جیسے بے وفائی کی حد چھولی ہو۔ ہمارا ایک دوسرے کے گھروں میں بھی آنا جانا رہتا، لیکن ایسے موقعوں پر کوئی سرکاری بات نہ ہوتی۔ وہ ہمیشہ مجھ سے بہت محبت سے پیش آتے۔ لیکن میں نے کبھی ان مراسم کا فائدہ اٹھانے کی کوشش نہیں کی۔ اُن کی مخالفت میں اگر کوئی کمی رہی، تو ان باتوں کا اثر بھی ضرور رہا ہوگا۔

جن دنوں میں CGS تھا، میجر جنرل طارق مجید صاحب MI کے سربراہ تھے (بعد میں جنرل بنے اور چیرمین جوائنٹ چیف آف سٹاف کمیٹی نامزد ہوئے)۔ ایک دن مجھے بتایا کہ جنرل مشرف نے اُن سے کہا تھا کہ فوج سے ذرا تخمینہ (pulse) لیں، کہ لوگ کس کو وائس چیف کے عہدے پر دیکھنا پسند کریں گے۔ کہنے لگے، "آپ جانتے ہیں فوج میں کیا سوچ ہے؟ تقریباً متفقہ (unanimous) خیال ہے کہ آپ کو وائس چیف ہونا چاہیے۔" یہ اللہ کا مجھ پر بہت بڑا کرم تھا کہ اُس نے مجھے عزت دی۔ مگر وائس چیف کے عہدے پر رہ کر میرے لئے اپنے چیف کے ساتھ کام کرنا نہایت دشوار ہو جاتا، اور اُن کے لئے بھی۔ یقیناً یہ فوج کے نظم و ضبط کے لئے مناسب نہیں تھا کہ چیف اور وائس چیف میں تنازع رہے۔ وفاداریوں کا مسئلہ بھی اُٹھ جاتا۔ یہ مجھے قبول نہیں تھا۔ فوج جیسے اہم ادارے کو باہمی جھگڑوں میں نہیں الجھایا جاسکتا۔ ان حالات میں، اس طرح ملک تباہ ہو سکتا تھا۔

میرے لاہور جانے سے پہلے، ایک مرتبہ میجر جنرل ندیم تاج (بعد میں لیفٹیننٹ جنرل بنے اور ISI کے سربراہ رہے)، جو اُن دنوں چیف کے پرسنل سٹاف افسر تھے، کہنے لگے کہ وائس چیف کے عہدے پر پروموشن کے لئے آپ کا نام بھی لیا جا رہا ہے۔ میں نے کہا کہ چیف کو ایسا مشورہ ہرگز نہ دیں، کیونکہ میں اس عہدے کے لئے موزوں نہیں ہوں۔ ایک تو کئی افسر مجھ سے سینئر ہیں، دوسرے میری اُن سے رشتہ داری بھی ہے اور پھر وہ خود بھی مہاجر خاندان سے ہیں اور میں بھی، جب کہ فوج زیادہ تر پنجاب سے ہے۔ مجھے پروموٹ کرنا اُن کے حق میں بہتر نہیں ہوگا۔ ایسا تاثر قائم ہوگا کہ فوج میں زیادہ تر لوگ اُن کے طرف دار نہیں۔

آٹھواں سفر زرد دوپہر

پھر جب، دسمبر ۲۰۰۳ میں، میں یہاں سے تبدیل ہو کر لاہور جانے لگا تو انہوں نے مجھے اور انجم کو اپنے گھر چائے پر بلایا۔ باتوں باتوں میں پوچھنے لگے کہ تمہارا کیا مشورہ ہے، کس کو وائس چیف بناؤں؟ کچھ نام لئے اور وجوہات بتائیں کہ ان کو نہیں بنا سکتا۔ میں نے کہا پھر آپ کے پاس سب سے موزوں انتخاب لیفٹیننٹ جنرل احسن سلیم حیات کا ہے، انہیں بنا دیں۔ میں نے کوئی ایسی جھلک بھی نہیں دی جس سے ان کو یہ غلط فہمی ہو کہ میں بھی امیدوار ہوں۔ یہ باتیں اس لئے کہہ رہا ہوں کہ بعد میں ان کو ایک نیا رنگ دیا گیا۔

میں نابینا مصور ہوں *

CGS کے دو سال کا عرصہ ذہنی کوفت کا گزرا۔ یقیناً جنرل مشرف کے مقاصد اور طور طریقوں سے مجھے اختلاف رہا اور جو کہہ سکتا تھا کہہ دیتا، کبھی ضمیر کے برخلاف ہاں میں ہاں نہیں ملائی، مگر دل پر ہر وقت ایک بوجھ سارہتا۔ GHQ کے آخری ایام میں ایک دن دفتر میں بیٹھا تھا، سامنے لان میں، سردیوں کی گرم دھوپ میں، مالی گلابوں کی کٹائی کر رہا تھا۔ کچھ دیر بیٹھا کھڑکی سے اُسے دیکھتا رہا۔ دل میں خیال آیا کہ اس کی زندگی کتنی پرسکون ہے، کاش، میرا بھی اتنا سہل کوئی کام ہوتا جو دل و دماغ پر بوجھ نہ بنتا، دل کو یوں نہ مروڑتا، بس مالی جیسی تنگدستی مجھے نہ ملتی۔ کہتے ہیں کوئی لمحہ ایسا ہوتا ہے جب دل سے نکلی بات پوری ہو جاتی ہے۔ آج پانچ سال سے یہی کر رہا ہوں۔ مگر دل جب بچھ چکا ہو، اُسے کیسے بہلاؤں؟

اپنی ندامت میں اللہ کو بہت قریب پاتا۔ ہر وقت اُس کے خیال سے دل ڈوبتا رہتا۔ اُس کی محبت ڈھونڈتا اور خود کو اس قابل نہ پا کر بہت پریشان اور پشیمان رہتا۔ کس سے کہتا؟ وہی ایک سننے والا تھا۔ اُس ہی کو پکارتا، کوئی جواب نہ پاتا۔ کبھی پرانے فلمی گیت سنتا تو اُن میں بھی اللہ کو پاتا۔ روتا۔ اُن ہی دنوں، جب افغانستان پر امریکہ کے گولے پھٹ رہے تھے اور ہم، اُن کے طاقتور بھائی، اپنی لالچ سمیٹے، دشمن کی گود میں بیٹھے تھے، ایک دوست نے شاہ نواز زیدی صاحب کی کتاب 'آئینہ دار' مجھے دی۔ منظوم پیش لفظ میں لکھا تھا:

میں نابینا مصور ہوں

جو دونوں ہاتھ آگے کر کے چلتا ہے

جو خوابوں میں بھی جا کر بند گلیوں میں نکلتا ہے

کہ اُجلے منظروں کی دوسری جانب

جو اندھے غار ہیں

اُن میں مری آنکھیں لڑھکتی ہیں!

اُن کے الفاظ میں دل ڈوب کے رہ گیا۔ پھر نظم 'مزار شریف' پڑھنی شروع کی۔ تصویر کشی ایسی تھی جیسے آنکھوں کے سامنے آئینے میں منظر بکھرا ہو۔ جب آخری سطور پر پہنچا، آئینے میں اپنی شکل دکھائی دی،

"اب کی بار بابا بیلوں نے

پھر آنے میں دیر لگادی!"

تو پھوٹ پڑا۔ کمرے میں کچھ اور گھر والے بھی بیٹھے تھے۔ اٹھ کر غسل خانے میں جا چھپا۔ دیر تک روتا رہا۔ رات بھی یوں ہی گزری۔

دوسرے دن چھٹی تھی۔ ناشتے کی میز پر سب ہی بیٹھے تھے، پرانا بھی، نانا بھی، میرے بچے بھی اور نواسہ بھی۔ ناشتے کے بعد نہ جانے کیوں میرے منہ سے نکلا کہ جب ریٹائر ہو جاؤں گا تو اللہ میاں کو سیلوٹ کروں گا اور کہوں گا، "میرے لئے کیا حکم ہے؟" وہ کہے گا، "جب تجھے اتنا بڑا افسر بنایا، تب کہاں تھا؟ اب کوڑے کی ٹوکری سے نکل کر کیا پوچھتا ہے کہ کیا حکم ہے؟" یہ کہتے ہوئے پھر سے آنکھیں بھر آئیں، اور وہاں سے ہٹ گیا، مگر سب نے دیکھ لیا تھا۔

اُن دنوں کچھ دوستوں سے اس سلسلے میں بات بھی ہوتی۔ سب فوجی ہی تھے۔ سب یہی کہتے کہ میری سوچ ٹھیک نہیں۔ ایک جنرل صاحب نے کہا کہ قائد اعظم کون سے اتنے مذہبی انسان تھے مگر اللہ نے اُن سے کتنا بڑا کام لیا۔ یہ اللہ کے اپنے طریقے ہوتے ہیں۔ اللہ ہی نے مشرف صاحب کو بھی اس کرسی پر فائز کیا ہے۔ تو کیا تم اللہ سے ناراض ہو؟ پھر اپنی ذہنی پریشانیوں کو دور کرنے، ان ہی احباب کی رہنمائی میں، کچھ ایسے لوگوں سے بھی رابطہ رہا جو مرید تھے اُن کے جنہیں ولی اللہ کا رتبہ دیا جاتا تھا۔ یہ تمام مشرف صاحب کی شدت سے حمایت کرتے۔ میں ان میں سے کسی سے منسلک تو نہیں رہا مگر اُن کی باتوں کا اثر یقیناً مجھ پر رہا۔ پھر ریٹائرمنٹ کے بعد جب اُن سے ملا تو کچھ ایسی باتیں ہوئیں اور ۲۰۰۶ کے حج کے دوران کچھ ایسے واقعات پیش آئے کہ میں اس راہ سے ہٹ گیا۔

کئی بار دل میں خیال اُبھرا کہ فوج چھوڑ دوں، مگر میری منطقوں نے اس خیال کو دبا دیا۔ والد صاحب نے بھی فوج سے استعفیٰ دیا تھا، اُس کے بعد بری معاشی حالت سے گزرے۔ دو مرتبہ میں بھی ایسا کر چکا تھا۔ اگر اللہ نے نہ بچایا ہوتا تو نہ جانے بچوں کا پیٹ کیسے پالتا۔ کبھی یہ خیال آتا کہ میں استعفیٰ دے کر ہیر تو بن جاؤں گا لیکن کسی چیز پر کوئی فرق تو نہیں پڑے گا۔ کچھ بدلے گا تو نہیں۔ میرے رہنے سے ان چیزوں میں کچھ رکاوٹ تو ہے۔ ۱۹۷۱ کے حالات میں مشرقی پاکستان میں جنرل صاحب زادہ یعقوب خان کے بارے میں بھی خیال آیا۔ انہوں نے بہت اعلیٰ کردار کا مظاہرہ کیا تھا اور غلط لوگوں کا ساتھ چھوڑ دیا، استعفیٰ دے دیا۔ مگر حالات اور بگڑ گئے۔ کبھی یہ سوچتا کہ فوج مشرف کی تو نہیں، میں اُن کا ذاتی ملازم تو نہیں کہ چھوڑ دوں۔ فوج کے لئے کام کرتا ہوں، اور کرتے رہنا چاہیے، بولتے رہنا چاہیے۔ یہی میری فوج سے وفاداری ہے۔ خود تو کوئی غلط کام کرنے کی مجبوری نہیں اور نہ ہی کیا۔ جو برا سمجھتا ہوں اُسے روکوں گا۔ اُس کی دنیا دار پالیسیوں سے اختلاف ضرور ہے، اور کرتا رہوں گا۔ میں چپ تو نہیں رہتا۔ چلا گیا تو فوج کو کیا ملے گا۔ پھر کبھی خیال آتا کہ آخر میں ہی اتنا ناراض کیوں

آٹھواں سفر درد دوپہر

ہوں، باقی سب تو اطمینان سے ہیں۔ کیا میں نے کہانیوں کے کردار ڈان کو یوٹے (Don Quixote) کی طرح اپنے مد مقابل تصوراتی حریف کھڑے کر لئے ہیں؟ کیا میرا نا تا حقیقت سے کٹ گیا ہے؟ کبھی سوچتا کہ اگر چھوڑ کر چلا گیا تو شاید اللہ ناراض ہو جائے، کہ تمہیں دوبار بھاگنے سے بچایا کہ تم سے کچھ کام لینا تھا، اور آج جب وقت آیا تو تم چھوڑ بھاگے۔ سوچا شاید آگے کچھ ہونا ہو، میرا کوئی کام ہو جو مجھے ابھی نظر نہیں آتا۔

دل میں ایک کشمکش چلتی رہی۔ خود فریبیوں میں ڈوب رہا۔ ایسا کچھ بھی نہ ہوا، کہ میں کچھ کرتا۔ خود کو ضائع ہی کیا۔ آج دعا قنوت کی یہ لائن ذہن میں ابھرتی ہے کہ "میں نے منہ موڑا اور چھوڑ دیا اُس کو، جس نے اللہ سے منہ موڑا"۔ یہی ایک وجہ چھوڑنے کو کافی تھی۔ لیکن شاید ایمان دنیا کی گرفت سے آزاد نہیں ہوا تھا۔ آج اس ہی کا بوجھ لئے پھرتا ہوں۔

سبزہ سبزہ، سوکھ رہی ہے پھینکی، زرد دوپہر
دیواروں کو چاٹ رہا ہے تنہائی کا زہر
دور افق تک گھٹتی، بڑھتی، اٹھتی، گرتی رہتی ہے
گہر کی صورت بے رونق دردوں کی گدلی لہر
بستا ہے اس گہر کے پیچھے روشنیوں کا شہر

اے روشنیوں کے شہر
کون کہے کس سمت ہے تیری روشنیوں کی راہ
ہر جانب بے نور کھڑی ہے حجر کی شہر پناہ
تھک کر ہر سو بیٹھ رہی ہے شوق کی ماند سپاہ

آج مرا دل فکر میں ہے
اے روشنیوں کے شہر
شب خوں سے منہ پھیر نہ جائے ارمانوں کی رو
خیر ہو تیری لیلّاؤں کی، ان سب سے کہہ دو
آج کی شب جب دیئے جلائیں، اُونچی رکھیں لو
(فیض)

نواں سفر

خاکِ رَہ

اُونچی ہوں فصیلیں تو ہوا تک نہیں آتی *

"ماشاء اللہ۔ بیٹا، بڑا شاندار گھر ہے"، پاپا نے وسیع باغیچے پر نظر ڈالتے ہوئے کہا۔ ابھی لاہور پہنچ کر گاڑی سے اترے ہی تھے۔ کور کمانڈر کے گھر داخل ہوتے ہوئے گیٹ پر کھڑی گاڑی نے سلامی دی تھی، پاکستان کا جھنڈا لہرا رہا تھا۔ پاپا، سابق فوجی، پورچ میں کھڑے بہت خوش نظر آرہے تھے، آج اُن کا بیٹا کور کمانڈر تھا۔ میں نے اُنہیں بتایا کہ یہ جناح ہاؤس کہلاتا ہے اور جناح صاحب کی ذاتی ملکیت تھا۔ اُنہوں نے جب خریدنا تھا تو وزارتِ دفاع کے پاس کرائے پر چڑھا ہوا تھا۔ جب پاکستان بنا تو وزارت والوں نے اُنہیں اطلاع کروائی کہ آپ کا گھر خالی ہو گیا ہے، اسے لے لیں۔ آپ نے پوچھا کہ اس میں کون رہ رہا تھا۔ جب بتایا کہ اس میں انگریزوں کی فوج کا جنرل، لاہور کا فوجی کمانڈر رہ رہا تھا، تو کہا کہ اب سے اس میں پاکستان کی فوج کا جنرل، لاہور کا فوجی کمانڈر رہے گا، اور گھر فوج کو تحفے میں دے دیا۔ شام کی ڈوبتی روشنی میں، کچھ دیر تو پاپا پورچ میں خاموش کھڑے رہے، پھر کہنے لگے، "بیٹا، آدمی عمر تم نے میرے ساتھ M.E.S. کے گھروں میں گزار دی، باقی عمر میں نے تمہارے ساتھ M.E.S. کے گھروں میں گزار دی۔ آج اللہ ہمیں کہاں لے آیا ہے! کیا اب ہم جناح صاحب کے گھر میں رہیں گے؟" غروب ہوتے سورج کی کرنوں میں اُن کے گالوں پر بہتے آنسو، چمک رہے تھے۔

میں لاہور ہی میں پیدا ہوا تھا، مگر کبھی اس شہر میں رہا نہیں تھا۔ اب نوکری کے اختتام پر وردی اُتارنے آیا تھا۔ چمکتا، کھلکھلاتا، اُونچی آوازوں والا شہر، اب اس بلند شاخ پر بیٹھ کر کیسے دیکھتا؟ کبھی کبھار کسی گناہ گار کی گلیوں میں پھرنے نکل کھڑا ہوتا، ورنہ بلٹ پروف شیشوں کے پیچھے چھپا، چلتی گاڑی سے شہر کی رونقوں کو تکتا۔ سب بے رنگ ہی لگتیں۔ جب دل میں کوئی اُمنگ نہ ہو، اور سب کھڑکیاں بھی بند ہوں، کوئی آواز بھی نہ آتی ہو، تو اندر کا سناٹا باہر کی دنیا پر چھا جاتا ہے۔ لگتا جیسے پرانے زمانے کی بلیک اینڈ وائٹ (black and white) خاموش فلم (silent movie) دیکھ رہا ہوں۔ خود ہی ڈائیلاگز (dialogues) ذہن میں اُبھرتے رہتے۔ گاڑی سائیکل والے کے قریب سے گزری۔ نفن لٹکائے، پیچھے کیرئیر پر لکڑیوں کا چھوٹا سا گٹھا باندھے، تھکے تھکے پیڈل چلاتا، نہ جانے کتنی دور سے آ رہا تھا۔ گھبرا کے کچے میں اُتر گیا، "مردود! اب تو بھی کچلے گا مجھے؟ دیکھتا نہیں پہلے ہی مرا ہوا ہوں؟"

میں اپنی سوچوں سے چونک پڑا۔ میری طرح اس کی بھی ایک دنیا ہوگی، بیوی، بچے، گھر۔ پھر اس کے گھر کی ایک فلم سی میرے ذہن میں چلنے لگی۔ گندی سی گلی کی بلغمی نالی کے پیچھے ٹوٹا ہوا ٹین کی چادر کا دروازہ، جسے چوکھٹ کے ساتھ تاروں سے باندھا ہوا تھا، زمین سے

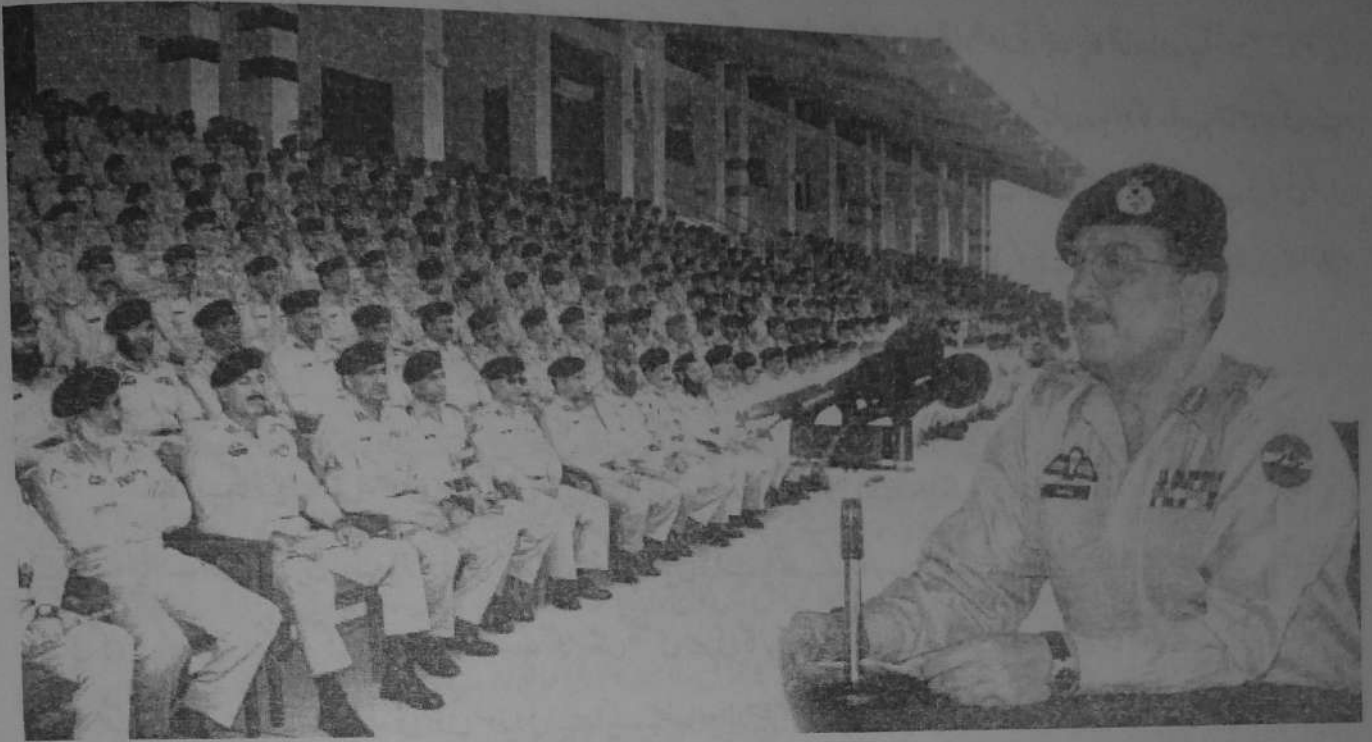
* غلیب جلالی

نواں سفر خاکبازہ

گھٹنا تھا، کھولنے کے لئے اُوپر کو اٹھانا پڑتا۔ اس کے پیچھے چھپی ہوئی، بند، ایک عورت، جو کبھی خوبصورت تھی۔ کتنی جلدی بوڑھی سی لگنے لگی تھی۔ ننھی کو گود لئے، چھوٹی سی ہانڈی کے نیچے گیلی لکڑیوں کو پھونک رہی تھی۔ صرف دھواں ہی تھا، شعلہ تو بجھ چکا تھا۔ اور یہ آنسو؟ "دھویں سے ہیں۔ ویسے تو اللہ کا دیا سب کچھ ہے، اب تو بیٹا بھی بڑا ہو رہا ہے، سکول جانے لگے گا۔ کہیں گلی میں کھیل رہا ہوگا۔ اب شام ہو گئی ہے، اُسے اندر لے آتی ہوں۔ فیس کا بھی کچھ اللہ کر ہی دے گا۔" رسی پر چند کپڑے لٹک رہے تھے، اب تک سو کھئے نہیں تھے۔ دھوپ کی کوئی کرن بھی تو نہیں آتی اس چھوٹے سے آنگن میں۔ کمبل میں لپٹا ایک خاموش بوڑھا، انتظار میں بیٹھا ہانڈی کو تک رہا تھا۔ پھر اگلی ہانڈی کا انتظار کرے گا۔ پہلے یہ بھی اپنے بچوں کا سوچتا تھا، اب بس اگلی ہانڈی کا انتظار رہ گیا تھا۔

بے تاب گاڑیوں میں، کھوئی ہوئی مخلوق، اپنی اپنی دنیا میں گم، خالی آنکھوں سے ہوا میں گھور رہی تھی۔ نہ جانے کہاں جانا تھا، کہاں پہنچے تھے۔ کیا اب اور سفر کریں گے، یا زندگی کی لیکھ میں بیٹھ چکے ہیں؟ فٹ پاتھ کے کنارے بیٹھا پہلوان سمو سے اور جلیبیاں بیچ رہا تھا۔ شام ہو رہی تھی۔ کچھ بتیاں جل اُٹھی تھیں۔ خلقت کے ہجوم میں پھنسی میری گاڑی بھی لال بتی پر کھڑی تھی۔ گاڑیوں کے بیچ آدھا جسم زمین پر رگڑتا، بھیک مانگ رہا تھا۔ سامنے لدی ہوئی سوزوکی سے ایک پھنسا ہوا ادھیڑ عمر کا مر جھایا ہوا آدمی اُترا، میلے کپڑے، اُلجھا ہوا پریشان سا چہرہ، قمیض کی آستینیں دھاری دار سویٹر کی آستینوں سے باہر لٹک رہی تھیں۔ جلدی جلدی جیبیں ٹٹولنے لگا۔ سویٹر کے نیچے سے ہاتھ ڈال کر، اُوپر والی جیب سے کچھ کاغذ کی پرچیاں نکالیں۔ نوکری کی جستجو میں جمع کئے فون نمبر ہوں گے، دوسرے ہاتھ میں تھام لیں۔ پھر ایک لفافہ نکالا۔ شاید کوئی عرضی تھی، جواب تک کسی کو دے نہ سکا۔ کچھ اور نہ ملا۔ سب سنبھال کر واپس رکھ لیا۔ پھر کمر والی جیب سے کپڑے کی ایک ٹاکی سی نکالی، شاید رومال تھا، سگریٹ کی ڈبیا نکالی، کچھ اور کاغذ، پھر ہاتھ ڈال کر ٹٹولا اور ایک سکتہ نکال کر سوزوکی والے بے تاب لڑکے کو دیا۔ بتی نارنجی ہو گئی۔ نہ جانے آج شام گھر جاتے ہوئے کچھ سکے بچے بھی تھے، یا یہ آخری تھا۔ میرا دل کیا اُسے کچھ پیسے دے دوں، مگر سہم گیا۔ کالا شیشہ نیچے کرنا پڑے گا، وہ مجھے دیکھ لیں گے۔

ساتھ کھڑے رکشہ والے نے دو چار مرتبہ انجن کو ریس دی، دھویں کے بگولے اُٹھے، پھر میری طرف سڑک پر بلغم تھوکی اور بتی کو سبز ہوتے دیکھ کر مجھ سے پہلے چوک پار کر گیا۔ مُڑ کر گاڑی کو دیکھا۔ جو آنکھ میری چمکتی ہوئی لمبی گاڑی کی طرف اٹھتی، نفرتوں سے بھری ہوتی۔ شکر ہے میں کالے شیشوں کے پیچھے ہوں۔ MP کے سپاہی نے میری گزرتی گاڑی کو دیکھا، منہ دوسری طرف کر لیا۔ میں نے جھنڈا اور ستارے نہیں لگائے ہوئے۔ تحفظ کا بہانا کر دیا تھا۔ کوئی سیکورٹی کی گاڑیاں بھی ہمراہ نہیں رکھتا تھا۔ ساتھ کی گاڑی سے ایک خاتون نے حسرت سے کالے شیشے میں اپنی شکل دیکھی۔ گاڑی چلاتے شوہر نے منہ دوسری طرف کر لیا۔ ننھی سی بیٹی نے چھلی سیٹ سے میری جھلک کو ہاتھ ہلایا۔ بس، یہی تھا میرا لاہور۔



لاہور کو رکمانڈر کے طور پر سپاہ سے خطاب



الہ آباد میں پاپا کا آبائی گھر

تو نے کس بنجر مٹی میں من کا امرت ڈول دیا*

"جنرل صاحب، کیا آپ ہم سے ناراض ہیں؟"، وزیر اعلیٰ صاحب نے پوچھا۔ جنرل مشرف صاحب کی آمد پر ہم گورنر صاحب کے گھر دوپہر کے کھانے پر مدعو تھے۔ اس سے پہلے بھی یہی شکوہ وہ مجھ سے کر چکے تھے، اور ایسے ہی ایک موقع پر۔ میری ان سے ملاقات اکثر یہیں ہوتی۔ کہنے لگے کہ آپ نے کبھی کوئی کام نہیں بتایا، تمام دفتر والوں کو بھی آپ سے یہی شکوہ ہے کہ کبھی کچھ کرنے کو کہا نہیں۔ میں نے کہا میرے سب کام اللہ کے فضل سے ہو چکے ہیں، اگر کچھ ہوگا تو ضرور بتاؤں گا۔

جب میں یہاں آیا تھا تو میرا دفتر اُس وقت تک کچھ نہ کچھ پنجاب حکومت کے کاموں میں الجھا ہوا تھا، حالانکہ فوج کا حکومت کے کام سے کوئی واسطہ نہیں تھا۔ میں نے آتے ہی اس سلسلے کو ختم کیا، اور یہ بھی احکام جاری کئے کہ کوئی فوجی اپنے کام کروانے حکومت کے کسی دفتر نہیں جائے گا۔ اگر کسی کا کوئی مسئلہ ہے، تو اپنے بالا کمانڈر کو مطلع کرے اور سرکاری طریقے سے اسے حل کروائے۔ حکومت کے عہدیداروں سے میل ملاپ بند کر دیں۔ میں نے خود بھی پورے دو سال میں ایک مرتبہ بھی کسی حکومت کے محکمے کو کوئی احکام نہیں دیے اور نہ ہی کسی قسم کے کام کروانے کو کہا۔

ایک دن اخبار میں تصویر دیکھی۔ میں وزیر اعلیٰ صاحب کے ساتھ بیٹھا بریفنگ سن رہا ہوں۔ نیچے لکھا تھا، "کور کمانڈر نے لاہور رنگ روڈ کے منصوبے کی منظوری دے دی"۔ اُن دنوں لاہور کی رنگ روڈ بن رہی تھی۔ مجھے میرے دفتر والوں نے بتایا کہ جتنی سڑک چھاؤنی سے گزرے گی، صرف ایک ایگزٹ (exit) ایئر پورٹ پر دیں گے، DHA میں بھی کوئی ایگزٹ نہیں دے رہے۔ کہا گیا کہ وزیر اعلیٰ صاحب کے سوا اس پر کوئی فیصلہ نہیں دے سکتا۔ پھر پنجاب حکومت کو فوج سے خاصی زمین بھی اس سڑک کے لئے درکار تھی، جس میں کچھ جگہوں پر پرانی بارکیں بنی ہوئی تھیں۔ میں نے کہا میری وزیر اعلیٰ صاحب سے ملاقات کروائیں۔ پھر انہیں ملنے اُن کے دفتر گیا، اور اُن سے گزارش کی کہ چھاؤنی میں بھی چند ایگزٹ دے دیں، یہاں بھی ہمارے شہری رہتے ہیں۔ کہنے لگے جنرل صاحب آپ کے لئے بریفنگ تیار کروائی ہے، آپ جیسا کہیں گے چھاؤنی کے لوگوں کے لئے راستہ ملے گا۔ میں کچھ حیران ہوا کہ بریفنگ کیسی۔ پھر ہم اٹھ کر ساتھ والے کمرے میں آ گئے، جہاں حکومت کے بہت سے لوگ بیٹھے تھے، میڈیا بھی موجود تھا۔ ایک تفصیلی بریفنگ دی گئی، کہ لاہور میں ٹریفک کے کیا مسائل ہیں اور انہیں کیسے حل کیا جا رہا ہے۔ گھنٹے بھر کی اس بریفنگ کا میری درخواست سے کوئی تعلق نہ تھا۔ خیر آخر میں میں نے اپنی بات

نواں سفر خاکِ رہ

دہرائی اور کہا کہ جو زمین اس سڑک کے لئے چاہیے اُس پر بھی فوج کو کوئی اعتراض نہیں، جو سرکاری طریقہ ہے اُس کے مطابق زمین پنجاب حکومت کو مل سکتی ہے۔ انہوں نے بھی راستے دینے کے احکام وہیں جاری کر دیے۔ پھر میں شکریہ کہہ کر واپس آ گیا۔ اب یہ تصویر چھاپ کر اخبار میں تاثر دیا گیا جیسے اس سارے منصوبے کی میں نے ہی منظوری دی ہو، ذمہ داری میرے کندھے پر ٹھہرائی گئی۔ پھر جب پوچھا گیا تو کہہ دیا کہ آپ تو سمجھتے ہیں ان اخبار والوں کو، کچھ بھی لکھ دیتے ہیں۔ میں اب اس پر اور کیا تبصرہ کروں۔

لاہور کا کور، بہت کوشش کے باوجود بھی، لاہور کی رونقوں میں گم تھا۔ چھاؤنی میں ذرا بھی چھاؤنی کا رنگ نہ تھا۔ بڑی بڑی شاندار کوٹھیاں، گاڑیاں، رنگین تفریح گاہیں، اور ہر طرف نظر آتی ہوئی پیسے کی ریل پیل۔ میجر صاحب حسرتوں سے بھری چھوٹی سی جیب لئے دکان پر جاتے، تو چیزوں کی قیمتیں ہی پوچھتے رہتے، پیسے والوں کی اس بھیڑ میں دکاندار انہیں کیوں کر پوچھتا۔ کئی ہیڈ کوارٹر بازاروں میں گھر چکے تھے۔ تربیتی علاقوں پر ہاشی کھڑکیاں کھلتیں، سپاہی بے چارے کا نشانہ تو خطا ہونا ہی تھا۔ کاروبار کے اتنے مواقع تھے کہ ہر سطح پر کوئی نہ کوئی کاروباری مشاغل جاری تھے۔ لاہور چھاؤنی کو کسی صورت چھاؤنی نہیں کہا جاسکتا، بس شہر کے بچوں بیچ فوج بیٹھی ہے۔ ایسے ماحول میں فوج اپنے طور طریقے اور فوکس (focus) کھودیتی ہے۔ تربیتی مشاغل سے دھیان ہٹا رہتا ہے۔ نظم و ضبط خراب ہوتا ہے۔ فوج کے کردار پر اثر پڑتا ہے، خود اعتمادی اور خود آری جاتی رہتی ہے۔

میں نے پوری کوشش کی کہ فوج کو تربیتی مشاغل میں مصروف رکھوں، لیکن خاطر خواہ کامیابی نہ پاسکا۔ پیٹروں کی بھی خاصی قلت رہی، جس کی وجہ سے مشقوں کے لئے شہر سے باہر نکلنے کا زیادہ موقع نہ ملا۔ تربیت کے لئے عموماً ہی پیٹروں کی قلت رہتی ہے، مگر ان دنوں کچھ زیادہ ہی تنگ دستی رہی۔ میں نے لاہور سے دور ہٹ کرنی چھاؤنی بنانے کا مشورہ جنرل مشرف کو دیا۔ پھر اس کے لئے، لاہور سے کچھ فاصلے پر، موزوں جگہ کا بھی انتخاب کیا اور مشورہ دیا کہ اگر آہستہ آہستہ لاہور چھاؤنی کی سرکاری زمین کو نیلام کیا جائے تو اس کے پیسے سے با آسانی نئی چھاؤنی تعمیر ہو سکتی ہے۔ لیکن انہوں نے کہا کہ ایک ہی تو لطف انگیز چھاؤنی ہے، جہاں فوج کے افسران اور یونٹیں آنے کی تمنا کرتے ہیں، تم وہ بھی فوج سے چھڑوانا چاہتے ہو۔

یہاں رہتے ہوئے میں نے سادگی پر زور دیا۔ سرکاری کار پر جھنڈا اور ستارے نہ لگاتا۔ جب جیب میں فوجی مشقوں کے لئے سرحدوں کے علاقے میں جاتا تو لگا لیتا۔ سرکاری خرچے پر دعوتیں بند کیں۔ عام رواج ہے کہ عید پر سینئر افسران کے گھر ملنے کا وقت دیا جاتا ہے، اسے اوپن ہاؤس (open house) کہتے ہیں۔ بہت سے جونیئر افسروں کی عید بڑے افسران کے اوپن ہاؤس بھگتانا میں ہی صرف ہو جاتی ہے، جب کہ بچے گھر میں انتظار کرتے رہتے ہیں کہ والدین سرکاری سویاں کھا کر آئیں تو عید منا لیں۔ میں نے یہ سلسلہ بھی

نواں سفر خاک پڑے

بند کیا اور گیریزن میس میں عید کا ایک فنکشن رکھ لیا، جس میں تمام بچے بھی آئے اور ایک گھنٹے میں سب ایک دوسرے سے مل بھی لئے۔ عید کی نماز کے لئے میں نے کہا کہ کوئی VIP قسم کا نظام نہ بنانا، جو عید پڑھنے آئیں، جہاں جگہ ملے بیٹھ جائیں۔ کم از کم نماز کو تو اس سلسلے سے باہر رکھیں۔ پھر بھی جب وہاں پہنچا تو دور سے نظر آ گیا کہ کافی لوگ ریسپشن کے لئے کھڑے ہیں اور لال قالین بچھی ہے۔ میں نے گاڑی دور ہی روک لی اور اتر کر صفوں کے بیچ سے ہوتا ہوا، نماز کے لئے جگہ ڈھونڈ کر بیٹھ گیا۔ کچھ عمر رسیدہ لوگوں نے، جو دیکھنے میں ریٹائرڈ فوجی لگتے تھے، آکر مجھ سے ہاتھ ملایا اور کہا کہ ماشاء اللہ آج آپ بھی عام شہریوں کی طرح عید کی نماز پڑھنے آئے ہیں۔

یہ VIP کلچر ہر طرف پھیلا ہوا ہے۔ جب پہلی مرتبہ DHA کلب کسی فنکشن میں گیا تو گیٹ میں گاڑی داخل ہوتے ہی دیکھا کہ دو سفید گھوڑے گاڑی کے آگے آگے رقص کر کے چلنے لگے۔ میں نے گاڑی وہیں روک دی، اور ٹھہرا رہا۔ پھر جب گھوڑے جا چکے تو میں اندر داخل ہوا۔ ریسپشن کمیٹی کچھ اُداس سی کھڑی تھی۔ پھر آتش بازی اچل پڑیں۔ کہاں تک روک سکتا تھا۔ اس کے بعد میں ریٹائر ہونے تک کسی بھی فنکشن میں نہیں گیا۔ جہاں بلایا جاتا معذرت کر لیتا۔

فوج میں یونٹوں اور ہیڈ کوارٹروں پر مختلف چیزوں کے بوجھ پڑتے رہتے ہیں، جن کے لئے کوئی بجٹ نہیں ہوتا۔ ایک کمانڈ فنڈ ہوتا ہے جس میں تمام اشخاص ہر ماہ تھوڑا تھوڑا پیسہ جمع کرواتے ہیں۔ اس کے لئے باقاعدہ قانون بنا ہوا ہے کہ کتنے پیسے لوگوں سے لئے جائیں گے اور کہاں خرچ ہو سکتے ہیں۔ اس کا آڈٹ بھی ہوتا ہے، جو فوج خود ہی کرتی ہے۔ یہ اتنی قلیل رقم ہوتی ہے کہ آج کل اس سے اخراجات پورے نہیں ہوتے۔ کھیلوں کے مقابلوں کا اہتمام ہو، یا عید جیسے کسی موقع پر سپاہیوں کو اچھا کھانا کھانا ہو، یا ان کے لئے وائر کولر یا پنکھے یا کوئی اور ایسی ہی چیزیں لینی ہوں، کمانڈر کے پاس کوئی رقم نہیں ہوتی۔ پھر اخراجات بھی آہستہ آہستہ اس قدر بڑھالے ہیں کہ پورے ہونے کو نہیں آتے۔ انہیں پورا کرنے کے لئے مختلف جگہوں سے 'فنڈ' کے نام پر پیسے اکٹھے کئے جاتے ہیں، جو سب ہی ناجائز طریقے ہیں۔ اور بہت سے اخراجات بھی ناجائز ہی ہوتے ہیں، لیکن پیسہ کسی کی جیب میں نہیں جاتا۔ ان ہی پیسوں سے گیٹ روم بھی بنتے ہیں اور مسجدیں بھی، دعوتیں بھی ہوتی ہیں اور سپاہیوں کی بہبود بھی۔ یہ پیسے کہاں سے جمع ہوتے ہیں اور کہاں خرچ ہوتے ہیں، فوج میں سب ہی واقف ہیں۔ مگر یہ ایک برا طریقہ ہے جس کے نقصانات فوائد سے کہیں زیادہ ہیں۔ سب سے بڑا نقصان ناجائز کام کی چھوٹ کا ہے، جو آپ افسروں کے منہ کو لگاتے ہیں۔ اُن کے کردار کو باحکم سرکار مسخ کیا جاتا ہے۔ دھوکے سے کاغذوں پر اخراجات زیادہ دکھاتے ہیں اور پیسے بچا کر فنڈ میں ڈال لیتے ہیں۔ پھر فنڈ بنانے کی خاطر سپاہ کو مختلف کاروباری کاموں میں بھی الجھایا جاتا ہے۔

لاہور میں بھی اس ہی قسم کے کئی کاروباری مشاغل میں فوج ملوث تھی۔ کوئی پیسہ چوری نہیں ہو رہا تھا، بس کاروبار کر کے فنڈ جمع ہو رہا تھا، اور مختلف ذرائع آمدن حاصل کرنے کی دوڑ لگی تھی۔ کسی یونٹ کی بیکری چل رہی تھی، کوئی برف کا کارخانہ کھولے بیٹھا تھا، کہیں پیٹرول

نواں سفر خاکِ رَہ

پپ چلائے جارہے تھے اور کسی نے اپنی جگہ اشتہاری بورڈوں کے لئے کرائے پردی ہوئی تھی۔ میں نے ریٹائرڈ فوجیوں کی ایک تنظیم بنائی اور تمام کاروباری کام ان کے سپرد کر دیے۔ فوج بھی ان مشاغل سے ہٹ گئی، کچھ ریٹائرڈ لوگوں کو ذریعہ معاش بھی مل گیا اور تمام پیسے اکٹھے کر کے تمام یونٹوں اور ہیڈ کوارٹروں کو ماہانہ اخراجات کے لئے رقم بھی ملنے لگی۔ بمشکل لوگوں کے منہ سے کاروبار چھڑوایا۔ یہ پاکستان کی واحد چھاؤنی تھی جہاں کوئی فوجی کسی کاروباری کام سے منسلک نہیں تھا۔

ان دنوں آہستہ آہستہ فائٹ میں ہماری فوج کی کاروائیاں بڑھتی جا رہی تھیں۔ ڈرون حملے بھی شروع ہو گئے تھے، جن کے بارے میں کورکمانڈر کانفرنس میں بتایا گیا کہ ہماری ٹیکنیکل صلاحیت محدود ہونے کے باعث ہم امریکہ سے اس سلسلے میں امداد لیتے ہیں، تاکہ فائٹ میں القاعدہ کے چھپے ہوئے اہلکاروں کا سراغ لگایا جاسکے۔ کہا گیا کہ ہم صرف اس درجے پر ان سے تعاون کرتے ہیں۔ اکاؤنٹ حملے جو ہوئے ہیں وہ ہماری اجازت کے بغیر کئے گئے ہیں اور ہم نے احتجاج کیا ہے، ہم اور کبھی کیا سکتے ہیں۔

میں نے ایک مرتبہ جنرل مشرف سے کہا تھا کہ ہمیں ہرگز فائٹ میں فوجی کاروائی نہیں کرنی چاہیے، تو کہنے لگے کہ پھر یقیناً امریکہ یہاں کاروائی کرے گا۔ اس پر میں نے کہا کہ کیا یہ بہتر نہیں کہ امریکہ ہی کاروائی کرے، بجائے اس کے کہ ہم خود ہی اپنے لوگوں کو ماریں اور اپنے ہی بھائیوں سے دشمنیاں پیدا کر لیں۔ اگر ہم صرف احتجاج ہی کر سکتے ہیں، تو پھر بھی احتجاج کرتے رہیں گے۔ لیکن انہیں میرا عقل و خرد سے عاری مشورہ پسند نہ آیا۔

تیرے بول ہیں سارے گونگے شہروں کی گویائی*

بہت دیر سے مشرف صاحب کے ساتھ مباحثہ چل رہا تھا، سارے کورکمانڈر بھی موجود تھے۔ اگلی ممکنہ جنگ کے حالات پر بات ہو رہی تھی۔ صدر صاحب کا کہنا تھا کہ آج کل کے حالات میں اگر مکمل جنگ (all out war) ہوئی تو بھارت ہی ہم پر حملہ کرے گا، اور امریکہ کو اندھیرے میں رکھتے ہوئے جنگ شروع کرے گا۔ میں نے کہا کہ اگر آج کل کے حالات میں جنگ چھڑی تو امریکہ اور ہندوستان کا مشترکہ منصوبہ ہوگا۔ اگر حالات تبدیل ہو جائیں تو اور بات ہے۔ جنرل مشرف کا کہنا تھا کہ ہندوستان امریکہ کو بھروسے میں لئے بغیر، اچانک حملہ کر سکتا ہے۔ امریکہ اس میں ملوث نہیں ہوگا۔ میں نے اس بات کو بعید از عقل قرار دیا۔

ایک مخصوص ہدف کی خاطر کچھ فضائی یا زمینی جھڑپیں تو ہو سکتی ہیں، سمندری راستے بھی روکے جاسکتے ہیں، تاکہ پاکستان کو فوجی دباؤ میں لایا جائے۔ یہ بھی امریکہ کی مرضی کے بغیر ممکن نہیں۔ اس محدود جنگ کے ساتھ کچھ معاشی اور سفارتی دباؤ کا کھیل کھیلا جاسکتا ہے، جس میں بھارت کو یقیناً امریکہ اور اُس کے ساتھیوں کا تعاون درکار ہوگا۔ آج اس خطے میں موجود بڑا کھلاڑی امریکہ ہے، بھارت اُس کا چھوٹا ہے، جسے وہ کل کے لئے خطے میں ایک طاقتور ساتھی کے طور پر کھڑا کر رہا ہے۔ ہر حال میں اُن کی کاروائیوں میں ربط ہوگا۔ اس محدود جنگ کی بھی کچھ وجوہات اور کچھ اہداف ہوں گے، جو دہشت گردی کی اس نام نہاد جنگ کے برخلاف نہیں ہو سکتے۔ ان حالات میں امریکہ کو اندھیرے میں رکھتے ہوئے، ایک مکمل جنگ بھارت شروع نہیں کرے گا، یہ بھارت کے مفاد میں نہیں۔

بہت دیر تک ہم دونوں میں تکرار رہی، بیچ میں کسی نے میری رائے کو تقویت دینی چاہی، اُنہوں نے جھڑک دیا، پھر اور کوئی میری طرف داری میں نہ بولا۔ میرا کہنا تھا کہ آج ہم امریکہ کی اعلان کردہ دہشت گردی کے خلاف جنگ میں سب سے اہم کردار ادا کر رہے ہیں۔ ہمارے تعاون کے بغیر یہ جنگ نہیں جیتی جاسکتی۔ بھارت اس میں امریکہ کا اہم ساتھی ہے۔ اُس کی معیشت بھی تیزی سے ترقی کر رہی ہے۔ وہ کیونکر امریکہ کی مرضی کے خلاف اس جنگ میں امریکہ کے سب سے اہم ساتھی کو یوں اپنی جنگ کی طرف موڑ لے گا؟ اُسے امریکہ کے کھیل کو یوں غیر مستحکم (destabilize) کرنے کا کیا فائدہ حاصل ہوگا؟ کیا وہ ساری ترقی یافتہ دنیا کو اس طرح دھوکہ دے کر اپنے خلاف کر لے گا؟ اپنی اُٹھتی ہوئی معیشت کو تباہ کر لے گا؟ آخر کیوں؟ پھر اس جنگ کے اہداف کیا ہوں گے؟ یہ باتیں کچھ عرصہ پہلے، جب بھارت کی فوج ہمارے بارڈر پر تھی، میں کہہ چکا تھا، مگر اُس وقت ان پر بحث نہیں ہوئی تھی۔ میری باتوں کو سن کر خاموشی سے آگے بڑھ گئے تھے۔

نواں سفر خاکِ رہ

یہاں تو لب لباب ہی پیش کر رہا ہوں، مباحثہ دو لوگوں کے بیچ گھنٹوں چلتا رہا۔ میں نے کہا کہ آج ہم امریکہ کے دباؤ پر کشمیر میں تمام جہادی کاروائیاں بند کر چکے ہیں، پھر جنگ کی کیا وجہ ہو سکتی ہے؟ فرض کریں کہ آپ امریکہ کو دھوکا دے رہے ہیں اور چھپ کر کشمیری مجاہدین کو متحرک کر رہے ہیں، تو کیا امریکہ کے تعاون سے بھارت یہ مسئلہ بہتر حل کر لے گا یا امریکہ کو نقصان پہنچا کر؟ کیا آپ کو ہٹانا، چاہے قتل ہی کرنا پڑے، زیادہ سہل ہے یا ایک ایٹمی جنگ کا خطرہ لینا زیادہ موزوں ہوگا؟ آخر ہندوستان بے عقل تو نہیں، اپنے پاؤں پر کلہاڑی کیوں چلائے گا؟ جب کچھ بات نہ بنی تو کہنے لگے، "آخر دشمن غلطی بھی تو کر سکتا ہے۔" مجھے ہنسی آ گئی۔ میں نے کہا کہ کیا آج ہم دشمن کی غلطیوں پر اپنا منصوبہ تشکیل دیں؟ منصوبہ تو ہمیشہ دشمن کی بہترین چال پر ہی بنایا جاتا ہے۔ اگر اُس نے بے وقوفی ہی کرنی ہے، تو ہمیں اتنی پریشانی کیوں؟ پھر تو ہمیں سوراہنا چاہیے۔

میں نے کہا، فرض کر لیں کہ آپ کی بات درست ہے، اور امریکہ کو بتائے بغیر بھارت ہم پر حملہ کر دیتا ہے، یہ تو یقینی ہے کہ اس کی منصوبہ بندی کی ہوگی، دنیا کا ردِ عمل بھی سوچا ہوگا، اس جنگ کی جیت کا بھی کوئی پیکر بنایا ہوگا، جنگ کے اختتام کی بھی اُن کے ذہن میں کوئی تصویر ہوگی۔ جنگ کرنے والا تو جیتنے کے ارادے سے ہی جنگ کرتا ہے۔ منصوبہ بناتے وقت اُنہوں نے یہی تصور کیا ہوگا، کہ ہماری جیت ہو گی۔ جو بھی بھارت کے اہداف اس غیر محدود جنگ کے لئے ہوں اور جو بھی جیت کا پیکر ہو، یہ تو بات یقینی ہے کہ اس جیت کے انجام میں پاکستان ایک تباہ شدہ ملک ہوگا۔ چاہے ایٹمی ہتھیاروں کے استعمال کی حد سے کتنا ہی پہلے جنگ رکوا دی جائے، اگلی جنگ میں بہت تباہی ہو گی۔ نہ ہمارے پل ہوں گے کہ گاڑیاں چلیں، نہ ریلوے کا نظام ہوگا، نہ پیٹرول کے ذخیرے بچیں گے، شاید ڈیم بھی نہ بچیں۔ نہ بجلی ہوگی، نہ پانی، نہ گیس، نہ ہی بازاروں میں خوراک پہنچے گی۔ نہ ہی حکومت کے پاس پیسے ہوں گے کہ وہ فوج اور پولیس اور اپنے محکموں کو تنخواہ دے سکے۔ جنہیں آپ دہشت گرد کہتے ہیں وہ ہی جنگ میں ہمارے ساتھی رہے ہوں گے۔ حکمران شکست کھا کر کرسی سے گر چکا ہوگا۔ اب اُس ملک کی حکومت کون سنبھالے گا، جو بھوکا ننگا سڑک کے کنارے بغل میں ایٹم بم دبائے پڑا ہوگا؟ کیا پاکستان اب ایک ایٹمی دہشت گرد مملکت بن کر ابھرے گا؟ دہشت گردی کے خلاف امریکہ کی جنگ کا کیا بنے گا؟ اس کا انجام دنیا کے لئے کیا ہوگا؟ بھارت کے لئے کیا ہوگا؟ کشمیر میں مجاہدین نے کیا حالات پیدا کر دیے ہوں گے؟ کیا یہ کشمیر کو بچانا ہوا؟ کیا بھارت امریکہ کے اس علاقائی کھیل میں اُس کا ساتھی رہا؟ کیا یہ جیت ہوگی؟

میں نے کہا کہ پاکستان کے خلاف اگلی مکمل جنگ میں پاکستان کو ایٹمی ہتھیاروں سے پاک کرنا لازم ہدف ہوگا۔ محدود اہداف کے لئے جنگ ہو سکتی ہے لیکن مکمل جنگ، جو ایٹمی حدوں کو چھوتی ہو، اس انجام کے منصوبے کے بغیر نہیں شروع کی جاسکتی، کہ پاکستان کے ایٹمی ہتھیار چھین لئے جائیں۔ اور اس جنگ کو ایٹمی حدوں سے پیچھے ہی روکنا لازم ہوگا۔ ایسی ہی منصوبہ بندی ہوگی۔ یہ امریکہ کی شمولیت کے بغیر نہیں ہو سکتی۔ اصل انجام کیا ہوگا، اللہ ہی بہتر جانتا ہے۔

جب کچھ کہنے کو نہ رہ گیا، تو کہنے لگے، "چلو مان لیتے ہیں کہ ۹۰ فیصد تمہاری بات درست ہے، مگر ہمیں بھی تو کچھ کریڈٹ (credit) دو، اتنا تو مانو کہ دس فیصد یہ بھی ممکن ہے کہ ایسا ہی ہو جائے جیسا ہم کہہ رہے ہیں۔" میں نے کہا کہ اس کا دس فیصد بھی امکان نہیں۔ غصے میں آ گئے۔ دونوں ہاتھ میری طرف بڑھائے اور کہا، "تم بہت rigid (ہٹ دھرم) ہو۔ سمجھتے ہو کہ صرف تم ہی ٹھیک ہو، ہم سب غلط ہیں۔" کچھ دیر سناٹا چھایا رہا، پھر سب اٹھ کر ان کے پیچھے چائے کے لئے باہر آ گئے۔ میں نے سوچا "ہم سب" کون؟ وہ تو سب کے سب آپ کے احترام میں خاموش تھے، کوئی بول نہیں رہا تھا۔ اگر آپ کی سوچ سے اتفاق رکھتے، تو کیوں کر چپ رہتے۔

تاحہ خیال لالہ وگل، تاحہ نظر بول یارو*

۲۰۰۴ کی سالانہ فارمیشن کمانڈر کانفرنس میں چائے کا وقفہ تھا۔ اس کانفرنس کے لئے فوج کے تمام ہی جنرل افسر آتے ہیں، چاہے وہ فی الوقت فوج میں نوکری کر رہے ہوں یا فوج سے باہر کسی اور محکمے میں۔ میں چند اور جنرل افسروں کے ساتھ کھڑا باتیں کر رہا تھا، چائے پی رہا تھا۔ ہال جنرلوں سے بھرا ہوا تھا، سب ہی ٹولیوں میں کھڑے گپ لگا رہے تھے۔ چیرمین NAB، لیفٹیننٹ جنرل صاحب چند کاغذات ہاتھ میں لئے قریب آئے اور میرے منہ کے آگے کر کے انہیں ہلایا اور کہا، "پارٹنر، آپ نے یہ دیکھا ہے؟" میں نے ہاتھ سے کاغذات کو ہٹایا اور کہا، "دیکھا ہے"۔ DHA کے خلاف یہ درخواست مجھے پچھلی شام موصول ہو چکی تھی۔ کہنے لگے، "اس کا جواب دے دیں"۔ میں نے پھر ہاتھ سے صبر کا اشارہ کیا۔ انہوں نے تو نہیں سوچا کہ بھری محفل میں یہ حرکت نہ کریں، مگر مجھے پھر بھی اچھا نہیں لگا کہ ایک سینئر افسر کو سب کے سامنے کچھ کہتا۔ وہ میرے تیر دیکھ کر چلے گئے۔

شام کو اسلام آباد کلب میں تمام افسر مدعو تھے۔ تھیٹر میں کوئی سٹیج ڈرامہ تھا، پھر کھانا، جنرل مشرف کے انتظار میں سب کھڑے باتیں کر رہے تھے۔ چھوٹی سی جگہ میں خاصی بھیڑ تھی۔ اتنے میں چیرمین NAB پھر نمودار ہوئے اور کہا، "پارٹنر، آپ نے جواب نہیں دیا!" شام تک تو کانفرنس چل رہی تھی، بمشکل وقت ملا کہ کپڑے بدل کر یہاں حاضر ہو گئے، لیکن انہیں ابھی جواب چاہیے تھا۔ مجھ سے اور برداشت نہ ہوا۔ پہلے تو ان کا DHA کے سلسلے سے کوئی تعلق نہیں تھا اور نہ ہی فوج کے افسران سے پوچھ گچھ کی اجازت۔ پھر اگر پوچھنا ہی تھا، تو یہ کون سا طریقہ تھا؟ اخلاق سے گرا ہوا۔ کیا مجھے جنرلوں کی محفل میں بدنام کرنا ہی مقصود تھا۔ یقیناً صبح بھی یہی طریقہ اختیار کیا تھا۔ اس سے پہلے بھی ایک مرتبہ، بدنام کرنے کی کوشش میں، یہی غلطی کر چکے تھے۔ چوٹ بھی کھا چکے تھے۔ میں نے غصے میں آ کر چند سخت باتیں اونچی آواز میں کہیں۔ جلدی سے پیچھے ہٹ گئے۔ میں نے بات یہیں چھوڑ دی۔

میرے بارے میں کچھ عرصہ پہلے مرزائی ہونے کا پروپیگنڈا کیا گیا، کہ اس نے اپنے کاغذات میں اپنا فرقہ (sect) نل (nil) لکھا ہے، اصل میں مرزائی ہے، چھپاتا ہے۔ یہ کاغذات ایجنسیوں کے پاس ہوتے ہیں۔ بات چلی نہیں۔ یا شاید کسی نے کہا ہو کہ یوں نہ کہو، ترقی پا جائے گا۔ پھر یہ افواہ اُڑائی کہ یہ منشیات کا عادی ہے، اور منشیات کی سمگلنگ میں بھی پکڑا گیا تھا، جنرل مشرف نے چھڑوایا تھا۔ سارے اسلام آباد میں اس کا ڈھنڈورا پیٹا گیا۔ یہ بات بھی ایجنسیوں کے ذریعے نکلی۔ مجھے اس کی بھی خبر ہو گئی۔ کئی سال گزرنے کے بعد ٹی وی کے ایک پروگرام کے دوران بھی مجھ پر یہ بہتان لگا۔ آج یہ نیا حملہ شروع ہوا تھا۔ پروموشن کے متنبی حضرات کسی بھی حد تک جانے کو تیار تھے۔

* شکیب جلالی

اس واقعے سے ایک دن پہلے، جب میں پنڈی پہنچا، تو DHA کے ایڈمنسٹریٹر کا فون آیا۔ کہنے لگے ISI کے لاہور میں مقیم بریگیڈیئر صاحب، ذاتی طور پر، کسی کا خط لے کر آئے ہیں، جس میں DHA کے خلاف بہت شکایات درج ہیں۔ اس کا جواب طلب کیا ہے، کہتے ہیں جواب اوپر بھجوانا ہے۔ میں نے کہا DHA اُن کو جوابدہ نہیں ہے، اُن سے کہیں جو جی میں آتا ہے لکھ کر اوپر بھجوادیں۔ اُنہوں نے وہ خط ایک آدمی کے ہاتھ مجھے بھجوا دیا، شام تک مل گیا۔ لکھنے والے کی زمین DHA نے لی تھی، جس کا کچھ تنازع چل رہا تھا، جو اس خط میں لکھا تھا۔ اس کے علاوہ لکھا تھا کہ فوج لاہور میں بہت کرپشن کر رہی ہے اور کوئی انہیں پوچھنے والا نہیں۔ میرا نام تو نہیں لیا تھا، لیکن لمبے سے خط میں سب باتیں میرے ہی خلاف تھیں۔ خیر، اسلام آباد کلب کے واقعے کے بعد میں نے اس بات کو جانے دیا۔ دل میں سوچا، جو کرتے ہیں کرتے رہیں، میں گندگی میں اُلجھ کر خود کو گندا کیوں کروں۔

کافی عرصہ گزر گیا۔ ایک دن لاہور کے گورنر، لیفٹیننٹ جنرل خالد مقبول صاحب کا فون آیا۔ نہایت شفیق انسان ہیں، اور میرا ان سے بہت پرانا تعلق تھا۔ جب میں نے سٹاف کالج میں فوج سے استعفیٰ دیا تھا تو یہ وہاں چیف انسٹرکٹر تھے اور مجھے انہوں نے بہت محبت سے سمجھایا تھا کہ یوں اپنا اور اپنے گھر والوں کا نقصان نہ کروں۔ میں آج بھی ان کی عزت کرتا ہوں۔ فون پر کہنے لگے کہ فلاں وفاقی وزیر صاحب کے صاحبزادے آئے ہیں، ان کا DHA میں کوئی مسئلہ ہے، آپ سے ملنا چاہتے ہیں۔ میں نے کہا، کہ ضرور تشریف لائیں، میں دفتر ہی میں ہوں۔

کچھ دیر میں وزیر صاحب کے بیٹے آگئے اور وہی مسئلہ پیش کیا جو اُس خط میں لکھا تھا۔ میں نے پوچھا، "کیا آپ نے آج سے پہلے کبھی مجھ سے اس سلسلے میں ملنے کی کوشش کی؟" تو کہنے لگے، "نہیں"۔ میں نے کہا، "کبھی فون پر بات کرنے کی کوشش کی؟" تو کہا، "نہیں"، پھر میں نے دراز سے وہ خط نکالا اور اُن کے سامنے رکھا اور پوچھا، "کیا یہ آپ نے لکھا ہے؟" تو جواب دیا، "ہاں، اس ہی سلسلے میں لکھا تھا"۔ مجھے غصہ آگیا۔ میں نے کہا، "آپ نے ایک مرتبہ بھی مجھ سے رابطہ کرنے کی کوشش نہیں کی کہ میں آپ کے مسئلے پر غور کرتا، پھر مجھ پر کرپشن کے اتنے الزامات لگائے، یہ کس بنیاد پر؟ کیا آپ کے پاس ان کا کوئی ثبوت بھی ہے؟" تو کہا، "میں نے آپ کے بارے میں تو نہیں لکھا"۔ میں نے کہا، "آپ نے لکھا ہے کہ لاہور میں فوج یہ کر رہی ہے، تو لاہور میں فوج تو میں ہوں۔ آپ نے لاہور کے کور کمانڈر کو بدنام کرنے کی سازش کی ہے۔ میں نہیں جانتا کہ آپ کے مقاصد کیا ہیں۔ مجھے شبہ ہے کہ آپ دشمن کی کسی خفیہ ایجنسی سے تعلق رکھتے ہیں۔ اس وقت میں آپ کو ملٹری پولیس کی حراست میں دے رہا ہوں، تفتیش کروں گا، پھر فیصلہ ہوگا کہ آپ کے ساتھ کیا کیا جائے"۔ صاحب زادے کھڑے ہو گئے، رونے لگے۔ میں نے کہا، "مجھے بتاؤ یہ کیوں لکھا تھا، کس نے کہا تھا؟" تو جواب دیا کہ انکل چیرمین نیب اور انکل فلاں، ایک اور لیفٹیننٹ جنرل کا نام لیا، ایک دن ہمارے گھر آئے تھے۔ میں نے اپنے مسئلے کا ذکر کیا تو اُنہوں نے کہا کہ خط میں ایسا لکھ کر ہمیں دے دو۔ یہ خط اُنہوں

نواں سفر خاکِ رہ

نے مجھ سے لکھوایا ہے اور میں نے اُن ہی کو دیا تھا۔ صاحب زادے کو تو میں نے بھیج دیا، مگر مجھے یہ سن کر بہت افسوس ہوا۔ میں نے اُن کا خط سنبھال لیا۔ اگلے دن ان کے والد صاحب کا فون آیا اور انہوں نے بہت معذرت کی۔ ان بے قصوروں کو بھلا کیا پتا تھا کہ کیا غلیظ کھیل کھیلا جا رہا ہے۔ میں نے اس بات کا جنرل مشرف سے کوئی ذکر نہیں کیا۔ میں اس کھیل میں کسی طرح کی بھی شمولیت نہیں چاہتا تھا۔

مختلف سمتوں سے جنرل مشرف کو بتایا جاتا کہ یہ افسر آپ کا ساتھ دینے کے لئے موزوں نہیں۔ میں نے سگریٹ چھوڑنے کی کوشش کی، تو ایک مرتبہ لاہور میں کسی کے گھر کھانے پر مدعو تھے کہ ایک صاحب نے جنرل مشرف سے کہا، "سر، انہوں نے سگریٹ چھوڑ دی ہے۔ جب سے حج کر کے آئے ہیں، پہلے تاش کھیلنا چھوڑا اب سگریٹ بھی چھوڑ دیے۔" دوسرے نے کہا، اب اور کیا چھوڑو گے؟" جنرل مشرف نے کہا، "اب تو چھوڑنے کو کچھ رہ نہیں گیا، اب تم داڑھی رکھ لو۔" پھر انہی صاحب نے جنرل مشرف کی طرف دیکھ کر فرمایا، "سر، ان کے تو پیٹ میں بہت لمبی داڑھی ہے۔" سب زور سے ہنسے۔ میں بھی مسکرا دیا۔

اکتوبر ۲۰۰۴ میں وائس چیف کے عہدے پر پروموشن ہونی تھی۔ پانچ ستمبر کو جنرل مشرف اور بیگم صاحبہ لاہور آئے۔ انہیں ایئرپورٹ سے لے کر میں اور انجم اُن کے ساتھ ہی آرمی گیٹ ہاؤس آگئے۔ ابھی بیٹھے ہی تھے کہ ایک فون آیا۔ جنرل مشرف نے کچھ دیر بات کی پھر کہا، "ہولڈ کرو۔" مجھ سے کہنے لگے، طارق عزیز صاحب ہیں، کل لاہور ریس کورس میں چھ ستمبر کے سلسلے میں انہوں نے شہیدوں کے نام پر گھوڑوں کی ریسوں کا اہتمام کیا ہے۔ چاہتے ہیں کہ تم وہاں چیف گیٹ کے طور پر چلے جاؤ، اور انعامات تقسیم کرو۔" میں نے کہا، "سر، یہ تو کچھ مناسب نہیں، مجھے اس کام سے دور ہی رکھیں۔" کچھ ناراض سے ہوئے، پھر یہ کہہ کر فون بند کر دیا کہ تھوڑا ٹھہر کے بتاتا ہوں۔ مجھ سے کہنے لگے کہ یہ ریس تو قانون کے مطابق ہوتی ہیں، کوئی غیر قانونی کام تو نہیں۔ میں نے کہا کہ آج کل سپاہیوں میں یہ تاثر ہے کہ فوج کے افسران دین سے دور ہٹ رہے ہیں۔ اس ہی وجہ سے میں روزانہ ظہر کی نماز گھر کے بجائے کور ہیڈ کوارٹر کی مسجد میں پڑھتا ہوں، تاکہ انہیں یہ غلط فہمی نہ ہو۔ اچھا نہیں لگے گا کہ اُن کا کور کمانڈر جوئے کی ریسوں میں انعام بانٹ رہا ہو۔ کہنے لگے، "تمہاری عجیب منطق ہے، میری سمجھ میں تو نہیں آتی۔" نہ جانے اس فون کے پیچھے کس کا ہاتھ تھا۔

وہی جنوں ہے وہی کوچہء ملامت ہے *

"جنرل صاحب نہایت عیاش اور بدکردار آدمی ہیں۔ ایک بیوہ کے انیس لاکھ روپے بھی ہڑپ کر گئے تھے"، میرے دوست، ایک ریٹائرڈ جنرل صاحب نے کہا۔ کہنے لگے، "پروفیسر صاحب نے آپ کے بارے میں یہ فرمایا ہے"۔ یہ شاید ۲۰۰۸ کی بات ہے، جب میں NAB سے بھی فارغ ہو چکا تھا۔ اس ہی قسم کے الزامات پروفیسر صاحب کے ایک اور قدردان کی زبانی، جو مجھے قریب سے جانتے تھے، میں پہلے بھی سن چکا تھا۔ جنرل صاحب کہنے لگے، "اگر میں آپ کو اتنے سالوں سے نہ جانتا، تو ان الزامات پر یقین بھی کر لیتا"۔ پوچھنے لگے کہ پروفیسر صاحب کو آپ سے آخر کیا رنجش ہے؟ کہنے لگے، "وہ تو بہت اچھے آدمی ہیں۔ بس یہی ایک بات اُن کی ایسی تھی جس سے میں چونک پڑا، ورنہ وہ تو بڑے عالم ہیں"۔ مجبوراً مجھے سارا قصہ سنانا پڑا۔

جن دنوں میں لاہور میں تھا، ایک فوجی دوست نے ایک پروفیسر صاحب کا ذکر کیا، جو اُن کی چھاؤنی میں آئے تھے۔ کہنے لگے کہ پاکستان بننے کی تاریخ پر بہت اچھا لیکچر دیا تھا۔ بہت تعریف کی۔ میں نے بھی انہیں دعوت دی، کہ ہمارے افسران کو بھی اپنے ملک کی تاریخ پر کچھ بتائیں۔ پروفیسر صاحب راولپنڈی کے قریب رہتے تھے۔ ان کے آنے کا پروگرام طے کرنے ایک صاحب، جو لاہور ہی میں ہوتے تھے، تشریف لائے۔ ملاقات ہوئی۔ کسی کالج میں آرکیٹیکچر (architecture) پڑھاتے تھے۔ دلچسپ لگے۔ خیر لیکچر تو کچھ ایسا نہ تھا، البتہ پروفیسر صاحب کمال کی شخصیت نظر آئے۔ میں نے دونوں کو بہت اللہ والا جانا۔ پروفیسر صاحب تو واپس اپنے شہر چلے گئے، آرکیٹیکٹ صاحب سے پھر ملاقات ہوئی، اور کافی باتیں بھی۔

لاہور آنے کے بعد، پچھلے دفتر جیسا بوجھ تو میرے ذہن پر نہیں تھا، مگر آہستہ آہستہ FATA کے علاقے میں حالات گہڑتے جا رہے تھے۔ ہماری فوج وہاں اُلجھتی جا رہی تھی۔ افغانستان کے مسلمانوں کے قتل و غارت میں امریکہ کا ساتھی ہونے پر بھی خاص دل تنگ رہتا۔ کافی وقت اللہ کی عبادت میں گزرتا، اور اس سے زیادہ اُس کی یاد میں، مگر کوئی سکون نہ پاتا۔ یہی سوچتا کہ شاید اتنا گرنے کے بعد اب اُٹھنا مشکل ہو رہا ہے۔ اللہ سے ناامیدی تو نہیں تھی، مگر ایک بے بسی کا احساس ضرور تھا۔ کبھی دل کرتا کہ کسی ایسے کو ڈھونڈ لوں جو راہ بتا سکے۔ تصوف کی کتابیں کئی سالوں سے پڑھ رہا تھا، لیکن اس راہ پر نکلنے سے خوف آتا۔ کچھ اس راہ پر چلنے والوں میں چھوٹا کارواج شریعت سے ہٹا ہوا لگتا۔ کچھ طور طریقے ایسے دکھائی دیتے جن سے ڈر لگتا کہ کہیں شرک کی راہ پر نہ چل پڑوں۔ ان کی بے خونی سے بھی ڈر لگتا۔ مگر اس راہ کے

نواں سفر خاکِ رہ

بارے میں کچھ زیادہ جانتا نہ تھا۔ پھر کسی بزرگ ہستی سے کبھی تعلق بھی نہیں رہا تھا۔ جن کا تذکرہ پہلے کیا ہے اُن سے بھی ریٹائرمنٹ کے بعد ملاقات ہوئی صرف اُن کے مریدوں سے اُن کی باتیں مجھ تک پہنچتی رہیں۔

آہستہ آہستہ آرکیٹیکٹ صاحب سے مراسم قائم ہو گئے، میرے گھر آنے لگے۔ مجھے کچھ تسبیحات بتائیں، جو میں لگاتار پڑھتا رہا، کچھ حاصل نہ ہوا۔ دین کا کچھ مختلف سارنگ پیش کرتے، جس میں خاصی دنیا داری اور کچھ رنگینی بھی نظر آتی۔ دو یا تین مرتبہ ان کے ساتھ پروفیسر صاحب کو ملنے بھی گیا۔ ان دونوں اشخاص کے پاس کچھ ایسے علوم تھے جن سے میں خاصہ متاثر ہوا، اور شروع میں انہیں دین کی راہ پر چلنے والی کوئی پہنچی ہوئی ہستی سمجھا، جسے غیب سے اشارے ملتے ہوں۔ اس سلسلے کا کچھ بھی جانتا نہ تھا، سوائے چند کاغذی باتوں کے۔ آہستہ آہستہ اللہ نے مجھ پر ان کی حقیقت کھولی۔ گزری ہوئی چند باتیں سوچ کر حیران ہوا، کہ اس عمر کو پہنچ کر اور اتنا تجربہ رکھنے پر بھی آخر میں اُس وقت چوگنا کیوں نہ ہوا۔ شاید میرے ذہن پر ان کے اثر نے میری، جو تھوڑی بہت مردم شناسی کی صلاحیت تھی، معذور کر دی تھی۔ آنکھوں پر پردہ پڑ گیا تھا۔

آرکیٹیکٹ صاحب کے کمرے میں نفسیات کی کتابیں بھری تھیں۔ یہی ان کا ہنر تھا کہ انسان کے ذہن کو کیسے قابو میں کیا جائے۔ اُن خواتین کے قصے سنا تے جو ان کے پاس سکون کی تلاش میں پہنچتیں، جن میں کچھ مشہور ماڈلز اور ایکٹریسیں بھی ہوتیں۔ کہتے تھے کہ زیادہ تر خوبصورت عورتیں ہی ذہنی پریشانی کا شکار ہوتی ہیں۔ شاید یہ قصے اس لئے سنا تے کہ میں بھی ان خواتین سے ملنے کا متمنی رہوں، اور یوں اُن سے تعلق قائم رکھوں۔ مگر میں نے کبھی ان کی کھوج نہ کی۔ آرکیٹیکٹ صاحب کئی حیرت انگیز قصے اور واقعات بھی بیان کرتے، جو اس راہ پر عموماً سننے میں آتے ہیں۔ مجھ سے پیسے بھی مانگتے رہتے۔ کہتے تھے کہ وہ کئی بیرون ملک سے تعلیم حاصل کرنے کے لئے آئی ہوئی لڑکیوں کی مالی امداد کرتے ہیں، اس لئے زکوٰۃ انہیں دیا کروں۔ پروفیسر صاحب نے بھی ایک منصوبہ بیان کیا کہ اگر کہیں پنڈی کے قریب زمین مل جائے، تو ایک مدرسہ اپنے طرز کی تعلیم دینے کے لئے کھولنا چاہتے ہیں۔ یہ تفصیلات اس لئے بتا رہا ہوں کہ ان لوگوں نے میرے بارے میں خاصی افسوسناک باتیں کیں۔

میرے آنے سے پہلے لاہور گیریزن میس میں ایک عمارت تعمیر ہوئی تھی جس میں کچھ نقص رہ گیا تھا۔ اس کا آرکیٹیکٹ اپنا پیسہ لے کر روانہ ہو چکا تھا، دوبارہ رابطہ نہ کرتا تھا۔ میں نے اپنے نئے دوست آرکیٹیکٹ صاحب سے کہا کہ اسے بھی دیکھ لیں۔ اُن ہی دنوں میں لگوانے پر آمادہ کر لیا، جو سندھ میں کسی جگہ سے نکلتا تھا۔ پھر ایک دن کہنے لگے کہ اس پتھر کی کان ختم ہونے والی ہے، پھر یہ ملے گا نہیں، ہم ابھی

سے منگوا کر رکھ لیتے ہیں۔ کچھ اور سامان بھی گھر کے لئے منگوانے کا کہتے رہے۔ میں ٹال مٹول کرتا رہا، مگر انہوں نے ایک تخمینہ لگا کر اس کے لئے مجھ سے اُنیس لاکھ تیس ہزار کا ایک چیک لے لیا۔ میں نے پلاٹ بیچا تھا، اُن کو علم تھا۔

میرے دل میں ان کے بارے میں کچھ شکوک ابھرنا شروع ہو چکے تھے، پھر بھی میں انہیں پیسے دے بیٹھا۔ گیریزن میس میں فوج کے انجنیر صاحب نے ان کی کچھ مشکوک کاروائیاں مجھے بتائیں تھیں، جس بنا پر میں نے آرکیٹیکٹ صاحب سے کہا تھا کہ وہ گیریزن میس کے کام کی طرف دوبارہ نہ جائیں۔ میں نے سوچا شاید کوئی غلط فہمیاں پیدا ہو گئی ہوں۔ اُس ہی شام وہ پھر گیریزن میس میں گئے اور وہاں کے انجنیر صاحب کو کچھ ہدایات دیں اور کہا کہ ان چھوٹی چھوٹی چیزوں پر کورکمانڈر صاحب کو تنگ کرنے کی ضرورت نہیں، میں خود سنبھال لوں گا۔ مجھے پتا چلا تو میں نے اُنہیں فون کیا اور ناراض ہوا، تو اُنہوں نے صاف انکار کر دیا کہ میں تو وہاں گیا ہی نہیں۔ دوسرے دن میں نے انہیں بلوایا اور پوچھا تو کہنے لگے فون پر غلط بیانی ہو گئی تھی، آئندہ ایسا نہیں ہوگا۔ پھر انجنیر صاحب کی بتائی ہوئی باتوں کا پوچھا، تو اُن کے پاس کوئی جواب نہ تھا۔ میں نے خاصی ناراضگی کے بعد اُن سے کہا کہ میرا چیک بھی واپس کر دیں اور دوبارہ تشریف نہ لائیں۔ وہ چلے گئے۔ مگر چیک واپس نہ ہوا۔ میں نے اپنے بینک کو کہہ کر چیک پر ادائیگی رکوا دی۔ پھر اس چیک کو اُن سے واپس لینے میں خاصے دن لگ گئے۔ واپس اس لئے لیا کہ یہ کہیں کوئی کہانی نہ بنا دیں، مگر جو کہانی انہوں نے بنائی تھی بنائی۔ مجھ سے کچھ نئے دوست بھی چھن گئے جس کا مجھے رنج ہے۔ یہ جنوری ۲۰۰۵ کا قصہ ہے۔ ان کی معذرتیں SMS پر بھی آتی رہیں، اور کچھ مرتبہ پروفیسر صاحب کے فون بھی، مگر میں نے جواب نہیں دیا۔ نہ جانے میرے جیسے کتنے ہی بیوقوف ان کے ہاتھوں میں کھلتے ہیں۔ سنا ہے پروفیسر صاحب کے پاس بڑے بڑے لوگوں کا، جن میں کچھ سیاستدان اور کچھ فوجی حضرات بھی شامل ہیں، خاصا آنا جانا ہے۔

کیسے کیسے یاروں کا بہروپ کھلا*

"یہ تم کیا کر رہے ہو؟"، جنرل مشرف صاحب نے فون پر ناراضگی سے پوچھا، "کیا ہوا، سر، خیریت ہے؟" میں نے کہا۔ انہوں نے پھر سوال کیا، "تم یہ DHA کی انکوائری کس غرض سے کر رہے ہو؟" مجھے کوئی جواب سمجھ نہ آیا۔ کہنے لگے، "مجھے خبر ملی ہے کہ تم تمام جنرل افسران کی DHA میں جائیداد کی تفصیلات اخباروں میں دینا چاہتے ہو!" ایک لیفٹیننٹ جنرل صاحب کا نام لیا اور کہا کہ انہوں نے مجھے بتایا ہے، "ایک خط بھی وہ میرے پاس لائے ہیں، جس میں ساری تفصیلات لکھی ہیں۔ جنرلوں کی جائیداد کی لسٹ بھی لگی ہے۔ یہ سب کیا ہو رہا ہے؟" میں نے پوچھا، "کس کا خط ہے؟" کچھ دیر ٹھہرے، شاید خط دیکھ رہے تھے، کہنے لگے، "نام تو نہیں لکھا"۔ گمنام (anonymous) خط تھا۔ میں حیران ہوا کہ ایک گمنام خط پر اتنا ردِ عمل۔ میں نے کہا، "آپ خود سوچیں، یہ ایک گمنام خط ہے، اس کی حقیقت ہی کیا؟" اُن کا فون میرے دل پر بہت گراں گزرا۔ ایک گمنام خط پہ مجھ پر اتنا بڑا سازش کا الزام! بس، اتنا ہی بھروسہ تھا اُس پر جس نے کبھی آپ سے دوغلی بات نہیں کی، کبھی کچھ نہ چُھپایا، اپنے احساسات بھی؟ کبھی اس وجہ سے بھی چُپ نہ رہا کہ بولنے میں میرا نقصان ہے۔ مگر اس بات کو میں خاموشی سے پی گیا۔

میں نے کہا، "اگر میں نے فوج کو بدنام کرنے کے لئے جنرلوں کے اثاثے کی لسٹ ہی اخبار میں چھپوانی ہوتی، تو اس سازش کا انکوائری کر کے اتنا ڈھنڈورا کیوں پیٹتا۔ DHA میرے ہی نیچے کام کرتا ہے، مجھے کچھ معلوم کرنے کے لئے انکوائری کی کیا ضرورت تھی؟ DHA کا سارا نظام کمپیوٹر پر ہے، ایک بٹن دبانے سے مجھے یہ لسٹ مل جاتی، آخر میں اس کا سربراہ ہوں۔" خاموشی سے سنتے رہے۔ پھر میں نے کہا، "یہ بھی دیکھیں کہ اگر مقصد صرف فوج کو بدنام کرنا ہے، تو اصل اثاثوں کا علم لگانے کی کیا ضرورت ہے؟ کوئی بھی شخص لسٹ بنا کر، کتنے ہی اثاثے لکھ کر، اخبار میں چھپوا دے، اس کو غلط ثابت کرنے کے لئے کوئی انکوائری تھوڑی کرے گا، یا اس جھوٹ کو سچ سے تو نہیں بدل سکے گا۔" انہیں یہ بتایا کہ انکوائری کے دوران DHA کا ایک افسر اس قسم کی دھمکی بھی دے چکا ہے۔ شاید بات اُن کی سمجھ میں آگئی۔ کہنے لگے کیا تم نے ان لیفٹیننٹ جنرل صاحب کو یہ باتیں نہیں بتائیں؟ میں نے کہا کہ انہوں نے مجھ سے ذکر ہی نہیں کیا، مجھے ملے ہی نہیں۔ کچھ حیران ہوئے، کہا اچھا میں یہ خط تمہیں بھیج رہا ہوں، اور اُن سے بھی کہوں گا کہ تم سے جا کر ملیں۔

خط ملا، لکھا تھا کہ چونکہ مجھے پروموشن نہیں دی گئی، اس لئے جنرل مشرف سے بہت نالاں ہوں اور سیاستدانوں سے مل کر، اپنے سیاسی عزائم کی خاطر، فوج کے خلاف سازش کر رہا ہوں، کہ جنرل مشرف کی حکومت کو بدنام کیا جائے۔ اس ہی قسم کی اور بھی باتیں لکھی تھیں۔

میں اس پر یقین کرنے والوں کی سوچ پر حیران تھا۔ فوج میں پہلے دن سے گمنام خطوں کو روڈی میں پھینکنے کو کہا جاتا ہے۔ پھر یہ کوئی عام سی شکایت تو نہیں تھی۔ ایک کورکمانڈر پر غداری جیسے الزامات پر یوں اتنی آسانی سے یقین کر لینا۔ کچھ سوچ ہی لیتے۔

لاہور آنے کے بعد، کافی دنوں تک DHA کے دفتر نہ جا سکا۔ جب پہلی مرتبہ گیا تھا تو ایک زمین دوز کمرے میں لے جایا گیا، جیسے فوج کا کوئی آپریشن روم ہو۔ دیوار پر نقشے بھی ویسے ہی لگے تھے۔ میں نے پوچھا یہ کیا ہے، تو کہا کہ آپ کو DHA کے نئے منصوبوں کی تفصیلات بتائیں گے۔ ان منصوبوں کو خفیہ رکھا جاتا ہے۔ جب تمام منصوبے مجھے سمجھا دیے، تو میں نے پوچھا کہ یہ سب راز میں کیوں رکھا ہے، تو جواب ملا کہ اگر لوگوں کو علم ہو جائے کہ ہم نئے منصوبے کہاں شروع کرنے لگے ہیں تو زمین کی قیمت چڑھ جائے گی۔ میں حیران ہوا کیونکہ DHA زمین کی قیمت ادا نہیں کرتا۔ ہر چار کنال کی زمین کے عوض ایک پلاٹ دیتا ہے۔ زمین بیچنے والے کو ان پلاٹوں کے کاغذ، جنہیں فائل کہتے ہیں، دے دیے جاتے ہیں۔ پھر جب یہاں کوئی فیز (phase) مکمل ہو جاتا ہے، تو ان فائلوں کو پلاٹ نمبر مل جاتے ہیں۔ اس طرح زمین بیچنے والے کو زمین کی قیمت سے کہیں زیادہ رقم ملتی ہے۔ جب میں نے پوچھا کہ آپ کا زمین کی قیمت چڑھنے سے کیا تعلق، تو کہہ دیا کہ بڑے مسئلے اور پیچیدگیاں پیدا ہوتی ہیں، آپ وقت کے ساتھ سمجھ جائیں گے۔ میں نے کہا اس بند کمرے میں جو لوگ بیٹھے ہیں اور DHA کے نئے منصوبوں سے واقف ہیں، اگر وہ زمین کے اصل مالک سے ساری زمین آج کی قیمت پر خرید لیں، تو کل یہی زمین DHA کو دے کر اربوں کے مالک بن سکتے ہیں۔ کہنے لگے ہو تو سکتا ہے مگر ہم ایسے کرتے نہیں۔ میں نے کہا کہ اگر آپ پہلے دن سے ہی اعلان کر دیں تو یہ منافع زمین کے اصل مالک، غریب کسان کو مل جائے۔ سب چپ رہے۔ لیکن میرے رہتے میں کوئی نئی زمین نہیں خریدی گئی۔ DHA پہلے ہی اتنی زمین لے چکا تھا کہ سنبھالنا مشکل ہو رہا تھا۔

میرے آنے کے کچھ ہی دن بعد ایک معاہدہ دستخط کے لئے لایا گیا، جس کے تحت ایک ملائیشیا کی کمپنی نے DHA میں ایک گالف کورس اور اس میں ایک رہائشی منصوبہ بنانا تھا۔ سمجھوتا مکمل ہو چکا تھا، بس دستخط رہتے تھے۔ میں نے کہا کہ دستخط بھی اُن سے کرانے تھے جنہوں نے منصوبہ بنایا تھا۔ مگر انہوں نے کہا کہ تیار کرنے میں کچھ دیر ہوگئی، سب ماہرین اور کنسلٹنٹس (consultants) نے دستخط کر دیے ہیں، آپ بھی کر دیں۔ میں نے اس پر ایک بریفنگ لی، پھر کچھ جانچ پڑتال کر کے اعتبار کی بنیاد پر دستخط کر دیے۔ کچھ ایسی چیزوں کا پہلے کا تجربہ بھی نہیں تھا۔ پھر کسی سے اس سلسلے میں بات ہوئی تو انہوں نے کہا کہ ملائیشیا کی کمپنی کو اس میں عام رواج سے زیادہ فائدہ ہے۔ میں نے پھر سے کاغذ منگوا لئے، اور کچھ غیر جانبدار تجربے کار لوگوں کو بھی بلوایا، جنہوں نے DHA کی اس رائے سے اختلاف کیا کہ ملائیشیا کی کمپنی جائز منافع لے رہی ہے۔ میں نے کہہ دیا کہ کمپنی کو بتادیں کہ ہم ایگریمنٹ ختم کرنا چاہتے ہیں۔ غلطی میری ہی تھی۔ سب کو کافی پریشانی ہوئی، مگر کمپنی کو لکھ دیا گیا۔

نواں سفر خاکِ دہ

کمپنی میں ایک جنرل صاحب ملازم تھے، جو اُن کی فوج کے پرانے سربراہ رہ چکے تھے۔ وہ پاکستان آئے، مجھ سے بھی ملے، GHQ جا کر وائس چیف کو بھی ملے۔ پریذیڈنٹ ہاؤس اور GHQ سے دباؤ آیا کہ تم ترقی کے منصوبوں میں رکاوٹ کیوں ڈال رہے ہو؟ اس منصوبے کو کیوں روکتے ہو؟ کئی مہینوں یوں ہی چلتا رہا، آخر کمپنی نے نئی شرائط پر ایگریمنٹ کر لیا، جس میں اُن کا منافع کافی حد تک گھٹا دیا گیا۔

DHA کے سلسلے میں جو شکایات آئیں، میں DHA کے ایڈمنسٹریٹر کو بھجوا دیا کرتا، اور وہ اُن کے جواب بھیج دیتے۔ شروع میں تو کافی دن میں اعتبار کی بنیاد پر کام کرتا رہا۔ میں ایڈمنسٹریٹر صاحب کو بہت سالوں سے جانتا تھا، دین دار آدمی تھے اور میں ان کی بہت عزت کرتا تھا۔ ایک مرتبہ DHA کے پرانے سیکرٹری، ایک ریٹائرڈ کرنل صاحب، میرے پاس تشریف لائے۔ اُنہیں میرے آنے سے پہلے، DHA سے برطرف کیا گیا تھا، اور بہت نالاں تھے۔ ایک موٹی سی فائل مجھے دی، اور کہا، "DHA میں بہت کرپشن ہوئی تھی، آپ کو آگاہ کرنا چاہتا ہوں، اس فائل میں تمام ثبوت موجود ہیں۔" میں نے اُن کا شکریہ ادا کیا اور فائل کو دراز میں رکھ دیا۔ سوچا گڑے مردے کیا اُکھاڑنے، نہ جانے کتنا سچ ہے، کتنا نہیں۔

کچھ عرصے بعد DHA سے ایک اور منصوبہ پیش کیا گیا۔ یہ ایک بجلی گھر لگانے کا تھا، جو پورے DHA کو بجلی فراہم کرتا۔ منصوبہ دیکھنے میں اچھا لگتا تھا، مگر اس کی کامیابی کا حساب اس بنیاد پر لگایا گیا تھا کہ بجلی کا استعمال اتنا ہوگا جتنا DHA کے تمام دس دس کے دس فیزیکل طور پر آباد ہونے پر ہو۔ میں نے کہا ہوش کرو، ابھی تو پانچواں فیزیکل نہیں ہوا، کیا یہ اگلے دس سالوں تک گھاٹے میں چلتا رہے گا؟ جواب ملا کہ فالتو بجلی واپڈا (WAPDA) کو بیچ دیں گے۔ پوچھا کہ کیا واپڈا سے معاہدہ ہوا ہے؟ تو پتا چلا کہ ابھی تو اُن سے اجازت تک نہیں لی۔ میں حیران ہوا کہ اس طریقے پر بجلی گھر کا منصوبہ مکمل کر کے، کمپنی سے معاملات طے بھی کر لیے اور مجھ سے منظور بھی کروانا چاہتے ہیں۔ کنسلٹنٹس اور ماہرین کو خاصی فیس بھی دے چکے تھے۔ منصوبہ ختم کروا دیا۔ یقیناً کچھ حلقوں میں ترقی رکوانے کا الزام ٹھہرا ہوگا۔

مجھے خبر ملی کہ DHA کے ایڈمنسٹریٹر صاحب کے بھائی DHA میں کچھ ٹھیکوں سے منسلک ہیں۔ میں نے اُنہیں ہدایات دیں کہ DHA کے کسی افسر کے خاندان کا کوئی فرد DHA کے کسی کام میں ملوث نہ کیا جائے، اور ہتھیار فروشوں سے متعلق اپنا پچھلا قصہ بھی سنایا۔ اُنہوں نے کہا ایسا ہی ہوگا۔ پھر کچھ عرصہ گزرنے کے بعد میں نے اُن سے کہا کہ کیا اس پر عمل ہو رہا ہے تو اُنہوں نے حامی بھری۔ میں نے کہا فلاں کمپنی کو آپ ٹھیکے دیتے ہیں، اس میں آپ کا بھائی ملازم ہے، تو کہنے لگے میں نہیں جانتا کہ میرا بھائی کہاں ملازمت کرتا ہے۔ میں نے کافی ناراضگی کا اظہار کیا، مگر معاملہ یہیں چھوڑ دیا۔

کچھ عرصے بعد پریزیڈنٹ ہاؤس سے ایک خط آیا، جس کے ساتھ کسی صاحب کا DHA سے کسی تنازعے پر شکوہ تھا۔ میں نے یہ خط DHA کو بھجوا دیا۔ پھر جواب آیا تو پریزیڈنٹ کے دفتر بھجوا دیا۔ چند دنوں بعد دوبارہ پریزیڈنسی سے خط آیا، جس کے ساتھ اُن صاحب کے جوابات لگے تھے اور کچھ متعلقہ کاغذات بھی۔ اُنہوں نے DHA کے دیئے ہوئے جوابات کو رد کیا تھا اور معقول نکتہ نظر پیش کیا تھا۔ میں نے جب DHA کے ایڈمنسٹریٹر سے دوبارہ پوچھا تو حسب اطمینان جواب نہ ملا۔ میں نے ایک بریگیڈیئر صاحب سے کہا کہ دونوں کے موقف کا جائزہ لیں۔ کچھ دنوں بعد اُنہوں نے بتایا کہ اُن صاحب کی بات ٹھیک ہے اور DHA میں اس سلسلے میں کافی گڑبڑ کی گئی ہے۔ پھر میں نے اُنہیں وہ فائل بھی دی جو سابقہ سیکرٹری صاحب دے گئے تھے، اور میرے دراز میں عرصے سے پڑی تھی۔ کہا کہ ان کاغذات کو بھی دیکھ لیں۔ جب ان میں بھی بہت خرابیاں نظر آئیں، تو میرے پاس باقاعدہ انکوائری شروع کروانے کے سوا، اور کوئی چارہ نہیں تھا۔

۱۹ جنوری ۲۰۰۵ کو انکوائری شروع ہوئی، جس کا پریزیڈنٹ بریگیڈیئر خلیل اللہ بٹ صاحب کو نامزد کیا، اور ان کے ساتھ تین لیفٹیننٹ کرنل صاحبان اور ایک میجر صاحب کو بھی لگایا۔ میں نے انہیں یہ بھی ہدایت دی کہ DHA ایڈمنسٹریٹر سے اوپر کی سطح پر آپ نہیں جائیں گے۔ میں نے سوچا کہ یہ میرا اختیار نہیں، اگر ضرورت ہوئی اور GHQ مناسب سمجھے گا، تو اس سے اوپر کی چیزوں کو وہ خود دیکھ لیں گے۔

انکوائری شروع ہوتے ہی ہر طرف کھلبلی مچ گئی۔ جنرل مشرف نے پوچھا تو میں نے کہا کہ انکوائری کر کے GHQ بھجوا دوں گا، وہ دیکھ لیں گے، پھر آپ جو مناسب سمجھیں، فیصلہ کریں۔ انکوائری چلتی رہی، مجھ پر ہر طرف سے دباؤ بڑھتا رہا۔ دوست، احباب سب ہی کسی نہ کسی کو بچانے کھڑے تھے۔ سب نے میرے خلاف صف آرائی کر لی۔ DHA کے ایک ریٹائرڈ کرنل صاحب جب انکوائری بورڈ کے سامنے آئے تو ایک کتابچہ ساتھ لائے، اور انکوائری کے صدر کو دھمکی دی کہ میرے پاس اس کتاب میں تمام فوج کے جنرلوں کی DHA میں جائیداد کا ریکارڈ موجود ہے، آپ مجھ سے پوچھ گچھ کریں گے تو یہ ریکارڈ باہر نکل جائے گا۔ انکوائری کے صدر نے اُن کی دھمکیوں پر دھیان نہ دیا اور انکوائری کرتے رہے۔ یہ قصہ مجھے بھی سنایا، مگر میں نے بھی دھیان نہیں دیا۔ یہیں سے وہ گمنام خط نکلا۔

پہلے یہ خط وائس چیف صاحب کے پاس لے جایا گیا۔ پھر کامیابی نہ پا کر، ملک کے صدر اور فوج کے سربراہ کو یقین دلوایا گیا کہ آپ کے خلاف، آپ کا کورکمانڈر سازش کر رہا ہے۔ کس ماحول میں میں رہ رہا تھا، میری سمجھ سے باہر تھا۔ خیر، کچھ دن بعد وہ لیفٹیننٹ جنرل صاحب مجھے ملنے میرے دفتر آ گئے۔ کچھ دیر بیٹھے ادھر ادھر کی باتیں کرتے رہے، پھر اُٹھ کر جانے لگے۔ شاید ان کو علم نہیں تھا کہ جنرل مشرف کی مجھ سے کیا بات ہوئی ہے، صرف مجھ سے ملنے کا حکم سن کر آئے تھے۔ نہ جانے پریزیڈنٹ صاحب کو واپسی پر کیا بتاتے۔ جب اُٹھ کر جانے

نواں سفر خاکِ رہ

کے لیے کھڑے ہو گئے، تو میں نے کہا کہ آپ جس مقصد سے بھیجے گئے ہیں، اُس پر کچھ کہا نہیں۔ ایک گمنام خط کے ذریعے آپ نے مجھ پر غزاری کے الزامات لگائے! میں نے کہا کہ آپ مجھے سال ہا سال سے جانتے ہیں، اگر ایسا کوئی مسئلہ بھی تھا تو کچھ تفتیش ہی کر لیتے، کچھ مجھ سے بھی پوچھ لیتے۔ نہایت ندامت سے کھڑے زمین کو تکتے رہے، اور صرف اتنا کہا کہ مجھ سے بہت غلطی ہو گئی۔ میں اُن کے بیٹے کو گود میں کھلاتا تھا اور ہمیشہ اُن کی بھلائی ہی کرتا رہا۔ اُن کے مستقبل کا تو مجھ سے کوئی تعلق بھی نہ تھا، کوئی تکرار نہیں تھی، پھر کس بنا مجھ پر اتنا گہرا زخم لگایا؟ سال ہا سال کی محبتیں کس کی خاطر یوں پانی کی طرح بہا دیں؟ وہ چلے گئے، میں بھیگی آنکھیں لئے اپنی کرسی پر جا بیٹھا۔

جب انکوائری ختم ہو گئی، اور میرے پاس آ گئی، تو مجھے خیال ہوا کہ شاید کوئی غلطی نہ ہوئی ہو اور کوئی معصوم اس میں نہ پھنس جائے۔ ایک نامور ریٹائرڈ جسٹس جناب محمد غنی صاحب سے درخواست کی کہ انکوائری کو تفصیل سے دیکھ لیں۔ اُنہوں نے نہایت ریاضت کے ساتھ شروع سے اس کا تفصیلی جائزہ لیا اور انکوائری کے تمام نتائج کو درست قرار دیا۔ قریب پانچ ماہ کی کاوشوں اور ۵۳ لوگوں کے بیانات قلم بند کرنے کے بعد، بریگیڈیئر خلیل صاحب نے انکوائری مکمل کی۔ بریگیڈیئر صاحب نہایت اعلیٰ کردار کے مالک تھے اور بے خوف کام کیا، جس کا صلہ انہیں فوج کی ناراضگی کی صورت میں ملا۔ انکوائری اس نتیجے پر پہنچی کہ DHA کی مینجمنٹ بے دھڑک مختلف نوعیت کی کرپشن میں ملوث تھی۔ ۸ جون ۲۰۰۵ کو میں نے اس پر دستخط کر کے GHQ بھیجوا دیا۔ وہاں یہ اٹک گئی۔ کئی مہینے گزر گئے، کوئی فیصلہ نہ آیا۔ جب پوچھتا یہی جواب ملتا کہ ابھی اسے دیکھ رہے ہیں۔ میری ریٹائرمنٹ کا وقت قریب آتا گیا۔ پھر پتا چلا کہ تمام نتائج جنرل مشرف کے سامنے پیش کئے جائیں گئے۔

میں راولپنڈی آ گیا۔ جنرل مشرف کو GHQ کی جانب سے تمام تفصیلات پیش کی گئیں۔ میٹنگ میں وائس چیف صاحب بھی موجود تھے، اور لیفٹیننٹ جنرل ضرار، جو مجھ سے پہلے لاہور کے کور کمانڈر تھے وہ بھی، جو ان دنوں GHQ میں فوج کی تربیتی کاروائیوں کی سربراہی کرتے تھے۔ اس کے علاوہ لیفٹیننٹ جنرل وسیم، جو GHQ میں ایڈجوٹنٹ جنرل تھے، اور لیفٹیننٹ جنرل شفاعت اللہ شاہ، جو چیف کے سٹاف افسر تھے۔ پروموٹ ہو چکے تھے اور لاہور کے نئے کور کمانڈر نامزد تھے۔ چیف کو باقاعدہ پریزنٹیشن (presentation) GHQ کے ایک میجر جنرل صاحب نے دی، جو فوج میں نظم و ضبط کے ذمہ دار تھے۔ سب ہی انکوائری کے خلاف تھے، کیونکہ صدر صاحب اس کے خلاف تھے، اسے ختم کرنا چاہتے تھے۔ پریزنٹیشن شروع ہوئی تو میرے آنے سے پہلے کی، DHA کی بہترین کارکردگی کی تفصیلات بیان کی گئیں، کہ اس ادارے نے فوج کے افسران کی بہبود کے لئے کتنی زمین حاصل کی اور کتنے نئے منصوبے بنائے، وغیرہ وغیرہ۔ میں نے ٹوکا کہ ہم ایک مخصوص انکوائری کے سلسلے میں بیٹھے ہیں، اُس کی بات کریں، کارکردگی اچھی ہونے سے خور بد کو آؤ نہیں ملتی۔

گل بارہ مختلف کیسز کی انکوائری کی گئی تھی۔ ہر ایک پر آدھی بات بتائی جاتی، یا بات کو گول مول کیا جاتا، اور ہر بار مجھے انکوائری سے پڑھ کر سنانا پڑتا، بات واضح کرنی پڑتی۔ پوری کوشش کی جا رہی تھی کہ تمام گند پر پردہ ڈالا جائے، انہیں کرپشن نہیں بلکہ غلطیاں ظاہر کی جائیں۔ مجھے ہر کیس پر خاصی بحث کرنی پڑی اور بار بار انکوائری کا حوالہ دینا پڑا کہ درست بات کیا ہے۔ کسی صاحب نے میری بات کی ذرا سی طرف داری کی، مشرف صاحب سے جھڑک پڑی، خاموش ہو گئے۔ آخر میں GHQ کے جنرل صاحب نے سلائیڈ دکھائی جس پر لکھا تھا کہ یہ تمام غلطیاں ہیں اور کام کو صحیح طور پر نا سمجھنے یا جلدی میں کرنے کی بنا ہوئی ہیں۔ یہ سلائیڈیں پہلے کی تیار کی ہوئی تھیں، اور جو کچھ سب کے سامنے اب کھل چکا تھا وہ مختلف تھا۔ جنرل مشرف کو بھری محفل کے سامنے کہنا پڑا کہ یقیناً یہ سب غلطیاں نہیں ہیں، باقاعدہ منصوبہ بندی کے ساتھ کرپشن ہوئی ہے۔ کہا کہ انہیں سزا ملنی چاہیے۔ فوراً جنرل صاحب نے اگلی سلائیڈ دکھائی، جس میں ہلکی پھلکی سرزنش کی سفارش تھی۔ میں اس سفارش کو سن کر بے ساختہ با آواز بلند ہنس پڑا، اور چیف صاحب کی طرف دیکھا۔ کہنے لگے نہیں، انہیں تو سزا ملنی چاہیے۔ سب خاموش رہے۔ پھر کوئی ان کی امداد کو آیا، اور کہا، "سر، آپ کو اسی وقت فیصلہ سنانا تو ضروری نہیں۔ اور بھی امور ہیں جن پر غور کرنا ہوگا۔ آپ سوچ بچار کے بعد دفتر میں بیٹھ کر فیصلہ کر لیجئے گا۔" وہ یہ سن کر خوش ہوئے اور اٹھ کھڑے ہوئے۔ کہنے لگے، "ہاں یہ ٹھیک ہے۔"

مجھ سے رہانہ گیا۔ وہ ابھی میٹنگ کے کمرے سے نکلنے نہ پائے تھے کہ میں نے پیچھے سے کہا، "سر آپ جب اور امور پر غور کریں، تو اس بات پر بھی غور کر لیجئے گا کہ میری ساری کور اس انکوائری کے نتائج سے واقف ہے۔" وہ میری آواز سن کر ٹھہر گئے اور پیچھے پلٹ کر دیکھا، ایک ہاتھ اٹھا کر ہتھیلی میری طرف کی اور خفگی سے برا سامنے بنا کر کہا، "پتا ہے یار، مجھے پتا ہے۔"

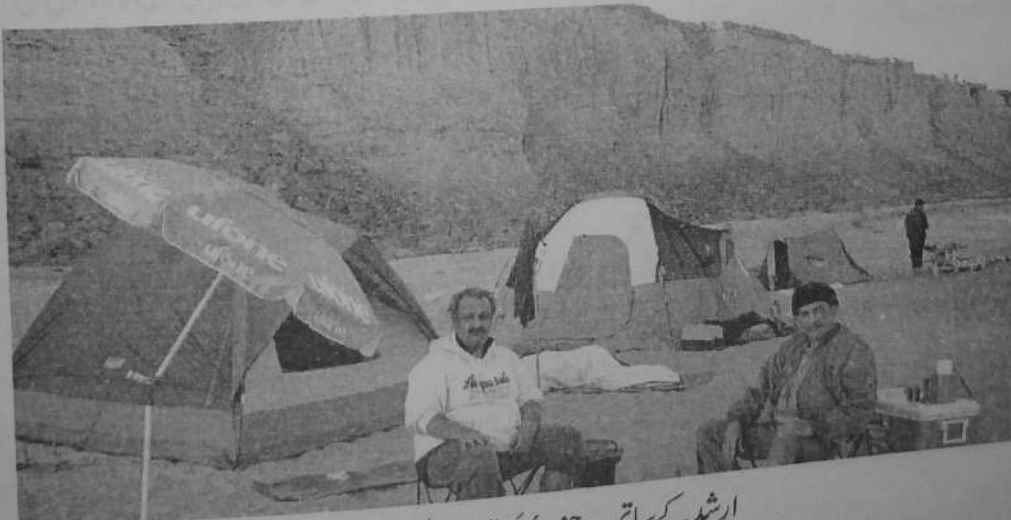
فوج کے زیر انتظام لاہور میں کچھ اور بھی رہائشی منصوبے چل رہے تھے۔ وہ بھی میں نے بند کروا دیے تھے۔ انکوائری دوبارہ GHQ میں دیکھی گئی، اور کافی دن یوں ہی لٹکی رہی۔ میری ریٹائرمنٹ تک کوئی فیصلہ نہیں سنایا گیا۔ ریٹائرمنٹ کے کافی دنوں بعد پتا چلا کہ سب ہی نے چھوٹ پائی۔



زیشان اور لینا کے ہمراہ



وادی گاشو، شمالی علاقہ



ارشاد کے ساتھ، جزیرہ آستولا، بلوچستان

اب اپنے جسم کے سائے میں تھک کے بیٹھ رہو *

جب ایئر پورٹ پہنچ کر ہم گاڑی سے اترے تو جنرل مشرف نے میرے گلے میں ہاتھ ڈال لیا۔ ہم جہاز کی طرف چل رہے تھے۔ بیگمات بھی دوسری گاڑی سے اتر کر جہاز کی طرف جا رہی تھیں۔ میری ریٹائرمنٹ میں کچھ ہی عرصہ رہ گیا تھا۔ کچھلی مرتبہ بھی جب لاہور آئے تھے، مجھ پر اصرار کرتے رہے کہ ریٹائرمنٹ کے بعد کوئی اور نوکری کر لو۔ پوچھا کہ کیا کرنے کا ارادہ ہے؟ میں نے کہا کچھ نہیں، تو کہنے لگے کہ آرمی ویلفیئر ٹرسٹ (AWT) میں آ جاؤ۔ میں نے کہا نہیں اب کافی نوکری کر لی، اب آرام کروں گا۔ کہنے لگے، "کچھ اور کرنا ہے تو بتاؤ۔ اگر چاہتے ہو کہ کہیں باہر چلے جاؤ تو سفیر بھیج دیتا ہوں۔" کافی زور دیا کہ کچھ تو کر لوں، مگر میں نے کہا نہیں کچھ بھی کرنے کا ارادہ نہیں۔ اس مرتبہ جب آئے تو ہم کسی سڑک کے افتتاح کے لئے گئے، وزیر اعلیٰ صاحب بھی وہاں موجود تھے۔ واپسی پر، ایئر پورٹ کی طرف جاتے ہوئے، گاڑی میں کہنے لگے، "تم سعودی عرب سفیر کے طور پر کیوں نہیں چلے جاتے؟" شاید سوچا ہو کہ مذہبی رجحان ہے، وہاں جانے پر خوش ہوں گا۔ میں نے انکار کیا تو کہنے لگے، "کیوں؟ یہ تو بڑی اچھی پوزیشن ہے، فورسٹار جنرل کی جگہ ہے۔" میں چُپ رہا، میرا دل اور کچھ بھی کرنے پر آمادہ نہیں تھا۔ جی بھر چکا تھا۔ ارادہ تھا کہ آرام سے گھر بیٹھوں گا۔ گھر ابھی بننا شروع ہی ہوا تھا۔

جہاز کی طرف جاتے ہوئے انجم کو دیکھ کر کہنے لگے، "انجم، تمہارے میاں تو کچھ کرنا ہی نہیں چاہتے"، پھر مجھ سے مخاطب ہو کر کہا، "شاہد کچھ نہیں کرو گے تو بور ہو جاؤ گے۔" نہ جانے کیوں میرے منہ سے اچانک ہی نکلا، "سر، اب اتنا بھی بور نہیں ہوں گا کہ ایک آقا رکھ لوں۔" فوراً ہی کندھے سے ہاتھ اٹھا لیا اور تیز تیز چل کر جہاز پر سوار ہو گئے۔ پیچھے مُڑ کر بھی نہیں دیکھا۔ مجھے ایسا کہنا تو نہیں چاہیے تھا، وہ شاید مجھ پر عنایت کر رہے تھے، مگر خود ہی منہ سے نکل گیا۔ کہہ کر افسوس ہوا۔

اگلی مرتبہ جب آئے تو میرے لاہور کے قیام میں اُن کی یہ آخری وزٹ تھی۔ کہنے لگے، "تمہارا لاہور میں بہت اچھا نام ہے، لوگ تمہاری بہت تعریف کرتے ہیں۔" میں چُپ رہا۔ پھر کہا، "NAB ملک کا بہت اہم ادارہ ہے۔ آج اس کا امیج (image) خراب ہو چکا ہے۔ میں چاہتا ہوں کہ تم NAB کو سنبھال لو۔ ملک کے لئے ضروری ہے۔" میں نے کہا، "سر، اگر ایسا کوئی کام ہے جس میں میری ضرورت ہے، تو میں حاضر ہوں۔" یوں میں نے NAB کو سنبھالنے کی حامی بھری۔ ناپینا کو کون راہ دکھائے۔

نواں سفر خاکِ رہ

دفتر میں یہ میرے آخری دن تھے۔ اتنے سال وردی میں گزار کر، اب فوج چھوڑتے وقت طبیعت پر کچھ اُداسی سی چھائی ہوئی تھی۔ وہ روز و شب جن کا میں عادی ہو چکا تھا، جو میری زندگی کا حصہ بن چکے تھے، وہ اب ہمیشہ کے لئے ختم ہو رہے تھے۔ وردی اُتارنے میں کچھ ہی دن رہتے تھے کہ میرے ایک کورس میٹ ریٹائرڈ میجر امین الرشید عباسی صاحب ملنے آئے۔ انہوں نے بھی میرے ساتھ ہی PMA میں ٹریننگ کی تھی، مگر میجر بن کر فوج چھوڑ دی تھی۔ کہنے لگے، "شاید آپ کو یاد نہ ہو، ہم دونوں نے ایک ساتھ ہی کوہاٹ میں ISSB کا امتحان دیا تھا اور ہم ایک ہی کمرے میں ٹھہرے تھے۔ جب آخری دن آپ نے کمانڈ انٹ کے انٹرویو کی بات مجھے بتائی تو میں سن کر بہت جلن کا شکار ہوا۔ میں نے سوچا کہ ایسے ہی مجھے متاثر (impress) کر رہا ہے، جھوٹ بولتا ہے۔ پھر اُس دن کے بعد، PMA سے لے کر اب تک آپ میری نظروں میں رہے۔ آج میں یہ بتانا چاہتا ہوں، کہ فوج میں آپ کا کردار دیکھ کر مجھے یقین ہے کہ آپ نے اُس دن سچ کہا تھا۔" میں اس قصے کو بھول چکا تھا، اُن کے کہنے پر یاد آیا۔

ہوایوں تھا کہ ISSB کے دوران ہمیں کہا گیا کہ اپنی زندگی کا کوئی یادگار واقعہ لکھیں۔ اُن دنوں کی شکستِ عشق کا تذکرہ تو کر نہیں سکتا تھا، کالج سے نکالے جانے کا قصہ بیان کر دیا۔ پھر جب ماہرِ نفسیات کا انٹرویو ہوا، تو اُس نے اس بارے میں سوالات کئے۔ شاید یقین کرنا چاہتا تھا کہ ماجرہ حقیقت ہی ہے۔ جب ISSB ختم ہو گیا تو ہمیں پاس ہونے کی خبر بھی مل گئی اور ہم اپنے کمروں میں آکر واپس جانے کی تیاری کرنے لگے۔ میرے روم میٹ، ان ہی میجر صاحب نے پوچھا کہ آخری انٹرویو کیسار ہا؟ اس انٹرویو میں کمانڈ انٹ کے علاوہ باقی امتحان لینے والے افسران اور ماہرِ نفسیات بھی موجود تھے۔ میں نے بتایا کہ چند سوالات پوچھنے کے بعد کمانڈ انٹ اپنی کرسی سے اُٹھ کر میز سے آگے آئے، مجھ سے ہاتھ ملایا اور کہا کہ مجھے فخر ہے کہ تم PMA جا رہے ہو، اور یقین ہے کہ تم وہاں باقی کیڈٹس کے لئے ایک اچھی مثال قائم کرو گے۔

میجر صاحب کہنے لگے کہ میں اپنی شرمندگی کا اظہار کرنے آیا ہوں۔ اگر میں نے آپ کی بات کو سچ جانا ہوتا تو آپ سے اتنا دور نہ رہتا۔ اُن کی بڑائی ہے کہ انہوں نے یہ کہا۔ مجھے اُن کا یوں کہنا بہت اچھا لگا۔ کیا خبر تھی کہ کم عمری کی حرکتیں مجھے ڈبونے کے بجائے میری عزت کا سبب بنیں گی۔ اور وردی اُتارنے وقت کوئی اتنا پرانا قصہ مجھ سے یوں بیان کرے گا، کہ میرے دل کو چین آجائے، کہ تم نے فوج میں زندگی برباد نہیں کی۔ بے شک اللہ جو چاہتا ہے کرتا ہے۔ الحمد للہ۔

وردی کے آخری سال ایک ریٹائرڈ بریگیڈئیر صاحب کا خط بھی ملا، سنبھال کر رکھ لیا تھا۔

نوال سفر خاکبردار

Brig (R) Abdul Qayyum Khan
House No. 48, Askari - 8
Airport Road, Chaklala - Rawalpindi
Tel : (051) 5951204

8 March, 2005

My dear General,

عزیز

Trust this letter finds you in good health.

During a usual morning walk one day, while sharing and cherishing among ourselves (a group of retired officers) pleasant memories of our long association with Army and discussing present day environments, your person came under discussion for a while. I am extremely happy to inform you that everyone in the group spoke so high of your honesty, integrity, dedication, professionalism and exemplary conduct as leader and human being. Such unbiased opinion is a tribute to your personal qualities earned by you through hard work. You should be proud of it. Kindly accept my heartiest congratulations for enjoying excellent reputation. It will, I am sure, go a long way in building up image of the Army - so close to my heart.

These remarks may not matter to you so much but I thought that my sincere feelings must reach a person who has earned good reputation genuinely.

I sincerely pray to Allah Almighty to continue to shower his blessings on you and your family and provide you still greater strength of conviction and faith to pursue your noble mission.

May Allah be with you always. Ameen.

Yours sincerely,

A. Q. Khan

Lt Gen Shahid Aziz
Commander 4 Corps
Lahore Cantt.

ایسے ہی اللہ دلوں کو سکون پہنچاتا ہے۔ اس ہی طرح کا ایک خط اور ملا جو میری یونٹ کے ایک ریٹائرڈ کرنل صاحب نے لکھا تھا، جو سالوں سے مجھے جانتے تھے۔ اگلے صفحے پر رکھ دیا ہے۔

DHA کی انکوائری کا کیا انجام ہوگا، میرے سامنے تھا۔ ہر ایک کے لئے ذاتی مفادات اہم ترین تھے، فوج تو کسی کی بھی نہیں ہوتی، اور نہ ہی جھوٹ اور سچ کو کوئی انمول سمجھتا ہے۔ دنیا کی نظر میں اگر وہ سب ٹھیک تھے، تو پھر میں ہی جھوٹا قرار پایا۔ جھوٹے کورمانڈر کی کیا عزت۔ یہ فوج کی قیادت کی جانب سے میرا الوداعی تحفہ تھا۔ جب آخری بار وردی پہن کر GHQ گیا، سوچا تھا اپنے چیف سے الوداعی ملاقات ہوگی، مگر انہوں نے مناسب نہ سمجھا۔ وائس چیف جنرل احسن سلیم حیات سے اُن کے دفتر میں ملاقات کی۔ دفتر سے نکلتے وقت اُن سے کہا، "سر، اب وردی اُتارنے جا رہا ہوں۔ سوچا تھا اتنے سال نوکری کر کے، یہاں سے بہت سی عزت لے کر جاؤں گا، مگر افسوس کہ آج صرف بہت سے پیسے لے کر جا رہا ہوں، عزت نہیں۔" وردی پہنے کورمانڈر کی آنکھوں میں آنسو زیب نہیں دیتے۔ باہر نکل کر گاڑی میں بیٹھا اور لاہور کے لئے روانہ ہو گیا۔

۱۲ اکتوبر ۱۹۹۹ کو حکومت کا تختہ الٹا تھا۔ ۱۲ اکتوبر ۲۰۰۱ کو ترقی پا کر لیفٹیننٹ جنرل بنا، اور آج ۱۲ اکتوبر ۲۰۰۵ کو فوج سے ریٹائر ہو کر اُس گھر جا رہا تھا جو تھا نہیں۔ یہ خوابوں کی چھٹی برسی تھی۔ گاڑی میں بیٹھا کھڑکی سے، گزرتی زندگی کو دیکھتا رہا، سب ہی اس کے تعاقب میں چلے جا رہے تھے۔ جیسے میں چلتا رہا۔ کیا پایا، کیا کھویا؟ کون جانے؟

فضا کی ٹھہری ہوئی سانس پھر سے چلنے لگی *

عبدالتین خان

پشاور

۵ دسمبر

عزیزی جنرل شاہد عزیز

السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ

طویل غیر حاضری کے لئے معذرت خواہ ہوں۔ مجھے افسوس ہے کہ میں آپ کو ”عسکری“ زندگی سے الوداعی موقع پر مل نہ سکا۔ حالانکہ میری شدید خواہش تھی کہ ”باوردی“ جنرل شاہد عزیز کے ساتھ دفتر میں نوٹو کھینچ کر تیزی سے گزرنے والے لمحات کو ساکن و ساکت کر کے اپنے پاس محفوظ کر کے ان کو یادگار اور تاریخی بنا دوں۔ مگر چند خواہشات ایسی ہوتی ہیں جن کو اللہ پاک ہمارے فضاء کے مطابق پورا نہیں کرتا۔ جس میں ہم سب کی خیر اور بہتری ہوتی ہے۔ ہمارے لئے یہ کیا کم خوشی و اعزاز کی بات ہے آپ نے مکمل عزت و احترام کے ساتھ عسکری زندگی کو بام عروج پر خیر اباد کہا۔ یقیناً یہ عزت و مرتبہ بزور بازو نہیں ملتا۔ بلکہ صرف اللہ کے کرم و مہربانیوں سے خوش نصیب لوگوں کو عطا ہوتا ہے۔ یہاں یہ میں ضرور ذکر کرنا پسند کروں گا کہ آپ کا اضافی اعزاز یہ بھی ہے کہ لوگ آپ کا احترام باطنی طور پر بھی کرتے ہیں۔ میرے ناقص خیال کے مطابق کسی کے لئے یہ سب سے قیمتی متاع و سرمایہ حیات ہے۔ آپ ہمیں اکثر یہی چند نصیحت کرتے تھے کہ عزت وہ ہے جو لوگ آپ کے پیٹھ پیچھے کریں۔ شکر ہے کہ یہ سعادت آپ کو اللہ نے بخشی ہے۔

میں بے جا ”قصیدہ گوئی“ نہیں کر رہا بلکہ ایک عیاں و بین حقیقت بیان کر رہا ہوں۔ میں نہایت فخر کے ساتھ کہہ سکتا ہوں کہ میں نے آپ کے صحبت میں عسکری زندگی کے وہ چند بنیادی اصول سیکھے جس پر چل کر ہماری شخصیت و کردار کو ایک نئی جہت ملی۔ آپ کے ساتھ براہ راست وقت اگرچہ بہت کم تھا اور وہ بھی ہم نے نادانی و جوانی میں صحیح استعمال نہیں کیا۔ تاہم اس قلیل دورانے کے اثرات ابھی تک باقی ہیں۔ آپ کے ڈھیر ساری نصیحتوں، مشوروں اور ہدایات میں سے چند پر عمل کرنے کی کوشش کرتے ہیں جس کی وجہ سے لوگ ہماری بھی تعریف و توصیف کر جاتے ہیں۔ آپ نے لوگوں کو کوئی نئی بات نہیں بتائی ہے بلکہ ایک ابدی و ازلی سچائی کے اصول بتاتے رہے ہیں۔ جو ہر ”بڑا“ روایتی انداز میں بتاتا ہے۔ مگر آپ کا کمال یہ رہا ہے کہ نہ صرف ایک خشک اور کڑوی کیسلی تلخ حقیقتوں کو نہایت موثر انداز میں پیش کی بلکہ اس پر خود بھی عمل کرنے کی کوشش کر کے ثابت کیا کہ اس بے عمل دور میں بھی ”اصول پسندی اور اس پر عمل داری“ ممکن ہے۔ اپنائیت، سچ، محبت، دیانت داری، بے تکلف زندگی گزارنے کا سائل، تصنع و بناوٹ سے نفرت، کروفر سے بے زاری، اخلاص اور ذاتی کردار کی بلندی جیسے اصول و قاعدے آپ سے سیکھے ہیں۔ اگرچہ یہی باتیں ہم پہلے بھی سنتے آئے ہیں۔ مگر اس کا اثر اسلئے نہیں ہوتا تھا۔ کہ یہ سب باتیں ہر افسانوی، لگتی تھیں۔ کیونکہ اس کا پرچار کرنے والے اس کو قصہ پارینہ سمجھ کر ذاتی و اجتماعی زندگی میں اس پر عمل کرنے سے قاصر تھے۔ جبکہ

آپ نے اس پر عمل کر کے ثابت کیا کہ یہ سب کچھ اس دور میں بھی ممکن ہے بشرطیکہ عزم بلند اور ارادے نیک اور اونچے ہوں۔ اس بات کی گواہی آپ کا ”کرنیلی سے جرنیلی“ تک عملی سفر دے چکا ہے۔ حالانکہ یار لوگ اس کو خود کشی سمجھتے ہوئے کئی مرتبہ آپ کو اس روش سے روکنے کی کوشش کرتے رہے ہیں۔ جسکا میں بھی عینی شاہد ہوں یہ حقیقت ہے کہ اخلاص نیت سے کام کا اجر اللہ تعالیٰ دیتا ہے۔ بندہ بے بس و مجبور کیا کر سکتا ہے۔ ”نیت صاف منزل آسان“ کا مقولہ آپ کی زندگی پر صحیح معنی میں پورا اترتا ہے۔ ہم سب دعا گو ہیں کہ آپ کی بقایا زندگی بھی اس عزت و احترام سے گزارے آئین ثم آئین۔

آپ تو شروع سے احتساب کے قائل رہے ہیں بلکہ اس کی شدید خواہش تھی کہ اعلیٰ سطح پر احتساب ہی کے ذریعے ملکی و فوجی نظام کو ٹھیک کیا جاسکتا ہے۔ نجلی سطح پر غبن کرپشن صرف اس وجہ سے ممکن ہو جاتی ہے جب بالائی طبقہ اس میں بنفس نفیس شامل و شریک کار ہو۔ اعلیٰ عہدیداروں کی نالائق و حوص زر کی وجہ سے عوامی دولت اور قومی خزانے کو لوٹا جاتا ہے۔ شائد اللہ نے آپ کے دل میں موجزن درمندانہ تڑپ کو دیکھ کر ملک کے اعلیٰ ترین احتسابی ادارے کا سربراہ مقرر کیا ہے جو بیک وقت ”اعزاز و آزمائش“ ہے۔ اعزاز اس لئے کہ قوم و ملک کی لوٹی ہوئی دولت کے بحر میں کو کيفر کردار تک پہنچانے کیلئے قائم کردہ ایک کمسن مگر نیک نام ادارے کی سربراہی کیلئے چناؤ اس امر کی شہادت ہے کہ مقتدرہ حلقوں کی آپ کی ذات و شخصیت پر کھلا اعتماد ہے۔ اور آپ کی ذات کسی بھی شک و شبہ سے بالا تر ہے۔ قومی مجرموں کو کيفر کردار تک پہنچانے کیلئے جس جرات، عقل مندی اور اہلیت کی ضرورت ہوتی ہے کہ وہ سب آپ کی ذات میں بدرجہ اتم موجود ہیں۔ بے شک اس ضمن میں اخباری تبصرے بھی یہ گواہی دے چکے ہیں کہ اس نیک کام کے لئے آپ کا انتخاب لا جواب اور ایک امید نو کی مانند ہے۔

سوالحمد للہ۔

دوسری جانب ”آزمائش“ اس لئے کہ یہاں ہر جگہ گند، تعفن اور غلاظت پائی جاتی ہے۔ مقابلے پر ہزاروں ایسے مکار، عیار اور چالاک تجربہ کار مجرموں کے ایک مربوط نیٹ ورک سے واسطہ پڑیگا جو اپنی جان بچانے کیلئے کوئی بھی پست سے پست حرکت کر سکتے ہیں۔ ”اندھوں کے شہر میں“ آئینہ دکھا کر ان کے اصلی چہروں سے نقاب اٹھانا خاصہ مشکل کام ہے۔ یہاں آپ کی زندگی پل صراط کے سفر کی مانند ہے تاہم ناامید ہونے کی کوئی ضرورت نہیں۔ وہی اللہ ہے جو عزت و مرتبہ دیتا ہے انشاء اللہ یہاں بھی آپ سرخرو ہونگے۔ جس طرح ماضی میں آپ ایک صاحب جنوں مشہور تھے جسکا اگلے رینک میں ترقی کے امکانات مروجہ فوجی قاعدوں اور ضوابط اور ”کلچر“ کے حساب سے ناممکن اور مشکوک لگتی تھی مگر آپ کو اللہ نے یہ توفیق عطا فرمائی کہ ہر دور میں طارق بن زیاد کے فلسفہ کے مطابق کشتیاں جلا کر ایک اصولی فلسفے پر پابند رہے۔ بلکہ ترقی کے معراج تک پہنچنے میں کامیاب و کامران ہوئے۔ انشاء اللہ احتسابی میدان میں بھی آپ سرخرو رہیں گے۔ کیونکہ یہاں آپکا واسطہ ”بحر میں“ کے ساتھ پڑیگا جن کے ساتھ اللہ کی مدد شامل حال نہیں ہوگی۔ اور نہ ہی لوگوں کی دعائیں۔ عام پاکستانی تو یہ چاہے گا کہ انکی مشکلیں کس کر زندہ دیواروں میں چنوا دیا جائے مگر یہاں بھی انصاف کا عمل اور تقاضے پورے ہونا ضروری ہیں

ورنہ بے احتسابی ہو جائیگی۔ جیت ہمیشہ حق کی ہوتی ہے۔ اخلاص نیت سے شروع کردہ کام میں اللہ کی مدد شامل حال ہوتی ہے۔ آپ نے ایک ”مجاہدانہ“ زندگی گزاری ہے۔ اب ایک ”مجاہداتی زندگی“ کا آغاز ہوا ہے جو جہاد کبیر کے زمرے میں آتا ہے۔ کیونکہ اس میں ”مجاہدہ“ زیادہ ہے یہاں ”جہاد بالسیف“ کے بجائے ”بالقلم“ ہے۔

سر:

میں شائد زیادہ جذباتی ہو گیا ہوں۔ کچھ باتیں بالمشافہ ملاقات کے لئے بھی رکھ لینا چاہئے۔ ہم سب آپ کی اس نئی ذمہ داری پر بہت خوش ہیں اور دعا گو ہیں کہ وہ ذات باری اس پیچیدہ اور ”پراسرار اور موزی دنیا“ کے بکھیروں میں وہ طاقت اور حوصلہ دے جس کی آپ کو ضرورت ہے۔

زلزلے کی تباہ کاریوں اور لوگوں کی بحالی کے کاموں میں گو کہ براہ راست موقع نہیں ملا۔ تاہم ذاتی سطح پر کویت کے پرائیویٹ این جی او کے ساتھ مل کر تھوڑا بہت حصہ لیا۔ وقتاً فوقتاً بالاکوٹ، گڑھی حبیب اللہ، بنگرام اور جوڑی کے علاقوں کا دورہ کیا۔ کویتی این جی او نے میری مہیا کردہ معلوماتی فلموں سے متاثر ہو کر اپنے تین وفد بھیجے جنہوں نے فوری مدد کے تحت ۴۰۰ خیموں اور دوٹرک سامان مہیا کیا جو گڑھی حبیب اللہ میں دس بلوچ کے زیر انتظام ”خیمہ بستی“ میں کام آیا۔ تعمیر نو اور بحالی کیلئے ہم نے ”جوڑی“ ویلی کا انتخاب کیا جو سڑک کے آخری سرے پر ہے۔ تقریباً نو چھوٹے گاؤں پر مشتمل علاقے کا انتخاب کر لیا گیا ہے جلد ہی یہاں تباہ شدہ مکانات (۹۲۰) کی تعمیر نو کا کام شروع کر لیا جائیگا۔ یہ ادارہ ہر گاؤں میں سکول، مسجد، ڈسپنسری اور صاف پانی مہیا کرنے کا بندوبست بھی کریگا۔ تخمینہ سولیس ڈالر ہے۔ اللہ کا لاکھ لاکھ شکر ہے کہ مجھے یہ توفیق دی کہ اس مشکل مرحلے میں کسی کے کام آؤں۔ اور اس کار خیر میں حقیر سا حصہ ڈال سکوں۔ مستقبل میں جب بھی کویت سے وفد آئیگا تو میری درخواست ہے کہ آپ ان سے ملاقات کر لیں کیونکہ اس طرح ان کی حوصلہ افزائی ہو جائیگی اور شائد وہ امداد میں مزید اضافہ کر سکیں۔

آخر میں ہم سب دعا گو ہیں۔ کہ اللہ تعالیٰ آپ کو وہ بصیرت اور بصارت اور حوصلہ و قوت عطا فرمائے جو ظلمتوں کے اس اٹھانے والے گہرائیوں پر مشتمل دنیا میں صحیح صحیح سراغ لگا کر ”مجرمین“ کو کفر کردار تک پہنچا سکیں۔ آمین ثم آمین۔

آپ کا برادر خورد

عبدالتین البورقیہ



یہ خاموشی کہاں تک؟ لذتِ فریاد پیدا کر *

نہ چاہتے ہوئے فوج میں آیا تھا، ۳۷ سال وردی میں گزار دیے۔ اس ہی کے رنگ میں گھل گیا۔ یہ میری نس نس میں سما گئی، میری محبت بن گئی۔ اس کے تصور نے مجھے اپنے اندر ڈبولیا۔ عشق میں فدا ہو جانے کا تصور ہی ایسا ہے۔ یہ مجھے ویسی نہ دکھائی دیتی جیسی سب کو نظر آتی ہے، بلکہ میں اسے خود سے بہت اُوپر دیکھتا، نور کی طرح چمکتی ہوئی۔ ایسا نور جس میں میرے جیسے کالے دلوں نے بہت سیاہی گھولی، مگر وہ پھر بھی چمکتا ہے، آسمانوں میں رہتا ہے۔ اسے اُن جوانوں نے اپنے خون سے نور بخشا، جنہوں نے ہاتھ بڑھا کر موت کو گلے لگا لیا۔ اسے موت نہیں، قربانی بھی نہیں، جیت سمجھا۔ جنہوں نے اپنی محبت کو اپنے جسم کے ٹکڑوں سے سجایا، پھر اس کا جشن منایا۔ جنہوں نے کوئی لگن اپنی ذات سے اُوپچی مانی۔ جنہوں نے آسمان کو چھو لیا۔

اس ہی مٹی کا تو سپاہی تھا جو بارودی سرنگ اپنے پیٹ پر باندھ کر حملہ آور دشمن کے ٹینک کے نیچے جا لیٹا۔ پھٹ گیا۔ اُس نے سوچا بھی نہیں کہ اُس کے بچوں کا پیٹ کون بھرے گا، بوڑھی ماں کو کون دلا سہ دے گا، باپ کس کے کندھے پر ہاتھ رکھ کر چلے گا۔ مڑ کر پیچھے دیکھا بھی نہیں۔ بس دل نے ایک بار اللہ اکبر کہا تھا۔

تم اُس پر انگلیاں اٹھاتے ہو؟!

اُس پر آوازے کتے ہو جس کی لاش کے ٹکڑے آج بھی سیاچن کی سرد چٹانوں پر بکھرے پڑے ہیں، جنہیں کوئے نوچتے ہیں؟ اُس پر، جس کے ناخنوں میں اب بھی وہ کائی پھنسی ہوئی ہے جو اُس نے پیٹ بھرنے کے لئے اپنی منجمد انگلیوں سے، کارگل کی کسی چوٹی پر، پتھروں کے پیچھے سے کھڑ چپی تھی۔ اُس پر ہنستے ہو جس کا برف میں جما ہوا سوکھا جسم، خالی بندوق لئے، شاید آج بھی وہیں پتھروں کے ڈھیر کے پیچھے دشمن کی تاک میں چھپا بیٹھا ہے۔ ہر سال برف اُسے ڈھانک لیتی ہے، پھر جب وہ پگھلتی ہے تو صبح کی کرنوں میں اُس کے سکڑے ہوئے کالے چمڑے کے جسم کو فرشتے سلام کرنے آتے ہیں۔ کیا تم نے اُسے دیکھا ہے؟

کیا اس ڈھول کی تھاپ میں اُس کی ماں کی چیخ سنائی نہیں دی؟

* علامہ اقبال

نواں سفر خاکِ بردہ

جب سیلاب میں ڈوبتے ہو، تو کون تمہارا ہاتھ پکڑ کر تمہیں کشتی میں گھسیٹ لیتا ہے؟ وہ جس نے اپنا کھیت بچانے کو تمہارا گھر ڈبو دیا، یا وہ جس کے ہاتھ سرحدوں پر مورچے کھودتے کھودتے شل ہو گئے تھے، رُکے نہیں؟ وہی، جو راتوں کو جاگتا ہے کہ تم چین کی نیند سو سکو۔ وہی جو محافظ ہے تمہاری ماں کی عزت کا، تمہاری بہن کی آبرو کا۔

وقت کے ساتھ ساتھ، تمہاری نفرتوں میں گھل کر، آہستہ آہستہ، اب تمہارا خاکِ محافظ بھی بیمار ہو رہا ہے۔ وہ، جو تمہاری ہی کوکھ سے جنم لیتا ہے، اپنے ہی تعفن میں ڈوب رہا ہے۔ معاشرے میں وبا ہی ایسی پھیلی ہے۔ یہ بیماری سروں سے داخل ہوتی ہے، جسم کے سب سے اُونچے حصے سے، پھر رفتہ رفتہ پورے وجود میں پھیل جاتی ہے۔ بھوک بڑھتی جاتی ہے، کچھ بھی کھالو، ترقی کا نوالہ یا سونے کا، پیٹ نہیں بھرتا۔ دل مردہ ہو کر سخت ہو جاتے ہیں، کسی کا درد نہیں چھوتا۔ گردن اکڑ جاتی ہے، جیسے طوق پڑا ہو۔ نظریں اُوپر کو اٹھی رہتی ہیں۔ آنکھوں میں ہوس اور نفرت بھر آتی ہے، کوئی دکھائی نہیں دیتا۔ نظریں کہیں ٹھہرتی ہی نہیں۔ غرور اپنے ہی چہرے کو مسخ کر لیتا ہے، جس پر اذیت میں ڈوبنا سنا چھایا رہتا ہے، ہنسنا بھی بھول جاتا ہے۔ بل کھاتی زبان، کبھی غم آنکھوں کے ساتھ آقاؤں کے قصیدے گاتی ہے، کبھی اُچکتی آنکھوں کے ساتھ لڑکھاتی زبان غیبتوں کے ڈھیر لگاتی ہے اور کبھی فریب کاریوں کے جال بنتی ہے۔ سارا وجود ہر دم متصادم نظر آتا ہے۔ ہر عضو کی جنبش، اُس کا خم، آواز کا اُتار چھڑاؤ اور الفاظ کا چناؤ سب ایک دوسرے سے ٹکراتے ہیں۔ آنکھیں چیخ چیخ کر جھوٹ کا اعتراف کرتی ہیں مگر خود پسند سرکار کو خادم کی بچھی ہوئی طبیعت میں عیب نظر نہیں آتا، کیونکہ خادم کا سر صرف سرکار کے آگے جھکتا ہے، اللہ کے آگے نہیں۔

کچھ ایسے ہی کمانڈروں نے فوج کو بیمار کیا ہے۔ ہاں، تم بیمار ہو۔ اس بیماری کو تم خود ہی ٹھیک کر سکتے ہو۔ تم سے زیادہ کس میں حوصلہ ہے۔ تم جو چاہو، اس کو بدل کر رکھ دو۔ جسم لاغر ہو چکا، مگر اب بھی کھوکھلا نہیں ہوا۔ اب بھی سکت باقی ہے۔ تم ہی خود کو بچا سکتے ہو۔ باہر سے کوئی نہیں آئے گا بچانے۔ تم، جو دشمنوں میں کھیلتے ہو، تمہیں کیا پرواہ کہ سب ہی دشمن ہیں۔ اُن کو چھوڑو۔ اُن کی پرواہ بھی چھوڑو۔ تم ہی اپنے محاسبے کو، اپنی بقا کو، کافی ہو۔ تمہاری آواز میں جادو ہے، تم جانتے نہیں۔ میں نے دیکھا ہے۔ بولو!

صرف اچھے کام کرنے کو مت کہو۔ برے کو روکو۔ گندگی کو نوچ کر باہر پھینک دو۔ یہ مٹھی بھر، جو شیطان کے پجاری ہیں، ان کی باتوں میں مت آؤ۔ تم صرف گناہگار ہو، شیاطین میں سے نہیں۔ اس فرق کو پہچانو۔ اپنی کوتاہیوں سے اتنا مت ڈرو۔ جو غلطی کرتا ہے، پھر دل میں خیال اُٹھتا ہے کہ یہ غلط کیا، وہ پاک ہے۔ بس، ہماری اتنی ہی پاکی ہے، ورنہ ہم فرشتے ہوتے۔ جو تم پر اُنکی اُٹھاتا ہے اور کہتا ہے، "تو کیا ہوا، تم نے بھی تو ایسا ہی کیا تھا، میں بھی کرتا ہوں"، وہ شیطان ہے۔ وہ تمہاری آڑ پکڑ کر، اپنے کئے پر فخر کرتا ہے۔ اُس کے دل میں کوئی ندامت نہیں۔ وہ عادی ہو چکا ہے۔ اُسے شرم نہیں آتی۔ اُس سے مت ڈرو۔ صرف اللہ سے ڈرو۔ اگر تم اس ڈر سے چُپ بیٹھو گے کہ تم بھی

نواں سفر خاکِ رُہ

قصور وار ہو اور اُس دن کا انتظار کرو گے جس دن تم میں کچھ نقص باقی نہ رہے گا، تو وہ دن کبھی نہیں آئے گا۔ شیطان کے ساتھی پھیلنے جائیں گے۔ انسانوں نے ہی شیطان کی راہ روکنی ہے، فرشتوں نے نہیں۔ کعبے کے گرد بھی جو چکر لگاتے ہیں، گناہ گار ہی ہوتے ہیں، جنت بھی ان ہی گناہ گاروں سے بھرے گی، سجدوں میں بھی یہی رہتے ہیں، شیاطین نہیں۔ انہیں پہچانو، انہیں روکو۔

تمہاری ندامت ہی تمہاری توبہ ہے۔ آج چپ رہنا گناہ ہے۔ کسی چیز کو چھوٹی مت سمجھو۔ ہر غلط کام میں رکاوٹ ڈالو۔ تمہاری چپ ان کی جیت ہے، اور تم ہی اس کے ذمہ دار۔ جب شہادت کے لئے تیار ہو، تو چھوٹی چھوٹی موتوں سے کیا ڈرنا۔ کیا روزی اللہ نہیں دیتا؟ تم پر حاکم کا حکم لازم ہے، مگر صرف جائز حکم۔ اگر تم غلط کرو گے تو ذمہ حاکم کا نہیں، تمہارا ہے۔ تمہاری قبر میں وہ جوابدہ نہیں ہے، تم ہو۔ اللہ اپنے احکامات پر تمہارے عمل درآمد کا حساب تم سے لے گا، تمہارے بالا کمانڈر سے نہیں۔ مگر یاد رکھو اللہ کو نہ دھوکا پسند ہے نہ دغا۔ کبھی اپنی فوج سے غداری نہ کرنا اور نہ ہی کبھی باغیانہ رویہ اختیار کرنا۔ اگر اللہ کے فرمان کے خلاف تمہیں حکم دیا گیا ہے تو بولو، اور اگر بولنے سے کچھ نہیں بنتا تو علیحدگی اختیار کرو۔ اللہ کا یہی حکم ہے۔ ادب کا دامن نہ چھوڑنا۔ یہی تمہاری پہچان ہے۔ اور ہمیشہ حق کی گواہی دینا، یہی تمہاری شان ہے۔

سینچ دو اس مٹی کو اپنی اُلفت کی شدت سے، جس پر تمہارے شہید بھائیوں کے خون نے سجدہ کیا۔ سچ کر دو اپنی محبت۔ بولو! جو جھوٹ پر پلتا ہے، اس سجدے کے لائق نہیں رہتا۔ بولو! جو بازار میں دکھائی دیتا ہے، کھوٹا ہے۔ بولو! جو بکتا ہے، جو اپنے دام لگاتا ہے، اُسے سر پر نہ بٹھاؤ۔ بھیڑ کے ساتھ مت چلو، تم ریوڑ نہیں ہو۔ اپنے قدموں سے نئی راہ کے نشان بناؤ۔ تمہیں اللہ نے اکیلا پیدا کیا، اکیلا ہی اٹھائے گا۔ تم اکیلے ہی جواب دہ ہو۔ اوروں کی خوشنودی مت ڈھونڈو۔ آج بولو، ورنہ اُس دن بھی چپ رہو گے، جس دن تمہارا اعمال نامہ، خاموشیوں سے بھرا، تمہارے سامنے ہوگا۔ اور تم حسرت سے سوچو گے کہ کاش ایک دفعہ واپس جاسکتا۔ ایک موقع اور ملتا۔ آج موقع ہے۔ بولو!

یہی تاریکی تو ہے غارِ زہ و زخسارِ سحر *

"یہ سیاستدان فوج کو پولیٹیسائز (politicise) کرنا چاہتے ہیں۔ اگر فوج بھی بیوروکریسی کی طرح سیاست کا شکار ہوگئی، تو یہ بھی تباہ ہو جائے گی۔" یہی اہم ترین خدشہ ظاہر کر کے فوج کے کچھ افسران کو حکومت کا تختہ الٹنے کے لئے کھڑا کیا گیا تھا۔ ان میں میں بھی تھا، اور میں نے یہ نہیں سوچا تھا کہ ایک سیاستدان فوج کو آخر کس حد تک پولیٹیسائز کر سکتا ہے۔ اتنا تو نہیں جتنا کہ وہ فوج کا سربراہ، جو خود ہی ملک کا سیاسی حاکم بن گیا ہو۔

فوجی بادشاہت کے دوران میں نے حکومت کے تمام ہی اداروں کو قریب سے دیکھا۔ تمام خرابیوں کے باوجود، میں یقین سے کہہ سکتا ہوں کہ آج بھی فوج اس ملک کا بہترین ادارہ ہے۔ اگر حکومت کے محکموں میں اسی فی صد خرابیاں ہیں، تو فوج میں اسی فی صد خوبیاں ہیں۔ فوج پر جو میری تنقید ہے، وہ اس لئے نہیں کہ یہ ادارہ بھی باقی تمام اداروں کی طرح ناکارہ ہو چکا ہے، بلکہ صرف اس لئے کہ اگر اس کو سنبھالا نہ گیا تو یہ بھی ویسا ہی ہو جائے گا، جیسا ہم میں سے کوئی نہیں چاہتا، نہ وردی پہننے والے، نہ وہ جو وردی اُتار چکے ہیں اور نہ ہی کوئی محب وطن پاکستانی۔ یہ ہماری بقا کا ضامن ہے، اس مٹی کا وفادار محافظ۔ اسے مٹی میں نہ ملنے دو۔

فوجی حکومت میں فوج مکمل طور پر پولیٹیسائز ہوگئی۔ اس کا نظام درہم برہم ہو گیا۔ حکمران کے پاس اتنا وقت نہیں تھا کہ وہ فوج کو سنبھالتا۔ اُسے فوج سے صرف اتنا ہی سروکار رہ گیا تھا کہ وہ اُس کے ساتھ وفادار رہے، اُس کی ہاں میں ہاں ملاتی رہے۔ اُس کی ترجیح ملک سنبھالنا تھی۔ فوج کو سنبھالنے کے لئے وائس چیف کا عہدہ قائم کیا اور اُس پر کسی کو بٹھا دیا۔ مگر وائس چیف کو بھی سنبھالنا لازم تھا، کہ کہیں فوج ہاتھ سے نہ نکل جائے۔ اس خوف سے اُسے بس ایک سٹاف افسر کی سی حیثیت دی۔ تمام کور کمانڈر، چیف آف جنرل سٹاف (CGS)، ڈی جی ایم او (DGMO)، ڈی جی ایم آئی (DGMI)، آئی ایس پی آر (ISPR)، اور ملٹری سیکرٹری (MS) جو افسران کی پروموشن اور تعیناتی کا نظام چلاتا ہے، کو براہ راست اپنے نیچے ہی رکھا۔ جو افسران کو زمینی وغیرہ دی جاتی ہیں، اُس سلسلے کو بھی اپنے پاس ہی رکھا۔ ISI اور MI فوج کو اتنا ہی بتاتے جتنا سیاسی نکتہ نظر سے مناسب ہوتا، جتنا سیاسی حکمران اجازت دیتا۔

فوج پر مثبت کنٹرول (positive control) ختم ہوا۔ GHQ کو وائس چیف نے سنبھالا ہوا تھا، لیکن سب ہی صرف چیف کی طرف دیکھتے۔ وائس چیف کو اجازت نہیں تھی کہ کور کمانڈروں کی کانفرنس بلا تے۔ نہ ہی عموماً علم ہوتا کہ چیف اور کور کمانڈر کے بیچ کیا بات * فیض احمد فیض

نواں سفر خاکِ رہ

ہوئی۔ اعلیٰ عہدے داروں میں ایک بے لگامی کی سی کیفیت پھیل گئی۔ اللہ کا شکر ہے کہ زیادہ تر تو خود ہی فرض شناس تھے، فوج کے ضابطوں کے پابند، مگر کچھ نے اس بد نظمی کا فائدہ بھی اٹھایا۔ کچھ کھل کر کرپشن میں بھی ملوث ہوئے۔ ایسے ماحول میں، جہاں حکومت اُس راہ پر چلتی ہو جو مقبول عام نہ ہو، حکمران کو کرپٹ لوگ پسند آتے ہیں، کیونکہ اُن کی کرپشن یا کردار کی دوسری کمزوریاں اُن پر لگام ہوتی ہیں۔ جہاں چاہے موڑ لو، کبھی چوں چراں نہیں کرتے۔ یہ کمزوریاں اُن پر وفاداری کی مہر لگادیتی ہیں۔ یہی چرب زبانی سے منطقوں کو اُلٹنے کا فن بھی رکھتے ہیں، قصیدے بھی گاتے ہیں، چغلیاں بھی لگاتے ہیں۔ یہی فاسق، سر بسجود، آقا کے غلام، شاہی حکمران کے پیارے ہوتے ہیں۔

یوں ساری سیاست فوج کے اندر بھی آگئی۔ ترقی پانے کے لئے لازم ہوا کہ حکومت کی پالیسیوں کا کھل کے ساتھ دیا جائے۔ اُنہیں سراہا جائے۔ گردن صرف اُوپر نیچے کو ہلے، دائیں بائیں کو نہیں۔ مذہبی رجحان کے لوگ کنارہ کش ہوئے۔ ترقی کے لئے موزوں نہیں تھے۔ دیکھتے دیکھتے روشن خیالی کی وبا ہر طرف پھیل گئی۔ کچھ گھرانے بھی اس میں شامل رہے۔ زندگی کا لطف اٹھانا نصب العین ہوا۔ روک ٹوک کو جہالت سمجھا جانے لگا۔ فوج کو خوش رکھنا لازم تھا، تو چھوٹ کی فضا قائم ہوئی۔ کوئی مسئلہ اٹھتا تو، فوج کی عزت کے جھوٹے نام پر، جھاڑ کر قالین کے نیچے کر دیا جاتا، جہاں وہ پلتا رہتا، بڑھتا رہتا۔ حالانکہ جب عزت پیاری ہو تو برائی سے بچتے ہیں، اُسے کچلتے ہیں، صرف ڈھانپتے نہیں۔

اگرچہ اس مرتبہ فوجی حکومت مکمل مارشل لاء کی طرز پر نہیں تھی، پھر بھی بہت سے فوجیوں کی توجہ غیر پیشہ وارانہ کاموں کی طرف رہی، جس سے فوج کی پیشہ وارانہ صلاحیت اور سمت (orientation) پر خاصہ اثر پڑا۔ پیشہ وارانہ صلاحیتیں تو سدھر جاتی ہیں، پر تشخص اور کردار کو انھیں پہنچی ہو تو سنور نے میں کئی پشتیں لگ جاتی ہیں۔

میں یہ نہیں کہتا کہ اس فوجی حکومت سے پہلے فوج نہایت اعلیٰ معیار کی تھی۔ تب بھی اس میں جھوٹ تھا، کچھ نہ کچھ ساری ہی خرابیاں تھیں۔ میں نے تو شروع سے یہی دیکھا ہے۔ لیکن یقیناً وہ میرے دیکھتے دیکھتے بڑھتی گئیں۔ ایوب خان کا دور تو میں نے دیکھا نہیں، جنرل ضیا الحق کے دور میں منافقت کو یکا یک بڑھوتی (quantum jump) ملی۔ پھر جنرل مشرف کے دور میں فوج پھسل کر اور نیچے آگری۔ وثوق سے کہہ سکتا ہوں کہ فوجی حکومت میں، فوج بدرجہ منافقت اور خرابی کی طرف بڑھتی ہے۔ فوجی حکومت سے کچھ فوجی حضرات مستفید تو ضرور ہوتے ہیں، مگر ایک ادارے کے طور پر فوج کو فوجی حکومت صرف نقصان ہی پہنچاتی ہے۔

فوج اس ملک کا نہایت قیمتی ادارہ ہے اور اللہ کے شکر سے اتنا مضبوط ہے کہ ایسے کاری اور متعدد زخم کھا کر، آج بھی چمکتا ہے۔ اللہ اکبر کہنے والی فوج ہے، اور وہی ہے اسے بچانے والا۔ اس میں خرابی ڈالنے والے سب ہی خراب ہوئے۔ یہ وفا شعار ادارہ ہے۔ اپنے کمانڈر

سے وفاداری کی قیمت اپنے خون سے ادا کرتا ہے۔ یہی اس کی طرز ہے، اور یہی ہونی چاہیے۔ ورنہ میدان جنگ میں یہ ناکارہ ہوگی۔ اللہ ہمیں ایسے قائد عطا کرے جو فوج کی وفاداریوں کو اپنے ذاتی مقاصد کے لئے استعمال نہ کریں، خود بھی فوج سے وفادار ہوں۔ آمین۔

یہی ادارہ ہے جہاں آج بھی، اس ملک کا کوئی شہری، صرف اپنی صلاحیت کے زور پر داخل ہو سکتا ہے، بغیر کسی سفارش کے۔ اور صرف اپنی صلاحیت کی بنا پر ترقی پا کر اُنچے عہدوں پر فائز ہو سکتا ہے، یہی ادارہ ہے جہاں سچ بولنے پر گردن نہیں کٹتی، جہاں ظلم کرنے پر مجبور نہیں کیا جاسکتا۔ جہاں حلال رزق کی راہ کھلی ہے۔ جہاں ایک اعلیٰ مقصد زندگی کے سامنے رکھ سکتے ہیں۔ جہاں آج بھی حسین خواب پلتے ہیں۔ جہاں امید سحر زندہ ہے۔

تمناش بینوں نے اپنے ایجنڈوں کے تحت اسے بہت نوچا، مگر یہ سالم ہے۔ کہتے ہیں فوج پاکستان کے بجٹ کا بڑا حصہ ہڑپ کر جاتی ہے، ملک کی ترقی کیسے ہو؟ ۳-۲۰۰۲ فیڈرل بجٹ کے جو اخراجات ہوئے اُن میں ۱۹% افواج پر خرچ ہوئے، ۲۵% قرض کی ادائیگی میں گیا، ۱۶% ترقیاتی منصوبوں پر اور ۳۳% حکومت نے اپنے اُوپر خرچ کیا۔ بقایا سبسائیڈیوں میں گیا۔ یقیناً صوبائی بجٹوں میں مزید حکومتی اخراجات ہوں گے۔ اس کے علاوہ ترقیاتی منصوبوں میں سے کتنا حصہ سرکار کے نمائندوں پر خرچ ہوتا ہے، کہہ نہیں سکتا۔ کرپشن اس کے علاوہ ہے۔ مگر حکومتی اخراجات چھپے ہی رہتے ہیں۔ ان پر کوئی تبصرہ نہیں، صرف فوج کی دفاعی صلاحیتوں پر خرچ کرنے پر اُننگی اٹھائی جاتی ہے۔

یقیناً اس غریب ملک کے عوام کو معیشت سے اتنا حصہ ملنا چاہیے، جس سے اُن کی زندگیوں میں بہتری آسکے۔ فوج میں بھی بہت پیسے کا زیاں ہے، اسے سختی سے قابو میں کرنا چاہیے۔ لیکن اگر فوج کو گھٹانا ہے تو اس صلاحیت کی کمی کے اثرات قبول کرنے ہوں گے۔ اس کا فیصلہ کوئی بھی حکومت کر سکتی ہے۔ فوج کو اپنے بڑے ہجم سے کوئی ذاتی فائدہ حاصل نہیں ہوتا۔ یہ صرف غلط فہمیاں پیدا کرنے کی بات ہے کہ فوج خود کو بڑا اس لئے رکھتی ہے کہ بار بار حکومت میں آنا چاہتی ہے۔ اس کام کے لئے راولپنڈی کا ایک بریگیڈ ہی کافی ہے۔ اگر عوام نہ چاہے، تو فوج جتنی بھی بڑی ہو، ایک شہر بھی قابو میں نہیں کر سکتی۔ جان لو کہ فوج اپنی عوام پر گولیاں چلانے سے منکر ہے۔ بھٹو صاحب آزمائے چکے ہیں۔ فوج کو ناکارہ کرنے کی سازشیں ہمیشہ دشمن کے ساتھی ہی کرتے ہیں۔

فوج کو کاروباری مشاغل میں ہرگز داخل نہیں ہونا چاہیے۔ فوجی فاؤنڈیشن جب بنائی گئی، اُن دنوں ریٹائرڈ سپاہیوں کے گھروالوں کو فوجی ہسپتالوں میں علاج معالجے کی سہولت نہیں تھی، یہ بعد میں دی گئی۔ پھر دیہی علاقوں میں یہ ہسپتال موجود بھی نہیں۔ فوجی فاؤنڈیشن

نواں سفر خاکبرہ

صرف سپاہیوں کی فیملیوں کے لئے طبی اور تعلیمی سہولیات دینے کے لئے بنائی گئی تھی، کیونکہ اس کے لئے کوئی بجٹ نہیں ملتا تھا۔ پھر آہستہ آہستہ مزید کاروباری ادارے بنتے گئے، مگر یہ تمام کے تمام ہی وزارتِ دفاع کے نیچے کام کرتے ہیں اور صرف ریٹائرڈ اشخاص ہی ان میں ملازمت کرتے ہیں۔ یقیناً ان میں کرپشن بھی ہوگی، لیکن اس سے زیادہ بد نظمی ہے۔ آج زیادہ تر ادارے اس بد نظمی کی وجہ سے خسارے میں ہیں۔ کوئی بھی کاروباری ادارہ جو مالک کی زیر نگرانی نہ ہو، اور اسے وہ لوگ چلاتے ہوں جو صرف تین سے پانچ سال کی مدت کے لئے ایک نوکری کے طور پر اس میں آئے ہیں، کبھی کامیاب نہیں ہو سکتا۔ ضروری ہے کہ اس تمام سلسلے کو درست کیا جائے۔

فوج واحد حکومت کا ادارہ ہے جہاں سے ایک بڑی تعداد میں لوگ حکومت کی دی ہوئی ریٹائرمنٹ کی عمر کو پہنچنے سے بہت پہلے ہی گھر بھیج دیے جاتے ہیں۔ ان کو ذریعہ معاش فراہم کرنے کا بھی کوئی خاطر خواہ بندوبست ہونا چاہیے۔ یہ قوم کے نہایت تربیت یافتہ اور نظم و ضبط رکھنے والے حضرات ہیں، ہمارا سرمایہ ہیں، جنہوں نے اپنی جوانی فوج کو دے دی۔ ان کو یوں سڑکوں پر پھینک دینا درست نہیں۔ یہی کاروباری ادارے انہیں نوکریاں بھی فراہم کرتے ہیں۔ حکومت کے قانون میں ایک کوٹہ دیا گیا ہے، جس میں ریٹائرڈ فوجیوں کو مختلف محکموں میں رکھا جانا چاہیے، مگر عموماً ایسا ہوتا نہیں۔ دوسرے محکموں کے اپنے مسائل بھی ہیں، یہ آخر کتنے فوجیوں کو اپنے اندر جذب کر سکتے ہیں۔

ایک اور سلسلہ فوج کا، جس پر انگلیاں اٹھائی جاتی ہیں، زمینوں کی الاٹمنٹ کا ہے۔ ایک وقت تھا کہ فوج میں پڑھے لکھے گھرانوں سے لوگ آتے تھے۔ اب زندگی میں معاشی مستقبل بہتر بنانے کے لئے کئی راہیں کھل چکی ہیں اور اتنی اچھی مراعات دی جاتی ہیں کہ، چند شوق کی بنا پر آنے والوں کے علاوہ، کم ہی پڑھے لکھے گھرانوں کے بچے فوج میں آتے ہیں۔ انہیں یہ خدشات ہوتے ہیں کہ زندگی بھی سختی اور تنگی میں گزرے گی اور جتنی بھی محنت کر لو، آخری دن کچھ ہاتھ میں نہ ہوگا۔ تنخواہ میں سے کوئی بچت ممکن نہیں اور کسی قسم کے کاروبار میں حصہ لینے کی اجازت بھی نہیں۔ پھر اچھے لوگوں کو فوج کی طرف کیسے راغب کریں؟ اس ہی وجہ سے یہ سلسلہ رکھا گیا تھا، اور آج سے نہیں، شروع سے ہی ایسا ہے۔ ایک دیے ہوئے تفصیلی قانون کے مطابق فوج کے تمام ہی طبقے اس سے استفادہ حاصل کرتے ہیں۔ بہر حال، اب چونکہ DHA وجود میں آچکے ہیں، سرکاری زمینیں دینے کا سلسلہ ختم کیا جاسکتا ہے۔ جنرل مشرف کے دور میں ایک مرتبہ یہ احکامات بھی جاری ہوئے، لیکن عمل درآمد نہ ہو سکا۔ میں بھی، باقی فوجیوں کی طرح، اس سے مستفید ضرور ہوا ہوں، مگر اس سلسلے سے منسلک نہیں رہا، اس لئے اس کی قانونی حیثیت سے واقف نہیں۔ جیسا بھی ہے، یہ قوم سے چھپا ہوا نہیں ہونا چاہیے، اور حکومت کی منظوری اور نظر اس پر رہنی چاہیے۔

جہاں تک DHA کا سوال ہے، یہ سارا کا سارا نظام نجی ہے۔ اس میں سرکار کا یا فوج کا کوئی نقصان نہیں، اور نہ ہی عوام کا۔ پرائیویٹ زمین خریدی جاتی ہے اور کم قیمت پر فوجیوں کو، ایک باضابطہ طریقے کے مطابق، دی جاتی ہے۔ فوجیوں کی بہبود کا ایک سلسلہ ہے، جس میں کسی کی جیب سے پیسہ نہیں جاتا۔ ایسی بہت سی سوسائٹیاں اور بھی چل رہی ہیں، مثلاً ججوں کی کالونیاں، پولیس کالونی، ریلوے، وغیرہ

وغیرہ۔ نہ جانے کیوں صرف فوج کی ہی سوسائٹی پر نظریں اٹھتی ہیں، شاید اس لئے کہ DHA زیادہ منظم ہیں اور ان میں زمینوں کی قیمت بہتر ہوتی ہے۔ جہاں تک کرپشن کا تعلق ہے، وہ مسئلہ ہی الگ ہے۔ اُس پر شدید روک تھام کی یقیناً ضرورت ہے۔

فوج ایک نہایت پیشہ ورانہ محکمہ ہے، جو اصولی طور پر، زمانہ امن میں بھی فوجیوں کو جنگی تربیت پر مشغول رکھتا ہے۔ اسے یوں ہی رہنا چاہیے۔ شروع دن سے ہی ملک کے نام پر ہر قسم کی قربانی دینے کے جذبے کو ابھارا جاتا ہے، اور ان ہی سوچوں پر تربیت دی جاتی ہے۔ اس میں کوئی صوبائیت یا فرقہ وارانہ رنگ نہیں۔ سب کے سب صرف پاکستان کے لئے ہی سوچتے ہیں اور اس ہی کے لئے کام کرتے ہیں۔

فوجی کی یونٹ اُس کا گھرانہ ہوتی ہے۔ وہ اس کی عزت کی خاطر لڑتا مارتا ہے۔ اس جذبے کا میدان جنگ میں خاصہ اہم کردار ہے۔ ہمارے یہاں چونکہ کنبہ پروری کا رواج ہے، یہ بیماری فوج میں بھی خاصی سرایت کر چکی ہے۔ اب کنبہ پروری کی خاطر ہر ناجائز کام، جائز سمجھا جانے لگا ہے۔ یونٹ کی خاطر بے ایمانی ہو، چوری ہو، نا انصافی یا کسی دوسرے کی حق تلفی، سب ہی یونٹ کی خدمت ہے۔ تمہاری اچھائی کیا اچھائی ہے، اگر خاندان والوں کے لئے کچھ نہ کیا؟ جسے اپنوں کا خیال نہیں، وہ کس کام کا؟ وہ تو خود غرض ہے۔ ایسی آوازیں ہر طرف سے اٹھنے لگی ہیں، اور توقعات بھی۔ اگر کوئی سینئر افسر اپنی کرسی کی طاقت پر یونٹ یا رجمنٹ کے لوگوں کو کوئی ناجائز فائدہ نہ پہنچائے، تو وہ ناکارہ سمجھا جاتا ہے۔ پھر اُس سے تعلق نہیں رکھتے۔ چاہے کسی کورس میں اچھا رزلٹ دلوانا ہو، کہیں باہر بھیجوانا ہو، اچھی سالانہ رپورٹ دلوانی ہو، پروموشن کروانی ہو، یا یونٹ کو کسی اچھے مقام پر بھیجنا ہو۔ سب جائز ہی نہیں، لازم ہے، ورنہ آپ کسی کام کے افسر نہیں۔ یہ سلسلہ نہ ہی صرف انفرادی طور پر نا انصافیوں کی راہ کھولتا ہے، بلکہ فوج کے لئے نہایت مجروح کن ہے۔ اگر، ہر طرف پھیلے ہوئے اس سلسلے کو بہت سختی سے روکا نہ گیا تو فوج کو تباہ کرنے میں اس ایک امر کا بہت بڑا ہاتھ ہوگا۔

کسی بھی فوجی کو اچھی کارکردگی دکھانے کے لئے دھوکا دہی کی ہر گز اجازت نہیں ہونی چاہیے۔ چاہے جنگ کی تربیت ہو، کسی کھیل کا میدان یا کوئی بندوبستی کاروائی، اس قسم کی چھوٹ لوگوں کے کردار کو مسخ کر دیتی ہے۔ اگر PMA سے ہی کیڈٹ کو یہ سکھایا گیا ہو کہ انپکشن کے دن نیا ٹوتھ برش سجانا، باقی دن پرانا چلاؤ، تو وہ دھوکہ نہیں سیکھے گا تو اور کیا سیکھے گا؟ پھر یہی آپ کو میدان جنگ میں بھی دھوکہ دے گا۔ اور اگر یوں ہی کرتا ہو فوج کا سربراہ بن گیا، تو قوم کا اللہ ہی حافظ ہے۔

سفارش اور میل ملاپ ہماری تہذیب کا حصہ بن چکے ہیں۔ کسی سے فون کروالو، کسی سے چٹ لکھوالو۔ اس کے بغیر لوگوں کو بھروسہ نہیں ہوتا کہ کچھ ہو سکے گا۔ یہ نہیں کہ فوج میں قابلیت کا صلہ نہیں ملتا۔ اپنے ساتھ کام کرنے کے لئے تو ہر کوئی قابل لوگوں کو ہی چنتا ہے، مگر

سفارش پھر بھی چلتی ہے، ہر درجے پر کام کرتی ہے۔ اللہ کا شکر ہے کہ پھر بھی سینکڑوں بے سہارا اسی فوج میں پلتے بڑھتے ہیں، سپاہیوں کے بچے بھی جنرل بنتے ہیں۔

چھوٹے لوگوں کو مثالی سزا دینے سے معاملات درست نہیں ہوتے، جب تک بڑے عہدوں پر فائز، خود لوگوں کے لئے مثال نہ قائم کریں۔ اگر جنرل صاحب کے لئے قانون کوئی حیثیت نہیں رکھتا، تو پھر فوج کے کسی سپاہی سے بھی توقع نہ رکھیں کہ وہ قانون پر چلے۔ نیچے کا طبقہ ہمیشہ اوپر کے لوگوں کے نقش و قدم پر چلتا ہے۔ انہیں اُس ہی میں بڑائی نظر آتی ہے۔ جیسا آپ کرو گے، ویسی ہی توقع نیچے سے رکھو۔ زمانہ امن میں تو ڈنڈا چلا کہ قابو کرو گے، یا گند کو قالین کے نیچے جھاڑ دو گے، مگر میدانِ جنگ میں اس کی بہت بھاری قیمت چکانی پڑے گی۔ کبھی سینئر افسر کو سزا دینے سے نہیں کترانا چاہیے۔ یہ نہیں سوچنا چاہیے کہ فوج کی بدنامی ہوگی۔ جھوٹی عزت زیادہ دن نہیں رہتی۔ کسے پتا نہیں کہ کیا ہو رہا ہے؟ اصل بات کی ساری فوج کو خبر ہوتی ہے، اور فوج کے باہر بھی۔ اس سے مزید خرابی پھیلتی ہے۔ مثالی سزا اوپر کے درجے پر دو۔ اگر اس پر مصلحت کا پردہ رہے گا اور سزا دینے سے گریز کرو گے تو کچھ ٹھیک نہیں ہوگا۔

سادگی فوجی زندگی کی پہچان ہے، یہی اس کی شان ہے۔ بار بار کی مارشل لاء حکومتیں، جن کی وجہ سے فوج کے سینئر افسران اچانک ملک کا ایلٹ طبقہ بن جاتے ہیں اور اُن کا سٹیٹس (status) اُن کے مالی اقدار سے بہت بڑھ جاتا ہے، فوج میں سادگی کو ختم کرنے میں اہم کردار ادا کرتی ہیں۔ پھر یہ رنگ نیچے تک سرایت کر جاتا ہے۔ شہروں کے بچوں نیچے چھاؤنیاں بھی سٹیٹس سنبُل (status symbol) کی اس دوڑ کو ابھارتی ہیں۔ فوج میں سادگی کا معیار اوپر کے درجے پر ہی رکھنا ہوگا، تب ہی سادگی آئے گی، اس موضوع پر احکامات جاری کرنے سے نہیں۔ سرکاری اخراجات پر سختی سے قابو رکھنا لازم ہے۔ پیسے اُسی کام پر خرچ ہونے چاہئیں جس کے لئے ملے ہوں۔ اور فوج کو ہر حال میں غیر پیشہ ورانہ مصروفیات سے دور رکھنا چاہیے۔

میں نے شاید کچھ زیادہ کہہ دیا۔ سب کا سب ایسا نہیں ہے۔ یہ ادارہ آج بھی مضبوط ہے، اس ملک کا بہترین ادارہ ہے، لیکن جو خرابیاں کہیں کہیں نظر آتی ہیں، انہیں روکنا لازم ہے۔ اگر جڑی بوٹیاں نہ نکالی جائیں، تو وہ کل کو تناور درخت بن جائیں گی۔ پھر اُن کو تلف کرنا مشکل ہوگا۔ یہ بات تیزی سے پھیلے گی اگر روک ٹوک نہ ہوئی۔ فوج کے ہر فرد پر لازم ہے کہ سچائی کے تعاقب میں ہمیشہ سرگراں رہے، جھوٹ سے خود کو بچائے۔ لوگوں کو سچ کی ترغیب دے اور خود سچ پر قائم رہنے کا حوصلہ کرے۔ جب اللہ کو رب مان لیا تو جیسے وہ پالتا ہے، جیسی اُس کی رضا ہے، اُس پر راضی رہے۔ اگر نقصان ہو تو یہی سچ کی گواہی ہے، یہی شہادت ہے، اور یہی اُس کی بے کراں رحمت ہے۔ جو روزِ مزہ کی چھوٹی چھوٹی شہادتوں سے گھبرائے، میدانِ جنگ میں خاک لڑے گا۔ جو سپاہی جھوٹ پر پلنے لگیں وہ سچ کی گواہی کیا دیں گے۔ میدانِ جنگ میں شہادت حق کی سب سے بڑی گواہی ہے۔ یہی سچ ہے۔

فوج میری محبت ہے، اس ہی لئے میں نے یہ سب لکھا۔ میں یہ بھی جانتا ہوں کہ فوج کے بہت سے سینئر حضرات مجھ سے ناراض ہوں گے کہ ساری عمر فوج کا کھایا، جو رتبہ پایا فوج سے پایا، پھر بھی فوج کے بارے میں باتیں کرتے ہو۔ اس کنبہ پروری کی خاطر میں فوج کو یوں تباہ ہوتے نہیں دیکھ سکتا۔ اگر مجھے معاملات بہتری کی طرف جاتے نظر آ رہے ہوتے، تو صبر کر کے بیٹھ رہتا۔ مگر میں روز بروز فوج کو ڈھلوان پر پھسلتے ہی دیکھ رہا ہوں۔ کیا میری یہی محبت ہے کہ بیٹھا دیکھتا رہوں، چپ رہوں کہ تم ناراض نہ ہو جاؤ؟ جب تک فوج میں تھا، اس کے خلاف ہی بولتا رہا، شاید آپ نے سنا نہیں۔ آج بھی بولوں گا، اور انشاء اللہ کل بھی۔ میں اس فوج کو ستاروں کی طرح چمکتا دیکھنے کا آرزو مند ہوں۔ پوری کوشش کی ہے اور پوری کوشش کروں گا کہ اسے چمکا تار ہوں۔ رگڑ سے کچھ تو میل اترے گی۔ کچھ آف اور کچھ ہائے بھی نکلیں گی۔ کچھ مجھ پر کچھ بھی پڑے گا۔ میرے لئے بھی شاید یہی مناسب ہے، شاید یہی میرے نفس کی دوا ہو۔

میرے فوجی بھائیو، غم نہ کھاؤ۔ اگر تم رات کے اندھیرے کے خلاف ڈٹ سکتے ہو، اور تم ڈٹ سکتے ہو، کیونکہ تمہارے دل میں اب بھی نور کی کرن چمکتی ہے، تو رات کا جشن مناؤ اور ڈٹ جاؤ۔ یہی رات نشانی ہے صبح کی۔ تم ہارنے والے تھوڑی ہو۔ تم اللہ کے سپاہی ہو، جیت تمہاری ہی ہوگی۔ سچ کبھی نہیں ڈوبتا، صرف پجاریوں کے سورج ڈوبتے ہیں۔ انشاء اللہ، ایک دن آئے گا کہ یہ فوج جب مارچ کرے گی، تو داہنا قدم پہلے اٹھائے گی۔

ناگہاں آج مرے تارِ نظر سے کٹ کر
 ٹکڑے ٹکڑے ہوئے آفاق پہ خورشید و قمر
 اب کسی سمت اندھیرا نہ اُجالا ہو گا
 بچھ گئی دل کی طرح راہِ وفا میرے بعد

دوستو! قافلہء درد کا اب کیا ہو گا
 اب کوئی اور کرے پرورشِ گلشنِ غم
 دوستو ختم ہوئی دیدہء تر کی شبنم
 تھم گیا شورِ جنوں ختم ہوئی بارشِ سنگ

خاکِ رہ آج لئے ہے لبِ دلدار کا رنگ
 گونے جاناں میں کھلا میرے لہو کا پرچم
 دیکھتے دیتے ہیں کس کس کو صدا میرے بعد
 "کون ہوتا ہے حریفِ مئے مردِ افکنِ عشق
 ہے مکرر لبِ ساقی پہ صلا میرے بعد"
 (فیض)

دسواں سفر
گوشہء تنہائی

زمیں پہ پاؤں دھراتو زمین چلنے لگی *

ریٹائرمنٹ کے بعد اکتوبر ۲۰۰۵ میں ہم راولپنڈی میں اپنی بیٹی کے گھر آ گئے، کوئی اور ٹھکانا تو تھا نہیں۔ اپنا گھر ابھی بن رہا تھا۔ دوسرے ہی دن مجھے صدر صاحب نے اپنے دفتر بلوایا۔ کہنے لگے تم قومی احتساب بیورو (NAB) کو سنبھال لو۔ ہماری لاہور کی گفتگو کو فارمل (formal) نوعیت دی، اور کہا، "مجھے تم سے صرف ایک بات کہنی ہے۔ میری حکومت میں کچھ ایسے لوگ ہیں، مثلاً فیصل صالح حیات صاحب، جن کی کرپشن کے کچھ پرانے قصے ہیں۔ تم ان پرانے قصوں کو فی الحال نہ چھیڑو، میری حکومت غیر مستحکم ہو جائے گی، ملک کا مالی دیوالیہ نکل جائے گا۔ اگلے سال الیکشن ہیں، اُس کے بعد دیکھ لینا"۔ میں نے یہی مناسب سمجھا اور حامی بھری۔ گنتی کے چند ہی تو لوگ تھے جن کے پرانے قصے تھے، میرے ذہن میں صرف تین یا چار نام آئے۔ اور صرف پرانے قصے ہی چھوڑنے تھے، اب مزید گڑبڑ کی گنجائش تو دینی نہیں تھی۔ پھر ایک سال ہی کی تو چھوٹ تھی، اگلے الیکشن کے لئے تو ویسے بھی اُن کا وعدہ تھا کہ صرف صاف لوگ آگے آئیں گے۔ ملک میں اتنے بڑے پیمانے پر کرپشن ہو رہی تھی، میں نے سوچا، جو کر سکتا ہوں اُتاتا تو کروں۔

ملک میں پھیلی ہوئی کرپشن کا نہ کوئی تخمینہ ہے اور نہ صحیح طور پر اسے معلوم کرنے کے لئے کوئی ریسرچ کی گئی ہے۔ بس سطحی سی کتابی باتیں ہیں۔ میرے یہاں آنے سے پہلے ایک اینٹی کرپشن سٹریٹیجی بنائی گئی تھی، جسے کینٹ نے منظور کیا تھا، مگر اس پر کوئی عمل نہیں ہوتا تھا۔ نہ ہی کوئی کسی کو پوچھتا۔ صرف سیاسی دکھلاوے کے طور پر اس کا ڈھنڈورا پیٹا جاتا۔ NAB چٹھیاں لکھتی رہتی، معاملات جوں کے توں رہتے۔ حکومت کے تمام محکموں کا اینٹی کرپشن کے ہر سلسلے پر ٹال مٹول کا رویہ رہتا۔ مثال کے طور پر، اس پالیسی کے تحت ایک پبلک پروکیورمنٹ ریگولیٹری اتھارٹی (Public Procurement Regulatory Authority) قائم کی گئی، جس کے ابتدائی قانون میں، NAB کے اصرار پر، یہ لکھا گیا کہ ان قوانین پر عمل درآمد نہ کرنا جرم قرار پائے گا۔ پھر جب یہ قوانین آخری شکل میں آئے تو لکھا تھا، "ان قوانین پر عمل درآمد نہ کرنا کوئی جرم نہیں ہوگا"۔ عجب تماشا تھا۔ بڑی مشکل سے اس لائن کو کٹوایا گیا۔ آج بھی اس قانون پر عمل کرنا لازم نہیں۔ یہ کرپشن کی روک تھام کی جانب حکومت کے عہدیداروں کا رویہ ہے۔ کہتے تھے آپ گورنمنٹس کو نہیں سمجھتے، مداخلت سے ملک کا نظام درہم برہم ہوگا۔

جب NAB میں پہنچا تو کچھ دن تو حالات کا جائزہ لیا۔ تمام صوبوں کے دفاتر گیا۔ سب کے تاثرات سنے اور ادارے کی ترجیحات اور کاروائی کے طریقوں میں کچھ ترامیم مناسب سمجھیں۔ چونکہ کرپشن بہت وسیع پیمانے پر ہو رہی تھی، اسے ختم کرنے کی کوشش بھی

اس ہی طرح پھیل چکی تھی۔ ہزار ہا فائلیں کھلی ہوئی تھیں، اور تفتیش سالوں چلتی رہتی۔ اتنے زیادہ کیس کھل چکے تھے کہ کئی ڈائریکٹر کے درجے کے لوگ بھی براہ راست تفتیشوں میں مصروف تھے۔ جس کسی کی شکایت آتی، ایک نیا کیس کھل جاتا۔ پھر وہ سالوں سو لی پر لٹکا رہتا۔ اس قدر کرپشن کے معاملات زیر تفتیش تھے کہ اس تنظیم کے بس میں نہ تھا کہ ان کو سنبھال سکتی۔ کوئی ترجیحات نہیں تھیں، جس کی چاہے فائل اوپر کر دو، جس کی چاہے دبی پڑی رہے۔ کام کی زیادتی ہر چیز پر اپنا رنگ چھوڑتی۔

اس پھیلے ہوئے کام کو قابو میں کرنے کے لئے، میں نے اپنی ایک کانفرنس میں کہا کہ توجہ شیاطین پر مرکوز رکھیں، گناہ گاروں پر نہیں۔ یہ اس سلسلے میں بھی کہا کہ ایک سابقہ وزیر کا کیس تھا، جن پر الزام تھا کہ انہوں نے کچھ سرکاری گاڑیاں اپنی زمینوں پر استعمال کے لئے رکھی تھیں۔ شاید گل چار یا چھ لاکھ روپے کے خرد برد کا معاملہ تھا۔ میں نے کہا کہ اگر آج کل کے ماحول میں کوئی وزیر صرف گاڑی ہی ناجائز استعمال کر رہا ہے اور اُس کے خلاف اس کے علاوہ کوئی شکایت نہیں، تو اُس سے زیادہ صاف ستھرا وزیر آپ کو کہاں سے ملے گا؟ ملک میں بہت بڑے پیمانے پر کرپشن ہو رہی ہے، چھوٹے چھوٹے مسئلوں میں الجھنا بے مقصد ہے۔

NAB کے اعلیٰ عہدیداران سے مشاورت کے بعد، ادارے کی کاروائیوں میں چند ترامیم کیں۔ یہ تو ظاہر تھا کہ اگر حکومت کے کارندے کرپٹ ہوں تو ایک شہری کے لئے، جو ان سے کوئی واسطہ رکھے، کرپشن سے بچنا ممکن نہیں، ورنہ اُس کا کوئی کاروبار چل نہیں سکتا۔ فیصلہ یہ ہوا کہ ہمارا فوکس (focus) بل العموم حکومت کی مشینری پر ہی رہنا چاہیے۔ عام شہریوں کے صرف وہ کیس دیکھے جائیں، جہاں مجموعی طور پر عوام کو لوٹا گیا ہو، یا بہت بڑے پیمانے پر پیسے کا غبن ہوا ہو۔ یہ بھی فیصلہ کیا کہ حکومت کے عہدیدار چوری کا پیسہ لوٹا کر کیس ختم نہیں کروا سکیں گے۔ انہیں لامحالہ سزا کے لئے کورٹ میں لے جایا جائے گا۔ اس فیصلے سے کافی حد تک کام سنبھل گیا۔

ایک حد بھی لگائی گئی کہ ایک تفتیشی ٹیم ایک وقت میں کتنے کیس دیکھ سکتی ہے۔ ساتھ ہی تفتیشی ٹیم کے لئے وقت بھی مقرر کر دیا گیا کہ اتنے عرصے میں تفتیش مکمل کر لے۔ یہ اس لئے ضروری تھا کہ جس کسی پر الزام ہو، وہ سالوں ہوا میں نہ لٹکا رہے۔ پھر کچھ ترجیحات متعین کیں، جن کے مطابق یہ فیصلہ کیا جاسکے کہ کون سے کیس کی تفتیش شروع کی جائے۔ پہلی ترجیح پر حکومت کے بڑے عہدیداران تھے، پھر وہ لوگ جنہوں نے بڑے پیمانے پر عوام کو لوٹا ہوا۔ عہدے اور چوری کے الزام کے حجم کو مد نظر رکھتے ہوئے پندرہ یا بیس ترجیحات کی ایک لسٹ تیار کی اور تمام دفاتر کو بھجوا دی گئی۔ ایک مخصوص تعداد کیسوں کی ایک وقت پر تفتیش ہو سکتی تھی اور قطعی طور پر ان ہی ترجیحات کے مطابق۔ جب گنجائش ہو، پھر کوئی نیا کیس اس ترجیح کے مطابق کھولا جائے۔ اگر دیے ہوئے عرصے میں کوئی تفتیش مکمل نہ کی جاسکتی، تو تفتیشی افسر اور اُس کے بالا عہدیداروں کو اس کی وجوہات لکھ کر بیان کرنا پڑتیں۔

دسواں سفر گوشہ تنہائی

NAB حکومت میں شفاف کارکردگی (transparency) چاہتا تھا، تاکہ حکومت کے سب کام شفاف نظر آئیں۔ بذاتِ خود NAB کے کاموں میں اتنی ٹرانسپیرنسی نہیں تھی۔ میں نے یہ لازم سمجھا کہ ہمارے دفاتروں میں بھی ہر کام شفاف ہو، تاکہ NAB کے ادارے کے اندر کرپشن کی گنجائش کم سے کم رہ جائے، اور عوام اس ادارے پر بھروسہ کر سکیں۔ پہلا فیصلہ تو یہ کیا کہ اپنے دفتر میں فائلوں پر فیصلے دینے بند کر دیے۔ ایک ہفتہ وار کانفرنس منعقد کرنی شروع کی، جس کا نام ایگزیکٹو بورڈ (Executive Board) رکھا۔ اس میں کیسوں سے منسلک تمام عہدیداران شامل ہوتے۔ عموماً ان کانفرنسوں میں بیس سے زیادہ لوگ ہوتے۔ تفتیشی ٹیمیں، پراسیکیوٹر (prosecutor)، اُن سے اوپر کے ہر سطح کے عہدیدار، قانونی ماہرین، ڈپٹی چیئرمین اور پراسیکیوٹر جنرل اکاؤنٹبیلٹی (Prosecutor General Accountability, PGA) سب ہی اس کی میٹنگ میں بیٹھتے۔ اس بورڈ کے سامنے کیس پیش کیا جاتا، تمام اس پر اپنی رائے کا اظہار کرتے اور مشاورت کے بعد یہیں پر میں فیصلہ سناتا اور اس پر دستخط کرتا۔ چاہے کوئی کیس کھولنا ہو، بند کرنا ہو، اُسے کورٹ میں لے جانا ہو یا اُس سے منسلک کوئی معاملہ ہو، یہیں اُس پر فیصلہ کیا جاتا۔ یہ سارا سلسلہ وڈیو ریکارڈ ہوتا، تاکہ آئندہ کے لئے ریکارڈ رہے۔ NAB کے ہر صوبائی دفتر میں بھی اس ہی طرح کا سلسلہ جاری ہوا۔ ایک طاقتور ادارے کی طاقت کو لگام نہ ڈالی جائے، تو وہ عوام کے لئے خاصی پریشانیوں کا باعث بن سکتا ہے۔

NAB کے دفاتر میں لوگوں کا آنا جانا بند کیا۔ تفتیش کے لئے علیحدہ کمروں کا استعمال شروع کیا۔ NAB کے کم از کم تین عہدیداران تفتیش کے لئے موجود ہوتے۔ ان کمروں میں بھی وڈیو کیمرے نصب کیے گئے، اور تفتیش کا باقاعدہ وڈیو ریکارڈ رکھا جاتا۔ تمام دفاتر کو کمپیوٹر کے نظام سے آراستہ کیا۔ تفتیش روز کمپیوٹر پر چڑھانی ہوتی اور پھر تبدیل نہ کی جاسکتی۔ اس طرح سے ہر کام کی پیش رفت پر روز بروز نظر بھی رکھی جاسکتی۔ NAB کے کسی افسر کی کرپشن کو بے نقاب کرنے والے کے لئے دس لاکھ روپے کا انعام بھی رکھا۔

اُن ملاقاتیوں کے لئے جو کسی کیس کے سلسلے میں مجھ سے ملنے آتے، ایک علیحدہ کمرہ بنوایا۔ اس کمرے کی ہر میٹنگ بھی وڈیو ریکارڈ ہوتی۔ کچھ لوگوں کو یوں بھی پریشانی تھی کہ انہیں NAB میں بلوایا جاتا اور گھنٹوں بٹھائے رکھتے، کوئی پوچھنے والا نہ ہوتا۔ اس کا بھی باضابطہ طریقہ بنادیا۔ NAB کی حراست (arrest) میں لینے کی طاقت کو سختی سے محدود کر دیا، کہ کہیں چھوٹی چھوٹی چیزوں پر لوگوں کو حراست میں لے کر بدنام نہ کیا جائے۔ جن لوگوں کی تفتیش ہو رہی ہو اور اُن کی جائیداد منجمد کی گئی ہو، انہیں اُن کے جائز گھریلو اخراجات کے لئے رقم نکالوانے کی اجازت دی، تاکہ گھریلو فاقوں پر نہ آجائیں۔ جب کورٹ فیصلہ سنا دے، پھر چاہے اُس کی ساری جائیداد ضبط ہو جائے۔ کوشش کی کہ ملزموں کے ساتھ مجرموں جیسا برتاؤ نہ ہو۔ یہ بھی لازم کیا کہ کسی ملزم کا نام اُس وقت تک باہر نہ نکلے، جب تک اُس کا کیس کورٹ میں نہ پہنچ جائے۔ پھر چاہے کورٹ سے یہ نام نکلے، NAB سے نہ نکلے۔ اس ہی قسم کی اور کئی چھوٹی چھوٹی چیزیں کی گئیں جن سے NAB کی کارکردگی بہتر ہو سکے اور قوم کا اس اہم ادارے پر اعتماد قائم ہو سکے۔

یہ درست ہے کہ میرے آنے سے پہلے NAB میں انتخابی (selective) کام بھی ہوتا تھا۔ مگر یوں نہیں تھا کہ کسی پر خواہ مخواہ کا الزام لگایا جاتا۔ سیاسی مفاد کی خاطر کیس کھولے یا بند ضرور کئے جاتے رہے تھے، مگر ان میں کچھ ہوتا ضرور تھا۔ اگر کہیں غلط کیس بنا ہوگا، تو ہو سکتا ہے غلطی ہوئی ہو، یا یوں کہیں کہ پورے شواہد نہ مل سکے ہوں گے۔ لیکن میں نہیں سمجھتا کہ کبھی بد نیکی سے غلط کیس بنایا ہوگا۔ الیکشن میں NAB کا استعمال رہا ہوگا، کہہ نہیں سکتا۔ ایک مرتبہ کہیں چند سیٹوں پر انتخاب ہوئے۔ مجھ پر کافی زور ڈالا گیا، کسی کا کیس بند کرنے کے لئے اور کسی کا دوبارہ کھولنے کے لئے۔ لیکن میں نے سختی سے اس کھیل میں حصہ لینے سے انکار کر دیا۔

NAB میں مالیاتی معاملات کو دیکھنے کے لئے بنکوں کے ملازمین کام کرتے تھے۔ یہ افسران اپنے بنکوں سے تنخواہ اور دیگر مراعات پاتے اور NAB میں اپنا عرصہ پورا کرنے کے بعد واپس بنکوں میں چلے جاتے۔ اس طریقے سے بنکوں کا اثر و رسوخ NAB پر قائم تھا اور بنکوں کو خاصا تحفظ حاصل تھا۔ میں اس ناجائز سلسلے کو ختم کرنے پر لگا تھا، لیکن پورا نہ کر پایا اور NAB سے نکلنا پڑا۔ اس کو ختم کرنے میں سب سے بڑی رکاوٹ ہمارے وزیر اعظم شوکت عزیز صاحب تھے جو بینکوں کو اوٹ فراہم کرنے میں پیش پیش رہتے۔ وہ NAB کو اتنے پیسے دینے پر آمادہ نہیں تھے کہ ہم ایسے تجربے کار لوگوں کو رکھ سکیں اور بنکوں کے ملازمین کو واپس کر سکیں۔ ناجانے یہ سلسلہ ختم ہوا یا نہیں۔

کچھ معائنہ ٹیمیں بھی تشکیل دیں، جو اچانک موقع پر پہنچ کر کسی کام کو دیکھ سکیں۔ مثلاً کوئی سڑک یا عمارت سرکار نے بنائی ہو، تو اس سلسلے کے ماہرین کو ساتھ لے کر موقع پر اس کام کی جانچ پڑتال کی جاسکے۔ یا عام شہریوں کی اجتماعی تکلیف کو دور کر سکیں، مثلاً ادویات کی فیکٹری کا معائنہ، کھانے پینے کی اشیاء تیار کرنے کی فیکٹریوں یا فروخت کرنے کی جگہوں کا معائنہ، جانوروں کی قربانی گاہوں (abattoirs) کی جانچ پڑتال، دیکھنا کہ پٹرول پمپوں پر صحیح قسم کا پٹرول بکتا ہو، وغیرہ وغیرہ۔ ان کاروائیوں سے ظاہر ہے تمام کا تمام تو ٹھیک نہیں ہو سکتا تھا، مگر مقصد یہ تھا کہ معاشرے میں کچھ نہ کچھ پکڑ کا خوف (deterrence) قائم ہو سکے۔

حکومت کے اداروں میں کوئی معاملہ کھلا اور شفاف نہیں ہوتا۔ ہر چیز چھپی ہوئی رکھی جاتی ہے، جیسے کوئی قومی سلامتی کے اہم راز ہوں۔ اس ہی سے تمام بیماریاں جڑ پکڑتی ہیں۔ اس سلسلے میں NAB کے پریونشن (prevention) ونگ کو مضبوط کیا گیا، اور پہلے ہدف کے طور پر صحت کے محکمے کو چننا گیا۔ ہمارے قوانین میں لکھا تھا کہ NAB حکومتی اداروں کے کام کا جائزہ لے گی اور ایسے طریقے تجویز کرے گی جن کو اپنانے سے ان محکموں کی کارکردگی کو شفاف بنایا جاسکے۔ البتہ قوانین میں ان تجاویز پر عمل کرنا لازم قرار نہیں دیا گیا تھا۔ اس کا فیصلہ وزارتوں پر چھوڑ دیا گیا تھا۔ میں نے سوچا کہ وزارت صحت کے تمام دفاتر اور محکموں کا جائزہ لیتا ہوں، پھر دیکھوں گا کہ اپنے کام کو شفاف

دسواں سفر گوشہ تہائی

بنانے کے لئے انہیں کیسے آمادہ کیا جائے۔ ہر محکمے میں اتنے ناجائز کام ہو رہے تھے کہ پکڑے جانے کے خوف کی وجہ سے NAB کو آسانی سے ٹالا نہیں جاسکتا تھا۔ جب یہ کام شروع کیا تو وزارت صحت میں خاصی ہل چل مچی، لیکن وہ ہمارے کام کو روک نہ سکے۔ مگر یہ بھی، بہت سے اور کاموں کی طرح، NAB سے جلد نکلنے کی وجہ سے آدھے راستے ہی میں رہ گیا۔

ان میں سے چند ابتدائی ترجیحات کا اعلان NAB کی ویب سائٹ (website) پر جنوری کے مہینے میں کیا گیا۔ کچھ ہی دن بعد ایک اخبار میں خبر چھپی۔ لکھا تھا کہ فیڈرل سیکرٹریوں کی ایک میٹنگ ہوئی، جس میں خدشات کا اظہار کیا گیا کہ اگر سرکاری ملازمین کو NAB سے پناہ نہ دی گئی، تو حکومت کا کام نہیں چل سکے گا۔ یہ بھی کہا گیا کہ NAB کا ادارہ عزت دار لوگوں کو ذلیل کرتا ہے اور سرکار کے کاموں میں رکاوٹ ڈالتا ہے۔ کوئی بھی سرکاری ملازم ایسے ماحول میں فیصلہ لینے سے ڈرتا ہے۔ پھر کیبنٹ سیکرٹری صاحب نے ایک کمیٹی تشکیل دی، کہ اس مسئلے کا حل تلاش کرے۔ میں نے یہ خبر پڑھی تو خاصا حیران ہوا۔ مجھے ابھی آئے ہوئے شاید دو ماہ ہی گزرے ہوں گے، اس سے پہلے بھی تو NAB کئی سالوں سے چل رہا تھا، آخر میں نے ایسا کیا کیا کہ اتنی پریشانیاں پیدا کر دیں؟ شاید یہ اعلان کہ NAB کا فوکس حکومتی مشینری پر ہوگا اور ان سے پیسے واپس لے کر کیس بند کرنے کا سلسلہ بھی نہیں کیا جائے گا، پریشانی کا باعث رہا ہو۔ یا شاید میری شہرت (reputation)، کہ سنتا نہیں، بھی باعث تشویش رہی ہو، کہہ نہیں سکتا۔ پھر میں نے کیبنٹ سیکرٹری صاحب کو خط لکھا کہ اگر NAB سے کچھ پریشانیاں تھیں تو مجھ سے کوئی رابطہ کر لیتے اور اس مسئلے کا ہم مل کر کوئی حل نکال لیتے۔ یوں مجھ پر میڈیا کے ہاتھوں دباؤ ڈالنے کی کیا وجہ ہے؟ پھر میں اُن سے ملنے گیا۔ نہایت ہی اچھے انسان تھے، جن سے مل کر قدر کرنے کا دل چاہے۔ اُنہوں نے کہا ضرور اس کا مل کر کوئی حل نکال لیں گے، لیکن اس کے بعد کوئی حل نکالنے کی کوشش نہیں ہوئی۔ اخبار کی یہ خبر، میرا خط اور کیبنٹ سیکرٹری صاحب کا جواب کتاب کے آخر میں دیکھ لیں۔ (ضمیمہ "ب"، "ج"، "د")۔

عریانیوں کو اوڑھ لیا شال کی طرح*

NAB میں آنے کے چند مہینے کے اندر ہی مجھے احساس ہو گیا تھا کہ حکومت کا سارا نظام اور ملک کے بڑے بڑے اشخاص، تمام ہی میرے خلاف صف آراء ہیں۔ پھر میں نے سوچا کہ میڈیا کو ساتھ لیتا ہوں، کچھ اپنے لئے حمایت اکٹھی کروں، یوں اکیلے کیسے اور کس کس سے لڑوں گا۔ میڈیا کے چند اہم نمائندوں کو ۴ مئی ۲۰۰۶ کو چائے پر بلایا، کچھ نے معذرت کر لی۔ تفصیل سے NAB کے بارے میں بریفنگ (briefing) دی، جو رد و بدل کی تھیں وہ بتائیں، اپنی ترجیحات بیان کیں۔ میں نے اُن سے کہا، "مجھے احساس ہے کہ آپ پر مجھ سے زیادہ بوجھ ہے۔ میرا ایک نکاتی ایجنڈا ہے، اور مجھ سے سنہلتا نہیں، آپ نے اس قوم کا ضمیر ہونے کا بیڑا اٹھایا ہے اور یقیناً آج کل کے حالات میں، آپ کی زندگی پر اس کا خاصہ بوجھ ہوگا۔ مجھے خوشی ہے کہ NAB کی selectivity آپ کے ضمیر کو چھتی ہے۔" پھر میں نے کہا، "میں آج آپ کے ساتھ اپنے خوف اور اپنی امیدیں اس توقع سے بانٹ رہا ہوں، کہ خوف سے نکل کر امید تک آنے میں مجھے آپ کی مدد حاصل رہے۔ آپ کو ایک دوسرے کا ساتھ ہے، لیکن میں خود کو یہاں بالکل تنہا محسوس کرتا ہوں۔"

میں نے اُن سے کہا، "کرپشن اس طرح ہمارے معاشرے میں رچ بس گئی ہے کہ اس کو نہ ہی سیاست سے جدا کیا جاسکتا ہے، نہ گورننس سے، نہ عدلیہ سے اور نہ ہی تجارت، ہسپتالوں، سکولوں یا انفرادی باہمی تعلقات سے، اور نہ ہی ہماری مسجدوں سے۔ شاید اب یہ ہماری زندگیوں میں اس طرح سرایت کر چکی ہے، کہ اس سے چھٹکارا پانا مشکل ہو۔ مگر میں نے آپ کو یہاں یہ رونا رونے کے لئے نہیں بلایا۔ میں نے آپ کا تعاون حاصل کرنے کے لئے آپ کو زحمت دی ہے، کیونکہ میں جانتا ہوں کہ آپ کو اس کرپشن کے ڈسے ہوئے مظلوموں کی چیخیں مجھ سے زیادہ صاف سنائی دیتی ہیں۔" پھر میں نے کہا "میں یہ کام نہیں کر سکتا۔ میں اس ذمہ داری کو نہیں نبھاسکتا جو مجھے سونپی گئی ہے، کرپشن نہیں مٹا سکتا۔ یہ میری صلاحیت سے باہر ہے۔ پھر بھی چونکہ میں ایک سپاہی ہوں، گوریلا ہو چکا ہوں، جیسے بھی ہو سکا آخری حد تک کرپشن کے خلاف لڑوں گا۔ یہ کہتے ہوئے میں اس حقیقت سے بھی آنکھیں بند کر لوں گا، کہ کس حقارت سے آج آپ قوم کے ایک سپاہی کو دیکھتے ہیں۔"

پھر انہیں NAB کی ساری تفصیلات دینے کے بعد میں نے آخر میں کہا، "میری کوشش رہے گی کہ NAB کو ایسے مقام پر پہنچاؤں کہ یہ ادارہ عزت کے لائق ہو۔ شاید مجھ پر 'آئیڈیالٹ' کا ٹھپہ لگایا جائے، مگر میں نے یہی دیکھا ہے کہ اصلیت ہمیشہ آئیڈیل سے نیچے ہی رہتی ہے، لیکن اس کا یہ مطلب نہیں کہ اپنے آئیڈیل کا چراغ بجھا دیں۔"

میں نے NAB کے مستقبل کے بارے میں کہا، "NAB کو سیاست سے چھٹکارا پاتے ہوئے ایک عرصہ لگے گا، اور ہمیں ہوش سے چلنا پڑے گا، ورنہ یہ اینٹی کرپشن کا محل زمین بوس ہو جائے گا۔ ہمارے فیڈرل سیکرٹری اس وقت بھی NAB کے قوانین میں ردوبدل کی کوشش میں لگے ہیں۔" اپنی صفائی پیش کرتے ہوئے کہا، "ایک مجرم کی گردن کی اتنی قیمت نہیں کہ جب الیکشن سرپر ہوں تو حکومت کو غیر مستحکم کر دیا جائے، اور نہ ہی اتنی قیمت ہے کہ NAB کے مستقبل کو داؤ پر لگا دیا جائے۔" میں نے کہا، "میری پوری کوشش ہوگی کہ NAB کو الیکشن کے کھیل سے باہر رکھوں۔ ابھی سے کچھ سیاسی حلقوں سے ایک دوسرے کے خلاف شکایات آنی شروع ہو گئی ہیں۔ آج اینٹی کرپشن کسی پارٹی کا ایجنڈا نہیں۔ سول سروس بھی چھوٹ چاہتے ہیں اور آدھی درجن مقدس گائیوں کی فائلیں میرے دراز میں پڑی ہیں۔ چینی کی انکوائری بند کروائی جا چکی ہے۔ تیل کی انکوائری پر دباؤ بڑھ رہا ہے۔ ہر طرف یہی چیخ و پکار ہے کہ معیشت ڈوب جائے گی، حکومت کی مشین ٹھہر جائے گی۔ مجھے یہ سمجھایا جا رہا ہے کہ جس قوم نے اینٹی کرپشن کو اپنا focus بنالیا، وہ ڈوب جائے گی اور یہ کہ کرپشن اور ترقی ایک دوسرے سے علیحدہ نہیں کیے جاسکتے۔ میری کوشش ہے کہ کوئی توازن قائم رکھ سکوں، مگر میں جانتا نہیں کہ یہ توازن کہاں ٹھہراؤں۔ میری رہنمائی کریں۔ NAB کی بدخواہی نہ کریں، ملک کو اس ادارے کی ضرورت ہے۔ NAB کی مدد کریں۔"

یہ ملاقات بھی اُس ہی کمرے میں ہوئی جہاں ایگزیکٹو بورڈ کی میٹنگ ہوتی تھی اور یہ بھی وڈیو ریکارڈ ہو گئی۔ میں نے بھی ایک کاپی رکھ لی۔ میں نے دل سے یہ باتیں کہیں، بہت خلوص سے انہیں پکارا، لیکن چونکہ میں سابقہ فوجی تھا، شاید اُن کے دلوں میں میرے خلاف یہی تاثر قائم رہا کہ میں حکومت کا ہی کارندہ ہوں، یوں ہی انہیں متاثر کرنے کو بلا لیا ہے۔ کچھ حاصل نہ ہو سکا۔ مجھ پر کچھ اُچھالا جاتا رہا اور میں اپنی سی کوشش میں لگا رہا۔ لڑتا رہا۔ ایک سابقہ گورنر صاحب نے تو یوں بھی کہہ دیا کہ یہ آستین کا سانپ ہے، حالانکہ جانتے تھے کہ میں اُن کی طرح کسی کی آستین میں نہیں پلتا۔

پھر ۹ دسمبر ۲۰۰۶ کو جب اینٹی کرپشن ڈے منایا گیا، ہم نے "United Against Corruption" کی آواز کے ساتھ کانٹینیویشن یونیورسٹی پر مارچ بھی کی۔ ایدھی صاحب آئے اور میاں سومرو صاحب اور چند درد رکھنے والے، جن میں گلوکار شہزاد رائے اور رضا ہراج MNA صاحب بھی شامل تھے۔ اُس ہی دن کی تقریب میں صدر صاحب کو آنا تھا، نہیں آئے۔ وزیر اعظم صاحب آئے اور NAB کو بہت برا بھلا کہا۔ کہا یہ ادارہ نا اہل ہے، کرپٹ ہے اور حکومت کے باعزت ملازمین کو ذلیل کرتا ہے۔ کرسیاں بھرنے کے لئے سکولوں کے طلباء کو بلا لیا تھا، اور کسی کو تو ہم پر اعتقاد تھا نہیں۔ صرف سیاسی نعرے کے طور پر NAB کی بات کرتے، جنہیں دوست کہتے ہیں وہ بھی، اور جنہیں دشمن کہیں وہ بھی۔ شوکت عزیز صاحب جب چلے گئے، تو چائے کے وقفے کے دوران، کچھ اخبار والوں نے پوچھا کہ آخر کیا معاملہ

دسواں سفر گوشہ تہائی
ہے، وزیر اعظم آپ سے کیوں اتنے ناراض ہیں؟ میں نے کہا کہ آپ کو ان سے پوچھنا چاہیے تھا، تو کسی نے کہا کہ ہم جانتے ہیں، یہ ناراضگی
اس لئے ہے کہ آپ تیل کے سلسلے کی انکوائری بند نہیں کر رہے۔ جانتے تو سب ہی تھے، لیکن کوئی ہاتھ تھامنے کو تیار نہ تھا۔ ہمیشہ کی طرح اکیلے
ہی لڑتا رہا۔

پھلکے سچے ہوں جیسے پھلوں کی دکان پر*

"صدر صاحب نے چینی کی انکوائری بند کروادی ہے۔" جنرل حامد جاوید صاحب کا فون تھا، جو صدر صاحب کے ساتھ چیف آف سٹاف (COS) تھے۔ میں نے کچھ جھٹ کی کہ ابھی تو شروع ہی کی ہے اور یہ کہ بند کرنے کے بہت بُرے اثرات ہوں گے، وغیرہ وغیرہ، تو کہا، "یہ اُن کا ایگزیکٹو آرڈر (executive order) ہے۔ اب یہ انکوائری نہیں ہوگی۔" میں نے صدر صاحب سے فون پر بات کرنے کی بہت کوشش کی مگر آنے والے کئی دنوں تک نہ ہی میں اُن سے مل سکا اور نہ ہی میرا رابطہ فون پر ہوسکا۔ وہ بہت "مصرف" تھے۔ پھر میں نے اخبار میں اعلان کیا کہ "چینی کی انکوائری بند کر دی گئی ہے، کیونکہ یہ کہا جا رہا ہے کہ اس انکوائری کی وجہ سے چینی کی قیمتوں میں مزید اضافہ ہو سکتا ہے، حالانکہ NAB اس موقف سے اتفاق نہیں کرتا۔" اس خبر کے اخبار میں آنے پر جنرل حامد صاحب نے فون پر خفگی کا اظہار کیا، کہ انکوائری بند کرنے کی خبر اخبار میں کیوں دی گئی؟ میں نے کہا، "اس لئے کہ عوام اس امید پر نہ بیٹھے رہیں کہ NAB اُن کے مفاد کا بدستور تحفظ کر رہا ہے۔ جب شروع کرنے کی اطلاع دی، تو بند کرنے کا بتانا بھی لازم ہے۔ کیا اُنہیں دھوکے میں رکھا جائے؟" پھر یہ سوال اٹھایا کہ یہ کیوں لکھا کہ 'NAB اس موقف سے اتفاق نہیں کرتا'۔ میں نے کہا، "اختلاف کرتا ہے اسی لئے کہا ہے، اور یہ بات آپ اچھی طرح جانتے ہیں، اور یہ بھی جانتے ہیں کہ انکوائری کیوں بند ہوئی۔" کچھ بد مزگی کے بعد بات ختم ہو گئی۔

NAB میں میرے آنے کے کچھ عرصے بعد بازار میں چینی کی قیمت میں یکا ایک اضافہ کر دیا گیا تھا۔ اخباروں میں بھی اس کے بارے میں کافی تفصیلات چھپیں۔ میں نے NAB کے ذریعے کچھ بنیادی باتیں معلوم کیں، تو قیمت بڑھنے کی کوئی معقول وجوہات سامنے آئیں۔ ایک چھوٹی سی ابتدائی تفتیش (preliminary inquiry) کی، جس کا نتیجہ یہ تھا کہ صرف چینی کی ملوں کے مالکان کی مرضی سے قیمت بڑھائی گئی ہے۔ اس کی وجوہات ہماری مارکیٹ کے حالات پر مبنی نہیں تھیں۔ میں نے اس کی باقاعدہ انکوائری کے احکامات جاری کر دیے۔ یہ دیکھتے ہوئے کہ چینی کے کاروبار کی پیچیدگیاں شاید ہماری سمجھ میں نہ آسکیں، میں نے ریٹائرڈ بریگیڈیئر اکرم علی خان صاحب سے درخواست کی کہ اس سلسلے میں اپنے تجربے سے ہمیں مستفید فرمائیں۔ یہ فوجی فاؤنڈیشن میں کئی سال چینی کے کاروبار سے منسلک رہ چکے تھے۔ ان کا تعلق میری ہی یونٹ سے تھا اور مجھے ان پر پورا اعتماد تھا۔

انکوائری شروع ہوتے ہی کچھ سیاسی حلقوں میں کھلبلی مچ گئی۔ پہلے ان کا ایک وفد وزیراعظم صاحب کے پاس آیا، پھر صدر صاحب کو بھی ملنے گیا۔ ان سب کے نام اور تفصیلات اخباروں میں آتی رہیں۔ لیفٹیننٹ جنرل حامد جاوید صاحب نے مجھ سے کہا کہ میں:

* شکیب جلالی

دواں سفر گوشہ تہائی

انکوائری بند کردوں ورنہ مارکیٹ سے چینی اٹھالی جائے گی۔ پھر مجھے چیرمین CBR عبداللہ یوسف صاحب ملے، اور سمجھایا کہ تم مارکیٹ کے اُتار چڑھاؤ (market dynamics) کو نہیں سمجھتے ہو، ذرا آرام سے چلو۔ یہ ہماری پہلی ملاقات تھی۔ میں نے لوگوں کی مشکلات کا ذکر کیا، تو کہنے لگے، "اگر تم نے انکوائری بند نہ کی تو چینی کی قیمت دُگنی ہو جائے گی۔ تم کیا کر لو گے؟ پھر لوگوں کا کیا ہوگا؟" میں وزیرِ اعظم صاحب سے بھی ملا۔ میں نے کہا صرف چار چھ بڑے حضرات ہیں، جن کے زور پر چینی کی قیمت یوں بڑھائی گئی ہے۔ یہ تو حکومت کے منہ پر طمانچہ ہے۔ اگر حکومت اور NAB مل کر بھی انہیں قابو میں نہ رکھ سکیں تو پھر گورنمنس کیا رہ جائے گی؟ کہنے لگے، "یہ گورنمنس کا مسئلہ نہیں ہے، اس میں صرف سیاسی پیچیدگیاں ہیں۔" انہوں نے کہا، "مجھے کوئی اعتراض نہیں اگر آپ یہ انکوائری جاری رکھیں۔"

میں نے سوچا کہ کچھ عرصے کا ہی وقت چاہیے کہ چینی کی قیمت سنبھلی رہے، پھر انکوائری کے بعد حالات قابو میں آجائیں گے۔ دفتر آ کر چینی برآمد کرنے والے بڑے تاجروں کو کہلوا دیا کہ وہ اسلام آباد آ کر مجھے ملیں۔ انہوں نے خوشی کا اظہار کیا اور کہا کہ کسی قسم کی فکر کی ضرورت نہیں، ہم نہ ہی مارکیٹ سے چینی غائب ہونے دیں گے اور نہ ہی اس کی قیمت میں اضافہ ہوگا۔ لیکن اس سے پہلے کہ میری ان تاجران سے ملاقات ہوتی، چینی کی انکوائری بند کروادی گئی۔

اس انکوائری کے بند ہونے سے NAB کی ساکھ پر بہت برا اثر پڑا۔ اخبار میں ہمارے اعلان کے باوجود کوئی اخبار والا پوچھنے نہ آیا کہ ماجرا کیا ہے۔ صرف کچھ دن کچھ اُچھالا جاتا رہا۔ شاید انہوں نے سوچا ہو کہ سارا ہی ڈرامہ چل رہا ہے، چیرمین NAB بھی فوجی ہے، اسی ڈرامے کا کردار ہوگا۔ وہ دن ہی ایسے تھے۔ تمام میڈیا مشرف صاحب کے خلاف ہو چکا تھا۔ فوج کی پہچان وہ کالے بوٹ بن چکے تھے، جن کے نیچے عوام کو کچلا گیا۔ چینی کی ملوں کے مالکان، سیاسی وڈیرے، عوام کے اصل غم گسار، جھوٹ سے بھرے دل لئے، کلف لگائے لباس پر چمکتے چہرے سجائے، سیاہ بوٹ پہننے والے کی گردن پر پاؤں رکھے کھڑے تھے۔ اُس ہی کے ساتھیوں کے کندھوں پر ہاتھ رکھے۔ اور وہ، سر جھکائے یہی سمجھتا رہا کہ ہر چیز میری گرفت میں ہے۔ سمجھا کہ جب میرے ارد گرد طواف کرنے والے خوش ہیں، تو سب ٹھیک ہی ہو گا۔ اس خود فریبی میں سکون تھا۔ اس میں تصادم نہیں تھا، جس سے وہ گھبراتا تھا، جس سے اُس کا حوصلہ ٹوٹتا تھا۔ اس محدود اور محفوظ گوشے میں بہادری کو کوئی لگا رہا نہیں تھا۔ خوف چھپا رہتا۔ اس میں تحفظ کا سراپ تھا۔ اس ہی راہ پر چلتے چلتے وہ تنگ گلی میں پھنستا چلا گیا۔

گجر بجا حکم خامشی کا، توچپ میں گم ہو گئیں صدائیں *

صدر صاحب نے میز پر رکھے کاغذات کو ہاتھ کے جھٹکے سے دھکیلا، وہ پھسلتے ہوئے میز کے آخری سرے پر جا کر ٹھہر گئے۔
 "I don't care what you have written in it. I don't even want to read it." (مجھے پرواہ نہیں کہ تم نے اس میں کیا لکھا ہے۔ میں اسے پڑھنا بھی نہیں چاہتا)، انہوں نے غصے سے مجھے گھورتے ہوئے کہا۔ یہ اکتوبر ۲۰۰۶ کی بات ہے۔ وہ اپنے دفتر میں بیٹھے تھے، میز کے سامنے میں اور جنرل حامد جاوید۔ تیل کی انکواری کی رپورٹ تھی، جسے انہوں نے یوں پھینکا۔ ذہن سے خیال گزرا کہ اس ملک کے محکمہ احتساب کا سربراہ ہوں، اور آپ میری بات بھی سننا گوارا نہیں کرتے! میں اُٹھ کر کھڑا ہو گیا۔ میری آواز بھی اُٹھ گئی، "پھر کوئی اور چیئر مین NAB ڈھونڈ لیں، میں آپ کے ساتھ کام نہیں کر سکتا۔" جنرل مشرف بھی کھڑے ہو گئے، جنرل حامد بھی۔ کچھ دیر سناٹا رہا۔ وہ مجھے شپٹائی ہوئی نظروں سے دیکھ رہے تھے۔ میں کمرے سے باہر جانے لگا، تو جنرل حامد کی آواز آئی، "سر، ہم اس انکواری کو دیکھتے ہیں۔ کوئی حل نکال لیں گے۔" وہ بھی میرے پیچھے باہر آ گئے۔

میں جنرل مشرف کو اس انکواری کے بارے میں شروع میں ہی بتا چکا تھا۔ NAB میں آنے کے بعد اُن سے میری پہلی ملاقات یکم اپریل ۲۰۰۶ کو ہوئی، جب انہیں ۲۰۰۵ کی سالانہ رسمی رپورٹ دینے گیا۔ میں نے انہیں کرپشن کی روک تھام کے بارے میں اپنے تاثرات اور کام کی کچھ تفصیلات بتائیں۔ جو ترامیم NAB کی تنظیم اور کاروائیوں میں کی تھیں وہ بتائیں، یہ بھی بتایا کہ نواز شریف صاحب کے خلاف کیسز پر اب تک کوئی انکواری نہیں ہوئی ہے، کئی ڈبوں میں کاغذات بند پڑے ہیں۔ وہ چونکہ ملک میں حاضر نہیں ہیں، انکواری مکمل تو نہیں کی جاسکتی، مگر اتنا کام تو ہو سکتا ہے کہ الزامات کا کوئی جواز بنے۔ میں نے کہا کہ اگر وہ کسی وقت ملک میں واپس آتے ہیں، تو بغیر کسی جواز کے NAB اُن کو گرفتار نہیں کر سکے گا۔ میں نے یہ اس لئے کہا کہ کہیں اگر ایسا موقع آئے، تو وہ مجھ سے کوئی توقع نہ رکھیں۔ مگر انہوں نے کہا کہ ان کاغذات کو بند ہی پڑے رہنے دیں۔ کیونکہ اس سلسلے سے سیاسی توازن منسلک تھا، میں نے یوں ہی کیا۔ بے نظیر بھٹو اور زرداری صاحب کے خلاف کیسز کا احوال بتایا۔ پھر میں نے انہیں یہ بتایا کہ میں چینی اور تیل کے سلسلے میں انکواری کر رہا ہوں، تھوڑی بہت تفصیلات بھی بتائیں۔ وہ یہ سن کر کچھ غیر مطمئن سے ہوئے، اور کہا کہ ان میں کچھ نہیں نکلے گا، خواہ مخواہ اپنا وقت ضائع کر دو گے۔ میں نے اُن سے کہا کہ میں انکواری کر کے آپ کو بھجوا دوں گا، آپ خود فیصلہ کر لیجیے گا کہ کیا کرنا ہے۔ اس پر انہوں نے بات کو جانے دیا۔ جو دباؤ اُن پر پڑنے والا تھا، وہ اس سے ابھی واقف نہیں تھے، اور نہ ہی میں۔

دواں سفر گوشہ ہتھائی

اخبارات میں خاصی تفصیلات چھپ چکی تھیں کہ وزارت پٹرولیم میں بڑے پیمانے پر گھلے ہو رہے ہیں۔ شاید کچھ وزارت کے دل جلے افسران نے اخبار والوں کو اس خُرد بُرد کی تفصیلات فراہم کی تھیں۔ جب میں نے ابتدائی تفتیش کروائی، تو ان تمام الزامات میں حقیقت دکھائی دی۔ پھر ۳۰ مارچ ۲۰۰۶ کو، ۲۰۰۱ سے تیل کی قیمتوں کے تعین کے طریقہ کار اور اُس پر عمل درآمد کی باقاعدہ انکوائری کے احکامات جاری کئے۔ کیبنٹ کے ایک فیصلے کے تحت یکم جولائی ۲۰۰۱ سے تیل کی قیمتوں کا تعین (Oil and Gas Regulatory Authority) OGRA کو سونپ دیا گیا تھا، لیکن حقیقتاً یہ کام نجی آئل کمپنیوں کی ایڈوائزری کمیٹی (OCAC) ہی کرتی رہی۔ اس انکوائری کا تعلق کسی ملکی یا غیر ملکی تیل کی کمپنی یا پاکستان میں موجود کسی ریفائنری کی کارکردگی سے نہیں تھا۔ صرف یہ دیکھنا تھا کہ عوام جو پیٹرول پمپوں پر تیل کی قیمت ادا کرتی ہے، اُس کا تعین حکومت کس طرح سے کر رہی ہے۔ اس کے لئے بھی ایک ایکسپٹ، عباس رضا صاحب، کی امداد حاصل کی، تاکہ اس پیچیدہ مسئلے کو سمجھنے میں دشواری نہ ہو۔ آہستہ آہستہ میں نے بھی اس پر کچھ دسترس پالی۔ پھر وزارت پٹرولیم اور وزارت خزانہ کے افسران کو بلوایا، تمام متعلقہ کاغذات حاصل کئے اور اُن کے نکتہ نظر کو سنا گیا۔

وزیر اعظم صاحب کے مشیر برائے توانائی (Advisor to PM on Energy) مختار احمد صاحب انکوائری شروع ہونے کے دو ہفتے بعد ہی NAB میں آگئے اور تفصیلات جانی چاہیں۔ اُنہیں تمام تفصیلات، جو اُس وقت تک NAB کے علم میں تھیں، بتائی گئیں۔ وہ انکوائری کے حق میں نہیں تھے۔ اُن کا کہنا تھا کہ کوئی بدعنوانی نہیں ہوئی، اور اس انکوائری سے صرف حکومت کے کام میں مداخلت ہوگی۔ پھر سیکرٹری پیٹرولیم، احمد وقار صاحب، مجھ سے ملنے آئے اور اُنہیں بھی تمام تفصیلات بتائیں۔ انکوائری کے دوران لگا تار مجھ پر اسے ختم کرنے کے لئے دباؤ پڑتا رہا۔ زیادہ متحرک جنرل حامد اور چیرمین CBR عبداللہ یوسف صاحب تھے۔ جب عبداللہ یوسف صاحب کے بیان کا وقت آیا، تو میں نے کہا کہ یہ بہت سینئر افسر ہیں، ان سے پوچھ لیں کہ کیا ہم انہیں ایک سوال نامہ بھیج دیں، جس کے جواب وہ لکھ کر ہمیں بھیجیں، یا کسی افسر کو اُن کے پاس بیان لینے کے لئے بھیج دیں، مگر اُنہوں نے کہا کہ میں خود NAB میں آؤں گا۔ اُن کے آنے پر، NAB کے ڈپٹی چیرمین میجر جنرل محمد صدیق نے اُن کا کارپورچ میں استقبال کیا، پھر اپنے دفتر لے گئے، وہیں اُن سے چند سوالات پوچھے گئے، چائے پلائی، پھر جنرل صاحب اُنہیں کار تک چھوڑنے آئے۔ مگر اس بات کا اس قدر جھوٹا پروپیگنڈا کیا گیا، کہ اتنے باعزت انسان کو NAB نے بلا کر ذلیل کیا۔ وزیر اعظم صاحب نے اس کی جھوٹی کہانیاں بنائیں اور جنرل مشرف صاحب بھی سُن کر خفا ہوئے، اور فون پر مجھ سے اس کا اظہار بھی کیا۔

مجھے ایک دن دفتر بلا لیا۔ خاصے ناراض تھے۔ کہنے لگے، "یہ تم کیا تیل کی انکوائری میں لگے ہو؟ اس میں کچھ گھپلا نہیں ہے۔ پہلے تم نے چینی کی انکوائری شروع کر دی، اس میں بھی کچھ نہیں تھا۔ میں نے خود تمام تفصیلیں معلوم کیں ہیں، خود دیکھا ہے۔ DHA کی بھی

دسواں سفر گوشہ تنہائی

انکوائری کر دی تھی، اس میں بھی کچھ نہیں تھا۔" میں پُپ رہا، تو کہا، "تم بہت ہٹ دھرم (rigid) ہو، تم سمجھتے ہو کہ تم ہی ٹھیک ہو، باقی ساری دنیا غلط ہے۔" اتنا سن کر مجھ سے رہا نہ گیا۔ چینی کی انکوائری شروع ہوتے ہی بند کروادی تھی۔ خود کیا دیکھتا تھا؟ وہی ناجولوں کے مالکان نے بتایا؟ میں نے کہا، "سر، ذرا ٹھہر جائیں۔ اُس مباحثے کو یاد کریں، جس میں آپ نے کہا تھا کہ ۹۰ فیصد تمہاری بات مان لیتے ہیں کہ تم ٹھیک ہو، لیکن ۱۰ فیصد یہ بھی تو گنجائش دو کہ ہم ٹھیک ہو سکتے ہیں۔ خود اپنے منہ سے آپ نے یہ بات کہی تھی۔ مگر حیرت کی بات ہے کہ منصوبہ پھر بھی اُس ۱۰ فیصد تخمینے پر ہی بنایا گیا، ۹۰ فیصد پر نہیں۔ اُس دن بھی آپ نے مجھ پر یہی الزام لگایا تھا، تو کون ریجڈ (rigid) تھا؟ اور آج بھی مجھ پر یہی فیصد تخمینے پر ہی بنایا گیا، ۹۰ فیصد پر نہیں۔" کون سا مباحثہ؟ مجھے تو یاد نہیں۔" سارے کورکمانڈروں کی موجودگی میں گھنٹوں کی بحث اور اُس کا وہ الزام ہے! "کھسیانا سامنہ بنالیا اور کہا، "کون سا مباحثہ؟ مجھے تو یاد نہیں۔" سارے کورکمانڈروں کی موجودگی میں گھنٹوں کی بحث اور اُس کا وہ انجام، کون بھول سکتا ہے؟ پھر میں نے دوسری بات یاد دلائی، "اور جہاں تک DHA کا سوال ہے، آپ نے خود کہا تھا کہ بڑے پیمانے پر کرپشن ہوئی ہے، انہیں سزا ملنی چاہیے، لیکن کچھ اور وجوہات کی بنا، اپنا فیصلہ مؤخر کر دیا تھا۔ آپ کو یاد ہے نا؟" موڈ بدل گیا، آواز دھیمی ہو گئی، کہنے لگے، "دیکھو نا، تم نے بات ہی اتنی بڑھادی تھی۔ خاموشی سے مجھے بتا دیتے، ہم ان لوگوں کو وہاں سے ہٹا دیتے۔ DHA کا مسئلہ ختم ہو جاتا۔" یعنی معاملے کو جھاڑ کر قالین کے نیچے کر دیتے۔ خیر، پرانی باتیں تھیں، اب انہیں مزید چھیڑ کر کیا کرتا۔ یہ کہہ کر واپس آ گیا کہ میں انکوائری مکمل کر کے آپکو بھجوادوں گا۔ جو آپ مناسب سمجھیں کر لیجئے گا۔

جنرل حامد صاحب کے دفتر سے لگا تار دباؤ پڑتا رہا کہ جتنی بھی انکوائری کی ہے، ختم کر کے بھجوائیں۔ جون کے شروع میں، اُن کو انکوائری کی ابتدائی رپورٹ کی تفصیلات اُن کے دفتر جا کر بتائیں۔ سُن کر پریشان ہو گئے، کہنے لگے یہ ٹھیک نہیں لگتا۔ رپورٹ اپنے پاس رکھنے لگے، میں نے کہا کہ ابھی اس پر کچھ کام رہتا ہے، میں جلد ہی آپ کو بھجوادوں گا۔ ۱۳ جون کو میں نے انکوائری کی ابتدائی رپورٹ، سرکاری طور پر، وزیر اعظم صاحب کے دفتر بھجواد دی، اور صدر صاحب کے لئے اُس کی کاپی جنرل حامد کو۔ میں نے منسلک خط میں، جس پر میرے دستخط تھے، لکھا کہ ابتدائی انکوائری میں ۸۱ ارب روپے سے زائد کی مالیاتی خرد برد کا انکشاف ہوا ہے۔ لکھا کہ کوئی مناسب تاریخ طے کر لی جائے، تاکہ متعلقہ شخصیات بیٹھ کر NAB کی اس رپورٹ پر غور کر سکیں اور کسی حتمی نتیجے پر پہنچ سکیں۔ اور یہ کہ موزوں ہوگا کہ اس میٹنگ سے پہلے، انکوائری کے انکشافات پر وزارت پیٹرولیم کے جوابات بھی لے لئے جائیں تاکہ معنی خیز مشاورت ہو سکے۔ (دیکھیں ضمیمہ "ص")

رپورٹ ملتے ہی جنرل حامد جاوید صاحب نے مجھے اپنے دفتر بلا لیا۔ بہت ناراض تھے۔ کہنے لگے، "آپ نے تو اس کو آفیشل (official) بنادیا، خط لکھ دیا۔ مجھے ویسے ہی انکوائری دے دیتے۔" میں نے کہا، "میں کوئی ذاتی کام تو نہیں کر رہا، آفیشل کام ہے، آفیشل طریقے سے ہی کروں گا۔" پریشانی میں کانڈوں کو الٹ پلٹ کر دیکھتے رہے۔ کہنے لگے، "اب اس کی سب کو خبر ہو جائے گی، یہ آپ نے کیا کیا؟" میں نے اُن سے کہا نہیں کہ آپ سب کے سب جوں کر اسے دبانے کی کوششیں کر رہے ہیں، اس ہی لئے میں نے یہ طریقہ اختیار کیا ہے۔

دسواں سفر گوشہ تنہائی

پھر میں نے اُن سے کہا، "آپ اس میں کیوں پڑتے ہیں اور صدر صاحب کو بیچ میں کیوں لاتے ہیں۔ حکومت کا کام ہے، وزیر اعظم صاحب کو کرنے دیں۔ میں نے اس ہی لئے خط وزیر اعظم صاحب کو لکھا ہے، آپ کو صرف اطلاع کے لئے کاپی بھجوائی ہے۔" پھر اُن کا تجس دیکھتے ہوئے کہا کہ ایک میٹنگ رکھوائی ہے جس میں NAB کی انکوائری ٹیم اپنی ابتدائی انکوائری کے انکشافات پیش کرے گی، اس میں حکومت کے تمام متعلقہ افسران بھی شامل ہوں گے، تاکہ میں اُن کا نکتہ نظر بذاتِ خود سُن لوں۔ تجویز دی کہ اگر آپ مناسب سمجھیں تو کوئی سے بھی ماہرین بھیج دیں تاکہ اُن کی رائے بھی سُن لوں اور منصفانہ طور پر کسی نتیجے پر پہنچ سکوں۔

سپریم کورٹ میں بھی اس سلسلے میں مولوی اقبال حیدر، انجینئر اقبال ظفر جھگڑا اور سینیٹر رخسانہ زبیری نے حکومت کے خلاف رٹ دائر کی تھی (Constitution Petition 32, 33, 34/2005)۔ کورٹ نے NAB کو ۲۲ جون کی تاریخ دی کہ اگر آپ کی رپورٹ تیار ہے، تو کورٹ میں پیش کریں۔ مجھ کو صدر کے دفتر سے منع کیا گیا کہ یہ رپورٹ ابھی نہیں دینی۔ رپورٹ ویسے بھی ابھی حکومت کے زیرِ غور تھی۔ میں نے کورٹ کو یہی جواب دیا کہ ہماری رپورٹ پر ابھی حکومت غور کر رہی ہے، اور ہمیں اُن کے فیصلے کا انتظار ہے۔

جب انکوائری پر آخری میٹنگ کی تاریخ طے ہو گئی، تو میں نے جنرل حامد صاحب کو دوبارہ فون پر کہا کہ کسی غیر جانبدار تیل کے کاروبار کو سمجھنے والے شخص کو بھیج دیں، تاکہ ہماری میٹنگ میں بیٹھ سکے، مگر انہوں نے کہا کہ آپ لوگ خود دیکھ لیں، ہم بعد میں دیکھیں گے۔ میں "بعد میں دیکھیں گے" کا مفہوم سمجھ رہا تھا۔ وزیر اعظم صاحب نے بھی کسی ایکسپٹ کو بھیجنے سے معذرت کر لی۔ ۴ جولائی کو یہ میٹنگ رکھی گئی۔ اس میں پیٹرولیم اور وزارت خزانہ کے تمام متعلقہ افسران آئے۔ NAB کی انکوائری بہت تفصیل سے کی گئی تھی۔ کسی الزام کا وزارت پیٹرولیم کے افسران کے پاس کوئی مناسب جواب نہیں تھا۔ پھر انکوائری کو حتمی شکل دے کر وزیر اعظم صاحب کو بھجوا دی، اُن سے ملنے بھی گیا۔ کہنے لگے آپ لوگوں کو اس معاملے کی اتنی سمجھ نہیں ہے، کچھ ماہرین سے اس انکوائری کا تجزیہ کروا لیتے ہیں۔ میں نے کہا ضرور۔ کہنے لگے، "میں اپنے مشیر برائے مالیاتی امور (Advisor to PM on Finance and Economic Affairs) ڈاکٹر سلمان شاہ صاحب اور مشیر برائے توانائی مختار احمد صاحب سے کہوں گا کہ وہ اس انکوائری کو دیکھ لیں۔ وہ آپ سے بھی آکر ملیں گے، تاکہ آپ کا نکتہ نظر جانچ سکیں۔"

واپس دفتر پہنچا، تو کچھ دیر بعد وزیر اعظم صاحب کا فون آیا۔ شاید وہ اب تک اپنے مشیروں سے مل چکے تھے۔ کہنے لگے، "ایک بات کہنی رہ گئی تھی، وہ یہ کہ ان ماہرین کا جو بھی فیصلہ ہوگا، وہ حتمی سمجھا جائے گا، کیونکہ یہ لوگ ان پیچیدہ چیزوں کو آپ سے اور مجھ سے بہتر سمجھتے ہیں۔ یہ بہت الجھا ہوا سلسلہ ہے، عام آدمی کی سمجھ سے باہر ہے۔ اگر ماہرین سمجھتے ہیں کہ انکوائری میں کچھ نہیں ہے، تو کیس ختم کر دیا جائے

"گا۔ میں نے کہا، "اگر اُن کی بات میری سمجھ میں آگئی اور مجھے تسلی ہوگئی، تو یقیناً کیس ختم ہو جائے گا۔" کہنے لگے، "جہاں تک حکومت پاکستان کا تعلق ہے یہ کیس ختم ہو جائے گا۔" میں نے کہا، "حکومت پاکستان تو جب چاہے یہ کیس ختم کر سکتی ہے، لیکن جہاں تک NAB کا تعلق ہے، یہ کیس تب بند ہوگا جب چیرمین NAB یہ سمجھے گا کہ کیس بند ہونا چاہیے۔" کہنے لگے، "جب وقت آئے گا تو دیکھا جائے گا۔" میں نے کہا، "سر، آپ وزیر اعظم ہیں، میں چاہتا ہوں کہ آپ کو وقت سے پہلے پتا ہو کہ آگے کیا ہونے والا ہے۔" کہنے لگے، "دیکھیں گے۔" بات ختم ہوگئی۔

ماہرین کی یہ ٹیم مجھے ملنے نہ آئی۔ ۲۳ اگست کو وزیر اعظم صاحب کے دفتر سے خط آیا۔ لکھا تھا NAB کی رپورٹ کا دونوں مشیروں نے جائزہ لیا ہے۔ اُن کا تجزیہ خط کے ساتھ منسلک ہے۔ ۲۴ اگست کو وزیر اعظم کے دفتر میں آپ کی رپورٹ اور اس تجزیے پر میٹنگ ہے۔ تجزیے کا نچوڑ یہ تھا کہ کوئی کریشن نہیں ہوئی۔ کچھ غلطیاں ہوئی ہیں جو درست کر لی جائیں گی۔ لکھا تھا کہ NAB میں اس کام کو سمجھنے کی صلاحیت ہی نہیں ہے۔ میں دیے ہوئے وقت پر وزیر اعظم کے دفتر پہنچ گیا، مشیر نہیں آئے۔ وزیر اعظم صاحب نے کہا اب اس معاملے کو جانے دیں، اس میں کچھ نہیں ہے، بہر حال آپ اپنی تسلی کے لئے مشیروں سے مل لیجئے گا۔ میں نے کہا کہ مشیروں نے تو مجھ سے ملے بغیر ہی رپورٹ بنائی، تو کہا کہ اب مل لیں۔ ۲۸ ستمبر کو مشیروں سے ملاقات ہو سکی۔ میں اور عباس رضا صاحب اُن کے دفتر گئے۔ اُن کے پاس NAB کی ہر بات کا سطحی سا جواب تھا، بالکل وہی جواب جو وزارت پیٹرولیم دیتی تھی، اور کسی منطق کو سننے پر آمادہ نہیں تھے۔ کہتے تھے دنیا میں تیل کی قیمتوں میں اضافے کی وجہ سے یہ سب ہوا ہے، حالانکہ انکواری میں تیل کی قیمت خرید وہی دکھائی گئی تھی جو اُس وقت تھی۔ مگر وہ صرف جھوٹے اور بے بنیاد جواز بیان کرتے رہے۔ میں میٹنگ کے بیچ سے اُٹھ کر چلا آیا۔ وزیر اعظم صاحب چونکہ ہر صورت اس انکواری کو ختم کروانا چاہتے تھے، میرے پاس اب اور کوئی چارہ نہ تھا، سوائے اس کے کہ معاملے کو صدر صاحب کی طرف موڑ دوں۔

اگلے دن انہیں خط کے ذریعے تمام معاملات سے آگاہ کیا۔ خط میں لکھا کہ وزیر اعظم صاحب نے اس سلسلے میں اپنے مشیروں کی ایک کمیٹی بنائی تھی، جس نے NAB سے مشاورت کے بغیر اپنی ایک طرفہ رپورٹ بنالی، اور وہی نکتہ نظر پیش کیا ہے جو وزارت پیٹرولیم دے رہی ہے۔ NAB کی انکواری میں لگائے کسی الزام کا براہ راست جواب نہیں دیا، اور نہ ہی کسی الزام کو رد کیا ہے۔ بنیادی طور پر کمیٹی کا یہ کہنا ہے کہ NAB حکومت کی پالیسی پر اعتراض کر رہا ہے، جو اُس کا اختیار نہیں۔ میں نے لکھا کہ یہ سراسر غلط تاثر ہے اور اس لئے دیا جا رہا ہے کہ انکواری کو مشتبہ بنایا جائے۔ کمیٹی کی رپورٹ میں چوری کے تمام الزامات کو تیل کے خرید و فروخت اور قیمتیں متعین کرنے کے نظام کی پیچیدگیوں اور حکومت کے کام میں چھوٹی چھوٹی غلطیوں کی آڑ میں چھپایا گیا ہے۔ کچھ چیزوں کے بارے میں لکھا ہے کہ اب وزارت نے وہ غلطیاں درست کر لی ہیں، مثلاً GST (General Sales Tax) کا نفاذ۔ مگر اس مد میں جو ۱۸ ارب روپے سے اوپر کا خسارہ

دسواں سفر گوشہ تہائی

حکومت کو ہوا، وہ کہاں سے پورا ہوگا؟ لکھا کہ کمیٹی کا کہنا ہے کہ اس نظام میں یقیناً کمزوریاں رہی ہیں لیکن یہ چیزیں وزارت خود ہی ٹھیک کر لے گی، اس میں NAB کو دخل اندازی کی ضرورت نہیں۔ میں نے یہ بھی لکھا کہ جنہیں غلطیاں کہا جا رہا ہے اُن سے اربوں روپے کا خسارہ ہوا ہے، یہ غلطیاں نہیں بلکہ بڑے پیمانے پر خرد برد ہے۔ لکھا کہ رپورٹ کہتی ہے کہ NAB اس لائق نہیں کہ اس پیچیدہ مسئلے کو سمجھ سکے، تو اگر NAB کی کارکردگی پر اعتقاد نہیں، تو انکواری کو مزید آگے بڑھا کر اختتام تک پہنچانے کے لئے کوئی سے بھی تجربہ کار ماہرین مارکیٹ سے لئے جاسکتے ہیں، تاکہ اس خورد برد سے مستفید ہونے والے حضرات کو انجام تک پہنچایا جاسکے۔ (دیکھئے ضمیمہ "ق")

جب یہ خط جنرل حامد کو ملتا تو کچھ دنوں بعد انہوں نے مجھے دفتر بلا لیا۔ اُن ہی دنوں مجھے خبر ملی تھی کہ صدر صاحب کو یہ بتایا گیا ہے کہ میں پیپلز پارٹی والوں کے ساتھ مل کر، جن کی سینئر رخسانہ زبیری نے سپریم کورٹ میں حکومت کے خلاف رٹ کی ہوئی تھی، حکومت کو بدنام کرنا چاہتا ہوں، اور یہ اس لئے کر رہا ہوں کہ مجھے جنرل مشرف نے فوج میں ترقی نہیں دی۔ دوسری مرتبہ یہ الزام مجھ پر لگایا گیا تھا، اور دونوں مرتبہ، چونکہ مشرف صاحب مجھے دباؤ میں لانا چاہتے تھے، انہوں نے اس الزام کو قبول کیا۔ اُن کے کھیل میں فٹ ہوتا تھا۔ یہ تسلیم کر لینے سے کہ میں اصولی بات کر رہا ہوں، اُن کے کردار پر آنچ آتی تھی۔

خیر، میں حامد صاحب کے دفتر پہنچا تو کہنے لگے کہ صدر صاحب نے بلایا ہے۔ میں نے اُن سے پوچھا کہ کیا میرے بارے میں یہ کہا جا رہا ہے کہ میں پیپلز پارٹی کے ساتھ مل کر اس انکواری سے جنرل مشرف کی حکومت کو بدنام کرنے کی کوشش کر رہا ہوں؟ فائلوں کے کاغذ ٹٹولتے ہوئے کہنے لگے، "یہ اسلام آباد ہے، یہاں ہر قسم کی باتیں ہوتی ہیں۔ تم ان پر دھیان نہ دیا کرو"۔ میں نے کہا، "میں اسلام آباد کی بات نہیں کر رہا"، پھر اُن کی طرف اُننگی کا اشارہ کر کے کہا، "میں آپ کی بات کر رہا ہوں"۔ کہنے لگے، "تم خواہ مخواہ جذباتی ہو رہے ہو۔ ایسا کچھ نہیں ہے"۔ پھر ہم صدر صاحب کے دفتر کی طرف چلے گئے۔

یہاں صدر صاحب سے وہی بدتمیزی ملاقات ہوئی، جس کا شروع میں ذکر کیا ہے۔ اُن کی میز پر جو NAB کی انکواری رپورٹ پڑی تھی، جسے انہوں نے بڑی نخوت سے پرے دھکیلا تھا، اُس پر جنرل حامد صاحب کا نوٹ لکھا تھا کہ یہ وہی الزامات ہیں جو پیپلز پارٹی کی رخسانہ زبیری صاحبہ نے سپریم کورٹ میں لگائے ہیں۔ میں نے اس سلسلے میں پھر کوئی اور بات نہیں کی۔ میں ذاتی حملوں کا جواب دینا مناسب نہیں سمجھتا تھا۔ صرف اپنے کام سے غرض رکھتا۔

شوکت عزیز صاحب سے آخری ملاقات جب ہوئی تو کہنے لگے کہ آپ تیل کی انکواری بند کر دیں اس سے آپ کو کچھ حاصل نہیں ہوگا۔ شاید یہ خبر مل چکی تھی کہ مشرف صاحب مجھ سے بہت ناراض ہیں، اس لئے یہ بھی طیش میں تھے۔ میرے چہرے کی طرف اُننگی کا اشارہ کر

کے کہنے لگے، "میں آپ کو یقین سے کہہ رہا ہوں کہ اس میں کوئی کرپشن نہیں ہے۔" میں نے بھی اُسی طرح اُن کے چہرے کی طرف انگلی اٹھا کر کہا، "میں بھی آپ کو یقین سے کہہ رہا ہوں کہ اس انکوائری کو انجام تک پہنچا کر رہوں گا۔" اور اُٹھ کر اُن کے دفتر سے باہر آ گیا۔ اُس کے بعد بس ایک مرتبہ اینٹی کرپشن ڈے پر آ مناسا منا ہوا تھا، جہاں وہ چیف گیسٹ تھے اور اپنی تقریر میں NAB کو خوب برا بھلا کہا۔ مگر شاید یہ ہنک اس کام کو کرنے کی قیمت تھی۔

کافی دنوں تک خاموشی رہی۔ پھر کچھ لوگ، جو مجھے اور جنرل مشرف دونوں کو جانتے تھے، صلح صفائی کی کوششیں کرتے رہے، کہ یہ معاملہ کسی طرح موزوں انجام کو پہنچ جائے۔ ان کی مداخلت سے، ایک شام میری اور صدر صاحب کی ملاقات پریذیڈنٹ ہاؤس کے رہائشی حصے میں ہوئی۔ ہمارے مشترکہ دوست بھی موجود رہے۔ بہت اچھے ماحول میں بات ہوئی۔ جنرل مشرف نے پوچھا، "تم کیا چاہتے ہو؟" میں نے کہا کہ اگر NAB کی انکوائری پر اعتبار نہیں، تو کسی غیر جانبدار ماہرین کی ٹیم سے اس انکوائری پر نظر ثانی کروالیں، وزیراعظم کے مشیر تو غیر جانبدار نہیں۔ یہ بات اُن کو پہلے بھی کہلوائی جا چکی تھی۔ اس ہی نوٹ پر یہ ملاقات ہوئی تھی۔ کہنے لگے، "ہاں، اگر تم چاہتے ہو تو ایسے کر لیتے ہیں۔ ڈاکٹر عشرت صاحب، جو سٹیٹ بینک کے گورنر تھے، کیسے رہیں گے؟" میں نے کوئی اعتراض نہ کیا، تو کہا، "وہ ان معاملات کو بہت اچھی طرح سمجھتے ہیں۔ پیسے کے کھیل بہت اُچھے ہوئے ہوتے ہیں، یہ میری اور تمہاری سمجھ سے باہر ہیں۔ میں عشرت صاحب کی نگرانی میں ایک ٹیم لگا دیتا ہوں، وہ دیکھ لیں گے۔"

میں نے باتوں باتوں میں یہ بھی کہا کہ آپ کو جو بار بار یہ بتایا جاتا ہے کہ میں پروموشن نہ ہونے پر آپ سے خفا ہوں، اس بات کو اپنے ذہن سے نکال دیں، ورنہ ہر بات پر آپ شک میں مبتلا ہو جائیں گے۔ میں نے اُن سے کہا کہ میں پروموشن کا خواہشمند ہوتا تو آپ پر یہ بات ظاہر ہوتی۔ میں نے انہیں وہ بھی بتایا جو میں نے اپنی پروموشن کے سلسلے میں اُن کے سابقہ سٹاف افسر جنرل ندیم تاج سے کہا تھا۔ انہوں نے بہت حیرانی سے اس بات کو سنا۔ میں نے اُن سے یہ بھی کہا کہ مجھے جو ہدایات دینی ہوں وہ جنرل حامد کے ذریعے نہ دی جائیں، کیونکہ میں اب اُن پر اعتبار نہیں کر سکتا۔ کہنے لگے کہ اب آپ سے جو بات بھی کرنی ہوگی طارق عزیز صاحب کے ذریعے سے ہوگی۔ انہوں نے بعد میں کسی سے شکوہ بھی کیا کہ کیسا آدمی ہے، مجھ سے کہتا ہے کہ تمہارا چیف آف سٹاف اعتبار کے لائق نہیں! خیر، ہماری ملاقات بہت اچھے نوٹ پر ختم ہوئی۔ انہوں نے مجھے کافی کے ساتھ سگار بھی پلایا، الوداع کرتے وقت گلے لگایا اور گال بھی چوما۔ آج مجھے یہ سب لکھتے ہوئے افسوس ہوتا ہے کہ کاش وہ شخص کچھ حوصلہ کرتا، سچ پر کھڑا رہتا تو ملک کی تقدیر بدل سکتا تھا۔ سب ہی اُس کے ساتھ تھے۔

دوسرے دن مجھے جنرل ندیم تاج کا فون آیا۔ وہ اُن دنوں PMA میں کمانڈنٹ تھے۔ انہوں نے بتایا کہ جنرل مشرف نے اُن سے فون پر اُس بات کی تصدیق چاہی، جو میں نے اُن سے اپنی پروموشن کے سلسلے میں کہی تھی۔ کہنے لگے، "میں نے اُن کو بتا دیا کہ ایسی بات

دسواں سفر گوشہ تنہائی

آپ نے کہا تھی۔" میں نے کہا، "یہ بات تو آپ کو اُن دنوں ہی بتا دینی چاہیے تھی۔" تو کہا کہ یہ بتانا اُنہوں نے اُس وقت مناسب نہیں سمجھا تھا۔ شاید صدر صاحب سے اُس وقت یہ کہہ کر مجھے یوں ترقی کے دائرے سے باہر چھوڑنا نہیں چاہتے تھے۔

اسی دوران NAB کی ٹیموں نے ڈیزل کے دو ٹینکروں پر کراچی پورٹ میں دو مختلف دنوں میں چھاپا مار کر اُن سے سیپل حاصل کئے اور جب فوج کی لیبارٹری سے ٹیسٹ کروائے تو پتا چلا کہ جو گریڈ کا غذات پر لکھا تھا اُس سے بہت خراب گریڈ کا ڈیزل تھا۔ شاید دو چار دن ہی گزرے ہوں گے کہ فوج کی ٹیسٹنگ لیبارٹری سے خط موصول ہوا کہ ہماری پچھلی رپورٹ غلط تھی، ڈیزل ٹھیک تھا، نئی رپورٹ حاضر ہے۔ تیل کے کاروباریوں کے ہاتھ خاصے دور تک پھیلے ہوئے تھے، NAB کے ہر کام کی انہیں خبر ہو جاتی اور کرپشن مافیا حرکت میں آ جاتا۔ کسی کاروائی کا جواز نہ رہا۔ پھر دو اور لیبارٹریوں سے چیک کروایا، مگر اُنہوں نے بھی ڈیزل ٹھیک ہونے کی رپورٹ دی۔ پھر یہ سیپل جرمنی بھجوائے گئے۔ میرے NAB میں رہتے ہوئے سلسلہ یہیں تک پہنچا تھا۔ اور کئی اہم کیسوں پر تفصیلات جمع کرنے کا کام بھی شروع ہو چکا تھا۔ ان میں OGDCL (Oil and Gas Development Corporation Ltd.) کے کئی ایشو تھے، پرائیویٹائزیشن کمیشن کے چند اہم کیس اور منرل ڈیولپمنٹ سے متعلق کچھ تفصیلات شامل تھیں۔ کئی اہم شخصیات کے بارے میں لوگوں نے کافی شواہد جمع کر کے مجھ تک پہنچائے۔ ان میں کچھ فوج کے افسران اور ان کے رشتہ دار بھی شامل تھے، جن کے خلاف ریٹائرمنٹ سے پہلے انکوائری نہیں کھولی جاسکتی تھی۔ اہم شواہد کی کاپیاں میں اپنے پاس رکھ لیتا کہ کہیں NAB میں گم نہ جائیں۔ نیشنل بینک کے بھی کئی مسائل زیر تفتیش تھے، اور اس سلسلے میں بھی وزیر اعظم صاحب پریشان تھے کہ بنکوں کا کام اس طرح بند ہو جائے گا۔ شاک آپکھینچ کے بارے میں خاص ہدایات دی گئی تھیں کہ ملک کی معیشت کو نہ جھنجھوڑیں، اسے ہاتھ نہ لگائیں۔

میں یہاں تیل کی انکوائری کی تفصیلات میں نہیں جانا چاہتا، مگر اتنا ضرور کہنا چاہوں گا کہ تیل کی پاکستانی کمپنیوں کے منافع جات ایسے تھے کہ OGRA کے آنے کے بعد، ۲۰۰۴-۵ میں اٹک آئل کمپنی کا منافع ۴،۳۳۲ فی صد بڑھ گیا تھا، نیشنل ریفائنری کا منافع ۳،۵۷۸ فی صد بڑھا، پاک ریفائنری کا منافع ۱،۷۱۷ فی صد بڑھا اور PARCO کے منافع میں ۵۹ فی صد بہتری آئی۔ یہ اعداد و شمار وزارت کی اکتوبر ۲۰۰۵ کی سمری میں دیے ہوئے ہیں۔ اس کے علاوہ تیل بیچنے والی کمپنیوں کے منافع میں بھی خاصا اضافہ ہوا۔ انکوائری چونکہ مکمل نہیں کرنے دی گئی، اس لئے یہ بات واضح نہ ہو سکی کہ حکومت کے کون کون سے کارندوں نے کتنا ناجائز فائدہ حاصل کیا۔

انکوائری کو دوبارہ دیکھنے کے لئے کوئی ٹیم تو نہیں لگائی گئی، صرف ڈاکٹر عشرت صاحب کو ہی ذمہ دے دیا گیا۔ کچھ دنوں بعد وہ مجھ سے ملنے بھی آئے۔ اُنہوں نے قریب دو ماہ لگا کر اس انکوائری کو دوبارہ دیکھا۔ ۶ دسمبر ۲۰۰۶ کو ہماری انکوائری پر ڈاکٹر عشرت صاحب کی

رپورٹ صدر صاحب کے دفتر سے موصول ہوئی۔ ڈاکٹر عشرت صاحب نے NAB کے چند انکشافات سے اختلاف کیا اور بقایا کو کام کرنے والوں کی غلطیاں ظاہر کیا۔ پھر وزیر اعظم کے مشیروں کی طرح، یہ رنگ دیا کہ NAB پالیسی میں جھانک رہا ہے۔ حالانکہ یہ سرے سے غلط تھا۔ انہوں نے آخر میں لکھا کہ میں نہیں سمجھتا کہ تیل کمپنیوں کو جان بوجھ کر ناجائز منافع کمانے دیا گیا ہے۔ میں اُن کی رپورٹ پڑھ کر حیران نہیں ہوا، مجھے یہی توقع تھی۔ سب ایک ہی سلسلے کی کڑیاں تھیں۔

ڈاکٹر عشرت صاحب کی رپورٹ کے ساتھ منسلک جنرل حامد صاحب کے خط میں لکھا تھا، "آپ ہی کی منظوری سے ڈاکٹر عشرت حسین صاحب کو، جن کا بہت وسیع تجربہ ہے اور بین الاقوامی ساکھ رکھتے ہیں، آپ کی انکوائری اور وزیر اعظم صاحب کے مشیروں کی رپورٹ کا تجزیہ کرنے کو کہا گیا تھا"، خط کے آخر میں لکھا تھا، "اب جب کہ مختلف سطحوں پر اس کی تفصیلی جانچ پڑتال مکمل ہو چکی ہے، INAB اپنا نتیجہ اخذ کر کے اپنی رپورٹ بنالے"۔ میں طارق عزیز صاحب سے جا کر ملا۔ وہ اُن دنوں نیشنل سیکورٹی کونسل میں تھے۔ کہنے لگے کہ آپ کو ڈاکٹر عشرت صاحب کی رپورٹ پڑھ کر تسلی ہوگئی ہوگی، اب یہ کیس بند کر دیں۔ سپریم کورٹ کو بھی اپنا جواب بھجوا دیں۔ انہوں نے مجھے بیس صفحات پر مشتمل ایک رپورٹ بھی دی، اور کہا کہ یہ وہ رپورٹ ہے جسے آپ اپنی آخری رپورٹ بنا کر NAB کی طرف سے جاری کر سکتے ہیں۔ یہی رپورٹ کورٹ کو بھی بھجوا دیں۔ رپورٹ کالپ لباب یہ تھا کہ NAB کو تسلی ہے کہ اس سلسلے میں کوئی کرپشن نہیں ہوئی۔

میں نے طارق صاحب سے کہا، "ڈاکٹر عشرت کو اس لئے تمام چیزوں کو دیکھنے کے لئے کہا گیا تھا کیونکہ، صدر صاحب کے مطابق، مجھے ان چیزوں کی سمجھ نہیں ہے۔ تو اگر میں ان معاملات کی سمجھ ہی نہیں رکھتا، تو مجھے ڈاکٹر صاحب کی رپورٹ بھلا کیا سمجھ آئے گی؟ اور بغیر سمجھے ہوئے میں کیسے کہہ دوں کہ کرپشن نہیں ہوئی؟ اس مسئلے کا یہی حل ہے کہ میری انکوائری رپورٹ بھی سپریم کورٹ کو دے دی جائے اور ڈاکٹر عشرت کا تجزیہ بھی۔ پھر اگر کورٹ کی سمجھ میں بات آگئی، تو وہ خود ہی اس کا فیصلہ کر لیں گے"۔ طارق صاحب نے مجھے کافی سمجھانے کی کوشش کی، مگر میں بات یہیں چھوڑ کر آ گیا۔

اخباروں میں تیل کی بیرونی کمپنیوں کی طرف سے اعلان کیا گیا کہ اگر NAB نے تیل کے بارے میں انکوائری بند نہ کی تو وہ پاکستان میں اپنا کاروبار بند کر دیں گی۔ انکوائری کسی کمپنی کے خلاف تو ہونے لگی تھی، صرف حکومت کے افسران کی کارکردگی زیر تفتیش تھی۔ مگر ان ہی سے یہ کمپنیاں ناجائز منافع کماتی تھیں۔ اب ان کی امداد میں آکھڑی ہوئیں، پھر ان کا اپنا بھی ایسا منافع بند ہونے کا خدشہ تھا۔ اس دھمکی پر خاصی پریشانی کا اظہار کیا گیا کہ عوام کے لئے دشواریاں پیدا کی جا رہی ہیں، ملک کی معیشت تباہ کی جا رہی ہے۔ کچھ دن مجھ پر یوں ہی دباؤ پڑتا رہا کہ اب بہت ہو چکا، اس معاملے کو ختم کرو۔ میں نے طارق عزیز صاحب سے کہا کہ پھر یہ سارا مسئلہ ایگزیکٹو بورڈ کے سامنے رکھ

دسواں سفر گوشہ ہتھائی

دیتا ہوں۔ اُنہوں نے پوچھا کہ ایگزیکٹو بورڈ کیا ہوتا ہے؟ جب میں نے تفصیلات بتائیں، تو کہنے لگے یہ تو بات کو پھیلا نا ہوا، سب کو تمام تفصیلات معلوم ہو جائیں گی۔ پھر پوچھا کہ آپ کو آخر ایگزیکٹو بورڈ بنا کر اپنے ہاتھ باندھنے کی کیا ضرورت تھی؟ میں نے کہا کہ NAB کے قوانین کے مطابق میرا ذمہ ہے کہ کرپشن کی روک تھام کے لئے جو بھی مناسب سمجھتا ہوں، وہ اقدام لوں۔ یہ اس ہی سلسلے میں بنایا ہے کہ اس ادارے کے اندر بھی ہیر پھیر کی گنجائش ختم ہو، شفاف طریقے پر کام ہو۔ یہ ادارہ اعتبار کے لائق بنے۔ بات ابھی یہیں پھر رہی تھی کہ چیف جسٹس صاحب کے ساتھ حکومت کے مسائل اُبھرنے لگے، پھر بینظیر صاحبہ کے مقدمات اہمیت لے گئے اور مجھے NAB چھوڑنا پڑا۔

وقت گزرنے کے کافی عرصے بعد میرے علم میں آیا کہ ۲۳ دسمبر کو سپریم کورٹ نے احکام جاری کیے تھے کہ ۱۲ دسمبر کو اس کیس کی ہیرنگ ہوئی، جس میں یہ فیصلہ کیا گیا کہ "حکومت کی طرف سے کسی جامع جواب کے بغیر اس کیس کا فیصلہ نہیں ہو سکتا"۔ اور اگلی ہیرنگ کی تاریخ ۱۶ جنوری کی دی گئی۔ یہ احکام حکومت کے علاوہ، چیرمین OGRA، آئل کمپنیوں کی ایڈوائزری کمیٹی OCAC اور تیل کی کمپنیوں کے مالکان کو بھیجے گئے۔ NAB کو کوئی اطلاع نہیں دی گئی۔ یہ بھی سننے میں آیا کہ حکومت کی طرف سے ایک دبیز جواب کورٹ میں جمع کروایا گیا تھا، جو یقیناً کسی کی سمجھ میں نہیں آیا ہوگا۔

NAB سے فراغت کے کافی عرصے بعد، جسٹس رانا بھگوان داس صاحب کی سربراہی میں ایک جوڈیشل کمیشن قائم کیا گیا، جس نے مجھے ۳ جون ۲۰۰۹ کو بلایا۔ تیل کی وزارت اور OGRA کے افسران کو بھی۔ میں نے انہیں بھی ساری تفصیلات بتائیں۔ پھر نہ جانے اس سلسلے کا کیا بنا۔ اس تمام کھیل پر کیا تبصرہ کروں۔ کرپشن نے ہمارے نظام میں ایسے پینچے گاڑے ہیں کہ حکمران بھی بے بس ہیں۔ اگر وہ کرپشن کو آڑ نہ دیں، تو یا حکومت گر جائے گی، یا حکومت کا سارا نظام درہم برہم ہو جائے گا۔ اس نظام میں کرپشن کے خلاف، جیتنا تو دور کی بات، جنگ ہی نہیں لڑی جاسکتی۔ میں نے بہت کوشش کی، مگر صرف نظام سے ہی لڑتا رہا۔ جب تک یہ نظام نہیں بدلے گا، کچھ نہیں بدلے گا۔ اس نظام کی موجودگی میں، ملک سے کرپشن نہیں مٹائی جاسکتی۔

سمٹ کے رہ گئے آخر پہاڑ سے قد بھی *

"All cases against Benazir Bhutto stand closed. Tell Shahid to find ways and means of doing it" (بے نظیر بھٹو کے خلاف تمام کیس بند کر دیے گئے ہیں۔ شاہد سے کہیں کہ اس کام کو مکمل کرنے کے طریقے اختیار کرے)، طارق عزیز صاحب نے مجھے جنرل مشرف کا حکم نامہ سنایا، اور پوچھا کہ اب اسے کیسے کیا جائے؟ بہت دنوں سے یہ مسئلہ چل رہا تھا، میں ٹال مٹول کرتا رہا کہ شاید کوئی بہتری کی صورت نکل آئے، شاید بے نظیر صاحبہ سے یہ سیاسی مذاکرات ناکام ہو جائیں۔ مگر اب سامنے دیوار کھڑی تھی۔ صدارتی حکم جاری ہو چکا تھا۔ میں نے کہا، "میرے پاس تو اور کوئی طریقہ نہیں، سوائے اس کے کہ میں یہ عہدہ چھوڑ دوں، پھر آپ جیسے چاہیں ان کیسوں کو بند کریں"۔ مجھے کچھ سمجھانے لگے، مگر میں نے کہا یہ مجھ سے نہیں ہو سکتا اور اٹھ کر وہاں سے چلا آیا۔

میرے NAB میں آنے پر یہاں دو ڈپٹی چیئرمین لگا دیے گئے تھے۔ میجر جنرل محمد صدیق اور حسن وسیم افضل صاحب۔ حاضر سروس جنرل کو شاید اس لئے لگایا کہ میرے کام پر نظر رہے اور NAB ہاتھ سے نہ نکل جائے۔ مجھ کو بتایا گیا کہ افضل صاحب کو خصوصی طور پر بے نظیر بھٹو صاحبہ اور ان کے خاندان کے افراد کے کیسوں کو دیکھنے کے لئے لگایا گیا ہے، تاکہ انہیں تیزی سے انجام تک پہنچایا جائے۔ نواز شریف صاحب کی حکومت میں بھی افضل صاحب ہی بے نظیر صاحبہ کے کیسوں کے ذمہ دار تھے۔ ان کیسوں سے متعلقہ تمام فائلیں بھی افضل صاحب کو دے دی گئی تھیں اور مجھ سے جنرل حامد صاحب نے کہا کہ اس سلسلے میں، آپ اپنی تمام قانونی اتھارٹی بھی ان کے نام کر دیں، کہ یہی ان تمام کیسوں کے ذمہ دار ہوں گے۔ یہ بھی میں نے انہیں لکھ کر دے دیا تھا۔

پہلے تو افضل صاحب نے شکایت کی کہ میرا دفتر ٹھیک نہیں ہے، پھر جنرل حامد سے کہلوایا کہ انہیں ایک علیحدہ مقام پر دفتر رکھنے کی اجازت دی جائے۔ اسلام آباد میں ایک گھر کرائے پر لے لیا۔ میں پھر بھی ان کیسوں کے بارے میں پوچھتا رہتا۔ پھر مجھے جنرل حامد نے کہا کہ ان کے کام میں مداخلت نہ کروں، میں نے کہا کہ میں چیئرمین ہوں، مداخلت کیسی، مجھے پتا تو ہو کہ کیا ہو رہا ہے۔ پھر انہوں نے جنرل حامد سے اجازت لی اور اپنا دفتر لاہور منتقل کر لیا۔ کچھ عرصے بعد مجھ سے کہا گیا کہ جو لوگ ان کے تحت کام کر رہے ہیں ان کی تنخواہیں بڑھادی جائیں۔ میں نے کہا کہ NAB میں دو قسم کی تنخواہیں تو نہیں دی جا سکتیں اور نہ ہی میرے پاس اتنا بجٹ ہے۔ پھر انہیں غیر رسمی بجٹ بھی ملنے لگا۔

۲۰۰۷ کے شروع میں طارق عزیز صاحب نے بتایا کہ برطانیہ اور امریکہ اس بات پر خاصہ زور دے رہے ہیں کہ بے نظیر صاحبہ سے سمجھوتا کیا جائے اور انہیں واپس آنے کی اجازت دی جائے۔ کہنے لگے کہ ان کے کیسوں کو شاید بند کرنا پڑے۔ ابھی کچھ مذاکرات چل رہے ہیں۔ میں نے اس سوچ سے اختلاف کیا، کہ یہ اس قوم سے بہت بڑی ناانصافی ہوگی کہ حکمرانوں کی لوٹ مار کے کیس بند کئے جائیں۔ کہنے لگے بہت زیادہ دباؤ ہے، دیکھتے ہیں مذاکرات کیسے چلتے ہیں۔ مارچ کے شروع میں ان کے دفتر میں ایک ملاقات ہوئی، جس میں وسیم افضل صاحب اور اٹارنی جنرل مخدوم علی خان صاحب بھی موجود تھے۔ طارق عزیز صاحب نے بتایا کہ بے نظیر صاحبہ کو سپین میں چلنے والے کیس پر زیادہ تشویش ہے۔ وہ چاہتی ہیں کہ اگر مذاکرات آگے بڑھانے میں تو اسے بند کیا جائے۔ میں ان کے کیسوں کے سلسلے میں ۲۰۰۶ میں برطانیہ اور سپین گیا تھا۔ سپین کا کیس NAB نے نہیں کیا تھا۔ یہ اقوام متحدہ انکوائری کمیشن ۲۰۰۴ کے فیصلے کے تحت دائر کیا گیا، اور حکومت پاکستان اُس میں 'Damaged Party' کے طور پر بعد میں شامل ہوئی۔ اس کے سارے شواہد بھی اقوام متحدہ نے ہی فراہم کئے تھے، جن کی انکوائری کے تحت بے نظیر صاحبہ پر الزام تھا کہ ان کی کمپنی نے، اقوام متحدہ کے Oil for Food Program کی خلاف ورزی کرتے ہوئے، صدام حسین صاحب کو دو ملین ڈالر دے کر تیل کے ٹھیکے حاصل کئے۔

وسیم افضل صاحب اور میں، دونوں ہی اس کیس سے علیحدہ ہونے پر تیار نہیں تھے۔ طارق عزیز صاحب نے کہا کہ فی الحال ہم کیس ختم کرنا نہیں چاہ رہے، صرف کچھ ایسا کرنا چاہتے ہیں کہ بے نظیر صاحبہ ہم پر بھروسہ کر سکیں، تاکہ مذاکرات میں جان پڑے۔ کہنے لگے کہ اگر ہم اپنے سپین کے اٹارنی کو تبدیل کر دیں، تو اس سے جو وقت ملے گا، اُس عرصے میں ہم بات کو آگے بڑھا کر دیکھ سکتے ہیں۔ وسیم افضل صاحب کو کوئی اعتراض نہیں تھا، لیکن کہنے لگے کہ مجھے لکھ کر دے دیں۔ طارق عزیز صاحب نے میری طرف دیکھا، میں نے کہا کہ وسیم صاحب کو تو میں پہلے ہی ان تمام چیزوں پر قانونی طور پر مجاز بنا چکا ہوں، انہیں میری لکھی ہوئی ہدایات کی ضرورت نہیں۔ مگر وسیم صاحب شاید آئندہ ہونے والی کسی قانونی کارروائی کے خوف سے، لکھے ہوئے احکامات پر زور دے رہے تھے۔ طارق عزیز صاحب بھی کچھ لکھ کر دینے پر رضامند نہیں تھے۔ اٹارنی جنرل صاحب کا بھی خیال تھا کہ لکھ کر دینے میں شاید کسی قانونی کارروائی کا جواز بن سکتا ہو۔ پھر میں نے کہا لائیں میں لکھ کر دے دیتا ہوں، سوچا یہ کرنا بھی چاہتے ہیں، ڈرتے بھی ہیں۔ جب کرنا ہے، تو ڈرنا کیا۔ ایک کاغذ پر کچھ لکھا، پڑھ کر سنایا تو اٹارنی جنرل صاحب نے کہا یہ نہ لکھیں۔ پھر انہوں نے مجھے لکھوایا، اور میں نے وسیم افضل صاحب کو لکھ کر دیا کہ جو پاور آف اٹارنی کورٹ میں ہماری نمائندگی کرنے کے لئے دی گئی ہے اُسے واپس لے لیا جائے، اور لائز کا ایک نیا پینل بنائیں، جن میں سے کسی کو چنا جاسکے، جو اس کیس میں حکومت پاکستان کی نمائندگی کرے۔ میں نے مارچ کو یہ خط دستخط کر کے انہیں دے دیا۔ بات ختم ہو گئی۔ دل میں یہی دعا کرتا رہا کہ مذاکرات ناکام ہو جائیں۔

NAB کی کاروائیوں سے حکومت اب تک اکتا چکی تھی۔ اب الیکشن کی بھی تیاریاں شروع کرنے کا وقت آ رہا تھا، جس میں NAB کے استعمال کا ارادہ نظر آتا تھا۔ ان دنوں مجھ سے حکومت نے اُن سیاست دانوں کے نام مانگے جن کے خلاف تفتیش چل رہی تھی۔ NAB کے استعمال کا ارادہ نظر آتا تھا۔ ان دنوں مجھ سے حکومت نے اُن سیاست دانوں کے نام مانگے جن کے خلاف تفتیش چل رہی تھی۔ میں نے نام دینے سے معذرت کر لی۔ میں جانتا تھا کہ یہ نام سیاسی سودے بازی کے لئے مانگے گئے ہیں۔ مجھ پر کافی دباؤ رہا۔ جب کہیں سے بات نہ بنی، تو ایک پارلیمنٹری کمیٹی سے مجھے سرکاری خط بھجوایا گیا، کہ یہ نام پارلیمنٹ کو چاہئیں۔ میں نے لکھ کر جواب دیا کہ NAB نام دینے سے قاصر ہے۔ پھر مجھے اعلیٰ سطح پر سمجھایا گیا کہ تم فوجی ہو، پارلیمنٹ کی اتھارٹی (authority) کو شاید سمجھتے نہیں۔ تم اس کو انکار نہیں کر سکتے۔ کیوں اپنے لئے مشکل کھڑی کرتے ہو؟ میں نے کہا کہ ہمارا آئین ہر شہری کی عزت کو تحفظ فراہم کرتا ہے۔ پارلیمنٹ کو سمجھنا چاہیے کہ میرے نام دینے سے آئین کی خلاف ورزی ہوتی ہے۔ اگر میں حد سے تجاوز کر رہا ہوں تو مجھے کورٹ میں لے جائیں، اگر سپریم کورٹ کہے گا تو نام دے دوں گا۔ پھر بات ختم ہو گئی۔

میں نے ایک مرتبہ اخبار میں خبر بھی دی کہ 'باوثوق ذرائع سے معلوم ہوا ہے کہ اس مرتبہ NAB الیکشن میں حصہ نہیں لے رہی'۔ مقصد یہ تھا کہ حکومت کو احساس ہو کہ اگر اس سلسلے میں دباؤ ڈالا گیا، تو یہ مسئلہ عوام کے سامنے کھل جائے گا۔ سوچا کہ اس خبر پر حکومت سے تنازعہ ہوگا، پھر کھل کر اعلان کر دوں گا، تاکہ الیکشن کے دنوں میں روز روز کے جھگڑوں سے نجات پاؤں۔ مگر اس کا ردِ عمل کچھ ایسا ہوا کہ پھر اُس کے بعد میڈیا میں کچھ نہ کہا۔ حکومت نے تو اس خبر کو نظر انداز کر دیا، اور میڈیا نے بجائے حوصلہ افزائی کرنے کے، تبصرہ یہ کیا کہ NAB نے اقرار کیا ہے کہ وہ ماضی میں الیکشن میں حصہ لیتا رہا ہے۔ صرف پرانے کالے کر تو توں کی رنجش تھی، تاکہ کیچڑ اُچھالا جاسکے۔ جنرل مشرف کے خلاف جو رنجش تھیں، NAB بھی اُن کا بار اٹھائے پھرتا تھا۔ اب کیا ہو رہا ہے، اس کی پرواہ نہیں تھی۔ میرے ہاتھ خاک مضبوط ہوتے۔

حکومت نے NAB کو کنٹرول کرنے کے لئے ایک زور آزمائی اور کی۔ مجھے کہا گیا کہ صدر صاحب نے یہ فیصلہ دیا ہے کہ ایک کونسل بنے گی، جو NAB کے اہم کیسوں کو سنے گی۔ اس میں جنرل حامد صاحب، طارق عزیز صاحب، اٹارنی جنرل صاحب، میں اور NAB کے پراسیکیوٹر جنرل عرفان قادر صاحب بیٹھیں گے۔ قادر صاحب نہایت شائستہ طبیعت کے انسان تھے۔ اور ایک ان کے ڈپٹی تھے، ملک افضل صاحب، جنہوں نے سارے کام کا بوجھ اٹھایا ہوا تھا، اور بلا جھجک کام کرتے تھے۔ مجھے کہا گیا کہ جس کیس کی حکومت نشان دہی کرے گی، وہ اس کونسل کے سامنے پیش کیا جائے گا۔ اگر یہ کونسل سمجھے گی کہ کیس کو آگے بڑھانا ہے، تو ہی NAB اس پر کاروائی کا مجاز ہوگا، ورنہ کیس بند کر دیا جائے گا۔ میں نے کہا کونسل کے سامنے کیس پیش کرنے پر مجھے کوئی اعتراض نہیں، میں ان کے مشوروں سے مستفید ہوں گا، لیکن کیس صرف اُس وقت بند کروں گا جب میں سمجھوں گا کہ یہ کیس جائز نہیں ہے۔ میں نے کہا کہ NAB کے قانون میں یہی لکھا ہے، اور میں صرف اس قانون کے مطابق کام کرنے کا مجاز ہوں۔ اس کا تحفظ میری اخلاقی اور آئینی ذمہ داری ہے۔

دواں سفر گوشہ تنہائی

اس موضوع پر کافی دن تک لے دے ہوتی رہی، پھر مجھ سے کہا گیا کہ میں صدر صاحب کو NAB کی طرف سے ایک خط لکھوں، کہ ایک جوڈیشل کمیشن تشکیل دیا جائے جو NAB کی کاروائیوں کو دیکھ سکے۔ میں نے ۳۰ مارچ ۲۰۰۷ کو اس موضوع پر خط لکھ کر بھیج دیا۔ مگر مشورہ یہ دیا کہ چونکہ ۲۰۰۲ کی اینٹی کرپشن سٹریٹیجی نے پانچ سالوں میں کچھ حاصل نہیں کیا، تو ایک جوڈیشل کمیشن بنایا جائے جو اینٹی کرپشن کے ہر پہلو کا جائزہ لے اور ایک نئی سٹریٹیجی بنائے، اور ایسے ڈھانچے اور قوانین تشکیل دے جو اس سٹریٹیجی کے مقاصد کو وقت مقررہ پر پورا کر سکیں۔ اس پر بھی خاصی ناراضگی رہی کہ آپ نے وہ تو نہیں لکھا جو کہا گیا تھا۔ میں نے کہا کہ وہی لکھا ہے جو میں ان حالات میں مناسب سمجھتا ہوں۔ قوانین میں رد و بدل کرنے سے NAB مفلوج ہو کر رہ جائے گا، اور کرپشن کی روک تھام صرف ایک سیاسی ڈھکوسلہ ہی رہے گی۔ (دیکھیں ضمیمہ "م")۔ پھر کچھ عرصے بعد خبر ملی کہ NAB کے قوانین کا جائزہ لیا جا رہا ہے، کہ ان میں کیا ترامیم کی جائیں کہ چیرمین کو پوری طرح تابع کیا جاسکے۔

اپریل کے مہینے میں ایک دورے پر میں جنوبی افریقہ گیا، جہاں اینٹی کرپشن پر ایک بین الاقوامی کانفرنس ہو رہی تھی۔ جب واپس آیا تو پتا چلا کہ میری غیر موجودگی میں ڈپٹی چیرمین وسیم افضل صاحب کا دفتر، جولا ہو رہا تھا، ختم کر دیا گیا ہے اور بے نظیر صاحبہ اور ان کی فیملی کے کیسوں کے تمام کاغذات NAB اسلام آباد کے دفتر بھجوائے جا چکے ہیں۔ اب ساری ذمہ داری کا طوق میرے گلے میں ڈال دیا گیا تھا۔ طارق عزیز صاحب کو ملا تو کہنے لگے کہ بی بی صاحبہ کا سپین والا کیس بند کر دیں۔ میں نے جان چھڑانے کے لئے کہا کہ اگر آج میں کیس بند کر دوں، اور کل بے نظیر صاحبہ مجھ پر ایک کیس کھول دیں، کہ میں نے چیرمین NAB کی حیثیت سے ان پر جعلی کیس بنایا تھا اور ہتک عزت کا دعویٰ کر دیں، تو میں کہاں جاؤں گا؟ کہنے لگے نہیں نہیں، ان معاملات میں ایسے نہیں ہوتا۔ مگر میں اس ہی کی اوٹ لیتا رہا۔ پھر انہوں نے کہا کہ جو رقم بھی بھرنی پڑی حکومت بھرے گی، آپ کیوں پریشان ہوتے ہیں؟ میں نے کہا میں اتنا بڑا رسک نہیں لے سکتا۔ کل حکومت بدل جائے، تو پھر؟ کچھ دن اور یوں ہی گزر گئے۔ حکومت اور چیف جسٹس صاحب کے بیچ مسائل شروع ہو چکے تھے، لال مسجد کا مسئلہ بھی چل رہا تھا، بے نظیر صاحبہ کا معاملہ ہوا میں لٹکا رہا۔

پھر ایک دن طارق صاحب نے دفتر بلوایا۔ کہنے لگے، "ملک کا سیاسی استحکام داؤ پر لگا ہوا ہے، کوئی چھوٹی سی بات نہیں ہے۔ دنیا سے ہمارے تعلقات کا انحصار بھی اب اس ہی پر ہے کہ بے نظیر صاحبہ کے تمام مقدمات بند کر دیے جائیں"۔ کہا کہ آپ تو جانتے ہی ہیں کہ برطانیہ اور امریکہ کا اس سلسلے میں کتنا دباؤ ہے۔ میں نے کہا کہ میں ان تمام باتوں کو سمجھتا ہوں، مگر اس کام کو کرنے میں میرے لئے بہت پیچیدگیاں ہیں۔ کہنے لگے کہ آپ لندن چلے جائیں، وہاں رحمان ملک صاحب سے مل لیں، وہی بے نظیر صاحبہ کے کاروبار کو سنبھالتے ہیں، اور آپ کو وہی یقین دلا سکتے ہیں کہ آپ کا نقصان نہیں ہوگا۔ میں نے پوچھا کہ وہ کیا یقین دلائیں گے؟ تو ہنس کر کہنے لگے آپ ان سے ملیں تو

سہی۔ کہنے لگے پھر پین بھی چلے جائیں، وہاں بے نظیر صاحبہ کے وکیل آپ کو دستاویزی یقین دہانی بھی کروادیں گے، کہ آپ کے خلاف کوئی قانونی کارروائی نہیں کی جائے گی۔

ایک عرصے سے اس مسئلے کو ٹال رہا تھا، مگر اب مزید ٹال مٹول کی گنجائش نہیں رہی تھی۔ صاف کہنا پڑا کہ یہ مقدمات میں اصولی طور پر بند نہیں کر سکتا۔ میں نے کہا یہ میری موجودگی میں نہیں ہوگا۔ وہ کچھ ناراض ہو گئے، کہ مجھے پہلے ہی بتا دیتے، اتنے دنوں اس معاملے کو کیوں لٹکائے رکھا؟ میں واپس اپنے دفتر آ گیا۔ اگلے دن پھر اُن سے ملاقات ہوئی، اور اُنہوں نے مجھے وہ حکم نامہ سنایا جس کا ذکر شروع میں کیا ہے۔ صدر صاحب نے بے نظیر بھٹو کے مقدمات بند کر دیے، تو میں اب اس سلسلے میں کیا کر سکتا تھا، سوائے اس کے میں یہ عہدہ چھوڑ دیتا۔ طارق عزیز صاحب کو یہ کہہ کر کہ اس کے علاوہ اور کوئی حل نہیں، میں اپنے دفتر واپس آ گیا۔

دن گزرنے کو تھا کہ اُن کا فون آیا۔ کہنے لگے کہ ہم نے اس موضوع پر ایک میٹنگ کی تھی۔ یہ بھی بتایا کہ اس میٹنگ میں کون کون تھے۔ پھر کہا کہ ہم سب کا یہی خیال ہے کہ آپ یہاں سے نہ جائیں اور اس مسئلے کو کسی طرح حل کر لیں۔ میں نے کہا کہ یہ ممکن نہیں ہوگا، تو کہا کہ پھر اپنا استعفیٰ بھجوادیں۔ کچھ دیر بعد دوبارہ فون آیا کہ آج کل چیف جسٹس صاحب کا مسئلہ بھی چل رہا ہے اور لال مسجد کا بھی، اگر آپ ان حالات میں استعفیٰ دیں گے تو حکومت کو خاصہ دھچکا لگے گا۔ کہنے لگے کہ آپ سے گزارش ہے کہ خرابی صحت کی بنیاد پر دو ماہ کی چھٹی لے لیں، پھر اگر چاہیں تو استعفیٰ دے دیں۔ میں نے کہا کہ حکومت کو غیر مستحکم کرنا میرا مقصد نہیں ہے، میں ایسے ہی کر لیتا ہوں۔ کہنے لگے آپ اور بیگم صاحبہ دو ماہ کے لئے بیرون ملک جہاں بھی جانا چاہتے ہوں چلے جائیں اور طبی معائنہ وغیرہ بھی جہاں سے چاہے کروالیں، تمام اخراجات ہم اٹھائیں گے۔ میں نے اُن کا شکریہ ادا کیا کہ اس کی ضرورت نہیں ہوگی۔

۳ مئی ۲۰۰۷ء کا دن تھا۔ اُس ہی دن دو ماہ کی میڈیکل بنیاد پر چھٹی کی درخواست وزیراعظم صاحب کو بھجوائی اور ڈپٹی چیرمین منجر جنرل محمد صدیق صاحب کو چیرمین کے طور پر کام کرنے کا مجاز نامہ دے کر گھر چلا گیا۔ پھر اس دن کے بعد دفتر نہیں گیا۔ چھٹیوں کے دوران مجھ پر لگاتار زور پڑتا رہا کہ اب آپ کی غیر حاضری میں مقدمات بند ہو چکے ہیں، آپ پر تو ان کا بوجھ نہیں ہے، تو آپ واپس آ سکتے ہیں۔ مجھ سے کسی نے یہ بھی کہا کہ قیامت کے دن اس کا جواب تم نے تھوڑی دینا ہوگا، یہ حکمران کی ذمہ داری ہے، وہی اس کا جواب دے ہوگا، تم اس بارے میں فکر چھوڑ دو۔ کیسی انوکھی چھوٹ تھی! قتل کا حکم دینے والا مجرم اور قاتل معاف! دو ماہ بعد گھر سے ہی ذاتی وجوہات پر استعفیٰ صدر صاحب کو بھجوا دیا۔

دسواں سفر گوشہ تہائی

مجھے استعفیٰ دینے کی مجبوری نہیں تھی۔ اپنی جگہ پر ڈٹ بھی سکتا تھا، مشرف صاحب کو مجبور کرتا کہ وہ قانون میں ترمیم کر کے مجھے زبردستی نکال دیں، مگر ایسا کیا نہیں۔ اس کا شاید صرف ایک ہی فائدہ ہوتا کہ میں ہیرو بن جاتا۔ چیف جسٹس صاحب کے جلوس میں شامل ہو جاتا۔ گرتی ہوئی حکومت کو گرانے میں میرا بھی ہاتھ ہوتا۔ سیاسی روپ دھار لیتا۔ اوروں کی طرح چیزوں کو بدل دینے کا نعرہ میں بھی لگاتا۔ لیکن میرا دل اس طرف مائل نہیں تھا۔ اس کا فائدہ کوئی سیاست دان ہی اٹھاتا، جن میں سے کسی پر بھی میرا اعتقاد نہ تھا۔ کس کے ساتھ کھڑا ہوتا؟ جس کا اعتبار کیا تھا، جس کے ساتھ کھڑا ہوا تھا، وہ بھی ان ہی سیاست دانوں کے ساتھ مل گیا تھا، اس ہی نظام کا حصہ بن گیا تھا۔ منافقت پر قائم، اس بدبودار نظام کو اتنے سالوں بہت قریب سے دیکھا تھا، اور کوئی امید کی کرن نظر نہیں آتی تھی۔ صرف چہرے بدلتے، لوٹ مار کا کاروبار اُس ہی طرح چلتا رہتا۔ اس نظام کے اندر رہ کر، کسی مثبت تبدیلی کی کوئی گنجائش نہیں۔ اس میں جدوجہد فضول ہے۔ اس نظام کی جڑوں میں کیڑے پڑ چکے ہیں۔ نیا درخت لگانا ہوگا۔



یہ آدمی ہیں کہ سائے ہیں آدمیت کے *

کہنے کو کرپشن ہمارے ملک کے بہت سے مسئلوں میں سے ایک ہے۔ حقیقت یوں نہیں۔ اگر میں یہ کہوں کہ کرپشن ہی واحد مسئلہ ہے، تو سچ سے کچھ زیادہ دور نہیں ہوں گا۔ کرپشن کو صرف پیسوں کی چوری نہ سمجھیں۔ ہر ناجائز کام کرپشن ہے۔ ہمارے معاشرے میں تمام تر نا انصافیوں کی جڑ کرپشن میں ملتی ہے۔ اور تمام خرابیاں نا انصافیوں سے ہی پیدا ہوتی ہیں۔ یہی جھوٹ پر مبنی، نام نہاد انصاف سب سے بڑی کرپشن ہے۔ چاہے یہ پارلیمنٹ میں ہو، یا اُس کی تشکیل میں، یا حکومت کی تشکیل میں، اُس کے اہم فیصلوں میں، وسائل کی بانٹ میں، معاشی مواقع فراہم کرنے میں، کچھریوں یا تھانوں میں، یا سرکاری روزمرہ کی گورننس میں، کرپشن کا سایہ ہر چیز پر اندھیرا کر دیتا ہے۔

حکومت میں کرپشن سے محبت کا اندازہ اس ہی سے لگالیں، کہ NAB کے قانون کو ختم کر کے جو نیا قانون عوام کی 'غم خوار' نمائندہ سیاسی حکومت بنانے کی کوشش کر رہی ہے، وہ اس طرز پر تشکیل دیا جا رہا ہے کہ کرپشن پر کوئی گرفت نہ رہے۔ یہ قانون صرف سیاستدانوں پر لاگو ہوگا۔ حکومت کے کسی کارندے یا کسی محکمے کے افسر پر لاگو نہیں ہوگا۔ ساری سول سروس اس سے محفوظ رہے گی اور حکومت کے اداروں کے ناظم بھی۔ سیاستدان پھر کیسے پکڑائی دے گا، وہ تو کسی کاغذ پر دستخط ہی نہیں کرتا۔ سیاستدانوں کے لئے بھی سرکاری طاقت کے غلط استعمال کو بدعنوانی قرار نہیں دیا جائے گا اور نہ ہی سرکاری طاقت کے استعمال سے ذاتی فائدہ حاصل کرنا، یا کسی اور کو فائدہ پہنچانا کوئی جرم قرار پائے گا۔ اس قانون کے تحت یہ پوچھنے کی گنجائش نہیں رہے گی کہ کسی نے دولت کس ذریعے سے کمائی ہے۔ تمام نجی مالیاتی اور تجارتی ادارے قانون کی گرفت سے باہر ہوں گے۔ بینکوں پر لازم نہیں ہوگا کہ وہ مشکوک کاروبار کی اطلاع دیں اور نہ ہی تفتیشی ادارہ کسی تفتیش کے سلسلے میں سرکاری یا نجی اداروں سے اطلاعات حاصل کرنے کا پورے طور پر مجاز ہوگا۔ نہ ہی کسی کی جائیداد دورانِ تفتیش منجمد کی جاسکے گی اور نہ ہی کسی کو حراست میں لیا جاسکے گا۔ اگر تین سال کے عرصے میں سزا نہ دلوائی جاسکی تو کیس ختم ہو جائے گا۔ اگر کوئی چوری کا پیسہ واپس لوٹا دے، تو بھی کیس ختم ہو جائے گا۔ اور اگر کوئی عدالت سے مجرم قرار پا بھی گیا، تو زیادہ سے زیادہ سزاسات سال کی ہو سکے گی اور صرف پانچ سال کے لئے کسی پبلک آفس (public office) میں بیٹھنے کی اجازت نہیں ہوگی۔ NAB کا ادارہ اور قانون ختم کر دیا جائے گا اور تفتیش پاکستان کے عام قانون کے تحت FIA (فیڈرل انویسٹی گیشن ایجنسی) کرے گی۔ وائٹ کالر کرانم عام قانون کی پکڑ میں نہیں آسکتا، سب کو کھلی چھوٹ ہوگی۔

اس اہم ادارے سے منسلک رہ کر میرا تجربہ یہ ہے کہ اس ملک میں کوئی پیسے اور طاقت والا جواب دہی یا اکاؤنٹیبلٹی (accountability) نہیں چاہتا۔ یہ صرف ایک سیاسی نعرہ ہے۔ جب ایک ڈکٹیٹر نے اکاؤنٹیبلٹی سے منہ موڑ لیا، تو ایک سیاستدان سے، جس کا نظام ہی کرپشن پر چلتا ہو، کوئی کیا توقع رکھے۔ کرپشن کے بغیر سیاست چل نہیں سکتی۔ سیاستدان آتا ہی اس لئے ہے کہ دنیا حاصل کرے۔ اُس نے اپنے آنے پر بہت رقم صرف کی ہوتی ہے، یہ سرمایہ کاری ہے، منافع بھی تو حاصل کرنا ہے، خیرات تو نہیں دی ہے۔

NAB کے قوانین جب بنائے گئے، فوجی حکومت ملک سنوارنے کے خواب لئے نئی نئی آئی تھی۔ کوئی سیاسی دباؤ نہیں تھا۔ ایسا سخت قانون بنایا، کہ شاید دنیا کے کسی ملک میں بدعنوانی کے خلاف ایسی قانونی گرفت نہیں۔ مختلف ممالک کے اینٹی کرپشن ادارے ہم سے یہ قانون کی کتاب مانگ کر لے جاتے اور حیران ہوتے کہ اس قدر کارگر قانون، جو کوئی عوام کی منتخب حکومت بنانے کا حوصلہ نہیں رکھتی، آپ کے یہاں کیسے بن گیا؟ یہ قانون اُن حالات میں بنا جو شاید دوبارہ نہیں آئیں گے۔ ہمارے سیاسی نظام میں ایسا قانون بننے کی کوئی گنجائش نہیں۔ اگر یہ قانون منسوخ کر دیا گیا تو پھر اس ملک میں کرپشن کے خلاف لڑائی ختم ہو جائے گی۔ یہی اس جنگ میں مکمل شکست سے بچنے کی ایک امید ہے۔

سرکار کے نظام میں چور کو تحفظ فراہم کرنے کا رواج قائم ہے۔ سب ایک دوسرے کو بچاتے ہیں۔ پہلے تو حکومت کے پیسوں میں خرد برد ہوتی تھی۔ لوگ رشوت کے طور پر پیسے کھاتے، یا خزانے سے مال چوری ہوتا، ٹیکس کی چوری ہوتی۔ پھر عوام کو لوٹنے کے سلسلے نے زور پکڑا۔ اس پر کوئی روک تھام نہیں۔ طرح طرح کی کارٹلز (cartels) بن گئیں، چاہے تیل ہو، CNG، چینی، گھی، ادویات، کھاد، یا کوئی اور روزمرہ کی ضرورت۔ جس طرح سے ہو سکے عوام سے پیسے کھینچے جاتے ہیں۔ اس میں سرکار بھی اور کاروباری طبقہ بھی، سب ہی شامل ہیں۔ بینکوں کا نظام سب کی امداد کرتا ہے۔ بڑے بڑے لوگوں کو عوام کی جمع پونجی سے اربوں روپے دے کر انہیں معاف کر دیتے ہیں۔ سٹیٹ بینک ان کی پشت پناہی کرتا ہے۔ سب سے بڑے لٹیروں اس ملک کے مالیاتی ادارے ہیں۔ سٹاک ایکسچینج بھی بینکوں کے شانہ بشانہ چلتے ہیں۔

ہمارا نظام کرپشن کو فروغ دیتا ہے، اسے پالتا ہے۔ اس ہی میں سیاست بنتی ہے۔ اسے سیاستدان کی مجبوری کہیں یا جمہوریت کی قیمت، جب ملک فنا ہو جائے گا تو نہ ہی جمہوریت رہے گی اور نہ ہی سیاستدان۔ بڑے بڑے سب ہی اپنی دولت بٹور کر باہر چلے جائیں گے۔ صرف بھوکے قوم باقی رہ جائے گی، عذاب سہنے کو۔ اس لئے کہ وہ اس کرپشن کے عادی ہو چکے ہیں۔ اس ہی میں اپنے لئے بھی جگہ تلاش کرتے ہیں۔ چُپ رہتے ہیں۔ سب ہی صرف ذاتی مفاد کا سوچتے ہیں۔ یہ نہیں سمجھتے کہ سب ہی کا ذاتی مفاد صرف مجموعی مفاد میں ہے، اس ملک کے مفاد میں ہے۔ آج چُپ رہنے کی ہی سزا ہم بھگت رہے ہیں اور کل اس سے بھی بھاری قیمت ادا کرنی پڑے گی، شاید اپنے خون سے۔

دواں سفر گوشہ تہائی

یہ کیسا قانون بنانے کی کوشش کی جا رہی ہے، جس میں تحفظ عوام کو نہیں بلکہ اُن لوگوں کو فراہم کیا جا رہا ہے جو قوم کو لوٹ رہے ہیں؟ یہ تو ایسا قانون ہے جس میں حکومت کے کارندوں کو چوری کرنے کی ترغیب دی جا رہی ہے۔ یہ کون لوگ ہیں جو اس ڈھٹائی سے ایسا قانون پیش کر رہے ہیں؟ وہی ناجو خود کو عوام کا نمائندہ قرار دیتے ہیں، کہتے ہیں ہماری آواز عوام کی آواز ہے؛ عدالت کی کیا ضرورت، الیکشن ہی عدالت ہے، یہی قوم کا آخری فیصلہ ہے۔ خود ہی قانون بناتے ہیں، خود ہی نظام تشکیل دیتے ہیں، اور کہتے ہیں ہم سے بہتر عوام کا مفاد کون کر سکتا ہے؟ یہ کیسا نظام ہے جس میں ایسے شیاطین ہم اپنے سروں پر بٹھانے پر مجبور ہیں؟ پھر یہی لوگ اپنے کاروباری میڈیا کے زور پر اس نظام کی بقا کو قوم کی بقا قرار دیتے ہیں۔ عوام سے کہتے ہیں صبر کرو، وقت کے ساتھ ساتھ سب ٹھیک ہو جائے گا۔ تم صبر کرو، ہم بے صبری سے تمہارا خون چوستے ہیں۔ دیکھو کتنا میٹھا ہے!

پھوٹی نہیں اپنوں سے کوئی طرزِ ملامت *

ہم اپنے گھر میں آ گئے۔ اب ہمارا بھی کوئی ٹھکانا ہو گیا۔ شہر سے دور، ایک ندی کے کنارے۔ پانچ بیڈروم کا گھر میں نے خود ڈیزائن کیا تھا، انجم کی پسند سے۔ آرکیٹیکٹ بھی اچھا مل گیا، علی عمر، اور بلڈروسیم بھی۔ مجھ سے پوچھا کہ کیا بجٹ ہے، میں نے کہا بجٹ نہیں ہے، بس ایک گھر کا پیکر ہے، جو بھی خرچہ آجائے۔ انہوں نے بنایا بھی بہت محبت سے۔ انجم نے سارے گھر کے لئے ہر چیز نئی خریدی، اُس کا بھی کوئی بجٹ نہیں تھا۔ میں نے کہا آج اتنے پیسے ہیں کہ ہم نے کبھی سوچا بھی نہیں تھا، ان سے مقبرہ تھوڑی بنوانا ہے، تم خرچ کرو۔ ساری عمر تم نے پیسے گن گن کر میرے ساتھ گزارا کیا ہے، کچھ نہ کچھ جوڑ کر گھر سجاتی رہی ہو، اب قیمت نہ پوچھو، جو چیز اچھی لگتی ہے لے لو۔ اُس نے بھی اپنے سب ارمان پورے کئے۔ میں باغبانی میں لگا رہتا، وہ گھر میں۔

یہ انجم کے خوابوں کا گھر تھا، اُس نے کچھ یوں لکھا تھا:

| | |
|--------------------------------|-----------------------------|
| دور وادی میں میرا گھر ہوگا | خوشبوؤں سے بسا نگر ہوگا |
| ریشمی جھولتی ہوئی بیلین | کیا حسیں میرا بام و در ہوگا |
| جوق در جوق جگنوؤں کے دیے | ہر طرف روشنی کا گھر ہوگا |
| روز چڑیوں کی صبح و شام چہک | نفسگی سے بھرا نگر ہوگا |
| گول سی جھیل کا نیلا پانی | دوسرا چاند کا وہ گھر ہوگا |
| تھک کے آئیں گے جو چرند پرند | ہر شجر اُن کا ہی شجر ہوگا |
| زندگی سے تھکے ہوں گے لئے | میرا گھر باعثِ سحر ہوگا |
| اک تیرا ساتھ اور ہاتھ میں ہاتھ | وقت کچھ اس طرح بسر ہوگا |

ہنسی خوشی وقت گزرتا رہا۔ شروع میں تو میں اور انجم اکیلے ہی رہتے تھے، پھر اللہ کی رحمتوں سے آہستہ آہستہ سارے بچے بھی ہمارے ساتھ رہنے آ گئے۔ صرف ایک پوتی ہمارہ گئی، جو اپنے تھیال میں رہتی ہے۔ عبداللہ میرا بھولا نواسہ سب میں بڑا ہے، پھر شرارتی اور

* فیض احمد فیض

دسواں سفر گوشہ تنہائی

ذہین شایان میرا پوتا ہے، اُس سے چھوٹی حوروں جیسی حوریا، عبداللہ کی چھوٹی بہن، نانا کی لاڈلی ہیں۔ سب سے چھوٹے میاں اسماعیل ہیں جو عبداللہ بھائی کی توڑ لگتے ہیں، ابھی سال بھر کے نہیں ہوئے اس لئے نانا کے گانے شوق سے سنتے ہیں۔ گھر میں ان ننھی جانوں سے خوب رونق رہتی ہے۔

میرا زیادہ وقت باغبانی میں گزرتا۔ فارم پر ایک چھوٹی سی مسجد بھی بنائی کہ سب مل کر نماز پڑھ لیا کریں گے۔ سوچا اس کا نام اپنی والدہ کے نام پر قمر مسجد رکھتا ہوں۔ نام کی تختی بھی بنوائی، مگر کسی نہ کسی وجہ سے اُس کا لگانا ملتا رہا۔ دوسواتی فیملیاں بھی میرے فارم پر رہتیں ہیں۔ ان میں ایک کا پندرہ سالہ خوبصورت بیٹا نور اللہ بھی والد کے ساتھ کام کرتا تھا۔ جیب میں چھوٹا سا قرآن رکھتا، ہر وقت اللہ کو یاد کرتا۔ خاموش رہتا تھا۔ جب کوئی کام کہو، مسکرا کر کر دیتا۔ جہاد کا بہت شوق تھا۔ اُس کا والد عبداللہ اُسے جانے نہ دیتا، کہ ابھی چھوٹے ہو، بڑے ہو جاؤ تو چلے جانا، مگر FATA میں نہ جانا، کیونکہ وہاں مسلمانوں کا قتل مسلمان کرتے ہیں۔ ایک دن کسی کو کہے بغیر گھر سے غائب ہو گیا۔ پھر ایک شام خبر آئی کہ نور اللہ کشمیر میں شہید ہو گیا۔ کسی حسین وادی میں سو رہا۔ ماں باپ کا حوصلہ دیکھنے والا تھا۔ عبداللہ کو دوسری صبح میں نے فارم پر کام کرتے پایا۔ کیا ایسا ایمان غریب کے دلوں میں ہی پلتا ہے؟ پھر میں نے مسجد کا نام نور اللہ مسجد رکھ لیا۔ ماں تو مجھے پیاری تھی، نور اللہ تو اللہ کا پیارا تھا۔

ان خوبصورت دنوں میں بھی، فوج کے آخری سالوں میں اپنے کئے پر دل میں ایک بے چینی سی رہتی۔ فراغت پائی تو گناہوں کا بوجھ اور بڑھ گیا، دین کی طرف اور زیادہ راغب ہو گیا، مگر اس میلے وجود کو کیسے سکون نصیب ہو؟ جتنا دین کے بارے میں پڑھا، اتنی ہی ندامت ہوئی۔ نماز میں جب دھیان اللہ پر نہیں رہتا تو ڈر جاتا ہوں۔ لگتا ہے جیسے قربت کے لائق نہیں رہا۔ اسی سے اپنے ایمان کا خلوص جانچتا ہوں۔ یہ بھی پنڈولم کی طرح جھولتا رہتا ہے۔ اگر کچھ اچھا کرتا ہوں، تو نمازیں پھینکی پڑ جاتی ہیں۔ خطاؤں میں رہوں، تو زیادہ خلوص پاتا ہوں۔ خود نمائی ہر وقت آڑے آتی ہے، خلوص کی دھجیاں اڑاتی ہے۔ نہ جانے یہ کس گہرائی سے پھوٹی ہے۔ قرآن پڑھتا ہوں تو ڈر جاتا ہوں۔ کافروں کے ساتھ مل کر مسلمانوں کے قتل و غارت پر دل دہلتا ہے۔ اس سارے کھیل میں مشرف صاحب کا ساتھی ہونے پر ایک جرم کا احساس اندر ہی اندر سے کھاتا رہتا ہے۔ لاکھ اپنے آپ کو سمجھاؤں کہ یہ سب تمہارا کیا تو نہیں، یہ تو بعد میں بڑھتا چلا گیا، اُس وقت تو یہ سب نہیں تھا، اور تم جو کر سکتے تھے کیا، خود تو کوئی غلط کام نہیں کیا۔ مگر کسی طرح خود کو معاف نہیں کر پایا۔

سوچا کہ اس قتل و غارت کے خلاف آواز ہی اٹھاؤں، مگر یہاں بھی ٹھوکر ہی کھائی۔ انصار عباسی صاحب سے ایک مرتبہ ملاقات ہوئی، پُر خلوص انسان لگے۔ فون پر انہیں خاصی تفصیلات بتائیں، انہوں نے پوچھا کہ کیا یہ اخبار میں چھاپ دوں، میں نے کہا ضرور چھاپ

دیں۔ جب وہ چھپا، تو فوج کے چند حلقوں میں بہت ناراضگی ہوئی۔ اُنہوں نے لکھا تو وہی تھا جو میں نے کہا تھا، مگر اُس کے ساتھ جو اُنہوں نے میری باتوں سے اخذ کیا وہ بھی لکھا تھا۔ فرق صاف پتہ نہ چلتا۔ اخذ تو انہوں نے ٹھیک ہی کیا تھا، مگر وہ میرے الفاظ نہیں تھے۔ انصار عباسی نے بات ہوئی، کہنے لگے اخباروں میں اسی طرح لکھا جاتا ہے۔ پھر مجھ پر فوج سے دباؤ پڑا کہ اس کی تردید کروں۔ اگلے دن مزید تفصیلات بتا دیں، کوئی کہی ہوئی بات بدلی نہیں اور نہ ہی انصار عباسی صاحب کی کسی بات کو رد کیا۔ فوج کی ناراضگی جاری رہی۔ پھر کہا گیا کہ کامران خان صاحب کے ٹی وی کے پروگرام میں آکر صفائی پیش کروں۔ میں نے سوچا کہ تمام باتیں صاف طور پر بیان کر دوں گا۔ وہ کراچی سٹوڈیو میں بیٹھے تھے، میں اسلام آباد میں ایک کیمرے میں بول رہا تھا۔ انوکھا تجربہ تھا۔ اُنہوں نے اپنے مقصد کا سوال پوچھا، ایک تاثر قائم کیا اور مجھے الوداع کہا۔ جو کہنا تھا، رہ گیا۔ انصار صاحب بھی ناراض رہے، جس کا مجھے افسوس ہوا۔ جو سچ ڈھونڈتے ہوں، مشکل سے ملتے ہیں۔ فون پر بات ہوئی، کہنے لگے آپ کی تمام باتیں میرے پاس ریکارڈ ہیں۔ میں نے کہا لفظ بالفظ تو مجھے یاد نہیں، مگر اگر میں اور آپ جھگڑیں گے تو اچھا نہیں ہوگا، کیونکہ ہم ایک ہی مقصد کے لئے کام کر رہے ہیں۔ اللہ ہمیں کامیابی عطا کرے۔ اُن سے بھی، باقیوں کی طرح، ناتا ٹوٹا۔

کافی دن ہاتھ پر ہاتھ دھرے بیٹھا رہا۔ پھر ایک دن خبر ملی کہ امریکی فوج کے دستے پاکستان کی سرزمین پر ہیلی کاپٹروں سے اتر کر کاروائی کر گئے۔ بہت کوفت ہوئی۔ دو مضامین لکھے، جو نیشن اخبار میں ۱۲ اور ۲۱ ستمبر ۲۰۰۸ کو چھپے۔ پھر کچھ ٹی وی پر بھی بولا۔ مگر ٹی وی والوں کو صرف مشرف صاحب کے بارے میں ہی تجسس تھا، اسے ہی کریدتے۔ امریکہ اور پاکستان کے گھناؤنے کھیل کے بارے میں کوئی پریشانی نہیں تھی۔ اُن دنوں ٹی وی پر امریکہ کے خلاف کوئی آواز نہیں اُٹھتی تھی۔ الجزیرہ ٹی وی نے اس موضوع پر میرا گھنٹے بھر کا پروگرام ریکارڈ کیا، لیکن دکھایا نہیں۔ پھر یہ بھی چھوڑ دیا۔

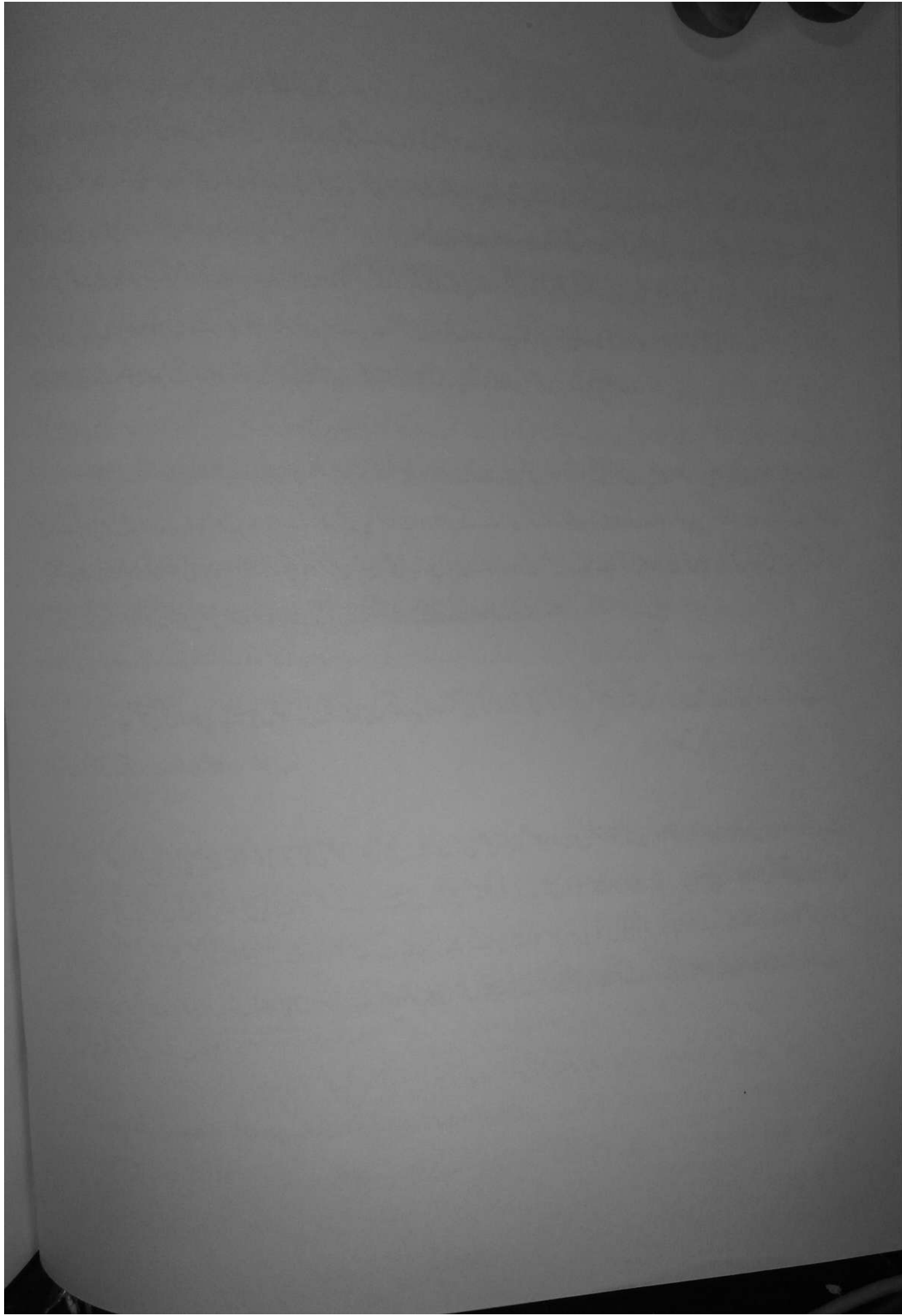
کچھ گندے الزامات بھی لگے، جو میڈیا نے فوراً ہی چاٹ لئے۔ جنزلوں کے خلاف ایسی نفرتیں دل میں بھری تھیں، کہ نہ ہی کسی نے یہ دیکھا کہ کوڑا پھینکنے والا کون ہے اور نہ ہی یہ کہ الزام کیا لگا رہا ہے، بس سب اخباروں میں چھاپ دیا۔ ویب پر بھی۔ پھر مجھ سے صفائی پیش کرنے کا تقاضا بھی کیا! کچھ DHA لاہور کے سلسلے میں بھی ادھوری ادھوری سی باتیں کہی گئیں، اشاروں کنایوں میں مورد الزام ٹھہرایا، صاف کہنے کو کچھ تھا جو نہیں۔ سننے والے یہی سوچ لیتے کہ جہاں گند کیا ہوتا ہے اُس پر پردہ ڈالا جاتا ہے، اُن لوگوں کے خلاف انکوائریاں نہیں کروائی جاتیں۔ اور جواربوں حرام کھانے کی صلاحیت رکھتا ہو، سینکڑوں کی چوریاں نہیں کرتا۔ چند اخبار نویسوں اور ٹی وی کے مفکرین کو شاید یہ رنجش تھی کہ سیاست کی کرسی کیوں گرائی؟ اس پر مجھے ندامت نہیں، بس افسوس ہے کہ مشرف صاحب پر بھروسہ کیا۔ کیونکہ امریکہ کے خلاف بولا تھا، میرا منہ بند کرنے کو سب ہی طاقتیں ملامت کرنے کھڑی تھیں۔ کنبہ پروری کی روایت توڑنے پر فوج بھی نالاں تھی۔ ایک پرانے فوجی ساتھی نے یہ تک پوچھ لیا کہ تم کس کے ایجنڈے پر کام کر رہے ہو؟ سب ہی ساتھ چھوڑ گئے۔ سب ہی ہاتھ میری گردن پر اُٹھنے لگے۔

گنہگار ہوں، سب گناہ یہاں لکھے بھی نہیں۔ شرم بھی آتی ہے اور اللہ کا خوف بھی، کہ کہیں ان کو پھیلانے کا باعث نہ بنوں۔ دل کے پیچھے چلتا ہوں، پھسلتا بھی ہوں، گرتا بھی ہوں، ڈرتا بھی۔ جب فوجی حکومت کا ایک سال ہو گیا تھا اور دل میں بہت چھین اٹھی تھی، کہ کس کا ساتھ دے کر ملک آج کن ہاتھوں میں چھوڑا ہے، تو جج پر نکل کھڑا ہوا۔ پھر جب فوج سے ریٹائر ہو گیا، تو امریکہ کا ساتھ دینے کا بوجھ لئے پھرتا تھا، پھر جج پر جانا پڑا۔ پہلی مرتبہ بہت اچھا جج ہوا تھا، دوسری مرتبہ دل پر بہت بوجھ رہا۔ لگتا تھا ان دیکھی جگہوں سے دھکے پڑتے ہیں۔ شاید گناہوں کا بوجھ بڑھ گیا تھا کہ اب دل کے سکون کی خاطر کسی کو اللہ کی راہ پر راہبر بھی بنا لیا تھا۔ پھر ایک جج NAB سے فراغت پانے کے بعد بھی کیا۔ اس مرتبہ دونوں بیٹے، میرا داماد ارشد، جو اللہ نے آخری عمر میں بڑھاپے کا سہارا ایک بیٹا اور دیا، اور اُس کا بڑا بھائی امجد، جو حق کی راہ کا متلاشی ہے، بھی میرے ہمراہ تھے۔ بوجھ گھٹا نہیں۔ سمجھ نہیں آتا کہ اپنے گناہوں کو کس طرح دھولوں۔

اللہ سے تو معافی کا طلبگار ہوں ہی، مگر وہ جن کا قصور وار ہوں اُن سے بھی معافی مانگتا ہوں۔ اُن افغان بھائیوں اور بہنوں سے جن کے گھراں کی فوج کے ہاتھوں تباہ ہوئے، کہ میں پاکستان اور امریکہ کے اس گٹھ جوڑ میں مجرم ہوں۔ اور اُن پاکستانیوں سے بھی جنہیں دین کی راہ سے موڑ کر کفر کی راہ پر لگانے کی کوششیں آج بھی جاری ہیں۔ اور وہ بھی جن کے بچے آج ہماری ہی فوج قتل کرتی ہے، کہ آج امریکہ سے جوڑا ہوا ناٹھ ہمیں اس مقام تک لے آیا ہے۔ اگر ہو سکے تو مجھے معاف کرنا۔

جب عشق کی راہ پر چلتے ہیں ٹھوکریں تو لگتی ہیں، مگر یہ کیسا عشق تھا کہ میری ٹھوکریں تمہیں لگیں! ذہن میں عجیب سا سناٹا ہے۔ کسی چیز میں نہ کوئی رنگ ہے، نہ خوشبو، نہ مٹھاس۔

اور دل کی کیا پوچھتے ہو؟ دل تو کہیں ٹھہرتا ہی نہیں۔ جنت میں بھی تنہائی کا احساس ختم تو نہیں ہوا تھا۔ احساس یوں ہی ہواؤں سے اُلجھتے رہتے ہیں، سکون کی کوئی منزل پانے کو اُکساتے رہتے ہیں۔ کسی حسین فریب میں ڈبونے کو بہکاتے رہتے ہیں۔ ہماری محبتیں بھی انہی فریبوں میں پلتی ہیں، سچ کی کڑواہٹوں سے دور۔ محبت سے پہلے عزت کے مرحلے کا سفر، مردوتوں کی نظر ہو جاتا ہے، تکلفات میں ڈھل جاتا ہے۔ پھر دل بہلانے کو خوابوں میں زندگیاں بسر کرتے ہیں، فریبوں میں جیتے ہیں۔ کون عقیدت کے درجے کو چھوٹا ہے، خود کو مارنا پڑتا ہے۔ عشق کی منزل کسے نصیب ہو؟



چاہا ہے اسی رنگ میں لیلائے وطن کو
تڑپا ہے اسی طور سے دل اس کی لگن میں
ڈھونڈی ہے یونہی شوق نے آسائش منزل
رخسار کے خم میں کبھی کاکل کی شکن میں

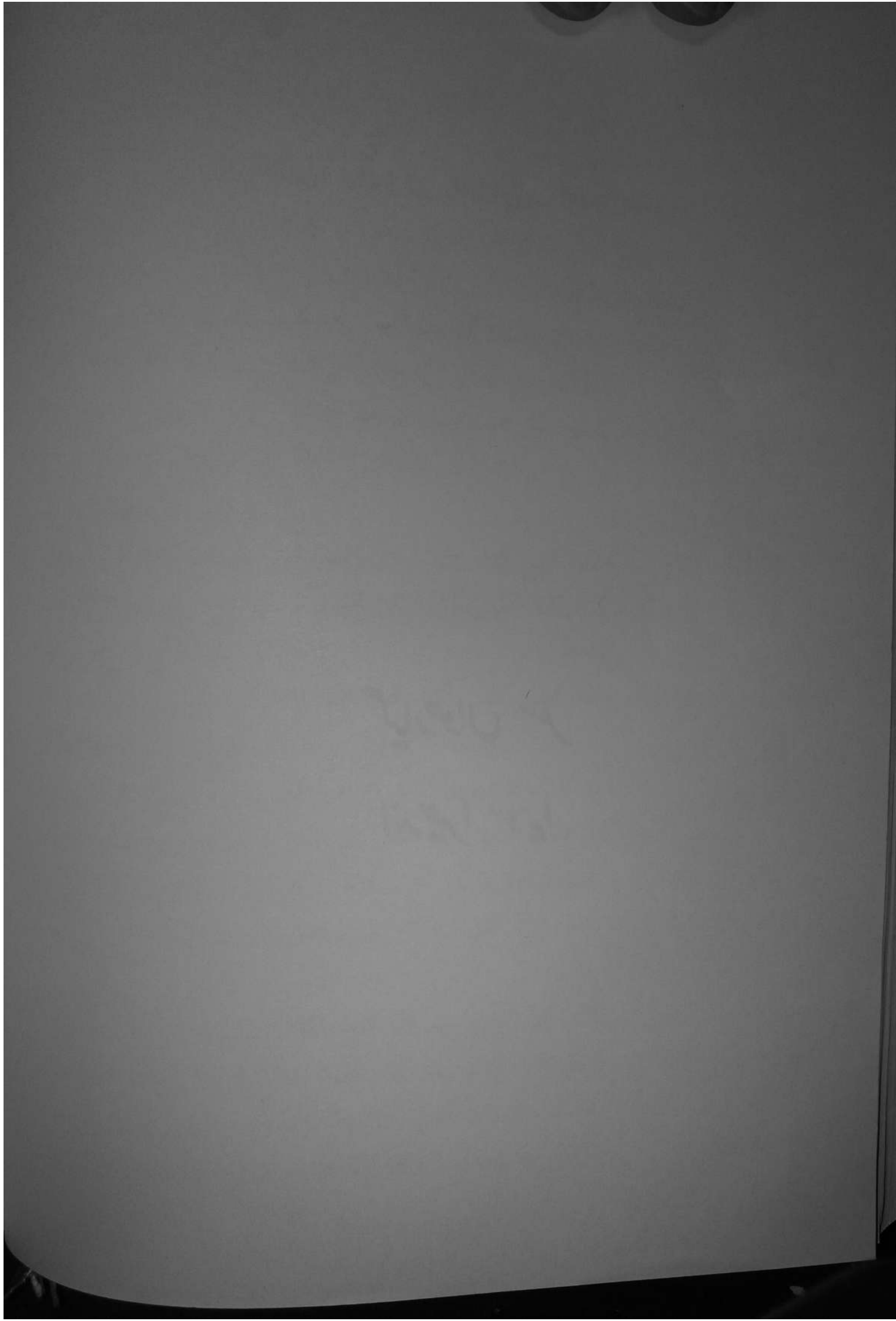
اس جانِ جہاں کو بھی یونہی قلب و نظر نے
ہنس ہنس کے صدا دی، کبھی رو رو کے پکارا
پورے کئے سب حرفِ تمنا کے تقاضے
ہر درد کو اُجیالا ، ہر اک غم کو سنوارا

واپس نہیں پھیرا کوئی فرمان جنوں کا
تہا نہیں لوٹی کبھی آواز جرس کی
خیریتِ جاں ، راحتِ تن ، صحتِ داماں
سب بھول گئیں مصلحتیں اہلِ ہوس کی

اس راہ میں جو سب پہ گزرتی ہے وہ گزری
تہا پس زنداں، کبھی رسوا سرِ بازار
گر جے بہت شیخ سرِ گوشہء منبر
کڑکے ہیں بہت اہلِ حکم بر سرِ دربار

چھوڑا نہیں غیروں نے کوئی ناوکِ دشنام
چھوٹی نہیں اپنوں سے کوئی طرزِ ملامت
اس عشق ، نہ اُس عشق پہ نادم ہے مگر دل
ہر داغ ہے اس دل میں بجز داغِ ندامت
(فیض)

گیارہواں سفر
اندھیرا سویرا



وار کرنے شروع کر دیے۔ گرنے لگے تو چیف جسٹس کے سر پر پاؤں رکھ کر سنبھلنا چاہا، پھر مسلمانوں سمیت لال مسجد جلاؤالی، ملک کے لٹیروں کے سب کالے کرتوت معاف کئے، پھر انہیں ہمارے سروں پر لا بٹھایا، آخر میں بے نظیر کے قتل کو ڈھانپتے رہے۔ اپنے غم گسار آپ نے ہی پنے تھے، جن کے مشوروں پر چل کر قوم کو یہاں تک پہنچایا۔ دوست اور دشمن کی پہچان نہ سیکھی۔ ہاں میں ہاں ملانے والوں میں خوش رہے۔ قوم سے محبت کرتے، اُن کے دل جیتنے، تو کسی کی کیا مجال تھی کہ آپ کو یوں نکال باہر پھینکتا۔

یہ سب کھیل اُن ہی مغربی قوتوں کے رچائے ہوئے تھے، جنہیں آپ نے اپنا ساتھی سمجھا، جن کے دل جیتنے کی جستجو میں لگے رہے۔ آج وہ اس ملک کے ہر گوشے میں سما چکے ہیں۔ ہر سازش کے پیچھے، ہر ہنگامے کی جڑ میں ان کا اُن دیکھا ہاتھ ہے۔ اور ہماری آنکھوں پر بھوک کا پردہ پڑا ہے۔ یہ ہمیں نابود کرنے پر تلے ہیں اور ہم خود کو بے بس، لاچار اور اپاہج سمجھے، اپنا کشکول لئے بیٹھے ہیں۔ ہمیں یہ بھی نہیں پتا کہ جانا کہاں ہے، نہ ہی کہیں جانے کی جستجو باقی رہ گئی ہے۔ بس پیٹ پر ہاتھ دھرے بیٹھے ہیں۔ ڈوب رہے ہیں، مگر ہاتھ چلانے کا یارا نہیں۔ دوسروں پر تکیہ کرنے سے پیدا ہوئی یہی بے بسی، اس قوم کو آپ کا تحفہ ہے۔

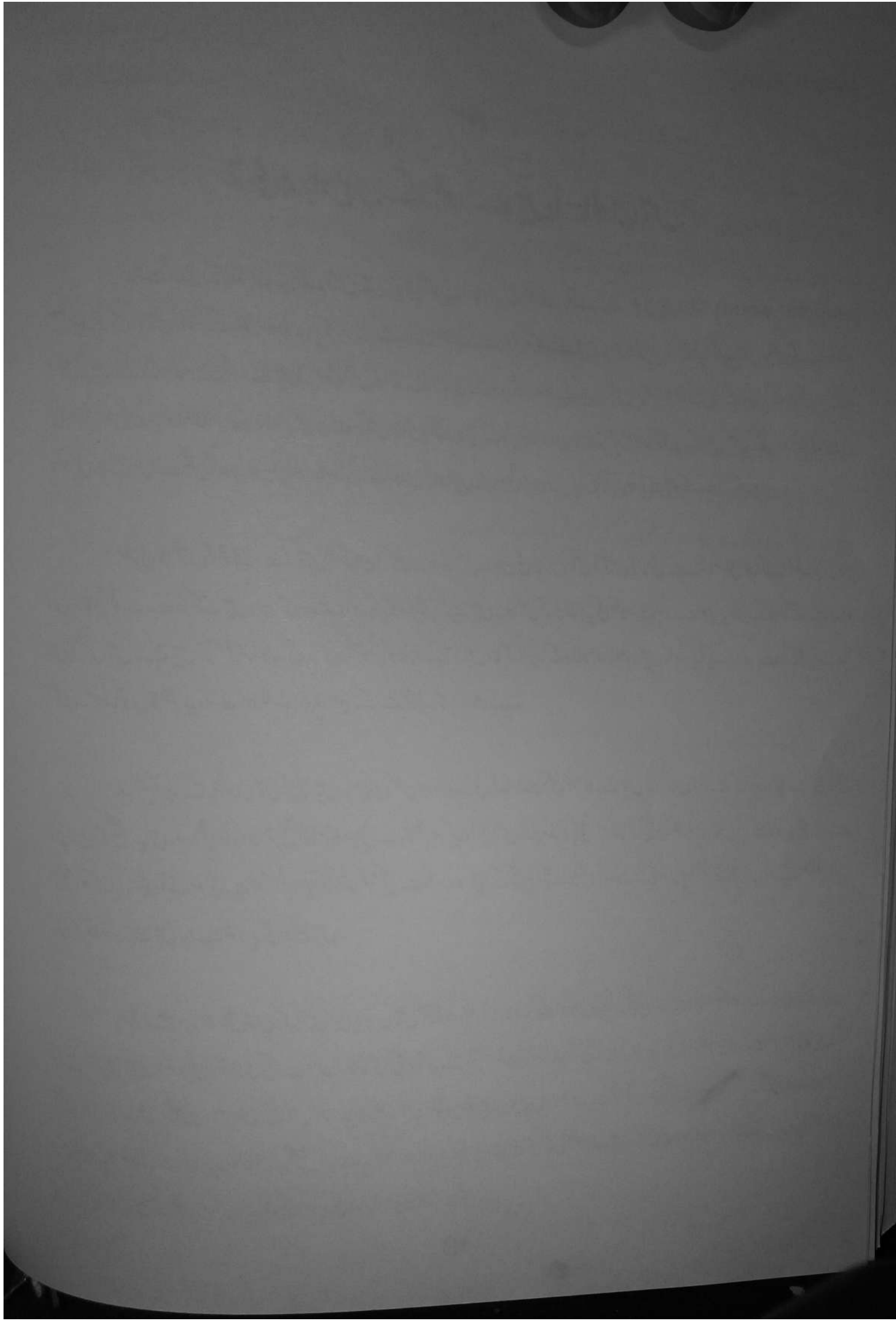
تری بربادیوں کے مشورے ہیں آسمانوں میں *

دہشت گردی کے خلاف یہ جنگ اصل میں سیاسی نظریہ اسلام کے خلاف جنگ ہے۔ یونی پولر ورلڈ (unipolar world) کے خواب کی راہ میں، اللہ کے دین اور اُس پر بھروسہ رکھنے والے سب سے بڑی رکاوٹ ہیں۔ اس خواب کے تعاقب میں، امریکہ کے مفاد مسلمان ممالک کے مفاد سے ٹکراتے ہیں۔ مسلمانوں کو اللہ نے زمین کے وہ خطے عطا کیے ہیں، جن پر تسلط اور ان کے معدنی وسائل پر قبضے کے بغیر، امریکہ دنیا کو اکٹھا کر کے مادہ پرستی کی راہ پر نہیں ڈال سکتا۔ دنیا کے ڈیڑھ ارب سے زائد مسلمانوں کے دل میں سلگتی ہوئی ایمان کی چنگاری، جب دل سے نکل کر دنیا میں اپنا نور پھیلاتی ہے، تو ان کی راہیں بند ہوتی ہیں۔ یہ چاہتے ہیں اسے پھونک مار کر بجھا دیں۔

مغربی طاقتوں کو خوف ہے کہ کہیں مسلمان اکٹھے نہ ہو جائیں۔ ان کی تاریخ بھی انہیں ڈراتی ہے۔ تمام ہی ممالک مسلمانوں کی اس امکانی قوت سے خائف ہیں، اور کسی حد تک امریکہ کا ساتھ دیتے ہیں۔ خاص کر برطانیہ کی حکومت پورے طور پر ان کے ساتھ ہے۔ وہ اس کوشش میں رہتے ہیں کہ مسلم ممالک کی باہمی رنجشوں کو ہوا دیتے رہیں، تاکہ ان کے مفاد متصادم رہیں، اور یہ ایک دوسرے کے قریب نہ آ سکیں۔ مسلمانوں کا نظریہ اُمت اور فلسفہ جہاد ان کے لئے خوف کا باعث ہے۔

اور ہم ان کے ہاتھوں میں کھیلتے ہیں۔ جہاں ممکن ہو، شیعہ سنی فسادات بھی بھڑکاتے ہیں۔ انہیں ڈر ہے کہ اگر دنیا کے کسی خطے میں دین کا صحیح سیاسی، معاشی اور معاشرتی نظام کامیابی سے قائم ہو گیا، اور اُس کے مفاد باقی مسلمانوں کی نظروں میں آ گئے، تو یہ تیزی سے پھیل سکتا ہے۔ یہی ایک سوچ ہے جو مسلم دنیا کو اکٹھا کر سکتی ہے، اور وہ دنیا کے سٹیج پر ایک بڑی طاقت کے طور پر ابھر سکتے ہیں، اپنے حقوق اور مفاد کا تحفظ کر سکتے ہیں۔ اپنے طور پر جی سکتے ہیں۔

ہم تو اتنے دوراندریش نہیں، کہ ہمیں ان باتوں میں حقیقت نظر آئے، یا کچھ امکان ہی۔ لیکن وہ، جو دنیا پر حکومت کرنا چاہتے ہیں، دور کی سوچتے ہیں۔ اگر دین انفرادی سطح سے اُٹھ کر اجتماعی سطح پر آ جائے، تو مسلمان ممالک آج کی اس لا چاری اور محکومیت سے نکل سکتے ہیں۔ انہیں اس کا خدشہ رہتا ہے، اس ہی لیے اس نظریے کو کچلتے ہیں۔ لیکن نظریوں کو یوں طاقت سے تو شکست نہیں دی جاسکتی۔ جتنی طاقت اس کے خلاف استعمال ہو رہی ہے، اتنا ہی یہ پھیل رہا ہے۔ ہم مسلمان، جو آج دنیا داری میں مشغول ہیں، اتنی بصارت تو رکھتے نہیں کہ دیکھ سکیں، اور نہ ہی اتنا ایمان کہ یقین کریں، کہ اللہ کی راہ پر ہی ہمارا دنیاوی فائدہ بھی ہے۔



حکمران تو قابو آ ہی جاتے ہیں، بک جاتے ہیں، مگر عوام، جن کے دل میں آج بھی دین کا چراغ ٹمٹاتا ہے، اللہ کے احکامات کو پامال ہوتا دیکھ کر کم از کم، دل میں ضرور گڑھتے ہیں، اپنے دین کے لیے لڑنے پر بھی اتر آتے ہیں، اور اگر کہیں اٹھ کھڑے ہوں تو جان دینے سے بھی گریز نہیں کرتے۔ مسلمانوں سے خاص رنجش کی یہی وجہ ہے۔ باقی دنیا، چاہے امریکہ سے مفادات کا تنازع رکھتی ہو، اُن کی عوام مغربی طرز زندگی اپنانے میں ہچکچاہٹ نہیں محسوس کرتے، تصوراتِ آخرت اُن کی خالصتاً دنیاوی جستجو میں رکاوٹ نہیں۔ اگر لڑتے بھی ہیں تو صرف دنیاوی مفاد کے لیے۔ امریکہ بھی سمجھتا ہے کہ صرف دنیاوی مفاد رکھنے والے، جدھر اپنا مفاد پائیں گے، اُدھر ہی مڑیں گے، آخر کار گھائل ہو ہی جائیں گے۔ مسلمانوں کا معاملہ اس سے مختلف ہے، وہ عقیدہ قضا و قدر رکھتے ہیں۔

امریکہ کی مفاد پرست خارجہ پالیسی، طاقت کے زور پر اپنے عزائم پورا کرنے کے لئے، دوسروں کے حقوق کو پامال کرنا، اپنا حق سمجھتی ہے۔ اپنا مقصد حاصل کرنے کے لئے سیاسی اور اقتصادی دباؤ (arm twisting) کا استعمال بھی کرتے ہیں، اور کھلم کھلا فوجی طاقت کا استعمال بھی۔ وہ دنیاوی مفاد کا پیکر پیش کرتے ہیں، وہ بھی جھوٹا، صرف للچانے اور ڈرانے کو، اور دین ہمیں اللہ کی منشاء کے خلاف، دنیا حاصل کرنے سے روکتا ہے۔ جب تک وہ ہمیں دین کی اصل روح سے پھیر نہیں لیتے، اُن کو مخالفت ہی ملے گی۔ حاکمین اور منافقت میں ڈوبے کچھ دنیا دار تو، اپنے ذاتی مفاد کی خاطر، اُن کے آگے جھکنے پر تیار ہو ہی گئے ہیں، لیکن عوام کی سطح پر انہیں دشواریوں کا سامنا ہے اور رہے گا۔ کچھ جیلے اُن کے خلاف اُٹھیں گے اور لڑیں گے۔ ان کی تعداد روز بروز بڑھتی جائے گی۔

جو لڑتے ہیں، ان ہی کے ظلم سے مجبور ہو کر اُٹھتے ہیں، پھر یہ انہیں دہشت گرد کہتے ہیں۔ اس ہی لئے ان کے دانشور کہتے ہیں کہ دہشت گردی کی بنیادی وجوہات (root causes) پر بحث غیر ضروری اور نقصان دہ ہو سکتی ہے۔ اس سے دہشت گردی کو فروغ ملتا ہے۔ دہشت گردی کو دہشت گردی سے ہی ختم کیا جائے، اس پر بات کرنا اسے ہوا دینا ہے۔ جو جہاد کی بات کرے اُس کا منہ بند کرنا لازم ہے۔ اور آج کے ان نئے خداؤں کا کہنا ہے کہ ہتھیار اُٹھانے والوں پر اس کی قیمت اتنی بڑھائی جائے کہ ان کے برداشت سے باہر ہو۔ اُن پر ہماری دہشت قائم ہو جائے۔

ایک اور حقیقت کا بھی یہاں تذکرہ کرنا چاہوں گا۔ تمام بات کہنے کے بعد اُس کا ذکر یوں کر رہا ہوں کہ بہت سے پڑھے لکھے حضرات ان باتوں کو گمان سمجھتے ہیں، حالانکہ خود گمان کی زندگی گزارتے ہیں۔ صرف میں ہی نہیں، دنیا کی ایک بڑی آبادی آج اس کو حقیقت جانتی ہے۔ دنیا کا نظام یوں نہیں چل رہا جیسے بظاہر نظر آتا ہے۔ ایک طاقتور خفیہ تنظیم اس کے پیچھے کام کرتی ہے۔ اس تنظیم نے پہلے بینکوں کے طور پر دنیا کی تمام دولت پر قبضہ کیا، اور آج تمام میڈیا، انٹرٹینمنٹ انڈسٹری (entertainment industry)، کاروباری دنیا کی بڑی

گیارہواں سفر اندھیرا سویرا

بڑی کمپنیاں، نامور یونیورسٹیاں، فکری ادارے (think tanks) اور ان کے مفکرین، IMF اور ورلڈ بینک، اور امریکہ اور برطانیہ سمیت، بہت سی حکومتیں ان کے تابع ہیں۔ پہلے ان کا مرکز برطانیہ تھا، اب امریکہ ہے۔

امریکی ڈالر کے یہی مالک ہیں، اور اُس پر ان کی مہر ثبت ہے ---- تکون، جو ابھی مکمل نہیں ہے اور اُس پر دجال کی آنکھ۔ اس تنظیم کے سربراہ چند خاندانوں پر مشتمل ہیں اور فری میسنز (Free Masons) کی خفیہ تنظیم کی سربراہی کرتے ہیں۔ اور بھی کئی خفیہ تنظیمیں ان کے لئے کام کرتی ہیں۔ نیوکائز (neocons) امریکہ کی سیاست میں ان کے کارندوں کا ظاہری چہرہ ہے۔ ان کی تاریخ اور کاروائیوں کے بارے میں کئی کتابیں لکھی جا چکی ہیں۔ یہ کاروائیاں، کتاب 'دی پروٹوکولز آف دی ایلڈرز آف زائن' 'The Protocols of the Elders of Zion' کے مطابق، درجہ بدرجہ چل رہی ہیں۔ اس سچ کا یہی ثبوت کافی ہے کہ جو ہور ہا ہے اسی کتاب کے مطابق ہو رہا ہے۔ ان کا حدف ایک عالمگیر سلطنت (global empire) قائم کرنا ہے، جس میں دنیا کی کل آبادی غلاموں کے طور پر، اپنی تمام عمر، صرف ان کی خدمت کے لئے کام کرے، اور غم مٹانے کو گھنٹیا طرز کی عیاشیوں میں مشغول رہے۔ دنیا میں لگا تار خون خرابہ ان کو تقویت پہنچاتا ہے، تسلط قائم رکھنے میں مدد دیتا ہے۔ یہ شیطان کے پجاری، دنیا میں نئی نئی قربان گاہیں کھولتے ہیں، جہاں جنگ کے ذریعے ہزاروں انسانوں کو شیطان کی بھینٹ چڑھایا جاتا ہے۔ ان کے کتنے ہی مندر ایسے ہیں جہاں انسانوں کی باقاعدہ قربانی دی جاتی ہے۔ یہ تمام باتیں دنیا سے چھپی ہوئی نہیں۔ فرعون طرز پر، یہ دنیا کو اپنے آگے جھکانا چاہتے ہیں۔ ان کی راہ میں حائل صرف قرآن کی دی ہوئی طرز زندگی ہے، اور اللہ کے سوا کسی اور کے آگے نہ جھکنے کا حکم۔ آج قرآن کو جلاتے ہیں۔ کعبہ پر ایٹم بم گرانے کی باتیں کرتے ہیں۔

۱۹۴۸ میں، مسلمانوں کی سرزمین کے بچوں بچ، اسرائیل کا قیام بھی اس ہی سلسلے کی کڑی تھی۔ اگر یہودیوں پر ظلم ہوا، تو مسلمانوں نے تو نہیں کیا تھا۔ مسلمانوں کی حکومت میں تو یہ ہمیشہ امن سے ہی رہے۔ پھر اگر ان کو زمین کا ایک خطہ دینا تھا، تو مسلمانوں کی سرزمین پر ہی کیوں؟ انہوں نے یوں اپنا ایک اڈا قائم کرنا تھا، جس کی کچھ وجوہات تو عیاں ہیں، اور کچھ چھپی ہوئی بھی۔ ہیکل سلیمانی کو دوبارہ تعمیر کر کے یہاں دجال کا تخت سجانا ہے، جس کے آنے کے یہ منتظر ہیں۔ ان کی تکون اس ہی لئے مکمل نہیں ہوئی، کہ ابھی تیاری مکمل نہیں۔

شاید آپ میں سے کچھ، ان باتوں کو کانپا رہی تھیوری (conspiracy theory) سمجھتے ہوں، مگر آج دنیا اس حقیقت کو مانتی ہے۔ اس کے شواہد ہر طرف نظر آتے ہیں۔ اگر آنکھیں ہوں، پھر بھی ہم دیکھنا نہ چاہیں تو کوئی دکھا نہیں سکتا۔ بہر کیف، اگر آپ اس سارے سلسلے کو رد بھی کر دیں، تب بھی جو کھیل امریکہ اور برطانیہ، NATO ممالک کی امداد سے، مسلم دنیا میں کھیل رہے ہیں، وہ تو جوں کا توں ہمارے سامنے کھلا پڑا ہے۔ اس سے تو منہ نہیں موڑا جاسکتا۔



یقین پیدا کر اے غافل کہ مغلوب جہاں تو ہے *

امریکہ جب افغانستان میں آیا تھا، تو اُس کا اعلان شدہ ہدف اسامہ بن لادن کو پکڑنا تھا۔ اسامہ کو کئی سال پہلے سوڈان سے ہی پکڑا جاسکتا تھا۔ سوڈان کی حکومت نے امریکہ اور سعودی عرب کو کہا بھی کہ اسے لے جائیں، مگر انہوں نے لینے سے انکار کر دیا اور کہا کہ بس اسے اپنے ملک سے نکال دو۔ اُس نے افغانستان ہی آنا تھا، جہاں اُس کی پہچان تھی، جہاں ٹھکانا مل سکتا تھا۔ اسامہ کو ۹/۱۱ کے بعد بھی مارا جاسکتا تھا۔ وہ اور اُس کے ساتھی کابل کے قریب ایک گھر میں محدود کر دیے گئے تھے، سب اُس کا ٹھکانا جانتے تھے۔ کیوں نہیں مارا؟ ملا عمر نے تو شروع ہی میں کہا تھا کہ افغانستان میں ایک بین الاقوامی عدالت قائم کی جائے اور اسامہ کے خلاف جو بھی شواہد ہیں وہ عدالت میں پیش کئے جائیں، اور اگر وہ قصور وار ہو تو اُسے وہ خود سزا دے گا۔ لیکن اس کو نظر انداز کر دیا گیا۔

ورلڈ ٹریڈ سنٹر کی تباہی کی انکوائری آج تک مکمل نہیں کی گئی۔ ہنری کسنجر صاحب کو اس انکوائری کمیشن کا سربراہ نامزد کیا گیا تھا، جنہوں نے تیسرے دن یہ عہدہ چھوڑ دیا۔ انکوائری بند کر دی گئی۔ کتنے ہی دانشوروں اور ماہر انجینئروں کے تجزیے کا نچوڑ ہے کہ یہ کام امریکہ اور اسرائیل کی خفیہ ایجنسیوں نے کیا۔ یہ تو افغانستان آنے کا بہانا تھا۔ پھر اسامہ کا قصہ بھی تمام ہوا، مگر اب افغانستان کے مجاہدین دہشتگرد کہلاتے تھے، تو یہ جنگ کیسے بند ہوتی؟ ملا عمر اور اُس کے ساتھی کسی بھی قانون کے تحت دہشت گرد قرار نہیں دیے جاسکتے۔ وہ ایک قابض بیرونی طاقت کے خلاف آزادی کی جنگ لڑ رہے ہیں۔ ساری دنیا مانتی ہے۔ کرزئی کی حکومت دیسی رنگ میں امریکہ کی حکومت ہے اور اُن کے بغیر کھڑی نہیں رہ سکتی۔ یہاں اگر کوئی دہشت گرد ہے تو صرف امریکہ، جو اپنا تسلط قائم رکھنے کے لئے ہزاروں بے گناہ مسلمانوں کا خون بہا چکا ہے۔ ناجانے ابھی اور کتنے بچوں کی قربانی باقی ہے۔

جہاں بھی ظلم ہوگا، کچھ لوگ اُٹھیں گے، ظالم سے لڑیں گے، اس سے واسطہ نہیں کہ اُن کا دین کیا ہے۔ دنیا کی تاریخ میں یہی ہوتا آیا ہے کہ طاقتور کمزور کا حق چھینتے ہیں، اور یہ بھی کہ مظلوموں میں سے کچھ سر پھرے جان ہتھیلی پر لئے اس کے خلاف اُٹھ کھڑے ہوں۔ ایک ترقی یافتہ معاشرے میں ظلم کو روکنے کے لیے قانون بنایا گیا اور اسے نافذ کرنے کے لئے نظام بھی۔ انصاف قائم کیا گیا، تب امن ہوا۔ کوئی اپنے مفاد میں دوسرے کا گلا نہیں گھونٹ سکتا۔ مگر بین الاقوامی سطح پر، یہی ترقی یافتہ طاقتور ممالک اپنے مفاد کے حصول میں کچھ بھی کرنے کو جائز سمجھتے ہیں۔ اس سطح پر کوئی انصاف کا نظام نہیں۔ نام نہاد UNO بھی ان ہی کا ادارہ ہے، اور اسے بھی آج کون پوچھتا ہے، بس مسلمانوں

کی تنظیم OIC کی طرح صرف تقریروں اور مباحثوں کا ایک فورم (forum) ہے۔ طاقتور ممالک اپنے مفاد میں گٹھ جوڑ بھی کرتے ہیں اور لوٹ مار بھی۔ قومی مفاد کا دفاع تو ہر قوم کا حق ہے، اور دولت اور طاقت تو ہر ایک کے مفاد میں ہے، لیکن اس جستجو کی حدوں کا تعین کون کرے گا؟

امریکہ ہمارے خطے میں دہشت گردی ختم کرنے نہیں آیا تھا۔ دہشت گردی کو فروغ دے کر یہاں رہنے کا جواز بنایا ہے، تاکہ دنیا کو اور خاص کر اپنی عوام کو، اس مہم جوئی پر آمادہ رکھیں۔ جنگ سیاسی مقاصد حاصل کرنے کے لیے لڑی جاتی ہے، دشمنوں کو مارنے کے لیے نہیں۔ سیاسی طور پر امریکہ نے پچھلے دس بارہ سالوں میں کیا حاصل کیا؟ صرف پورے خطے میں آگ لگائی۔ جسے یہ دہشت گردی کہتے ہیں، وہ اس طرح ختم ہوئی، یا بڑھی؟ کیا یہ جانتے نہیں؟

افغانستان میں فوجی کاروائیاں اس نوعیت پر کیں، کہ مجاہدین کو پاکستان میں دھکیلا جاسکے۔ پھر ویسے ہی کیا جیسے مقبوضہ کشمیر میں اسرائیل کی ایجنسی MOSSAD کے مشورے پر ہندوستان نے کیا تھا۔ یہاں کشمیری مجاہدین جیسی تنظیمیں تشکیل دی تھیں، پھر ان سے بازاروں میں بم پھٹوائے، شہریوں کو نشانہ بنایا، لڑکیوں پر تیزاب پھینک کر کہا کہ پردہ کیوں نہیں کرتیں، گھروں سے لڑکیاں اغواء کیں اور لوٹ مار کا بازار گرم کیا۔ یہ سب اسلام کے نام پر کیا، تاکہ مجاہدین کو بدنام کریں اور عوام کو ان کی طرف سے متنفر کر دیں۔ آج یہی کھیل پاکستان میں کھیلا جا رہا ہے۔ RAW اور MOSSAD کا یہ گھناؤنا کھیل ہمارے "دوست" اور سٹریٹیجک ساتھی (strategic partner) امریکہ کی سرپرستی میں ہو رہا ہے، اور ہمارے حکمرانوں کو تمام تفصیلات معلوم ہیں۔ مگر انہوں نے اپنے ذاتی مفاد میں خاموشی اختیار کی ہوئی ہے۔

مجاہدین کی تنظیمیں پاکستان میں تشکیل دی گئیں۔ انہیں پیسہ اور تربیت فراہم کی، اور پاکستان کے اندر دھماکے شروع کروائے۔ جب تک پاکستان میں دھماکے نہ ہوتے، عوام مجاہدین سے نفرت کیوں کرتے؟ ہمارا میڈیا کیسے لوگوں کو امریکہ کا ساتھ دینے پر اکساتا؟ ہم مجاہدین کو دہشت گرد کیسے مانتے؟ ہم کیسے کہتے کہ یہ جنگ ہماری جنگ ہے؟ جب تک پاکستان میں شدت پسندی نہ پھیلانی جائے، دنیا کو کیسے یقین دلوائیں گے کہ ہمارے ایٹمی ہتھیار شدت پسندوں کے ہاتھ آسکتے ہیں؟ آج دنیا بھر میں ڈھنڈورا پیٹتے ہیں کہ پاکستان ہی تمام دہشت گردی کا گڑھ ہے۔

جنگی ساز و سامان کی انڈسٹری پر پینے والی امریکی حکومت نے اپنی ڈوبتی معیشت کو بھی سنبھالا دینا ہے اور دنیا پر اپنا سیاسی اور فوجی تسلط بھی قائم رکھنا ہے۔ وسطی ایشیاء کی شاہراہ پر اور افغانستان اور بلوچستان کے معدنی وسائل پر قبضہ، اور چین اور روس کے اثرات کو آگے

گیارہواں سفر اندھیرا سویرا

بڑھنے سے روکنے کے علاوہ، ایک بڑا مقصد یہاں بیٹھنے کا پاکستان کو قابو کرنا ہے۔ وہ دنیا کے حالات کو ہم سے بہتر دیکھ رہے ہیں۔ ہماری نظروں میں تو اپنی کوئی قدر و قیمت نہیں، مگر وہ ابھرتی ہوئی مسلم دنیا میں پاکستان کی اہمیت کو سمجھتے ہیں۔ ہماری قوم کی صلاحیتیں اور ہماری ایٹمی طاقت، دونوں ہی سے خائف ہیں، اور انہیں ختم کرنا اُن کے پھیلنے ہوئے عزائم کے لئے لازم ہے۔

ایک سوچے سمجھے منصوبے کے تحت پاکستان میں دہشت گردی پھیلانی گئی، تاکہ امریکہ کی اس نام نہاد واراگینسٹ ٹیر میں شامل ہونے پر ہمیں ہچکچاہٹ نہ ہو، اسے اپنی جنگ کہنے پر قوم آمادہ ہو جائے۔ اس پر بہت پیسہ خرچ کیا گیا اور جھوٹ کا بازار تمام کاروباری میڈیا کے ذریعے سجایا گیا۔ تمام غنڈہ گردی اور قتل و غارت کو بھی وہی نام دیا گیا جو افغانستان کے مجاہدین کو دیا گیا تھا، "دہشت گرد"۔ پھر ڈالر کے زور پر دہشت گرد تنظیمیں کھڑی کر کے انہیں طالبان کے نام سے پکارا، اور پاکستان میں دھماکے کروائے، تاکہ ہماری نظروں میں دہشت گرد اور مجاہد کا فرق مٹ جائے اور ہمیں جہاد کا نام لینے والوں سے نفرت ہو جائے۔ ۱۸۵۷ء میں ہندوستان کی آزادی کے لئے لڑنے والوں کو بھی برطانیہ کی حکومت ٹیرورسٹ کہتی تھی، ہندوستان کی آبادی انہیں مجاہد مانتی تھی۔ اٹھارویں صدی میں امریکہ کی آزادی کے لئے لڑنے والے بھی برطانوی حکومت کے لئے ٹیرورسٹ تھے، امریکہ کی عوام کے لئے ہیرو۔ انہی کا ایک ٹیرورسٹ جارج واشنگٹن امریکہ کا صدر بنا۔ نیلن منڈیلا بھی ٹیرورسٹ کہلاتا تھا، پھر شمالی افریقہ کا صدر بنا اور ایک ٹیرورسٹ نے امن کا نوبل انعام پایا! آج بھی افغانستان کا مجاہد اور اُن کے تمام ساتھی مسلمانوں کی نظر میں مجاہد ہیں، اور امریکہ اور اُن کے ساتھیوں کی نظر میں ٹیرورسٹ۔ ہماری حکومت، میڈیا اور بہت سے وہ پاکستانی جو خود کو ماڈرن کہتے ہیں اور کفر کرنے والوں کی نظروں میں عزت چاہتے ہیں، امریکہ کی صف میں کھڑے ہیں، اور بھولے عوام کو اپنے ساتھ اس گھناؤنے کام میں شامل کرنے کے درپے ہیں۔ ہر معاشرے کی تباہی اُس کے سرداران، بڑے بڑے پیسے والے اور پڑھے لکھے جابلوں نے لائی۔ قرآن جگہ جگہ اس بات کی گواہی دیتا ہے، اور تاریخ بھی۔

اس سارے کھیل میں ہمارا میڈیا نہایت اہم کردار ادا کر رہا ہے۔ اس ہی لئے امریکنوں نے فوجی حکمران پر دباؤ ڈال کر میڈیا کو "آزاد" کروایا تھا، یعنی کاروباری بنایا تھا، تاکہ خرید جاسکے۔ کروڑوں ڈالر ان پر خرچ ہو رہے ہیں۔ ان کا سارا کھیل امریکہ کی امداد کرتا ہے۔ امریکہ کے افغانستان پر ناجائز قبضے اور قتل و غارت میں ہماری حکومت کی شمولیت کے موضوع کو میڈیا سے ہٹا دیا گیا، اس پر بحث بند ہے۔ اس کا کوئی ناتا ہمارے کسی مسئلے سے نہیں جوڑا جاتا۔ اسے ایک علیحدہ مسئلہ دکھا کر بات کو یہیں چھوڑ دیا جاتا ہے۔ دہشت گردی کا موضوع پاکستان کے قبائلی علاقوں سے شروع کر کے، کراچی کے ساحل تک محدود کر دیا گیا ہے۔ ان کو حکم ہے کہ اس کا تعلق ہماری حکومت کے افغانستان کے قتل و غارت میں ملوث ہونے سے نہ جوڑا جائے۔ نہ ہی افغان مسلمانوں کی قابل ستائش جدوجہد کا ذکر کیا جائے۔ نہ ہی افغانستان اور FATA میں ہونے والی قتل و غارت دکھائی جائے۔ بس جب کوئی بڑی خبر ہوتی ہے، جو چھپا نہیں سکتے، تو تھوڑا سا دکھا دیتے

ہیں، سرخرو ہونے کے لئے۔ افغان مجاہدین کو بھی دہشت گرد ہی کہتے ہیں، تاکہ انہیں بھی گٹھ جوڑے کے رنگ میں رنگ دیں۔ امریکہ کی اس جنگ کو حق پرستی کہا جاتا ہے اور دہشت گردی کو پاکستان کی سالمیت کے لئے سنگین خطرہ، تاکہ یہ جنگ ہماری جنگ کہلائے، اور اس میں ہر قسم کا ظلم جائز قرار پائے۔

ڈالروں کے زور پر میڈیا کا جادو جگایا گیا۔ مغربی طرز فکر کو ابھارا تاکہ عوام اُس کی قدر کریں، اور قوم کو درپیش مسائل کے کسی پہلو پر دین کا حوالہ دینے کو جہالت کہا۔ ترقی کی راہ، مغرب کی سرپرستی میں ہی دکھائی۔ سیکولر سوچوں کے نئے نئے جال بنے۔ دین کے نئے نئے عالمانہ رنگ پیش کئے۔ اس کے لئے ہر قماش کے کرائے کے عالم لگائے گئے۔ کہا کہ اصل دین کی راہ ایک عاجزانہ، دبا ہوا، اطاعت آمیز نظریہ دکھایا جائے، جس میں ہر شخص انفرادی طور اللہ سے لولگائے رکھے، کسی اجتماعی جدوجہد یا تکرار کی گنجائش نہ رہے۔ قرآن کو مشعلِ راہ سے گرا کر برکتوں کی پٹاری بنایا۔ جہاد کے نظریے کو اور دین کی سیدھی راہ کو شدت پسندی سے جاملایا۔ اللہ کی راہ کو مٹا کی راہ بتایا۔ قوم کو دو حصوں میں بانٹ دیا، دین کا نام لینے والے انتہا پسند اور دین کی راہ چھوڑ کر دنیا داری کی سوچ رکھنے والے ہوش مند، تاکہ ہم آپس میں ہی جھگڑتے رہیں۔ یقیناً جہاد اللہ کی راہ میں کوشش کو ہی کہتے ہیں، تو کیا امریکہ کی سرپرستی میں یہ کوششیں دین کی راہ میں ہو رہی ہیں؟ یہ ہے مشرف صاحب کی روشن خیالی کا فتنہ۔

مغربی تہذیب کے بہتر سے بہتر زاویے دکھا کر یقین دلویا کہ اللہ کی راہ پر بدامنی، بھوک، افلاس اور گھٹن ہے اور مغرب کا ساتھ دینے پر اصل آزادی، غربت کا خاتمہ اور چین و سکون۔ آزادی نسواں کے نام پر عورتوں کو مقامِ عزت سے گرا کر پیمانہء حوس بنایا۔ دوپٹہ اتار کر قرآن کے حکم کو کھٹلے منہ دھتکارا۔ ہر سطح پر عریانی اور فحاشی پھیلائی، تاکہ دین کو تنگ نظری تصور کیا جائے اور لوگوں کو آزاد خیالی کی طرف راغب کیا جائے۔

پاکستان میں کسی کو بھی عزت دار نہ چھوڑا، سب کے منہ پر کالک مل دی گئی۔ گنہگاروں اور شیاطین کا فرق مٹا دیا۔ ملک کے ہر منفی پہلو کو اجاگر کیا۔ جھگڑوں کو ابھارا اور معاشرے کی تمام گندا اچھال اچھال کر منظرِ عام پر لائے، تاکہ قوم اپنی ہی نظروں میں گر جائے۔ پھر نہ کچھ کرنے کا حوصلہ رہے، نہ جتو۔

معاشی کمزوریوں کو بڑھا چڑھا کر یوں پیش کیا کہ اگر امریکہ ناراض ہو تو پاکستان ڈوب جائے گا۔ یہی ٹرمپ کارڈ امریکہ کے خلاف آنے والے ہر پتے پر پھینکا جاتا ہے، تاکہ بھوکى قوم پیٹ بھرنے کے لیے، منہ بند رکھے۔ ہمیں اس حال میں پہنچایا کہ آج ہم صرف یہ

دیکھتے ہیں کہ ہمیں امریکہ کا ساتھ دینے پر کیا ملے گا۔ ہمیں اس سے غرض نہیں رہی کہ ہم افغان بھائیوں کے قتل و غارت میں شامل ہیں، بس یہ پوچھتے ہیں کہ اس کے صلے میں کتنے ڈالر ملیں گے؟

یہ سب صرف اس لیے کہ ہم امریکہ کے ساتھ ہو کر افغانستان پر اُس کے غاصبانہ قبضے کی امداد میں ہزاروں مسلمانوں کے قتل میں شامل رہیں، اور اپنے اس گھناؤنے کام پر فخر کر سکیں۔ اور قوم کو اس دھوکے میں رکھیں کہ اللہ اس پر راضی ہے، یہی سیدھی راہ ہے۔ پھر قوم کو روزِ مرہ کے اتنے مسائل میں الجھائے رکھا، کہ امریکہ کے ساتھ مل کر مسلمانوں کے قتل و غارت کے بارے میں سوچنے کا موقع ہی نہ ملے۔ بس سطحی طور پر آپ کی باتیں سنیں اور کہیں، "چھوڑو، ان پیچیدگیوں سے مجھے کیا لینا؟ مجھے تو نہ گیس ملتی ہے، نہ بجلی۔ مہنگائی اس قدر بڑھ چکی ہے کہ روزِ مرہ کا گزارا ہی نہیں ہوتا۔" روز کوئی نیا مسئلہ اٹھادیا جاتا ہے۔ ایک سیاسی تماشہ لگا ہے۔ مسائل کی بھرمار ہے۔ پھر دل بہلانے کوئی وی پرناچ گانے اور ایک سے ایک واہیات اور جنسی اشتہارات پیش ہیں۔ افغانستان کی کسے پڑی ہے۔ کون کہہ سکتا ہے کہ یہی افغانستان کا کھیل، ہمارے تمام مسائل کو پال رہا ہے۔ پھر بین الاقوامی میڈیا میں پاکستان کو دنیا میں دہشت گردوں کی پناہ گاہ اور یہاں کے لوگوں کو جاہل، شدت پسند اور دوغلا دکھایا، تاکہ جب وقت آئے تو دنیا ذہنی طور پر پاکستان کو تباہ کرنے پر آمادہ ہو۔

امریکہ اور برطانیہ کے ساتھ، افغانستان کے خلاف، ہمارا کٹھ جوڑ ہمیں بہت مہنگا پڑا۔ ظاہر ہے اسے ان الفاظ میں تو نہیں کہا جاتا۔ یوں کہا جاتا ہے کہ دہشت گرد، دنیا کے امن کو تباہ کر رہے ہیں، اور اگر ہم نے ترقی یافتہ قوموں کے ساتھ مل کر ان کا صفایا نہ کیا، تو یہ پاکستان کی سلامتی کے لئے بہت بڑا خطرہ ہیں۔ ہماری ڈوبتی معیشت، بڑھتی ہوئی مہنگائی اور ملک میں امن و امان کی صورتِ حال، سب ہی کا انہیں قصور وار ٹھہرایا جاتا ہے۔ کہتے ہیں، "باقی تمام چیزوں سے قطع نظر کر کے، ہمیں اپنی تمام تر صلاحیتیں انہیں ختم کرنے پر لگانی چاہئیں۔ جب ہم اس مسئلے پر قابو پالیں گے، سب ٹھیک ہو جائے گا۔" کتنا بڑا جھوٹ ہے، مگر ہم کبھی ٹھہر کر سوچتے ہی نہیں۔ تم نے کہہ دیا، میں نے مان لیا۔

جب میں چھوٹا سا تھا تو ایک دن والد صاحب سے پوچھا کہ کیا ہم سنی ہیں؟ ہمارا سادہ سا گھر انہ تھا، اُس میں یہ سب الجھاؤ نہیں تھے۔ بس روزہ نماز اور سچ جھوٹ تک ہی رہتے۔ زور حقوق العباد پر ہوتا۔ والد صاحب شاید مذاق کے موڈ میں تھے، یا شاید فرقہ وارانہ باتوں سے بچوں کو دور رکھنا چاہتے تھے، کہنے لگے، "ہاں بیٹا، ہم سنی سنائی باتوں پر یقین جو کر لیتے ہیں۔" پھر یہ دہشت گردی کا جھوٹ اتنا زیادہ بولا گیا، اور اتنے رنگ میں بولا گیا کہ سب ہی سنی ہو گئے۔

یقیناً قصور ہمارا ہی ہے۔ ہم ہی اپنے دشمن ہیں۔ امریکہ تو دنیا کا سب سے بڑا ڈاکو ہے، آج کا فرعون۔ اُس کا کیا قصور؟ وہ تو اصول کے مطابق کام کر رہا ہے، اُس کا حق ہے۔ اگر اُس کا مفاد میرا گلا گھونٹنے میں ہے، تو دنیا کے بنائے ہوئے مفاد پرستی کے اصولوں پر مبنی

مگیا رھواں سفر اندھیرا سویرا

خارجہ پالیسی اس ہی قائدے کے مطابق چلتی ہے۔ وہ اپنی جگہ ٹھیک ہے۔ پھر قصور وار تو وہ ہوتا ہے جو قانون توڑے۔ اُس نے کون سا قانون توڑا؟ وہ بادشاہ ہے، وہی قانون بناتا ہے۔ جیسے وہ کہتا ہے، وہی قانون ہے۔ بادشاہ بھی بھلا کبھی قصور وار ہوا ہے؟ قصور تو خاموش رعایا کی تقدیر میں ہے، حکمرانوں کی نہیں۔

اللہ نے صاف کہا تھا، یہ شیطان کے پیجاری، کبھی تمہارے دوست نہیں ہو سکتے۔ مگر دوست تو کیا، ہم نے تو انہیں اپنا ولی بنا لیا، اپنا آقا مان لیا، اپنا رازق۔ اور یہ بھی اللہ نے کہا تھا کہ شیطان کے ساتھی تمہارے کھلے دشمن ہیں۔ آج ان کی دشمنی کسی سے چھپی ہوئی تو نہیں۔ اگر ان کی سازشوں کے جالوں سے نہیں، تو چالوں سے تو سب ہی واقف ہیں۔

چلو ہم اللہ کے احکامات کو ایک طرف رکھ دیتے ہیں۔ دنیا داری جو کرنی ہوئی۔ کہتے ہیں ملک تو ان ہی بنیادوں پر چلتا ہے، تم جہالت کی باتیں نہ کرو۔ دنیا کے ساتھ مل کر چلنا ہوگا۔ بارہ سال ہو گئے، امریکہ کے قدم سے قدم ملاتے، جوتے چاٹتے، کافروں سے مل کر مسلمانوں کا قتل کرتے۔ کیا دہشت گردی ختم ہو گئی؟ کیا معیشت سنبھل گئی؟ کاروبار چمک گئے؟ بے روزگاری دور ہو گئی؟ بھوک مٹ گئی؟ کیا آج پاکستان پہلے سے زیادہ محفوظ ہو گیا؟ عورتوں کو امن، عزت اور تحفظ مل گیا؟ کیا ہمارے چہروں کی مسکراہٹیں لوٹ آئیں؟ کیا کوئی امید کی کرن ہی باقی رہ گئی؟ کس شیطانی دھوکے پر ہم امریکہ کے پیچھے چلتے ہیں؟

جس راہ پر انصاف نہیں، اُس پر امن کی کوئی امید نہیں۔

کس گھڑی سر پہ یہ لٹکی ہوئی تلوار گرے *

ہر ذی ہوش پاکستانی یہ سمجھتا ہے کہ امریکہ اس خطے میں کیا کھیل کھیل رہا ہے۔ بلوچستان میں علیحدگی پسند تنظیموں کی تربیت اور کاروائیوں کی امداد کیوں کر رہا ہے؟ اُس کے کیا عزائم ہیں اور ان کو پورا کرنے کے لئے اُسے کیا کرنا ہوگا اور کیسے کرے گا۔ ہم دیکھ رہے ہیں کہ کون کون سی حدیں وہ پار کر چکے ہیں اور کون سے اہداف باقی ہیں۔ ہماری نظروں میں یہ بھی ہے کہ اس کھیل میں ہندوستان کا کیا کردار ہے اور آئندہ کیا کر سکتا ہے۔ سب یہ بھی جانتے ہیں کہ اُن کی خفیہ ایجنسیوں نے کس طرح ہمارے بچ اپنے بچے گاڑے ہوئے ہیں، کس طریقے سے اُنہوں نے ہمارے نظام کو اپنی گرفت میں لے رکھا ہے۔ کیسے فوجی حکومت کو تقویت دے کر ایک مقام تک آئے، پھر حکمران کو نکال باہر پھینکا اور ایسی قیادت کو لا بٹھایا جو کسی بات پر نہیں نہ کہہ سکے۔ فوجی حکمران سے فوج سوال کرتی تھی، اور اس وجہ سے وہ ایک حد سے آگے نہ جانے پر مجبور تھا۔ اب 'نمائندہ' حکومت ہے، جن کے ڈرامے ہی ختم نہیں ہوتے، کوئی کسے پوچھے؟

امریکہ کے اعلان کے مطابق دہشت گردی کے خلاف یہ جنگ بہت لمبے عرصے تک چلے گی، یوں کہیے کہ ختم ہونے والی نہیں۔ اگر امریکہ اس خطے میں امن چاہتا، تو امن کی کوئی تو راہ تلاش کی ہوتی۔ اُنہیں یہاں امن کی نہیں، دہشت گردی کی ضرورت ہے اور وہ اپنی کاروائیوں سے اور "دہشت گرد" پیدا کر رہے ہیں۔ ان کی ایجنسیاں پاکستان میں تمام تخریبی کاروائیوں میں شامل ہیں اور ہماری حکومت کے پاس ان سب کے ثبوت موجود ہیں، مگر خاموش رہتے ہیں۔

امریکہ کا یہاں سے جانے کا کوئی ارادہ نہیں۔ وہ غیر معینہ مدت تک افغانستان پر یوں قابض بھی نہیں رہ سکتا، صرف مخصوص اڈے برقرار رکھ سکتا ہے، وہ بھی ایک محدود مدت تک۔ اس ہی عرصے میں اُسے اپنے اہداف حاصل کرنے ہوں گے، تاکہ یہاں غیر متعین مدت تک ٹھہرنے کا ٹھکانہ بنا سکے۔ وہ چاہتا ہے کہ صرف اس نوعیت کی مداخلت رہ جائے کہ یہ اڈے مستقل طور پر قائم رہ سکیں۔ اس کے لئے لازم ہے کہ پاکستان کے ٹکڑے کر کے اسے ایٹمی طاقت سے پاک کیا جائے، خطے میں باہمی تصادم کی فضا قائم رکھی جائے، آزاد بلوچستان سے زمینی راستے کھلے رکھے جائیں اور جو تھوڑی بہت مداخلت ہو اسے ان اڈوں کی فوجی صلاحیت سے کچلا جاتا رہے۔ جب پاکستان کو توڑنے کا وقت آئے گا یا کسی اور وجہ سے خطے میں فوجی صلاحیت کا بڑے پیمانے پر استعمال کرنا ہوگا تو یہی اڈے فوجی طاقت کو تیزی سے بڑھانے کا کام آئیں گے۔ یہ وسیع زمین دوز اڈے یہاں اسی غرض سے قائم کئے گئے ہیں۔

دوسری جانب پاکستان کے اندرونی حالات اب ایسے نہیں کہ زیادہ دن یوں ہی چلتا رہے۔ امریکہ کے پاس کوئی چارہ نہیں، سوائے اس کے کہ پاکستان کے بارے میں جلد کوئی فیصلہ کن اقدامات شروع کریں۔ پاکستان کو سیاسی محکومیت میں رکھنے کی اُن کی موجودہ پالیسی ناکارہ ہو چکی ہے، عوام مشتعل ہوتے جا رہے ہیں۔ واپسی کی راہ نہیں ہے، اب انہیں آگے بڑھنا ہوگا۔ وہ اس پر مجبور ہیں۔ وہ جانہیں کہ پاکستان کا جانا تمام دنیا کے لئے اعلان ہوگا کہ "دہشت گردی جیت گئی"۔ پھر اُن کا دنیا میں کوئی ٹھکانا نہیں۔ مسلمان دنیا پر اس کے کیا اثرات ہوں گے، امریکہ کا ساتھ دینے والے مسلمان حکمرانوں کا کیا بنے گا، پاکستان کن ہاتھوں میں پہنچے گا، ہم سمجھ سکتے ہیں، وہ جانتے ہیں۔ وہ صرف پیئٹر ابدل سکتے ہیں، جانہیں سکتے۔ اللہ نے انہیں یہاں پھانس لیا ہے۔ اور ہم مسلمانوں کو بھی۔

چاہے آپ اتنے دیندار نہ ہوں، چاہے صرف دنیاوی فہم سے ہی سوچیں، اتنا تو سمجھ میں آتا ہے کہ امریکہ اپنے مفاد میں کیا دیکھ رہا ہے، اور پاکستان کے مفاد میں کیا ہے۔ ہماری ایٹمی صلاحیت ختم کرنا اتنا آسان نہیں، جتنا بظاہر دکھائی دیتا ہے۔ کسی بچے سے کھلونا تو چھیننا نہیں۔ بیس کروڑ مسلمانوں کا ملک ہے، کوئی مذاق تو نہیں۔ فوجی طاقت کے زور پر پاکستان کی ایٹمی صلاحیت نہیں تباہ کی جاسکتی۔ بہت سے خدشات لاحق ہیں۔ مکمل صفایا نہیں کر پائیں گے۔ اور اگر اُن کی فوج پاکستان میں داخل ہوتی ہے، تو ہماری فوج یقیناً مداخلت کرے گی۔ وہ ٹیسٹ کر کے دیکھ چکے ہیں، جانتے ہیں۔ پھر پورا ملک اٹھ کھڑا ہوگا۔ دنیا میں عوام کی آواز کی بہت اہمیت ہے۔ ایسے میں بہت مسائل پیدا ہو جائیں گے۔ پھر اُن کی فوج کو بہت نقصان بھی اٹھانا ہوگا۔ افغانستان تو سنہلتا نہیں، پاکستان بھی گلے پڑ جائے گا، اور دنیا کی ناراضگی بھی۔ مسلم دنیا پر اس کے اثرات بھی امریکہ کے خلاف ہوں گے۔ اور انجام مخدوش رہے گا۔ چنانچہ یہ بھی ممکن نہیں۔

اُن کے لئے لازم ہے کہ پاکستان کو اندر سے توڑا جائے اور اس حال میں لایا جائے کہ پاکستانی قوم معذور اور مجبور ہو چکی ہو اور ایٹمی صلاحیت سے خود ہی دستبردار ہو جائے۔ تھک کر بیٹھ رہے۔ وہ ابھی ہمیں تھکا رہے ہیں۔ پاکستان کو اس مقام تک لانے کے لئے کافی کام ہو چکا ہے، بس آخری ضرب رہتی ہے، کھیل آخری مراحل میں داخل ہو رہا ہے۔ پُر امن سیاسی محکومی سے اب زیادہ دن نہیں چلے گا۔

کہہ نہیں سکتے کہ جب آخری ضرب آئے، تو کس رنگ میں آئے، لیکن وقت آ پہنچا ہے۔ یہاں تک تو ہو چکا کہ پاکستان کو غیر مستحکم کرنے کے لئے اندرونی فشار، سیاسی انتشار اور معاشی تباہی پیدا کی گئی، اور عوام کو مکمل مایوسی اور ناامیدی میں جھونک دیا۔ کراچی، بلوچستان اور خیبر پختون خواہ کو گڑھے کے کنارے تک کھینچ لائے۔ اب لاقانونیت کی فضا کو بڑھانا ہے، کہ ہم ایک دوسرے کو نوچ ڈالیں، منتشر ہجوم خود ہی اپنی کشتی ڈبو لیں۔ ملک میں ہنگامے شروع کروا کر فوج کو اندرونی تحفظات میں الجھا دیا جائے۔ اگر خدا نخواستہ ایسے حالات پیدا ہو گئے، تو نہ صرف یہ کہ موجودہ ناکارہ حکومت بے بس ہو کر رہ جائے گی، بلکہ ہماری سرحدیں بھی ننگی ہو جائیں گی۔

مکیار حواں سفر اندھیرا سویرا

ایسے میں اگر ہمارے "سٹریٹیجک پارٹنر" کے اشارے پر دہشت گردی کے بہانے ہندوستان سے فوجی کشیدگی کی فضا قائم کی گئی اور فوج کو بارڈروں کی طرف گھسیٹا گیا، تو ملک میں تمام انتظامی گرفت ختم ہو جائے گی۔ بلوچستان میں، فوج کی غیر موجودگی سے فائدہ اٹھاتے ہوئے، امریکہ کی پالی ہوئی بلوچ لبریشن آرمی (BLA) آزادی کا اعلان کر سکتی ہے۔ کراچی میں ہنگامے پھیل کر ہماری معاشی شاہ رگ کاٹی جا سکتی ہے۔ اور خیبر پختونخواہ کے علاقوں میں، امریکی سرپرستی میں پلنے والے دہشت گردوں کے زور پر، سرکشی پیدا کر کے پاکستان سے علیحدگی کا اعلان بھی ہو سکتا ہے۔ ایسے میں پاکستان دنیا کے سامنے ایک خطرناک تصویر پیش کرے گا۔

کشمیر میں ہندوستان کی چھوٹی موٹی فوجی تعزیری کاروائیاں، دنیا کو یقین دلانے کے لئے کافی ہوں گی، کہ دوائیٹی طاقتیں برسرِ پیکار ہیں۔ پھر شور اٹھے گا کہ پاکستان کی ایٹمی صلاحیت غلط ہاتھوں میں آنے کا خطرہ ہے، تاکہ UN ریزولوشن کے تحت پاکستان کی ایٹمی صلاحیت بین الاقوامی تحفظ میں لی جاسکے۔

اگر UN میں اس چال کو ویٹو کر دیا گیا، تو سرحدوں پر حالات کو مزید سنگین بنا کر، محدود جنگ چھیڑی جا سکتی ہے۔ آج کل کے ہتھیاروں کی کارکردگی کے باعث، چھوٹی سی جنگ بھی نہایت تباہ کن ہوگی۔ پاکستان کے مواصلاتی نظام، تنصیبات اور فوج کی صلاحیت کو شدید ضرب لگے گی۔ اس موڑ پر امریکہ فوری جنگ بندی کروائے گا، تاکہ لڑائی ایٹمی حد کو پار نہ کرے۔ پاکستان اُس وقت تباہ حال اور ٹکڑوں میں بٹا ہوا ہوگا، اور کوئی کارگر قیادت منظر پر نہیں ہوگی۔ ہم خود کو سنبھالنے کی صلاحیت کھو چکے ہوں گے۔ نہ سڑکوں پر گاڑیاں چلیں گی، نہ ہی بازاروں میں خوراک بکے گی۔ نہ تیل بچے گا، نہ پانی۔ پھر جب روٹی نہیں ملے گی، تو کیا ہم کھائیں گے؟ سب ہی اسے چھوڑنے پر آمادہ ہوں گے۔

یہ ایک ممکن تصویر ہے۔ اس تباہی کے اور بھی کئی رنگ ہو سکتے ہیں۔ مگر اتنا تو واضح ہے کہ پاکستانی قوم کو جھکائے بغیر امریکہ کا مقصد پورا نہیں ہو سکتا۔ ایٹمی پاکستان صرف سیاسی اور معاشی بد حالی سے سرنگوں نہیں ہو سکتا۔ تشدد آمیز جبر قوم کو اس مقام تک گرانے کے لئے لازم ہوگا۔ اب اس کا وقت قریب ہے، یوں کہیے، ہماری آخرت نزدیک ہے، تیاری کر لیں۔

میں نے صرف ایک نہایت سنگین خطرے کی نشان دہی کی ہے۔ آپ اس سے اختلاف کر سکتے ہیں، لیکن خدا را اس وجہ سے اختلاف نہ کریں کہ کہیں کچھ کرنا نہ پڑ جائے۔ کبوتر کی طرح آنکھیں نہ بند کریں۔ اللہ نہ کرے میرے وطن کی مٹی کو آنچ آئے، مگر ہمارے دشمن نہایت سفاک اور دھوکے باز ہیں، اور اُن کے بہت سے ساتھی ہماری صفوں کے اندر بھی موجود ہیں۔ اور ہم اپنے چھوٹے چھوٹے مسائل

میں اُلجھے ہوئے، ایک ناقص نظام کی گرفت میں، ادھر ادھر بے مقصد لڑھک رہے ہیں۔ بس ایک بھول میں خود کو ڈبویا ہوا ہے، کہ سب خود بخود ہی ٹھیک ہو جائے گا، تاکہ ذہن پر جنبش کرنے کا بوجھ نہ ہو۔ خود کے علاوہ سب ہی کو ذمہ دار ٹھہراتے ہیں۔ مان لیا میں ہی قصور وار ہوں۔ پھر؟ کیا بات یہاں ختم ہوئی؟ اگر ملک میں آگ لگی تو میرا اور تمہارا گھر بھی اُجڑ جائے گا۔ یہی پاکستان ہے۔

اس سے پہلے کے یہ عذاب ہمارے اُفق پر نمودار ہو، ہمیں چاہیے کہ ہم آنکھیں کھول لیں، خود کو سنبھال لیں۔ اللہ ہمیں وہ دانائی عطا کرے کہ ہم اس مشکل گھڑی میں ایک دوسرے کا گریبان پکڑنے کے بجائے، ایک دوسرے کا ہاتھ تھامیں، ایک دوسرے کو سہارا دیں۔ اور اللہ ہمیں وہ حوصلہ عطا کرے کہ ہم سچ کا سامنا کر سکیں، اور رات سر پر لینے کے خوف سے بیٹھے نہ رہ جائیں۔ شاید یہ ہماری تاریخ کا سب سے خطرناک موڑ ہے۔ ہم کبھی بھی اتنے بڑے دشمن کے مد مقابل کھڑے نہیں ہوئے۔ ہم سب مل کر ہی اس کا مقابلہ کر سکتے ہیں، ٹکڑوں میں بٹ کر نہیں۔ ہمارا کوئی دوست نہیں، جو ہماری مدد کو آئے گا۔ بس ہم ہیں اور ہمارا اللہ۔

ملبوس خوشنما ہیں مگر جسم کھوکھلے *

مسلم دنیا کے خلاف پھیلنے ہوئے امریکہ کے عزائم تو تصویر کا ایک رخ ہے۔ یہاں تذکرہ صرف پاکستان تک محدود کیا ہے۔ تصویر کا دوسرا رخ ہمارا مفلوج سیاسی نظام ہے جو اس ملک کی بقا کو سب سے بڑا خطرہ ہے۔ اگر ہم ملک کو اندر سے مضبوط نہ کر پائے تو بیرونی خطرات سے نہیں نبٹ سکیں گے۔ بالکل ایسے ہی جیسے اگر انسان کا نفس مضبوط نہ ہو تو شیطان کے حملوں کے خلاف دفاع ممکن نہیں۔

ہمارے اس بوسیدہ سیاسی نظام میں بہتری کی کوئی امید نہیں۔ اس میں صرف حکمرانوں کی فلاح ہے، قوم کی نہیں۔ اس نظام نے سیاستدانوں کو پیشہ ور بنا دیا ہے۔ سیاست ان کا کاروبار بن چکا ہے۔ ان کی جستجو اس کرسی کے لئے ہوتی ہے جہاں کمائی زیادہ ہو۔ ایک لگن کا روبرو ہے اور دوسری سیاسی تقویت حاصل کرنا، کہ کرسی ہاتھ سے نہ جائے۔ پھر معاشرے کی بھائی بندیاں بھی نبھانی ہیں اور سیاست کی بھی۔ ووٹر کی توقعات بھی پوری کرنی ہیں، اور ان لفٹنگوں، غنڈوں اور ڈاکوؤں کی بھی جن کے زور پر سیاست چمکائی۔ اس میں سارا تصور سیاستدانوں کا بھی نہیں۔ ہمارے معاشرے میں یہ سیاسی نظام انہیں اس راہ پر مجبور کرتا ہے۔ یہ ان کی سیاسی بقا کے لئے لازم ہے۔ اس سیاسی تمدن میں ان کے لئے اور کوئی چارہ نہیں۔ بہت سے اچھے سیاستدان بھی اس چٹکی میں پس رہے ہیں۔

سیاسی جنگ کا ایک الگ ہی تماشا ہے۔ نئی حکومت کے پہلے دن سے ہی آدھی سیاسی قوتیں حکومت کے خلاف کام کرنا شروع کر دیتی ہیں۔ ملک سنوارنے کے لئے ایک دوسرے کا ہاتھ نہیں بٹاتے، گریبان پکڑتے ہیں۔ ملک کن مسائل میں الجھا ہوا ہے، کیا پیچیدگیاں خطے میں جنم لے رہی ہیں اور کیا سیاسی تماشہ چل رہا ہے! کسی چیز میں کوئی ہم آہنگی، کوئی ربط نہیں۔ ہماری حکومت اور پارلیمنٹ کے کیا فرائض ہیں، کیا کر توت ہیں اور کیا تنازعے، ہمارے سامنے ہیں۔ آج کراچی میں سیاسی بنیادوں پر خون کی ہولی کھیلی جا رہی ہے۔ یہ ہماری سیاست کا چہرہ ہے، ہم سب دیکھ رہے ہیں، اور خاموش ہیں۔

حکمران چاہے سیاسی ہو یا فوجی، دونوں نے اس ملک میں گند ہی مچایا۔ فوجی بھی، جو اس نظام کو بد لئے آیا تھا، اس ہی نظام کا حصہ بن گیا۔ اس نے اسی میں اپنا فائدہ دیکھا۔ کیا کریں، حکمرانوں نے یہ نظام بنایا ہی ایسا ہے کہ اس پر سواری کرنے کے لئے سب کی رالیں ٹپکتی ہیں۔ یہ توقع رکھنی کہ یہ نظام آہستہ آہستہ ٹھیک ہو جائے گا، اس نظام میں پلنے والے مفاد پرستوں کا جھوٹ ہے۔ اس میں درستی لانی ممکن نہیں۔ اس کا ڈھانچہ ہی ٹیڑھا ہے۔

جس نظام کی بنیاد ہی ذاتی مفاد، کرپشن اور نا انصافی پر رکھی گئی ہو، اُسے کیسے درست کیا جاسکتا ہے۔ جب سیاستدان جیب سے پیسے لگا کر الیکشن لڑے گا، تو میری اور آپ کی بہتری کے لئے تو خرچ نہیں کر رہا، وہ سرمایہ کاری کرتا ہے۔ پھر جب ہم اُسے ووٹ دیتے ہیں تو اس ہی توقع پر کہ اگر یہ جیت گیا تو ہمارے کام کروائے گا۔ دوسرے کا حصہ چھین کر ہمارے علاقے میں سڑک بنوائے گا، ہمارے بچوں کو بغیر میرٹ کے نوکریاں دلوائے گا، پولیس ہماری پشت پناہی کرے گی۔ ہم انصاف قائم کرنے کے لئے تو ووٹ نہیں دیتے، صرف دوسروں کا حق چھیننے کے لئے، کیونکہ یہی اب رواج بن چکا ہے۔۔۔ یا ظالموں میں ہو رہو، یا مظلوم۔ کوئی جائز کام بھی تو سفارش یا رشوت کے بغیر نہیں ہوتا۔ کیا کریں، اگر انصاف کا نظام ہوتا، تو ہم ایسا کرنے پر مجبور نہ ہوتے۔ نہ ہم میں یہ مایوسیاں ہوتیں، نہ یہ احساس کہ ہم لٹ گئے، نہ دلوں میں نفرتیں اُٹھتیں، نہ آنکھوں میں اندھیرے۔ پھر ہم طاقتوروں کی پشت پناہی کیوں ڈھونڈتے؟ پھر ہم کیوں کہتے کہ "ساڈا لیڈر آوے آوے۔"

ایک کرپٹ نظام کرپٹ معاشرے کو فروغ دیتا ہے، پھر اُس کرپٹ معاشرے میں کرپٹ نظام ہی پنپتا ہے، جہاں پیسے سے ہر کام ہو سکتا ہو۔ ہر کارندہ خریدا جاسکے۔ چاہے جس کے خلاف ہنگامے کروادیں، سڑکوں پر شہریوں کا قتل عام کروادیں، میڈیا کے ہاتھوں مخالفوں کو ذلیل کروا کر ان کے منہ بند کروادیں، یا کسی عدالت سے کسی کے خلاف کوئی سا بھی فیصلہ کروالیں۔ اس سیاسی معاشرے میں خباثت ہی پنپ سکتی ہے۔

سارا نظام ہی کرپشن اور جھوٹ پر قائم ہے۔ پارٹی کا ٹکٹ لینا ہو، الیکشن جیتنا ہو، اس کے لئے فنڈ جمع کرنے ہوں، وزارتیں حاصل کرنی ہوں، سینٹ کی سیٹ ہو، یا کوئی بل پاس کروانا ہو، سب لین دین کا معاملہ ہے۔ اگر تمام مرکزی اور صوبائی حکومتوں کے وزراء اور مشیروں کی گنتی کریں۔۔۔ آپ کو کیلکولیٹر چاہیے ہوگا، تو عقل حیران رہ جاتی ہے۔ کیا معیشت ہے، کیا گورننس ہے اور حکومت کا کیا حجم ہے، اور کیا اخراجات!

آج ہم اس نام نہاد جمہوریت کی بقا کے لئے بہت سی خرابیوں کو سیاسی مجبوریاں کہہ کر قبول کر لیتے ہیں، کہ یہی سیاست کے طور طریقے ہوتے ہیں، اور چونکہ اس سیاست کی بقا کو ملک کی بقا قرار دیا گیا ہے، اس لئے مجبوریاں سب ہی سر آنکھوں پر ہیں۔ اسی طرح، جمہوریت کی بقا کے لئے، پارٹی کے مفاد کو ملک کے مفاد پر ترجیح دینا جائز ہوا۔ اور پارٹی کے مفاد میں کیا کچھ نہیں ہوتا۔ پارٹی کے اہم ممبران کا مفاد بھی پارٹی کا ہی مفاد ہے۔ تو جب سارا نظام ہی مفاد پرستی پر قائم ہے، تو اس سے کوئی کیا توقع رکھے؟ پھر انصاف کا یہاں کیا کام؟ پھر رونا کس بات کا؟ ان ہی طاقتوروں کے ہاتھوں میں جرم بھی پلتا ہے، اور ظلم بھی۔۔۔ سب پارٹی کے مفاد میں۔

گیارہواں سفر اندھیرا سویرا

ہمارے معاشرے کا سب سے گہرا ناسور ہمارا تھانہ اور کچہری ہیں۔ اگر یہ صاف ہو جائیں تو مجال نہیں کہ کوئی کسی پر ظلم کر سکے۔ سارے معاشرے سے گند نکالنے کیلئے اتنا ہی کافی ہوگا، مگر یہ ایسا آسان نہیں جیسا دکھائی دیتا ہے۔ یہ ٹھیک ہو جائیں تو بہت سے بڑوں کی بڑائی ختم ہو جائے۔ اس نظام میں یہ ممکن ہی نہیں، یہاں انصاف بکتا ہی رہے گا۔ اگر تھانے اور کچہری میں انصاف ملے، تو سیاست کیسے چلے؟

حکومت کے نظام میں جو نااہلی نظر آتی ہے، اُس کی بنیاد بھی سیاسی کرپشن ہے۔ نااہل لوگوں کی تقرری اور ترقی سفارش کی بنا پر ہوتی ہے اور نااہل لوگوں کو اہم منصبوں پر فائز بھی ذاتی وجوہات پر کیا جاتا ہے۔ ایک سے ایک باصلاحیت شخص حکومت کے پاس موجود ہے، لیکن اگر انصاف سے کام کرنا چاہے تو کہا جاتا ہے کہ یہ کام میں رکاوٹ ڈالتا ہے۔ جب کوئی افسر شروع دن سے حکومت کا ہر ناجائز اور غیر منصفانہ حکم ماننے پر مجبور ہو، تو پھر لازماً غیر منصف ہی رہے گا۔ اور اگر خود کو بے انصافی سے بچالیا، تو ترقی کیسے پائے گا؟ گنتی کے چند ہی رہ جاتے ہیں، جو اس جال میں پھنسے بغیر گزر گئے ہوں۔ اگر دفتر میں بیٹھ کر پہلی ترجیح پیسہ بنانا ہی ہے، تو کام پر خاک دھیان ہوگا۔ نااہلی تو نظر آئے گی۔ اور جب کہیں پکڑا جائے گا، کہے گا غلطی ہوئی۔ کرپشن کو نااہلی کے پیچھے چھپائے گا۔ ہمارا سیاسی نظام اسی کرپشن کو پالتا ہے اور اسی میں پلتا ہے۔

تعلیمی نظام بھی کرپشن نے ہی بگاڑا ہے۔ نچلی سطحوں کے سرکاری تعلیمی ادارے ناکارہ ہو چکے ہیں۔ نچلی تعلیمی ادارے کا روبرو ادارے بن چکے ہیں، کہتے ہیں کہ بچے ہمارے کلائنٹ ہیں انہیں خوش رکھو، جو چاہتے ہیں کرنے دو۔ ہسپتالوں کا نظام، ناقص ادویات، کھیلوں کا میدان، گندے پانی کے نالے، سوکھے نلکے، فضائی آلودگی، زہریلے دریا، اُجاڑ بستیاں، بھوک اور افلاس، سب ہی سیاست کی کرپشن سے جنم لیتے ہیں۔ معاشرے میں ننگ و نمود بھی اسی وجہ سے چھارہا ہے۔ کاروباری میڈیا باقی کاروباروں کی طرح، کرپشن سے بھرا ہے۔ پیسہ دے دو، قوم کا قبلہ بدل دیں گے، کالے کو سفید کروالو، سفید کو کالا۔ امریکہ کی غلامی کی جڑ میں بھی ذاتی مفاد کی کرپشن ہے۔ اس نظام کے سینئر افسران کہتے ہیں ذرا ہاتھ ہلکا رکھو، ہمارے اثاثے وہاں ہیں، ہمارے بچے وہاں پڑھتے ہیں، نوکریاں کرتے ہیں۔ حکمرانوں کی کرسی کو تحفظ ملتا ہے، جیسے بھرنے کو پیسے۔ ہم جیسے لے پھرتے ہیں۔ ہماری آنکھیں، ان کبھی نہ بھرنے والی جیبوں سے جھانکتی رہتی ہیں۔ کچھ اور ملے گا کھانے کو؟

جو ملک میں خون خرابہ ہو رہا ہے وہ بھی سیاسی کرپشن سے پیدا ہوتا ہے، دہشت گردی بھی۔ اور جو آگ بلوچستان میں جل رہی ہے، اُس کی بنیاد بھی یہی حکومتی کرپشن ہے، جس نے ہر سطح پر انصاف کی دھجیاں اڑادی ہیں۔ کس حاکم کو نہیں پتا کہ ملک کے مفاد میں کیا ہے؟ مگر اس نظام میں حاکم کو پوچھے کون کہ اپنے مفاد میں کیا کر بیٹھے ہو؟ کبھی ان کو قریب سے دیکھیں تو یقین آئے، کہ یہ کچھ بھی کر سکتے ہیں۔ کچھ بھی۔

اس کی کوئی حد نہیں، بس پکڑے نہ جائیں۔ اور حاکم کی پکڑ کا ہمارے یہاں رواج نہیں۔ صرف سیاسی لین دین کے لئے دباؤ کی حد تک جاتے ہیں، اور بس۔ کیا کسی طور پر اس جمود کو نظام کہا جاسکتا ہے؟

صبح اس تمام کے بدلنے ہی میں ہے۔ اسی امید اور ایک بھروسے پر اس نظام کو جھنجھوڑ کر گرانے میں بھی شامل ہوا تھا۔ آخر میں ہی کیوں آئین کا پاس کرتا، جب اسی کے پیچھے چھپ کر وہ، جنہوں نے اس کی رکھوالی کی قسم کھائی تھی، اور مجھ سے بھی قسم لی تھی، سب مل کر، حاکم بھی، اُس کی حکومت کے تمام کارندے بھی اور انصاف مہیا کرنے والے ادارے بھی، اسے چبا چبا کر کھا رہے تھے۔ اور بے بس سکتی قوم، اپنے ہی قاتل کے ہاتھوں سے خون دھور ہی تھی۔ میں جو کر سکتا تھا میں نے کیا، اُس وعدے کی امید پر کہ ایک نیا نظام اس ملک کو دیں گے جو عوام کا ہوگا، حکمرانوں کا نہیں۔ پھر فوجی حکمران اس ملک کا حاکم بن گیا اور نئے نظام کا وعدہ ایک سراب کی طرح وقت کے ساتھ ساتھ ریگستان میں تبدیل ہو گیا۔ سوچا نہیں کہ شام کے بعد رات بھی آتی ہے، بس صبح کی تمنا میں سراب میں کود پڑا۔

پھر فوجی حکومت نے جب سیاسی موڑ کاٹا تو ایک معقول حکمران کو بہت جلد نا معقولیت کی حد سے گزرتے دیکھا۔ یہ الزام اُس شخص پر نہیں، بلکہ اس نظام کو چلانے والے سب ہی اس میں ڈوب جاتے ہیں۔ یہ دلدل ہی ایسی ہے۔ پھر میں اس نظام کا اور اس کے بڑے بڑے لوگوں کا خاموشی سے جائزہ لیتا رہا۔۔۔ سیاست دان بھی اور اُن کے پیچھے چھپے ہوئے اصل حکمران، سرکاری ملازمین بھی۔ اور ان دونوں کا طاقتور گٹھ جوڑ کھل کر سامنے آیا۔ پہلے تو جج بھی اس گٹھ جوڑ میں شامل تھے، پھر اللہ نے ہم پر کرم کیا اور ظلم کی یہ فرعونی تکون ٹوٹی۔

پھر ایک اسلامی مملکت کو امریکہ کے ہاتھوں بکتے دیکھا۔۔۔ "قومی مفاد کی خاطر"۔ اور آہستہ آہستہ ایک طاقتور حکمران کو، چھپ چھپ کر، ٹکڑوں میں، سوئی ہوئی قوم کی آزادی کا سودا کرتے دیکھا، لال مسجد میں انسانوں کو جلتے دیکھا، انصاف کی دھجیاں اڑتے دیکھیں۔۔۔ سب "قومی مفاد کی خاطر"۔ اور نہ جانے اس ملک میں کیا کیا ہوگا، "قومی مفاد کی خاطر"۔

اچھی قیادت کا فقدان، وہ نظام جس سے کراہن آتی ہو، لاغر معیشت، ہر سو پھیلی کرپشن، آپس کی رنجشیں، قومیت کے فساد، قتل و غارت، میڈیا کی کھلی دکانیں، اس کے اوپر سے ورلڈ بینک اور IMF کی ہمیں مروڑنے کی صلاحیت، اور پیسوں پر ہر کام کرنے کو تیار ایک جم غفیر، اور ان سب کے باوجود، ہماری بے حسی۔۔۔ ہم کہاں ہیں؟ کسی کو کسی کی پرواہ نہیں۔ لُٹیرے راج کرتے ہیں۔ اگر کچھ دن اوریوں ہی چلتا رہا، تو میں اور آپ کیا، بھوک مٹانے کو، ایک دوسرے کو کھائیں گے؟

یہ کیا کہ گوشہ صحرا میں تھک کے بیٹھ گئے *

ہماری کشتی بیچ سمندر، بھنور کے گرد چکر کاٹ رہی ہے۔ بھنور ہمیں اپنے اندر کھینچ رہا ہے۔ ہم میں سے کچھ تو چپو چلا رہے ہیں، مگر ان میں کوئی ربط نہیں۔ کوئی ادھر کوزور لگاتا ہے، کوئی ادھر، اور کوئی میری طرح ہوا میں ہی ہاتھ ہلا رہا ہے، جیسے کسی کو بلاتا ہو۔ لیکن یہاں دور دور تک کوئی نہیں، صرف اٹھتی ہوئی موجیں ہیں۔ کشتی، ہر چکر کے بعد بھنور کے اور قریب ہو جاتی ہے۔ کنارے پر کھڑے تماشاخی، جن میں کچھ ہماری کشتی کے پرانے مسافر بھی ہیں، ہمیں دیکھ رہے ہیں، تالیاں بجا رہے ہیں۔ تالیوں کی ان آوازوں کے ساتھ ملی جلی، آسمانوں سے تہتہوں کی آوازیں بھی آرہی ہیں۔ زیادہ مسافر، مسافروں کی سی بے بس ذہنیت لئے، ہکا بکا، آتی آفت کو دیکھ رہے ہیں۔ تسبیحوں کی ٹک ٹک کے ساتھ کچھ دل ہی دل میں بڑبڑا رہے ہیں۔ شاید کسی خدا کو پکارتے ہیں۔ حالانکہ ان کے خداؤں نے تو بتایا ہے کہ سب ٹھیک ہے، کوئی فکر کی بات نہیں۔ کل اور بہتر ہو جائے گا۔

ہم ڈوب رہے ہیں۔ ہمیں یہاں پہنچانے والا کوئی نہیں۔ ہم خود کشتی کھینچ کر یہاں تک لائے ہیں، اپنی ہی لالچوں کے تعاقب میں۔ جب ہم نے قوم کی حیثیت سے سوچنا چھوڑ دیا اور گروہوں میں بٹ گئے، جب ہم نے گروہ کے مفاد میں اپنا مفاد ڈھونڈا، جب مفاد کو انصاف پر ترجیح دی، جب جیسیں بھرنے کی خاطر دل خالی کئے، پھر لیٹیروں کی ٹولیاں راج کرنے لگیں۔ ہم جھوٹ پر پلنے لگے۔ حق پرست منہ چھپانے لگے۔ جھوٹی عزتوں کے محل ہماری آنکھوں میں چمکنے لگے۔ پھر نہ کسی منزل کا نشان رہا اور نہ پانی پر کوئی راہ نظر آئی۔ بے یار و مددگار ہماری کشتی کھلے پانیوں میں، ہواؤں کے دوش پر بھٹکتی رہی، سال ہا سال۔ یوں ہی نصف صدی سے اوپر گزاردی۔ اپنی بے بسی کا غم بھلانے، بے بس بھی نوچ کھسوٹ میں مشغول رہا۔ جو ملا، جہاں سے ملا، جیب میں ڈالا۔ اب سیدھے راستے پر کوئی منزل نہیں، صرف ٹھوکریں لگتی ہیں --- راہ سنسان پڑی ہے۔

اس اندھیرے میں ظلم کا راج ہے اور، اللہ کے وعدے کے مطابق، ایسے ہی حکمران ہم پر مسلط ہیں۔ مگر اللہ کا وعدہ کسے یاد ہے۔ دین کی پہچان مسجدوں کے لاؤڈ سپیکروں سے اٹھتے ہوئے شور میں کھو چکی ہے، عالموں کے جھگڑوں میں دھندلا گئی ہے۔ ہم نے بھی یوں اسے چھوڑنے کا بہانا ڈھونڈ لیا۔ دل میں اترائے کہ ہم منافقت کی راہ پر نہیں چلتے۔ سوچا، شکر ہے مولویوں کا، ہماری جان دین سے چھٹی۔ اب دین، دنیا حاصل کرنے کا ذریعہ ہے۔ آج اس کے نام پر ہر قسم کی دکان کھلی ہے۔ مدینہ تکہ فروش --- جو مردار بیچتا ہے، سے لے کر گھر



باکسنگ کا مقابلہ



غوطہ خوری کی تربیت



فوجی مشق

گھر پھیلے بارود کے دھوئیں تک۔ اب ہمارے نئے نئے خدا ہیں: پیسہ، امریکہ، اور موجودہ جمہوریت کا نظام۔ اس کے بعد مغرب کی اندھی تقلید، روشن خیالی کی چھوٹ، سود کا خون چوستا نظام، اور نہ جانے کیا کیا۔ پھر دعا کے لئے ہاتھ اٹھائیں کیونکر؟

منافقت ہمارے حکمرانوں کے چہروں سے ٹپکتی ہے۔ ملک میں ایک سیاسی ڈرامہ رچا ہے، جس میں جو دکھائی دیتا ہے، جھوٹ ہے۔ ایک ڈھونگ پر نظام قائم ہے، اور ہر رال ٹپکتے منہ سے یہی صدا آتی ہے کہ پاکستان کی بقا جمہوریت کے اسی نظام میں ہے۔

افغانستان کے اندر امریکہ کے قتل و غارت میں ہم کھل کر شامل ہیں، اور اُن کے ساتھی ہونے پر ناز ہے۔ اللہ نے قرآن میں کہا ہے "اگر تم کافروں کا کہا مان لو گے تو وہ تمہیں تمہاری ایڑیوں پر پھیر دیں گے، پھر تم بڑے خسارے میں پڑ جاؤ گے"۔ یہ وہ مشہور یوٹرن ہے جو ہم نے فخر سے اس صدی کے آغاز میں لیا، اور آج بھی اسی کے گیت گاتے ہیں۔ اور کتنے ہی منہ یہ راگ الاپتے نہیں تھکتے کہ یہ جنگ ہماری بقا کی ہے۔ اپنی ہی بقا کے لئے خودکشی؟! نہیں نہیں، خودکشی نہیں، ہم اپنے بچے نئے خداؤں کے قدموں میں بھینٹ چڑھاتے ہیں۔

اور بھوکے لوگوں میں ایک بے حسی کا عالم ہے۔ ہر دوسرا شخص کچھ مانگ رہا ہے۔ کسی کا پیٹ بھرا ہوا نہیں۔ قومی کشکول دنیا کے آگے پھیلا ہوا ہے۔ ہاتھ دعا کے لئے نہیں، بھیک کے لئے اٹھتے ہیں۔ بھوک اور افلاس کا سیلاب اُن گھروں کو ڈبو رہا ہے، جو ہماری خود فریب کھڑکیوں سے نظر نہیں آتے۔ سب کو صرف اپنی اپنی پڑی ہے۔ جیسے قیامت آ ہی چکی ہو۔ پھر ڈوبتی کشتی کا رونا کیا؟

اسی گڑھے کے دہانے پر فوج بھی پھسلتی ہوئی کھڑی ہے --- ساکن، خوف زدہ، خون میں بھیگی ہوئی، غلام آقاؤں کی خوددار فوج۔ ان کا نعرہ، "اللہ اکبر"۔ مگر اللہ کو تو ہم کہیں دور چھوڑ آئے۔ پھر تاریکی کا شکوہ کیا؟ وہی تو اندھیروں سے نکالتا ہے، روشنی کی طرف۔

ایک چھوٹی سی تصویر، شاہ نواز زیدی صاحب کی بنائی ہوئی:

ملک گرا ہے مٹی پر --- قحط زدہ ڈنگر کی طرح،
کھال اور ڈھانچہ --- بدبو، گرد، پسینہ ہیں،
خشک کھلی آنکھوں میں --- ننگا خوف جما ہے۔

گدھ اترے ہیں۔

بے فکری سے دھڑ پر بیٹھے --- کھال اور آنتیں نوچ رہے ہیں،
جتنی جتنی سختی آئے، آفت، کال اور قحط پھلے،

جتنا جتنا سوکھا ہو، اتنے فربا ہوتے ہیں،

خوش رہتے ہیں۔

اسی لئے سب انکو، راجہ گدھ کہتے ہیں۔

جس راہ پر ہم چل رہے ہیں، اُس پر منزل تو نہیں آتی، مگر اُس کے پجاری ہمیں یقین دلاتے ہیں کہ یوں ہی چلے چلو، منزل دور ہے مگر پہنچ ہی جائیں گے، ایک دن۔ "سفر کتنے کتنے ہی کٹے گا --- آہستہ آہستہ۔ اس کے علاوہ اگر کچھ کیا تو کشتی ڈوب جائے گی۔ دیکھنا! نوچ کھسوٹ ذرا دھیان سے، کہیں کشتی نہ ہلے، یہ ٹیالہ پانی اندر آ جائے گا --- فوج، اور یہ ملک کو تباہ کر دیں گے۔ جمہوریت، یعنی ان کی حکومت، کو بچانا ہے۔ یہی شاہراہ جمہوریت منزل کو جاتی ہے۔ یہی سیدھی راہ ہے۔ چار چھ نسلوں میں ہم بھی منزل پالیں گے۔ ارے! تم ابھی سے رونے لگے! صبر کرو، اللہ صبر کرنے والوں کے ساتھ ہے۔ پھر الیکشن ہوگا۔ ایسے ہی، ہم بہتری کی طرف بڑھنے لگیں گے۔ بس نظام چلتا رہے۔ نظام قرآن سے زیادہ اہم ہے۔ قرآن کو تو بچانے کا وعدہ اللہ کا ہے، نظام کو ہم نے بچانا ہے۔"

"اور پھر امریکہ کا ہاتھ تھامے بغیر، یہ اندھیری رات تو کٹ سکتی نہیں۔ اگر وہ خفا ہو گیا تو ہماری زندگی کا پہیہ ہی رُک جائے گا۔ کھائیں گے کیا؟ اللہ تو آسمان پر ہے، قیامت کے دن ملے گا، پھر دیکھیں گے۔ امریکہ تو یہاں ہے، دنیا کا بادشاہ۔ دنیا میں تو اسی کو سجدہ کیا جاتا ہے اور یہی چلتا ہے۔ وہی ہمارا آقا ہے، وہی رازق، اور وہی ہمارا ولی ہے۔ اُسی نے ہمیں زندہ رکھا ہے اور وہی ہمیں مارے گا۔ وہی ہمیں ہنساتا ہے اور وہی رُلانے گا۔"

"اور پھر یہ دہشت گرد کہاں سے ٹپک پڑے؟ ان سے بھی تو نجات پانی ہے۔ امریکہ کے بغیر کیسے ہوگا؟ کیا پاکستان کو طالبانستان بنادیں؟ اس کا تو بہت خطرہ ہے۔ پھر ہم کہاں جائیں گے؟ امریکہ کی اُننگی مت چھوڑنا --- ڈوب جاؤ گے!"

تو بس جیسے چل رہا ہے چلے دو۔ سب خود بخود، آہستہ آہستہ ٹھیک ہو جائے گا۔ صبر کرو اور کشتی کو مت ہلاؤ۔ دم سادھ کے اپنے اپنے گھروں میں بیٹھ رہو۔ کھڑکیاں دروازے بند کر لو۔ راجہ گدھ کی تسبیح پڑھو۔

تم یہ کہتے ہو وہ جنگ ہو بھی چکی!
جس میں رکھا نہیں ہے کسی نے قدم
کوئی اُترا نہ میداں میں، دشمن نہ ہم
کوئی صف بن نہ پائی، نہ کوئی علم
منتشر دوستوں کو صدا دے سکا
اجنبی دشمنوں کا پتا دے سکا

تم یہ کہتے ہو وہ جنگ ہو بھی چکی!
جس میں رکھا نہیں ہم نے اب تک قدم

تم یہ کہتے ہو اب کوئی چارہ نہیں
جسم خستہ ہے، ہاتھوں میں یارا نہیں
اپنے بس کا نہیں بارِ سنگِ ستم
بارِ سنگِ ستم، بارِ گُہساۓ غم
جس کو چھو کر سبھی اک طرف ہو گئے
بات ہی بات میں ذی شرف ہو گئے

دوستو، کوئے جاناں کی نا مہرباں
خاک پر اپنے روشن لہو کی بہار
اب نہ آئے گی کیا؟ اب کھلے گا نہ کیا
اس کفِ نازنین پر کوئی لالہ زار؟
اس حزیں خامشی میں نہ لوٹے گا کیا
شورِ آوازِ حق، نعرہء گیر و دار؟
(فیض)

چند آداب و اخلاق

بارھواں سفر

نئی جہت

دور سے صبح کی دھڑکن کی صدا آتی ہے *

موجودہ راستے کی کہانی تو اب ختم ہونے کو آرہی ہے۔ کہانی کے نیچے چھوٹے حروف میں لکھا ہے، "پھر کیا ہوا؟ یہ جاننے کے لئے اگلی قسط، پرانے شمارے میں دیکھیں۔" پہلے بھی یہی ہوتا آیا ہے۔ یہ کہانی ایک گول چکر میں چل رہی ہے۔ پھر وہی ہوگا۔ لوگ سڑکوں پر نکل آئیں گے، گھر اوجھاؤ ہوگا، پھر فوج اُن پر فائر کرنے سے انکار کر دے گی۔ پھر فوج حکومت سنبھال لے گی۔ پھر ہمارا چکر پورا ہوگا، اور منڈو سندھ واپس اپنی جگہ پر آجائیں گے۔ اس پر ایک پنجابی کی بڑی موزوں ضرب المثل ہے، مگر جانے دیجئے۔

پھر فیض صاحب کے الفاظ یہاں سے شروع ہوں گے: "سب تاج اُچھالے جائیں گے، ہم دیکھیں گے"، اور یہاں ختم ہوں گے: "یہ وہ سحر تو نہیں، چلے تھے جس کی آرزو لے کر، چلے تھے یار کے مل جائے گی کہیں نہ کہیں، فلک کے دشت میں، تاروں کی آخری منزل۔" پھر سے جمہوریت کے لٹنے کا شور اُٹھے گا، پھر تماشا ہوگا، اور پھر ہم منزل کی تلاش نئے سرے سے شروع کریں گے۔ پھر پرانی شراب نئی بوتلوں میں آئے گی۔

اور یہ بھی ایک کہانی سمجھیں، کیوں کہ اس بار امریکہ اور بھارت تاک میں بیٹھے ہیں، وہ بھی یہ تماشا دیکھتے ہیں، اور اس بچے کے ہاتھ میں ایٹمی کھلونے سے خوف زدہ ہیں۔ "اور پھر یہ سر پھر الونڈا تو مسلمان ہے!" وہ ہمارے ٹکڑے کرنے کا منصوبہ بنا چکے ہیں۔ ہم خود ہی اپنے دشمن ہیں۔ انتشار کی آگ ہمیں لپیٹ لے گی۔ نفرتوں کا سیلاب اُٹھ آئے گا۔ یہاں جعل ساز بھولے انسانوں کا خون پیتے ہیں۔ یہاں قاتلوں کو سر پرستی ملتی ہے، پولیس کے تھانوں کی نیلامی ہوتی ہے۔ یہاں بچے جکتے ہیں۔ یہ مصر (Egypt) نہیں ہے، یہاں بارود کی افراط ہے۔ اور ہم نے اپنی کوتاہیوں سے انتہا پسند اسلامی قوتوں کو اتنا مشتعل اور متحرک کر دیا ہے، کہ اب یہ جن آسانی سے بوتل میں واپس نہیں جائے گا۔ اب کی بار اگر لگام ہاتھ سے چھوٹی، تو پاؤں بھی رکابوں میں نہیں رہیں گے۔ پھر گھوڑا سر پٹ دوڑے گا، اور ہم اُس کی ناپیں اُس کے قدموں تلے سنیں گے، کیونکہ وہ ہماری کھوپڑیوں پر بجیں گی۔

اس سے پہلے کے یہ قیامت کی گھڑی ہم پر نازل ہو، بہتر ہے کہ ہم نئی راہ تلاش کر لیں۔ انقلاب کی باتیں کرنے والوں کو سوچنا چاہیے کہ کس انجام کی تلاش ہے۔ اگر بے قابو، مشتعل ہجوم سڑکوں پر کود پڑے، جو ہوتا نظر آ رہا ہے، تو اس سے بہتر موقع ہمارے دشمنوں کو نہیں ملے گا، گلیوں میں خون بہے گا، گھروں سے دھوئیں اُٹھیں گے۔ سڑکوں پر آنے سے پہلے، انقلاب ذہنوں میں لانا ہوگا۔

پہلا راستہ، موجودہ نظام کے چلنے کا، نیم تاریکی ہی میں رہے گا، اور اگر حالات زیادہ بگڑ گئے اور انار کی پھیل گئی تو پھر فوج کے آگے
آنے کا راستہ کھل جائے گا، اور ہم دوسرے راستے پر چل پڑیں گے، جو وہی پرانا گول چکر ہے۔ اور قوم اسی شام میں انکی رہے گے۔ اگر صبح
کرنی ہے تو رات سر پہ لینی ہوگی، وہ رات کے بعد ہی آتی ہے۔ حوصلہ کرو اور رات کے مقابلے کی تیاری کرو۔ یہ رات کتنی تاریک اور طویل
ہوتی ہے، اس کا انحصار ہم پر ہے۔ اگر ہم ہاتھ پہ ہاتھ رکھ کر بیٹھے رہیں گے، تو اندھیرائیوں ہی چلتا رہے گا اور تاریکی بڑھتی رہے گی۔



کیا بجھ گیا ہوا سے لہو کا شرار بھی؟*

اس نیم دھندلکے میں کہاں تک چلیں، کوئی امید کی کرن تو نظر آتی نہیں؟ آگے صرف تاریکی ہے، کچھ نظر نہیں آتا۔ اب رات سر پر کھڑی ہے۔ اس میں سے کیسے گزریں گے؟ یوں ہوگا کہ رات کے خوف سے پھر ایک بار نئی حکومت کا نعرہ لگے گا، پھر الیکشن ہوں گے اور پھر وہی نیم تاریکی۔ کچھ بدلے گا تو نہیں۔ صرف چہرے نئے ہوں گے۔

کس امید کا دامن تھا مے ہم گوشہء صحرا میں منتظر ہیں؟ بغیر ہاتھ ہلائے کچھ ٹھیک ہونے والا نہیں۔ اگر یہ سوچا ہے کہ الیکشن آنے والے ہیں، کوئی بہتری کی صورت شاید نکل آئے، تو یہ ایک بے بنیاد مفروضہ ہے۔ ہر ذی ہوش دیکھ رہا ہے کہ آگے کیا آرہا ہے۔ جو خون کی ہولی یہاں کھیلی جا رہی ہے، بے مقصد نہیں ہے۔ ہماری حکومت بھی اس کھیل کا حصہ ہے، اس غارت گری میں شامل ہے۔ سب تمہیں لوری دے کر سلانا چاہتے ہیں، کہ تم بہتری کی امید میں، بے خبری کی نیند سو رہو، اور تمہاری عصمت لٹ جائے، گھرا جڑ جائے اور بچے جلا ڈالیں جائیں۔

اس نظام میں کچھ نہیں بدلنا۔ کوئی بہتری کی گنجائش نہیں ہے۔ اگر اچھے لوگوں کو لے آئیں تو وہ طاقت میں آتے ہی خراب ہو جاتے ہیں۔ یہ ہمارے کلچر اور نظام کی مجبوری ہے۔ کوئی شک نہیں، کچھ اب بھی اچھے ہیں، مگر آٹے میں نمک کے برابر۔ جس نظام پر کوئی روک ٹوک نہ ہو، وہ ہمارے معاشرے میں بگڑ ہی جاتا ہے۔ پھر اس نظام میں صرف سیاست دان ہی تو نہیں، پوری حکومتی مشینری ہے، جس کا آوے کا آدہ ہی بگڑا ہوا ہے۔ یہاں تمام پبلک سروسز پبلک ماسٹرز ہیں۔

اگر ہم نے موجودہ راہ پر ہی چلنا ہے اور ہم سمجھتے ہیں کہ یہ نظام یوں ہی آہستہ آہستہ ارتقائی منزلوں (evolutionary process) سے گزر کر ٹھیک ہو جائے گا، تو یہ صرف ایک کہانی کے طور پر تو میں سن سکتا ہوں، مگر اب اس عمر میں اور اتنا کچھ دیکھ لینے کے بعد، کہانیوں سے دل بہلتا نہیں۔ اب تو قوم بھی تنگ آ چکی ہے۔ سارے جھوٹ تو کھل چکے، لیکن جھوٹ بولنے والوں کے منہ اب تک بند نہیں ہوئے۔ ہم گر چکے ہیں۔

گر کراب اٹھنا ہوگا۔ گرنے میں وقت کم لگتا ہے، اور اٹھنے میں زیادہ۔ اور ہم تو سال ہا سال سے گر ہی رہے ہیں۔ منزل نظروں سے اوجھل ہے، صاف نظر بھی نہیں آتی۔ اس کا تعین کر کے ہی ہم راہ تلاش کر سکتے ہیں، ورنہ اس اندھیرے اور بوکھلاہٹ میں کہاں ٹٹولتے پھریں گے۔ میری ناچیز رائے میں منزل کچھ ان الفاظ میں بیان کی جاسکتی ہے:

ایک خود مختار، خود شناس، باوقار اور ترقی پسند اسلامی ریاست، جس میں انصاف ملے، برابری کے معاشی حقوق ہوں، عزت کا تحفظ ہو، ہر شہری امن سے رہ سکے اور ہم دنیا کے لئے ایک مثالی نظام ہوں۔

مگر یہاں کیسے پہنچیں؟ کون ہمیں جگائے؟ کون راہ بتائے؟ ہمارا المیہ ہماری بے حسی ہے۔ ہماری سوچیں مفلوج ہو چکی ہیں، آج کی بھوک تک محدود ہیں۔ سب کچھ جانتے ہوئے بھی خاموش تماشاخی ہیں۔ آج کے حالات میں قومی سطح پر ذہنی لاچارگی کی یہ کیفیت اس ملک کے وجود کے لئے خطرہ ہے۔

شاید سوچتے ہیں کہ ہمارا کیا قصور، ملک کے حالات اس انجام پر ہم نے تھوڑی پہنچائے ہیں۔ جو ذمہ دار ہیں ان سے پوچھو۔ یا ایک احساس بے بسی ہے، کہ میں کر ہی کیا سکتا ہوں؟ جن کے ہاتھ میں طاقت ہے وہی اس کے ذمہ دار ہیں، وہ ہی کچھ کریں۔ یا نئے زمانے کی سوچ ہو کہ آج کی سوچ، مزہ ڈھونڈو، کل کس نے دیکھی ہے۔ یا دل کو ایک جھوٹی تسلی دی ہے کہ نہیں اب ایسا بھی کچھ ہونے والا نہیں کہ ڈوب ہی جائیں، بس اسی چکر میں گھومتے رہیں گے، اب اس سے اور بُرا کیا ہوگا؟ حکومت جو کر سکتی ہے، کر رہی ہے۔ وقت کے ساتھ ساتھ سب ٹھیک ہو جائے گا۔ یا شاید اللہ سے بہتری کی کوئی امید ہو۔ لیکن اللہ سے امید تو وہ رکھے جس کے دل میں اللہ کی قدر ہو، جو روزِ آخرت اُس کے سامنے کھڑے ہونے سے ڈرتا ہو۔ جس نے اللہ کے احکامات کو پیٹھ پیچھے پھینک دیا، اُسے اللہ سے امید لگانے کا کیا حق؟ پھر اللہ نے یہ تو نہیں کہا کہ ہاتھ پہ ہاتھ دھرے بیٹھے رہو، اور تسبیح کے دانے پٹاتے رہو، سب ٹھیک ہو جائے گا۔

کہتے ہیں کہ مجھے زمانے کی گردش نے مار دیا، مجھ سے اپنی ہی زندگی نہیں سنہلتی، میں کیا کر سکتا ہوں؟ یہ جھوٹ ہے، خود فریبی ہے۔ تم اپنے ہی قصور وار ہو، اپنے ہی دشمن۔ سوائے اُس کے جس نے اپنی پوری شدت سے اس برائی کو روکا نہیں، سب ہی مجرم ہیں، سب ہی ذمہ دار۔ میں بھی، تم بھی۔ ہم نے خود کو سوچوں کے الجھاؤ میں پھنسا لیا ہے، تاکہ دل کو جھوٹی تسلی دے سکیں، کہ اس غبار میں صحیح کیا ہے، غلط کیا، پتا ہی نہیں چلتا، تو کدھر جائیں، کیا کریں؟ آنکھیں کھولو، دیکھو۔ سوچو۔ ہر چیز صاف نظر آتی ہے۔ اپنی منجمد زندگی اور بے بسی کو جھنجھوڑو۔ حق کو پہچان تو سب ہی سکتے ہیں، تو پہچانو۔ بول تو سب ہی سکتے ہیں، تو بولو۔

یہ نہ سوچو کہ میری آواز میں طاقت ہی کتنی ہے، جو میرے کچھ کہنے کا کوئی اثر ہو۔ جس محفل میں بیٹھتے ہو ملک کی بہتری کی بات کرو۔ یہیں سے تبدیلی شروع ہوتی ہے، اپنے اندر بھی اور باہر بھی۔ اور دلوں کو زندہ کرو، ان کو جھنجھوڑو، غفلت کی نیند سے جگاؤ۔ اپنی سوچیں لوگوں پر اجاگر کرو۔ اس خوف سے دبک کر مت بیٹھو کہ لوگ تم پر ہنسیں گے، انگلیاں اٹھائیں گے، آوازے کیسں گے۔ تمام پیغمبر بھی اپنی آواز اٹھاتے تھے، بولتے تھے۔ اُن سب کے ساتھ بھی زمانے نے یہی سلوک کیا، بلکہ اس سے بھی بُرا۔ اُن کے دل میں اللہ کا ڈر تھا۔ وہ کسی اور ڈر سے چُپ نہیں بیٹھے۔ تم بھی چُپ مت بیٹھو۔ آج تم ہی پیغامبر ہو، تم ہی قائد۔ اور کوئی قائد نہیں ہے، نہ کوئی رہبر، نہ راہنما۔ اپنے ہی لہو کے شرار سے اس اندھیرے میں راہ تلاش کرو۔ اپنے سچ کو ڈھونڈو۔ وہی شعلہ ہے، وہی مشعلِ راہ۔ جب سب کی آوازیں مل جائیں تو کائنات لرز جاتی ہے۔ پھر وہ خود کو تمہاری مرضی پر ڈھال لیتی ہے۔ اب اُٹھو، دیر نہ کرو۔

جو قوم اپنی حالت کو اپنی ذمہ داری نہیں سمجھتی اُس کی حالت کیونکر سنبھلے؟ مشہور سائنس دان البرٹ آئنسٹائن نے کہا تھا، "دنیا خطرناک جگہ ہے، اُن لوگوں کی وجہ سے نہیں جو بدکار ہیں بلکہ اُن کی وجہ سے جو خاموش تماشائی ہیں اور کچھ کرتے نہیں۔" حکمران، چاہے فوجی ہو یا سیاسی، اگر فتنہ برپا کر رہا ہے تو کیوں قبول کرتے ہو؟ نوچ کر پھینک کیوں نہیں دیتے؟ کیوں خاموش ہو؟ یہ سب اس ہی خاموشی کا انجام ہے۔ یہی ہمارا قصور ہے۔ بجلی کی لوڈ شیڈنگ پر تو گھروں سے نکل آتے ہو، پیٹرول کی قیمت بڑھنے پر بھی، اور تنخواہ کی کمی پر ڈاکٹر بھی مریضوں کو مرنے کے لئے چھوڑ دیتے ہیں۔ پھر ملک کو یوں بے حال کیوں چھوڑا ہے؟ کیا صرف اپنے حقوق کا تحفظ چاہیے، فرائض سے کچھ غرض نہیں؟ کیا ترجیح صرف ذاتی مفاد ہی ہے؟ آج کے حالات میں ایسا ممکن نہیں۔ حالت اتنی غیر ہو چکی ہے کہ جب تک کوئی بڑی تبدیلی نہیں لاؤ گے، چھوٹے چھوٹے مسئلے حل نہیں ہوں گے۔ جب تک اجتماعی بہتری کی طلب نہیں کرو گے، ذاتی مفاد محفوظ نہیں رہے گا۔ اب مرہم پٹی کا وقت نہیں رہا، سرجری چاہیے۔ اب انتظار کا بھی وقت نہیں رہا، آخری گھڑی آگئی۔

کوئی مثبت تبدیلی نہیں آسکتی جب تک عوام اپنے زورِ بازو سے اسے عمل میں نہ لائیں۔ یہ سوچنا کہ غریب عوام تو بے بس ہیں، تاریخ کی حقیقتوں سے منہ موڑنا ہے۔ دنیا میں ایسی تمام تبدیلیاں عوام کی طاقت سے ہی آئی ہیں، حاکم نہیں لائے اور نہ ہی حکومت کے متمنی حضرات۔ پاکستان بھی غریب عوام نے ہی بنایا تھا۔ آج بھی مسلم دنیا میں عوام ہی تبدیلیاں لا رہے ہیں۔ ہاں، ان کی قیادت یقیناً چاہیے۔ جس سے پوچھو، کہتا ہے۔ "اب کوئی ایسا آئے جو سب کو ٹھیک کر دے۔ کھبوں سے لٹکا دے۔" مگر باہر سے تو کوئی نہیں آئے گا، تم جب اُٹھو گے، تم ہی میں سے قیادت بھی اُبھر آئے گی۔ حوصلہ تو کرو۔

یقیناً، اللہ کی مدد کے بغیر تو اس شکنجے سے نکل نہیں سکتے۔ اس کے لئے لازم ہے کہ باقی سب خداؤں کو چھوڑ کر، صرف اللہ ہی کو پکارو۔ اور صرف پکارنے سے بات نہیں بنے گی، خود کچھ کرنا ہوگا۔ یہ ہمارا امتحان ہے، اللہ کا نہیں۔ ہم ہر مشکل گھڑی میں اللہ کا امتحان لینے

لگتے ہیں، کہ دیکھتے ہیں اللہ کیا کرتا ہے۔ تو کیا ہاتھ پر ہاتھ دھرے بیٹھے رہو گے؟ کیا تم نے سمجھ لیا کہ تمہارا یہ کہہ دینا کافی ہے کہ میں ایمان لایا؟ کیا کلمہ صرف منہ سے پڑھتے ہو، دل سے آواز نہیں اُٹھتی؟ یہ کیسا ایمان ہے کہ اللہ تمہیں پکارے اور تم لبیک نہ کہو؟! پھر اُس کو کس منہ سے پکارتے ہو؟ ہر طرف سے بے تعلق ہو کر، ایک اللہ کے ہو رہو، پھر سب مل کر ایک ہی سمت میں کوشش کرو تو کنارہ دور نہیں۔ جب تمہاری آواز اللہ کی آواز سے ہمکنار ہوگی، جب تم اُس کی رضا پر چلو گے تو کامیابی یقینی ہے۔ یہی اصل کامیابی کا راز ہے۔ اللہ کی رضا ہو کر رہتی ہے۔ تو پھر ناکامی کا خوف کیسا؟

بس ایک چراغ کی خواہش، بس اک شرار کی آس*

جس ملک پر جو نظام قائم ہو جاتا ہے، وہ اُس نظام کی گرفت میں آ جاتا ہے۔ ایک شکنجے کی طرح وہ نظام تمام قوم کو جکڑ لیتا ہے۔ جو بھی اُوپر آتے ہیں وہ اُسی نظام میں پھلتے پھولتے ہیں، اور اگر اس کو چھیڑیں، تو اپنا مقام کھودیں۔ یہی پھر اس نظام کی فصیلیں بن جاتے ہیں، ان کی بقا نظام کی بقا بن جاتی ہے، اسے گرنے نہیں دیتے۔ اس لئے اُن سے اس نظام میں تبدیلی کی کوئی توقع نہیں، جو اس نظام میں پلتے ہیں۔ وہ اسی میں پنپنے کی جستجو میں لگے رہیں گے اور کسی چیز کو بدلنے نہیں دیں گے، چاہے وہ پیشہ ور یا فوجی سیاست دان ہوں، حکومت کے کارندے ہوں، یا وہ جوان سے مستفید ہو رہے ہیں۔

جو باہر سے مسمم ارادہ لے کر اسے بدلنے آتا ہے، جب اس میں شامل ہو جاتا ہے، تب اُس پر اس کے جمود کی طاقت کا راز کھلتا ہے، اس مافیا کی وسعت کا احساس ہوتا ہے۔ آتے ہی وہ مملکت کے ہزار ہا مسائل میں اُلجھا دیا جاتا ہے۔ اُس کے پاس وقت کم ہوتا ہے، کیونکہ قوم اُس سے فوری کارکردگی کی توقع رکھتی ہے۔ کارکردگی کے لئے اُس کے ساتھی اُس کی کیبنٹ ہوتی ہے، جو بنیادی طور پر پیشہ ور سیاستدان ہوتے ہیں۔ نہ ہی حکومت کی مشینری چلانے کی صلاحیت رکھتے ہیں اور نہ ہی تجربہ۔ اُن کا سارا تجربہ سیاسی کھیلوں کا ہوتا ہے۔ پیسوں کی قلت سے بھی ان کے ہاتھ بندھے رہتے ہیں۔ ایک کرپٹ، تجربہ کار اور باتدبیر (manipulative) بیوروکریسی کے ہاتھوں مجبور ہوتے ہیں، جن کا ہر کام پردوں میں رہتا ہے۔ ہمارے نظام میں صرف یہی تجربہ کار ہوتے ہیں۔ اگر انہیں چھیڑیں تو حکومت ٹھہر جائے۔ جب ان دشواریوں پر سیاسی مجبوریوں اور سیاستدانوں کی کرپشن کا رنگ چڑھتا ہے، تو ایک ایسا وبال پیدا ہوتا ہے، جو کسی کے بس میں نہیں۔ ان تمام کے بعد، پارٹی کا مفاد بھی اہم ہے، جو تمام چیزوں پر فوقیت رکھتا ہے۔ کس کس کو سنبھالیں، انصاف بھی کریں اور کارگر حکومت بھی چلائیں۔ جلد ہی انہیں اپنی کارکردگی دکھانے اور کوتاہیاں چھپانے کے لئے جھوٹ کا سہارا لینا پڑتا ہے۔ یہ دلدلی نظام ہے، اس میں کسی کی ذاتی صلاحیت یا شخصیت اُسے وہ حاکمیت عطا نہیں کرتی، جو ایک ملک کو انصاف کے نظام پر چلانے کے لئے حکمران کو لازم ہے۔

اپنی کرسی پر فائز ہونے کے بعد حاکم کے پاس دو ہی راستے ہیں۔ یا اس نظام کو درست کرنے کی جستجو میں، اس سے لڑتا رہے، سب سے دشمنیاں مول لے، اور ملک کا نظام چلانے سے رہ جائے، چاہے سیاسی قوتیں اُسے اپنی جگہ سے نہ بھی ہلائیں۔ پھر نا کامیوں کا بوجھ لئے گھر جائے اور اگلی بار یہاں آنے کی راہ نہ پائے۔ دوسرا راستہ یہ کہ اپنی سول سروس کی ٹیم کو بھی خوش رکھے اور سیاسی ساتھیوں کو بھی، اور جو

تھوڑا بہت، ان مجبوریوں کے باوجود کر سکتا ہے، کرے اور باقی کام جھوٹ اور اشتہار بازیوں پر چھوڑ دے۔ اگلی بار پھر آنے کے لئے جو ہو سکتا ہے، کرے۔ یہی ہمارے یہاں ہوتا ہے اور اس ہی کو ہم نے قبول کیا ہوا ہے۔ کیا کریں، سیاسی مجبوریاں ہیں۔

کیا ان مجبوریوں میں، انصاف کے دور کا خواب، خواب ہی رہے گا؟ کیا یہ نظام ہمارا آقا ہے اور ہم اس کے غلام؟ کیا اس قوم میں اتنی بھی سکت نہیں کہ انصاف کا تقاضا ہی کر سکے؟ ہم نے تو فریاد بھی چھوڑ دی اور انصاف کی امید بھی۔ کیا یہ ہمارا حق نہیں؟ ایسی کیا مجبوری ہے؟ کیوں ہم اچھے حاکم کی جستجو ہی میں زندگی گزار دیں؟ اور اگر ڈھونڈ بھی نکالیں، تو وہ نظام کے ہاتھوں مجبور ہو۔ اچھا نظام اچھے حاکم سے زیادہ سودمند ہے اور کہیں زیادہ پائیدار۔ نظام وہ اچھا ہے جس کی طاقت نظام ہی میں ہو، حاکم میں نہیں۔ نظام کو حاکم نہ مروڑ سکے، نظام حاکم کو سیدھا رکھے۔ نظام حاکم کا مہولہ منت نہ ہو، بلکہ حاکم اس کے سہارے پر کھڑا ہو۔

دنیا کے تمام جمہوری نظام بوسیدہ ہیں، سینکڑوں سال پرانے، اور اپنی ہی گرفت میں مقید۔ اُن کا تعاقب فضول ہے۔ پھر ہمارے معاشی اور معاشرتی حقائق مختلف ہیں، تہذیب و تمدن اور ہیں۔ اس نظام کو چھوڑ کر اللہ نے ہمیں کتنی بار موقع دیا کہ ہم بہتر نظام لاسکیں، مگر فوجی حکمرانوں اور سیاستدانوں کی خود غرضیاں ہمیں موڑ کر اُسی سیاسی اور انتظامی ڈھانچے میں جھونک دیتی ہیں، جو اس نظام سے استفادہ حاصل کرنے والے سیاستدانوں اور حکومتی عہدیداروں نے مل کر بنایا ہے، جس میں پہلی ترجیح اپنے مفادات کے تحفظ کو دی گئی ہے۔ یقیناً ہمارے بیرونی مسائل بھی بہت پیچیدہ اور سنگین ہیں، لیکن پہلی ترجیح خود کو سنبھالنا ہے۔ اس کے بغیر نہ ہی ہم بیرونی خدشات سے نبٹ سکتے ہیں اور نہ ہی ان میں سے ابھرتے ہوئے مواقعوں سے مستفید ہو سکتے ہیں۔ ہمیں سب سے پہلے اس نظام کو بدل کر ملک کے اندرونی حالات کو سنبھالنا ہو گا۔

اب کچھ نیا کہنے لگا ہوں، پرانی کوتاہیوں کے باوجود۔ گر کر پھراٹھنا ہو گا۔ ملک کے نظام میں تبدیلی لانے کے لئے یہ میری سفارشات ہیں، کوئی اٹل بات نہیں۔ اس سے بہتر بھی راستے ہوں گے۔ یہ اس لئے پیش کر رہا ہوں کہ ہم سب مل کر آگے کا کچھ سوچیں، کوئی نیا خواب دیکھیں۔ مجھ سے جو بن پایا، پیش ہے۔

اس ملک میں اللہ کے بعد، اصل طاقت عوام کے پاس ہے، اور حق بھی۔ سیاست اُن سے افضل نہیں، اُن کی محکوم ہے۔ اگر وہ اپنے حالات کو بدلنا چاہیں، تو ہی وہ بدلیں گے۔ پھر سب اُن کا ساتھ دیں گے۔ یہ طوق گردن سے اتار کر پھینکنا ہو گا۔ ایک ایسا نظام بنانا ہو گا جو عوام کا ہو، حکمرانوں کی بہبود کا نہیں۔ انگریزوں کی حکومت سے نجات آسان تھی، دوست اور دشمن کی پہچان تھی۔ اپنوں کی غلامی، اُن کافروں کی

بارہواں سفر نئی جہت

غلامی سے زیادہ تکلیف دہ ہے، کیونکہ وہاں کم از کم انفرادی انصاف تو ملتا تھا۔ یہاں تو نہ انصاف ہے، نہ تحفظ، نہ عزت۔ اس غلامی کی زنجیریں، جو صاف نظر بھی نہیں آتیں، توڑنا آسان نہیں۔ ہمارے ہی بھائی اس زنجیر کی کڑیاں ہیں۔ کسی بھی تبدیلی کے لئے ہم سب کو مل کر، اور یہ لازم ہے کہ مل کر، خود سے آگے نکل کر، خود کو زد میں لاتے ہوئے، بڑھنا ہوگا۔

تمام وہ تنظیمیں جو ملک میں بہتری چاہتی ہیں، چاہے وہ سیاسی ہوں، مذہبی، یا صرف معاشرتی، یا کوئی اور، اُن کو اپنا کردار ادا کرنا ہو گا۔ جو کچھ بھی وہ کر رہے ہیں، وہ تو ہوتا ہی رہے گا، یہ وقت ہاتھ سے نکل جائے گا۔ حوصلہ تو کرو۔ دین پھر پھیلا لینا، معاشرے کے مسائل پھر حل کر لینا، کتابیں پھر پڑھ لینا۔ جب انصاف کا نظام قائم ہوگا، تو عوام کے آدھے مسائل تو خود بخود ہی حل ہو جائیں گے۔ پھر دین خود پھیلے گا، تبلیغ گھر گھر پہنچے گی۔ اور کیا یہ اللہ کا حکم نہیں کہ اُس کی سرزمین پر اللہ سے ڈرنے والوں کا نظام ہو؟ تو کیا آدھا دین چھوڑ دو گے؟

اگر آج، ہم سب، جو ایک ہی منزل چاہتے ہیں، اپنی تنظیم یا گروہ کے مفادات یا ترجیحات کو پیچھے چھوڑ کر اکٹھے نہیں ہوتے، تو صرف شکست ہی ہمارا مستقبل ہے۔ سب مل کر اللہ کی رسی کو مضبوطی سے تھام لو۔ اللہ کا یہی حکم ہے، اور وقت کا تقاضا بھی یہی۔ اور گھسے پٹے راستے چھوڑ کر ایک نئی راہ، ایک نیا نظام تلاش کرو۔ یہی ہمیں منزل کی طرف لے جاسکتا ہے۔ موجودہ راستہ گول ہے، کتنی بار تو دیکھ چکے، گھوم کرو ہیں آجاتا ہے۔

عوام کو قیادت چاہیے جو انہیں جوڑے، نظم و ضبط کے ساتھ کوشش اور قربانی پر آمادہ کرے۔ صبح میں یقین دلائے اور پھر ثابت قدم رکھے۔ یہ موجودہ تنظیموں سے ہی مل سکتی ہے۔ اگر آپ سب مل کر کام کریں، تو ہی۔ یہ نہ سوچیں کہ میرے کام کا اس سے کیا تعلق۔ اپنے اپنے مصلے پہ بیٹھنے سے بات نہیں بنے گی اور نہ ہی تنظیموں کے بیچ قیادت کی دوڑ اس ملک کے مسائل حل کر سکتی ہے۔

اس وقت کوئی ایسی قیادت منظرِ عام پر نہیں جس پر پوری قوم بھروسہ کر سکے۔ آج انفرادی قائد کی نہیں بلکہ اجتماعی قیادت کی ضرورت ہے۔ ایسی قیادت جو تمام مکتبہ فکر کی نمائندگی کرتی ہو، جو سب کو جوڑ سکے۔ اس کا صرف یہی حل ہے کہ قوم کے معتبر بزرگان کی ایک ایسی مرکزی تنظیم تشکیل دی جائے، جو تمام کی نمائندگی کرے اور عوام میں مقبولیت حاصل کر کے خود کو اُس مقام تک پہنچائے کہ ان کی جانب سے فیصلے کرنے کی مجاز ہو۔ اسی کی مشابہ ایک مجلس بزرگان (Council of Elders) جنرل حمید گل صاحب نے بھی تجویز کی تھی۔ یہ مرکزی تنظیم انقلابی کونسل کے طور پر کام کرے، اور تبدیلی مکمل ہونے پر موقوف ہو جائے۔ یہ اجتماعی قیادت باہمی مشاورت سے منزل متعین کرے، راہ تلاش کرے اور اُس پر چلنے کا طریقہ وضع کرے۔ ملک میں ہر سطح پر تنظیم سازی کی جائے، پھر اپنی آواز اٹھائیں اور عوام کو تیار

کریں۔ اس کے بعد نظم و ضبط کے ساتھ، پُر امن طریقے سے اپنے نکتہ نظر کی طاقت کا مظاہرہ کریں۔ یہ آپ کا جمہوری حق ہے۔ اور سپریم کورٹ اور فوج کو باور کرائیں کہ ہم نظام کی تبدیلی چاہتے ہیں۔

اس حقیقی تبدیلی کے دو بڑے عنصر ہیں، فوج اور عوام۔ اگر عوام واقعی تبدیلی چاہتے ہیں، تو فوج کا سپاہی اُن کا ساتھ دے گا۔ آج فوج کو شدت سے اپنی کوتاہیوں کا احساس ہے کہ بار بار مارشل لاء لگانے سے نہ صرف یہ کہ ملک کھوکھلا ہو چکا ہے، بلکہ اس ملک کی فوج بھی داغدار ہو گئی ہے۔ فوج بھی یہی دیکھتی ہے کہ اس نظام کی تبدیلی ہماری سالمیت کے لئے لازم ہے۔ اس ہی بنیاد پر ہر مارشل لاء کے لئے فوج اپنے کمانڈر کا ساتھ دیتی رہی ہے۔ آج فوج پر یہ لازم ہے کہ اپنے ماضی کی کوتاہیوں کا مداوہ کرے اور قوم کو اُس راہ تک پہنچائے جو منزل کو جاتی ہے۔ صرف اس ہی طرح فوج کی عزت قوم کی نظروں میں بحال ہو سکتی ہے۔ ہر فوجی کو انفرادی طور پر نہیں بلکہ فوج کے ادارے کی حیثیت سے سوچنا ہوگا اور پاکستان کا غم اپنا غم سمجھنا ہوگا۔ اسی میں ہماری آزادی ہے اور اسی میں ہماری بقا۔ یہی راہ ہمارے بہتر مستقبل کی ضامن ہے۔ آج فوج نہ ہی سیاست سے باہر ہے اور نہ ہی رہ سکتی ہے۔ اب اتنا کچھ کر لینے کے بعد، کنارہ کشی زیب نہیں دیتی۔ اگر آج ہاتھ نہ بڑھایا تو کل جب مجبوراً یہ تبدیلی آئے گی، تو ملک میں خون خرابہ ہوگا۔ اس بار فوج کو عوام کا ساتھ دینا ہوگا۔ یہی اللہ کی فوج اس قوم کے سویرے کی ضامن ہے۔

جب منظم عوامی تحریک سڑکوں پر نکلے گی اور ڈٹی رہے گی تو حکومت کو کرسی چھوڑنی پڑے گی۔ ان حالات میں کسی صورت فوجی حکومت کسی کو بھی قبول نہیں ہوگی، نہ عوام کو اور نہ ہی فوج کو۔ سپریم کورٹ انقلابی کونسل کو، عوام کی واضح نمائندگی کی بنیاد پر، با اختیار کرے۔ یہ کونسل پھر فوج سے مذاکرات کرے اور انقلابی کونسل کے تحت ایک عارضی حکومت لگا کر ایک نیا نظام تشکیل دیا جائے۔ پھر اس نظام کے مطابق الیکشن کروا کر نئی حکومت وجود میں لائی جائے۔ فوج بغیر مداخلت کے، تمام تبدیلی کی پشت پناہی کرے۔

یہی ایک راہ ہے جس پر چل کر فوج اپنا حق ادا کر سکتی ہے، ورنہ یہ تاثر قائم رہے گا کہ فوج پاکستان کی نہیں بلکہ فوج سمجھتی ہے کہ پاکستان اُس کا ہے۔ فوج کی اعلیٰ قیادت کو آج اس بات کا احساس ہے کہ ملک کی سالمیت اور فوج کی بہتری اسی میں ہے کہ فوج بجائے عوام کا سہارا اور تائید طلب کرنے کے، عوام کا ساتھ دے۔ اب اتنا کچھ کر لینے کے بعد فوج سیاست سے باہر بیٹھ کر ملک کے ڈوبنے کا تماشا نہیں دیکھ سکتی۔ اپنی ذمہ داری کا احساس کریں اور ملک بچانے کے لئے ہاتھ بڑھائیں۔ ملک ڈوب رہا ہے اور اس کے ڈوبنے میں آپ کی کوتاہیاں بھی شامل ہیں۔ کیا آپ اس قوم کی امید و یاس سے بھری آنکھوں کو پانی کی سطح سے نیچے ہوتا دیکھتے رہیں گے؟ اپنے تحفظ سے باہر نہیں نکلیں گے؟

اس تبدیلی میں یہ خوف ضرور رہے گا کہ فوجی قیادت، یا اس کے دباؤ پر عارضی حکومت، طاقت سنبھال لے اور اپنی جگہ سے ہٹنا نہ چاہے۔ یا نظام کو تبدیل کئے بغیر الیکشن اس طرز کے کروائے جائیں کہ من پسند حکومت بٹھائی جاسکے۔ ان خدشات کو دور کرنے کے لئے پہلی ضرورت تو یہ ہے کہ سپریم کورٹ اس تبدیلی کی توثیق کرے۔ پھر لازم ہے کہ انقلابی قوتیں اُس وقت تک قائم اور متحرک رہیں جب تک اُن کے تحت عارضی حکومت پوری طرح با اختیار نہیں ہو جاتی، اور انقلابی کونسل مطمئن نہیں ہوتی۔ اگر کسی نے امریکی ایجنڈے کو سہارا دینے کی کوشش کی تو یقیناً ملک خانہ جنگی میں اُلجھ جائے گا۔ یہی ان کا ایجنڈا ہے۔ اس کام پر اکسانے کے لئے کئی ہتھکنڈے استعمال کئے جاسکتے ہیں۔ عین موقع پر ہندوستان کی فوج بارڈر پر آسکتی ہے، امریکہ اور اسرائیل سے حملے کی دھمکیاں مل سکتی ہیں، معاشی بائیکاٹ ہو سکتا ہے، ایٹمی طاقت غلط ہاتھوں میں آنے کا کہرام برپا کیا جاسکتا ہے اور سب بڑھ کر یہ کہ عوام کی پُر امن اور منظم تحریک کو فوج سے تصادم کا رنگ دیا جاسکتا ہے۔ ان سب کا مقصد یہ ہوگا کہ فوج یا اُس کے زیر نگرانی ایک کٹھ پتلی حکومت اقتدار سنبھال لے اور امریکہ کا کھیل چلتا رہے۔ ملک کو آگ میں جھونک دیا جائے۔

اگر ہم ان خدشات کے خوف سے یہ سوچنے لگیں کہ اُس راستے پر کیوں چلیں جس پر ایسے اندیشے لاحق ہوں، تو یہ جان لینا بھی ضروری ہے کہ ہم آج بھی خانہ جنگی کی طرف ہی بڑھ رہے ہیں۔ خانہ جنگی کے خدشے کا اظہار تمام سیاسی قوتیں بھی کر رہی ہیں اور فوج کے سربراہ بھی اس طرف صاف اشارہ کر چکے ہیں۔ ہمارے حکمرانوں کے آقا، شیطانی منطقوں کے بیوپاری، جانتے ہیں کہ بھوک اور افلاس میں رستا خون، اس قوم کو اٹھنے پر مجبور کر دے گا۔ امن مٹ جائے گا۔ پھر اس غربت کی نفرتوں کے سیلاب میں، کھاتے پیتے گھرانوں کو ڈبودیں گے۔ ہماری ہی سرکار اور ہمارا ہی میڈیا تابعداری میں حاضر ہوں گے۔ کہیں گے یہی پیسے والے ہیں جن کی وجہ سے تم دکھوں میں رہتے تھے، یہی تمہارے دشمن ہیں۔ ملک میں آگ لگا دیں گے۔ بڑے بڑے سب مال بٹور کر، ملک چھوڑ کر بھاگ جائیں گے اور ان کے کارندوں کے ہاتھوں میں پلے ہوئے غنڈے آگ کو اور پھیلائیں گے۔ یہ گھناؤنی سازش ان کی ہانڈیوں میں پک رہی ہے۔ دسترخوان بچھا چکے ہیں۔ ذرا غریب کے خون میں اُبال آجائے، یہ اونچ نیچ کی کڑیاں ایک دوسرے کو نوچ نوچ کر کھالیں گی۔ جس دنیا میں انصاف نہیں، امن کیسے ہوگا؟ یہاں صرف نفرتیں ہی کھیلیں گی، خون کے فتواروں میں۔ جب وقت ان کی مرضی کا ہوگا تو وہ ہمیں اس آگ میں جھونک دیں گے۔ ابھی وہ عرب دنیا میں اُلجھے ہوئے ہیں۔ ابھی وقت ہے۔ خیال رہے کہ اس کھیل میں درست وقت نہایت اہم ہے۔ ہم اس تبدیلی میں جتنی تاخیر کریں گے، گھاٹا اٹھائیں گے۔

دستے، خرابی پھیلانے کی کوشش کریں گے، تاکہ فوج اور عوام آپس میں الجھ جائیں۔ ہمیں ہر صورت اس سے باہر رہنا ہوگا اور فوج کو دکھانا ہوگا کہ ہماری ساری کوشش پُر امن ہے۔ پھر فوج عوام کا ساتھ دے گی۔

ہمیں لازم ہے کہ ملک کے حالات بہت زیادہ بگڑ جانے سے پہلے ہی ہم اس نظام کو بدل دیں۔ اکٹھے ہو کر، عوام کی رنجشوں کا احساس لئے ایک پلیٹ فارم پر جمع ہو جائیں، اور اس امر کا یقین (ensure) کریں کہ کسی صورت بھی نفرتوں کو ہوا نہ دی جائے، شدت کا مظاہرہ نہ کیا جائے۔ کسی صورت نہ گھراؤ جلاؤ کی بات ہو اور نہ ہی کہیں ہتھیاروں کا استعمال۔ نہ ہی املاک کو نقصان پہنچانے کی اللہ اجازت دیتا ہے، نہ ہی لوٹ مار کی، اور نہ ہی کسی کا خون بہانے کی۔ اگر ہم نے بھی ایسا ہی کیا، تو پھر حکمرانوں میں اور ہم میں کیا فرق رہ گیا؟ اپنی آواز صرف پُر امن اور تہذیب یافتہ قوموں کی طرح اٹھائی جائے، بہت نظم و ضبط کے ساتھ۔ اس ہی لئے لازم ہے کہ محب وطن تنظیمیں اپنا کردار ادا کریں۔

غیر سیاسی عارضی حکومت کے قیام کے بعد، انقلابی کونسل کے تحت دانشوروں اور ماہرین کی ایک ٹیم چنی جائے جو نیا نظام تشکیل دے۔ آج مینجمنٹ سائنسز کہاں سے کہاں پہنچ چکی ہیں۔ ہمارے ملک میں بھی اس شعبے کے بڑے بڑے عالم موجود ہیں۔ ہم پھر بھی الجھے ہوئے پرانے دستوری راستوں پر چلتے ہیں۔ پولیٹیکل سائنس اور مینجمنٹ کو اکٹھا کریں، پھر کوئی نتیجہ نکالیں۔ صرف سیاسی نظام کا ڈھانچہ ہی بدلنا ضروری نہیں، حکومت کی تمام انتظامی مشینری اور محکموں کے قوانین اور کارکردگیاں بھی زیر جائزہ لانی ہوں گی، جس میں قانون نافذ کرنے والے اور ٹیکس سے متعلق ادارے نہایت اہم ہیں۔ پھر تمام چیزوں کی جڑ ہماری عدالتوں کے نظام میں ہے۔ اس نظام سے بھی اگر انصاف نہ ملے تو پھر کچھ ٹھیک نہیں ہو سکتا۔ اسے بھی سنوارنا ہوگا۔ یہاں جج پر قدغن لگنی بھی ضروری ہے۔ ان تمام کاموں میں کافی وقت لگے گا۔

شروع میں سیاسی نظام کا ڈھانچہ تیار کیا جائے، جس میں عوام کے وہ نمائندے اُبھر سکیں جو اپنی قابلیت، صلاحیت اور کردار کی بنیاد پر حکمرانی کا حق رکھتے ہوں۔ اس کے لئے ضروری ہوگا کہ چناؤ کا کوئی ایسا نظام بنائیں، جس میں ایسے لوگ اُبھر سکیں جو واقعی عوام کی خدمت کرنے کے اہل ہوں۔ جاگیرداری نظام کا خاتمہ، آزاد اور شفاف الیکٹورل سسٹم کا قیام جس میں قائد کے طور پر ابھرنے کے لئے سرمایہ کاری نہ کرنی پڑے، فوری فیصلہ کرنے کے الیکٹورل کورٹس، اور اس طرح کے تمام مضامین پر غور کیا جائے۔ دوسرے ممالک کے نظاموں کا بھی جائزہ لیا جائے۔

بارہواں سفر نئی جہت

اس دوران عارضی حکومت احتساب اور الیکشن سے متعلق اداروں کو مضبوط کرے اور احتساب کا عمل شفاف طریقے سے شروع کیا جائے۔ دانشوروں کی ٹیم آئین کے علاوہ انتظامی مشینری میں بہتری لانے کے لئے بھی کام شروع کرے، تاکہ بہتر نظام کے نفاذ میں تاخیر نہ ہو۔ آئین کا مسودہ تیار ہونے کے بعد اس پر عوامی بحث ہو۔ اور جب نیا آئین تشکیل پا جائے، تو قوم سے ریفرنڈم کے ذریعے اس پر اعتماد حاصل کیا جائے۔ یہ اصل قومی آئین ہوگا، عوام کا منظور کیا ہوا۔ پھر اس کے مطابق الیکشن کرا کر نئی حکومت وجود میں لائی جائے۔ اس کام کے لئے شاید ایک سال کا عرصہ درکار ہو۔

ہم حوصلہ کریں تو کیا نہیں کر سکتے؟ کیوں ہم ڈر ڈر کر پرانے راستوں پر ہی چلیں۔ کیوں ایسا نظام تشکیل نہیں دے سکتے جس میں ہم میں سب سے بہتر لوگ ہمارے اجتماعی مفادات کا تحفظ کریں۔ لیٹرے ہی ہم خود چن کر اپنے سروں پر نہ بٹھالیں۔

اٹھ کہ اب بزمِ جہاں کا اور ہی انداز ہے *

ہم انصاف کو امن پر ترجیح دیتے ہیں۔ ایسا امن ہمیں قبول نہیں جس میں طاقتور کمزور کو لوٹتا رہے۔ ایسے امن کے وہی پجاری ہیں، جو ظلم کرتے ہیں اور چاہتے ہیں کہ سب خاموشی سے اُن کا ظلم سہتے رہیں۔ امریکہ کے ملازم حکمران بھی اور بڑی بڑی کاروباری طاقتیں بھی، اُن کا خون چوستی رہیں۔ امن سے۔ کوئی آواز نہ اٹھائے۔ کوئی لوگوں کو نہ جھنجھوڑے۔ کوئی امن خراب نہ کرے۔ کوئی کشتی نہ ہلائے۔ مگر کشتی تو ہل رہی ہے۔ متلاطم موجیں آنے والے طوفان کا پیش خیمہ ہیں۔ امن ختم ہونے کو ہے۔

اگر ہم موجودہ طرز پر، امریکہ کی گرفت میں، لڑھکتے لڑھکتے تباہی کے دہانے پر پہنچتے ہیں، تو وہ وقت امریکہ کا چنا ہوا ہوگا۔ اس موڑ پر تمام امریکہ کے پالے ہوئے دہشت گرد بھی اسلام کے نام پر ہم سے برسرِ پیکار ہوں گے۔ گروہوں میں تصادم ہوگا۔ فوج پر گولیاں چلیں گی۔ یہاں سے واپسی کا راستہ نہیں۔ پھر انجام وہی ہوگا جو وہ چاہتے ہیں۔ اگر امریکہ اس خطے پر وارد نہ ہوا ہوتا، تو بات اور تھی۔ آج بات اور ہے۔ وہ اپنے من پسند نظام کو یوں بدلنے نہیں دیں گے۔ اس میں اُن کا کھیل بھی شامل ہوگا، اور وہ منجھے ہوئے کھلاڑی ہیں۔ آج اُن کے کارندے پاکستان کے کونے کونے میں، ہر قسم کی خرابی پھیلانے کو، تیار بیٹھے ہیں۔ دنیا پر اُن کی ساکھ کا سکھ جما ہے۔ ہم دیکھ رہے ہیں کہ وہ مسلم دنیا میں کیا کر رہے ہیں۔ اُن کے کھیل کو سمجھتے ہوئے ہی آگے بڑھنا ہوگا۔ اس سیاسی نظام سے چھٹکارا پانا اتنا آسان نہیں، جتنا کاغذ پر بکھری چند سطور ظاہر کرتی ہیں۔

ہمیں یہ سمجھنا ہوگا کہ جب ہم امریکہ کے اتحاد سے باہر آنے کی بات کرتے ہیں، تو چاہے ہم کسی طرز کے نظام میں رہنا چاہتے ہوں، امریکہ کی دشمنی ہر صورت مول لیں گے۔ اگر سیکولر نظام کو برقرار رکھتے ہوئے امریکہ اور NATO کے اتحاد سے باہر آجائیں تو اپنے "سٹریٹیجک پارٹنر" سے بھی دشمنی مول لیں گے، اور خطے میں مشتعل اسلامی طاقتوں کو بھی مطمئن نہ کر پائیں گے۔ مغربی طاقتوں سے برسرِ پیکار بھی ہوں گے اور طالبان کو مستحکم اور مضبوط بھی کر دیں گے۔ پھر دونوں ہی سے محاذ آرائی رہے گی۔ نہ اس کنارے لگیں گے، نہ اُس کنارے۔ اگر امریکہ کا ہاتھ چھوڑ کر بھی، موجودہ سیکولر راہ پر ملک کو گھسیٹا گیا تو ہم آپس میں لڑ کر تباہ ہو جائیں گے۔ امریکہ کا یہ کھیل ہمیں واضح طور پر دکھائی دے رہا ہے۔ یہ امیر اور غریب کی جنگ ہوگی، اور دونوں ہی جل مریں گے۔

بارہواں سفر نئی جہت

اب یہاں سے نکلنے کی کوئی راہ نہیں، سوائے اس کے کہ اللہ کا نام لے کر اپنے پاؤں پر کھڑے ہو جائیں۔ آج پاکستان کے اندرونی اور بیرونی ماحول میں اسلامی نظام ہی حالات کو قابو میں لاسکتا ہے، ایک کرپٹ نظام کی پیدا کردہ آفتوں کو بھی، دہشت کی اس فضا کو بھی اور امریکہ کے خوفناک عزائم کو بھی۔ اور یہی ایک نظریہ ہے جو اس قوم کو اتنے بڑے چیلنج کے مقابلے کے لئے تیار کر سکتا ہے۔ اسی جھنڈے تلے قوم متحد ہو سکتی ہے۔ اب یہی ایک مرکز ہے۔ دین کے نظام کے سوا کوئی ایسا نظام نہیں جو ہمارے خطے میں متحرک طاقتوں کو اپنے اندر سمو کر ٹھنڈا کر سکے، چاہے وہ حق پرست جنگجو ہوں، دہشتگرد ہوں، فرقہ وارانہ تنظیمیں یا کراچی اور بلوچستان کی آگ۔ صرف اللہ پر بھروسہ ہی ہمیں اس نام نہاد دنیا کے حاکم سے ٹکرانے کا عزم دے سکتا ہے۔ آج دین کا نظام ہی امن اور چین کی گارنٹی ہے، اس کا گہوارا ہے۔ ایک آخری امید ہے۔

ایسا ہوتے ہی دشمنوں کے ایجنٹ ہماری عوام میں سے، دین کے نام پر، ہمارے خلاف لوگوں کو دہشتگردی کے لئے ریکروٹ نہیں کر سکیں گے۔ یوں ہمیں ایک طرف سے تحفظ مل سکے گا۔ ہمارے پاس اس راہ کے علاوہ اور کوئی راستہ نہیں۔ ہم امریکہ کے ڈالروں پر اور اللہ کے نام پر لڑنے والے، دونوں سے بیک وقت تصادم نہیں لے سکتے۔ ایک راستہ چننا ہوگا، ایک کو ساتھی بنانا ہوگا۔ اب تک کفر کا ساتھ دے رہے تھے۔ انجام ہمارے سامنے ہے۔ اُن کی دوستی کی شرائط ہمیں منظور نہیں: ایٹمی طاقت کو خیر آباد کہو، بلوچستان ہمارے حوالے کرو، فوج گھٹاؤ، ہندوستان کے زیر سایہ رہو، اپنا کاروبار ہماری منشا پر چلاؤ، تمہارے معدنی وسائل ہمارے ہونے، اپنے دریا سوکھنے دو، ہندوستان سے پانی خریدنے کی قیمت چکاتے رہو اور اللہ سے منہ موڑ کر ہماری تہذیب اور طرز زندگی اپناؤ۔ صرف دنیا داری کے اصولوں پر زندگی کو ڈھال لو، جسے اللہ اللہ کرنا ہے گھر بیٹھ کر کرے۔ مغلو بیت میں جیو۔ اپنے بچوں کو ہمارے حوالے کر دو، انہیں اچھے بُرے کی تمیز ہم سکھائیں گے۔

اللہ کا نام لینے والے اتنے خوفناک نہیں، جیسے دکھائے جاتے ہیں۔ کارگر پروپیگنڈا جھوٹ کو سچ بنا دیتا ہے، اور اب اس آرٹ میں بہت ترقی ہو چکی ہے۔ ہمارے چند دانشوروں کی مدد سے، امریکہ کے پروپیگنڈے نے ہمیں طالبان سے بہت ڈرایا ہے۔ مقصد طالبان سے ڈرانا نہیں تھا، دین سے ڈرانا تھا، اس کے نظام سے متنفر کرنا تھا۔ طالبان کے بارے میں ہم جو جانتے ہیں وہ ان ہی کی پروپیگنڈا مشین سے نکلا ہوا ہے، جس میں ہماری حکومت اور میڈیا کھل کر شامل ہیں اور ہمارے ملک کے بہت سے پڑھ لکھے، پیسے والے لوگ بھی۔ ذرا خود سوچو۔ ایک پُر امن ماحول میں جب کوئی نئی حکومت آتی ہے، تو اُن سے توقعات کرنے سے پہلے، ہم اُن کو وقت دیتے ہیں کہ وہ سنبھل جائیں۔ افغانستان کے طالبان تو جنگ میں ملوث تھے، انہیں تو سنبھلنے کا موقع ہی نہیں ملا۔ افغانستان میں تھا ہی کیا، جس کی بنیاد پر وہ کوئی نظام چلا سکتے؟ پورا ملک تباہ حالوں، سالہا سال سے جنگ میں پھنسا ہوا تھا۔ جیسے علم و شعور والے لوگ تھے، اور جو حالات تھے، اور جو وقت انہیں ملا، اُس میں جو کچھ بھی کر سکے، قابل ستائش ہے۔ کمال ہے کہ افغانستان جیسے علاقے کو ہتھیاروں سے پاک کر دیا، صرف اُن کے سپاہیوں

کے پاس ہتھیار تھے، اور کسی کے پاس نہیں۔ جو حصے اُن کے قبضے میں تھے مکمل طور پر پُر امن تھے۔ اگر آپ اپنے بال بچوں کے ساتھ سفر کرتے، تو کہیں بھی سڑک کے کنارے رات گزار سکتے تھے۔ کسی کی مجال نہیں تھی کہ وہ آپ کو تنگ کرتا۔ نہ کہیں چوری ہوتی تھی، نہ ڈاکہ پڑتا تھا، نہ کوئی واردات ہوتی تھی۔ افغانستان، جو آج دنیا میں سب سے زیادہ منشیات پیدا کر رہا ہے، منشیات سے پاک تھا۔

اُن جنگجو لوگوں سے، جن کی ساری نسل ہی مورچوں میں پیدا ہوئی، ان حالات اور اس عرصے میں اس سے زیادہ کیا توقع رکھی جائے؟ کوئی باقاعدہ فوج نہیں تھی، بے نظم و ضبط ہتھیاروں سے لیس آزاد جھٹے تھے۔ نہ کوئی حکومت چلانے کا انتظام، نہ کوئی نظام، نہ پولیس، نہ کچھریاں، نہ ہی کوئی مواصلات کا نظام، نہ اتنے باشعور لوگ۔ جو اُن کا ساتھ دیتے تھے، اُن میں بہت سے جرائم پیشہ لوگ بھی شامل ہو گئے تھے۔ اُن کی وہ کیا پہچان کرتے؟ جو سخت سزائیں لگائی تھیں، وہ شاید اُس ماحول اور اُن حالات میں لازم تھیں۔ اگر سال میں چار لوگوں کے ہاتھ کاٹے اور تمام آبادی محفوظ نیند سو رہی تو کیا برا ہوا؟ اگر دو کو سنگسار کیا اور باقی سب کی عزت محفوظ ہوئی تو کیا برا ہوا؟ آج جو لڑکیوں کے سکولوں پر اور برقعوں پر چڑتے ہو، تو کیا یہ وجہ تھی جس سے افغانیوں کے گھر اُجڑ گئے، افغانستان تباہ ہوا؟ چھوٹے چھوٹے مسائل میں اصل مسئلے کو کیوں دھندلا دیا؟ یہی پریگنڈہ کا زور ہے۔ اور کیا ایسے مسائل جنگ سے حل کئے جاتے ہیں؟ ملا عمر سے جب لڑکیوں کے سکولوں کے بارے میں پوچھا گیا تو اُس نے کہا کہ ابھی ہم حالت جنگ میں ہیں، انہیں تحفظ نہیں دے سکتے، جب امن ہوگا ان کے سکول بھی کھل جائیں گے۔ کہنے لگا، جب دین لڑکیوں کی تعلیم کو منع نہیں کرتا تو میں کیسے منع کر سکتا ہوں۔ وہ ہر رات، سونے سے پہلے، وائرلیس پر تمام کمانڈروں سے سپاہ کی خیریت دریافت کرتا تھا۔ پوچھتا تھا کہ کیا سب نے کھانا کھا لیا، پھر خود کھاتا تھا۔ ہمارے پاس ہے کوئی ایسا؟ ہے کوئی ایسا جو ایسی استقامت رکھے کہ دین کی راہ نہ چھوڑے، ایک مسلمان کو کافروں کے حوالے نہ کرے، چاہے اُس کی سلطنت چلی جائے، اور سالہا سال پتھروں پر سونا گوارا کرے، چھپتا پھرے؟ اگر اس نظام کو کچھ پُر امن وقت دیا جاتا تو یقیناً ہمارے سامنے ایک بہتر مثال قائم ہو سکتی تھی۔ ہماری موجودہ حالت سے تو بہتر ہی مثال ہوتی۔ اتنی مجبوریوں کے باوجود بھی اتنا کچھ جو کر پائے، صرف اس لئے کہ اللہ کے دین کی راہ پکڑی تھی، گرتے بھی تھے سنبھلتے بھی۔ منزل بھی پا ہی لیتے۔ یہی خطرہ تھا، کہ یہ نظام کہیں پنپنے نہ لگے، کہ اس کو جڑوں سے اُکھیرنا امریکہ کو لازم ہوا۔

ہم پڑھے لکھے، باشعور لوگوں نے، سب کچھ ہوتے ہوئے بھی، اتنے طویل عرصے میں پاکستان سنوارنے میں کیا کمال حاصل کر لیا، جو اُن پرائیڈ اٹھاتے ہیں؟ آج ہم میں سے کس کی عزت محفوظ ہے، کس کی املاک؟ ہمارے تھانوں میں کیا ہوتا اور کچھریوں میں کیا؟ کتنی لڑکیاں اغوا ہوتی ہیں، کتنی طاقتوروں کی بھیٹ چڑھتی ہیں؟ جرائم کی کس حد کو ہم نے قبول کیا ہوا ہے؟ سڑکوں پر کتنا خون روز بہا جاتا ہے؟ انصاف کہاں ہے؟ اور امن؟ بلکہ اب تو یہ بھی بھول گیا کہ انصاف کیا ہے اور امن کیا۔ پھر بھی ہم خود کو اُن سے بہتر تصور کرتے ہیں۔ پُر امید ہیں۔ سیکولر سوچوں کو اتنی مہلت، اور دین کے نظام پر ایسی تنگی! آج کل کے دور میں تصویریں اتنی سادہ نہیں ہوتیں، جتنی پروپیگنڈہ مشین سے دکھائی جاتی ہیں۔

بارہواں سفر نئی جہت

افغانستان کا غریب مجاہد اتنی بڑی طاقتوں سے کیسے لڑے؟ بم دھماکے اور خودکشی حملے اس کی ایجاد تو نہیں، یہی ہمیشہ سے کمزور کا ہتھیار رہا ہے۔ آج اسے گناہ قرار دیا جا رہا ہے۔ کل تو ہم نے راشد منہاس کو خودکشی پر نشان حیدر دیا تھا! اور ٹینکوں کے نیچے بارودی سرنگیں اپنے جسم سے باندھ کر لیٹنے والوں کے لئے نور جہاں نے گیت گائے تھے! جاپان کے کامیکازے (kamikaze) پائلٹ دنیا کے ہیرو تھے۔ آج کیا ہوا؟ کیا ہمارے آقاؤں نے منع کر دیا؟ اس ہی طاقت سے تو وہ ڈرتے ہیں۔ دین میں جو خودکشی حرام ہے وہ اللہ سے ناامیدی پر اپنی جان لینا ہے، اللہ کی راہ میں اپنی جان فدا کرنا نہیں۔ اور اگر ہے تو پھر جاں نثاری کیا ہے؟ میں اگر دشمن کے ہاتھوں پکڑا جاؤں، اور تمام ایٹمی تنصیبات کی خفیہ اطلاع رکھتا ہوں، اور جانتا ہوں کہ یہ مجھ سے حاصل کر لی جائیں گی، تو کیا اُن کو اپنے راز بتا کر اپنی جان بچاؤں، یا پاکستان کی سلامتی کی خاطر جان دے دوں؟ کچھ تو سوچو۔

کرائے کے عالمو، اللہ کی آیتوں کو یوں تھوڑی سی قیمت پر فروخت نہ کرو۔ جب گھنٹہ بھرٹی وی پر بیٹھ کر دین کے نام پر دہشت گردی کے خلاف منطقیں جھاڑتے ہو، تو یہ کہنا کیوں بھول جاتے ہو، کہ ہم اللہ کے تمام احکامات کے خلاف افغانستان میں کافروں کے ساتھ مل کر مسلمانوں کا قتل عام کر رہے ہیں، جس کے نتیجے میں ہمارے ملک میں آج آگ لگی ہے؟ ہم ہی دہشتگرد ہیں۔

اور اگر اس مسئلے کو دین سے باہر رہ کر سیکولر آنکھ سے ہی دیکھنا ہے، جسے تم ہوشمندی اور دانائی کہتے ہو، تو پھر حرام حلال کی کہانی کہاں سے بچ میں لے آئے؟ پھر دین سے باہر ہی رہو، اور خودکشی کو ایک غریب جنگجو کا ہتھیار ہی سمجھو۔ جب دین کے خلاف جنگ کا اعلان کر ہی دیا، تو پھر جنگ میں کون سا ہتھیار استعمال ہوتا ہے، اس سے تمہیں کیا؟ جو دین کے لئے لڑتے ہیں وہ جانیں، اور اُن کا رب۔ معصوم مسلمان عورتوں اور بچوں پر تو تم بھی اپنی مرضی کے ہتھیار استعمال کر رہے ہو، یہ حرام نہیں؟ جو تو پچانے اور جیٹ سے گولے گرا کر گاؤں کے گاؤں تباہ کرتے ہو، وہ تم پر کس نے حلال کیا؟ کافروں نے؟ یا اُن کا ساتھ دینے والے منافقین نے؟ کیا یہ دہشت گردی نہیں ہے؟ وہ جو صرف اللہ کا نام لے کر کھڑے ہیں، جو پیسے کے لئے نہیں لڑتے اور نہ ہی کسی کے مجبور کرنے پر، وہ جو ہنس کر جان دیتے ہیں، اُن کا یہی ہتھیار ہے۔ اور تم پر کارگر ہے، اسی لئے چیختے ہو۔ کیا آج امریکہ اور اُس کے ساتھی ہمیں دین پڑھائیں گے؟

جو پاکستان کے اندر بازاروں اور مسجدوں میں بم پھٹتے ہیں، سب ہی امریکہ کے ساتھی کروارہے ہیں، تمہاری سہولت کے لئے، تاکہ تم مسلمانوں کو مجاہدین کے خلاف ورغلا سکو، امریکہ کا ساتھ دینے پر عوام کو اُکسا سکو، تاکہ حکومت کی امریکہ نواز پالیسیوں سے اختلاف نہ ہو۔ پھر اسلام کے احکامات سے لوگوں کو پھیر لو۔ مسلمانوں کے قتل و غارت میں تمہارا امریکہ کا ساتھ دینا، اللہ سے کھلی بغاوت ہے۔ دین کے نام پر دوسروں پر اُتگیاں اُٹھانے سے پہلے ذرا اپنے گریبان میں تو جھانکو۔ اللہ کے حکم سے منہ موڑنے کی ہی بنیاد پر ہمارے نوجوانوں کو دشمن

کے ایجنٹ ریکروٹ کرتے ہیں، اُن سے ہم پھٹواتے ہیں۔ جس کا گھر تم نے تباہ کر دیا، گھر والے جلا ڈالے، کیا وہ تمہارا ساتھ دے گا یا تمہارا دشمن ہوگا؟ وہ امریکنوں اور اُن کے ساتھیوں کا قتل حق سمجھتے ہیں۔ افغان مسلمانوں کے خلاف کفر کا ساتھ دینے والا بھی کافر ہی ہوگا، یا پھر منافق۔ امریکہ کے حق میں بولنے والو، اس جنگ کو ہماری جنگ کہنے سے پہلے ذرا سوچو۔ تم امریکہ سے پیچھے ہٹ جاؤ، کوئی مسلمان تم پر ہاتھ نہیں اٹھائے گا۔ اس کا کوئی جواز ہی باقی نہیں رہ جائے گا۔

کیا تمہارا جواز یہ ہے کہ تم FATA میں حکومت کی رٹ (writ) قائم کرنا چاہتے ہو؟ گوجر خان میں تو تم سے رٹ قائم ہوتی نہیں، FATA کہاں پہنچ گئے؟ پاکستان کے اس حصے نے تو کبھی تمہیں ستایا نہیں، حالانکہ تم نے کبھی انہیں پوچھا بھی نہیں، کہ کس حال میں ہو؟ آج کیا امریکہ کی خوشنودی کے سوا اور بھی کوئی مقصد ہے یہاں آنے کا؟ اور سواتی تو صرف اللہ کا نظام مانگتے تھے، کیا یہاں بھی کفر کی رٹ چلائی تھی؟ اور جوڈھنڈ وراپیٹے ہو، تو کیا سوات کو پُر امن کر لیا؟ تو پھر فوج کو واپس بلا کر دیکھو۔

مغربی پروپیگنڈا نے دنیا کو، اور ہمیں یقین دلانے کی کوشش کی ہے کہ پاکستان اگر ایک سیکولر مملکت نہ رہا، تو یہ ایک "جہادی" مملکت بن جائے گا، طالبان ناز ہو جائے گا۔ اور اپنی قوم کے لئے ظلم کا نظام قائم کرے گا، دنیا کے لئے ایک "ٹیرر مونسٹر" (Terror Monster) پیدا ہو جائے گا۔ اور دنیا کے پاس کوئی اور چارہ نہ ہوگا، سوائے اس کے کہ اسے تباہ کرے، مٹا دے۔ سب جھوٹ۔ اسلام تو محبت، امن اور بھائی چارے کا دین ہے، دہشت گردی تو کفر کی راہ ہے۔ اگر تم دین کو پاؤں تلے کچلنا چاہتے ہو، تو یقیناً اللہ کے مجاہد اُٹھ کر تم سے ٹکرائیں گے۔ ہاں، یہی کافر دہشت گرد ہیں اور الزام مسلمانوں پر لگاتے ہیں۔

ہم پڑھے لکھے باشعور لوگ ہیں۔ ہم اسلام کے خوبصورت رنگ پہچانتے ہیں۔ ہمارا اسلامی نظام ظلم کا نہیں ہوگا، حسین ہوگا۔ یہ صحیح ہے کہ ہمارا تجربہ ہمیں جہل ضیاء الحق کے دور کی یاد دلاتا ہے، جہاں حربی تنظیمیں ہتھیاروں سے لیس ملک میں دندناتی پھرتی تھیں، اور ریاکاری پر مبنی حکومت، انہیں تقویت پہنچا رہی تھی۔ ہم اس دور میں واپس نہیں جانا چاہتے۔ نہ ہی ہم طالبان جیسا نظام چاہتے ہیں اور نہ ہی ایران جیسا۔ ہمارے سامنے کوئی ایسا نظام نہیں جسے ہم ماڈل بنا کر اپنانا چاہیں۔ ہمارے لئے یہ واقعی ایک لیپ آف فیٹھ (leap of faith) ہوگا، مگر الحمد للہ ہمارا دین عقل و فہم سے ہٹا ہوا نہیں، ظلم اور جبر کو پسند نہیں کرتا۔

یقیناً یہ دین نور پھیلانے کے لئے آیا ہے۔ محبت اور بھائی چارے کا نور، امن اور خوشحالی کا نور۔ صرف مسلمانوں کے لئے نہیں بلکہ تمام انسانیت کے لئے، تمام مذاہب کے لئے۔ مسلمان کو حق نہیں کہ کسی پر انگلی اٹھائے یا کسی کی ذات پر حملہ کرے۔ ہمارا کلمہ حق ہے۔ قرآن

بارہواں سفر نئی جہت

ہماری مشعلِ راہ ہے اور آپؐ کی سنت ہماری راہ۔ محمدؐ نے ہمیں جھوٹ، نفرت، ظلم اور نا انصافی کے خلاف جہاد سکھایا اور محبت، اخوت، صبر و برداشت اور اخلاص کا سبق پڑھایا۔ یہی پیغام ہمیں دنیا کو دینا ہے۔

انشاء اللہ ہم ایک ایسا مثالی نظام لے کر اُبھریں گے، جو پہلے دن سے ہی سب کے لئے خیر لائے گا۔ ہمارے پاس اور کوئی راستہ ہی نہیں، یا تباہ ہو جائیں، یا دین کی سیدھی راہ اختیار کریں، جو محبت اور رحمت کا سرچشمہ ہے۔ اللہ کا یہی فیصلہ ہے اور اسی لئے اُس نے ظلمتوں سے پاک پاکستان بنایا اور اسلام آباد اس کے آزاد سر پر تاج سجایا۔ یہی اس ملک کی سر نوشت ہے، یہی تقدیر کا لکھا۔

بول، کہ لب آزاد ہیں تیرے
بول، زباں اب تک تیری ہے

تیرا ستواں جسم ہے تیرا
بول کہ جاں اب تک تیری ہے

دیکھ کہ آہن گر کی دُکاں میں
شد ہیں شعلے، سرخ ہے آہن

کھلنے لگے قُفلوں کے دہانے
پھیلا ہر اک زنجیر کا دامن

بول، یہ تھوڑا وقت بہت ہے
جسم و زباں کی موت سے پہلے

بول کہ سچ زندہ ہے اب تک
بول، جو کچھ کہنا ہے کہہ لے!
(فیض)

آخری سفر
منزل مقصود

دہر میں اسم محمدؐ سے اُجالا کر دے *

کچھ مسلمان شریعت کے نظام سے خائف ہیں۔ اُن کے ذہنوں میں اس معاشرے کی ایک شدت آمیز، تنگ نظر، جابرانہ اور ظلم کو چھوٹی ہوئی تصویر ابھرتی ہے۔ وہ اس سے بے جا خوف زدہ نہیں۔ کچھ ہم ہی دنیا داری میں بہت آگے نکل چکے ہیں، اور کچھ ہمارے دینی مدارس بھی رویہ سخت رکھتے ہیں۔ اُس معاشرے کے لئے جو خلفائے راشدین کے طور طریقوں سے بہت دور ہٹا ہوا ہے، یقیناً اچانک، بالجبر لائی ہوئی تبدیلی تکلیف دہ ہوگی۔ کہتے ہیں، "کیا تم ہمیں گھسیٹ کر ڈیڑھ ہزار سال پیچھے لے جانا چاہتے ہو؟ ایسے لوگ کہاں سے لائیں، جو اُن دنوں کے اصولوں پر چل سکتے ہوں؟" پھر یہ بھی کہتے ہیں، "کس کا اسلام؟ کتنے ہی تو فرقے ان مدرسوں نے پیدا کر دیئے ہیں۔ اس راستے پر تصادم ہی رہے گا اور قوم کے لئے ظلم"۔ پھر بھی اس ملک میں آج ایک جم غفیر اسلامی نظام چاہتا ہے۔

اسلامی نظام کے خد و خال کیا ہوں گے، ہمیں مل بیٹھ کر فیصلہ کرنا ہوگا۔ اس پر بہت کچھ لکھا گیا ہے۔ میں جو کچھ یہاں تجویز کر رہا ہوں وہ اس کے چند پہلوؤں پر میرے تاثرات ہیں۔ کئی مسلمان بھائی میری تجاویز سے اختلاف کریں گے، خاص کر دو پہلوؤں پر۔ پہلا یہ کہ جمہوریت کا تصور اسلامی نہیں۔ ان کا کہنا ہے کہ جب دین نے قوانین وضع کر دیئے تو پھر پارلیمنٹ کی کیا ضرورت رہ گئی۔ یقیناً موجودہ جمہوریت کا نظام اسلامی نہیں، لیکن میں سمجھتا ہوں کہ جمہوریت کا تصور بنیادی طور پر اسلام کے منافی نہیں، اور یقیناً سوچ بچار کے ساتھ ایک جمہوری اسلامی نظام تشکیل دیا جاسکتا ہے۔ یہ ہو بہو خلفائے راشدین کے نظام کی طرز کا تو نہ ہوگا، چونکہ اب زمانہ بہت بدل چکا ہے، لیکن یقیناً اسلامی اصولوں کی مناسبت سے ہی ہوگا۔ جب تمام قوانین قرآن اور سنت کے مطابق بنائے جائیں، پھر بھی پارلیمنٹ (چاہے اسے کوئی اور نام دے دیا جائے) کی ضرورت اس لئے رہے گی کہ روزمرہ کے بندوبستی مسائل کو حل کرنے کے لئے کچھ نہ کچھ قانون سازی کی ضرورت رہے گی۔ اس کے علاوہ پارلیمنٹ کا ہر رکن وفاق کے فیصلوں میں اپنے عوام کے مفاد کا تحفظ قانون سازی سے اور اپنے مشوروں سے کرے گا۔ ان مشوروں سے حکمران مستفید بھی ہوگا۔

ہمارے آئین میں، تمام عالم دین کے اتفاق رائے سے، لکھا ہوا ہے کہ ہمارے قوانین قرآن اور سنت کے خلاف نہیں ہوں گے، اور ذاتی قوانین اپنے اپنے فرقوں کے مطابق ہوں گے۔ اس پر کوئی جھگڑا نہیں ہے۔ تو "کس کا اسلام" کا جھگڑا تو پہلے ہی بنایا جا چکا ہے۔ یہ بے بنیاد مسئلہ صرف سیکولر حضرات نے ملک کو دین سے دور رکھنے کے لئے اُٹھایا ہے۔ اس سے کچھ آگے بڑھ کر یہ لکھنا ہوگا کہ ہمارے قوانین کا

* علامہ اقبال

آخری سفر منزل مقصود

سرچشمہ قرآن اور سنت ہوگا۔ یہ اس سمت میں ایک اہم اور بنیادی تبدیلی ہوگی اور فی الحال کے لئے کافی ہے۔ یہی تبدیلی تمام چیزوں پر اثر انداز ہو جائے گی۔ میں سمجھتا ہوں کہ قانون سازی کے وقت اس پر کوئی سنجیدہ تکرار نہیں ہوگی۔ جو بھی مسائل اٹھے، بخوبی سلجھائے جاسکیں گے۔

مسلمانوں کا فقہ (jurisprudence) قرآن اور سنت پر مبنی ہے۔ روزمرہ کے مسائل سے نبٹنے کے لئے، جہاں دونوں سے کوئی براہ راست حوالہ نہیں ملتا تھا، فقہاء نے ان کا جواب غور و فکر سے نکالا۔ اسلام کے مختلف مکتبہ فکر ان کو آخری بات سمجھتے ہیں، حالانکہ یہ اپنے وقت کی معاشرتی دانش اور فہم و فراست پر مبنی تھے۔ یقیناً اب اجتہاد کی ضرورت ہے، تاکہ ہمارے وقت کی ضرورت کے مطابق ان مسائل کو دیکھا جاسکے۔ یہ تب ہی ممکن ہوگا، جب دینی تعلیم عام ہو جائے گی اور ہم فرقہ واریت کی سوچوں سے باہر نکل سکیں گے، اور یہ خوف بھی نہیں رہے گا کہ حکمران اپنے مفاد میں دین کو مروڑنے کی کوشش کریں گے۔ فی الوقت اس مسئلے کو اٹھانے کی ضرورت نہیں۔ اصل شریعہ، جو قرآن اور سنت پر مبنی ہے خاصاً مختصر ہے اور ہماری ریاستی ضرورت کے لئے کافی ہے۔

دوسرا پہلو جس پر چند لوگوں کو اختلاف ہو سکتا ہے وہ یہ ہے کہ جب قرآن اور سنت کے احکامات آگئے، تو جیسے ہی دین کا نظام لاگو ہو، فوری طور پر تمام قوانین پر عمل درآمد لازم ہوگا۔ اصولی طور پر یقیناً اس سے اختلاف نہیں کیا جاسکتا۔ البتہ جب ان قوانین کو نافذ کرنے کا سلسلہ شروع ہوگا، جو فوری طور پر شروع ہوگا، تو نافذ کرنے میں جو مشکلات ہیں ان پر رفتہ رفتہ ہی قابو پایا جاسکے گا۔ نفاذ میں کچھ وقت لگے گا۔ یہ میں اس لئے نہیں کہہ رہا کہ مقصد اسلامی نظام کا نعرہ لگانا ہے تاکہ عوام کو دھوکا دے کر اسلامی لباس میں سیکولر نظام جاری رکھا جاسکے۔

یقیناً جو احکام قرآن اور سنت میں موجود ہیں ہم ان پر عمل کرنے کے پابند ہیں، انہیں ٹھہرایا نہیں جاسکتا۔ لیکن اسلامی مملکت کے اتنے وسیع نظام کو چلانے کے لئے، نہ ہی ہمارے پاس شروع میں اس قابلیت کے لوگ ہوں گے اور نہ ہی اس کے لئے بنیادی ڈھانچے موجود ہیں۔ اگر کل سے سود کا نظام ختم کر دیں، تو معیشت کا کیا بنے گا؟ زندگی کا سارا کاروبار سود کے نظام پر ہی قائم ہے۔ ایک نظام صدیوں سے چل رہا ہے، اُسے سنبھل کر چھیڑنا ہوگا۔ وقت لگے گا۔ پھر اگر اسلامی سزائیں لاگو کرنی ہیں، تو پہلے انصاف کا نظام تو قائم کر لو۔ کیا آج کل کے ماحول میں، جہاں ایک کرپٹ حکومتی مشین ہم پر مسلط ہے جس میں کہیں انصاف کا شائبہ تک نہیں، شرعی سزائیں نافذ کی جاسکتی ہیں؟ بیس کروڑ کی آبادی کے لئے انصاف پسند جج کہاں سے لائیں گے؟ کیا یہی پولیس کیس بنائے گی اور کوڑے لگوائے گی؟ اور گواہ کون ہوں گے؟ اس ظلم کا ذمہ کون اٹھائے گا؟ اسے تبدیل کرنے میں وقت لگے گا۔ پھر ہم نے اپنے بچوں کو تعلیم کیادی؟ کس معاشرے میں انہوں نے پرورش پائی؟ کس تہذیب کو آئیڈیالائز (idealize) کرتے ہوئے جوان ہوئے؟ ان کی تعلیم انہیں وہ قدریں نہیں دیتی، جو ایک اسلامی

معاشرے کی ہیں، اور نہ ہی گھروں اور سکولوں میں ایسا ماحول ملتا ہے۔ ایسے معاشرے میں اچانک شرعی قوانین کی سزائیں نافذ کر دینا درست نہ ہوگا، تنگ نظری ہوگی۔ ظلم ہوگا۔ اس قحط الرجال میں وہ لوگ کہاں سے لائیں گے جو ایک دن میں سب کچھ بدل دیں؟

اور کیا شرعی قوانین کی سزائیں ہی اسلام کی مہر ہے؟ آخر پہلا قدم یہی کیوں؟ کیا دین میں صرف کڑواہٹ ہی ہے، کوئی مٹھاس نہیں؟ یہ اسلام کے خلاف پروپیگنڈا ہے۔ یہ ڈراوے ہیں، جو سیکولر سوچوں والے منافقین پھیلا رہے ہیں، تاکہ لوگوں کو خوف زدہ کر دیں، کہ جیسے چل رہا ہے، اس ہی میں ہماری بہتری ہے۔ کچھ دیندار لوگ بھی دین کی محبت میں آخری منزلوں کو فوری پہنچنا چاہتے ہیں۔ یہ بھی ایک وجہ ہے کہ ہم پر تنگ نظری اور شدت پسندی کی تہمت لگتی ہے۔ بہتری تو یقیناً اللہ کے نظام میں ہے، یہی ہمارا ایمان ہے۔ اس سے کون منہ موڑ سکتا ہے؟ صرف وہ جو کہتا ہے کہ میں اللہ کو مانتا ہوں، مگر اُس کے احکام نہیں مانتا۔ اور منافق کسے کہتے ہیں؟ ہاں، احکام ماننے میں کوتاہیاں ہو سکتی ہیں، اس سے انکار نہیں۔ گنہگار معاف ہے، منافق نہیں۔ اور اگر منہ سے کہہ دیں کہ مجھے انکار نہیں، مگر دل کہتا ہو کہ اللہ کا نظام لگنے نہیں دینا، تو جان لو کہ امیر المنافقین میں سے ہو۔ مسلمان تم پر عذاب ہوں گے، کیونکہ وہ وقت، کہ یہاں دین کا نظام قائم ہو، قریب ہے۔ انشاء اللہ۔

اسلامی نظام کا آنا ایک انقلابی (revolutionary) تبدیلی ہے، لیکن معاشرے میں اس کا نفاذ ارتقائی (evolutionary) طرز پر کرنا ہوگا۔ کچھ عالموں کے تحفظات کے باوجود، آہستہ، آہستہ، بتدریج ہی یہ نظام نافذ ہو سکتا ہے، جیسے جیسے حکومت اس کو سنبھالنے کی اور معاشرہ اسے جذب کرنے کی صلاحیت پیدا کرتا جاتا ہے۔ لازم عمل یہ ہے کہ اعلان کیا جائے کہ شریعت کا نظام لاگو ہو گیا۔ کہہ دینا پہلا قدم ہے۔ جو تبدیلیاں فوری طور پر لائی جاسکتی ہیں، فوری طور پر لائی جائیں۔ پھر جیسے جیسے حکومت کا نظام مکمل صورت اختیار کرتا جاتا ہے، معاشرے کی نشوونما ایسی کی جائے کہ ساتھ ساتھ دونوں ایک منزل کی جانب بڑھیں۔ پھر کچھ عرصے میں ایک مکمل نظام اور معاشرہ تشکیل پائے۔

جب اس ملک میں اسلام کا نظام نافذ ہوگا، عوام کو موجودہ جابرانہ نظام سے چھٹکارا نصیب ہوگا۔ اور ایسا ہی ہونا چاہیے۔ اللہ نے یہ دین ظلم مٹانے کے لئے عطا کیا، ظلم ڈھانے کے لئے نہیں۔ اس دین کے رسولؐ کی تعلیم مسلمانوں کے لئے محبت اور اخوت کا سرچشمہ ہے۔ اُن ہی کے نقش قدم پر چلنا ہوگا۔ اپنے بھائی بہنوں کو محبت سے دین کی طرف لانا ہوگا، نفرت سے نہیں۔ دین کا نظام ایک سفاکانہ سزا کے طور پر اُن پر نہیں ٹوٹنا چاہیے، بلکہ ایک خیر خواہ اور خوش آئند تبدیلی ہونی چاہیے، جو عوام کو ایک اطمینان کی سانس عطا کرے، اُن کے دل اس سے سکون پائیں۔ تب ہی اللہ خوش ہوگا۔ تبھی یہ تبدیلی لوگوں کو قبول ہوگی۔ تب ہی ہم ایک جان ہو سکتے ہیں، ورنہ منتشر ہی رہیں گے۔ ہمارا گھرانہ پھوٹ کا شکار رہے گا۔

نئی کرن کو اندھیرے نکل نہیں سکتے *

اسلامی نظام کیا ہے، اس کے سیاسی خدہ و خال کیا ہوں گے، معیشت کیسے چلے گی، معاشرتی تبدیلیاں کیا ہوں گی اور کیسے رونما ہوں گی، اور کیا نظام تعلیم ہوگا جو آئندہ نسلوں کو ایک روشن مستقبل کی طرف گامزن کر سکے؟ یہ ایسے سوالات ہیں جن کے بارے میں بہت کچھ لکھا جا چکا ہے۔ میں ان کی تفصیلات میں جانے کی جسارت تو نہیں کروں گا، صرف ان موضوعات پر اپنے تاثرات بیان کروں گا۔ بہتر ہوگا کہ انقلابی کونسل مشاورت سے اس کے بنیادی خاکے پر اتفاق کر لے اور عوام پر اپنی رائے اُجاگر کرے، تاکہ سب کو ساتھ لے کر چل سکے۔ پھر جب ماہرین کی ٹیم تفصیلی سیاسی ڈھانچہ تشکیل دے رہی ہو، باہمی مشوروں سے اس کے سیاسی پہلو کو آخری شکل دی جائے۔

پاکستان کے معاشرتی، سیاسی اور معاشی حقائق کے مدِ نظر، یقیناً صدارتی طرز کی حکومت، پارلیمانی نظام سے بہتر ہوگی۔ یہ اسلامی نظام سے بھی مطابقت رکھتی ہے۔ میں سمجھتا ہوں کہ صدر کو خلیفہ کہنا موزوں نہیں، کیونکہ خلافت کا ایک تصور ہے جو پوری مسلم دنیا پر اثر انداز ہو گا۔ اس کا وقت ابھی نہیں آیا۔ پارلیمانی طرز میں، حکمران پارلیمنٹ کا ریغال بن کر رہ جاتا ہے، اور ہر فیصلے میں ترجیح سیاسی مفادات کو دینے پر مجبور ہوتا ہے۔ ہمارے الیکٹورل نظام میں عموماً جس وضع کی پارلیمنٹ چنی جاتی ہے، جو ان کی سیاسی ترجیحات ہوتی ہیں اور جس طرز پر سیاسی اثر و رسوخ کا استعمال ہوتا ہے، یقیناً اچھی حکمرانی کی راہ میں حائل ہے۔ پھر جو کینٹ تشکیل پاتی ہے، وہ بھی اتنے قابل لوگوں پر مشتمل نہیں ہوتی، جو اس قوم میں موجود ہیں۔ کینٹ کے ممبران چونکہ سیاسی ہوتے ہیں، انہیں سیاست چکانے کی فکر زیادہ رہتی ہے، اور اپنی کرسی کے زور پر، سیاسی مفادات کے تعاقب میں رہتے ہیں۔ ان کے عہدوں کی بنیاد سیاسی دباؤ (clout) پر ہوتی ہے، قابلیت اور کارکردگی پر نہیں۔ اس لئے نہ تو ان عہدوں کو کھونے کا اتنا خدشہ ہوتا ہے اور نہ ہی حکمران کا حکم کوئی خاص تاثیر رکھتا ہے۔ اور "سیاسی مجبوریوں" کی وجہ سے ان کی تعداد روز بروز بڑھتی جاتی ہے۔ ابھی ان سب پر پارٹی مفاد اور کرپشن کا رنگ نہیں چڑھایا گیا اور نہ ہی ہماری سول انتظامیہ کے چونچیلانے کا، جو اسی سیاسی ماحول میں پنپتی ہے۔ جب یہ بھی شامل حال ہوں، تو ایسا آمیزہ تیار ہوتا ہے، جس کے تیزابی اثرات آج عوام پر عیاں ہیں۔

صدارتی طرز کی حکومت یقیناً زیادہ مضبوط اور کارگر ہوگی، جہاں حکمران سیاستدانوں سے آزاد رہ کر، اور ملک کے بہترین لوگوں کی چنی ہوئی کینٹ بنا کر حکومت کرے گا۔ اس طرح حکومت کا حجم بھی گھٹایا جاسکے گا، جو ہماری معیشت پر ایک بوجھ ہے۔ ہمیں کسی بیرونی حکومت کی طرز اپنانے کی ضرورت نہیں، بلکہ مختلف ماڈلز کا تجزیہ کر کے، اور اپنے حالات کا جائزہ لیتے ہوئے، ہم ایسا نظام تشکیل دیں، جو ہمارے ماحول کو زیب دیتا ہو اور ہمارے دین کے اصولوں کے مطابق ہو۔ ہمارا ہو۔

میں سمجھتا ہوں کہ سیاسی پارٹیوں کے قیام کی، ہماری اسلامی ریاست میں، کوئی ضرورت نہیں۔ بنیادی سمت دین نے عطا کی ہوئی ہے۔ اس کے علاوہ ملک کی بہتری کے لئے کام کرنا ہے، جو ہر ہوشمند سمجھتا ہے کہ کیا ہے۔ یقیناً پارٹیوں کی ترجیحات میں فرق ہوتا ہے، مگر ایسا نہیں کہ اس ایک بات کی وجہ سے ہم اتنا بڑا ناسور پال لیں۔ پھر کس پارٹی کے منشور کی کوئی اہمیت ہے؟ الیکشن کے بعد منشور اور وعدوں کی سیاست میں کیا وقعت؟ مختلف اداروں سے مشاورت کے بعد، صدر مملکت اپنی ترجیحات کا تعین کر سکتا ہے۔

سیاسی پارٹیوں کی کچھ نہ کچھ کتابی اہمیت تو یقیناً ہے، لیکن ہمارے یہاں ان مفادات سے کہیں زیادہ سنگین اس کے منفی پہلو ہیں۔ ہم نے اسے، نہ جانے کیوں، جمہوریت کی بنیاد کا درجہ دیا ہوا ہے۔ سیاست میں پارٹی کا مفاد قوم کے مفاد سے افضل ہوتا ہے۔ ان ہی میں سے، پارٹی کے مفاد میں، صوبائیت کے جراثیم نکلتے ہیں، اور یہی قوم کی سوچوں میں الجھاؤ پیدا کرتی ہیں، قوم کو ٹکڑوں میں بانٹتی ہیں۔ یہ ملک کو رنجشوں اور تصادم میں الجھاتی ہیں، قیادت کو پیشہ وارانہ رنگ دیتی ہیں، موروثیت میں ڈھال لیتی ہیں۔ یہی پارٹیاں جاگیردارانہ نظام کی بقا ہیں، کیونکہ یہ ان کے مفاد میں ہے، چاہے عوام اس میں پس ہی کیوں نہ رہے ہوں۔ یہی پارٹیاں وڈیروں اور ڈاکوؤں کو بھی پالتی ہیں اور کرپشن کو بھی۔ یہی غیر ملکی ایجنسیوں کے ہاتھوں میں کھلتی بھی ہیں۔

عوام کا نمائندہ اپنی پارٹی کے شکنجے میں ہی رہتا ہے، اور اصل میں پارٹی کا نمائندہ بن کر رہ جاتا ہے۔ پارلیمنٹ میں بیٹھ کر، یا ٹی وی پر مباحثوں میں، قوم سے سچ نہیں بولتا، پارٹی کے مفاد میں بولتا ہے۔ جھوٹ بولتا ہے۔ پارٹیاں اسی جھوٹ پر چلتی ہیں۔ پھر آدھی پارلیمنٹ شروع دن سے ہی، اپوزیشن کے طور پر، حکومت کے خلاف کام کرتی ہے، اسے گرانے کے درپے رہتی ہے۔ یہی سیاسی پارٹیاں حکومت کی مشینری کو بھی سیاسی بنادیتی ہیں اور اپنے من پسند لوگوں کو ترقی دے کر قابلیت کی دھجیاں اڑاتی ہیں۔ پھر الیکشن جیتنے کے لئے ہر قسم کی نا انصافیاں اور غیر اخلاقی حرکات کرتی ہیں، چاہے وہ پیسے جمع کرنے ہوں یا ووٹ۔

اگر غیر پارٹی نظام کی پارلیمنٹ ہوگی تو وہ صرف ملک کی بہتری کا سوچے گی، اُس کی اور کوئی ترجیح نہیں ہوگی اور وہ سب مل کر حکومت کی بہتری چاہیں گے۔ نمائندے اپنی ذاتی قابلیت پر چنے جائیں گے، پارٹی کے زور پر نہیں۔ پھر اتنے سیاسی گٹھ جوڑ نہیں ہوں گے اور نہ ہی کوئی ممبر پارلیمنٹ میں سچ بولنے سے کترائے گا۔ کسی کے نکتہ نظر میں پارٹی کے مفاد کا رنگ نہیں ہوگا، سب قوم کے بارے میں سوچیں گے۔ نا الزام تراشیوں کے طوفان اٹھیں گے اور نہ ہی پارلیمنٹ مچھلی بازار بنے گی۔ نہ ہی سڑکوں پر ہنگامے کروا کر عوام کا وقت اور پیسہ ضائع کروایا جائے گا، نہ بھرتہ جمع ہوگا، نہ ہی ٹارگٹ کلنگ ہوگی، نہ ہی سڑکوں پر خون بہے گا اور نہ ہی ٹی وی پر فضول اور نہ ختم ہونے والے مباحثوں میں قوم کو الجھایا جائے گا۔ عوام کے مفادات کا تحفظ غیر جانبدار پارلیمنٹ کرے گی۔ صرف غیر جانبدار نمائندہ ہی صحیح معنوں میں اپنے ووٹر کی

آخری سفر منزل مقصود

نمائندگی کر سکتا ہے، کیونکہ وہ پارٹی کے شکنجے سے باہر ہوتا ہے۔ پارٹیوں پر مبنی پارلیمنٹ غیر جانبدار نہیں ہوتی۔ خود غرض ہوتی ہے۔ ہمیں لازم ہے کہ غیر پارٹی نظام تشکیل دیں، ایسا نظام جس میں جمہوریت ہو، "سیاست" نہ ہو۔ یوں سیاست دان کا پیشہ اس ملک سے ختم ہو جائے گا کیونکہ یہ پیشے کے طور پر صرف سیاسی پارٹیوں کی وجہ سے زندہ ہے۔ میں ایک پارٹی ڈکٹیٹر شپ نہیں کہہ رہا، بلکہ یقینی طور پر غیر پارٹی نظام تجویز کر رہا ہوں۔ یہی اسلام کا بھی طریقہ ہے، کہ قوم کو ٹکڑوں میں نہ بانٹا جائے۔

یہ بھی درست نہیں کہ حکمران چاہے بہترین کارکردگی دکھا رہا ہو، اُسے لازماً، وقت کی قید پر، تبدیل کر دیا جائے۔ اگر باصلاحیت حکمران ہے، تو جب تک اُس میں صلاحیت ہے اور عوام اُس سے مطمئن ہیں، اُسے حکومت کرتے رہنا چاہیے۔ اچھے حکمران ہر دکان پر نہیں مل رہے کہ ہم انہیں یوں نکال پھینکیں۔ وہ تجربے کے ساتھ اور بہتر ہو جاتے ہیں۔ پھر جو حکومت کے بڑے کام ہیں، وہ چند سالوں میں تو نتیجہ نہیں دکھا دیتے، ایک لمبا عرصہ لگتا ہے۔ ایک حکومت کسی منصوبے پر عمل درآمد شروع کرتی ہے، اور دوسری حکومت آکر اُسے بند کر دیتی ہے۔ ہزار ہا منصوبے یوں بند پڑے ہیں اور قوم کا اربوں روپیہ ان میں پھنسا ہوا ہے۔ ایک ملک کی حکومت چلانے کے لئے دوراندیشی چاہیے۔ یہاں اگلے الیکشن سے آگے کوئی سوچتا ہی نہیں۔ یہی ہمارے دین کا بھی طریقہ رہا ہے کہ باصلاحیت حکمران کو حکومت سے نا ہٹایا جائے۔

بہتر ہوگا کہ صدر اور پارلیمنٹ کی مدت کو پانچ سال کے بجائے دس سال کیا جائے۔ یہ مدت ختم ہونے پر بھی حکمران عوام سے ریفرنڈم کے ذریعے اعتماد کا ووٹ حاصل کرے، اگر کامیاب نہ ہو تو دوبارہ الیکشن کروائے جائیں۔ پارلیمنٹ کے الیکشن پانچ حصوں میں، ہر دو سال بعد ہوں، اس طرح پارلیمنٹ کے ۱/۵ ممبران قوم کی نئی ترجیحات کے مطابق ہر دو سال بعد آتے رہیں گے، اور پارلیمنٹ تازہ دم رہے گی۔

ایک اور اہم مسئلہ ہمارے بڑے صوبے اور اُن کی حکومتیں ہیں، جو صرف سیاست دانوں کو ہی تقویت دیتی ہیں، نئی نئی اسمبلیاں کھلتی ہیں، حکومت میں بھی اور پارلیمنٹ میں بھی۔ نہ ہی اچھی حکمرانی میں ان کا کوئی کردار ہے اور نہ ہی ہماری معیشت ان کو چلانے کا بوجھ سنبھال سکتی ہے۔ عوام کی مشکلات کا حل چھوٹے صوبوں میں ہے، جن میں صدر کی طرز پر گورنر منتخب ہو، اور ایک چھوٹی سی عوام کی نمائندہ کمیٹی، جو ضروری بندوبستی قوانین تشکیل دے۔ اسی طرز پر ہر صوبے سے ایک نمائندہ پارلیمنٹ کے لئے بھی منتخب ہو۔ اس طرح پارلیمنٹ بھی مناسب حجم کی رہے گی، جو معتبر حضرات پر مشتمل ہوگی۔

بہتر ہوگا کہ یہ صوبے اور ان سے نچلے درجوں کے حصوں کی بناوٹ صرف جغرافیائی بنیادوں پر نہ ہو بلکہ نسلی بنیادوں کا بھی خیال رکھا جائے اور برادریوں کو توڑا نہ جائے۔ یہ حقیقتیں ہیں۔ اور جو پاکستان کی مضبوطی، ان حقیقتوں کو بد لئے میں دیکھتے ہیں، غلط سوچتے ہیں۔

الیکشن کے حلقوں پر بھی یہی اصول اپنایا جائے۔ اور یہ حلقے ہمارے آئین میں باندھ دیئے جائیں، تاکہ ہر الیکشن پر حکمران اپنے سیاسی جوڑ توڑ کے مفاد میں انہیں تبدیل نہ کر سکیں۔ یہ قدرتی حد بندیاں ہیں، انہیں بناوٹی طریقوں سے ختم نہیں کیا جاسکتا۔ یہ برادریاں ہماری طاقت ہیں، کمزوری نہیں۔ ہم کیوں ان سے خائف ہیں؟ کنبہ پروری ہمارے معاشرے کی طاقت ہے، جب ہم اسے ایک حد تک رکھیں، حق تلفی تک نہ پہنچادیں۔ اچھائی کو بھی حدوں تک ہی رہنا چاہیے، ورنہ وہ برائی بن جاتی ہے۔ ایک اچھائی کو مٹا دینا برائی ختم کرنا نہیں ہوتا، حد برقرار رکھنا لازم ہے۔ یہی بیچ کا راستہ ہے۔ زہر میں شفا بھی ہے، اور موت بھی۔

اگر کچھ نیا نہ سوچا، تو اسی چٹکی میں پستے رہیں گے۔ ہم نے اگر اب بھی تیرنا نہ سیکھا تو ڈوب جائیں گے، اور شاید پھر کبھی ابھر نہ سکیں۔ ہمیں اپنی سوچیں بدلنی ہوں گی، کوئی نئی صبح ڈھونڈنی ہوگی۔ کوئی نئی راہ تلاش کرنی ہوگی۔ ایسی راہ جس میں کانٹوں پر ہی نہ چلنا ہو۔ ایسی راہ جو کسی بوسیدہ خدا کے پجاریوں کی راہ نہ ہو، وہ خدا جسے آج ہم نام نہاد 'جمہوریت' کہتے ہیں۔ وہ خدا جس کے قدموں پر تاحیات، میں اور آپ بھینٹ چڑھاتے رہیں --- اپنے سلگتے جسموں کی، اپنی مرجھائی ہوئی امنگوں کی، اپنے اُن خوابوں کی جواب یاد بھی نہیں۔ آؤ، وہ نئی راہ ڈھونڈیں جس پر تم سورج کے پجاری نہ رہو، خود چمکو۔

فرد قائم ربط ملت سے ہے، تنہا کچھ نہیں *

ہمارے موجودہ حالات میں حکمران کو اور ملک کے اہم اداروں کو ایسے آزاد چھوڑ دینا، کہ کوئی انہیں پوچھنے والا نہ ہو، مناسب نہیں۔ اگر ایک شخص کے ہاتھ میں ساری طاقت آگئی، تو ہم پھر وہاں پہنچ جائیں گے جہاں کل تھے۔ اور اگر ایک سے زیادہ کے ہاتھ میں بھی طاقت ہوئی اور کوئی پوچھنے والا نہ ہو، تو مل بانٹ کر کھانے کا سلسلہ شروع ہو جائے گا، جیسے آج ہے۔ ایک طاقتور نظر اور ہاتھ حکمرانوں پر رکھنا لازم ہے، جو ان سے عوام کی جانب سے سوال کر سکے۔ یہی نظام کی مضبوطی ہوگی۔ مسلمانوں کی تاریخ میں بھی جب حکمران کل مختار ہوا، اور کوئی اُسے پوچھنے والا نہ رہا تو نا انصافیاں شروع ہو گئیں۔ ایسی حکومت بادشاہت کے ڈھنگ اختیار کر لے گی۔ عوام کو دھوکے میں رکھے گی اور من پسند طرز پر کام کرے گی۔ صدارتی نظام کے اس نقص کو رد کرنا ہوگا۔ بار بار حکمران بدلنے سے کام نہیں چلے گا۔ ایک سے بڑھ کر ایک آئیں گے، جیسے امریکی نظام میں ہو رہا ہے۔

دوسرا اہم پہلو یہ ہے کہ جمہوریت کا بنیادی اصول ہے کہ عوام کو پتا ہو کہ اُن کے چنے ہوئے نمائندے کیا کر رہے ہیں، اور اُن کا پیسہ کہاں اور کس طرح خرچ ہو رہا ہے۔ اگر عوام دھوکے میں رہیں گے، یا لاعلم ہوں گے تو معاشرے میں نا انصافیاں پھیلیں گی۔ حکومت کو پیسے کے غلط استعمال کی چھوٹ ہوگی اور عوام میں بے چینی بھی رہے گی۔ حکومت کے لئے شفاف ہونا (transparency) لازم ہے۔ اس کو یقینی بنانا ایک اچھی اور منصف حکومت قائم کرنے کے لئے ایسے ہی ہے، جیسے جسم کے لئے خوراک۔ یہی ہمارے دین کا اصول ہے۔

تیسرا یہ ملک کے اہم اداروں کو تحفظ دینے کے لئے ضروری ہے کہ تمام ایسے ادارے جن کے لئے لازم نہیں کہ وہ حکومت کے نیچے کام کریں، حکومت کی گرفت سے باہر رہیں۔ انہیں دیئے ہوئے قانون کے تحت اپنا کام کرنے کی آزادی ہو اور ان میں حکومت کی مداخلت نہ ہو سکے، انہیں "سیاسی" نہ بنایا جاسکے اور نہ ہی ان سے کسی قسم کا سیاسی مفاد حاصل کیا جاسکے۔

ان خدشات کو تحفظ دینے کے لئے، ملک میں ایک نئی سیاسی طاقت وجود میں لانی ہوگی۔ ہمارے موجودہ نظام میں یہ ذمہ داری، کچھ حد تک، صدر کی ہوتی ہے، مگر تاریخی طور پر ہمارا صدر نا کارہ ہی رہتا ہے، یا جیسے آج کے حالات ہیں کہ ساری حکومت کا ممج اس ہی کے سر ہے۔ بہر حال صدر کی شخصیت سیاسی ہی ہوتی ہے اور سیاسی مجبوریوں کے تحت ہی کام کرتی ہے۔ ہمارے نئے نظام میں بہتر ہوگا کہ ملک کی یہ

آخری سفر منزل مقصود

بڑی سیاسی طاقت ایک شخصیت کے بجائے ایک ادارہ ہو۔ ایک ایسا ادارہ وجود میں لایا جائے جو سب سے زیادہ طاقت رکھتا ہو، مگر اُس کا حکومت چلانے سے، یا اُس کے کسی پہلو سے کوئی واسطہ، کوئی تعلق نہ ہو۔ وہ قوم کی طرف سے، صرف حکومت پر نظر رکھے، مگر حکومت اپنے کام میں پوری طرح آزاد ہو۔ اس ادارے کو کونسل آف پروفیشنلز (Council of Professionals) کا نام دیا جاسکتا ہے۔ یہ کونسل ایک مختلف قسم کے الیکٹورل سسٹم سے اُبھرے، جس میں ملک کے ہر شعبے کی نمائندگی ہو، مثلاً اساتذہ، وکلاء، صنعت کار، تاجران، کسان، مزدور، ڈاکٹرز، انجینیرز، میڈیا، سابقہ سرکاری ملازمین اور افواج کے نمائندے، وغیرہ۔ ایک نیا شعبہ جو شامل کرنا لازم ہے، وہ امور خانہ داری (Household Management) کا شعبہ ہے، جو سب سے بڑا اور قوم کا ایک اہم شعبہ ہے۔ یہ پیشہ تو نہیں مگر کل آبادی یہیں سے کھاتی ہے اور یہیں جیتی ہے۔ یہی ہر ایک کا محور ہے۔ اسی گود میں ہمارا مستقبل پلتا ہے۔ اس لئے اس شعبے کے نکتہ نظر کی نمائندگی لازم ہے۔ ملک کے ہر انتظامی درجے، یعنی ڈسٹرکٹ، ڈویژن اور صوبے میں بھی ایک ایسی ہی کونسل ہو، جو اوپر کے درجے کی کونسل کے تحت اپنے علاقوں میں کام کریں اور اپنے علاقے میں اپنے شعبے سے منسلک امور پر نظر رکھیں۔ ہر شعبے سے منسلک حضرات خود ہی اپنا نمائندہ چنیں، لوگ ووٹ اپنے شعبے کے اندر ہی دیں، اُن کو جن کو وہ نسبتاً قریب سے جانتے ہوں اور اپنے مفادات کا نگہبان سمجھتے ہوں۔ یہ ادارہ پیشوں پر مبنی ہونے کے باعث ملک میں ہم آہنگی اور ربط بھی پیدا کرے گا۔

اس کونسل کے ممبران اپنے شعبے کے ریٹائرڈ لوگ ہوں، کم از کم ساٹھ سال کی عمر کے، جو دنیاوی جدوجہد سے فارغ ہو چکے ہوں۔ یہ کونسل معاشرے کے عزت دار بزرگان پر مشتمل ہو، جنہیں اُن کی قابلیت اور عمر بھر کی کمائی ہوئی عزت کی بنیاد پر چنا گیا ہو۔ اس طرح اس کونسل کے فیصلوں میں ہر شعبے کی دانش بھی شامل ہوگی اور ہر شعبے کے مفادات کا تحفظ بھی۔ تعینات ہونے کے بعد، ممبر اُس وقت تک اپنی جگہ کام کرتا رہے جب تک اُس میں صلاحیت ہے، یا اوپر کے کسی درجے کے لئے اُس کا چناؤ نہیں ہو جاتا۔ کسی ممبر کو ہٹانے کے لئے اُس سے اوپر کے درجے کی کونسل کی سطح پر دو تہائی اکثریت کو فیصلہ لینا ہوگا۔ قومی کونسل خود دو تہائی ووٹوں کی بنیاد پر اپنے ممبر کو برطرف کر سکے گی۔ ان کی مراعات اتنی نہ ہوں کہ ممبران اس ہی کی خاطر یہاں رہنا پسند کریں، بلکہ ایسی ہوں کہ ایک سادی سی، غیر دنیا دارانہ زندگی کے لئے کافی ہوں۔ ویسے بھی ان سے توقع ہوگی کہ یہ قوم کی خاطر کام کریں، نہ کہ اپنی زندگی سنوارنے کے لئے۔ یہ وہ لوگ ہوں جن کا رہن سہن اور طور طریقہ ایسے ہوں کہ قوم انہیں اپنانا چاہے، ان کی طرز زندگی کو مقدم سمجھے۔ معاشرے میں انہیں ایسا ہی مقام عزت بھی دیا جائے۔ ان کا چناؤ اور ان کی کاروائیاں نہایت شفاف اور ایک سخت Code of Conduct کے تحت ہوں۔

کونسل آف پروفیشنلز کے تین بنیادی کام ہیں۔ پہلا یہ کہ ملک کے ہر سرکاری اور وہنجی ادارے جو عوام سے متعلق ہوں، ان کی کاروائیاں اور مسائل شفاف طور پر عوام اور اُن کے چنے ہوئے نمائندوں کے سامنے لائیں۔ ہر کونسل ممبر اپنے درجے اور شعبے کی تمام سرکاری

آخری سفر منزل مقصود

اطلاعات حاصل کرنے کا مجاز ہو۔ اگر کسی چیز کا خفیہ رکھنا قومی سلامتی کے لئے اہم ہو تو یہی کونسل اس کی اجازت دے، ورنہ نام نہاد سلامتی کے نام پر بہت کچھ عوام اور ان کے نمائندوں سے چھپا لیا جاتا ہے۔ اگر حکومت کے عہدیداران اور کونسل میں اختلاف ہو، تو اوپر کی سطح کی کونسل اپنے درجے کے حاکم سے مشاورت کے بعد اس کا فیصلہ کرے۔ اس سلسلے میں قومی کونسل کا فیصلہ صرف صدر رد کر سکے۔

ہر شعبے کے کونسلروں کی ذمہ داریوں کا تفصیلی خاکہ بنانا ہوگا۔ مثلاً صحت کے شعبے کے کونسلر دیکھیں کہ مختلف درجوں پر اس شعبے سے متعلق تمام نجی اور سرکاری ادارے، جیسے ہسپتال، ادویات کے کارخانے، ان کے خرید و فروخت کے انتظامات، اور اس شعبے سے منسلک دوسری تمام کاروائیاں اور کاروباری سرگرمیاں قانون کے مطابق ہو رہی ہوں۔ اور یہ بھی دیکھیں کہ آیا قوانین میں کوئی رد و بدل کی ضرورت تو نہیں۔ اور اگر ضرورت ہو تو معاملہ پارلیمنٹ کو بھیجا جائے۔ اس ہی طرح صحت سے منسلک تمام اداروں کی اور عوام کی مشکلات بھی منظر عام پر لائیں۔ ہر شعبے کی، ہر درجے پر، کاروائیاں کونسل کی ویب سائٹ پر روزانہ ظاہر کی جائیں، اور ماہانہ، سہ ماہی اور سالانہ رپورٹیں بھی۔ حکومت کا ہر فیصلہ اور اس پر عمل درآمد دکھایا جائے۔ اس کے علاوہ، یہ رپورٹیں حکومت کو بھی دی جائیں اور میڈیا کو بھی۔ ایک جمہوری نظام میں ان کی رپورٹوں سے حکومت پر خاصہ دباؤ رہے گا کہ عوام کو بہتر اور شفاف گورننس فراہم کرے، اور اس کام کو کرنے میں حکومت کو ان سے امداد بھی ملے گی۔ حکومت کے تمام درجوں پر ٹرانسپیرنسی کے لئے یہ نظام لازم ہے۔

سرکاری اور نجی اداروں کی کاروائیوں کو شفاف بنانا اس حد تک ہی رہے کہ ہر شعبے کی کارکردگی عوام اور ان کے چنے ہوئے نمائندوں کے سامنے آ سکے، جو جمہوریت کی بنیاد ہے، اور اس لئے بھی کہ حکومت ان کے بارے میں اقدام لے سکے۔ ان کے ہاتھ میں کوئی انتظامی اختیارات نہ ہوں، جن کا وہ غلط استعمال کر سکیں۔ امید ہے کہ تجربہ کار بزرگان کی یہ کونسل اس نیت سے اپنے فرائض پورے کرے گی کہ ملک میں بہتری آئے، نہ کہ کسی ذاتی مقاصد کے لئے۔

کونسل آف پرفیشنلز کا دوسرا فریضہ اہم اداروں کی سرپرستی کرنا ہے، تاکہ انہیں تحفظ مہیا کیا جاسکے اور وہ مضبوط قومی اداروں کے طور پر ابھر سکیں۔ ان میں یہ ادارے ہو سکتے ہیں: انصاف مہیا کرنے کا نظام، الیکشن کمیشن، افواج، سٹیٹ بینک، ٹیکس وصول کرنے کے ادارے، ریگولیٹری باڈیز (Regulatory Bodies)، جن میں میڈیا کے لئے بھی ایک ادارے کا اضافہ کرنا ہوگا، کرپشن کی روک تھام کے ادارے، پبلک سروس کمیشن، اسٹیبلشمنٹ ڈویژن، وغیرہ۔ ان اداروں کو دیئے ہوئے قانون اور پالیسیوں کے مطابق ہی کام کرنا ہوگا، مگر ان کی تقرریوں، ترقیوں اور تبدیلیوں میں حکومت کی مداخلت نہیں ہوگی۔ اس طرح سرکاری ملازمین کو بھی تحفظ ملے گا اور وہ سیاسی بنیادوں پر کام کرنے پر مجبور نہیں کیے جاسکیں گے۔ صرف قاعدے اور قانون کے تحت حکومت پاکستان کے لئے کام کریں گے۔ ایک مضبوط، پیشہ ور،

کارگزار اور مطمئن سول سروس، اچھی حکومت کے لئے ناگزیر ہے۔ یوں کونسل آف پرفیشنلز کے ذریعے ملک کے اہم اداروں پر اس طرح نظر رہے گی کہ ان کی آزادی بھی برقرار رہے اور ان کی کارکردگی میں بھی بہتری آئے۔

تیسری ذمہ داری اس کونسل کی یہ ہے کہ اگر حکومت غیر فعال ہوگئی ہو، تو پارلیمنٹ کو حکومت تبدیل کرنے کی سفارش بھیجے۔ پارلیمنٹ اگر دو تہائی اکثریت سے اسے قبول کر لے تو صدر تبدیل کر دیا جائے۔ دو مرتبہ بھیجی ہوئی سفارش پر اگر پارلیمنٹ حکومت نہ تبدیل کرے تو کونسل اس امر کے لئے ریفرنڈم کرانے کی مجاز ہوگی۔ جب صدر کو تبدیل کرنا ہو تو یہی کونسل نئے صدر کے لئے پانچ نام تجویز کر کے پارلیمنٹ کو بھجوائے۔ اگر پارلیمنٹ کو عام اکثریت کی بنیاد پر کوئی نام منظور نہیں تو دو مرتبہ یہ نام تبدیل کرنے کے لئے کونسل کو واپس بھجوائے جاسکتے ہیں، اور کونسل نام تبدیل کرنے کی پابند ہوگی۔ تیسری مرتبہ بھیجے ہوئے ناموں پر پارلیمنٹ ووٹ کر کے تین نام چن لے، جن پر قومی سطح پر صدر کا الیکشن ہو۔ ہر درجے کے حاکم کے لئے اسی طرز پر اس درجے کی کونسل نام تجویز کرے، اور اس سے اوپر کے درجے کی کونسل کی منظوری پر الیکشن ہوں۔ متمنی حضرات خود کو حکمرانی کے لئے پیش نہ کریں۔ یہ کونسل آئین کی خلاف ورزی کی صورت میں، سپریم کورٹ سے رجوع کرنے کی بھی مجاز ہو۔

ہر ایک شہری کے حق کا تحفظ، پاکستان کا تحفظ ہے، اس کی بقاء ہے۔ یہی حکومت کا فوکس ہونا چاہیے اور یہی ترجیح۔ حکومت کے نظام کو مضبوط رکھنے کے لئے، میں ایک ایسی کونسل کا قیام لازم سمجھتا ہوں، جو حکومت اور سیاست سے باہر رہتے ہوئے عوام کے حقوق کو تحفظ پہنچائے، حکومت کی کاروائیوں کو شفاف بنائے، اس کے اہم اداروں کو مضبوط کرتی ہو اور حکومت کو کارکردگی بہتر کرنے میں امداد دے۔ پاکستان کسی خیالی پیکر کا نام نہیں۔ اس میں بسنے والے انسان ہی پاکستان ہیں۔ ہمارے موجودہ ماحول میں عوام کے مفاد کا تحفظ ہر زاویے سے کرنا ہوگا۔

اس ہی قسم کے اور بھی کئی مسائل ہیں جن پر دانشوروں کی ٹیم، جب نئی حکومت کا خاکہ تشکیل دے، غور کرے۔ حکومت سازی کے بعد، جب انقلابی کونسل موقوف ہو جائے، تو یہ ٹیم کونسل آف پرفیشنلز کے تحت کام کرتی رہے، اور اس نئے نظام میں رد و بدل کی تجاویز پر غور کرتی رہے۔ کوئی بھی نیا نظام تشکیل پانے کے بعد، جب اپنا کام شروع کرتا ہے، اس میں کچھ نہ کچھ بہتری لانی پڑتی ہے، جب تک کہ وہ اپنی جگہ منجھ نہ جائے۔ مجھے یقین ہے کہ ہم پانچ سال کے عرصے میں دنیا کے آگے ایک بہترین نظام پیش کر سکتے ہیں۔ انشاء اللہ۔

خاص ہے ترکیب میں قومِ رسولِ ہاشمی *

پاکستان میں اسلامی حکومت کا قیام مغربی دنیا کے لئے ایک دھچکا ہوگا۔ دنیا اس نظام سے اس قدر ڈرتی ہے، کہ ہل کر رہ جائے گی۔ جو پروپیگنڈہ دین کے ماننے والوں اور خود دین کے خلاف مغربی دنیا نے کیا ہے، اُسی کی روشنی میں اسے دیکھیں گے۔ صرف مغربی دنیا ہی لرزاں نہیں ہوگی، مسلم دنیا کے حکمران بھی اس کے اثرات سے خائف ہوں گے۔ لازم ہوگا کہ آتے ہی دنیا کو امن کا پیغام دیا جائے، باور کرایا جائے کہ اسلام امن، اخوت، بھائی چارے اور انصاف کا پیغام دیتا ہے، جنونیت کا نہیں۔

جو آفت مغربی طاقتیں ہم پر لا رہی ہیں، وہ تو آتی ہی ہے، چاہے دین کا نظام آئے یا نہ آئے۔ اُس ہی آفت کے مد مقابل کھڑے ہونے کی صلاحیت حاصل کرنے کے لئے، آج ہم پر لازم ہوا ہے کہ اس نظام کو اپنائیں۔ اللہ نے باقی دروازے بند کر دیے ہیں۔ جب قوم اس نئے نظام کے ساتھ کھڑی ہوگی اور یہ نظام بازو و بندوق نہیں لایا جائے گا، بلکہ عوام کی مرضی سے آئے گا، تو دنیا اس کو ماننے پر مجبور ہوگی۔ ہمیں تنہا (isolate) نہیں کر سکے گی۔ یہی دنیا کا قانون ہے۔ مغربی دنیا کا پروپیگنڈا یقیناً شدت اختیار کر جائے گا، مگر یہاں اچھی ڈپلومیسی سے کافی حد تک دنیا کے خدشات کو دور کیا جاسکتا ہے۔ ہم اتنے کمزور نہیں کہ ہمارے خلاف اس بنیاد پر فوجی طاقت کا استعمال کیا جاسکے۔ اور اس کا جواز ہی کیا ہوگا؟ جب پوری قوم اکٹھی ہو، تو کوئی اس کے خلاف نہیں بولتا۔ نئے نظام کے اعلان کے ساتھ ہی اپنی اندرونی اور بیرونی پالیسیوں کا فوری اعلان کرنا ہوگا، تاکہ دنیا کے بے بنیاد خدشات دور ہوں اور عوام میں بھی سکون آ سکے۔

سب سے پہلا قدم یہ ہے کہ اعلان کیا جائے کہ پاکستان کی ریاست اللہ اور اُس کے رسول کے احکامات کے مطابق چلے گی۔ فرماں روائی (sovereign authority) اللہ کی ہوگی اور حاکم اللہ کے نائب کی حیثیت سے تمام دینی اور دنیاوی منصب اختیار کرے گا۔ نظام شریعہ کے مطابق چلے گا۔ جب تک حاکم اقرار کرتا ہے کہ حاکمیت اعلیٰ اللہ کی ہے، اُس کی راہ پر چلتا ہے، لوگوں کو اللہ کی راہ سے نہیں پھیرتا اور نماز قائم کرتا ہے، ہر ایک پر فرض ہے کہ اُس کے احکام تسلیم کرے۔ یہ اللہ کے پیغمبر کے غیر متنازعہ احکامات ہیں۔

پہلا سال سخت ہوگا۔ عوام کی توقعات بھی زیادہ ہوں گی اور بیرونی دباؤ بھی۔ ہماری معیشت کو تنگ کیا جائے گا اور نظام کی کامیابی کی راہ میں ہر قسم کی رکاوٹیں حاصل کی جائیں گی۔ اس کا بوجھ پوری قوم کو اٹھانا ہوگا، مگر یہ ایسا نہیں کہ بھوک اور افلاس میں ڈوب ہی جائیں۔ جو

کھاتے پیتے گھرانے ہیں اُن پر زیادہ بوجھ پڑے گا، فضولیات سے ہاتھ کھینچنا ہوگا، کچھ صبر اور کچھ حوصلہ کرنا ہوگا۔ حکمرانوں کو سادگی اور قربانی کی مثال قائم کرنی ہوگی۔ پیسے والوں کو ہاتھ بڑھانا ہوگا۔

جو ضروری اقدام ہیں وہ لینے لازم ہوں گے، گو کہ ان میں سے کئی ایسے ہیں جو وقت کے ساتھ ساتھ ہی مکمل ہوں گے۔ مگر ابتدائی اقدام ہی عوام میں اعتماد اور بھروسے کی فضا قائم کریں گے، اور بے جا خوف ختم کرنے میں مدد دیں گے۔ بقایا اقدام بعد کے وقتوں میں لئے جاسکتے ہیں۔ ملک کے تمام قوانین کا جائزہ لینا ہوگا اور یقین کرنا ہوگا کہ قانون قرآن اور سنت کی روشنی میں ہی بنیں۔ اسلامی حکومت کی بنیاد ہی انصاف اور برابری کے حقوق پر ہے۔ ہمارے موجودہ حالات کو دیکھتے ہوئے سمجھنا چاہیے کہ ایک منصفانہ نظام قائم کرنے میں خاصا وقت لگے گا۔ صرف تھانے اور کچہری کا معاملہ نہیں ہے، حکومت کے پورے نظام کی منصفانہ بنیادوں پر تشکیل نو کرنی ہوگی۔ قوانین اور ان کے بنانے کے طریقوں میں ترامیم کرنی ہوں گی۔ حکومت کی ترجیحات دوبارہ طے کرنی ہوں گی۔ اس کام میں چند سال لگ سکتے ہیں۔ معاشرے میں تبدیلیاں لانا اس سے کہیں زیادہ کٹھن ہوگا۔

یہ بھی دیکھنا ہوگا کہ آیا تھانے اور کچہری کا یہی نظام بہتر ہے یا اس میں بھی تبدیلیوں کی ضرورت ہے۔ قاضی کے نظام کا بھی جائزہ لینا ہوگا۔ ہو سکتا ہے کہ نچلی سطحوں پر چھوٹی نوعیت کے تنازعات، اس نظام سے یا پنچایت کے ذریعے جلد نپٹائے جاسکیں۔ مزید کورٹس بنانے ہوں گے، تاکہ جلد انصاف مل سکے۔ مفت انصاف فراہم کرنا بھی حکومت کی ذمہ داری ہے، اس کا بھی کسی درجے پر، کچھ بندوبست کرنا ہوگا۔ جج کو اپنے فیصلوں پر جوابدہ بھی کرنا ہوگا۔ اگر اوپر کی سطح کا کورٹ اُس کے فیصلے کو غلط قرار دیتا ہے، تو ایک جوڈیشل کمیٹی کو دیکھنا ہوگا کہ آیا غلط فیصلے کے پیچھے کوئی بدینتی تو نہیں۔ قانون نافذ کرنے والے ادارے اور ان کے قوانین، قانون شہادت، جیلوں کا نظام، سب ہی کو دوبارہ دیکھنا ہوگا۔

کرنایوں ہوگا کہ عوام کو اس نظام کے ثمرات ہی ملیں۔ جب تک حکومت کی تمام مشینری کو درست نہ کر لیا جائے، عوام پر بوجھ نہ ڈالا جائے۔ یہ مناسب نہیں کہ نظام چلانے والے بے لگام ہوں اور عوام قوانین کے بوجھ تلے پس جائیں۔ میرا اندازہ ہے کہ قریب تین سے پانچ سال کا عرصہ چاہیے کہ حکومت کے نظام میں مثبت تبدیلیاں لائی جاسکیں۔ اگر زیادہ تیزی کریں گے تو یہ چلتا ہوا نظام ڈھلک سکتا ہے۔

سب سے بڑا مسئلہ کرپشن کے خاتمے کا ہے۔ شفاف نظام اور جواب دہی (transparency and accountability) اسلامی نظام کی مرکزی قدریں (core values) ہیں۔ سیاسی مفاد کی خاطر عوام کو غلط تصویر پیش کرنا جرم ہوگا،

اور سزا کا مستحق۔ آج یہ ہمارا دستور ہے۔ کرپشن کے خلاف ایک سخت گیر سلسلہ، اوپر کی سطح سے شروع کرنا ہوگا۔ یہی اسلام کا قاعدہ ہے اور یہی آج اس ملک کی ضرورت۔ یہاں یہ سوچنا ہوگا کہ اگر پرانے قصے کھولنے شروع کئے، تو ان ہی میں الجھ کر رہ جائیں گے۔ یوں بھی کیا جاسکتا ہے کہ ایک کمیشن قائم کیا جائے اور تمام وہ لوگ جو حکومت کے عہدیدار ہیں، یا رہ چکے ہیں، اس کمیشن کے آگے اپنے گناہوں کا اعتراف کریں اور لوٹا ہوا مال واپس کر دیں۔ یہ بھی ایک نہایت پیچیدہ اور گھمبیر کام ہوگا۔ اسے گرفت میں لانے کے لئے کچھ وقت اور عہدوں کی حدیں بھی لگائی جاسکتی ہیں۔ بہر کیف، اسے ایک علیحدہ سلسلہ بنانا ہوگا۔

جس دن سے اسلامی نظام شروع ہوتا ہے، کرپشن کے خلاف ایک سخت گیر پکڑ کا سلسلہ شروع کرنا ہوگا۔ یہی آج کا سب سے بڑا ناسور ہے اور یہیں سے ملک میں اسلامی سزائوں کا آغاز ہونا چاہیے۔ تمام کو تو بیک وقت ہاتھ ڈالنا نہیں جاسکتا۔ یوں کرنا چاہیے کہ پہلے سال حکمران، اُس کے وزراء اور گریڈ ۲۲ اور ۲۱ کے ملازمین پر یہ قانون لاگو کیا جائے۔ اس سے کوئی منہ کشی نہ ہو، نہ جج، نہ فوج۔ اس کام کے لئے چنے ہوئے لوگوں کی چند خصوصی عدالتیں قائم کی جائیں، جن پر بوجھ کم ہو، منصف ہوں اور جلد فیصلہ کریں۔ پہلے سال ملک کے چند بڑے لوگوں کو ٹوٹ مار کا انجام پاتے دیکھ کر، سارے نظام پر خاص اثر ہوگا۔ اگلے چار سالوں میں، جیسے جیسے انصاف مہیا کرنے کا نظام بہتر ہوتا جاتا ہے، بتدریج حکومت کی نجلی سطحوں پر ان سزائوں کو لاگو کیا جائے۔ جب تک حکومت کی مشین احتساب کے شکنجے میں کسی نہیں جاتی، عوام پر اس قانون کا بوجھ نہ ڈالا جائے۔ یوں یہ سلسلہ جڑ بھی پکڑ لے گا، اور عوام میں مقبول بھی ہوگا۔

معاشرے میں تبدیلیاں جبر سے ہرگز نہیں لانی چاہئیں۔ یہاں کسی قسم کی شدت استعمال نہیں کی جاسکتی۔ ایک تو جبر منافقت کو جنم دے گا، دوسرا عوام کو دین سے اور اُس کے نظام سے دلبرداشتہ کرے گا، تیسرا بذاتِ خود نظام میں اُس پائے کے لوگوں کا نہ ہونا جو درکار ہیں، ظلم پھیلانے کا، اور آخر میں تمام دنیا کو ہمارے خلاف پرپیگنڈا کرنے کا جواز مہیا کرے گا کہ ہم انسانی حقوق کو پامال کر رہے ہیں۔ چاہے یہ انسانی حقوق کا پیکر مغربی دنیا کا بنایا ہوا ہی کیوں نہ ہو، لیکن دنیا آج اس پر متفق ہے۔ ہمیں سنبھل کر چلنا ہوگا۔ یقیناً اللہ ہی سے ڈرنا ہے، لوگوں سے نہیں، مگر اُس نے ہوش و خرد کو بالائے طاق رکھنے کو تو نہیں کہا۔

ایک سماجی تعلیم کا پروگرام فوری طور پر شروع کرنا ضروری ہوگا، تاکہ لوگوں کو اسلام کی سادہ طرزِ زندگی کی طرف مائل کیا جائے اور ان قدروں کو اپنانے میں لوگ شرمندگی محسوس نہ کریں۔ یہ کام بہت سوچے سمجھے طریقے پر کرنا ہوگا، ایسے نہیں کہ لوگ اس سے اکتاہٹی جائیں۔ معاشرے کا رنگ آہستہ آہستہ ہی بدلتا ہے، جھٹکے سے نہیں۔ ٹی وی کے پروگرام، اشتہار، فیشن شو، اور دیگر رسالوں پر بھی کچھ پابندیاں عائد کرنی ہوں گی، کہ وہ معاشرے میں بے راہ روی نہ پھیلائیں۔ سرکار کے خرچے پر نمائشی رہن سہن اور غیر مناسب اخراجات قطعی

طور پر فوری بند کرنے ہوں گے۔ حکمرانوں اور سرکاری ملازمین کی حوصلہ افزائی کی جائے، کہ وہ اپنے طور طریقوں میں سادگی اختیار کریں، تاکہ معاشرے کے لئے ایک اچھی مثال قائم ہو۔

اسلامی شرعی سزائیں تو اُس وقت تک عوام پر لاگو نہیں کی جاسکتیں جب تک پورے ملک میں انصاف کا مکمل نظام قائم نہیں ہو جاتا اور ایک صاف اور شفاف حکومت کا قیام عمل پذیر نہیں ہوتا۔ یہی عرصہ ہمیں مہلت بھی عطا کرتا ہے کہ معاشرے میں ایسی تبدیلیاں لائی جائیں کہ ایک اسلامی معاشرے سے کچھ مطابقت پیدا ہونی شروع ہو، تاکہ اسلامی قدروں کو پنپنے کا موقع ملے۔ اس عرصے میں کچھ نہ کچھ اسلامی معاشرے کو فروغ دیا جاسکتا ہے۔ نماز قائم کرنا حاکم کے لئے ایک لازم امر ہے۔ ایک ایسی فضا پیدا کرنی ہوگی کہ لوگوں کو نماز پڑھنے کا ماحول اور سہولیات میسر ہوں، مگر اس میں کوئی زبردستی نہ ہو۔ اچھے ماحول اور اُس کے اثرات کو دیکھتے ہوئے، یقیناً لوگ دین کی طرف راغب ہوں گے۔ پھر حکومت کے نمائندوں پر شریعت کی سزاؤں کے نفاذ سے بھی معاشرے پر خاصا اثر ہوگا، اور لوگوں کو سنبھلنے کا موقع بھی ملے گا۔

سرمایہ دارانہ نظام (capitalism) کے اثرات تو مغربی دنیا پر واضح ہو چکے ہیں، لیکن وہ پھر بھی اس نظام سے چپکے ہوئے ہیں، کیوں کہ سرمایہ داروں کی گرفت میں ہیں، جکڑے ہوئے ہیں۔ پہلے سونے کو نقد کا معیار (primary monetary standard) قرار دیا جاتا تھا، پھر سود کے بیوپاریوں نے یہ سلسلہ ختم کیا۔ اب ڈالر کا کوئی معیار نہیں۔ باقی کرنسیاں ڈالر کو معیار بناتی ہیں۔ حکومتیں مرضی سے پیسہ چھاپتی ہیں، آئے دن پیسے کی قیمت گھٹتی بڑھتی رہتی ہے، جس سے معیشت لڑکھڑاتی رہتی ہے۔ اس نظام میں پیسے کی منصفانہ بانٹ نہیں، پیسہ رواں نہیں رہتا، گردش (circulate) نہیں کرتا، بینکوں میں منجمد ہو جاتا ہے۔ پھر زیادہ تر فنانشل مارکیٹس (financial markets) میں لگایا جاتا ہے، کسی منصوبے یا کاروبار میں نہیں۔ ایسی سرمایہ کاری سرمایہ داروں کو ہی نفع دیتی ہے۔ یقیناً اس نظام سے دولت چند اشخاص کے ہاتھوں میں مرکوز ہو کر رہ گئی ہے۔ غریب، غریب تر ہوتا جا رہا ہے اور امیر، امیر تر۔

اس نظام میں دولت اکٹھا کرنے پر انعام ہے، چونکہ سود ملتا ہے، اور دولت مندوں کو بینکوں کے اس سودی نظام سے قرضے بھی۔ پھر دولت مند اور دولت کماتا ہے۔ یہاں پیسہ خرچ کرنے پر سزا ہے، کیونکہ ہر خرید و فروخت پر ٹیکس لگایا جاتا ہے۔ معاشرے کا غریب ترین شخص بھی ٹیکس دیتا ہے، چاہے بس میں سفر کرے، گھی کا ڈبہ خریدے، یا بچے کی دوا۔ ٹیکس آمدن اور خرچے پر ہے، دولت پر نہیں۔ جب کہ اسلام دولت جمع کرنے پر ٹیکس لگاتا ہے، آمدن اور خرچے پر نہیں۔ اسلامی نظام میں چونکہ ہر قسم کا سود حرام ہے، اس لئے دولت جمع کرنے میں گھٹا ہے اور تجارت یا سرمایہ کاری میں منافع۔ اس سے دولت منجمد نہیں ہوگی، اور پیسہ لوگوں کے ہاتھوں میں پھرے گا۔ جہاں جہاں پھرے گا، لوگوں کو منافع دے گا۔ سود کے اس نظام سے چھٹکارا حاصل کرنا ہمارا حق ہے اور ہماری مجبوری۔

یقیناً اس مالیاتی نظام کو بدلنے میں سنگین پیچیدگیاں ہوں گی، کیونکہ اس نظام نے ہمیں زنجیروں میں جکڑا ہوا ہے۔ اس معاملے میں بیرونی کھینچا تانی بھی ہوگی اور اندرونی دباؤ بھی۔ اس کام کو بہت سنبھل کر اور آہستہ آہستہ کرنا ہوگا۔ متبادل راہ کھولنے میں وقت تو لگے گا، مگر بینکوں کے اس ظالمانہ استحصال سے اور ٹیکسوں کے اس غیر منصفانہ نظام سے معیشت کو آزاد کرنا لازم ہے۔ اس موضوع پر کئی عالموں نے تفصیلی کتابیں لکھی ہیں، جن میں اسلامی معیشت کا پورا خاکہ موجود ہے۔ یہ زنجیریں توڑنی ہوں گی، اگر ہم زندگی کی اس گھٹن سے باہر آنا چاہتے ہیں، کھلی فضا میں سانس لینا چاہتے ہیں، جینا چاہتے ہیں۔ اللہ نے قرآن میں یوں ہی نہیں کہا تھا کہ اگر سود کے نظام کو اپناتے ہو تو پھر اللہ اور اس کے رسولؐ سے جنگ کرنے کے لئے تیار ہو جاؤ۔ یہ غریبوں کا سب سے بڑا استحصال ہے، جسے ہم سب مجبوری سمجھ کر اپنائے ہوئے ہیں۔ اسے نوچ پھینکنا ہوگا۔

ملک میں حکومت کی طرف سے پیسوں کی بانٹ کے قائدے پر بھی غور کرنا ہوگا۔ صرف آبادی کے لحاظ سے بانٹ منصفانہ نہیں۔ پیسے لوگوں میں تو نہیں بانٹ رہے، علاقے کی ترقی پر خرچ کرنے ہیں۔ اس طرح کی بانٹ سے کم آبادی والے علاقوں میں برابری کی ترقی نہیں ہوتی۔ وہ افلاس میں ہی ڈوبے رہیں گے۔ پھر بلوچستان جیسے علاقوں میں، جہاں فاصلے بہت زیادہ ہیں اور آبادی کم، عوام ترقی کے ثمر سے محروم رہ جاتے ہیں۔ ترقیاتی بجٹ کی بانٹ اس طرح ہونی چاہیے کہ زندگی کی بنیادی سہولیات، جیسے پانی، بجلی، مواصلات کا نظام، صحت اور تعلیم کی سہولیات، وغیرہ، تمام ملک میں برابری کے حقوق پر مہیا کی جائیں۔ ہر پاکستانی کا حق برابر ہو۔ یہی ہمیں ایک قوم کے طور پر جوڑ سکتا ہے۔

ملک پر مالی دباؤ کی ایک بڑی وجہ ہم پر قرضوں کا بوجھ ہے۔ اسلامی نظام کے آتے ہی اس سلسلے میں دو اقدام لینے ہوں گے۔ پہلا یہ کہ جتنا ہمارا چوری کیا ہوا سرمایہ بیرونی بینکوں میں رکھا ہے، اسے سود سمیت واپس مانگ کر آئی ایم ایف اور ورلڈ بینک کے سود سمیت قرضوں کے خلاف چکا دیں۔ دوسرا یہ کہ امریکہ کی اس جنگ میں امریکہ اور اس کے دباؤ کے نیچے کام کرنے والی قوتوں کے ہاتھوں جو ہمارا نقصان ہوا ہے اس کا معاوضہ ان سے طلب کیا جائے۔ تمام اموات کی دیت ادا کریں، جیسے انہوں نے لیبیا سے لوکر بی بومبنگ (Lockerbie Bombing) کے سلسلے میں قریب دس بلین ڈالر فی گھرانہ لئے تھے۔

ایک اور بڑی نا انصافی جو استحصال کا باعث ہے، وہ برطانیہ کی حکومت کی دی ہوئی جاگیریں ہیں، جو انہوں نے دشمنوں سے وفاداری اور اپنی قوم سے غداًری کے صلے میں عطا کی تھیں۔ یہ جاگیریں ہر صورت قوم کی ملکیت میں واپس آنی چاہئیں، اور غریب کسانوں میں، ایک اصول اور قانون کے تحت، بانٹ دینی چاہئیں۔ اس نظام میں بہت ظلم پلتے ہیں۔ بنجر زمین کا وہ مالک ہو جو اسے کاشت کرے۔

آخری سفر منزل مقصود

اس کے علاوہ، اسلام کے قانون کے مطابق پانی، چراہ گاہیں اور آگ، یعنی توانائی کے وسائل، کسی کی ذاتی ملکیت نہیں ہو سکتے۔ تمام گیس، کوئلے، اور تیل کے ذخائر قومی ملکیت میں رہیں گے۔ یہ ایک بہت بڑی تبدیلی ہوگی، جس سے معیشت کو سہارا ملے گا، سستا تیل اور بجلی سب کو ملے گی، ہر ایک کا بھلا ہوگا۔

موجودہ خارجہ پالیسی میں فوری تبدیلی یہ لانی ہوگی، کہ ہمیں افغان مسلمانوں کے خلاف امریکہ کے اتحاد سے باہر آنا ہوگا، اور کسی ایسے کھیل میں شامل نہیں ہو سکتے جہاں کوئی کاروائی کسی مسلمان یا غیر مسلم ملک کے خلاف کی جا رہی ہو، چاہے وہ UN کے تحت ہی کیوں نہ ہو۔ کوئی عسکری کاروائی، ملک کے اندر یا باہر، حکومت کی مرضی کے خلاف نہیں ہو سکتی۔ اسلامی مملکت میں جہاد کی اجازت صرف حکومت دے سکتی ہے۔ اسے کسی دینی قانون کے تحت جھٹلایا نہیں جاسکتا۔ ملک میں کوئی جہادی تنظیم برقرار نہیں رہ سکتی۔ دین کے نام پر دہشت گردی بے بنیاد ہو جائے گی۔

اپنے تحفظ اور معاشی مضبوطی کے لئے لازم ہوگا کہ ایران سے اتحاد کیا جائے۔ اس اتحاد کے بڑے دور رس نتائج نکلیں گے۔ نہ صرف یہ کہ افغانستان میں دو متضاد قوتوں میں باہمی ہم آہنگی پیدا کی جاسکے گی، بلکہ یہ اس پورے خطے کے امن و امان کا ضامن ہوگا اور ہمارے اندرونی انتشار کی آگ کو بھی ٹھنڈا کرے گا۔ سمندری راستے بند کئے جانے پر بھی ہماری تیل کی رسد کھلی رہے گی اور کچھ نا کچھ تجارت بھی جاری رہے گی۔ پاکستان ایران اور افغانستان کے ایک جاں ہونے سے ہماری طاقت کو یکا یک بڑھوتی ملے گی اور ہمیں لاکارنے سے پہلے دنیا کو سوچنا پڑے گا کیونکہ ہم ایک نئی بڑی طاقت کے طور پر ابھر آئیں گے۔ مسلم دنیا کیلئے آج ان فرقہ وارانہ حدود کو توڑنا لازم ہو گیا ہے۔ ہمارا اتحاد تمام مسلم دنیا کیلئے ایک خوش آئین تبدیلی ہوگی۔ یہ مسلم دنیا کے اکٹھا ہونے کیلئے پہلا اور لازم قدم ہوگا۔ اس اکٹھے ہونے کے بیشمار ثمرات ہیں جو زندگی کے ہر پہلو پر اثر انداز ہوں گے۔ اس کے بغیر ہمارے خطے میں امن کی امید نہیں۔

ہمیں آج نئی راہیں ڈھونڈنی ہوں گی۔ اللہ پر قائد اور قوم کا مکمل یقین اور اُس ہی پر توکل ہم میں ایسی صلاحیت اور حوصلہ پیدا کر دے گا کہ ہم اس ملک کو، جو آج تباہی کے دہانے پر کھڑا ہے، نکال کر ایسے مقام پر پہنچا سکتے ہیں کہ دنیا کی دوسری قومیں ہم پر رشک کریں اور ہم تمام مسلم دنیا کے لئے ایک مثال ہوں۔ علامہ اقبال کے خواب کی تعبیر ہوں۔

تری تاریک راتوں میں چراغاں کر کے چھوڑ دوں گا*

ایک اہم پہلو ہمارے بچوں کی تعلیم و تربیت اور تعلیمی اداروں میں موزوں ماحول کا ہے۔ ہمارے موجودہ تعلیمی نظام میں تو بہت سی تبدیلیوں کی ضرورت ہے، جن کی تفصیلات میں جانا یہاں مناسب نہیں۔ کسی بھی حکومت نے اس اہم پہلو کی طرف توجہ نہیں دی۔ تعلیم مملکت کا اہم فریضہ ہے۔ تمام شہریوں کو ایک جیسی تعلیم ملنی چاہیے، تاکہ متضاد سوچیں نہ اُبھریں اور سب کو ایک جیسے معاشی مواقع حاصل ہوں۔ یہ اتنا چھوٹا سا کام نہیں۔ اس مقصد کی طرف تعلیمی نظام کو چلانا ہوگا، چاہے جتنا بھی عرصہ منزل پانے میں لگے۔

دین کی بنیادی تعلیم صرف قرآن اور سنت پر مبنی ہو۔ اساتذہ کی باقاعدہ تربیت بڑے پیمانے پر کرنی لازم ہوگی، اور ہر کلاس کے لئے ایک بورڈ سے منظور شدہ کتابیں تیار کرنی ہوں گی۔ وقت کے ساتھ ساتھ، جب اس تعلیمی نظام سے اساتذہ اُبھر کے آئیں گے، تو یہ ضرورت گھٹتی رہے گی۔ لازم ہوگا کہ اساتذہ پر زور رہے کہ ان کتابوں سے آگے نکل کر کوئی فرقہ وارانہ رنگ تعلیم میں نہ ملائیں۔ تعلیم اس نوعیت کی دی جانی ہوگی کہ آہستہ آہستہ ایک معاشرتی تبدیلی رونما ہو۔

ہمارے بہت سے سکولوں اور کالجوں میں مغربی طرز فکر کو فروغ دیا جاتا ہے، بلکہ افسوس سے کہنا پڑتا ہے کہ کچھ ایسے بھی ہیں، جن میں آزادی کے نام پر باقاعدہ فحاشی کے رُحان پیدا کئے جا رہے ہیں۔ پرائمری لیول سے لڑکوں اور لڑکیوں کے سکول علیحدہ کرنے ہوں گے۔ لڑکیوں اور ان کی ٹیچروں کو باقاعدہ باحجاب ہونا چاہیے، یہ ہماری بچیوں کی تعلیم کا حصہ ہے، اور اس ہی میں ان کا تحفظ ہے۔ یہی ہماری قوم کی مائیں بنیں گی اور انہوں نے ہی قوم کے مستقبل کی پرورش کرنی ہے۔ ان کی صحیح تربیت معاشرے پر لازم ہے۔

مڈل لیول تک اسلام کے بنیادی اصولوں سے واقفیت، قرآن پڑھنا اور کچھ حد تک اس کو سمجھنا آتا ہو۔ اس کے علاوہ نماز پڑھانا بھی آتا ہو۔ میٹرک تک قرآن عربی زبان میں سمجھنے کی صلاحیت ہو اور جمعہ کی نماز پڑھانا، نکاح پڑھانا، مردے کو غسل دینا اور نماز جنازہ پڑھانا آتا ہو۔ انٹر کے لیول پر قرآن اور سنت کی روشنی میں زندگی کے مسائل کو سمجھنے کی صلاحیت ہو۔ اسلام کی تاریخ سے واقفیت اور یہ سمجھ کہ فرقے کن بنیادوں پر بنے اور اختلافات کی نوعیت کیا ہے۔

اس سے آگے کی دینی تعلیم حاصل کرنے کے لئے ضروری ہوگا کہ اس تعلیم سے کوئی روزی کا ذریعہ منسلک ہو۔ ہمارے دینی عالموں کی معاشرے میں وہ عزت نہیں جو ہونی چاہیے، اسی وجہ سے دین کا معاشرے میں کوئی مقام نہیں۔ یوں کیا جاسکتا ہے کہ لازم کر دیں کہ قانون کے شعبے میں قدم رکھنے کے لئے کم از کم دینی تعلیم میں BA کی ڈگری ہو۔ نچلے درجہ پر جج تعینات ہونے کے لئے یا ہائی کورٹ اور سپریم کورٹ کے درجہ پر قانون پریکٹس کرنے کے لئے کم از کم معیار ماسٹرز کی ڈگری ہو اور ہائی کورٹ اور سپریم کورٹ میں جج تعینات ہونے کے لئے دین میں ڈاکٹریٹ ہونا ضروری ہو۔ اس سے نہ صرف یہ کہ ہمارے دینی عالموں کو عزت کا مقام حاصل ہوگا، بلکہ امید ہے کہ ہمیں انصاف بھی مل سکے گا اور دین کی صحیح رہنمائی بھی۔ یہ تبدیلی کئی سالوں میں آہستہ آہستہ لانا ہوگی۔

مدرسوں کو نہ چھیڑا جائے۔ یہ ہمارے معاشرے میں ایک اہم کردار ادا کر رہے ہیں۔ البتہ، سرکاری معاونت اور ان کی ڈگری کو تسلیم کرنا صرف اُن ہی مدرسوں کے حصے میں آئے جو دینی تعلیم کے علاوہ اور تعلیم بھی دیں۔ اس کی نوعیت کا فیصلہ ایک بورڈ کرے۔ سکولوں اور مدرسوں کا نظام درس ایسے تشکیل دیا جائے کہ دس یا پندرہ سالوں میں یہ ہم آہنگ ہو سکیں۔ یہ بہت اہم اور لازم تبدیلی ہے، اور اسے کیسے پایہ تکمیل کو پہنچانا ہے، عالموں کو مل کر سوچنا ہوگا۔

ایک اہم پہلو اور ہے، جس کا بلا واسطہ تعلق تو دین سے نہیں، مگر ہمارے معاشرے پر اس کے خاصے منفی اثرات ہیں اور غیر دینی رجحانات کو بھی فروغ دیتا ہے۔ یہ ہے ہمارا انگریزی زبان کا تعلیمی نظام۔ اس کے کچھ فائدے ضرور ہیں، لیکن اس کے نقصانات فائدوں سے کہیں زیادہ ہیں۔ سب سے بڑا المیہ تو یہ ہے کہ اس زبان نے لاشعوری طور پر ہمارے معاشرے کو دو طبقوں میں بانٹ دیا ہے، انگریزی بولنے والے کو صاحب کا رتبہ دے دیا، جیسے ہم انگریزوں کی غلامی میں ہوں۔ پھر اس زبان کے ساتھ ساری اُن کی ترجیحات زندگی، اُن کے طور طریقے اور اُن کی سوچیں ہم پر حاوی ہو گئیں۔ اُن کے ہیرو ہمارے ہیرو بن گئے۔ ہمارا معاشرہ اُن کی تقلید میں پھنس کر رہ گیا۔ ہم خود کو بھول کر انہیں آئڈیالائز کرنے لگے۔ آج ویلنٹائنز ڈے مناتے ہیں۔ زبان کی یہ بندش بھی دینی ماحول کی راہ میں یوں، ایک رکاوٹ رہے گی۔

ہماری قوم کا بیش بہا خزانہ، ہمارے بچے، نہ صرف معاش کی تلاش میں برابری پر نہیں آسکتے، بلکہ قوم اس وسیع ٹیلنٹ سے محروم رہ جاتی ہے، جو صرف زبان کی قید کی وجہ سے ہم نے ناکارہ بنا دیا۔ غریب کے بچے کو وہ حقوق ہی نہیں ملتے، چاہے وہ کتنا ہی لائق ہو اور کتنی ہی محنت کر ڈالے۔ پھر وہ اس دوڑ میں، پیٹ کاٹ کر، تھکے ماندے انگریزی سکولوں میں اپنے بچوں کو پڑھاتا ہے، مگر حاصل کچھ نہیں ہوتا۔ تمام ممالک کے لوگ اپنی ہی زبان میں تعلیم پاتے ہیں اور ہنر سیکھتے ہیں، ہر قسم کے کام کرتے ہیں۔ ساری رکاوٹیں اور مشکلات بناوٹی ہیں۔ اردو

زبان آج تک اسی وجہ سے ترقی نہ کر سکی، اور نہ ہی مادری زبان بولنے والے۔ پچارے درجہ دوم کے شہری ہی رہے۔ ہم نے یوں خود کو اپنی ہی نظروں میں گرا لیا۔

ہمارے بچے، ہماری قوم کا مستقبل، ہمارے گھروں اور سکولوں میں ہی پلتے ہیں۔ یہی اس دنیا میں ہماری زندگی کا حاصل ہے، ان ہی کے لئے ہم جیتے ہیں۔ یا شاید یہ بھی ایک ایسا ہی جھوٹ ہے، جو ہم خود سے بولتے ہیں۔ پھر جب کبھی اس جھوٹ پر ضمیر جھنجھوڑتا ہے، تو دل کو جھوٹی تسلی دیتے ہیں، کہ ایسا ہی ہے، سارا دن انہی کے لئے محنت کرتا ہوں۔ مگر آج ان کے لئے ہم کیا چھوڑ کر جا رہے ہیں؟ ایک لنگڑا لولا پاکستان، اور اگر ہم انہی گمراہیوں میں پھرتے رہے، تو شاید یہ بھی نہیں۔ ان ننھی جانوں کے کیا خواب ہیں اور نو جوانوں کی کیا امنگیں، کیا ہم اس لوٹ کھسوٹ میں انہیں بھول گئے تھے؟ کیا قدریں ہم نے انہیں دیں؟ کتنا جھوٹ سکھایا، کتنی لوٹ؟ تعلیم کا حاصل، صرف دولت بتایا۔ اللہ کو کہانی بنایا، فیشن کو حقیقت۔ جو اندھیرے ہم نے انہیں دیئے، وہ ان میں خاک راہ تلاش کریں گے۔ کیا دل میں لرزہ نہیں اٹھتا کہ اس ننھی سی گڑیا کو کس راہ پر ڈال رہا ہوں؟ کس انجام کو پہنچاؤں گا؟ کیا مغرب کی تقلید میں کچھ بھی دکھائی نہیں دیتا؟

مسلمانوں کو مسلمان کر دیا طوفانِ مغرب نے *

جس ایک ایک خطا پر قوموں پر عذاب آتا تھا، ہم میں وہ تمام موجود ہیں، اور شاید کچھ اور بھی۔ اور ہر قسم کی نشانیاں اللہ ہمیں دکھا رہا ہے، مگر ہم ہی نے منہ موڑا ہوا ہے، ہم انہیں اس رنگ میں دیکھتے ہی نہیں۔ سیلاب بھی آچکے، زلزلے بھی، برف کے تودے بھی کتنی ہی جانیں چھین کر لے گئے، اور آپس کی لڑائی کا مزا بھی چکھ رہے ہیں۔ اور جیسے ہم ہو چکے، ویسے ہی حکمران بھی بھگت رہے ہیں، لیکن آنکھیں نہیں کھلتیں۔ جیسے اللہ کی موجودگی کا احساس ہی مٹ گیا ہو۔ ہیں تو سب ہی مسلمان، نمازیں بھی پڑھ ہی لیتے ہوں گے، مگر ایسا ہے جیسے اللہ کو جاننا کے ساتھ پلیٹ کر الماری میں چھوڑ آئے ہوں۔

قومِ شمود نے جب اونٹنی ذبح کر ڈالی، تو گناہ تو چند اشخاص کے ہاتھوں ہی ہوا، لیکن چونکہ ساری قوم اس گناہ پر راضی تھی، عذاب سب پر آیا۔ تو آج امریکہ کی خوشنودی کے لئے مسلمانوں کے قتل و غارت پر راضی نہ ہو۔ منہ سے تو بولو کہ افغان بھائیوں کے قتل میں ہم شامل نہیں ہوں گے۔ اللہ ہی نے ہمیں بولنا سکھایا، لیکن ہم منہ صرف اپنے لئے ہی کھولتے ہیں، اُس کے لئے نہیں۔ اس میں ہمارا کتنا نقصان ہے، ہمیں غور کرنا ہوگا۔ اپنی من مانی کو صحیح قرار دینے کے لئے ججیتیں تلاش نہیں کرنی چاہئیں۔ اپنی طرزِ زندگی کو جائز قرار دینے کے لئے راہیں نہیں نکالنی چاہئیں۔ اگر اللہ کی راہ لینی ہی نہ ہو، تو ہزار بہانے ہیں۔ اور اگر ہم روزِ آخرت کا یقین رکھتے ہیں، تو راہِ صاف اور کھلی ہے، اور آسان۔ اس میں کوئی پیچیدگیاں نہیں۔

کیا ہمیں یاد نہیں کہ یہ ملک اللہ کے نام پر بنایا تھا؟ کہا تھا، "پاکستان کا مطب کیا، لا الہ اللہ"۔ پھر اس کے دار الخلافہ کا نام اسلام آباد رکھا۔ آج کچھ لوگ یوں بھی کہتے ہیں "جناب صاحب نے یہ تو نہیں کہا تھا کہ مسلمان ہی ہو جاؤ، وہ تو ایک نعرہ تھا، عوام کو اٹھانے لئے۔ بس ایک سیاسی جھوٹ تھا۔ اُس وقت کی ضرورت"۔ پھر یہ بھی کہتے ہیں "علامہ اقبال کا نظریہ کیا ہے، ہمیں تو یاد نہیں۔ بس ہمارے لئے تصویر ہی کافی ہے، ہم تصویروں کے پجاری ہیں"۔ اور آخر میں کہا، "کیا کریں، ہمارا قبلہ ہی مغرب کی طرف ہے، کتنا رنگین قبلہ ہے، اور یہیں سجدہ بنتا ہے"۔ ساری سوچیں، ساری امیدیں، طور طریقے، مغربیت کے اپنا لئے۔ انہی کے اصولوں پر زندگی کو ڈھال لیا۔ اُن ہی کی طرح بننے کی دوڑ میں لگ گئے۔ کہا کہ دین ہمارے ملک کی بنیاد نہیں مضبوط کرتا، ہم قومیت کی بنیاد پر ہی اکٹھے ہو سکتے ہیں، "سب سے پہلے پاکستان، بعد میں اللہ"۔ کہتے ہیں، "یہ دو قومی نظریہ، جو پاکستان کی بنیاد تھی، بنگلہ دیش کا قیام اس کی ناکامی کا ثبوت ہے، اس کی نفی کرتا ہے"۔ خوب ہے! اس سیکولر نظام میں اللہ کے خلاف الٹی منطق بھی چلے گی۔

آخری سفر منزل مقصود

دین کا منصفانہ نظام چلا ہی کب؟ دین تو صرف سیاسی نعرہ ہے، جس کا کام اس سے چلا اُس نے لگایا، کام تو سب ہی قومیت کی بنیاد پر ہوتے رہے۔ جو نا انصافیاں مشرقی پاکستان میں کیں، جس ظلم کی وجہ سے ہمارے بھائی ہم سے بدل ہو گئے، اُن کی تہمت دین پر کیوں لگاتے ہو؟ وہ تو نری قومیت تھی۔ کیا آج بلوچستان میں آگ دین کی وجہ سے لگی ہے، یا اُن نا انصافیوں کی وجہ سے جو ہم نے اپنے بلوچ بھائیوں سے کیں؟ کیا کراچی دین کی آگ میں جلتا ہے؟ ہاں، اتنا ضرور ہے کہ امریکہ نہاد حکمرانوں کی پروپیگنڈا مشین ہر تخریب کار کو وہی نام دیتی ہے جو افغانستان کے مجاہدین کو دیا، "ٹیرورسٹ"، پھر اُس سے منسلک کر کے "شر پسند"، اور اُن کا نام لینے والے "انتہا پسند"۔ جہاد کو فتنہ قرار دیا، یہ ہے آج کا سب سے بڑا فتنہ، کہ ہم نے اللہ سے منہ موڑ لیا ہے۔ مگر اللہ کی بھی کچھ منشا ہے۔ اُس نے ہمارے حالات ایسے کر دیئے ہیں کہ آج پاکستان کی سلامتی کو یہ سب سے بڑا خطرہ ہے۔

اگر تو سیکولر بنیادوں پر اس مسئلے کا حل کر سکتے، تو ان بارہ سالوں میں ہمیں اُس کے کچھ نہ کچھ نتائج نظر آ جاتے۔ یقیناً سیکولر سوچ رکھنے والے یہی کہیں گے کہ اگر یہ انتہا پسند سوچیں نہ ہوتیں، تو ہم امن سے ہوتے۔ لیکن یہ سوچیں، جنہیں یہ "انتہا پسند" کہتے ہیں، میں نے اور آپ نے تو پیدا نہیں کیں۔ یہ تو اس خطے اور ان حالات کی پیداوار ہیں۔ ایک حقیقت ہے، جس سے منہ موڑا نہیں جاسکتا۔ اب یہی ہے کہ ان کے اور امریکہ کے بیچ کوئی درمیانی راہ نکال کر چلتے رہیں، جس کی کوششیں شروع دن سے جاری ہیں۔ دین اور دنیا کے بیچ کی ایک انوکھی راہ، جسے مشرف صاحب نے "روشن خیالی" کہا --- آدھا تیترا آدھا بٹیر۔ اس راہ پر کیا کھویا، کیا پایا، ہمارے سامنے ہے۔ دین اور دنیا دونوں ہی سے گئے۔ ہم دیکھ رہے ہیں کہ اس راہ پر امن کی کوئی منزل نظر نہیں آتی۔

ہم مسلمانوں میں تو اتنا ایمان رہا نہیں کہ امریکہ کی راہ چھوڑ کر اللہ کی راہ اختیار کریں، لیکن شاید اللہ کی یہی منشا ہے کہ ہمیں کافروں کی دہشت گردی سے دین کی طرف موڑ لائے، امریکہ کے ظلم سے ہی ہماری آنکھیں کھول دے۔ آج امریکہ کی کاروائیوں سے ہم پر عیاں ہو چکا ہے کہ یہ ہمارے دشمن ہیں، دوست نہیں۔ ان کی نظروں میں ہماری کوئی وقعت نہیں، نہ ہمارے مالوں کی، نہ ہماری جانوں کی۔ صرف اپنا مقصد حاصل کرنے کے لئے ہمیں استعمال کرتے ہیں۔ مسلم دنیا کے کٹھ پتلی حکمران ان ہی کے ہاتھوں میں پلتے ہیں اور انہی کے کام کرتے ہیں۔ آج اللہ کافروں اور منافقوں کے ہاتھوں ہمیں مسلمان کر رہا ہے۔

سچ ہے شیطان اپنی چالیں چلتا ہے، مگر اللہ کی چال اُس سے بہتر ہوتی ہے۔ آج امریکہ کی نفرت، دین کی محبت میں تبدیل ہو رہی ہے۔ یہ بھی سچ ہے کہ جب کشتی ڈوبنے لگتی ہے، تو ہم صرف اللہ ہی کو پکارتے ہیں۔ آج پاکستان کی زیادہ آبادی دین کا نظام چاہتی ہے۔ جب تک ہم واپس اللہ کی راہ پر نہیں آتے، اُس کے دین کو نہیں اپناتے، ہم جسے انتہا پسندی کہتے ہیں، اُس کھولتی ہوئی ہانڈی کو کبھی ٹھنڈا نہیں کر

سکتے۔ آپس میں لڑتے رہیں گے۔ جودل میں آئے، کر کے دیکھ لو۔ کوئی راہ نہیں پاؤ گے۔ ایک مشہور لائٹن مشرف صاحب کے کہنے پر لیا تھا، امریکہ کے حکم پر، اب اللہ کے حکم پر دوسرے لائٹن کی باری آگئی۔ وہاں تو انکار کا راستہ تھا، یہاں کوئی اور چارہ نہیں۔ جب اللہ کا حکم ہو کہ آؤ، تو آؤ گے، چاہے خوشی سے آؤ، یا ناخوشی سے۔ اللہ کی یہ منشا آج ہر دیوار پر لکھی ہے، آنکھیں کھولو، دیکھو۔

امن اور استحکام کے اور تمام دروازے بند کر دیئے گئے ہیں۔ اگر نہ مانا تو میرا اور تمہارا گھر بھی اُجڑ جائے گا۔ یہی پاکستان ہے۔ اس سے پہلے کہ ایک بڑا عذاب ہمارے اُفق پر نمودار ہو، ہمیں چاہیے کہ ہم آنکھیں کھول لیں اور، رنجشیں بھول کر، ہاتھ تھام لیں۔ ہم تو شاید اپنا وہ وعدہ بھول گئے جس پر اللہ نے ہمیں کافروں سے نجات عطا کی تھی، جیسے فرعون سے یہودیوں کو --- "پاکستان کا مطلب کیا، لا الہ الا اللہ"۔ لیکن اللہ نہیں بھولا۔ اُس کی رحمت ہے، کہ ہمارا وعدہ پورا کر کے رہے گا، چاہے اُس کی رحمت ہم پر رحمت ہی ہو۔

وہاں بھی تیری صدا کا غبار پھیلا تھا*

میری سوچیں کوئی پتھر پہ کھنچی لکیریں نہیں، کہ آپ ان سے اختلاف نہ کر سکیں۔ یہ ہواؤں کے بکھیرے ہوئے بادل بھی نہیں، کہ آسمان پہ جو صورتیں بن رہی ہیں انہیں نظر انداز کر دیں۔ یہ نظام، جو گل سڑ چکا ہے، بدلنا ہوگا۔ کس حد تک اور کیسے، اس پر اختلاف ہو سکتا ہے، یہ طے کرنا ہوگا۔ مگر تبدیلی اس طرح لائی جائے اور ایسی ہو جو معنی خیز ہو، ممکن ہو، مستحکم ہو، مستقبل کے حالات سے تصادم نہ پیدا کرتی ہو اور ساری قوم کو لے کر، جوڑ کر، چل سکے، فتنہ برپا نہ کر دے۔ سب مسلمانوں کو قبول ہو۔ اب ہمارے پاس اور وقت نہیں ہے۔ اگر کچھ دن اور یوں ہی چلتا رہا تو پھر ہم سنبھل نہ پائیں گے۔ اور اس راہ پر ہمارا کوئی ساتھی بھی نہیں، جس کا ہاتھ تھام کر ہم منزل تک پہنچ سکیں۔ بس ایک دوسرے کا ہاتھ ہے، اور اللہ کا ساتھ۔

دین کی راہ سے بہتر کوئی راہ نہیں۔ اللہ کے رسولؐ نے جو منزل ہمیں دی، اُس سے بہتر معاشرے کا کوئی پیکر دنیا کے پاس نہیں۔ یہ اہل بات ہے اور تاقیامت سچ رہنے والی۔ باقی تیرہم اٹکل کے چلاتے ہیں، وہ بھی ہوا میں۔ اگر اس تصور کی تصویر ہماری آنکھوں میں دھندلا چکی ہے، اور آج دینی عالموں کی بات دل کو نہیں لگتی، تو اگر ان کا رنگ پسند نہیں تو کیا اللہ سے ہی منہ موڑ لیں، دین سے ہی ناٹھ توڑ لیں؟ کیا بغیر علم کے، یوں سمجھیں کہ اللہ اور اُس کے رسولؐ کے احکامات اس زمانے کے مطابق نہیں؟ اب لازم نہیں رہے؟ اگر مولوی صاحب کا نسخہ شدت آمیز ہے اور متفرق ہے، تو ٹھیک رنگ کیا ہے؟ کیا اُسے تلاش نہ کریں؟ صرف اس وجہ سے دین چھوڑ دیں کہ ہماری رغبت کے مطابق نہیں؟ یا یہ دین ہی ٹھیک نہیں؟ ہم بھی تو پڑھ لکھے مسلمان ہیں، خود پڑھ لیں، خود فیصلہ کر لیں کہ اللہ اور اُس کے رسولؐ کا کیا فرمان ہے۔ باپ دادا کی راہ پر کیوں چلتے ہیں؟ اللہ تو کہتا ہے کہ میں نے قرآن میں ہر چیز کھول کھول کر صاف بیان کر دی ہے، "تو کوئی ہے کہ سوچے سمجھے؟" پھر انتظار کیسا؟ شک میں کیوں رہیں؟ کیوں کان اور آنکھیں بند کر لیں؟ کیا قرآن کو آخری دن تک قائم رکھنے کا وعدہ اس ہی لئے نہیں کیا گیا، کہ اُس دن تک مسلمان اسے پڑھ کر ہدایات حاصل کر سکیں؟ تو آؤ قرآن کو کھولیں۔ اسے پڑھیں اور سمجھیں۔ سوچیں۔ یقیناً راہ پائیں گے۔

اسلام انصاف کا دین ہے اور محبت کا، اور امن، سلامتی اور بھائی چارے کا۔ خدا را اسے صرف مذہب نہ بناؤ، اسے یوں نہ سکیڑو۔ اس میں تو ساری دنیا داری ضم ہے۔ اس کے تو جتنا قریب جاؤ، اتنا ہی یہ دل میں اُترتا ہے۔ اس سے حسین کوئی پیکر نہیں، جو انسانوں کو وہ نظام دیتا ہو، کہ جو معاشرہ اسے اپنائے، کھل اُٹھے۔ اسے لے لو، ورنہ تمہارے دشمن یہ بھی تم سے چھین لے جائیں گے۔ اُن میں جو بھی اچھا دکھتا ہے، یہیں سے چرایا ہے۔ لیکن چونکہ ایمان نہیں ہے، اس میں ٹیڑھ پیدا کر لیتے ہیں، روٹو بدل کر لیتے ہیں، اور ٹھوکریں کھاتے ہیں۔

اس دین میں کسی ظلم کی کوئی گنجائش نہیں، نہ ہی کوئی جبر کہ سب کو زبردستی، فوراً مومن کے درجے پر پہنچا دیا جائے۔ قرآن میں اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: "اگر تمہارا پروردگار چاہتا تو جتنے لوگ زمین میں ہیں سب ایمان لے آتے۔ تو کیا تم لوگوں پر زبردستی کرنا چاہتے ہو، کہ وہ مومن ہو جائیں؟ حالانکہ کسی شخص کو قدرت نہیں کہ اللہ کے حکم کے بغیر ایمان لائے۔ اور جو لوگ بے عقل ہیں اُن پر وہ (کفر اور ذلت) کی نجاست ڈالتا ہے" (قرآن 10:99, 100)۔ رسول اللہ جب بھی کسی کو، اپنے اصحاب میں سے، کوئی کام دے کر بھیجتے تو فرماتے: "خوش خبری سناؤ اور نفرت مت دلاؤ، اور آسانی کرو اور دشواری مت ڈالو" (مسلم)۔ اُنہوں نے اس ہی نرمی سے معاشرے کو کہاں سے کہاں پہنچا دیا تھا، اس ہی راستے پر ہمیں بھی چلنا ہوگا۔ آپؐ نے فرمایا: "اللہ کی راہ میں صبح و شام چلنا تمام دنیا اور اُس کے تمام ساز و سامان سے بہتر ہے" (بخاری)۔ تو آؤ اب اٹھو۔ چلو۔

اللہ پر توکل کر کے، اُس کی راہ میں کوشش کئے جاؤ، یقیناً اللہ پر توکل رکھنے والے ہی کامیاب ہیں۔ اللہ ہی کی راہ پر چلنے میں ہماری بہتری ہے، اس دنیا میں بھی اور آخرت میں بھی۔ ایک مرتبہ رسول اللہؐ سے دریافت کیا گیا کہ کون سا شخص سب لوگوں میں افضل ہے، تو فرمایا: "وہ مومن جو اپنی جان اور مال سے اللہ کے راستے میں جہاد کرتا ہے" (بخاری)۔ تو جتنی کوشش کر سکتے ہیں، اتنی تو کریں، ورنہ آپؐ کا تو فرمان ہے کہ: "جنت تلوار کے سائے کے نیچے ہے" (مسلم)۔

کیا ہم یوں ہی کفر کے نظام میں پھنسے رہیں گے؟ جب ملک میں کھل کر اللہ کے قانون کی نافرمانی ہو رہی ہو، تو ہم پر لازم ہے کہ اگر صرف بول ہی سکتے ہیں، تو اس کے خلاف بولیں۔ اللہ کا یہی حکم ہے۔ اور اُس کے پیغمبرؐ کا حکم ہے کہ جو کوئی تم میں برائی دیکھے تو اُسے اپنے ہاتھ سے دور کرے، اور اگر ایسا نہیں کر سکتا تو زبان سے روکے، اور اگر یہ بھی نہیں کر سکتا تو اُسے دل میں بُرا سمجھے، کہ یہ ایمان کا سب سے نچلا درجہ ہے (مسلم)۔ قرآن میں ایک ایسی ہی قوم کے بارے میں کہا گیا: "جب اُنہوں نے اُن باتوں کو فراموش کر دیا جن کی اُن کو نصیحت کی گئی تھی، تو جو لوگ برائی سے منع کرتے تھے اُن کو ہم نے نجات دی، اور جو ظلم کرتے تھے اُن کو برے عذاب میں پکڑ لیا، کہ نافرمانی کئے جاتے تھے" (قرآن 7:165)۔ اور پھر کہا: "اُنہوں نے ہماری آیتوں کو اور جس چیز سے اُنہیں ڈرایا جاتا تھا، ہنسی بنا لیا۔ اور اُس سے ظالم کون، جس کو اُس کے پروردگار کے کلام سے سمجھایا گیا تو اُس نے منہ پھیر لیا؟" (قرآن 18:56, 57)۔ آپؐ نے لوگوں سے اپنا حکم سننے اور ماننے پر بیعت لی اور اس پر بھی کہ جہاں کہیں بھی ہوں گے، حق بات کہیں گے اور اللہ کی راہ میں کسی ملامت کرنے والے سے نہیں ڈریں گے (مسلم)۔ بس اگر بولنے میں صرف اتنا ہی ڈر ہے، تو یہ کچھ بھی نہیں۔ کیا یہ بہتر نہیں کہ منافقوں کی ملامت قبول کر لیں، اور اللہ کی نظر میں سُرخ رو ہوں؟

دین کے حوالے سے یقیناً حاکم کا حکم ماننا لازم ہے، لیکن وہ حاکم جو دین پر قائم ہو۔ حضورؐ نے فرمایا، "تم پر ایسے لوگ حکومت کریں گے جن کی بعض باتوں کو تم معروف پاؤ گے اور بعض کو منکر۔ تو جس نے اُن کے منکرات پر اظہارِ ناراضگی کیا بری الذمہ ہوا، اور جس نے اُنہیں

آخری سفر منزل مقصود

ناپسند کیا، وہ بھی بچ گیا۔ مگر جو ان پر راضی ہوا اور پیروی کرنے لگا، وہ ماخوذ ہوا۔ صحابہ نے پوچھا، پھر جب ایسے حکام کا دور آئے تو کیا ہم ان سے جنگ نہ کریں؟ آپ نے فرمایا، "نہیں، جب تک کہ وہ نماز پڑھتے ہیں" (بخاری اور مسلم)۔ ایک اور مرتبہ حضورؐ نے فرمایا، "تمہارے بدترین سردار وہ ہیں جو تمہارے لئے مغبوض (قابل نفرت) ہوں اور تم ان کے لئے مغبوض ہو۔ تم ان پر لعنت کرو، اور وہ تم پر لعنت کریں۔ صحابہ کرام نے عرض کیا، "یا رسول اللہ! جب یہ صورت ہو تو کیا ہم ان کے مقابلے پر نہ اٹھیں؟" فرمایا، "نہیں، جب تک وہ تمہارے درمیان نماز قائم کرتے رہیں۔ نہیں، جب تک وہ تمہارے درمیان نماز قائم کرتے رہیں" (مسلم)۔ حاکموں کی منکرات پر اظہارِ ناراضگی لازم ہے۔ اگر ایسی باتوں پر راضی رہے اور حاکموں کا ساتھ دیا تو اللہ کی پکڑ میں آئیں گے۔ "مسلمان کو لازم ہے کہ اپنے اولی الامر کی بات سنے اور مانے، خواہ اُسے پسند ہو یا ناپسند، تا وقت اُسے معصیت (گناہ یا اللہ کی راہ سے ہٹنا) کا حکم نہ دیا جائے اور جب اُسے معصیت کا حکم دیا جائے تو پھر اُسے نہ کچھ سننا چاہیے نہ ماننا چاہیے" (بخاری اور مسلم)۔ ایک مرتبہ نبیؐ نے مسلمانوں سے اس امر کا عہد لیا کہ وہ اپنے سرداروں اور حکام سے جھگڑانہ کریں گے، الا یہ کہ ان کے کاموں میں کھلا کفر دیکھیں، جس کی موجودگی میں ان کے خلاف، اللہ کے حضور پیش کرنے کے لئے دلیل موجود ہو (بخاری اور مسلم)۔

ہم ان باتوں سے منہ کیوں موڑتے ہیں؟ کیا ہم خود کو اتنا اُونچا دیکھتے ہیں، اتنا عالم سمجھتے ہیں کہ اللہ اور اُس کے رسولؐ کے احکامات کا انکار کر دیں؟ کیا یہ وہی پرانا شیطانی گھمنڈ نہیں، جو ہمیں سجدے سے روکتا ہے؟ قرآن تو یہی کہتا ہے کہ تمہارا غرور تمہیں سجدے سے روکتا ہے۔ محمدؐ نے صاف الفاظ میں بتا دیا کہ: "جس شخص میں تکبر کا ایک ذرہ بھی ہو گا وہ جنت میں داخل نہیں ہوگا"۔ جب لوگوں نے پوچھا کہ تکبر کیا ہے، تو آپؐ نے فرمایا، "کسی کے خلاف زیادتی کرنا اور سچ سے انکار کرنا" (صحیح مسلم)۔ یعنی آپ کو حق بتایا جائے اور آپ تکبر کی وجہ سے اُس پر عمل کرنے سے انکار کر دیں۔ اپنے خود ساختہ جھوٹ پر خوش رہیں۔

جو قومیں جھوٹ پر پلپتی ہیں۔ کبھی فلاح نہیں پاتیں۔ آج ہم سچ بولیں اور اپنا حق ادا کر دیں۔ جو کفر کا ساتھ دیتے ہیں ان سے کنارہ کش ہوں۔ اپنے بچوں کو بھوک کے خوف سے قتل کرنا چھوڑ دیں، یہی اللہ کا قرآن میں حکم ہے۔ کبھی یہ گناہ انفرادی حیثیت میں ہوتا تھا، آج ہم ایک قوم کی حیثیت سے کافروں کی خوشنودی کے لئے اپنے بچوں کا قتل کرتے ہیں، کہ اگر ان کا انکار کیا تو ہماری معیشت ڈوب جائے گی، ہم بھوکے مریں گے۔ یہ کیسا کفر ہے؟!

اللہ کا غلام اللہ سے غدا اری کر کے اُس کے دشمنوں سے جا ملا۔ وہ کیسے قبول کرے؟ ہم اُس کے وفاداروں کے دائرے سے نکل چکے ہیں۔ کیا آج مسجدوں سے بھی سچ نہیں بولا جائے گا؟ کیا تم اب بھی خاموش رہو گے؟

آخری سفر منزل مقصود

ہمیں تو کسی چیز پر اختیار نہیں۔ زندگی اپنی ہی رو میں بہتی ہے۔ کل کیا ہوگا، قادر مطلق ہی جانتا ہے، اُسی کا سب اختیار ہے۔ ساری کائنات اُسی کے نام کی دھمک پر چل رہی ہے۔ اگر ہمارے دل اس دھمک سے مل گئے، تو ہم بلند یوں کو چھو لیں گے، ورنہ زندگی کی رفتار تلے کچلے جائیں گے۔ اللہ ہمیں وہ دانش عطا کرے کہ ہم آنے والے وقتوں کے خطرات کو سمجھ سکیں اور اتنی ہمت اور حوصلہ دے کہ ان کا مقابلہ کرنے کی جسارت کر سکیں، ہاتھ پہ ہاتھ دھرے بیٹھے نہ رہیں۔ اللہ ہمیں وہ ایمان عطا کرے کہ ہم اُس پاک ذات کے حکم پر اپنے میلے دل سرنگوں کر سکیں۔ آمین۔

اب کہ ڈوبا تو پھر نہ ابھروں گا کبھی *

اب صبح ہونے کو ہے۔ طویل رات کے کچھ عرصے سویا رہا۔ وہ تو اللہ ہی ہے جسے نہ نیند آتی ہے، نہ اونگھ۔ پھر سانپوں کا خواب دیکھ کر اٹھ بیٹھا۔ اسی طرح ایک مرتبہ مدینہ منورہ میں لوح محفوظ دیکھی تھی۔ پڑھی تھی۔ اُس رات خواب سے اٹھ کر رویا تھا۔ آج سجدے میں گرا رہا۔

جو کہنا تھا، کہہ چکا ہوں۔ مجھے کیا پاکستان کا کیا بنے گا، مجھے تو اپنا ہی غم لے بیٹھا ہے۔ اسی طرح رات کو سوؤں گا، خواب سے جاگوں گا اور حساب دینے کھڑا ہوں گا۔ میرا تو خود پر بھی اختیار نہیں، پاکستان کی بات کیا کروں؟ ڈوبے گا، یا تیرے گا، مجھے کیا پتا۔ وہی جانتا ہوگا، جس نے مجھے ماتھے کے بالوں سے پکڑ رکھا ہے۔ گھیرا ہوا ہے۔ وہی راہ دکھاتا ہے، پھر اُس پر چلاتا ہے، پھر کہیں موڑ دیتا ہے۔ پھر راستہ بند کر دیتا ہے۔ کیوں، کیا ہوا؟ بیٹھ کیوں گئے؟ لگتا ہے آگے بھی دیوار ہے اور پیچھے بھی۔ آنکھوں پر پردہ پڑا ہے۔ ادھر ادھر دیکھتا ہوں، کچھ سمجھ نہیں آتا کہ کیا ہوا۔ کبھی عنایتوں کی بارش ہوتی ہے، کبھی ویرانی۔ سناٹا۔ کوئی جواب نہیں آتا۔ لگتا ہے ننگے پاؤں نوکیلے پتھروں پر بے غرض چل رہا ہوں۔ نہ کوئی منزل ہے، نہ کسی منزل کی چاہ۔

سب کہاں گئے؟ کوئی بھی ساتھ نہیں۔ اکیلا ویرانے میں کھڑا ہوں۔ سب ساتھ چھوڑ گئے۔ اللہ نے سب دور کر دیئے۔ وہ بھی جنہوں نے ہاتھ پکڑ کر کعبے کا طواف کیا اور وہ بھی جنہوں نے محبت بھرا ہاتھ بڑھایا۔ وہ بھی جن پر بھروسہ کیا تھا اور وہ بھی جنہیں چاہا۔ سب چلے گئے۔ میں آج پھر اکیلا ہوں۔ سب اپنے غموں کا بوجھ لئے پھرتے ہیں۔ میں بھی۔ چھوٹی چھوٹی دنیا میں اپنے اپنے محوروں پر گھوم رہی ہیں۔ کچھ دیر کو کوئی کشش، کوئی لپک، انہیں ایک دوسرے کی طرف کھینچتی ہے، چار چکر گردش میں رہتے ہیں، زیادہ دیر ٹھہر نہیں سکتے، سات پھیرے بھی نہیں۔ پھر اپنے اپنے آسمانوں میں گم ہو جاتے ہیں۔ ایک احساس قربت کا موہوم سا سہارا ہے، کہ کوئی اور بھی ہے یہیں کہیں، آس پاس۔ مگر کون کہاں ہے، کسے پتا ہے؟ سب ہی میری طرح تنہا، اپنی خود ساختہ تصویروں کے گرد طواف کرتے ہیں۔

سطحی سی باتیں، اوروں کے رونے پر قہقہے، پھکی مسکراہٹیں، بے نور آنکھیں۔ تکلفات۔ جھوٹ۔ زندگی کی یکسانیت کے تسلسل کو توڑنے کی کوششیں۔ حاجت روائی کی خود آرائی۔ انا کی تسکین کو خد متیں۔ خود نمائی۔ چمکنے کے خواب۔ مطلوب راہ رہنے کی تمنائیں۔ بیگانگی کا خوف گھر چنے کو، چند گھنٹوں کے جھوٹے تنہائی مٹانے کے بہانے۔ ڈوبتے دلوں کو دلا سے۔ خود رفتہ، خود روزندگی کے دھارے پر بہہ رہے ہیں، سب ہی۔

ہاں، مجھے بھی پاکستان کا غم ہے۔ تمہارے درد کو محسوس کرتا ہوں۔ پتی رات میں تمہارے بلکتے بچوں کی آوازیں نیند سے جگا دیتی ہیں۔ پھر اپنے ٹھنڈے نرم بستر پر اٹھ بیٹھتا ہوں۔ ہاں، تمہارا درد مجھے بھی دکھاتا ہے۔ ہاں، تمہاری طوق میں پھنسی ہوئی گردن بھی نظر آتی ہے، سکڑے ہوئے جسم بھی، تمہارے مرجھائے شوق بھی۔ تمہارے میلے کپڑوں سے اٹھتی ہوئی پسینے کی بو بھی محسوس کرتا ہوں۔ تم پر ہوتا ظلم بھی دکھائی دیتا ہے، اور وہ درندے بھی، جو انسانوں کے بھیس میں تم پر مسلط ہیں۔ تمہارے آنسوؤں سے میری بھی آنکھیں بھیگ جاتی ہیں۔ اور بس۔ درندوں کو کوس کر، رو کر، میں پھر سو جاتا ہوں، تمہاری پتی رات میں، اپنے نرم ٹھنڈے بستر پر۔ سالوں سے یہی ہو رہا ہے۔ میں اپنی بے حسی کا غم بھلانے کو، تھوڑا سا رو لیتا ہوں۔ اور بس۔

تم مجھے اتنے پیارے تو نہیں کہ میں اپنا گلا گھونٹ لوں، اپنا خون تمہیں پلا دوں، اپنی سانسیں تمہیں دے دوں۔ کیوں؟ بس تھوڑے سے پیسے دے دیتا ہوں، دل کی تسلی کے لئے۔ انا کی بھوک مٹانے۔ میں جو کر سکتا ہوں، کر رہا ہوں۔ اتنا کافی ہے۔ پھر دل کہتا ہے نہیں، کہیں دور چلے جاؤ، جہاں یہ غم، جو رات کو جگا دیتا ہے، تمہیں چھو بھی نہ سکے۔ جہاں روز سڑکوں پر میں تمہیں نہ دیکھوں۔ ٹھہرو، گھر سے باہر مت نکلو! ٹی وی بند کر دو، اخبار پھینک دو، آنکھیں بھی بند کر لو۔ سو رہو۔

پھر رات کو اٹھ بیٹھتا ہوں۔ سسکیاں سنائی دیتی ہیں۔ دل میں خوف کی لہریں اٹھتی ہیں۔ اللہ بلاتا ہے، حساب لینے کو۔ سب کرے کرائے کا بوجھ پہاڑ کی طرح دل پر رکھا ہے۔ کیا اسی وجہ سے تو نے مجھے ٹھوکریں کھلوائی تھیں؟ آج رات اٹھانے کو؟

یہ آخری گھڑی ہے۔ آخری موقع۔ اس کے بعد حساب ہے۔ میرا بھی، تمہارا بھی۔ یہیں پہ۔ میری خود غرضی کا یہی تقاضہ ہے کہ میں، سچ اور جھوٹ کی اس جنگ میں، اپنی جیت کی خاطر، اپنی سانسیں تمہیں دے دوں۔ پھر کون جیتا ہے، کون مرتا ہے، اللہ ہی جانتا ہوگا۔ مجھے کیا پتا پاکستان کا کیا بنے گا۔ میرا تو بس اتنا حساب ہے کہ میں نے کیا کیا۔ کیا آگ بجھانے کو چونچ بھر پانی ڈالا؟

کیسی تنہائی؟ میں تو کبھی اکیلا نہیں تھا، صرف آنکھوں پر پردہ پڑا تھا۔ وہ اللہ، جسے میں آج جانتا بھی ہوں، پہچانتا بھی، ہر لمحے میرے ساتھ تھا۔ جن راہوں سے گزر کر آیا ہوں، اب اور کوئی راہ میرے لئے کھلی نہیں۔ اب اُسی کا ہاتھ تھام کر چلا ہوں۔ اُسی کی راہ کا مجاہد ہوں۔ کوئی ہے کہ مجھے روکے؟ جو جی میں آتا ہے کر کے دیکھ لو۔ اپنے سب منافق ساتھیوں کو بھی بلا لو۔ پھر مجھے ایک لمحے کی مہلت بھی نہ دو۔

ڈرو، کہ اللہ کا نور تمام جہان میں پھیلنے والا ہے۔ تم اُسے اپنی پھونکوں سے بجھا نہیں سکتے۔

الحمد للہ۔

"اللہ ولی ہے اُن لوگوں کا جو ایمان لاتے ہیں،

نکالتا ہے اُن کو اندھیروں سے

نور کی طرف" (اللہ)

کافروں اور منافقوں کا کہانہ ماننا*

(قرآن، 33:1)

یہ قرآن اور کتابِ روشن کی آیتیں ہیں (27:1)۔ پروردگارِ عالم کی طرف سے اُتاری گئی ہے (56:80)۔ اور ہم نے قرآن کو سمجھنے کے لئے آسان کر دیا، تو کوئی ہے کہ سوچے سمجھے؟ (54:17)۔ اُسی نے موت اور زندگی کو پیدا کیا، تاکہ تمہاری آزمائش کرے کہ تم میں کون اچھے کام کرتا ہے (67:2)۔ اے ایمان والو! اللہ کے لئے انصاف کی گواہی دینے کے لئے کھڑے ہو جایا کرو، اور لوگوں کی دشمنی تم کو اس بات پر آمادہ نہ کرے کہ انصاف چھوڑ دو (5:8)۔ اور حق کو باطل کے ساتھ نہ ملاؤ، اور سچی بات کو جان بوجھ کر نہ چھپاؤ (2:42)۔

وہ لوگ بے شبہ کافر ہیں جو کہتے ہیں کہ مریم کے بیٹے (عیسیٰ) مسیح خدا ہیں (5:72)۔ وہ لوگ (بھی) کافر ہیں جو اس بات کے قائل ہیں کہ اللہ تین میں کا تیرا ہے (5:73)۔ آج کافر تمہارے دین سے ناامید ہو گئے ہیں تو اُن سے مت ڈرو اور مجھ ہی سے ڈرتے رہو (5:3)۔ کہو کہ اے اہل کتاب، تم ہم میں برائی ہی کیا دیکھتے ہو سو اس کے کہ ہم اللہ پر اور جو (کتاب) ہم پر نازل ہوئی اور جو (کتا ہیں) پہلے نازل ہوئیں اُن پر ایمان لائے، اور تم میں اکثر بدکردار ہیں (5:59)۔

اے ایمان والو! جن لوگوں کو تم سے پہلے کتابیں دی گئی تھیں، اُن کو اور کافروں کو، جنہوں نے تمہارے دین کو ہنسی اور کھیل بنا رکھا ہے، دوست نہ بناؤ۔ اور مومن ہو تو اللہ سے ڈرتے رہو (5:57)۔ اے ایمان والو! یہود اور نصاریٰ کو دوست نہ بناؤ، یہ ایک دوسرے کے دوست ہیں۔ اور جو شخص تم میں سے اُن کو دوست بنائے گا، وہ بھی اُن ہی میں سے ہوگا (5:51)۔ منافقوں کو بشارت سنا دو کہ اُن کے لئے دکھ دینے والا عذاب (تیار) ہے۔ جو مومنین کو چھوڑ کر کافروں کو دوست بناتے ہیں، کیا یہ اُن کے یہاں عزت حاصل کرنا چاہتے ہیں؟ (4:139)۔ اے اہل ایمان! اگر تمہارے (ماں) باپ اور (بہن) بھائی ایمان کے مقابل کفر کو پسند کریں تو اُن سے دوستی نہ رکھو۔ اور جو اُن سے دوستی رکھیں گے وہ ظالم ہیں (9:23)۔ جو لوگ اللہ اور روزِ قیامت پر ایمان رکھتے ہیں، تم اُن کو اللہ اور اُس کے رسول کے دشمنوں سے دوستی کرتے ہوئے نہ دیکھو گے، خواہ وہ اُن کے باپ یا بیٹے یا خاندان ہی کے لوگ ہوں (58:22)۔

کیا تم نے اُن منافقوں کو نہیں دیکھا، جو اپنے کافر بھائیوں سے، جو اہل کتاب ہیں، کہا کرتے ہیں کہ اگر تم جلا وطن کئے گئے تو ہم بھی تمہارے ساتھ نکل چلیں گے اور تمہارے بارے میں کبھی کسی کا کہانہ مانیں گے، اور اگر تم سے جنگ ہوئی تو تمہاری مدد کریں گے (59:11)۔

* قرآن کا ترجمہ مولانا فتح محمد جالندھری

آخری سفر منزل مقصود

کافروں کا شہروں میں چلنا پھرنا تمہیں دھوکہ نہ دے (13:196)۔ یہ جو اللہ کے سوا پرستش کرتے ہیں تو عورتوں ہی کی، اور پکارتے ہیں تو شیطان مردود ہی کو (4:117)۔ تو جن لوگوں کے دلوں میں (نفاق کا) مرض ہے، تم اُن کو دیکھو گے کہ اُن میں دوڑ دوڑ کے ملے جاتے ہیں۔ کہتے ہیں کہ ہمیں خوف ہے کہ کہیں ہم پر زمانے کی گردش نہ آجائے (5:52)۔ اللہ ہی اپنے بندوں میں سے جس کے لئے چاہتا ہے روزی فراخ کر دیتا ہے اور جس کے لئے چاہتا ہے تنگ کر دیتا ہے (29:62)۔ اور بہت سے جانور ہیں جو اپنا رزق اٹھائے نہیں پھرتے۔ اللہ ہی اُن کو رزق دیتا ہے اور تم کو بھی (29:60)۔ بھلا ایسا کون ہے جو تمہاری فوج ہو کر اللہ کے سوا تمہاری مدد کر سکے۔ کافر تو دھوکے میں ہیں۔ بھلا اگر وہ اپنا رزق بند کر لے تو کون ہے جو تم کو رزق دے۔ لیکن یہ سرکشی اور نفرت میں پھنسے ہوئے ہیں۔ بھلا جو شخص چلتا ہوا منہ کے بل گر پڑتا ہے وہ سیدھے رستے پر ہے یا وہ جو سیدھے رستے پر برابر چل رہا ہو؟ (67:20,21,22)۔

اے ایمان والو! اگر کوئی تم میں سے اپنے دین سے پھر جائے گا تو اللہ ایسے لوگ پیدا کر دے گا، جن کو وہ دوست رکھے اور جسے وہ دوست رکھیں، اور جو مومن کے حق میں نرمی کریں اور کافروں سے سختی سے پیش آئیں، اللہ کی راہ میں جہاد کریں اور کسی ملامت کرنے والے کی ملامت سے نہ ڈریں (5:54)۔ تمہارے دوست تو اللہ اور اُس کے پیغمبر اور مومن لوگ ہی ہیں، جو نماز پڑھتے، زکوٰۃ دیتے اور (اللہ کے آگے) جھکتے ہیں۔ اور جو شخص اللہ اور اُس کے پیغمبر اور مومنوں سے دوستی کرے گا تو (وہ اللہ کی جماعت میں داخل ہوگا اور) اللہ کی جماعت ہی غلبہ پانے والی ہے (5:56)۔ اور جو حکم تمہارے پروردگار کی طرف سے تمہارے پاس آتا ہے، اُس کی پیروی کرو۔ اس (پروردگار) کے سوا کوئی معبود نہیں اور مشرکوں سے کنارہ کرلو (6:106)۔

بھلا تم نے اُس شخص کو دیکھا جس نے اپنی خواہش کو معبود بنا رکھا ہے اور باوجود جاننے بوجھنے کے (گمراہ ہو رہا ہے) (45:23)۔ ہر جھوٹے گناہ گار پر افسوس ہے (کہ) اللہ کی آیتیں اُس کو پڑھ کر سنائی جاتی ہیں تو اُن کو سن لیتا ہے (مگر) پھر غرور سے ضد کرتا ہے، کہ گویا اُن کو سنا ہی نہیں (45:7,8)۔ اور جب ہماری کچھ آیتیں اُسے معلوم ہوتی ہیں تو اُن کی ہنسی اڑاتا ہے (45:9)۔ اور اللہ کی نشانیوں میں سے کوئی نشانی ان لوگوں کے پاس نہیں آتی، مگر یہ اُس سے منہ پھیر لیتے ہیں (6:4)۔ اور جب اُس کو ہماری آیتیں سنائی جاتی ہیں تو اکڑ کر منہ پھیر لیتا ہے، گویا اُن کو سنا ہی نہیں (31:7)۔ ان کے پاس کوئی نئی نصیحت، ان کے پروردگار کی طرف سے، نہیں آتی مگر وہ اسے کھیلنے ہوئے سنتے ہیں، اُن کے دل غفلت میں پڑے ہوئے ہیں (21:2,3)۔

اور لوگوں میں کوئی ایسا بھی ہے جو اللہ (کی شان) میں بغیر علم (و دانش) کے اور بغیر ہدایت کے اور بغیر کتاب روشن کے جھگڑتا ہے، (اور تکبر سے) گردن موڑ لیتا (ہے)، تاکہ (لوگوں کو) اللہ کے راستے سے گمراہ کر دے (22:9)۔ اور بعض لوگ ایسے ہیں جو اللہ (کی

آخری سفر منزل مقصود

شان) میں علم (ودانش) کے بغیر جھگڑتے اور ہر شیطان سرکش کی پیروی کرتے ہیں (22:3)۔ جو انصاف کا حکم دیتے ہیں انہیں بھی مار ڈالتے ہیں (3:21)۔ جو لوگ بغیر کسی دلیل کے، جو ان کے پاس آئی ہو، اللہ کی آیتوں میں جھگڑتے ہیں، ان کے دلوں میں اور کچھ نہیں (ارادۃ) عظمت ہے اور وہ اس کو پہنچنے والے نہیں، تو اللہ کی پناہ مانگو (40:56)۔

کیا تم نے ان لوگوں کو نہیں دیکھا جنہوں نے اللہ کے احسان کو ناشکری میں بدل دیا اور اپنی قوم کو تباہی کے گھر میں اتارا؟ (14:28)۔ یہاں تک کہ جب ہم نے ان میں سے آسودہ لوگوں کو پکڑ لیا تو وہ اُس وقت تلملا اٹھیں گے۔ آج مت تلملاؤ۔ تم کو ہم سے کچھ مدد نہیں ملے گی۔ میری آیتیں تم کو پڑھ پڑھ کر سنائی جاتی تھیں اور تم اُلٹے پاؤں پھر پھر جاتے تھے۔ ان سے سرکشی کرتے، کہانیوں میں مشغول ہوتے اور بیہودہ بکواس کرتے تھے۔ کیا انہوں نے اس کلام میں غور نہیں کیا؟ (23:66,67,68)۔ جو لوگ کمزور سمجھے جاتے تھے وہ بڑے لوگوں سے کہیں گے، اگر تم نہ ہوتے تو ہم ضرور مومن ہو جاتے۔ بڑے کمزوروں سے کہیں گے کہ بھلا ہم نے تم کو ہدایات سے، جب وہ تمہارے پاس آچکی تھی، روکا تھا (نہیں)، بلکہ تم ہی گناہ گار تھے۔ اور کمزور لوگ بڑے لوگوں سے کہیں گے (نہیں) بلکہ (تمہاری) رات دن کی چالوں نے (ہمیں روک رکھا تھا)، جب تم ہم سے کہتے تھے کہ ہم اللہ سے کفر کریں اور اُس کا شریک بنائیں۔ اور ہم نے کسی بستی میں کوئی ڈرانے والا نہیں بھیجا مگر وہاں کے خوش حال لوگوں نے کہا کہ جو چیز تم دے کر بھیجے گئے ہو ہم اُس کے قائل نہیں (34:32,33,34)۔ جس دن ان کے منہ آگ میں اُلٹائے جائیں گے، کہیں گے اے کاش ہم اللہ کی فرمانبرداری کرتے اور رسول (خدا) کا حکم مانتے اور کہیں گے اے ہمارے پروردگار ہم نے اپنے سرداروں اور بڑے لوگوں کا کہا مانا، تو انہوں نے ہم کو راستے سے گمراہ کر دیا (33:66,67)۔

پھر جن لوگوں نے برائی کی ان کا انجام بھی بُرا ہوا، اس لئے کہ اللہ کی آیتوں کو جھٹلاتے اور ان کی ہنسی اڑاتے رہے تھے (30:10)۔ کیا وہ لوگ جو برے کام کرتے ہیں یہ سمجھے ہوئے ہیں کہ یہ ہمارے قابو سے نکل جائیں گے (29:4)۔ اور اس سے پہلے کہ تم پر عذاب آوے ہو، اپنے پروردگار کی طرف رجوع کرو اور اُس کے فرمانبردار ہو جاؤ (39:54)۔ اور ہم نے بہت سے جن اور انسان دوزخ کے لئے پیدا کئے ہیں ان کے دل ہیں لیکن ان سے سمجھتے نہیں۔ اور ان کی آنکھیں ہیں مگر ان سے دیکھتے نہیں اور ان کے کان ہیں پر ان سے سنتے نہیں۔ یہ لوگ (بالکل) چوپایوں کی طرح ہیں، بلکہ ان سے بھی بھٹکے ہوئے۔ یہی وہ ہیں جو غفلت میں پڑے ہوئے ہیں (7:179)۔ بات یہ ہے کہ آنکھیں اندھی نہیں ہوتیں، بلکہ دل جو سینوں میں ہیں (وہ) اندھے ہوتے ہیں (22:46)۔

اور ہم نے بہت سی بستیوں کو ہلاک کر ڈالا، جو اپنی (فراخی) معیشت میں اتراتے تھے (28:58)۔ اور تمہارا پروردگار جب نافرمان بستیوں کو پکڑا کرتا ہے تو اُس کی پکڑ اسی طرح کی ہوتی ہے۔ بے شک اُس کی پکڑ دکھ دینے والی (اور) سخت ہے (11:102)۔ اور اللہ ایک بستی

منزل مقصود
مذہب
مفسر

آخری سفر منزل مقصود

کی مثال بیان فرماتا ہے، کہ (ہر طرح) امن چین کی بستی تھی۔ ہر طرف سے رزق با فراغت چلا آتا تھا۔ مگر اُن لوگوں نے اللہ کی نعمتوں کی ناشکری کی، تو اللہ نے اُن کے اعمال کے سبب اُن کو بھوک اور خوف کا لباس پہنا کر (ناشکری کا) مزہ چکھا دیا (16:112)۔

جن لوگوں نے اللہ کے سوا (اوروں کو) کارساز بنا رکھا ہے، اُن کی مثال مکڑی کی سی ہے، کہ وہ بھی ایک (طرح کا) گھر بناتی ہے اور کچھ شک نہیں کہ تمام گھروں سے کمزور مکڑی کا گھر ہے۔ کاش یہ (اس بات کو) جانتے (29:41)۔ اور جن لوگوں نے ہماری آیتوں کو جھٹلایا، اُن کو بتدریج اس طریق سے پکڑیں گے کہ اُن کو معلوم ہی نہ ہوگا (7:182)۔ کہہ دو کہ وہ (اس پر بھی) قدرت رکھتا ہے کہ تم پر اُوپر کی طرف سے یا تمہارے پاؤں کے نیچے سے عذاب بھیجے، یا تمہیں فرقہ فرقہ کر دے اور ایک دوسرے (سے لڑا کر آپس) کی لڑائی کا مزا چکھا دے (6:65)۔

اور جب اُن سے کہا جاتا ہے کہ جس طرح اور لوگ ایمان لے آئے، تم بھی ایمان لے آؤ، تو کہتے ہیں بھلا جس طرح بے وقوف ایمان لائے ہیں اس ہی طرح ہم بھی ایمان لے آئیں؟ سُن لو کہ یہی بے وقوف ہیں، لیکن نہیں جانتے (2:13)۔ جنہوں نے اپنے دین کو تماشہ اور کھیل بنا رکھا تھا اور دنیا کی زندگی نے اُن کو دھوکے میں ڈال رکھا تھا، تو جس طرح یہ لوگ اس دن کے آنے کو بھولے ہوئے تھے اور ہماری آیتوں سے منکر ہو رہے تھے، اس ہی طرح آج ہم بھی اُنہیں بھلا دیں گے (7:51)۔ جان رکھو کہ دنیا کی زندگی محض کھیل اور تماشہ اور زینت (و آرائش) اور تمہارے آپس میں فخر (وستائش) اور مال و اولاد کی ایک دوسرے سے زیادہ طلب (و خواہش) ہے (57:20)۔ جو لوگ آخرت پر ایمان نہیں رکھتے ہم نے اُن کے اعمال اُن کے لئے آراستہ کر دیئے ہیں، تو وہ سرگرداں ہو رہے ہیں (27:4)۔ وہ لوگ جن کی سعی دنیا کی زندگی میں برباد ہو گئی اور وہ یہ سمجھے ہوئے ہیں کہ اچھے کام کر رہے ہیں، یہ وہ لوگ ہیں جنہوں نے اپنے پروردگار کی آیتوں اور اُس کے سامنے جانے سے انکار کیا، تو اُن کے عمل ضائع ہو گئے (18:104, 105)۔ تو جو ہماری یاد سے روگردانی کرے اور صرف دنیا ہی کی زندگی کا سامنے جانے سے تم بھی منہ پھیر لو (53:29)۔ اور میں آپ لوگوں سے اور جن کو آپ اللہ کے سوا پکارا کرتے ہیں اُن سے کنارہ کرتا ہوں اور خواہاں ہو، اُس سے تم بھی منہ پھیر لو (53:29)۔ اور میں آپ لوگوں سے اور جن کو آپ اللہ کے سوا پکارا کرتے ہیں اُن سے کنارہ کرتا ہوں اور اپنے پروردگار ہی کو پکاروں گا۔ امید ہے کہ میں اپنے پروردگار کو پکار کر محروم نہیں رہوں گا (19:48)۔ کہہ دو کہ اگر تمہارے باپ اور بیٹے اور بھائی اور عورتیں اور خاندان کے آدمی اور مال جو تم کھاتے ہو اور تجارت جس کے بند ہونے سے ڈرتے ہو اور مکانات جن کو پسند کرتے ہو، اللہ اور اُس کے رسول سے اور اللہ کی راہ میں جہاد کرنے سے تمہیں زیادہ عزیز ہوں تو ٹھہرے رہو یہاں تک کہ اللہ اپنا حکم (یعنی عذاب) بھیجے، اور اللہ نافرمان لوگوں کو ہدایات نہیں دیا کرتا (9:24)۔

شیطان نے ان کو قابو کر لیا ہے۔ یہ (جماعت) شیطان کا لشکر ہے۔ اور سُن رکھو، شیطان کا لشکر نقصان اُٹھانے والا ہے (58:19)۔ جو لوگ اللہ اور اُس کے رسول کی مخالفت کرتے ہیں، وہ نہایت ذلیل ہوں گے (58:20)۔ اور تم (اُس کو) نہ زمین میں عاجز کر سکتے ہو اور نہ آسمان میں اور نہ اللہ کے سوا تمہارا کوئی دوست ہے اور نہ مددگار (29:22)۔

آخری سفر منزل مقصود

اپنے پروردگار سے عاجزی سے اور چپکے چپکے دعائیں مانگا کرو۔ وہ حد سے بڑھنے والوں کو دوست نہیں رکھتا اور ملک میں اصلاح کے بعد خرابی نہ کرنا اور اللہ سے خوف کرتے ہوئے اور امید رکھ کر دعائیں مانگتے رہنا، کچھ شک نہیں کہ اللہ کی رحمت نیکی کرنے والوں کے قریب ہے (7:56)۔ ہم تمہیں اُن لوگوں (کے شر) سے بچانے کے لئے، جو تم سے استہزاء کرتے ہیں، کافی ہیں (15:95)۔ اور ہم جانتے ہیں کہ ان باتوں سے تمہارا دل تنگ ہوتا ہے (15:97)۔ ہم کو معلوم ہے کہ ان کی باتیں تمہیں رنج پہنچاتی ہیں (مگر) یہ تمہاری تکذیب نہیں کرتے بلکہ ظالم اللہ کی آیتوں سے انکار کرتے ہیں (6:33)۔ جو (مطلب) تم سے فوت ہو گیا ہو، اس کا غم نہ کھایا کرو اور جو تم کو اُس نے دیا ہو، اُس پر اترایا نہ کرو۔ اور اللہ کسی اترانے والے اور شیخی بگھارنے والے کو دوست نہیں رکھتا (57:23)۔

اللہ مومنوں (کے دلوں) کو (صحیح اور) پکی بات سے دنیا کی زندگی میں بھی مضبوط رکھتا ہے اور آخرت میں بھی (رکھے گا)۔ اور اللہ بے انصافوں کو گمراہ کر دیتا ہے (14:27)۔ اور جو لوگ صبح و شام پروردگار کو پکارتے اور اُس کی خوشنودی کے طالب ہیں، اُن کے ساتھ صبر کرتے رہو۔ اور تمہاری نگاہیں اُن میں سے (گزر کر اور طرف) نہ دوڑیں کہ تم آرائشِ زندگی دنیا کے خواستگار ہو جاؤ۔ اور جس شخص کے دل کو ہم نے اپنی یاد سے غافل کر دیا ہے اور وہ اپنی خواہش کی پیروی کرتا ہے اور اُس کا کام حد سے بڑھ گیا ہے، اُس کا کہنا نہ ماننا (18:28)۔

کیا تم نے حاجیوں کو پانی پلانا اور مسجدِ محترم کو آباد کرنا اُس شخص کے اعمال جیسا خیال کیا ہے جو اللہ اور روزِ آخرت پر ایمان رکھتا ہے اور اللہ کی راہ میں جہاد کرتا ہے؟ یہ لوگ اللہ کے نزدیک برابر نہیں ہیں، اور اللہ ظالم لوگوں کو ہدایت نہیں دیا کرتا (9:19)۔ اے نبی! مسلمانوں کو جہاد کی ترغیب دو۔ اگر تم میں سے بیس آدمی ثابت قدم رہنے والے ہوں گے تو دوسو کافروں پر غالب رہیں گے اور اگر سو (ایسے) ہوں گے تو ہزار پر غالب رہیں گے، اس لئے کہ کافر ایسے لوگ ہیں کہ کچھ بھی سمجھ نہیں رکھتے (18:65)۔ اللہ کے راستے میں مال اور جان سے لڑو، یہی تمہارے حق میں بہتر ہے، بشرطیکہ سمجھو (9:41)۔ جو لوگ ایمان لائے اور وطن چھوڑ گئے اور اللہ کی راہ میں مال اور جان سے جہاد کرتے رہے اللہ کے یہاں اُن کے درجے بہت بڑے ہیں، اور وہ ہی مراد کو پہنچنے والے ہیں (9:20)۔

اور ملک میں طالبِ فساد نہ ہو، کیونکہ اللہ فساد کرنے والوں کو دوست نہیں رکھتا (28:77)۔ اور جب اُن سے کہا جاتا ہے کہ زمین میں فساد نہ ڈالو تو کہتے ہیں، ہم تو اصلاح کرنے والے ہیں۔ دیکھو یہ بلاشبہ مفسد ہیں، لیکن خبر نہیں رکھتے (2:11,12)۔ جن مسلمانوں سے (خواہ مخواہ) لڑائی کی جاتی ہے، اُن کو اجازت ہے (کہ وہ لڑیں) کیونکہ اُن پر ظلم ہو رہا ہے، اور اللہ (اُن کی مدد کرے گا، وہ) یقیناً اُن کی مدد پر قادر ہے۔ یہ وہ لوگ ہیں کہ اپنے گھروں سے ناحق نکال دیئے گئے (انہوں نے کچھ قصور نہیں کیا) ہاں، یہ کہتے ہیں کہ ہمارا پروردگار اللہ ہے (22:39,40)۔

آخری سفر منزل مقصود

اور اگر مومنوں میں سے کوئی دو فریق آپس میں لڑ پڑیں تو اُن میں صلح کرادو۔ اور اگر ایک فریق دوسرے پر زیادتی کرے تو زیادتی کرنے والے سے لڑو، یہاں تک کہ وہ اللہ کے حکم کی طرف رجوع لائے۔ (49:9)۔ مومن تو آپس میں بھائی بھائی ہیں، تو اپنے دو بھائیوں میں صلح کرادیا کرو (49:10)۔

اور اگر تمہیں کسی قوم سے دعا بازی کا خوف ہو تو (اُن کا عہد) اُن ہی کی طرف پھینک دو (اور) برابر (کا جواب دو)۔ کچھ شک نہیں کہ اللہ دعا بازوں کو دوست نہیں رکھتا (8:58)۔ اگر یہ کافر تم پر قدرت پالیں تو تمہارے دشمن ہو جائیں اور ایذا کے لئے تم پر ہاتھ (بھی) چلائیں اور زبانیں (بھی)، اور چاہتے ہیں کہ تم کسی طرح کافر ہو جاؤ (60:2)۔ یہ چاہتے ہیں کہ اللہ (کے چراغ) کی روشنی کو منہ سے (پھونک مار کر) بجھا دیں، حالانکہ اللہ اپنی روشنی کو پورا کر کے رہے گا، خواہ کافر ناخوش ہی ہوں (61:8)۔ اور جو لوگ کافر ہیں اپنا مال خرچ کرتے ہیں کہ لوگوں کو اللہ کے راستے سے روکیں۔ سوا بھی اور خرچ کریں گے۔ مگر آخر وہ (خرچ کرنا) اُن کے لئے (موجب) افسوس ہوگا، اور وہ مغلوب ہو جائیں گے (8:36)۔ تو تم کافروں کا کہانہ مانو اور اُن سے اس قرآن کے حکم کے مطابق بڑے شد و مد سے لڑو (25:52)۔ جو لوگ اللہ کی راہ میں (ایسے طور پر) پرے جما کر لڑتے ہیں کہ گویا سیسہ پلائی ہوئی دیوار ہیں، وہ بے شک محبوبِ کردگار ہیں (61:4)۔

کیا یہ لوگ کہتے ہیں کہ ہماری جماعت بڑی مضبوط ہے؟ عنقریب یہ جماعت شکست کھائے گی اور یہ لوگ پیٹھ پھیر کر بھاگ جائیں گے (54:44,45)۔ (مسلمانوں) تمہاری ہیبت ان لوگوں کے دلوں میں اللہ سے بڑھ کر ہے (59:13)۔ اور کہو کہ اللہ کا شکر ہے وہ تم کو عنقریب اپنی نشانیاں دکھائے گا، تو تم اُن کو پہچان لو گے اور جو کام تم کرتے ہو تمہارا پروردگار اُن سے بے خبر نہیں ہے (27:93)۔

جو لوگ تم میں سے ایمان لائے اور نیک کام کرتے رہے اُن سے اللہ کا وعدہ ہے کہ اُن کو ملک کا حاکم بنا دے گا، جیسا اس سے پہلے لوگوں کو حاکم بنایا تھا، اور اُن کے دین کو، جسے اُس نے اُن لوگوں کے لئے پسند کیا ہے، مستحکم اور پائیدار کرے گا اور خوف کے بعد اُن کو امن بخشے گا (24:55)۔ یہ وہ لوگ ہیں کہ اگر ہم اُن کو ملک میں دسترس دیں تو نماز پڑھیں اور زکوٰۃ ادا کریں اور نیک کام کرنے کا حکم دیں اور برے کاموں سے منع کریں، اور سب کاموں کا انجام اللہ ہی کے اختیار میں ہے (22:41)۔

اے ایمان والو! اللہ سے ڈرتے رہو، اور بات سیدھی کہا کرو (33:70)۔ اور میری آیتوں کے بدلے تھوڑی سی قیمت نہ لینا۔ اور جو اللہ کے نازل کئے ہوئے احکام کے مطابق حکم نہ دے تو ایسے ہی لوگ کافر ہیں (5:44)۔ کیا تم اس کلام سے انکار کرتے ہو اور اپنا وظیفہ یہ بناتے ہو کہ (اسے) جھٹلاتے ہو؟ (56:81,82)۔ ہم سچ کو جھوٹ پر کھینچ مارتے ہیں تو وہ اس کا سر توڑ دیتا ہے اور جھوٹ اُسی وقت نابود ہو جاتا ہے، اور جو باتیں تم بناتے ہو اُن سے تمہاری ہی خرابی ہے (21:18)۔

بھلا جو شخص اپنے پروردگار (کی مہربانی) سے کھلے رستے پر (چل رہا) ہو وہ اُنکی طرح (ہو سکتا) ہے جن کے اعمال بد نہیں اچھے کر کے دکھائے جائیں، اور وہ اپنی خواہشوں کی پیروی کریں (47:14)؟

کچھ شک نہیں کہ تم مُردوں کو (بات) نہیں سنا سکتے اور نہ بہروں کو، جب کہ وہ پیٹھ پھیر کر پھر جائیں، آواز سنا سکتے ہو، اور نہ اندھوں کو گمراہی سے (نکال کر) راستہ دکھا سکتے ہو۔ تم تو اُن ہی کو سنا سکتے ہو جو ہماری آیتوں پر ایمان لاتے ہیں اور وہ فرمانبردار ہو جاتے ہیں (27:80,81)۔ تو اللہ پر بھروسہ رکھو۔ تم تو حق صریح پر ہو (27:79)۔ اور اللہ ہی کارساز کافی ہے (33:3)۔

صدق اللہ العظیم

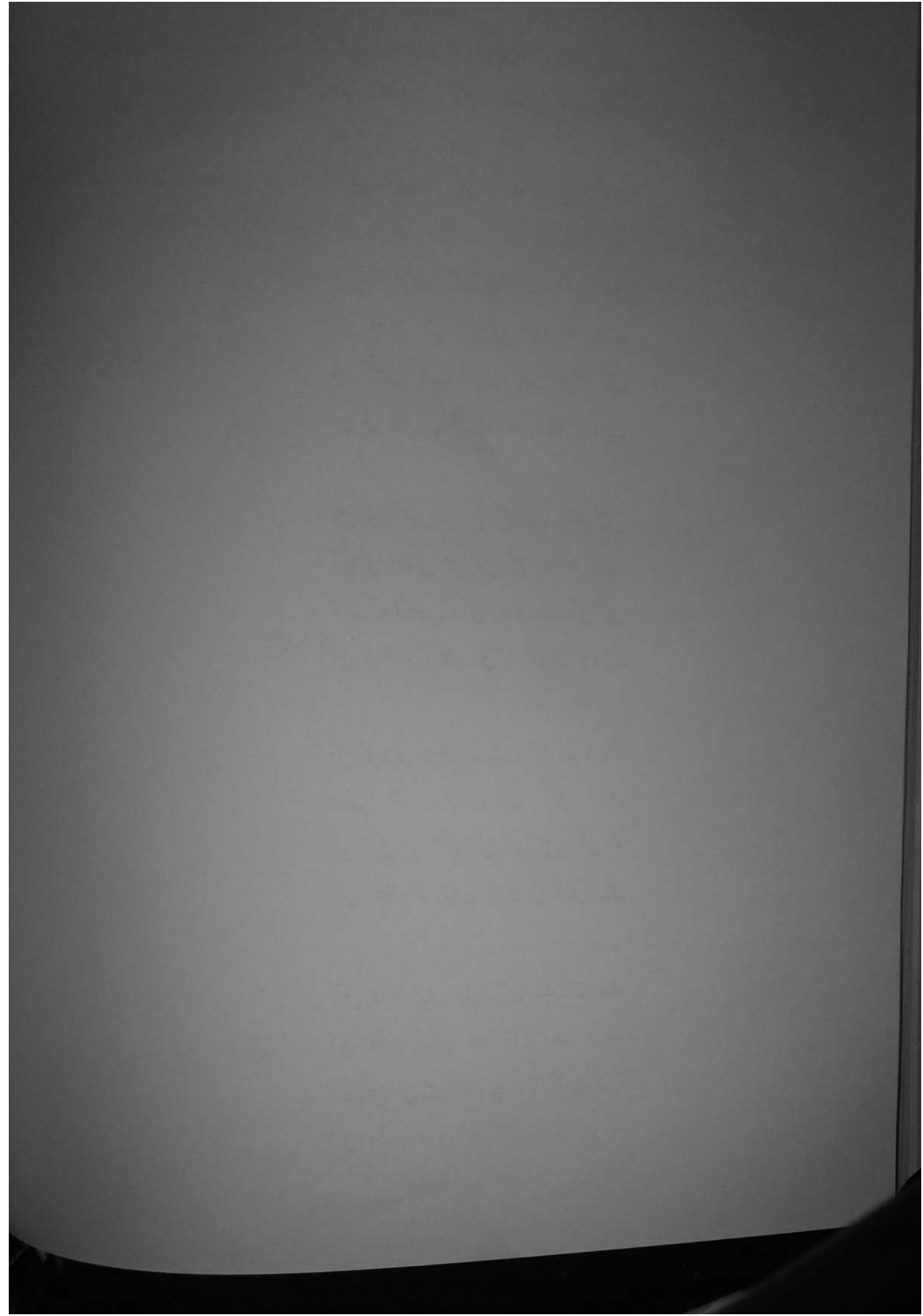
آئیے ہاتھ اٹھائیں، ہم بھی
 ہم جنہیں رسم دعا یاد نہیں
 ہم جنہیں سوزِ محبت کے سوا
 کوئی بُت، کوئی خدا یاد نہیں

آئیے عرض گزاریں کہ نگارِ ہستی
 زہرِ امروز میں شیرِ تنی فردا بھر دے
 وہ جنہیں تابِ گراں باریِ ایام نہیں
 اُن کی پلکوں پہ شب و روز کو ہلکا کر دے

جن کی آنکھوں کو رُخِ صبح کا یارا بھی نہیں
 اُن کی راتوں میں کوئی شمعِ متور کر دے
 جن کے قدموں کو کسی رَہ کا سہارا بھی نہیں
 اُن کی نظروں میں کوئی راہ اُجاگر کر دے

جن کا دیں پیرویِ کذب و ریا ہے اُن کو
 ہمتِ کفر ملے جرأتِ تحقیق ملے
 جن کے سرِ منظرِ تیغِ جفا ہیں اُن کو
 دستِ قاتل کو جھٹک دینے کی توفیق ملے

عشق کا سرِ نہاں جانِ تپاں ہے جس سے
 آج اقرار کریں اور تپش مٹ جائے
 حرفِ حقِ دل میں کھٹکتا ہے جو کانٹے کی طرح
 آج اظہار کریں اور خلش مٹ جائے
 (فیض)





Government of Pakistan
National Accountability Bureau
Ata Turk Avenue, G-5/2
Islamabad

Islamabad, the 30 March 2007

Lt Gen (Retd) Hamid Javaid, HI, HI (M)
Chief of Staff to the President
President's Secretariat
Aiwan -e- Sadr
Islamabad.

**Subject: CREATION OF A JUDICIAL COMMISSION TO OVERSEE ANTI
CORRUPTION DRIVE**

1. This Government's earnest endeavours of seven years to wipe out corruption from the society were rooted in a simplistic understanding of the phenomenon and its remedy. Corruption has become so ingrained in our political culture that much of it is not commonly recognized as such. The resultant spread in all facets of governance and indeed our social fibre has been painful for the vast majority of our citizens, endeavouring to struggle through life.
2. Pakistan devised its first National Anti Corruption Strategy (NACS) in 2002 with the best of intentions and high hopes. However, five years down the road not much has changed.
3. The National Accountability Ordinance NAO 1999 is a document giving such wide mandate and responsibility to NAB that it causes friction with various government agencies, since governance and economic growth are likely to be destabilized, were NAB to pursue NAO in letter and spirit. Some balancing is, therefore, invariably required. Consequently, NAB has a deeply scarred image of a political instrument applying the law selectively. The organization cannot fulfill its mission until it acquires the stature of a respected institution of this country.
4. In the backdrop of above, it is proposed that a Judicial Commission be constituted to review the entire anti corruption drive in all its facets, to suggest a new do-able time-bound strategy, with structures to implement it and laws to govern it.

For consideration of the President, please.

Lt Gen (Retd)
Chairman
(Shahid Aziz)

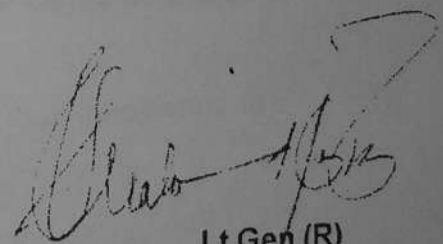
CONFIDENTIAL

5. The entire review report is made in the same spirit, diffusing and shielding acts of omission and commission behind the broader framework of 'dynamics of oil sector' and 'minor errors in governance'. Commenting on the error of GST, the Review accepts 'that the Ministry has "recently taken corrective action" (public has already paid an extra cost worth Rs 18.35 Billion). The Ministry is also, 'now considering' adopting the correct basis of exchange conversion (after an over payment of Rs 6 Billion). Similar acknowledgement has been made on other issues.

6. The review concludes that the streamlining of the business processes and procedures is an area which should be addressed by the Ministry itself and should not be the subject of a NAB Inquiry. It is felt that if errors in these procedures result in overpayment of billions of Rupees by the public then it is classified as a scam of monumental proportions and a detailed NAB Inquiry is mandatory.

7. The Committee feels that NAB is not technically competent to undertake this work. It is highlighted that only a preliminary Inquiry spread over 3 months has yet been conducted by hiring services of market and financial experts. It may be appreciated that almost all subjects investigated in NAB are technical in nature involving white-collar crime, therefore this subject cannot be made an exception. However, in view of the concerns of the Committee the scope of current NAB Inquiry can be expanded by hiring additional experts from market to unearth the beneficiaries of the scam.

8. Forwarded for your consideration please.



Lt Gen (R)
Chairman NAB
(Shahid Aziz)

CONFIDENTIAL

CONFIDENTIAL

the prices of products which were not published in Platts Oilgram". Motor Spirit (MS) started appearing on Platts in January 2002. It is being argued that MS (grade) 95 appeared on Platts and not MS 87, whereas the formula required the price of MS 87 to be calculated. However, actually MS 90 was being produced/used. When MS as a product started appearing on Platts the issue was repeatedly brought up in the Ministry in light of the ECC decision. Such was the concern in the Ministry that a categorical decision was also taken in a meeting dated 20th April 2002 between officials of the Ministry, Chief Executives of the Refineries and OMCs that price would henceforth be based on MS 95 (which was now reflected on Platts), so the formula was not to be used any more. However neither was this decision implemented (which was as per ECC policy decision) nor was the issue taken back to the ECC. NAB has not questioned the issue of policy formulation by the ECC but the violation in implementation of policy, which was being repeatedly discussed at the level of Ministry officials but never referred back to ECC. This colour has been given to discredit NAB's Inquiry. This was not a minor issue to be decided at the bureaucratic level since the over payments involved had phenomenal financial implications (as of 16 Feb 2006): -

| | | | |
|----|--|---|---------------------|
| a. | Cost as per formula | : | Rs. 56.29 per Litre |
| b. | Cost of MS 87 from Platts on prorata basis (as per Ministry's working) | : | Rs. 53.68 per Litre |
| c. | Cost of MS 95 on Platts (still less than the formula cost despite being a better grade product less Freight) | : | Rs. 50.47 per Litre |

Total cost differential as a minimum Rs. 2.61 per Litre and maximum Rs. 5.82 per Litre.

Total impact of over payment is to the tune of Rs. 11.196 Billion.

CONFIDENTIAL

NATIONAL ACCOUNTABILITY BUREAU
ATA TURK AVENUE G-5/2
ISLAMABAD

No. 3 (55) President/COS-2006 (NAB)
29 September 2006

To: COS to The President
President's Secretariat
Aiwan-e-Sadr
Islamabad

Copy to: PS to PM
PM's Sectt, Islamabad

Subject: **NAB's Inquiry Report on Oil Price Fixation Mechanism**

Reference: PM Sectt letter No. nil dated 23 Aug 2006 (Copy attached).

1. Meeting of Chairman NAB with the Committee constituted to review NAB's Inquiry on the oil pricing mechanism (Mr. Mukhtar Ahmed, Advisor to the PM on Energy and Dr. Salman Shah, Advisor to the PM on Finance) was held on 28 September. The meeting was inconclusive. Certain observations are enumerated in succeeding paras.

2. It was earlier agreed that the Committee would consider NAB's report and interact with the Ministry of Petroleum as well as the NAB and thereafter finalize its review report. The review was, however, finalized after interaction only with the officials of the Ministry, NAB was not consulted on the issue.

3. The review is a reiteration of the earlier stance of the Ministry, which is lacking in substance. No evidence brought out by the NAB Inquiry has been directly contested or denied by the Committee.

4. The prime concern of the Review Committee is that NAB is questioning 'policy', which is an unfounded assertion. The formula was termed "redundant", because as per the policy decision of the ECC it was to be "used for determining

CONFIDENTIAL



GOVERNMENT OF PAKISTAN
NATIONAL ACCOUNTABILITY BUREAU
ATA TURK AVENUE G-5/2
ISLAMABAD

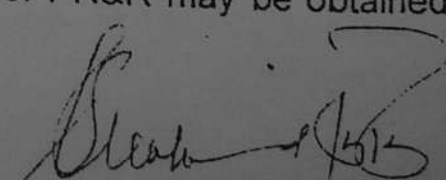
No. 3 (51) PM-COS-2006 (NAB)

13 June 2006

To: The Prime Minister,
Islamic Republic of Pakistan

Subject: Brief on POL Products Pricing Inquiry

1. The NAB is conducting an inquiry on POL Products Pricing Mechanism since 30 March 2006. The NAB inquiry team has scrutinized relevant record of the Ministry of Petroleum and Natural Resources (P&NR) and examined certain officers of the Ministry of P&NR, Ministry of Finance and PSO. Financial irregularities to the tune of Rs. 81.45 Billions have emerged during the course of inquiry conducted so far. The major conclusions/findings of the inquiry conducted so far are given at Annex-A.
2. It is proposed to conduct a briefing at NAB Headquarters for the concerned officials and representatives on a convenient date. In order to have a meaningful/conclusive discussion with concerned participants it is suggested that a written response of the Ministry of PN&R may be obtained before the briefing.

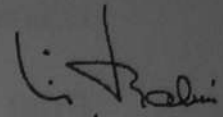

Lieutenant General (Retd)
Chairman NAB
(Shahid Aziz)

Copy to: Lt Gen (R) Hamid Javaid
COS to the President
President's Secretariat
Islamabad

5. On PPRA and other related issues, Cabinet Division will greatly appreciate your inputs. I look forward to meeting you soon.

With my regards.

Yours sincerely,



(EJAZ RAHIM)

Lt. Gen(R)
(Shahid Aziz)
Chairman,
National Accountability Bureau,
Ata-Turk Avenue, G-5/2,
Islamabad.

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ



D.O. 1/1/2006-PS(CS)

CABINET DIVISION
Government of Pakistan
ISLAMABAD
the 7^h February, 2006

CABINET SECRETARY
TELE: 9213562

Subject:- SECRETARIES COMMITTEE'S CONCERNS REGARDING ACCOUNTABILITY.

My dear

General Sahib,

I wish to acknowledge the receipt of your d.o. letter bearing No. (31)NACS(NAB)/04, dated 1st February, 2006.

2. Your letter reflects the integrity and compassion which you are reputed for. I thank you for taking cognisance of the underlying issues in such a positive manner.

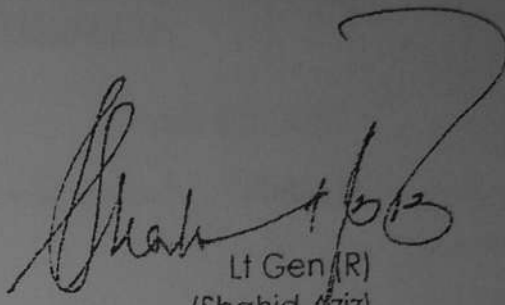
3. I am adding a copy of the minutes of the Secretaries Committee for your record.

4. I am requesting Secretary Law and Secretary Interior to discuss their proposals with you before finalizing their recommendations in the matter.

commendable, however, these are floundering without an enforcing mechanism.

4. I write this in earnest hope that there will be a serious effort on part of the Secretaries Committee to resolve the issue -- for the sake of Pakistan rather than "witch hunting" through media.

5. Eagerly looking forward to meeting you and assuring you of our fullest support in creating an efficient and clean environment, where bold decisions are possible.



Lt Gen (R)
(Shahid Aziz)
Chairman NAB

Copy to:

Mr. Justice (Retired) Mansoor Ahmed, Secretary, Ministry of Law, Justice and Human Rights, Government of Pakistan, Islamabad

Syed Kamal Shah, Secretary, Ministry of Interior, Government of Pakistan, Islamabad

ضمیمہ "ج"



Government of Pakistan
National Accountability Bureau
Ata-Turk Avenue, G-5/2
Islamabad

No. (31) NACS (NAB)/04
February 2006

Mr. Ejaz Rahim
Secretary,
Cabinet Division
Government of Pakistan,
Islamabad

Subject: Secretaries Committee's Concerns Regarding Accountability

1. I write with reference to a report published in the press, over a week ago, reflecting concerns of the Secretaries Committee regarding functioning of National Accountability Bureau. Attached.
2. I share your concerns. NAB has recently initiated measures to contain its operations within manageable expanse and cutting down the number of cases that get closed, thereby reducing the possibility of disreputing innocent citizens. Steps have also been initiated to reduce the time taken to identify the persons liable to be prosecuted, through collective decision-making process. Transparency of our operations and internal accountability is also being looked at. These measures were announced and posted on our website (www.nab.gov.pk) on December 14, 2005. What was also emphasized was that the focus of our endeavours would be the achievement of clean government and consequently people in power will be prosecuted, if found guilty rather than allowing 'arranged exits' through 'financial arrangements', and subsequent claims of innocence. I am sure you will share our concerns.
3. There is a thin line between an inadvertent decision and a criminal act. NAB will welcome any suggestion which will help us identify this line as well as strengthen the hands of the bureaucracy in taking decisions. A durable approach would be to bring in greater transparency and to initiate other preventive measures. In this regard, new rules of PPRA are highly

accountability bureau (NAB) had served as a serious blow to the working of the civilian bureaucracy.

A number of bureaucrats picked up by the NAB in the past came out clean as the bureau could not find anything concrete against them. However, such actions by the NAB had generally scared the bureaucracy. The NAB actions against the bureaucrats, it is generally believed, had gripped the bureaucracy in a situation where they are reluctant to take even routine decisions. This has resulted into pendency and red-tapism.

The secretaries' committee also reviewed the role of finance division's financial advisors (FAs) in every ministry and decided that they should continue with their present authority and should not be involved at the conceptual stage of development projects and schemes by different government agencies.

The committee also discussed the issue concerning implementation of the cabinet decisions. The secretaries were told that they must remove in their respective ministries and divisions the snags that are hampering the early enforcement of the cabinet decisions.

The federal secretaries also deliberated the idea of automation of the government offices, and wanted its early completion. The secretaries were also told to get from relevant authorities their official identity cards, which would enable them to move a little freely in some high security offices including the Presidency and the Prime Minister's Secretariat.

Interestingly the recently appointed secretary general Navid Ahsan, who is the only secretary general in the government of Pakistan, did not turn up in the secretaries committee meeting.

Ahsan, who is on post-retirement extension since 2004, was junior to Ejaz Rahim, the secretary cabinet who is also the chairman of the secretaries committee. However, his recent controversial appointment has made him senior to all federal secretaries even though there is no post of secretary general in the statute governing civil bureaucracy.

The chairman CBR and the secretary revenue Yusuf Abdullah, who was inducted into the civil service and made the senior most federal secretary a few months back, attended the meeting. Abdullah's induction was a shock for many federal secretaries particularly for the likes of Ejaz Rahim who were on the top purely on merit but suddenly made junior to the one inducted in the civil service straight in BS-22. "Yusuf Abdullah's gesture of attending the secretaries committee meeting under Ejaz Rahim, shows decency on his part," a secretary commented.

ضمیمہ "ب"

Jan 24, 2006.

Secretaries demand protection for bureaucracy

Ansar Abbasi

ISLAMABAD: Country's top civilian bureaucrats Monday met to demand protection for members of the bureaucracy from being witch hunted by the anti-corruption state-apparatus.

In a meeting of Secretaries' Committee, which met under the chairmanship of Cabinet Secretary Ejaz Rahim, the federal secretaries were in unison that protected working atmosphere is must to bring efficiency and encourage decision making in the government. Most of the secretaries aspire to develop a system where bureaucrats should have a legal protection from being picked up on corruption charges without ascertaining the veracity of such allegations.

Sources told The News that secretary law Justice (Retd) Mansoor Ahmad has been assigned by the committee to look into the matter and come up with legal options whereby the bureaucracy's confidence could be won back for efficient working.

Interior Secretary Syed Kamal Shah was also asked by the committee to work with the law secretary in developing some institutionalized response to address the present vulnerability of the civilian bureaucrats at the hands of anti-corruption agencies particularly the national accountability bureau (NAB).

Some of the federal secretaries asked for the revival of the past high-powered anti-corruption committee under the Interior Ministry, which used to be the competent body to allow the prosecution to move against senior bureaucrats in corruption cases after detailed scrutiny of the cases.

The law secretary, however, informed the committee that the said anti-corruption body was eliminated following a Shariat Court's decision, which was upheld by the Supreme Court. The meeting was told that the revival of the anti-corruption committee is out of question because of apex court decision.

On this the federal secretaries insisted that then some other system must be evolved to ensure that no witch hunting is done, which in the recent years had really made the bureaucracy despondent. A federal secretary told this correspondent on condition of anonymity that the prolonged arrest of many bureaucrats including some reputed ones by the national

14. **Education**. In view of existing lack of focus, relevance of education to national growth and large number of dropouts every year the education system merits a thorough overhaul.

- a. **Immediate Measures**. Existing system of schools be **rejuvenated** to ensure efficient running of schools with the requisite staff.
- b. **Subsequent Measures**. Gradual reorientation of education should be done with greater emphasis on technical, agricultural and mercantile fields.

15. **Role of Army in Nation Building**. There is a **need for substantial involvement of the Army in nation building tasks**. Suitable projects need to be identified and scrutinized for this. (A number of studies on the subject are already available).

Conclusion

15. In our current environment public perceptions would matter more than the reality. Whatever we may do, we cannot afford to lose public confidence. Till the time the military is at the helm of affairs, the military will have to ensure effectiveness of the entire government machinery. An effective monitoring system comprising military personnel, therefore, needs to remain in place. We must not allow legal and constitutional impediments to override the decision making, in the supreme interest of the nation. Western concerns regarding early restoration of democracy should not diffuse our focus of putting our own house in order.

13. Politics and Religiona. Immediate Measures

- (1) **Keep contact alive with all religious and political parties.** Involve them in national debates and consider their advice on national issues.
- (2) **Appropriately fend political demands cloaked under religious injunctions.**
- (3) **Keep a close watch on religious parties and groups.**
- (4) **Open contacts with leaders of smaller provinces, on priority.**
- (5) **No favouritism or political preferences should be visible.**

b. Subsequent Measures

- (1) Encourage political parties to rejuvenate themselves under a new set of clean leadership.
- (2) Initiate concrete measures to check unlawful activities of some of the religious groups and *madrassas*. Their finances need to be kept under scrutiny and their syllabus needs to be rationalised. We need to eventually break the political hold of extremist elements. (A separate paper is being floated on this issue).
- (3) Most of our religious institutions are doing an excellent job in educating the youth and keeping the destitute off the streets. We need to support their endeavours and assist them. Our mosques should eventually turn into regular schools.
- (4) Institutionalise religious education in schools and colleges in a manner that the *mullah* eventually becomes socially irrelevant. (A separate paper on the subject is being drafted).

CONFIDENTIAL

Foreign Office should not be allowed to become the sole direction setter of our policy. Consideration of inputs from other think tanks should also be institutionalised.

- (2) **We must clearly understand the compulsions and constraints of the Western World within our region.** That is the major reason for their acceptance of the current change, and not its justification or even the public opinion — as we may like to believe. They would rather not risk an antagonised Pakistan at this time. **We need to keep this in mind while dealing with them.**
- (3) **International concerns on non-proliferation, terrorism, drugs and human rights must be respected.**
- (4) **Taleban should not be antagonised to please the US.**
- (5) **Should pursue peaceful and result oriented negotiations with India.**

b. **Subsequent Measures**

- (1) Strategic relations with China, Saudi Arabia and UAE must continue to be maintained.
- (2) Strong friendly overtures must be made towards Iran.
- (3) Expatriates should not be allowed to participate in domestic politics. This policy, which was recently enunciated, has fragmented the small Pakistani communities abroad into political cliques and groups. We must follow policies that strengthen and unite our expatriates.
- (4) Should continue endeavours for greater regional cooperation towards our west.
- (5) We may consider opening contact with Israel on the Intelligence channel.

(4) **PTV's performance needs substantial upgradation.**

b. **Subsequent Measures**

- (1) Formulation of a well-considered media policy with involvement of senior journalists. They should create their own accountability procedures and laws, which must not be flouted.
- (2) IPRI (Institute of Policy Research Islamabad) was created to coordinate the efforts of media and to help guide and educate journalists about national concerns, interests and compulsions, in consultation with the Foreign Office. The institution must be revitalised. This should also have a complete psychological operations department, with qualified personnel.
- (3) Need to enhance efforts for projection through Internet.
- (4) Influencing international opinion, particularly their media, needs deliberate consideration and investment. We could consider buying time on foreign TV channels and encouraging expatriates (some of which have already shown keenness) to open TV channels abroad. Politically appointed Press Attaches with our embassies should be changed and this institution strengthened.
- (5) Private TV channels be encouraged, after careful formulation of policy guidelines.
- (6) Encourage foreign media to travel to Pakistan, by allowing travel and stay facilities, like exemption from hotel tax, rebated internal travel etc.

12. **Foreign Policy**

a. **Immediate Measures**

- (1) Foreign policy is too important an issue to be left entirely to the Foreign Office. The NSC Think Tank should have an elaborate wing to study foreign policy issues and

- (5) All personnel associated with the government now or previously should justify their assets, failing which these should be confiscated. Similarly all assets without tax record should be confiscated. Necessary CEO be issued to facilitate this.

b. Subsequent Measures

- (1) Management of Public Sector corporations should be held accountable for running into losses and misappropriation of state assets.
- (2) Every state department should be made accountable for their out put.
- (3) Discretionary powers of government officials be taken away.
- (4) A study be conducted to institutionalise accountability in all state institutions. A very effective department needs to be created to preclude misappropriation of state assets down to the lowest levels. There is no way to check corruption expect very harsh punishments.

11. Media

a. Immediate Measures

- (1) **Regard and respect for the media must be maintained. Yellow journalism should not be immediately crushed** through harsh laws. To begin with media must be given full liberty.
- (2) In all our endeavours media can and should be **motivated to play a positive and constructive role**. They should also be called upon to launch a campaign against corruption and help inculcate national discipline.
- (3) Media and Information Ministry must be revamped, modernized and activated under qualified and dynamic

(4) Emphasize increasing agricultural, livestock and dairy output and export.

✓ (5) Institutionalise export quality control.

✓ (6) Focus on computer software industry.

(7) Devise policies to encourage export of skilled manpower, particularly in the field of computers. Encourage students to travel abroad for education and seeking jobs.

(8) Improve functional efficiency of state enterprises.

(9) Consider reduction in size of federal and provincial governments and its departments.

How (10) Smuggling be controlled, particularly of precious and semi-precious stones.

(11) Develop mineral extraction.

(12) Make serious endeavours for development of Turkmenistan-Pakistan oil and gas pipeline.

(13) Effective Commerce Attaches be posted to our embassies.

c. Measures Suggested by Dr Shahid Hasan Siddique. Annex A

10. Accountability. This is a high priority public expectation, where no leniency can be afforded. Following are suggested:-

a. Immediate Measures

(1) Transparency in the whole process of accountability.

(2) Publication of lists pertaining to defaulted, rescheduled and condoned loans for information of the public.

(3) Immediate recovery of all such loans.

(4) Exemplary punishments to tax evaders, commission mafia in government departments and people involved in any kind of illicit gains.

CONFIDENTIAL

- ✓ (2) Immediate recovery of loans. A CEO may have to be promulgated wherein the entire assets of the defaulters, including those abroad, can be confiscated against the loan, rather than only the pledged assets. Special courts will have to be created for speedy recovery.
- ✓ (3) Looted national wealth deposited in foreign banks be brought back even through coercive means, where necessary. No mildness be considered.
- (4) Ensure that bottlenecks for investment by way of NOCs etc are reduced to the minimum.
- (5) Documenting the economy and ensuring economic discipline in the country.
- ✓ (6) Mega projects be reviewed and cancelled if financially not viable.
- ✓ (7) Cutting down public expenditure and implementing austerity measures. This also has a strong image-building connotation.
- ? (8) Seek help from Saudi Arabia and UAE for provision of POL and from Malaysia for edible oil on delayed payment.

b. Subsequent Measures

- (1) Rebuilding investors' confidence through consistency in economic policies and economic security.
- ✓ (2) Broadening the tax base and reducing tax burden. Structural reforms be undertaken in the Revenue Department.
- ✓ (3) Expatriates be encouraged to invest in the country. Pakistanis should be given preferential investment incentives.

CONFIDENTIAL

CONFIDENTIAL

of the Supreme Court for resolution of disputes. Problem areas should be referred to the Supreme Court.

- (2) Remove confrontational atmosphere through participation of all provinces in the current setup and sharing of power.

- (3) Quotas should be fixed for all federal government jobs based on proportional representation. Similarly District quotas could be considered for provincial jobs.

- (4) Simplify procedure for apprehension and transfer of criminals.

b. Subsequent Measures

- (1) De-politicise prickly issues like Kalabagh Dam, educate the people and develop consensus.

- (2) No royalties be given to provinces for projects financed by the Federal Government. The Federal Government should purchase requisite land for the project and the provinces should have no subsequent claims. This is a sensitive issue and would require deliberation and national consensus.

- (3) Fix quotas for inter provincial exchange of students and teachers.

- (4) Trans-postings of provincial servants on exchange basis.

- (5) State TV should devise an elaborate plan to develop national cohesion and inter provincial harmony. Print media should also be asked to play a constructive role in developing inter provincial harmony.

8. Economy. Some of the measures to revitalise the economy could be:-

a. Immediate Measures

- (1) Improve domestic security environment.

CONFIDENTIAL

track down and apprehend people with criminal record. A detailed plan for this needs to be formulated quickly. This also calls for transformation of intelligence agencies down to the lowest level.

- (2) **Criminal cases be pursued expeditiously, through Special Courts.** All considerations of clemency and expediency be kept aside.
- (3) **The society needs to be de-weaponised on immediate basis.** A CEO to the effect needs to be issued urgently, cancelling all previous orders and instructions permitting possession of firearms other than shotguns and pistols.
- (4) **No armed congregations** should be allowed. All *Jihadi* elements be kept under strict control.

b. **Subsequent Measures**

- (1) Computerise all criminal records.
- (2) Modernise LEAs.
- ✓ (3) Effective police and judicial reforms. (Separate papers being finalised).
- (4) Afghan refugees from stabilised areas be repatriated in a phased programme. The remaining should be contained in specified areas.
- ✓ (5) Entry of illegal aliens, particularly in Karachi, be effectively checked. Efforts should be made to deport the current alien population.

7. **Inter Provincial Harmony**

a. **Immediate Measures**

- (1) **Resolve grievances in an institutionalised and transparent manner.** Inter Provincial Coordination Committee be reconstituted, headed by a retired Justice

- ✓ (7) An effective monitoring system at all tiers of governance is inescapable, till things improve significantly. The onus of putting things right lies on the Army. Some quarters would deliberately sabotage the process, others may be overtaken by sheer apathy. Army will have to get involved. The effect of the change must be felt at the grassroots level, and felt immediately. (A detailed paper is being drafted separately).

b. Subsequent Measures

- (1) The next item on the agenda must be strengthening the judicial system. The law must reign supreme. This is the backbone of good governance. While the study on judicial reforms is being updated, three things stand out clearly: separation of the judiciary and the executive, passing necessary Chief Executive's Orders (CEOs) for facilitating speedy justice, (some of these may require public debate/consensus to obviate concerns on human rights) and strict in-house accountability of the judiciary.

How?

- (2) Strengthen the institutions through devolution of power to the lowest level so that they can perform effectively and efficiently, in public service. However, "colonial powers" of district management and police need to be strongly curbed. (Separate papers on each state institution are being formulated/updated.)

✓

- (3) Implementation of land reforms and ensuring writ of law to abolish the hold of feudal system would be essential if democracy is to grow from grassroots level.

yes but later

6. Law and Order. Following is suggested:-

a. Immediate Measures

- (1) The criticality and urgency of the issue and the state of our Law Enforcing Agencies (LEAs) calls for support from the Army and all state intelligence agencies to

- ✓ (5) NDO should setup the whole system, which has diversified application (not discussed here).

5. **Good Governance through Developing Institutional Strength.**
Despite a democratic setup we have seen that decisions and policies made in the past have been whimsical, expedient and shortsighted. There was a dictatorial colour to the handling of all state organs and institutions. Decision-making is now being institutionalised. However, this is an interim setup and must leave behind a viable and energetic 'system'; and should, therefore, aim at strengthening state organs and institutions making them effective and accountable. Suggested measures are:-

a. **Immediate Measures**

- (1) **The Chief Executive should not exercise powers of punishment and reward**, including appointments and dismissals. These should be handled purely in an institutionalised manner.
- (2) **Selection of suitable personnel for governance** will be the first visible sign of things to come. This is an issue of significant concern and should be handled as such.
- (3) The most critical institution is the NSC, which **must function in a transparent and effective manner.**
- ✓ (4) **A promotion, appointment and transfer system akin to the Army be institutionalised for all state departments.**
All appointments and promotions be made purely on merit
- ✓ (5) **A strict code of conduct for government functionaries** be drafted. Government functionaries who are found taking advantage of their official position and all corrupt and inefficient officials should be weeded out.
- (6) **All state institutions be ruthlessly depoliticised.**
However, no large-scale joblessness should be created at this time.

- (5) Institutionalise consideration of public opinion in decision making through constituting an organisation to formally assess/process it, and allow the head of the institution to be heard in the NSC. This is essential to honour public opinion.

how!

- (6) Encourage political activity, within bounds. Public expression and protest should not be choked. This emotive energy should be redirected positively by rising and meeting the challenge openly, rationally and squarely.

Not immediately

- (7) Political parties should be encouraged to participate and come forward with their agendas in a positive manner. Viable suggestions and contributions should be accepted after debate and acknowledged. Political institutions must be forced on a path of positive growth.

c. Subsequent Measures

- (1) Important issues be floated for public opinion after open debate on the issue.
- (2) A credible organisation be created for registering public opinion through polls. This may use existing methodology till the facilities envisaged below can be created.
- (3) National Database Organisation (NDO) should speed up the process of finalising new National Identity Cards. The priority should be given to provincial capitals, followed by large cities and District Headquarters.
- (4) A sufficient number of outlets (could be like public telephone booths with credit card type machines) be created (in the same priority as above) where citizens could run-in their identity cards and gain access to public polling. Initially only those in larger towns and having some education may be able to poll their opinion, which is all that may be needed now. The public will learn quickly and as the system grows more will be able to participate.

DG NDO to give a briefing to speed up.

CONFIDENTIAL

- (9) Will educate the public in understanding government constraints and national priorities.
- (10) Will bring about development of positive outlook and responsibility within the masses and help in growth of political institutions.
- (11) Will allow us time to thoroughly analyse complicated issues of concern.
- (12) Not institutionalising such participative decision making will eventually create an allusion of 'us' and 'them' between the led and the leaders. This will lower morale, drastically reduce public participation in national development and psychologically create an environment where the public will sit back awaiting the fruits of the new setup to fall in their laps, while their only contribution would be critique and comment.

b. Immediate Measures

✓ (1) **Do not rush things** and be taken in by public demand for speedy recovery. We require time to get out of where we are. This must be made clear at the outset, otherwise the pressure will continue to mount.

✓ (2) **Adopt a policy of total transparency**, unless cloaking is required in interest of national security. These aspects should mostly be confined to sensitive foreign policy issues.

✓ (3) **Give freedom and encouragement to the media** to be critical. Encourage mushrooming of private TV channels.

✓ (4) **Float policy matters as draft policy and encourage and assist national debate** before formally announcing the policy. Follow similar methodology for important legislation and institutional reforms.

Certainly

Good idea

Meeting the Challenge

4. Institutionalised Participative Decision Making. The first essential ingredient of success is the involvement of the nation in nation-building. This can be possible only if the nation is given a say in shaping their destiny. And this is the very basis of democracy.

a. Rationale

- (1) Even the best of your advisors will at least want to stay your advisors, even if they have no other personal ambition. Therefore, some may not disagree for long with the forceful expression of your ideas. (The destiny of the nation may lie in the hands of a selected few, but these few may start perceiving that their destiny lies in your hands.) Despite all the goodwill, your thoughts may then become biased, since you could lose touch with reality. Therefore, the need for broadening the input base.
- (2) National participation in decision making will help develop and retain confidence between the leader and the led.
- (3) This will fill the void of democracy and also appease international concerns.
- (4) Will allow us to remain abreast with public perceptions and grievances.
- (5) It will allow the opportunity to tap on the vast resource of national intellect.
- (6) Will help develop consensus and greater understanding between different segments of society, enhancing national cohesion.
- (7) Will motivate the people to take active part in all spheres of nation building, including the critical field of economy.
- (8) Public involvement will take the steam out of political dissension and reduce the sting of negative media.

NATION BUILDING CHALLENGES

General

1. Today there is great hope and jubilation in the nation. We have made a tremendous start. The nation is with us and the world seems to have swallowed their pretensions. It is like a divine gift to the nation. There is a perception of deliverance — yet lingering apprehensions. Most of these have hopefully been removed after your speech, yet many more would continue to linger and grow. The credibility gap has grown too large. Patience is now at its lowest ebb. There is too much at stake here. And perhaps a justified fear of the last ray of hope being extinguished. Yet aspirations are vibrant. This surge is our greatest strength — and our Centre of Gravity. This upbeat mood has to be maintained if we are to pull through. The nation has to be taken along this crest, for as long as possible. This morale has to be converted into pride. Only then will we begin to grow.

2. This paper contains some thoughts and suggestions to point the nation in the right direction and put it on a path towards the destiny that befits it. The task is of great magnitude. And essentially you stand alone — as each one of us must. And eventually will. Your solitude can only be lightened by Divine presence. Which you must seek: in solitude. And reflect deeply.

3. Nevertheless, this is not a one-man show; and the team you pick will be insufficient for what lies ahead. For a task of this magnitude, unless the whole nation rises to the occasion and joins hands, we cannot go very far. And if you cannot bring them to that height, you would have failed. The nation would have failed. This is a leadership issue. And perhaps a challenge greater than you now imagine. Some suggestions are appended below.

لیفٹیننٹ جنرل (ر) شاہد عزیز کا شمار افواج پاکستان کے مایہ ناز، بلند ہمت، باکردار اور اصول پسند افسرزمیں ہوتا ہے۔ انہیں زندگی میں جس قدر کامیابیاں حاصل ہوئیں اُسکی وجہ اللہ تعالیٰ کی ذات پر مکمل یقین ہے۔ جہاں کہیں بھی وطن عزیز کے دفاع اور قومی مفادات کا معاملہ سامنے آیا، وہ حکمرانوں کے سامنے بڑی جرأت اور استقامت سے حاضر سروس جنرل ہوتے ہوئے بھی اختلافی رائے پیش کرتے رہے۔ ڈائریکٹر جنرل تجزیاتی ونگ کی حیثیت سے کارگل کے محاذ کے حوالے سے انہوں نے ہمیشہ حقیقت پسندانہ تجزیہ اعلیٰ فوجی حکام کو پیش کیا۔ ۹/۱۱ کے بعد امریکہ کے لئے فوجی سہولتوں کی فراہمی کے معاملے پر بھی اعلیٰ سطحی فوجی اجلاس میں کھل کر کمرہ حق بلند کیا۔ اُنکی ملازمت کا عرصہ فیض کے اس مصرعے کی عملی تفسیر رہا:

ع جو ر کے تو کوہ گراں تھے ہم، چلے تو جاں سے گزر گئے

"یہ خاموشی کہاں تک؟" ایک رومان پسند فوجی افسر کے آدرشوں اور خوابوں سے چمکتی ہوئی ایسی داستانِ حیات ہے جہاں فراقِ یار سے جمالِ محبوب اور وطن کی آبرو پر قربان ہونے کا جنونِ بالا آخر ذات کی داخلی تنہائی اور آشوبِ آگہی کے لئے اکسیرِ اعظم پانے کی تمنا میں عشقِ حقیقی میں بدل جاتا ہے۔ اور آج ایک محبِ وطن دانشور اور دفاعی تجزیہ کار اسمِ اعظم کے ہزار در کھولنے کیلئے ایک ہی رستہ قوم کیلئے تجویز کرتا ہے۔ وہ ہے طاغوتی طاقتوں کے خلاف جہاد کا قرآنی تصور۔ آج ہمارا جنرل زندگی کی شامِ تنہائی کے آخری پہرہ قوم کے سامنے مکمل سچ پیش کر رہا ہے، چاہے اُسکے حساس دل کو ناوکِ دشنام کے ہزار ہاتیروں سے چھلانی کر دیا جائے۔

پروفیسر نعیم قاسم، ادارتی کالم نگار نوائے وقت

ایم اے معاشیات، ایم فل، پی ایچ ڈی (انٹرنیشنل ریلیشنز اینڈ پالیٹکس)